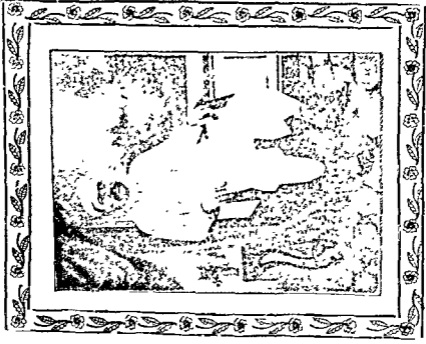


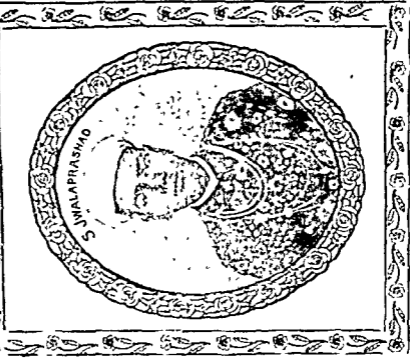
जैन स्थम्भ दानवीर

अमल्य शास्त्र दानदाता

जैन प्रभावक धर्म धूर्धर



स्व. राजा बहादुर लाला मुखेन्द्र सहायजी, जौहरी



लाला बालाप्रसादजी, जौहरी.

जैन धर्मसिद्धि, सिद्धिदाता, (संस्कृत)

श्री भगवती सूत्र की प्रस्तावना.

श्लोक—सर्वज्ञ मीश्वर मनंत मसंग मंत्रं, सर्वोय मस्थरनीस मनीहसत्यम् ।

शिवं शिवं शिवकरं व्यपेतं, श्रीमाजिनं जितरिपुप्रयतप्रणामि ॥ १ ॥

अर्थ—प्रथम इष्टार्थ की सिद्धि के लिये मंगलाचरण करते हैं. तीनों लोक के ईश्वर, अंत रहित सुख के भोक्ता, कर्म कार्या के संग रहित, सर्व लोकाग्र में रहे, अथवा सब के अग्रेश्वर, कंदर्प रहित, किसी के स्वामित्व रहित, श्लेह रहित, सकलार्थ की सिद्धि कर सिद्ध हुए. कर्मों के उपद्रव रहित, सिद्ध स्थान में संस्थित, अन्य आत्माओं के कल्याणकारी. उपद्रव के हर्ता, अपरम्पार गुणों के धारक, अनिन्द्रिय अतीव सुख में सदैव लीन, अष्टकर्म रूप महाशत्रुओं के पराभव करने वाले ऐसे जिनेन्द्र भगवान को यथाविधी सविनय यथा युक्तनमस्कार करता हूँ.

देव देवं जिनं नत्वा, नत्वा च श्रुतदेवतम् । वार्तिकं पंचममंगस्य, वक्षे वृत्यानुसारता ॥ १ ॥

अर्थात्—देवाधि देव श्री जिनेश्वर भगवान को और श्रुत देवता, श्रुत ज्ञान के दाता गुरु महाराज को नमस्कार कर के पंचमंगे श्री विवाह प्रज्ञप्ति (भगवती) सूत्र का हिन्दी भाषानुवाद मेरी अल्पपत्यानुसार न हूँगा. प्रथम के चारों अंगों में चार अनुयोग वा वचन भिन्न २ वहा और इस सूत्र में चारों अनुयोगों का वंथन किया गया है इस का नाम विवरण दक्षिण है इस लिये परिच्छ हुवा है

कि इस में नाना प्रकार के जीवानीवादि का मन्त्र और धर्मिन का मन्त्र भी विद्यमान हैं। २ तीर्थकारों ने गणेशों को कही, गणेशों ने भगवान्‌वादि को कही, भगवान्‌वादि ने शिवों को कही, यों पूर्व परंपरा से विविध महा पुस्तकों में कही भी थीं और मन्त्रों में १ शिवि नकार के विविध अर्थ का प्रवाह और नवों का प्रचार निम्न में कहा पर शिव मन्त्रों में ४ शिवि नकार के मन्त्रों का एक स्थान में समावेश होने से शिव मन्त्रों में ५ शिवि नकार के मन्त्रों का समावेश होना है उस प्रकार इन में भी शिवि मन्त्रों का समावेश होना गया है। इसलिये इन शिव मन्त्रों में ५ शिवि मन्त्रों का समावेश होना कहा है। सो सर्व माननीय, सर्व पूजनीय सर्व शिव व पुत्र को देवी, देवता कहते हैं।

इस शिव मन्त्र (भगवतो) मन्त्र को शिवान्त ही जाना है १ शिव नकार देवी शक्ति लीला करके योगों के मन को मन्त्रित करना है जैसे हो इन मन्त्रों का समावेश करने से और इस का सम्यक प्रकार से मन्त्रित होने में योगों का मन मन्त्रित होगा है, २ शिव नकार हस्ती गुण गुण्डा शब्द का नाम है, जैसे ही इन मन्त्र में मन्त्रों शिवान्ति मन्त्र के रूप में मन्त्र, गहन, गंभीर, साध्यापादि का मन्त्र होगा है, जैसे ही शिव मन्त्रों के मन्त्रों में मन्त्र है, जैसे ही यह मन्त्र भी शिव, गण शिवान्ति शिव मन्त्रों की शक्ति का मन्त्र शिवान्ति है, ४ शिव मन्त्र प्रकार चक्रवर्तिका हस्ती देवापिष्टित होगा है जैसे शिव मन्त्र भी शिव मन्त्रों के मन्त्रों में

अर्थ



प्रस्तावना

चांदी परधाल वगैरह के भूषणों सहित भूपित होता है वैसे ही यह सूत्र भी उद्देशे, हेतु, कारन रूप भूषणों से भूपित है. ६ जिस प्रकार हाथी सब में बड़ा जानवर है वैसे ही यह सूत्र भी ३६००० प्रश्नोत्तर से बहुत बड़ा है, ७ जैसे हाथी के चार पांव होते हैं वैसे ही इस सूत्र रूप हाथी के १ चरण करणानुयोग, २ द्रव्यानुयोग, ३ धर्मकथानुयोग और ४ गणितानुयोग यों चार अनुयोग रूप चार पांव हैं, ८ जैसे हाथी के दो आंखों होती है, वैसे ही इस सूत्र रूप हाथी के ज्ञान व चारित्र रूप दो आंखें हैं, ९ जैसे हाथी के दो दांताशूल होते हैं, वैसे ही इस सूत्र रूप हाथी के द्रव्यास्तिक व पर्यायास्ति नय रूप दो दांताशूल हैं. १० जैसे हाथी के दो कुंभस्थल होते हैं वैसे ही इस सूत्र रूप हाथी के निश्चय व व्यवहार नय रूप दो कुंभस्थल हैं. ११ जैसे हाथी के सूंड होती है वैसे ही इस सूत्र रूप हाथी के प्रशस्त वचन की रचना रूप सूंडादंड है, १२ निगम वचन रूप छोटी पुंछ है, १४ काल आदि पांच समवाय और आठ प्रवचन माता के रूप आवरणादि उपकरण है, १५ उत्सर्ग व अपवाद मार्ग रूप दो घंटा है, १६ यशःरूप पडह का अवाज चारों दिशा में विस्तृत है, १७ सूत्र रूप हाथी के महाधीर स्वामीजी रूप राजा है, १८ इस सूत्र रूप गज पर आरूढ होने वाला ३६३ पाखंडियों का पराभव करता है, १९ यह सूत्र रूप हाथी अनेक प्रश्नों के उत्तर रूप तथा पांच ज्ञान रूप शस्त्र सहित सज्ज है, २० यह सूत्र रूप हाथी उपांग रूप चतुरंगिनी सेना सहित चतुर्गति का निकंदन करता है २१ चक्रवर्ती के हाथी के चारों ओर १४ रत्न होते हैं वैसे ही इस सूत्र रूप हाथी के चउदह पूर्व के अंगोपांग रूप

रत्न है, विविध प्रकार के संपाग के समुद्र में विस्थापन प्रदान कर मनुष्यों के मन पर जो प्रतीति देने वाला श्री महावीर महाराजा के रत्न से पुक्त पर मूर रूप रानी है

श्लोक—या पट्टत्रिंशत् सहस्रम्रति शिधि, सञ्जयंशिक्षानं प्रश्रवाणां। नार निशाचरोन्मू प्रथपति परितः श्रेणि सुरैरुत्तमनाम् ॥ १०० ॥ यद्वा नरा मगना सुविगता विवाह प्रजति । पंचमाद्म जगति नगवती मा विनिश्चयं पौरः ।

पाँचवा निराह कहति अपर नाम भगवती मूर है. जो नरा मगर मयाम अर्थात् मरु, संश्रित गूढार्थ वाचा है. इस में ५१ गुत्तक १००० इरेने. और १००० यद्वा नरा रजःशो वरेण रहते हैं. इन समुद्र का गूढ भेद रूप रत्नों विग्रह पादि के पारह जनों को नाम नहीं हो मरुते हैं राज्ञु विदग्धों से प्राप्त कर सकते हैं. ऐसा पर भगवती मूर मूर्ता पाँच जपदीय रती.

इस भगवती मून का अनुवाद मुद्रपापा में योगाती संस्कृत संस्था में राज कुं पन्तर निरवातु की छपाई हुई मनपर में और कच्छ देन भारत की अड कोठी मेंसे १००० मेंसे मूर्ति श्री नागवंशी महाराज के तन्द में एक संवत्सं १९०१ साली दश दश गूढ इस साली १९ सायंमें रख कर दिया है. वैसे ही भीनामारा में भी कन्न रानीमती मारुतमरुते में दक्षिणा की राख में पूरा हिन्दी अर्थवाची मन और एक मंत्री पाग में मुद्रपापा दिया है. इन की मूर्ति हमें से क्या जक्ति व यथापनि मगास दिया है तथापि अनुक्ति करने का मंगल है तो निश्चय मूर्त को क वरन करेगे.

विवाह प्रज्ञप्ति (भगवती) मूल की विषयानुक्रमणिका.

प्रथम शतक का प्रथमादेश १	१५ अत्रतिजीव देवता होने ५२
१ नवकारयंत्र, नमो वंभीए लिखीए ३	१६ वाणव्यन्तर देवता के मुख ५४
२ प्रश्नों के नाम ४	प्रथम शतक का द्वितीयोद्देश ५७
३ सूत्रांश. नगरादि अधिकार ४	१७ जीव स्वतंत्र कृत दुःख को वेदता है ५७
४ भगवत महावीर स्वामी के गुण-नमोत्थुणं... ५	१८ नरक के जीव सब समआहारी हैं क्या. ?	५९
५ गौतम स्वामीजी के गुणाणुवाद ८	१९ नरक के जीव सब समकर्मी हैं क्या ? ६१
६ संशयोपत्ति पक्ष पृच्छा १०	२० नरक के जीव सब समोत्पत्ती हैं क्या ? ६२
७ चलमाणे चल आदि ९ प्रश्नोत्तर १२	२१ नरक के जीव सब समलेधी हैं क्या ? ६३
८ नरकाधिकार, आहार के ६३ भागे वगैरा... १६	२२ नरक के जीव सब सम वेदनावाले हैं क्या ?	६४
९ असुरकुमारादि भुवनपति अधिकार २५	२३ नरक के जीव सब सम क्रियावाले हैं क्या ?	६६
१० पृथ्वीकायादि स्थावरों का अधिकार ३१	२४ नरक के जीव सबसग प्राणुष्य वाले हैं क्या ?	६७
११ वैन्द्रियादि रोप दंडक अधिकार ३५	२५ नरक के प्रश्न जैसे चौकीसही दंडक पर प्रश्न.	७७
१२ जीव आत्मारंभी आदि प्रश्नोत्तर ४३	२६ लेख्या आश्रिय प्रश्नोत्तर. ७५
१३ ज्ञान इस भव का के पर भव का ४८		
१४ असंबुद्ध संबुद्ध अणगार ४९		

रत्न है, विविध प्रकार के संपाग के समुद्र में विष्णुवाग भवान् का समुद्रों का एक पक्ष हो गया
ने वाला श्री महावीर महाराजा के पक्ष में पुनः पर पुनः रूप रणों दे

श्लोक—या पट्वर्षिज्ञात् सहस्रान्प्रति विधि, सत्रुषांविधानं प्रश्रयानां। वा विद्यारुचोर्गु
प्रथयति परितः श्रीगि मुदेनलनन् ॥ रत्नानय गगनाना सुनिगर
विवाह प्रज्ञति । वंनसाङ्ग जयति भगवती या विनिर्ज्ञानं शेषः ।

पाँचवा विवाह प्रज्ञति प्रवर नाम भगवती सुव है, जो परा पापर पक्षन आर्य्य परम, संसार
गूढार्थ वाचा है, इस में ४१ गूढ १:०० इन्द्रो, और १:०० वध कर रमणी वंन यत्नो है, इस
समुद्र का गूढ भेद रूप रत्नों विग्रह युद्धि के धारक रत्नों की वान् नयीं हो गयी है वंन विद्वानों की
प्राप्त कर सकते हैं, ऐसा पर भगवती गूढ गैदा सांड गदर्या रही।

इस भगवती गूढ का अनुवाद मुद्रयाया में योगजी गौरी बंदा में पाये हैं अरुण विर वंन की
छपाई हुई प्रनपर में और कस्तूर देन पावन दाँया भय कौपी केगी कपडने वंन मुद्र
श्री नागचंद्रजी महागज के गदमें एक वंनानं जेला काली नर दया एक एका काली वर
साथमें रख कर किया है, जैसे ही भीनागरती भी वंन वंनाना की कपडने के दृष्टि की वंन के वंन
हिन्दी अर्थवाची वन और एक पेरी पाप की नारा में मुद्रा विद्या है। एव की कौपी काली दे वंन
जाकि व यथापनि प्रयाग विद्या है यथापि अनुष्टि एवै य विद्या है जो विद्वान् गूढ कौपी वंन काली

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

- ६१ गर्भ का जीव नरक में भी जावे V... १८२
 ६२ गर्भ का जीव देवलोक में भी जावे V... १८४
 ६३ गर्भ वृद्धि का व सूती का कथन ... १८६
 प्रथम शतक का आठवा उद्देशा. १९०
 ६४ एकांत बाल मनुष्य किस का आयुष्य करे १९०
 ६५ एकांत पंडित मनुष्य किस का आयुष्य करे. १९१
 ६६ बाल पंडित मनुष्य किस का आयुष्य करे १९२
 ६७ मृग वधक मनुष्य को कितनी क्रिया. १९४
 ६८ आश्रिकाय प्रवृत्तित कर्ता को कितनी क्रिया ... १९७
 पुनः मृगमारने वाले की क्रिया ... २००
 ७० मृगवधक को पुरुषमारने दोनोंकी क्रिया. २०१
 ७१ पुरुषमारने वाले को कितनी क्रिया. २०३
 ७२ दोनों समान मनुष्य में जयपराजय ... २०४
 ७३ सर्वार्थ अर्चार्थ का प्रश्नोत्तर ... २०६
 प्रथम शतक का नववा उद्देशा. २१०
 ७४ जीव गुरुलयु किस प्रकार होता है ... २१०

- ४९ लोक अलोक द्वीप समुद्र की स्पर्शना. V १४८
 ५० जीव प्राणातिपातकी क्रिया करे ? ३. १४९
 ५१ रोहा अनगर के प्रश्नोत्तर-लोक अलोक,
 V जीव कर्म भव्याभव्यक सिद्धासिद्ध,
 मूर्गा अंडादि पहिले पीछे कौन ? V.. १४९
 ५२ गौतमस्वामीके प्रश्नोत्तर लोक की स्थिति. १६०
 ५३ लोक किस आधार से रहा-दृष्टांत V. १६१
 ५४ जीव पुद्गल परस्पर मिले क्या ? ... १६३
 ५५ सदैव मूर्ख पानी की वर्षाद ... १६६
 प्रथम शतकका सातवा उद्देश. १६६
 ५६ नेरीया-देशसे-उत्पन्न आहार-उद्धर्त. अथा
 उत्पन्न के प्रश्नोत्तर ... १६६
 ५७ विग्रहगति के प्रश्नोत्तर ... १७२
 ५८ देव-मनुष्य के आहार की दुर्गंछा करे व मनुष्य
 तीर्थचका आयुष्य वेदे ... १७३
 ५९ गर्भ उत्पत्ति आश्रय प्रश्नोत्तरों V ... १७४
 ६० माता पितों के अंग व स्थिति. V १८०

- २७ सचिद्वन काल आश्रित्य प्रभोत्तर ... ७८
- २८ अमंयति आदिं वारे प्रकार के तीर्थो
- देवश्रेष्ठ में उत्पन्न होने के प्रभोत्तर ... ८२
- २९ असती के आयुष्य किन्तु प्रभोत्तर के? ... ८४
- प्रथम शतक का तृतीयदिश ... ८८
- ३० काशिमोहनीय कर्म के प्रभोत्तर ... ८८
- ३१ आराध्यक तीर्थों के लक्षण ... ९१
- ३२ पुनःकाशिमोहनीय के प्रभोत्तर ... ९४
- ३३ सायु के भी काशिमोहनीय क्या होता है. १.२.२
- प्रथम शतक का चौथा उद्देश... १०६
- ३४ कर्म प्रकृति तथा मोहनीय कर्म है ... १२४
- ३५ अपकर्मन के प्रभोत्तर ... १२९
- ३६ कर्म भोगने विना मोक्ष नहीं ... १३१
- ३७ पुद्गल आश्रित्य प्रभोत्तर ... १३३
- ३८ तीर्थ के प्रभोत्तर ... १३४

- ३९ प्रपन्न की मोक्ष नहीं करनी की है ... १३८
- ४० केवल ज्ञान में अधिक ज्ञान नहीं ... १४८
- प्रथम शतक का पांचवा उद्देश. १४९
- ४१ नारक के नाशमान्य की संख्या ... १५१
- ४२ भूतनर्षि के मुरन की संख्या ... १५१
- ४३ देवोत्तमों में उपोत्तिवक के नाम की संख्या १५३
- ४४ वेदान्तिक के सिद्धान्तों की संख्या ... १५३
- ४५ नारक की विधियों के स्थान रूपान्तर के भाग १५४
- ४६ पाशों रक्षण के भाग का देव ... १५४
- ४७ नारकी—भक्तारमा, सुगीर, पंगुन, ... १५४
- संस्थान, वेदान्त, इत्यादि, जो पारदर्शक, ... १५४
- इनमें के भाग ... १५४
- ४८ नारक के लगे योगियों संख्या के भाग ... १५४
- प्रथम शतक का छठवा उद्देश... १५५
- ४९ १२४ भक्त कर्म का ही विवरण क्या. १६०

विषयानुक्रमिका

प्राचीन-युग [अथवा]

१००. मनुष्य के जीवन की स्थिति ... ३३०

१०१. एक जीव के पिता पुत्र की संख्या ... ३३२

१०२. मथुन सेवन में महा हिसा ... ३३४

१०३. तुंगीया नगरी के श्रावक का वर्णन व स्थितियों से प्रथम चर्चा, महावीर स्वामी की सम्मती ... ३३५

१०४. ब्रह्मा उष्णपानी का प्रश्नोत्तर ... ३३५

द्वितीय शतक का छट्टा उद्देशा. ३ ६४

१०५. ओहारणी भाषा के प्रश्नोत्तर ... ३६४

द्वितीय शतक का सातवा उद्देशा ३ ६५

१०६. देवताओं का कथन ... ३६५

द्वितीय शतक का आठवा उद्देशा ३ ६७

१०७. अमुरेन्द्र की सौधर्मा सभा ... ३६७

द्वितीय शतक का नववा उद्देशा ३ ६८

१०८. समय क्षेत्र [अहाइ द्वीप] का ... ३७४

द्वितीय शतक का दशवा उद्देशा ३ ७५

१०९. आस्तिकाया का अधिकार ... ३७५

११०. त्रिव के उत्थानादि गुण ... ३८३

१११. आकाश के प्रकार ... ३८५

११२. आकास्तिकाय की स्पर्शना ... ३८८

३. तृतीय शतक का प्रथमोद्देश ३ ९४

११३. चमरेन्द्र की ऋद्धि V ... ३९४

११४. चमरेन्द्र के सामानीक देव की ऋद्धि V. ३९९

११५. चमरेन्द्रके त्रायत्रिंशक देव की ऋद्धि ~ ४०१

११६. वेन्द्रे की ऋद्धि V ... ४०६

११७. धरणेन्द्र की ऋद्धि V ... ४०८

११८. वाणव्यन्तर ज्योतिषी इन्द्रकी ऋद्धि ... ४१०

११९. शक्रेन्द्र की ऋद्धि V ... ४११

१२०. तिप्यगुप्त अनगर, समानिक देव हुअे ४१३

१२१. इशान इन्द्र की ऋद्धि V ... ४१७

१२२. कुरुदत्त अणगर-गामनिक देव V ... ४१८

१२३. सनत्कुमारादि सव इन्द्र की ऋद्धि V. ४२०

१२४. ईशानेन्द्र का पूर्वभव-तामली तापस. ७४२५

७५	आकाश का गुह्य लय	२१०
७६	चैतन्य देह का गुह्य लय	२११
७७	पृथ्वी का गुह्य लय	२१२
७८	लेखा, देष्टा, दर्शन, ज्ञान, मन्त्र, जोगिनि	२१८
७९	अच्छे साधने लक्षण	२१८
८०	एक समय में दो आयुक्त	२१९
८१	कालोन्नी मातु के साधयिक के मन्त्र	२२२
८२	मन्त्र प्रथम से एक ही लिये लगे	२२३
८३	आधोर्ध्व आधार कर्म कर्मक	२२४
८४	क्रमिक आधार कर्म अतिक्रम्य	२२४
८५	अधिर पदार्थ का पश्चात् सेवा	२२५
	प्रथम शतक का दशवा उद्देश्य	२२८
८६	अन्योन्यिक कहे चन्मान अधिष्ठा	२२८
८७	एक ही एक समय में दो लिये लगे	२२८
	द्वितीय शतक का प्रथमोद्देश्य	२३९

८८	वसुधा धार तीव्र के भाग्यलक्षण	२३९
८९	वायुमान के वायु का ही भाग्यलक्षण	२४०
९०	पृथ्वी (वायुक मानो) का भाग्यलक्षण	२४०
९१	मन्त्र प्रथम से अधिष्ठा	२४१
९२	मन्त्र प्रथम से अधिष्ठा	२४१
९३	द्वितीय शतक का दशवा उद्देश्य	२४२
९४	मन्त्र प्रथम से अधिष्ठा	२४२
९५	द्वितीय शतक का दशवा उद्देश्य	२४२
९६	मन्त्र प्रथम से अधिष्ठा	२४३
९७	द्वितीय शतक का दशवा उद्देश्य	२४३
९८	एक समय में दो सेवा	२४५
९९	द्वितीय शतक का दशवा उद्देश्य	२४५

- पांचवे शतक का दुसरा उद्देश ६२०
 १६८ बायुकाय आश्रिय प्रश्नोत्तर ... ६२१
 १६९ धान्य धातू हड्डिचर्म कोयले राख गोबर ... ६२५
 इन के शरीर का प्रश्नोत्तर ... ६२९
 १६० लवण-समुद्र का प्रमाण U
 पांचवे शतक का तीसरा उद्देश ६३०
 १६१ एक समय में दो भव का आयुष्यवेदे ६३०
 १६२ जीव पर भव में आयुष्य सहित उत्पन्न होवे. ... ६३४
 पांचवा शतक का चौथा उद्देश ६३६
 १६३ छद्मस्त मुने केवली शब्द जाने देख ६३६
 १६४ छद्मस्त हसे केवली हसे नहीं ... ६४०
 १६५ हंसने से कर्म बन्ध होता है ... ६४१
 १६६ छद्मस्त निद्राले केवली नहीं है ... ६४२
 १६७ निद्रालेने से कर्म बंध होता है ... ६४३
 १६८ हरि गेमेपी देव गर्भ का संहरण करे ... ६४४
 १६९ एतंतणकुमार साधु पातरी तिराई ... ६४६

- तृतीय शतक का दशवा उद्देश. ५९०
 १४९ चोसट इन्द्रोकी परिपद का U ... ५९०
 चतुर्थ शतक के चार उद्देश ५९३
 १५० ईशानिन्द्र के चारों लोकपाल U ... ५९३
 चतुर्थ शतक के चार उद्देश ५९६
 १५१ चारों लोकपालकी राज्यधानी के U. ५९६
 चतुर्थ शतक का नववा उद्देश ५९७
 १५२ नेरीयों के उत्पन्न होने का ... ५९७
 चतुर्थ शतक का दशवा उद्देश ५९८
 १५३ परस्पर लेख्या परिणमेका ... ५९८
 पांचवा शतक का पहिला उद्देश ६०१
 १५४ जम्बुद्वीप में सूर्य का चारों दिशा में उदयुद०? ... ६०५
 १५५ दिन रात्रि का प्रमाण U ... ६०५
 १५६ जम्बुद्वीप के क्षत्रों में ऋतु आदि प्रमाण ६१०
 १५७ लवण समुद्र, धातकी खंडहीप, कालोदर्या U
 समुद्र, पुष्करार्थद्वीपसूर्योदयका कथन ६१६ U

- १२५ सौथर्म ईशान देवता का विशेषण ५. १०७
- १२६ सौथर्मन्द्र इशानेन्द्र का मिलाप ७ ... १२८
- १२७ उक्त दोनों इन्द्रों का अगडा, मन्त्र ७
- मरिन्द्र समजाये, सनत्कुपारेद्र का पूर्वभा १३०
- तृतीय शतक का दूसरा उद्रेग ४६५
- १२८ अमुरकुमार का निवासस्थान ७ ... १२९
- १२९ अमुरकुमार का तीनों दिशा में गमन १३०
- १३० वैमानिक देव चोरी करने हैं ७ ... १३१
- १३१ अमुरकुमार का सौथर्म दर्शन में गमन १३१
- १३२ अमुरकुमार का पूर्वभग नामधेयता १३२
- १३३ सौथर्मन्द्र अमुरेन्द्र बल की गति ७ ... १३४
- तृतीय शतक का तीसरा उद्रेग ५१७
- १३४ मंडोपुत्र साधु के क्रिया के माओपार ५१७
- १३५ साधु को भी क्रिया व्यगनी है ... ५२३
- १३६ सायागी सक्रिय भन्नाक्रिया नहीं करे ५२३
- १३७ योगनिहंथा भन्नाक्रिया करे रक्षण ... ५२४
- १३८ लक्षण समुद्र की भारती भाने का महा ५२५

- तृतीय शतक का चौथा उद्रेग ५३१
- १३९ भाषितान्ता साधु के देवता के ज्ञान प्राप्ति ५३१
- १४० साधु साया को ईश्वर का इक्ष्व ७ ... ५३१
- १४१ पद्म को विधिपत्र दत्ते के विनयना ५३१
- १४२ रामभ में पद्मप शीने को अज्ञा ५३८
- १४३ साधु के ईश्वर ज्ञान के सम्भार ७ ... ५४१
- तृतीय शतक का अथमोद्रेग ५४४
- १४४ पुनःसाधु के ईश्वर ज्ञान के सम्भार ७ ... ५४४
- तृतीय शतक का छठा उद्रेग ५४५
- १४५ विभक्त ज्ञान का भासने का ५४५
- १४६ साधु के ईश्वर शक्ति का ज्ञान ५४६
- तृतीय शतक का सातवा उद्रेग ५४७
- १४७ चौथे शताब्दी के विद्वानों का ज्ञान
- उन के सांख्य दृष्टि में अर्थ ५४७
- तृतीय शतक का आठवा उद्रेग ५४८
- १४८ देवताओं के दलिक ज्ञान देवता ५४८

- १९४ प्रमाणु व स्फुन्धो की स्थिति ७०१
- १९५ प्रमाणु स्फुन्धों का अंतर काल ७०४
- १९६ प्रमाणु स्फुन्धों की अल्पा बहुत्व ७०६
- १९७ चौबीस ही दंडक का आरंभ परिग्रह ७०७
- १९८ पांच प्रकार के हेतुओं ७१३
- पांचवा शतक का-आठवा उद्देशा ७१५
- १९९ नारदपुत्र निर्ग्रन्थ पुत्रसाधु की पुत्रलो
चर्चा, ६१५
- २०० जीवादि की हानी वृद्धी अवस्थितता ७२२
- २०१ सेवचर सावचय के प्रश्नोत्तर ७२८
- पांचवा शतकका नववा उद्देशा ७३१
- २०२ राजगृही पृथव्यादि किसे कहना ? ७३१
- २०३ दिन का उद्योत रात्रि का अन्धकार ७३२
- २०४ चौबीस ही दंडक में उद्योत अंधकार ७३४
- २०५ मनुष्य लोक सिधाय काल गणण कहीं
भी नहीं ७३५
- २०६ असंख्यात लोक अनंत अहोरात्रि ७३७

- २०७ देवलोक कितने कहे हैं ✓ ७४२
- पांचवा शतक का दशवा उद्देशा ७४३
- २०८ चन्द्रमा देव का निवास स्थान । ७४३
- छठे शतक का-प्रथमोद्देशा ७४४
- २०९ महा वेदना महा निर्जरा आदि दृष्टान्तो ७४४
- २१० करण का कथन ७५०
- २११ वेदना निर्जरा की चौभंगी ७५४
- छठे शतक का-दूसरा उद्देशा. ७५६
- २१२ आहार अधिकार ७५६
- छठे शतक का-तीसरा उद्देशा. ७५७
- २१३ वस्त्र का और कर्म का दृष्टान्तिक संबंध ७५७
- २१४ कर्म बंध के स्थिति आदि १६ द्वारों. ७६७
- छठे शतक का-चौथा उद्देशा. ७८०
- २१५ जीवादि काल आश्रय समंदशी अमदेशी
क भांगी ७८०
- २१६ जीवादि चौबीस दंडक पचकत्वानी है क्या ७९०

- १६९. महाशुक्र देव का मनोमय प्रश्न । ३४२.
- १७०. देवता को असंगति कहना गया ! ३४३.
- १७१. देवताओं का अर्थभागभी भाग । ३४७.
- १७२. केवली भोधगापी को जाने तपश्च ३४८.
- मुनकर पोषगापी जाने.
- १७३. चार प्रमाण, केवली चर्य रूप जानें. ३४९.
- १७४. केवली के मनयोग को देवता जाने । ३५१.
- १७५. अनुचर विमान के देव नहीं में मभरते । ३५३.
- १७६. अनुचर विमान के देव भोगमोरी नहीं । ३५५.
- १७७. केवली इन्द्रियों से जाने देवे नहीं. ३५६.
- १७८. केवली तपमननर भेष पश्यते हैं । ३५८.
- १७९. चन्द्रेपूर्व पारी भ्रमेक रूप रोगमरे । ३६०.
- पंचवे गतक का पापना उद्देश ३६१.
- १८०. छपहा मनुष्य गिद्ध नहीं रोये. ३६२.
- १८१. सब जीवों एवंभूत चेतना वेदों हैं. ३७१.
- १८२. मरत के चर्नमान कृतारों ३७३.
- पंचवे गतक लट्टा उद्देश ३७३.

- १८३. मन्गपुत्र दीर्घाद्वार रंगे रंगे । १८३.
- १८४. भगवन्दीर्घपु भगवन्दीर्घपु रंगे रंगे । १८४.
- १८५. पोगीसे गदापात्र मंत्रने से विना. १८५.
- १८६. रान् रंगने मरिचने रंगे रंगे विना. १८६.
- १८७. भगि नराजने व युक्तने से १८७.
- पाप विधि ! १८७.
- १८८. धनुष पात्र रत्नने से विरुजो विना. १८८.
- १८९. पात्र ही पाप यो दोषन से रंगे १८९.
- नो हैं. १८९.
- १९०. आवाहर्षि भर्त्सि मरेववापान भर्त्सि १९०.
- ने हा पात्र. १९०.
- १९१. कापदे १९१. कापदे मरुत्पके मरुत्पके १९१.
- से मरुत्पके १९१.
- १९२. भाव (रंग) चरने से रंगे रंगे १९२.
- गिनता मरुत्पके ही मरुत्पके १९२.
- १९३. मरुत्पके भर्त्सि मरुत्पके १९३.
- १९४. मरुत्पके मरुत्पके मरुत्पके १९४.

- २०७ देवलोक कितने कोहे है ७४२
 पांचवा शतक का दशवा उद्देशा ७४३
 २०८ चन्द्रमा देव का निवास स्थान ७४३
 छठे शतक का-प्रथमोद्देशा ७४४
 २०९ महा वेदना महा निर्जरा आदि दृष्टि ७४४
 २१० करण का कथन ७५०
 २११ वेदना निर्जरा की चौभगी ७५४
 छठे शतक का-दूसरा उद्देशा. ७५६
 २१२ आहार अधिकार ७५६
 छठे शतक का-तीसरा उद्देशा. ७५७
 २१३ वस्तु का और कर्म का दृष्टिक संबंध ७५७
 २१४ कर्म बंध के स्थिति आदि १६ द्वारों. ७६७
 छठे शतक का-चौथा उद्देशा. ७८०
 २१५ जीवादि काल आश्रय संप्रदशी अप्रदशी
 कर्माणि ७८०
 २१६ जीवादि चौबीस दंडक पचत्त्वानि है क्या ७९०

- १९४ प्रमाणु व स्तन्यो की स्थिति. ७०१
 १९५ प्रमाणु स्तनों का अंतर काल ७०४
 १९६ प्रमाणु स्तनों की अल्पा वृद्धत्व ७०६
 १९७ चौबीस ही दंडक का आरंभ परिग्रह ७०७
 १९८ पांच प्रकार के हेतुओं ७१३
 पांचवा शतक का-आठवा उद्देशा ७१५
 १९९ नारदपुत्र निर्ग्रन्थ पुत्रसाधु की पुत्रली
 चर्चा, ७१६
 २०० जीवादि की दानी वृद्धी अवस्थितता ७२२
 २०१ सोवचय सावचय के पक्षोत्तर ७२८
 पांचवा शतकका नववा उद्देशा ७३१
 २०२ राजमृही पृथव्यादि किसे कहना ? ७३१
 २०३ दिन का लघोत रात्रि का अन्धकार ७३२
 २०४ चौबीस ही दंडक में लघोत अंधकार ७३४
 २०५ मनुष्य लोक सिवाय काल प्रमाण कहीं
 भी नहीं ७३५
 २०६ असंख्यान लोक अनंत अधोरात्रि ७३७

- छठे शतक का-पांचवा उद्देश्य। ७१२
 २१७ तमस्कान्या का अधिकार ७१२
 २१८ कृष्ण राजी का अधिकार ८०३
 २१९ लौकान्तिक देवता का अधिकार ८१०
 छठे शतक का-छठ्ठा उद्देश्य ८१५
 २२० नरक देव के आचामा की मंत्रणा ८१०
 २२१ परणान्तिक समुद्रयात्र का वचन ८१६
 छठे शतक का-सततया उद्देश्य.... ८२२
 २२२ धान्य वन्यन में मयोनिक सिन्हा रई. ८२२.
 २२३ मूर्धन के भायोभादि ज्ञान वधान. ८२४
 २२४ संख्यान कान्ति, पत्सोपम, सागरोपम
 कालवक्रादि. ८२४
 २२५ मयम आराका वनन ८३४
 छठे शतक का-आठवा उद्देश्य.. ८३७
 २२६ नरक में क्या क्या नहीं है ८३६
 २२७ उ महार आयुर्वेद का वचन ८४३

- २२८ चरणादि मन्त्रों का वचन का वचन ८४३
 २२९ शिवमन्त्रों के वचन ८४४
 छठे शतक का-नौवा उद्देश्य ८४५
 २३० एक उद्देश्य का-विधि अन्तर्देश्यी वंश ८४५
 २३१ देवता कादि के वचनों का वंशकथने ८४६
 २३२ देव के वंश वचन का-विधि वंश ८४८
 २३३ अधिमन्त्र पुस्तकें का-विधि ८४८
 छठे शतक का-दसवा उद्देश्य ८५१
 २३४ मन्त्र पुस्तक के वचनों का-विधि ८५१
 २३५ मंत्र पुस्तक की वंशकथना ८५४
 २३६ मंत्र पुस्तक की वंशकथना ८५६
 २३७ अन्तर्देश्य का-विधि का-विधि ८५६
 २३८ मंत्र पुस्तक पुस्तकें का-विधि ८५७
 २३९ आचार दृष्टि का-विधि का-विधि ८५८
 २४० देवता विधि का-विधि का-विधि ८५९
 ७ मन्त्र पुस्तक का-विधि का-विधि ८५९
 २४१ अन्तर्देश्यी विधि का-विधि का-विधि ८५९

विषयानुक्रमिका

सप्तम शतक का-तीसरा उद्देशा ८९५
 २५८ वनस्पति के न्युनाधिक आहार काल ८९५
 २५९ मूल वंदादी के पृथक २ जीवों ८९७
 २६० अनंत काय कंद मूल के नाम ८९८
 २६१ लेख्यानुसार कर्म न्युनाधिक ८९९
 २६२ वेदना निर्जरा की भिन्नता ९०१
 २६३ नेरीये के साता असाता दोनों हैं ९०५
 सप्तम् शतक का-चौथा उद्देशा ९०७
 २६४ संसारी जीवों छ प्रकार के ९०७
 सप्तम शतक का-पांचवा उद्देशा ९०८
 २६५ खचरकी तीन प्रकार की योनी ९०८
 सप्तम् शतक का छट्टा उद्देशा ९१०
 २६६ यहां आयुष्य बंधे वहां भोगवे ९१०
 २६७ यहां अल्पवेदना वहां महावेदना ९११
 २६७ अभोगनिवृत्ति अनाभोगनिवृत्ति आय ९१३
 २६८ अवारापापसे कर्कश वेदनी कर्म बन्धे ९१४

८६४ लोक का संस्थान
 २४३ श्रावकको सामायिकर्म सम्परायक्रिया ८६४
 २४४ पृथ्वीखोदते त्रस मरेतो प्रत्या ८६६
 ख्यान खंडन नहीं होवे
 २४५ साधु को शुद्ध आहार देते सहायदात होवे ८६७
 २४६ साधु को आहार देते मोक्ष प्राप्त करे. ८६७
 २४७ अकार्मि जीव की गति के दृष्टांत ८६९
 २४८ दुःखी दुःख को स्पर्शता है क्या ? ८७३
 २४९ साधु अयत्ना से कार्य कर्ता संपराइ क्रिया ८७४
 २५० ईगल धूम्र दोपवाला आहार ८७६
 २५६ क्षेत्र काल मार्ग प्रमाण अतिक्रान्त आहार ८७८
 २५३ शाखातीत एषणी वेपणी सगुदानी आहार ८८१
 सातवे शतक का-दूसरा उद्देशा. ८८३
 २५४ सुप्रत्याख्यान दुप्रत्याख्यान ८८३
 २५५ प्रत्याख्यान दो प्रकार के ८८७
 २५६ जीव प्रत्याख्यानी अप्रत्याख्यानी ? ८९३
 २५७ जीव शाश्वता की अशाश्वता ? ८९४

छठे शतक का-पांचवा उद्देश्य.	७९२
२१७ तमस्काया का अधिकार	७९३
२१८ कृष्ण राजी का अधिकार	८०३
२१९ लौकान्तिक देवता का अधिकार /	८१०
छठे शतक का-छठवा उद्देश्य	८१५
२२० नरक देव के आचामा की गंत्या	८१५
२२१ मरणांतिक समुद्रयान का स्थान	८१६
छठे शतक का-सातवा उद्देश्य....	८२२
२२२ धान्य बन्धन में मयोनिरु सिन्धुता रई. ८२२.	
२२३ मूर्तन के श्वाशोष्वादि चान समान.	८२४
२२४ संस्थान कांठे, पल्पोपम, सागोपम कालनक्रादि.	८२४
२२५ प्रथम आराका र्जन	८३४
छठे शतक का-आठवा उद्देश्य..	८३५
२२६ नरक में गया गया नहीं ई	८३५
२२७ छ नधार आपुत्रेय का स्थान.	८४०

२२८ नरनाशि समुद्रों का नाम का स्थान	८४१
२२९ शीतपद्यों के नाम	८४१
उष्ट्र नामक का-नववा उद्देश्य	८४५
२३० एक वर्षका समीपि भयानकसिद्धी रई. ८४६	
२३१ देवता शक्ति के प्रत्यक्ष का रई. ८४६	
२३२ रई के इडे प्रत्यक्ष का रई. ८४६	
२३३ भविष्यत् प्रत्यक्ष का नाम	८४६
उष्ट्र नामक का-दसवा उद्देश्य	८५३
२३४ समुद्र युद्ध के प्रत्यक्ष का रई. ८५३	
२३५ शीत पद्यों की रई. ८५३	
२३६ शीत पद्यों की रई. ८५६	
२३७ समुद्रयान का रई. ८५६	
२३८ शीत पद्यों युद्ध के प्रत्यक्ष का रई	८५७
२३९ आहार प्रत्यक्ष का नाम का रई	८५८
२४० देवता शक्ति का नाम देवता रई	८५९
७ मरुत नामक का-सप्तम उद्देश्य	८५९
२४१ भयानक शक्ति का नाम का रई. ८५९	

विषयानुक्रमिका

सप्तम शतक का-तीसरा उद्देशा	८९५
२५८ वनस्पति के न्युनाधिक आहार काल	८९५
२५९ मूल बंदादी के पृथक २ जीवों	८९७
२६० अनंत काय कंद मूल के नाम	८९८
२६१ लक्षयानुसार कर्म न्युनाधिक	८९९
२६२ वेदना निर्जरा की भिन्नता	९०१
२६३ नेरीये के साता असाता दोनों हैं	९०५
सप्तम् शतक का-चौथा उद्देशा	९०७
२६४ संसारी जीवों छ प्रकार के	९०७
सप्तम शतक का-पांचवा उद्देशा	९०८
२६५ खेचरकी तीन प्रकार की योनी	९०८
सप्तम् शतक का छट्टा उद्देशा	९१०
२६६ यहां आयुष्य बंधे वहां भोगवे	९१०
२६७ यहां अल्पवेदना वहां महावेदना	९११
२६७ अभोगनिवृत्ति अनाभोगनिवृत्ति आय	९१३
२६८ अवारापापसे कर्कश वेदनी कर्म बन्धे	९१४

२४२ लोक का संस्थान	८६४
२४३ श्रावकको सामाधिकर्म सम्परायक्रिया	८६४
२४४ पृथ्वीखोदते त्रस मरेतो मत्या	८६६
ख्यान खंडन नहीं होवे	८६६
२४५ साधु को शुद्ध आहार देते सहायदात होवे	८६७
२४६ साधु का आहार देते मोक्ष प्राप्त करे.	८६७
२४७ अकार्मि जीव की गति के दृष्टांत	८६९
२४८ दुःखी दुःख को स्पर्शता है क्या ?	८७३
२४९ साधु अयत्ना से कार्य कर्ता संपराइ क्रिया	८७४
२५० इंगाल धूम्र दोषवाला आहार	८७६
२५६ क्षेत्र काल मार्ग प्रमाण अतिक्रान्त आहार	८७८
२५३ शास्त्रातीत एषणी वेपणी सद्युदानी आहार	८८१
सातवे शतक का-दूसरा उद्देशा.	८८३
२५४ सुप्रत्याख्यान दुप्रत्याख्यान	८८३
२५५ प्रत्यख्यान दो प्रकार के	८८७
२५६ जीव प्रत्याख्यानी अप्रत्याख्यानी ?	८९३
२५७ जीव शाश्वता की अशाश्वता ?	८९४

- छठे शतक का-पांचवा उईशा. ७१२
 २१७ तमस्काया का अधिकार ७१२
 २१८ कृष्ण राजी का अधिकार ८३३
 २१९ लोकान्तिक देवता का अधिकार !/ ८१०
 छठे शतक का-छठ्ठा उईशा ८१५
 २२० नरक देव के आनामा की मंगला ८१५
 २२१ मरणांतिक समुद्रयान का कथन ८१६
 छठे शतक का-तलवा उईशा..... ८२२
 २२२ धान्य वन्यन में मयोनिक स्मिता रई. ८२२
 २२३ मूर्त के श्वाशोश्वादि काम ममान. ८२४
 २२४ संख्यान काले, पत्थोपम, सागरोपम
 कालचक्रारि. ८२४
 २२५ प्रथम आराका वनन ८३४
 छठे शतक का-आठवा उईशा.. ८३५
 २२६ नरक में रवा रवा नीं ट ८३५
 २२७ उ ममार आपुंयंय का कथन. ८४०

- २२८ नरनाटे मयुंय का कथी का कथन ८४१
 २२९ शिरमयुंय के मार ८४१
 छठे शतक का-नावा उईशा ८४२
 २३० एक बंधवा एतंयिंय भयभईयों के बंध ८४२
 २३१ देवता वारि के सुइयो पर वैकटको ८४६
 २३२ देव के इहे सुइय कर्णिक के कथिसे ८४८
 २३३ भविष्य सुइयेंयों के कथि ८४९
 छठे शतक का-दसवा उईशा ८५१
 २३४ गुण गुण के सुइयो मराम दे ८५१
 २३५ जीव सुइय की सुइय ८५४
 २३६ जीव माल की सुइय ८५६
 २३७ मन्थामन्थ का सुइय मराम ८५६
 २३८ जीव गुण गुण सुइयो सुइय दे ८६७
 २३९ आरि गुण का सुइय ८६८
 २४० देवती सुइयो पर सुइय सुइय ८६९
 ० ममान मयुंय का-मयुंयेंय ८७१
 २४१ भयमारक सुइयो का-मयुंयेंय का कथन ८६९

विषयानुक्रमिका

सप्तम शतक का-तीसरा उद्देशा	८९५
२५८ वनस्पति के न्युनाधिक आहार काल	८९५
२५९ मूल बंदादी के पृथक २ जीवों	८९७
२६० अनंत काय कंद मूल के नाम	८९८
२६१ लक्षयानुसार कर्म न्युनाधिक	८९९
२६२ वेदना निर्जरा की भिन्नता	९०१
२६३ नेरीये के सात असाता दोनों हैं	९०५
सप्तम् शतक का-चौथा उद्देशा	९०७
२६४ संसारी जीवों छ प्रकार के	९०७
सप्तम शतक का-पांचवा उद्देशा	९०८
२६५ खेचरकी तीन प्रकार की येनी	९०८
सप्तम् शतक का छठ्ठा उद्देशा	९१०
२६६ यहां आयुष्य बंधे वहां भोगवे	९१०
२६७ यहां अल्पवेदना वहां महावेदना	९११
२६७ अमोगनिवृति अनामोगनिवृति आय	९१३
२६८ अवारापापसे कर्कश वेदनी कर्म बन्धे	९१४

२४२ लोक का संस्थान	८६४
२४३ आबकको सामाधिकर्म सम्परायक्रिया	८६४
२४४ पृथ्वीखोदते त्रस मरेतो प्रत्या ख्यान खंडन नहीं होवे	८६६
२४५ साधु को शुद्ध आहार देते सहायदात होवे	८६७
२४६ साधु को आहार देते मोक्ष प्राप्त करे.	८६७
२४७ अकार्षि जीव की गति के दृष्टांत	८६९
२४८ दुःखी दुःख को स्पर्शता है क्या ?	८७३
२४९ साधु अयत्ना से कार्य कर्ता संपराइ क्रिया	८७४
२५० इंगाल घूमन दोपवाला आहार	८७६
२५६ क्षेत्र काल मार्ग प्रमाण अतिक्रान्त आहार	८७८
२५३ शास्त्रातीत एषणी वेषणी सद्गदानी आहार	८८१
सातवे शतक का-दूसरा उद्देशा.	८८३
२५४ सुप्रत्याख्यान दुप्रत्याख्यान	८८३
२५५ प्रत्यख्यान दो प्रकार के	८८७
२५६ जीव प्रत्याख्यानी अप्रत्याख्यानी ?	८९३
२५७ जीव शाश्वता की अशाश्वता ?	८९४

- छठे शतक का-पांचवा उद्देश्य. ७१२
 २१७ तपस्काया का अधिकार ७१२
 २१८ कृष्ण राजी का अधिकार ८३३
 २१९ लोकान्तिक देवता का अधिकार ! ८१०
 छठे शतक का-छठ्ठा उद्देश्य ८१५
 २२० नरक देव के नाममा की मंगला ८१५
 २२१ परणांतिक समुद्रयान का रूपन ८१६
 छठे शतक का-ततवा उद्देश्य..... ८२२
 २२२ पान्य गन्धन में मयोनिक स्त्रिया री. ८२२
 २२३ गर्भन के श्वाश्रोथादि काम समयन. ८२४
 २२४ संख्यान काले, पन्थोपम, सागरोपम
 कालचक्रादि. ८२४
 २२५ मयम आराका पंजन ८३४
 छठे शतक का-आठवा उद्देश्य.. ८३४
 २२६ नरक में त्या गया नहीं है ८३५
 २२७ छ मदार आयुबंध का रूपन. ८४०

- २२८ नरगादि मनुष्यो का नामो का ८४१
 २२९ शीरमनुष्यो के नाम ८४१
 छठे शतक का-नावा उद्देश्य ८४५
 २३० एक वर्षका सम्पत्ति अन्वयविद्यो की ८४५
 २३१ देवता शरीर के दुष्टो पर वैजयन्तो ८४६
 २३२ देव के द्वे दुष्टक सम्पत्ति के परिणमे ८४८
 २३३ अविमल सुदुष्टोपमो के भाषे ८४९
 छठे शतक का-दसवा उद्देश्य ८५१
 २३४ गुण दुःख के दुष्टो अन्वय है ८५१
 २३५ शीर चरमन की दुष्टरूप ८५१
 २३६ शीर माल की दुष्टरूप ८५५
 २३७ अन्वयान्त्रय का ली माल ८५६
 २३८ शीर गुण दुःख दुष्टो उद्देश्य है ८५७
 २३९ आगर दुष्टक अन्वय का द्वे ८५८
 २४० वैश्वी शिष्टो कर मन्त्रे देवे यो ८५९
 ७ शतक का-एक का-दसवा उद्देश्य ८६३
 २४१ अन्वयान्त्रय की शिष्टि अन्वयिक का ८६४

सप्तम शतक का-तीसरा उद्देशा	८९५
२५८ वनस्पति के न्यूनाधिक आहार काल	८९५
२५९ मूल बंदादी के पृथक २ जीवों	८९७
२६० अनंत काय कंद मूल के नाम	८९८
२६१ लेख्यानुसार कर्म न्युनाधिक	८९९
२६२ वेदना निर्जरा की भिन्नता	९०१
२६३ नेरीये के साता असाता दोनों हैं	९०५
सप्तम् शतक का-चौथा उद्देशा	९०७
२६४ संसारी जीवों छ प्रकार के	९०७
सप्तम शतक का-पांचवा उद्देशा	९०८
२६५ खेचरकी तीन प्रकार की योनी	९०८
सप्तम् शतक का छट्टा उद्देशा	९१०
२६६ यहां आयुष्य बंधे वहां भोगवे	९१०
२६७ यहां अल्पवेदना वहां महावेदना	९११
२६७ अभोगनिवृत्ति अनाभोगनिवृत्ति आय	९१३
२६८ अठारापापसे कर्कश वेदनी कर्म बन्धे	९१४

२४२ लोक का संस्थान	८६४
२४३ श्रावकको सामाधिकर्म सम्परायक्रिया	८६४
२४४ पृथ्वीखोदते त्रस मरेतो मृत्या	८६६
ख्यान खंडन नहीं होवे	८६६
२४५ साधु को शुद्ध आहार देते सहायदात होवे	८६७
२४६ साधु को आहार देते मोक्ष प्राप्त करे	८६७
२४७ अकार्मि जीव की गति के दृष्टांत	८६१
२४८ दुःखी दुःख को स्पर्शता है क्या ?	८७३
२४९ साधु अयत्ना से कार्य कर्ता संपराइ क्रिया	८७४
२५० इंगाल धूम्र दोषवाला आहार	८७६
२५६ क्षेत्र काल मार्ग प्रमाण अतिक्रान्त आहार	८७८
२५३ शास्त्रातीत एषणी वेपणी सगुदानी आहार	८८१
सातवे शतक का-दूसरा उद्देशा	८८३
२५४ सुप्रत्याख्यान दुप्रत्याख्यान	८८३
२५५ प्रत्यख्यान दो प्रकार के	८८७
२५६ जीव प्रत्याख्यानी अप्रत्याख्यानी ?	८९३
२५७ जीव शाश्वता की अशाश्वता ?	८९४

आठवें शतक का-पांचवा उद्देश।	१०८०
३०८ सामायिक में चोरी के माल की चौकस	१०८०
३०९ सामायिकवाले की स्त्री है	... १०८३
३१० गत काल प्रतिक्रमण, वर्तमान संवर अना- गत प्रत्याख्यान इन के भेद	४१, भागि ... १०८४
३११ गौशाल के श्रावकों के नाम, आचार	१०९०
आठवें शतक का-छठ्ठा उद्देश।	१०९४
३१२ साधुको शुद्ध आहार देते एकांत निर्जरा	१०९४
३१३ साधु को अशुद्ध आहार देते अल्प पाप बहु निर्जरा	... १०९५
३१४ असंयति की आहार देते एकांत पाप	१०९५
३१५ आहार आदि जिस के लिये लाया उसे ही साधु को देना	... १०९६
३१६ आलोचना अर्थ पर जावे तो आराधक	१००
३१७ दीपक जलते क्या जलता है ?	११०७
३१७ शरीर से क्रिया का कथन	... ११०९

आठवें शतक का-दूसरा उद्देश।	१०३१
२९६ आशी (दाह) विप का कथन	... १०३१
२९७ विच्छेद में ऋषि सर्पमनुष्य का विप	... १०३२
२९८ कर्म के आशी विप का कथन	... १०३४
२९९ दश वात छद्मस्तन जाने केवली जाने	१०३८
३०० ज्ञान अज्ञान के भेदानुभेद	... १०३९
३०१ ज्ञान अज्ञान की लद्धि के द्वारों	... १०४४
३०२ पांचों ज्ञान का विषय	... १०६४
३०३ पांचों ज्ञान की स्थिति व पर्यव	... १०६८
आठवां शतक का-तीसरा उद्देश।	१०७३
३०४ वृक्षों के प्रकार	... १०७३
३०५ शरीर के दृकडे के अंतर में प्रदेश	१०७६
३०६ पृथ्वी का चरम अचरमपना	... १०७७
आठवां शतक का-चौथा उद्देश।	१०७९
३०७ नायिकादि पांचों क्रिया का	... १०७९

२८३. नेगीपे के सभके दुःख भिन्न ११०
 २८४ नई की दुःख नशा की सभ रेखा १११
 २८५ दानि कुंभे की लामिका जिना ११२
 नानम दानक दानगरा उदिया ११३
 २८६ सापु के बकेन काने का कपूर ११४
 २८७ कोनिक बेसा का दानि जिना करक ११५
 २८८ कोनिक बेसा का मन्त्रमय लेखन ११६
 २८९ मन्त्रमय कोनिक के दुःख के दिय ११७
 २९० मन्त्रमय बेसा के दुःख को उदिया ११८
 नानम दानक का-दशा उदिया ११९
 २९१ अन्व नीदिक की वर्षा आदिकदशा १२०
 २९२ सभके मन्त्रमय मन्त्रमय का दशा १२१
 २९३ अदि दानमय मन्त्रमय अन्वका १२२
 २९४ अदि मन्त्रमय का नानम मन्त्रमय १२३
 अन्व दानक का-दशा उदिया १२४
 २९५ नपोतना, विद्या, विद्या दुःखो का कपूर १२५

२६९ अत्रारापापे त्याग से प्रकृत वेदनी ११४
 २७० नीच दया से माना वेदनी रूप रन्ध्रे ११५
 २७१ नीच को दुःख देने से दुःखना ११६
 २७२ छुटे आराका वर्णन ११७
 सतम शतक का-सातवा उदिया १२८
 २७३ संवत् सापु भी प्र जिययोगसे ज्योपरी १२८
 क्रियाकरे १२९
 २७४ काम भोग रूपी प्रहरी-ग भेदा १३०
 २७५ चौबीस दंडक कामी मोगी का मम १३१
 २७६ छत्रस्त देवता हो भोग भोगने मन्त्र १३२
 २७७ आवधी शानी, नम अर्थी, खल शानी १३३
 २७८ प्रमन्त्री अन्व वेदना वेदने हे ? १३४
 २७९ सती अज्ञानता से निहाय वेदना वेदने १३५
 सतम शतक का-आठवा उदिया १३६
 २७९ छत्रस्त मिद्ध न होये १३७
 २८० दानि कुंभे का मानी नीच १३८
 २८१ दान संशा चौबीस दंडक पर १३९

१० १० १० १० १० १० १० १० १० १०

आठवें शतक का-पांचवा उद्देश।	१०८०
३०८ सामायिक में चोरी के माल की चौकस	१०८०
३०९ सामायिकवाले की स्त्री है	... १०८३
३१० गत काल प्रतिक्रमण, वर्तमान संवर अना- गत प्रत्याख्यान इन के भेद	४२ भागि ... १०८४
३११ गौशाल के श्रावकों के नाम, आचार	१०९०
आठवें शतक का-छठ्ठा उद्देश।	१०९४
३१२ साधुको शुद्ध आहार देते एकांत निर्जरा	१०९४
३१३ साधु को अशुद्ध आहार देते अल्प पाप बहु निर्जरा	... १०९५
३१४ असंयति को आहार देते एकांत पाप	१०९५
३१५ आहार आदि विसं के लिये लाया उसे ही साधु को देना	... १०९६
३१६ आलोचना अर्थपर जाये तो आराधक	१००
३१७ दीपक जलते क्या जलता है ?	... १०७
३१७ शरीर से क्रिया का कथन	... १०९

आठवें शतक का-दूसरा उद्देश।	१०३१
२९६ आशी (दाह) विष का कथन	... १०३१
२९७ विच्छ्र में डरु सर्पनुष्य का विष	... १०३२
२९८ कर्म के आशी विष का कथन	... १०३४
२९९ दश वात छद्मस्तन जाने के यली जाने	१०३८
३०० ज्ञान अज्ञान के भेदानुभेद	... १०३९
३०१ ज्ञान अज्ञान की लद्धि के द्वारों	... १०४४
३०२ पांचों ज्ञान का विषय	... १०६४
३०३ पांचों ज्ञान की स्थिति व पर्यव	... १०६८
आठवा शतक का-तीसरा उद्देश।	१०७३
३०४ वृक्षों के प्रकार	... १०७३
३०५ शरीर के टुकड़े के अंतर में प्रदेश	१०७६
३०६ पृथ्वी का चरम अचरमपना	... १०७७
आठवा शतक का-चौथा उद्देश।	१०७९
३०७ हायिकादि पांचों क्रिया का	... १०७९

- २८२ नैरीये के पापकर्म दुःख हेतुभूत १४०
 २८३ नर्क की दश प्रकार की क्षेत्र वेदना १४३
 २८४ हस्ति कुंभवे की सरीखी क्रिया १४२
 सप्तम शतक का-नववा उद्देशा. १४१
 २८५ साधु के वैक्रेय करने का कथन १४४
 २८६ कोणिक चेडा का महा सिला कंटक सं. १४५
 २८७ कोणिक चेडा का रथमूशल संग्राम १४४
 २८८ शक्रेन्द्र कोणिक के पूर्व के मित्र १... १५६
 २८९ संग्राम में परे वे देवता होवे वरूनागः १५८
 सप्तम शतक का-दशावा उद्देशा. १७१
 २९० अन्य तीर्थिक की चर्चा आस्तिकाया १७२
 २९१ पापकर्म पुण्यकर्म परिणमने का दृष्टांत १८२
 २९३ अग्निप्रजालने से बुझानेवाला अल्पकर्मी १८५
 २९४ अचिंत पुद्गलों का प्रकाश तेजोलिप्या १८८
 अष्टम शतक का-प्रथमोद्देशा. १९०
 २९५ प्रयोगसा, मिस्रा, विशेष पुद्गलोंका कथन १९०

- २६९ अठारापापके त्याग से अकर्मक वेदनी? १४
 २७० नीव दया से साता वेदनी कर्मबन्धे. १५
 २७१ जीव को दुःख देने से दुःखपाव. १६
 १७२ छुटे आराका वर्णन. ११७
 सप्तम शतक का-सातवा उद्देशा. १२८
 २७३ संवृत साधु भी अज्ञयोगसे इयो वही १२८
 क्रियाकर. १२८
 २७४ काम भोग रूपी अरूपी-व भेदों. १२९
 २७५ चौबीस दंडक कामी भोगी का प्रश्न. १३१
 २७५ छद्मस्तदेवता हो भोग भोगने समर्थ है १३४
 २७६ आवधी ज्ञानी. परम अवधी. केवल ज्ञानी १३५
 २७७ असज्ञी अकाम वेदना वेदते हैं ? १३६
 २७८ सज्ञी अज्ञानता से निकरण वेदना वेदते १३८
 सप्तम शतक का-आठवा, उद्देशा. १३९
 २७९ छद्मस्त सिद्ध न होवे १३९
 २८० हस्ति कुंभवे का सरीखा जीव १४०
 २८१ दश संज्ञा चौबीस दंडक पर १४०

नववा शतक का-प्रथमो उद्देश।

३४२ जंबूद्वीप का वर्णन ... १२३६

नववे शतक का-दूसरा उद्देश।

३४२ अढाइ द्वीप के ज्योतिषी की संख्या १२३७

नववे शतक का-तीसरा उद्देश।

३४३ दक्षिण के अठवीस अन्तर द्वीपों ... १२३९

नववा शतक का-इकतीसवा उद्देश।

४४ असोच्चा केवली के श्रावकादि का कथन १२४३

३४६ असोच्चा केवली कैसे होते हैं ... १२५५

३४६ सोच्चा केवली के श्रावकादि का ... १२६४

३४७ सोच्चा केवली कैसे होते हैं ... १२६५

नववा शतक का-बावीसवा उद्देश।

३४८ गंगीया आणगारे भांगे ... १२१०

३४९ भांगे बनाने की विधि का यंत्र ... १३१६

३५५ छिन्नेतार की होते हैं कि अच्छे ? ... १३२६

नववा शतक का-तीसवा उद्देश।

३५१ ऋषभदत्त ब्राह्मण देवानंश ब्राह्मणी, १, ३३४

३५२ जामलीक्षत्री कुमार का अधिकार १, ३५४

३५३ जमालीजी की यातापितासे चर्चा ... १, ३६८

३५४ जमालीजी का दीक्षा औत्सव ... १, ३९०

३५५ जमालीजी स्वच्छंदाचारी श्रद्धाभट्टवने १, ४२१

३५६ जमाली को गौतम स्वामीने हराये. १, ४३२

३५७ जमाली खिविपी देव हुअे ... १, ४३८

नववा शतक का-चौतीसवा उद्देश।

३५८ पुरुष की घोड़े की घात का प्रश्नोत्तर १, ४४६

३५९ ऋषि का मारनेवाला अनंत जीवमार १, ५४७

३६० एक को मारता अनेक का बैरकरे. १, ४४८

३६१ पाँचों स्थारों का परस्पर श्वासोश्वास १, ४५०

३६१ श्वासो श्वास लेते कितनी क्रिया ... १, ४५०

३६२ वायु के धक्केवृक्ष पडे कितनी क्रिया १, ४५२

१० दशवे शतक का-पहिला उद्देश

३६३ दिशा किसे कहते हैं दिशा के नाम १, ४३३

* मकाशक-राजाबहादुर लाला मुखर्देवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

- ३३० अष्टिका बंधके पांच प्रकार ... १.१६३
 ३३१ सरीर बंध के दो प्रकार. ... १.१६६
 ३३२ सरीर प्रयोग बंध के पांच प्रकार १.१६८
 ३३२ पांचों शरीर प्रयोग बंध किस २
 कर्मोदया से होवे देश बंध सर्व बंध
 की स्थिति अल्पावहृत्ये अन्तर. १.१७०
 ३३३ अठों कर्म बंध के कारण. ... १.१९९
 ३३४ पांचों शरीर का परस्पर बन्ध. १.२३७
 आठवे शतक का-दशवा उद्देशा.
 ३३५ ज्ञान क्रिया से आराधक की चौभंगी १.२१२
 ३३६ तीन प्रकार की आराधनाका कथन. १.२१६
 ३३७ पुद्गल परिणाम के पांच प्रकार. १.२२१
 ३३८ पुद्गलों के सम्बन्ध के प्रश्नोत्तर. १.२२२
 ३३९ अठों कर्म के अविभाग परिच्छेद १.२२५
 ३४० अठों कर्मों का परस्पर सम्बन्ध. ... १.२२८
 ३४१ जीव पुद्गल कि पुद्गलो ? ... १.२३२

- आठवे शतक का सातवा उद्देशा. १११२
 ३१९ स्वधिर अन्य तीर्थिक की चर्चा ... १.११२
 ३२० पांच प्रकार का गतिप्रवाद ... १.१२३
 आठवा शतक का आठवा उद्देशा ११२५
 ३२१ गुरु के गति के समूह के सूत्र के भाव
 के मत्याख्यानीक ... १.१२८
 ३२२ पांच प्रकार के व्यवहार. ... १.१२८
 ३२३ इया पथिक सम्प्रायिक बंध के भंगि १.१३२
 ३२४ चाइस परिपह किस कर्मोदयसे ... १.१४३
 ३२५ सूर्य दृष्टीगत आने के तपनेके प्रश्नोत्तर १.१४९
 ३२६ आढाइ द्वीपके बाहिर भीतर के V
 ज्योतिषी का अधिकार V ... १.१५३
 आठवे शतक का नववा उद्देशा.
 ३२७ प्रयोगवध विसेसबंध का कथन १.१५५
 ३२८ अनादि सादी वीभिसा बंध. ... १.१५६
 ३२९ प्रयोग बन्धके तीन प्रकार. ... १.१६०

नववा शतक का-प्रथमो उद्देश।

३४२ अंबूद्वीप का वर्णन ... १२३५

नववे शतक का-दूसरा उद्देश।

३४३ अढाड द्वीप के ज्योतिषी की संख्या १२३७

नववे शतक का-तीसरा उद्देश।

३४३ दक्षिण के अठवीस अन्तर द्वीपों ... १२३९

नववा शतक का-इकतीसवा उद्देश।

४४ असोज्ञा केवली के श्रावकादि का कथन १२४३

३४५ असोज्ञा केवली कैसे होते हैं ... १२५५

३४६ सोचा केवली के श्रावकादि का ... १२६४

३४७ सोचा केवला कैसे होते हैं ... १२६५

नववा शतक का-बावीसवा उद्देश।

३४८ गंगीया आणगारे भांगे ... १२१०

३४९ भांगे बनाने की विधि का यंत्र ... १३१६

३५५ छसेनार की होते हैं कि अछते ? ... १३२६

नववा शतक का-तेतीसवा उद्देश।

३५१ ऋषभदत्त ब्राह्मण देवानंश ब्राह्मणी १३३४

३५२ जामलीक्षी कुमार का अधिकार १३५४

३५३ जमालीजी की सातापितासे चर्चा ... १३६८

३५४ जमालीजी का दीक्षा औरसव ... १३९०

३५५ जमालीजी स्वच्छंदाचारी श्रद्धाभृष्टवने १४२१

३५६ जमाली की गौतम स्वामीने हरये १४३२

३५७ जमाली क्षिविषी देव हुआ ... १४३८

नववा शतक का-चौतीसवा उद्देश।

३५८ पुरुष की घोड़े की घात का प्रश्नोत्तर १४४६

३५९ ऋषि का मारनेवाला अनंत जीवमारे १५४७

३६० एक को मारता अनेक का बैरकरे १४४८

३६१ पाँचों स्थारों का परस्पर श्वाशोश्वास १४५०

३६१ श्वासो श्वास लेते कितनी क्रिया ... १४५०

३६२ वायु के धक्केवृक्ष पडे कितनी क्रिया १४५२

१० दशवे शतक का-पहिला उद्देश।

३६३ दिशा किसे कहते हैं दिशा के नाम १४३३

* भक्तिक-राजायहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाम...दजी

दशवे शतक का छट्टा उद्देशा.	
३६७ शक्रेन्द्र की सौधर्मिक सभा ✓ ... १५०२	
३६८ उचर दिशा के २८ अंतर द्वीपों... १५०५	
११ एका दशम शतक का-पहिला उद्देशा	
३६९ उत्पलादि कमल के जिवादि ३२ द्वारों १५०७	
३७० दूसरा-उद्देशा साल कमल का ... १५४२	
३७१ तांसरा-उद्देशा पलासका ... १५२३	
३७२ चौथा-उद्देशा-कुंभीका ... १४२५	
३७३ पांचवा उद्देशा पद्य के एक पत्ते में	
एक जीवे ... १५२४	
३७४ छठ्ठा उद्देशा पद्यके एक पत्त में एक जीव १५२६	
३७५ सातवां उद्देशा कर्णिकके एक पत्तेमें जीव १५२५	
३७६ आठवां उद्देशा नलीन के पत्ते में जीव १५२६	
२७७ नववा उद्देशा शिवराज ऋषिका. ✓ १५२७	
३७८ दशवा उद्देशा लोकालोक के प्रमाण	
का चार प्रकार का लोक ... १५५६	

३७४ दिशाओं में जीव प्रदेश का कथन १४५५	
३६५ पांच शरीर का कथन ... १४५९	
दशवे शतक का-दूसरा उद्देशा.	
३६६ संवृत्ति मातृ रूप देखते क्रिया लगे १४६०	
३६७ योनि और वेदना के प्रश्नोत्तर ... १४६४	
३६८ आलोचन आराधना नहीं ... १४६६	
३६९ आलोचने का इच्छक मेरे तो भी	
आराधक ... १४६७	
दशवं शतक का-तीसरा उद्देशा,	
३६२ आत्म ऋद्धि से देव गमन करे ✓... १४६९	
३६३ अलग ऋद्धि महा ऋद्धि देवों का विशेष १४७०	
३६४ अथ चले खूबू बन्द क्यों होवे ... १४७३	
३६५ मायाओं का कथन ... १४७४	
दशवे शतक का चौथा उद्देशा.	
३६६ त्रायत्रिसक देवों का कथन ✓ ... १४७६	
दशवे शतक का पांचवा उद्देशा.	
३६६ अग्रपरेपीयों का कथन ... १४८६	

४९० पांचों, इन्द्रिय के वक्ष्य संसार गैत्रमें १.६८८
 द्वादशम शतक का-तीसरा उद्देशा.
 ३९१ सातों नर्क के नाम गोत्र ... १.६९१
 द्वादश शकंत का-चौथा उद्देशा
 ३९२ प्रमाणु पुद्गल स्कन्धों का कथन १.६९०
 ३९३ पुद्गल परावर्तन का कथन ... १.७१७
 द्वादश शकंत का-पांचवा उद्देशा
 ३९४ क्रोधमान माया लोभके नामों ... १.७२८
 ३९५ रूपी अरूपी चौस्पइर्षी अठस्पइर्षी १.७३०
 बारत्रा शतक का-छठ्ठा उद्देशा
 ३९६ ग्रहण किस प्रकार होता है. ... १.७३७
 ३९७ राहु के प्रकार व ग्रहण अंतर १.७४२
 ३९८ चन्द्रशशी कर्षों सूर्य आदित्यकयो. १.७४४
 ३९८ चन्द्र सूर्य की अग्रमोहणी व सुखोप
 भोग किस प्रकार के हैं. दृष्टान्त. १.७६५

१७३ ग्यारवा उद्देश-सुदर्शन श्रेष्ठ के काल
 के प्रमाण आश्रिय प्रश्नोत्तर. ... १.५६२
 ३८० सुदर्शन का पूर्व भव महावलकुमार १.९८८
 वस्तुकादयचा. दीक्षवैरा. ... १.५९६
 ३८१ वारवउद्देशा आलंभिका नगरी के
 श्रावक की चर्चा. देवस्थिती आश्रिय १.६३८
 ३८२ पुद्गल नामक परिवर्जक का ... १.६४८
 १२ द्वादश शतक का-प्रथम उद्देशा
 ३८३ शंखजी पोखली जी श्रावक का. १.६५५
 २८४ तीन प्रकार की जागरणा ... १.६७१
 ३८५ परस्पर क्लेश से कर्म वन्य ... १.६९३
 द्वादश शतक का-दूसरा उद्देशा
 ३८६ जयंती बई के प्रश्नोत्तर; ... १.६७६
 ३८७ जीव हलका भारीकाय से होवे. १.६७२
 ३८८ संसारिक जीवों का अन्त नहीं होता है १.६८२
 ३८९ मृता जागता. हलजन्त निर्बल. दक्ष
 अदक्ष इन में कौन अच्छा कौनबुरा? १.६८४ V

३२ त्रयोदश शतक का-प्रथमोद्देशा.

४११ नरकावासे का प्रमाण जीवोंकी उत्पत्ति १७२६
 ४१२ लेश्या स्थान पर वर्तनरक में जावे १८१०

त्रयोदश शतक का-दूसरा उद्देशा.

४१३ देवताओं के स्थान में उपजने निकलने १८१३

त्रयोदश शतक का-तीसरा उद्देशा.

४१४ परिचाराणा का संक्षेपित कथन १८२३

त्रयोदश शतक का-चौथा उद्देशा.

४२५ नीचे की नरक ऊपरकी नरक विस्तरित १८२३
 ४२६ तीनों लोक का मध्य विभाग ... १८२३
 ४२६ तीनों लोक का मध्य विभाग ... १८२९
 ४२७ दर्शों दिशा कि आदि कहां से ... १८३१
 ४२८ लोक किसे कहते हैं, पंचास्तिकाया १८३३
 ४२९ आस्तिकाया के परस्पर प्रदेशों ... १८३६
 ४३० लोक का संकोच विस्तार का कथन १८५४

द्वादश शतक का-सातवा उद्देशा.

४०० असंख्यात योजन का लोक है U. १७५०
 ४०१ संपूर्ण लोक जीव ने स्पर्शा-दृष्टांत. १७५१
 ४०२ सब लोक में जीव जन्म मरण करे हैं १७५३
 ४०३ सब लोक के जीवों के साथ सज्जन दुर्जन
 के सब प्रकार के संबंध जीवने किये १७५८

द्वादश शतक का-आठवा उद्देशा.

४०४ देवतानाग में मणि में उत्पन्न हो पूजावे १७५९
 ४०५ हिंसक जानवरों कुगति में जाते हैं १७६१
 ४०६ पांच देवों का थोकडा ... १७६३

द्वादश शतक का-नववा उद्देशा

द्वादश शतक का-दशवा उद्देशा.

४०७ आठ आत्माका परस्पर संबंध ... १७७५
 ४०८ आत्मा ज्ञान दर्शन है कि अन्य ज्ञान है १७८२
 ४०९ आत्मा नरकादि दंडक है कि अन्य है १७८४
 ४१० आत्मा बुद्बल स्कंध है कि अन्य है ... १७८६

१४ चतुर्दश शतक का-प्रथमोद्देशा-

- ४३९ साधु धर्म देव स्थान को उल्लंघन परम
वास का आयुर्वन्ध करते मरेतो
कहाँ जावे ... १९०७
- ४४० जीव को परभवोत्पन्न की ग्रहण गती १९०९
- ४४१ अनन्तर परम्पर के प्रश्नोत्तर ... १९१२
- चउदवे शतक का-दूसरा उद्देशा

४४२ यज्ञ उन्माद से मोहनी का

उन्माद जयर... १९१६

४४३ काल से और इन्द्र से वर्षा होती है १९१०

४४४ अमुर कुमार देव भी वृष्टि करते हैं १९१९

४४४ ईशान देवेन्द्रादि देव तमुक्काय कैसे करे १९२०

चउदवे शतक का-तीसरा उद्देशा

४४५ साधु के बीचमेंसे देवता नहीं जा सके १९२२

४४६ चौबीस दंडक में सत्कार सम्मान... १९२३

४४७ देवता के बीच में से देव जास के १९३४

त्रयोदश शतक का-पाचवा उद्देशा

- ४३१ तीन प्रकार के आहार का कथन १८५६
- तेरवे शतक का-छठ्ठा उद्देशा ... १८५७
- ४३२ गंगेया-अस्मार जैसे ही भांगे ... १८५८
- ४३३ चमर चंचा राज्य धनि का ... १८६२
- ४३४ उदायन राजा का अधिकार ... १८६२

तेरवे शतक का-सातवा उद्देशा

४३५ भापासम्बन्धीकायासम्बन्धीप्रश्नोत्तरो १००४

४३६ पांच प्रकार के मृत्यु का कथन ... १०९१

तेरवे शतक का-आठवा उद्देशा

४३७ कर्म प्रकृतियों का साक्षिप्त ... १८९७

तेरवे शतक का-नववा उद्देशा

४३८ आकाश में गमन करने वाले साधु १८९८

तेरवे शतक का-दशवा उद्देशा.

४३९ छत्रस्त के छ समुद्र थात ... १९०५

*प्रकाशक-राजावाहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी

- चउद्वर्वा शतक का-सातवा उद्देशा १ ९४९
- ४५७ महावीर स्वामी गौतम स्वामी का प्रेम १९४३
- ४५८ द्रव्य क्षेत्र काल भाव की तुल्यता ... १९४४
- ४५८ भक्त प्रत्याख्यानी आहार करे क्या १९५०
- ४६० लक्ष सत्तम देवता का अर्थ ... १९५०
- ४६१ अनुचरोपापति देव का अर्थ किस कर्म से हुवे १९५२
- चउदवे शतक का-आठवा उद्देशा
- ४६३ रत्नागभा से ज्योनपी वैमानिक का अंतर १९५४
- ४६४ शालवृक्षमुज्य क्यों है १९५६
- ४६५ अमड शंन्यासी के ७०० शिष्यों १९५९
- ४६५ देवता अव्यावाध कैसे होते हैं ? १९६१
- ४६६ देवता की अचिन्त्य शक्ति १९६३
- ४६७ जंभक देव का कृतव्य व प्रकार १९६३
- चउदवे शतक का-नववा उद्देशा
- ४६८ साधु कर्म लेख्या जाने रूपी कर्म लेख्या १९६५

- ४४८ नरक में पुद्गल परिणाम ... १९२६
- चउदवे शतक का-चौथा उद्देशा.
- ४४९ पुद्गलों का परिणाम ... १९२७
- ४५० जीव के सुख दुःख का जोडा ... १९२८
- ४५१ प्रमाण पुद्गल का चर्म अचर्म पना .. १९२९
- चउदवे शतक का-पांचवा उद्देशा
- ४५२ चौइस दंडक के जीव अग्नि के मध्य हो जा सके क्या ? २९४०
- ४५३ दश प्रकार के सुख दुःख चौइस दंडक पर ... १९३५
- ४५४ देवता बाहिर के पुद्गलों ग्रहण कर क्रमण करे १९३६
- चौबीसवा शतक का-छठ्ठा उद्देशा
- ४५५ आहार परिमाणयोनि स्थिती काकथन १९३७
- ४५६ शक्रेन्द्रादि इन्द्र भोग किस प्रकार भोगवे है १९३९

मन्वन्तं वा ल मस्यन्ति म्नि श भद्रा लो म्नि श

- ५११ गोशालक को तेजोलेख्या निमित्त २०२१
 ज्ञान की प्राप्ति ... २०२१
- ५१३ गोशालकने अणंद साधु को कथा
 हुवा दर्शान्त ... २०२६
- ५१४ अहन्त को उपसर्ग नहीं होता है २०४६
- ५१५ गोशालक से बोलने की मना की २०४९
- ५१६ गोशालकने भगवान से अपने सात
 पट्टल कहे २०६२
- ५१७ गोशालक का भगवंत से विवाद ... २०६७
- ५१८ सर्वाभूती सुनक्षत्र साधु की घात २०७०
- ५१९ गोशालकने भगवंतपर तेजोलेख्याडाली २०७६
- ५२० अपनी तेजोलेख्या से आपहीजलमरेगा २०७९
- ५२१ अशक्त गोशालक साधुकी प्रेरना से भगे २०८१
- ५२२ गोशालक की निटम्बना टचर्मरूपे २०८७
- ५२३ गोशालक का अर्यपुलक श्रावक ... २०९५
- ५२४ गोशालकने सम्यक्त्व प्राप्त की ... २१०७
- ५२५ रेवंती गाथापत्नीसे भगवंतका रोगगया २११४

- ४१९ सुख दुःख रूप पुद्गल २४ देहकपर १९५६
- ५०० देवता-सहश्रोरूप से सह श्रोभाषा
 बोले १९५७
- ५०१ सूर्य क्या है सूर्य का प्रयोजन क्या है १९५८
- ५०२ अधिकदीक्षित साधु अधिक तेजोलेखी १९५८
- चउद्वा शतक का दर्शना उद्देशों
- ५०३ केवली सिद्ध को जाने छद्मस्त नहीं १९६०
- ५०४ केवली हलने चलन करे सबजानेदेखे १९७१
- पञ्चदश शतक का एक ही उद्देशा
- ५०५ हाहाहा कुंभारी के स्थान में गोशालक १९७४
- ५०६ छत्रिशाचर (नैमित्तिक) गोशालक मिले १९७६
- ५०७ गोशात्रक-जिन नाम धारन किया १९७८
- ५०८ गोशालक की मूल से उत्पत्ति ... १९८१
- ५०९ गोशालक भगवंत का मिलाप १९८६
- ५१० गोशालक ने की हुई बुद्धियो ... २००४

- ५३९ जीव को चैतन्य कृत कर्म हैं २१८९
 सोलवे शतक का तीसरा उद्देशा, २१९१
 ५४० कर्मप्रकृति स्वयं कृत वेदता है २१९४
 ५४१ साधु की औषधोपचार में क्रिया नहीं २१९४
 सोलवा शतक का चौथा उद्देशा.
 ५४२ चौथ भक्तादि तपश्चर्या का फल २१९६
 ५८२ तपश्चर्या से कर्म क्षपने के दृष्टांत २१९९
 सोलवा शतक का पाचवा उद्देशा.
 ५८३ शक्रेंद्र से ऊपर के देवों का तेज अधिक २२०२
 ५८४ देवता को विशिष्ट प्राप्ति कैसे मिली २२१३
 सोलवे शतक का छठा उद्देशा.
 ५८५ पांच प्रकार से स्वप्न आवे वगैरा २२२०
 ५८६ पाप स्वप्न महास्वप्न तीर्थकरादि के स्वप्न २२२१
 ५८७ महावीर स्वामी के १० स्वप्न २२२४
 ५८८ मोक्ष प्राप्ति के १६ स्वप्न २२३२
 ५८९ सातव लक्षणा तो प्रकार उपयोग २२४०

- ५२४ सर्वानुभूति सुनक्षत्र साधु की गति ✓ २१२९
 ५२७ गोशालक का पुण्यप्रभाव ... २१३३
 ५२८ सोमगले अनगरने गोशालक जीव ... २१४४
 को जलाया ... २१५३
 ५२९ गोशालक का भव भ्रमण ... २१५३
 ५३० गोशालक दृढ प्रतिज्ञा केवली हो ... २१६६
 मोक्ष गये .
 षोडश शतक का पथसोद्देशा.
 ५३१ अग्नि काय वायु काय का सम्बन्ध २१७१
 ५३१ भेदी संहास आदि उपकरणों की क्रिया २१७२
 ५३२ जीव अधिकारणी के अधिकरण ... २१७७
 सोलवा शतक का दूसरा उद्देशा.
 ५३३ शारीरिक मानसिक दुःख ... २१८२
 ५३४ भगवन्तने शक्रेंद्र से पांच अवग्रह कहे इन्द्रने साधुओं को आज्ञा दी ✓ ... २१८७
 ५३५ शक्रेंद्र समवादी है ✓ ... २१८७
 ५३८ ऊर्थाहे मुख से बोले सो सावध भाषा २१८८

विषयाणुक्रमणिका

६०४	पंडित बालपंडित अपंडित	२२६४
६०५	अन्यमति प्रति अत्रति आदि जीव की	
	भित्तता	२२६५
६०६	देवता अरूपी वैक्य नहीं कर सके	२२६८
	सतरहवे शतक का-तीसरा उद्देशा.	
६०७	सलेशी साधु हलन चलन नहीं करे	२२७०
६०८	पाँच प्रकार का हलन चलन	२२७०
६०९	तीन प्रकार का चलन	२२७२
६१०	पाँचास कार्यों का मोक्ष पूल	२२७४
	सतरहवे शतक का चौथा उद्देशा.	
६११	प्रणातिपातादि क्रिया स्पर्श कर करे	२२७६
६१२	दुःख वेदना आत्म कृत पर कृत	
	उभय कृत	२२७८
६१३	पाँचवा उद्देश-ईशानिन्द्र की समा	२२८०
६१४	छठे सातवे उद्देशे में पृथ्वी काया का	२२८४
६१५	आठवे नववे उद्देशे में अपकाया का	२२८५
६१६	दशवे ग्यारवे उद्देशे में वायु काया का	२२८७

	सालव शतक का-आठवा उद्देशा.	
५९०	लोक की दिशा में जीव प्रदेश	२२४३
५९१	परमाणु एक समयमें लोकान्तकजावे	२२४५
५९२	वर्षादि वर्षते हस्तादि प्रसारते क्रिया	२२४६
५९३	नववा उद्देश-बलेन्द्र की समा	२२४८
५९४	दशवा उद्देश-अवधि ज्ञान	२२५०
५९५	इग्यारवा उद्देश-द्वीपकुमार का	२२५१
५९६	बारवा उद्देश-उदधी कुमारका	२२५२
	सतरहवे शतक का प्रथमोद्देशा.	
५९७	उदायन भुतानन्द शयी का कथन	२२५४
५९८	ताडवृक्षचढ फल डालने की क्रिया	२२५५
५९९	ताड फल पडने से कितनी क्रिया	२२५६
६००	वृक्ष पडकते पुरुष को वृक्ष को क्रिया	२२५७
६०१	शरीर इन्द्रिय जोगनिवृत्ति की क्रिया	२२६०
६०२	छ भावों का संक्षिप्त कथन	२२६२
	सतरहवे शतक का दूसरा उद्देशा.	
६०३	धर्माधि अधर्माधि	२२६२

अठारवें शतक का-चौथा उद्देश-

- ६३१ अठारापाप अठाराधर्म, छ काय छ द्रव्य जीव पुद्गल शरीर इत्यादि जीव के भोग में आते है क्या? २३२३
- ६३२ कृतयुग्मादि युगका कथन २३२५
- अठारवें शतक का पांचवा उद्देश
- ६३३ दो देव स्वरूप कुरूप किस प्रकार २३२९
- ६३४ दो नेरीये हलुकर्मभारी कर्षी कैसे? २२३१
- ६३५ वर्तमान भवायुवेदेआगमिकबंधकर रहे २३३३
- अठवा शतक का छठ्ठा उद्देश
- ६३६ गुड, भ्रमर, तोता में वर्णादि २३३५
- ६३७ प्रम,णु स्कन्ध में वर्णादि २३३७
- अठारवा शतक का सातवा उद्देश
- ६३८ केवलीदेवाधिष्टेस भी सत्य भाषाबोले २३४०
- ६३९ उपाधी परिग्रह तीन प्रकार की २३४०
- ६४० सुप्रणिधान दु प्रणिधान २३४२

- ६१७ बारवे उद्देश में एकेन्द्रिय का कथन २२८८
- ६१८ तेरवे उद्देश में से नाग कुमार का २२९०
- ६१९ चउदवे उद्देश में सुवर्ण कुमार का २२९०
- ६२० पन्द्रवे उद्देश में विद्युत्कुमार का २२९०
- ६२१ सोलवे उद्देश में वायुकुमार का २२९०
- ६२२ सचरवे उद्देश में-अन्तिकुमारका २२९१
- अष्टादश शतक का-प्रथमोद्देश.
- ६२३ प्रथम अप्रथम का कथन २२०२
- ६२४ चरम अचरम का कथन २२९८
- ६२५ दूसरशतक-इकेन्द्रकापूर्व भवकार्तिक २३०४
- अठारवा शतक का तीसरा उद्देश
- ६२६ काउलेइया पृथ्वीकायादि पर पतुण्य होवे. २३१
- ६२७ चर्म निर्जरा के पुद्गल सर्वलोकस्पर्श २३२७
- ६२८ द्रव्य बंध भाव बंध का कथन २३१९
- ६२९ पापकर्म कियेव करेगेजिसका विशेष २३२१
- ६३० नेरीये का आहार ग्रहण परिणमन २३२२

विषयानुक्रमणिका

गुनीसत्वा शतक

- ६५४ पहला-दूसरा उद्देशा-लक्ष्याधिकार २३८०
- ६५५ तीसरा उद्देशा-पृथ्वीकायादि के २ द्वार २३८१
- ६५६ पृथ्व्यादि पांचों सूक्ष्म वादर की अल्पाचदुत २३८७
- ६५७ पांचों स्थावरों में सूक्ष्म वादर कौन २ हैं २३९२
- ६५८ पृथ्वी के शरीर की मूक्ष्यता दृष्टान्त से २३९५
- ६५९ पृथ्वी के संघटे से वेदना दृष्टांत से २३९६
- ६६० चौथा उद्देशा-आश्रव क्रिया निर्जरा वेदना के १६ भांगे २३९८
- ६६१ पांचवा उद्देशा-चरमउत्परम २४ दंडक २४०२
- ६६२ छठा उद्देशा-द्वीप समुद्रों का प्रमाण संठाण २४०४
- ६६३ सातवा उद्देशा-नरक देव के वास २४०४
- ६६४ आठवा उद्देशा-निवृत्ति के ८२ बोल २४०७
- ६६५ नववा उद्देशा-करण के ५५ बोल २४१५

- ६४१ मंडुक श्रावकने अन्वयमति की हराया २३४४
- ६४२ देवता परस्पररूप वैक्रयकर संग्रामकरे २३५१
- ६४३ देवता संग्रामकरे काष्ठादि शास्त्रवन २३५२
- ६४४ देवता रूचक द्वीपतक परकमादेसके २३५२
- ६४५ देवता पुष्प अंशक्षय कग्ने की तफावत् २३५३

अठारवा शतक का आठवा उद्देशा.

- ६४६ साधु मूर्खों का अंडे कचरने में क्रिया २३५६
- ६४७ गौतम स्वामी अन्यतीर्थक की चर्चा २३५७
- ६४८ छपस्त मनुष्य प्रमाण आदि जानि देखे २३६२

अठारवा शतक का नववा उद्देशा.

- ६४९ भविय द्रव्य नैरिये आदि का कथन २३६४
- अठारवा शतक का दसवा उद्देशा.
- ६५० भावितात्मा शास्त्र से छेदावे नहीं २३६७
 - ६५१ वायु परमाणु से परमाणु वायु से स्पर्श २३६७
 - ६५२ वायु मशक से स्पर्श उक्त प्रकार २३६८
 - ६५३ महावीर स्वामी सोमिल ब्राह्मण के प्रश्नों २३६९

प्रकाशक-राजावाहादुर लाला मुखेश्वरसहायजी ज्वालाप्रसादजी

- ७२६ इग्यारवा उद्देशा-अचरम नरक का २९२१
 २७ सत्तावीसवा शतक का इग्यारहवा उद्देशा
 पापकरने के छव्हीसवे शतक जैसा
 कहना २९२६
 २८ अट्ठावीसवा शतक के ११ उद्देशा पाप कर्म
 समार्जन आश्रिय उक्तप्रकार २९२७
 २९ गुनतीसवा शतक का ११ उद्देशा पाप कर्म
 समकाल में वेदने के उक्तप्रकार २९३१
 ३० तीसवा शतक का ११ उद्देशा क्रियावादी
 आदि चारों के समवसरणका २९३६
 ३१ एकीसवा शतक के २८ उद्देशे में कुहाग
 तुहातक का विविध प्रकास्का कथन२९५५
 ३२ बत्तीसवा शतक का २८ उद्देश में कुहाग
 कृतयुग नैरिय की उत्पत्ति २९७१
 ३३ तेतीसवा शतक का प्रतिशतक १२ एकेक
 शतकके इग्यार उद्देशेमें एकेन्द्रियका २९७३

- ७१२ पांचवा उद्देशा कालप्रमाण निगोद २७८७
 दो प्रकार
 ७१३ छठा उद्देशा-६ प्रकारनिगन्तेक ३ द्वार २७९७
 ७१४ सातवा उद्देशा-५ संमतिके ३ द्वार २८४६
 ७१५ आठवा उद्देशा-नकोत्पत्ति गति
 गमणआदि २८९७
 ७१६ नवसे चारैउद्देशतक नरकेप्रयत्तीपाद २९००
 छव्हीसवा शतक
 ७१७ मथमोद्देशा-पापकर्मबन्ध के १० द्वार २९०३
 ७१८ दूसरा उद्देशा-अन्तरोत्पन्नके ११ द्वार २९०४
 ७१९ तीसरा उद्देशा-अन्तरायगाहनकेका २९१८
 ७२० पांचवा उद्देशा परम्परावगाह का २९१९
 ७२१ छठा उद्देशा-अनन्तर आहार का २९१९
 ७२२ सातवा उद्देशा-परम्पर आहार का २९२०
 ७२३ आठवा उद्देशा-अनन्तर पर्याप्त का २९२०
 ७२४ नववा उद्देशा-परम्पर पर्याप्त का २९२१
 ७२५ दशवा उद्देशा-चरम नर्क का २९२१

- ३८ अहतीसवा शतक प्रतिशतक १? एकक उद्देश इग्यारा २ सब में चौरिन्द्रिय के युग्मादि का कथन ३०५५
- ३९ गुनवालीसवा शतक के प्रतिशतक १? एकक उद्देश इग्यारा २ सब में असदी पचेन्द्रिय के कृत्युग्मादि का ३०५६
- ४० चालीसवा शतक के प्रतिशतक २? एकक उद्देश इग्यारा २ सन्नीपचेन्द्रिय कृत्युग्मादि का कथन ३०५७
- ४१ एकतालीसवा शतक के १?९६ उद्देशे जिस में राशीकृत्युग्म नेरिआदि चीवीसही दढकपर कथन है ३०७०
- भगवतीका उपसंहार ३०८७

- ३३ चौतीसवा शतक के प्रतिशतक २ एकक शतक के इग्यार २ उद्देशे में ऐकेन्द्रिय के श्रेणि का कथन २९८९
- ३५ पैंतीसवा शतक के प्रतिशतक १? एकक शतक के इग्यारा २ उद्देश में महाकृत युग्मादि का कथन ३०२८
- ३६ छत्तीसवा शतक के प्रतिशतक १? एकक उद्देश में इग्यारा २ सब में वेन्द्रिय के कृत्युग्मादि का कथन ३०५०
- ३८ अहतीसवा शतक के प्रतिशतक १? एकक उद्देश इग्यारा सब में तेन्द्रिय के युग्मादि का कथन ३०५४

पुण्य श्री कशनजी ऋषि महाराज का सम्प्रदायके बालब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलकऋषिजी ने सीर्फ तीन वर्ष में ३२ ही शास्त्रों का हिंदी भाषानुवाद किया. उन ३२ ही शास्त्रों की १०००-१००० प्रतों सीर्फ पांच ही वर्ष में छपवा कर दक्षिण हैद्राबाद निवासी राजा बहादुरलाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रासाद जीने सब को अमूल्य लाभ दिया है.

प्रकाशक-राजावाहादुर लाला मुखेश्वरसहायजी ज्वालाप्रसादजी

- ७२६ इग्वारवा उद्देशा-अचरम नरक का २९२१
 २७ सत्तावीसवा शतक का इग्वारहवा उद्देशा
 पापकरने के छव्ठीसवे शतक जैसा
 कहना २९२६
 २८ अट्ठावीसवा शतक के ११ उद्देशा पाप कर्म
 समाजिन अश्रिय उक्तप्रकार २९२७
 २९ गुनतीसवा शतक का ११ उद्देशा पाप कर्म
 समकाल में वेदने के उक्तप्रकार २९३१
 ३० तीसवा शतक का ११ उद्देशा क्रियावादी
 आदि चारों के समवसरणका २९३६
 ३१ एकीसवा शतक के २८ उद्देशे में कुडाग
 खुडातक का विविध प्रकास्का कथन २९५५
 ३२ बत्तीसवा शतक का २८ उद्देश में कुडाग
 कृतयुग नैरिय की उत्पत्ति २९७१
 ३३ तेतीसवा शतक का प्रतिशतक १२ एकैक
 शतकके इग्वार उद्देशेमें एकैन्द्रियका ३९७३

- ७१२ पांचवा उद्देशा कालभरण निगोद २७८७
 दो प्रकार
 ७१३ छठा उद्देशा-८ प्रकारनिग्रन्तेक ३ द्वार २७९७
 ७१४ सातवा उद्देशा-५ संमतेके ३ द्वार २८४४
 ७१५ आठवा उद्देशा-नकोत्पत्ति गति २८९७
 गणआदि
 ७१६ नवसे बारे उद्देशतक नरकेप्रयत्तीपाद २९००
 छव्ठीसवा शतक
 ७१७ प्रथमोद्देशा-पापकर्मग्रन्थ के १० द्वार २९०३
 ७१८ दूसरा उद्देशा-अन्तरोत्तपनकेके ११ द्वार २९०४
 ७१९ तीसरा उद्देशा-अन्तरायगाढनकेका २९१८
 ७२० पांचवा उद्देशा परम्परावागढ का २९१९
 ७२१ छठा उद्देशा-अनन्तर आहार का २९१९
 ७२२ सातवा उद्देशा-परम्पर आहार का २९२०
 ७२३ आठवा उद्देशा-अनन्तर पर्याप्त का २९२०
 ७२४ नववा उद्देशा-परम्पर पर्याप्त का २९२१
 ७२५ दशवा उद्देशा-चरम नरक का २९२१

- ३८ अहतीसवा शतक प्रतिशतक ११ एकैक
उद्देश इग्यारा २ सब में चौरिन्द्रिय के
युग्मादि का कथन ३०५५
३९. गुनचालीसवा शतक के प्रतिशतक १२ एकैक
क उद्देश इग्यारा २ सब में असशी
पचेन्द्रिय के कृत्युग्मादि का ३०५६
- ४० चालीसवा शतक के प्रतिशतक २१ एकैक
उद्देश इग्यारा २ सक्षीपचेन्द्रिय कृत्युग्मा-
दि का कथन ३०५७
- ४१ एकतालीसवा शतक के १९६ उद्देशो जिस
में राशीकृत्युग्म नेरिआदि चौबीसही
दंडकपर कथन है ३०७०
- भगवतीका उपसंहार ३०८७

पुज्य श्री कशनजी ऋषिमहाराज का सम्प्रदायके वालब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलकऋषिजी ने
सीर्फ तीन वर्ष में ३२ ही शास्त्रों का हिंदी भाषानुवाद किया, उन ३२ ही शास्त्रों की १०००-
१००० प्रतों सीर्फ पांच ही वर्ष में छपवा कर दक्षिण हैद्राबाद निवासी राजा बहादुरलाला
मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रासाद जीने सब को अमूल्य लाभ दिया है.

- ३३ चौतीसवा शतक के प्रतिशतक २ एकैक
शतक के इग्यार २ उद्देश में एकैन्द्रिय के
श्रेणि का कथन २९८९
- ३५ पैतीसवा शतक के प्रतिशतक १२ एकैक
शतक के इग्यारा २ उद्देश में महाकृत
युग्मादि का कथन ३०२८
- ३६ छत्तीसवा शतक के प्रतिशतक १२ एकैक
उद्देश में इग्यारा २ सब में वेन्द्रिय के
कृत्युग्मादि का कथन ३०५०
- ३८ अहतीसवा शतक के प्रतिशतक १२ एकैक
उद्देश इग्यारा सब में तेन्द्रिय के कृत्यु-
ग्मादि का कथन ३०५४



॥ पंचमंग ॥

॥ विवाह पणत्ति (भगवती) सूत्र ॥

* प्रथम शतकम् *

ण० नमस्कार अ० अरहंत को ण० नमस्कार सि० सिद्धको ण० नमस्कार आ० आचार्य को ण०
णमो अरहंताणं । णमो सिद्धाणं । णमो आयरियाणं । णमो उवज्झयाणं । णमो लोए
श्री अरहंत को नमस्कार होवो. कर, चरण व मस्तक का सुप्रणिधान सो नमस्कार कहा जाता है.
कितको नमस्कार करना ? श्री अरहंत को. अरहंत किस को कहते हैं ! देवताओं से विनिर्भित महा-
मतिहार्य नामक पूजा से जो पूजित बने हुने हैं, अथवा रहःएकान्त देश व अन्त जिम को नहीं है,

।व्यार्थ

सूत्र

भावार्थ

नमस्कार उ० उपाध्याय को ण० नमस्कार लो० लोकमें स० सर्व सा० साधुको ॥*॥ ण० नमस्कार व० ब्राह्मी
सव्वसाहूणं ॥ * ॥ णमो बंभीए लिवीए ॥ * ॥ रायगिह, चलण, दुक्खे, कंखप-

अर्थात् जो सब भाव को जान व देख सकते हैं उन को अरहंत कहते हैं. ऐसे अरहंत भगवंत को नमस्कार होवो. इस का अरहंतताणं व अरिहंतताणं ऐसे दो पाठान्तर हैं. अष्टप्रकार के कर्मरूप शत्रुको हणने वाले अरिहंत कहाते हैं. कर्मरूप बीज का क्षय होने से संसार में पुनःजन्म लेने का जिन को नहीं है इसलिये अरहंत कहाते हैं; उनको नमस्कार होवो. सिद्ध भगवंत को नमस्कार होवो. वे कैसे हैं? शुक ध्यानरूप अग्नि से अष्टप्रकार के कर्मों को दग्ध करके जो मोक्ष पहुंचे हैं उन्हें सिद्ध कहते हैं; उन को नमस्कार होवो. जिन शासन के उपदेशक, ज्ञानादि पंचाचार पालनेवाले, गच्छ के नायक, अष्ट संपदा के धारक, ऐसे श्री आचार्यको नमस्कार होवो. अग्यारह अंग व बारह उपांग स्वयं पठन करे, अन्य को पठन करावे, और चरण सचरी व करण सचरी पच्चीस गुणों से युक्त होवे ऐसे उपाध्याय को नमस्कार होवो. ज्ञानादिक से मोक्ष मार्ग साधे जैसे सब साधु को नमस्कार होवो. यहाँपर " सव्वसाहूणं " पाठ में सव्व शब्दका प्रयोग करने से सामायिक विशेष, अग्रमत्तादिक, पुलाकादिक, जिन कल्पिक, परिहार विद्युद्ध कल्पिक, यथा लिगादि कल्पिक प्रत्येक बुद्ध, स्वयंबुद्ध, व बुद्धवोधित प्रमुख गुणवंत साधुओं को भी ग्रहण कीये हैं. उक्त पंच परमेष्ठी मोक्षमार्ग के साहायक व परम उपकारी हैं * ब्राह्मी लिपिक

को नमस्कार होवो' अर्थात् श्री ऋषभदेवजीने गृहवास में अपनी ज्येष्ठा पुत्री ब्राह्मी को अठारह प्रकार की लिपि बतलाई. उस लिपि से शास्त्र लिखे गये इस लिये उस का कथन करनेवाले श्री ऋषभदेव स्वामी को शास्त्र के उपदेश देनेवाले श्री सुधर्मास्वामी नमस्कार करते हैं. इस तरह नमस्कार किये गये पाँचवा अंग श्री व्याख्याप्रज्ञप्ति का अधिकार कहते हैं. इस में जीवाजीव की विविध प्रकार की प्ररूपना की है, गौतमादिक के विविध प्रकार के प्रश्नों व उनके उत्तर दिये हैं. इस में एक सरिखा संबंध होनेपरभी पुष्पावकीर्ण की तरह भिन्न २ प्रकार का अधिकार है. इस का अपर नाम भगवती है अर्थात् भगवत की वाणी सर्वमान्य होने से भगवती कहाती है. इस के १.३८ शतक हैं, उनके उद्देशे १.०००० प्रमाण हैं, ३६ हजार प्रश्न हैं और पद २८८००० हैं. प्रथम शतक श्री भगवन्तने राजग्रही नगरी में कहा. इस के दश उद्देशे कहे हैं. प्रत्येक उद्देशे में भिन्न २ प्रश्न पूछे हैं सो वताते हैं. अब उद्देशेके नाम] वताते हैं. ? चरण-चलमाणे

१ कितनेक 'नमो वंभीए लिपीए' इनका ब्राह्मी लिपि को नमस्कार होवो ऐसा अर्थ करके अक्षर स्थापना निक्षेप सिद्ध करते हैं, परंतु जैसे अनुयोग द्वार में पाथा का जान पुरुष पाथा कहाता है वैसे ही लिपिका शिखानेवाला पुरुष लिपिक कहा जा सकता है. इसलिये यहाँपर सूत्रकारने अक्षर स्थापना रूप लिपि को नमस्कार नहीं करते हुये लिपि वतानेवाले श्री ऋषभदेव स्वामी को नमस्कार किया है. और भी वीर निर्वाण पीछे ९८० वर्ष में पुस्तकारूढ ज्ञान हुवा इस से लिपि को नमस्कार करना नहीं संभवता है.

न० नगर की वं वाहिर उ० ईशान दि० दिशा में गु० गुणशिल पा० नामका चे० चैत्य हो० था त०
तहाँ से० श्रेणिक राजा चि० चेल्लणादेवी ॥ १ ॥ ते० उस का० काल ते० उस स० समय में स० श्रमण
भ० भगवान् म० महावीर आ० आदिकर ति० तीर्थकर स० स्वयं संदुद्ध पु० पुरुषोत्तम पु० पुरुषसिंह

रंस णथरस वहिथा उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए गुणासिलए णामं चेइए होत्था तत्थ-
णं सेणिए राया, चिह्लणादेवी ॥ १ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महा-
वीरे-आदिगरे, तित्थगरे, संयंसंबुद्धे, पुरिसुत्तमे पुरिससीहे, पुरिसवर पुंडरीए, पुरिसवरगंधह-

सुत्रर्मा स्वामी अपने पाटलीय शिष्य श्री जम्बूस्वामी को कहते हैं कि उसकाल उस समय में अर्थात् इस
अवसर्पिणी काल के दुपम सुपम नामक चौथे आरमें भगवन्तने इस कथाका उपदेश दिया तब राजगृह * में
नामक नगर था. उसका वर्णन रायप्रसेणी सूत्र से जानना. उस राजगृही नगरी की ईशान कोन
गुणशील नामक यक्ष का चैत्य (चिं व अथवा विम्ब युक्त आयतन) था. उस राजगृह में
श्रेणिक राजा राज्य करता था. और उनको चेल्लणा नामक राणी थी. ॥ १ ॥ उस काल उस समय में
श्रुत व चारित्र धर्म की आदि के करनेवाले, साधु साध्वी, श्रावक व श्राविका इन चार तीर्थ को

* यद्यपि वर्तमान काल में राजगृह नामक नगर है तथापि अतीत काल जैसा अब नहीं है. अनंत
वर्णादिक के पुद्गलों का क्षय हुआ है, इसलिये यहाँ भूतकाल का प्रयोग किया है.

१० सरण ग० गति प० रहे हूँ अ० अप्रतिहत व० प्रधान ना० ज्ञान दर्शन ध० धरने वाले वि० निवृत्त
छ० छद्मस्थपने से जि० जिते जा० जितानेवाले ति० तीरे ता० तारक बु० बुद्ध वो० बुझावे मु० मुक्त मो०
मुक्तकरे म० सर्वज्ञ स० सर्वदर्शी सि० शिव अ० अचल अ० रोगरहित अ० अनंत अ० अक्षय अ०

दंसणधारे, वियट्ट छउमे जिणे, जावए, तिणे, तारए, बुद्धे, वोहिए, मुत्ते मांयए, स-
वण्णु सव्वदरिसी सिव; मयल, मरुअ, मणंत; मक्खय, मन्वावाह, मयुणरावत्तियं,

चलु के दातार, मोक्ष मार्ग के दातार, विविध प्रकार के उपद्रव से पीड़ित, जीव को रक्षा स्थान-मोक्ष
स्थान देनेसे शरण देनेवाले, सम्यक्त्व चारित्र्य रूप बोधिके देनेवाले, श्रुत चारित्र्य रूप धर्म देनेवाले,
धर्म के उपदेशक, धर्म के नायक, धर्मरूप रथके सारथी, जैसे पृथिवी पे समस्त राजाओं में चक्रवर्ती प्रधान
है वैसेही धर्म कयन में भगवान् चक्रवर्ती चारों गतिके अंत करनेवाले, जैसे समुद्र में रहे हूँ जीवों को
द्वीप आधार भूत है वैसेही संसार रूप समुद्र में रहे हूँ माणियों को आधार भूत, अप्रतिहत व श्रेष्ठ ज्ञान
दर्शन के धारक, छद्मस्थपना से निवर्तनेवाले, रागादि जीतनेवाले, अन्य को धर्मोपदेश कर के रागद्वेष
जीतानेवाले, स्वयं संसार समुद्र से तीरनेवाले, अन्य को संसार समुद्र से तीरनेवाले, स्वयंतत्त्वको जानने-
वाले, अन्य को तत्त्वका ज्ञान देनेवाले, स्वयं अष्टकर्म से मुक्त होनेवाले व अन्य को मुक्त करानेवाले,
सर्वज्ञ सर्वदर्शी, सब उपद्रव रहित, अचल, रोगरहित, अनंत, अक्षय, अव्याघाथ, अपुनरावर्त ऐसीसिद्ध

* प्रकाशक-राजावहार लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादनी *

पु० पुरुषवर पुंडरीक पु० पुरुषवर गंधहस्ती लो० लोकमें उत्तम लो० लोक के नाथ लो० लोक के हितकर्ता लो० लोक में द्वीपसमान लो० लोकमें प० सूर्यसमान अ० अभय देनेवाले च० चक्षुके देनेवाले म० मार्ग देनेवाले जी० जीव देनेवाले रक्षक बो० बोधि देनेवाले ध० धर्मके देनेवाले ध० ध० धर्मके उपदेशक ध० धर्मके नायक ध० धर्मके साराग्रि ध० धर्ममें व० प्रधान चा० चातुरंत चक्रवर्ती दी० द्वीप ता० त्राण

त्थी, लोगुत्तमे, लोगनाहे, लोगहिण लोगपदीवे, लोग पजोयगरे, अभयदण, चक्रवृ-
दण, मगदण, सरणदण, जीवदण, बोहिदण, धम्मदण, धम्मनायगे, धम्म-
साराहिण, धम्मवर चाउरंत चक्रवर्ती, दीवां ताण सरणगइपइठ्ठे, अप्पडिहयवरणाण

स्थापनेवाले, अन्यके उपदेश विना स्वतःही हेय ज्ञेय उपदेश पदार्थ स्वरूप को जाननेवाले, रूपादि अतिशय अथवा जात्यादिकके उच्चत्वसे पुरुषोंमें उत्तम, शौर्यगुणसे पुरुषमें सिंह समान, सब अशुभ पाप रहित होनेसे पुरुषोंमें पुंडरीक कमल समान, पुरुषोंमें गंधहस्ती समान लोक में उत्तम, लोककेनाथ अर्थात् योग सो जिसको पहिले धर्म नहीं प्राप्त हुआहै उसको धर्म की प्राप्ति कराना और क्षेम सो धर्मकी प्राप्ति होनेपर मनको स्थिर रहनेदेना इस तरह योग व क्षेम दोनों करनेवाले होनेसे लोककेनाथ; पद्धिविध जीवनिकाय रूप लोक की रक्षा करने से हितकारी, सही पंचेन्द्रिय जीवरूप लोकको द्वीपसमान, गणवरादि लोकको उद्योतके करनेवाले, अभय के दाता, श्रुतज्ञानरूप

१ आसन सिद्धिक मोक्षगामी सब भव्य जीव.

गुण घो० घोरतपस्वी घो० घोर ब्रह्मचारी उ० सुश्रुपा रहित सं० संक्षिप्त वि० बहुत ते० तेजस लक्ष्या च० चौदहपूर्वी च० चार णा० ज्ञान के उ० धारक स० सर्व अक्षर स० सन्निपाति स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर से अ० दूर नहीं नजदीक नहीं उ० ऊर्ध्वजानु अ० अधोशिर ज्ञा० ध्यान कोठे में उ०

तत्रे, तत्तत्रे, गहातत्रे, घोरतत्रे, उराले, घोरे, घोरगुणे, घोरतवस्सी घोरवभंचेरवासी, उच्छू-
ढ सरिरे, संखित्विउल तेउलेस्ते, चउदहसपुब्धी, चउणाणोवगए, सव्वक्खरसणिण-
वाती, समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते उड्डुजाणू अहोसिरे ज्ञाणकोट्टो-

की अवगाहनावाले, समचतुस्र संस्थान से संस्थित, वज्ररूपम नाराच संघयण युक्त, कनकके विन्दुसमान व पद्म कमल समान गौर वर्णवाले, उग्रतपस्वी, दीप्त तपवाले, आशंसादि दोष रहित, महत् तप करने वाले, घोर तप करनेवाले, प्रधान तपसे पार्श्वस्थादि जीव को भय उपजानेवाले, परीपह व इन्द्रियादि रिपु को नाश करने में घोर, धन्य जीव नहीं आचर सके वैसे घोरगुणों का धारन करनेवाले, घोर तपस्वी, घोर ब्रह्मचारी, शरीर की शुश्रुपा का त्याग करनेवाले, अनेक योजन प्रमाण क्षेत्राश्रित वस्तुदहन में समर्थ तेजोलक्ष्या को संकुचित करनेवाले, उत्पातादि चौदह पूर्व के धारक, केवल ज्ञान वीजित चार ज्ञान के धारक व मत्र अक्षर के मयोगको जाननेवाले गौतम स्वामी श्री श्रमण, भगवंत महावीर स्वामी से

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

पुनराश्रयणोपपत्तौ (पुनराश्रयणोपपत्तौ) (पुनराश्रयणोपपत्तौ) (पुनराश्रयणोपपत्तौ)

अव्यावाय अ० पुतरागमन रहित सि० सिद्धगति ना० नाम ठा० स्थान को सं० प्राप्त करने की का० इच्छावाले जा० यावत् स० समवसरण प० परिपदा णि० निर्गता ध० धर्म क० कथा प० परिपदा प्रतिगता ॥ २ ॥ ते० उस का० काल ते० उस स० समय में स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर के जे० ज्येष्ठ अं० अंतेवासी इ० इन्द्रभूति ना० नाम का अ० अनगार गो० गौतम गोत्रीय म० सात हाथ के ऊंचे स० समचतुस्र ंठान सं० सहित व० वज्र ऋपभ नाराच संघयणी क० सुवर्ण पु० कसेटी णि० घसाहुवा सिद्धगइनामधेयं ठाणं संपावित्कामे जाव्र समोसरणं । परिसाणिगगया । धम्मोक-

हिओं, परिसा पडिगया ॥ २ ॥ तेणं कालेणं, तेणं समएणं; समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूती णामं अणगारे गायमगोत्तेणं सत्तुस्सेहे समचउरं-स संठाण संठिए, वज्जरिसह नाराय संघयणे कणगपुलगणिघसप्पहगोरे, उग्गतवे, दित्त

गति को प्राप्त करने की इच्छावाले श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामीने राजग्रह नगर के गुणशील नामक वगीचे में चारहें प्रकार की परिपदा की समस्त धर्मोपदेश दिया. जीव है, अजीव है लोक है अलोक है यावत् मोक्ष है. परिपदा के देव, देवी, मनुष्य वगैरह सब भगवंत को वांदकर स्वस्थान गये ॥२॥ उस काल उस समय में श्री श्रमण भगवंत का जेष्ठ अंतेवासी इन्द्रभूति नामक अणगार, गौतम गोत्रीय, सात हाथ

१ चार देव, चार देवी व चतुर्विध-संघ.

विशेष उत्पन्न हुआ है कुतूहल उ० स्थान से उ० उठे उ० स्थान से उ० उठकर जे० जहां स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर ते० तहां उ० आये उ० आकर सः श्रमण भ० भगवान् म० महावीर को ति० तीनवक्त आ० आदान प० प्रदक्षिणा क० की क० करके व० वंदे न० नमस्कार किये वं० वंदन कर ण० नमस्कार कर णः नीचा आसन से णा० दूर नहीं सु० श्रवण करने की इच्छा वाले ण० नमस्कार करते अ० सन्मुख वि० विनय से पं० हस्त जोड़कर प० सेवा करते ए० ऐसा वः बोले ॥ ४ ॥ से० वह ण० निश्चय भं० भगवान्

को उहँसे, । उट्टाएउट्टति, उट्टाएउट्टता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव-
उवागच्छइ; उवागच्छिता समणं भगवं महावीरं तिव्वुत्तो आयाहिणं, पयाहिणं करेइ,
करेइत्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता णच्चासणे णातिदूरे, सुस्सुसमाणे णमंस-
माणे आभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासमाणे एवं वयासी ॥ ४ ॥ से णं-

से उपस्थित हुवे। उपस्थित होकर जहां श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी विराजते थे वहां आये। आकर श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामीको तीन बार प्रदक्षिणा कर के वंदे नमस्कार किया। वंदना नमस्कार कर के अतिदूर व अति नजीक भी नहीं जैसे भगवंत के वचन श्रवण करने की अत्यंत अभिलाषा रखते हुवे, नमस्कार करते हुवे, भगवन्त सन्मुख मुल कर के विनय पूर्वक हस्तद्वय जोड़कर सेवा करते हुवे ऐसा बोले अर्थात् गौतम स्वामीने ऐसा प्रश्न किया ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! जो कर्म अपनी स्थितिसे चलने लगे, भोग सन्मुख हुवे

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

रेहुये सं० संशय त० तप से अ० आत्मा को भा० भावते वि० विचरते हैं ॥३॥ त० तव गो० गौतम को जा० उत्पन्न है स० श्रद्धा जा० उत्पन्न है सं० संशय जा० उत्पन्न है को० कुतुहल उ० उत्पन्न हुई है स० श्रद्धा उ० उत्पन्न संशय उ० उत्पन्न कुतुहल स० विशेष उत्पन्न है श्रद्धा सं० विशेष उत्पन्न है संशय सं० विशेष उत्पन्न है कुतुहल स० विशेष उत्पन्न हुई है श्रद्धा सं० विशेष उत्पन्न हुआ है संशय सं०

वगए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ ३ ॥ तएणं से भगवं गोयमे जा-
यसइ, जायसंसये, जायकोउहल्ले; उप्पणसंसए, उप्पणकोउहल्ले; सं-
जायसइ, संजाय संसये, संजाय कोउहल्ले, समुप्पन्नसइ, समुप्पन्न

बहुत दूर नहीं वैसेही नजीक भी नहीं ऐसे ऊर्ध्वजानु व अधोशिर (उल्कर आसन) कर बैठहुने धर्म ध्यान व धुलध्यान करते और संयम व तपसे आत्मा को भावते हुवे विचर रहें ॥ ३ ॥ उस समय श्री गौतम स्वामी को तत्त्वार्थ जानने की श्रद्धा उत्पन्न हुई; क्योंकि “ चलमाणे चलिए ” इस में वर्तमानकाल व अतीतकाल एक सरिखा कहा ऐसा वाक्य किस न्यायसे कहा? ऐसा संशय उत्पन्न हुआ, किस प्रकार से इस का अर्थ प्रकाशगे ऐसा कुतुहल उत्पन्न हुआ, तत्काल श्रद्धा उत्पन्न हुई, तत्काल संदेह उत्पन्न हुआ तत्काल कुतुहल उत्पन्न हुआ, विशेष श्रद्धा हुई, विशेष संशय उत्पन्न हुआ, व विशेष कुतुहल उत्पन्न हुआ है जिस को ऐसे व समुत्पन्न श्रद्धा, समुत्पन्न संशय व समुत्पन्न कुतुहल वाले श्री गौतमस्वामी स्वस्थानक

परा णि० निर्जस्ते को णि० निर्जरा हं० हा गो० गौतम ! च० चलते को च० चला जा० यावत् णि०

छिज्जमाणे छिण्णे ? भिज्जमाणे भिण्णे ! दञ्जमाणे दद्धे ? मिज्जमाणे मडे ? णिज्जिज्जमाणे णिज्जि

इन्धन जलाना. शरु किया इस तरह जलाते को जलाया कहना ! ८ जिम के आयुष्य का संचित पुद्गल का क्षय होने लगा मृत्यु सम्मुख हुवा तब उस मरते को मरा कहना ? ९ जीव प्रदेश से कर्म पुद्गलों की निर्जरा करने लगा उस निर्जरा करने को निर्जरा कहना ? यह नवप्रश्नों श्री महावीर स्वामीसे गौतम स्वामीने पूछे सब भगवन्त महावीर स्वामी उत्तर देते हैं कि हा गौतम ! उनका अर्थ वैभेही है. अर्थात् जेने किसी कपडे बनानेवाले वनकरने कपडा बनाना शरु किया और प्रथम तंतु बुना उभे वस्त्र बुना कहा जाता है वैसेही उक्त प्रकार के कार्य जिस समय में शरु किये उस ही समय में हुये कहे जासकते हैं. यद्यपि इन को पूर्ण होने में असंख्यात समय व्यतीत होते हैं ताहंपि उस की परिणति में उस की सब आकृति बतगइ दे या वह पूर्ण करने का अभिलाषि बना हुवा है. १ वैसे ही जिसने अपने अनादि कर्म को कर्मस्थिति से संचलित किये, भोगवने सम्मुख हुवा उन्हें निश्चय से कर्म भोगवेगा. २ जो उदय नहीं आये हैं उन को उदीरणा से उदय में लाने का जिसने प्रयत्न किया वह उदीरना करेगा. ३ जिनके कर्म उदयमें आकर वेदना देनेलगे वे सबही वेदे जावेंगे ४ जिन के कर्म जीवके प्रदेशसे पतन होनेलगे उस के सब कर्म पड़ेंगे ५ जिसने कर्म की स्थिति हस्व कालकी की वह क्षय करेगा ६ जो कर्म पुद्गलों को परावर्तन करने लगा वह परावर्तेगा.

च० चयने को च० चला उ० उदीरा वे० वेदते को वे० वेदा प० छोड़ते को प० छोड़ा
छि० छेदने को छि० छेदा भि० भेदते को भि० भेदा द० जलाते को द० जलाया मि० मरते को म०

भंते ! चलमाणे चलिण् ? उदीरिजमाणे उदीरिण् ? वेदिजमाणे वेदिण् ? पहेजमाणे पहीणे !

उनकर्मों को क्या चलेही कहना ? + २ जो कर्म उदय में नहीं आये हैं, बहुत आगापिक काल में उदय
आयेगे उनको शुभ अय्यवसाय से आकर्षण कर उदय में लावे उसे उदीरणा कहते हैं. इस तरह प्रथम समय
में उदीरणा करते को उदीरंही क्या कहना ? ३ कर्म उदय में आकर प्रथम समय में वेदते होवे उन्हें क्या
वेदेही कहना ? ४ जो कर्म पुद्गल जीव के प्रदेश से अवलम्बन कर रहे थे वे पतन होने लगे उन्हें क्या
पतन हुआ कहना ? ५ जो कर्म दीर्घकाल की स्थितिवाले थे उनका छेदन कर अल्प काल की स्थितिवाले
बनाये, इस तरह से प्रथम समय में छेदते को छेदा कहना ? ६ जो कर्म तीव्रसंवेदने वाले थे उनको भेदे
रस देनेवाले बनाये इस तरह उनकर्मों को प्रथम समय में भेदतेको भेदे कहना. ? ७ ध्यानरूप ज्वालासे कर्मरूप

+ श्री मुधर्मा स्वामी ने सूत्र की आदि में अन्य अनेक प्रश्नों को छोड़कर "चलमाणे चलिण्" यह
प्रश्न यों प्रश्न किया ? समाधान-धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष इन चारों को साधने में उद्यमश्रेष्ठ कहा है. चारों में
मोक्ष श्रेष्ठ है वह कर्मक्षय से होता है और कर्म क्षय अनुक्रम से होता है इसलिये प्रधान हेतु की सिद्धि के लिये
प्रथम ही "चलमाणे चलिण्" इसप्रश्नसे निश्चय किया कि जिनके कर्म अपने अनादि स्वभावकी सिद्धिसे चलित
हूँ उन को चले ही कहना मोक्ष प्राप्ति का प्रथम कार्य में ही यह दर्शाया है.

अथवा णा० विविध अर्थी वि० विविध उच्चारके णा० विविध व्यंजनके गो० गौतम ए० ये च० चार पद ए० एक अर्थी णा० विविध उच्चार णा० विविध व्यंजन उ० उत्पन्न पक्षके ए० ये प० पांच पद णा० विविध अर्थी णा० विविध उच्चारके

णाणा वंजणा? गोयमा! चलमाणे चलिणु, उदीरिजमाणे उदीरिए, वेइजमाणे वेइए, पहेज-
माणे पहेणे, एणुणं चत्तारि पया एगट्टा णाणा घोसा, णाणा वंजणा उत्पण

ये चार पद उत्पन्न पक्ष आश्रित एक अर्थवाले, अनेक घोष, व अनेक व्यंजनवाले हैं गहांपर दो पक्ष ग्रहण किये हैं एक उत्पाद पक्ष और दूसरा विगम पक्ष. उस में उक्त चारों पद केवल ज्ञान से उत्पाद और मोक्ष से विगत पद. उस में यह चारों पद केवल उत्पाद विपयक होने से एक अर्थ वाले कहे हैं जैसे केवल ज्ञान पर्याय जीव को पहिले नहीं प्राप्त हुई थी और जीव का प्रयास केवल ज्ञान निमित्त है इसलिये वह ही केवल ज्ञान उत्पत्ति पर्याय कहा. जो कर्म चलायमान होंगे वे उदय में आवेंगे और जो उदय में आवेंगे वे वेदे जायेंगे और वेदे पीछे क्षीण होंगे, इस लिये उत्पाद पक्ष में ये चारों पद एकार्थ वाची जानता. अथवा स्थिति वंचादि श्रविशेषित सामान्य आश्रय से एकार्थ है. केवल उत्पादक पक्ष के साथक है, क्यों कि उत्पन्न पक्ष में कर्म चिंता का प्रक्षीणपना होता है. छिन्न पद में स्थिति का विगम कहा, भिन्न पद में रसका विगम कहा. दञ्ज पद में दाहरूप विगम कहा, मिज्ज पद में आयुष्य कर्म ३३ अभावका विगम कहा, णिज्जरिज्ज पद में सब कर्म का विगम कहा इस लिये इन को विगत पक्ष में

निर्जनं को णि० निर्जरा ॥ ५ ॥ ए० येन नतत्रपद किं० कया ए० एक अर्थी णा० विविध उच्चारके णा० विविध व्यंजनके उ०

णं ? ॥ हंता गोयमा ! चलमाणे चलिए जात्र गिज्जिमाणे गिज्जिणं ॥ ५ ॥ एणं

भंते नत्रपदा किं एगट्टा, णाणा घोसा, णाणा वंजणा उदाहु णाणट्टा, णाणा घोसा,

७ जो शुभ ध्यानरूप अग्नि से कर्म रूप इन्धन जलानेलागा वह कर्म को जलानेलागा ८ जिसके आयुष्य का पुटल क्षीण होनेलागा वह मरेगा ९ जिसने कर्म की निर्जरा करनी शरु की वह कर्म की निर्जरा करेगा। इस रीति से इन नव कार्यों को प्रारंभ करते ही बनाहुवा कहना ॥ ५ ॥ पुनः गौतम स्वामी प्रश्न करते हैं कि अधो भगवन् ! इन नव पद का क्या एक अर्थ या एक प्रयोजन है ? या उदात्त, अनुदात्त व स्वरित घोषवाले हैं ? अनेक व्यंजनमय है ? अथवा विविध प्रकार के अर्थवाले, घोषवाले, या व्यंजनवाले हैं ? अहां गौतम ! १ चलमाणे चलिए २ उदीरिजमाणे उदीरिए, ३ वेइजमाणे वेइए ४ पहेजमाणे पहीणं

÷ यहां चौभंगो जानना. १ एक अर्थ एक व्यंजन जैसे क्षीर क्षीर २ एक अर्थ अनेक व्यंजन यथा क्षीर पयः ३ अनेक अर्थ एक व्यंजन अर्क गोमहिषा का क्षीर ४ अनेक अर्थ अनेक व्यंजन घट पटादि. इस में दूसरा चांथा भांगा यहां ग्रहण किया है, अन्य दोनों भांगे असंभविता होनेसे नहीं ग्रहण किये हैं इस सूत्र में चयमाणेभाट्टि चार पद आश्रित दूसरा भांगा जानना और छिज्जमाणे वगेरह पांचपद आश्रित चांथा भांगा जानना.

* प्रकाशक-राजाबानुर लाला मुलदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

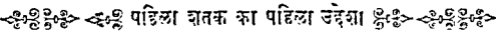
श्वामेल उ० ऊंचाश्वासले णी० नीचाश्वालले ज० जैसे उ० ऊर्ध्वासपद में ॥ ८ ॥ णे० नारकी भं० भगवत् आ० आहारके अर्थी ज० जैसे प० पन्नवणा में प० प्रथम शतक में आ० आहार उद्देशे में त० तेसे भा० कहना ठि० स्थिति उ० ऊर्ध्वास आ० आहार किं० किंसतरह आ० आहारले स० सर्वसे क० कितना भाग स० सर्व की० किसप्रकार से मु० वारंवार प० परिणमें ॥ ९ ॥ णे० नारकी भं० भगवन् पु० पूर्व आ०

जहा उस्सासपदे ॥ ८ ॥ णेरइयाणं भंते आहारट्टी, ? जहां पन्नवणाए पढमसए
आहारहेसए तथा भाणियव्वं ॥ गाथा ॥ ठिति उस्सासाहरे, किंवाहारेइ सव्वओत्तानि;
कइभागं सव्वाणित्र कीसव्व भुज्जो परिणमंति ॥ १ ॥ ९ ॥ णेरइयाणं भंते पुब्बा-

के जीव निरंतर समय मात्रका विरह रहित-श्वासोश्वास लेते हैं ऐसा कहा है वैसेही यहां जानना ॥ ८ ॥
अहो भगवन् नारकी आहार के अर्थी- वाञ्छक है ? इस का पन्नवणा सूत्र में प्रथम शतक के आहार उद्देशे में जैसे कहा है वैसे कहना. नारकी कैसे आहारलेवे ? आत्मों के सब प्रदेश से आहार लेवे. नारकी कितना आहार लेवे ! आहार निमित्त जितने पुद्गल ग्रहण किये होने उस के अर्भख्यातवे भाग का आहार लेवे, अनंत भाग में आस्वादे, अथवा आहार परिणम योग्य सब पुद्गल का आहार करे. जिन पुद्गलों का आहार किया है वे पुद्गलों किस प्रकार से वारंवार परिणमते हैं ? वे आहार के पुद्गलों इन्द्रियपने यावत्

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुवदेवसहायजी व्यालाप्रसादजी *

पा० विविधव्यंजन के वि० विगतपक्ष के ॥ ६ ॥ जे० नारकी को भं० भगवन् के० कितने कालकी ठि० स्थिति
 प० मरूपी गो० गौतम ज० जयन्य द० दशवर्षस० सहस्र उ० उत्कृष्ट ते० तेत्तीस सा० सागरोपम की ठि०
 स्थिति ॥ ७ ॥ जे० नारकी भं० भगवन् के० कीतना का० काल में आ० थोडाश्वासले पा० बहुत
 पंखस्स छिज्जमाणे छिणे भिज्जमाणे भिण्णे, दञ्जमाणे देहे, भिज्जमाणे मए णिज्जरिज्ज-
 माणे णिज्जिणे, एएणं पंचपदा-णाणट्ठा, णाणाघोसा, णाणा वंजणा, विगय पंखस्व-
 रस ॥ ६ ॥ णेरइयाणं भंते केवइयं कालं ठिई पणत्ता ? गोयमा ! जहण्णेणं दस
 चासं सहरसाइं ठिई पणत्ता, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवगाइं ठिई पणत्ता ॥ ७ ॥
 णेरइयाणं भंते केवइयं कालस्स आणमंतिवा, पाणमंतिवा, ऊससंतिवा, णीससंतिवा ?
 एक कहे हैं, ये पांचों पद विगत पक्ष की अपेक्षा से विविध प्रकार के अर्थ, घोष, व व्यंजनवाले हैं, ये पांचों
 पद विगत पक्ष गचक हैं, इसका अन्तिम नववा पदमें मोक्षकी कथा कही और वह मोक्ष जीवको होता है, ॥६॥
 नरकादिक चौबिस दंडक के जीव कहे जाते हैं, उन में से प्रथम नरककी स्थितिका प्रश्न चलता है अहो
 भगवन् ! नरक के नेरइयों की कितने काल की स्थिति कही ? अहो गौतम ! नारकी की प्रथम नरक की
 अपेक्षामे जयन्य दश हजार वर्ष की और सातवी नरक की अपेक्षासे उत्कृष्ट तेत्तीस सागरोपम की कही-
 ॥ ७ ॥ अहो भगवन् नारकी कितनेकाल तक थासोश्वास लेवे ? अहो गौतम जैसे थासोश्वासपद में नारकी

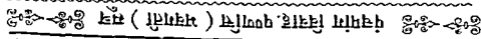


अ० आश्री दु० दोषप्रकार के पो० पुद्गल चि० चिने अ० सूक्ष्म वा० वादर ए० ऐसे उपचिन णे० नारकी क० कितने प्रकार के पो० पुद्गल उ० उदीरते हैं गो० गौतम क० कर्म द० द्रव्य व० वर्गणा अ० आश्री दु० दोषप्रकारके पो० पुद्गल उ० उदीरते हैं उ० अपवर्तते हैं उ० अपवर्तते हैं उ० संक्रमे नं० संक्रमते हैं स० संक्रमे नि० विखरे नि० विखरते हैं नि० विखरे नि० एकत्रित हुवे नि० एकत्रित होते हैं नि० एकत्रित

कतिविहा पोगगला चिज्जंति ? गोयमा ! आहारद्वय वर्गणमहिक्किच्च, दुविहा पोगगला चिज्जंति तंजहा अणूचेव वायराचेव । एवं उवाचिज्जंति ॥ णेरइयाणं भंते कतिविहा पोगगला उदीरंति ? गोयमा ! कम्मदद्वय वर्गणमहिक्किच्च दुविहा पोगगला उदीरंति, तंजहा—अणूचेव वायराचेव । सेसात्रि एवं चेव भाणियव्वा । वेदंति । णिज्जंति । उयाट्टिसु । उयट्टंसंति । उयट्टिसंति ॥ संकामंसि । संकामंसंति ॥

सेही शरीर संबंधी चय उपचय पहिले कहा. आहार भे ही चय उपचय होता है परंतु अन्य द्रव्य से नहीं होना है. उम में सूक्ष्म सो केवालि गम्य और वादर सो चर्मचक्षु ग्राह्य है. ऐसे ही उपचिन आश्रित कहना. अहो भगवन् ! नारकी को कितने प्रकार के पुद्गल की उदीरना होवे ? अहो गौतम ! नारकी को कर्मद्रव्य वर्गणा आश्रित सूक्ष्म व वादर एभे दो प्रकार के पुद्गल की उदीरणा होवे. क्यों की उदीरनादिक कर्म द्रव्य को होती है ऐसे ही ५ वेदे ६ निर्जरे ७ अपवर्तन हुवे, ८ अपवर्तन होता है, ९ अपवर्तन होवेगे ?

१ अध्यवसाय भे कर्म स्थिति को हीन करना यहां अपवर्तन में उपलक्षण भे उद्वर्तन भो ग्रहण करना उद्वर्तन सो स्थिति आदि को दृढि करना.



वदार्थ

सूत्र

वार्थ

* मकेश्वर-राजावहादुर लाला मुलदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

प०परिणमें जो०नहीं प०परिणमें॥१०॥ण०नारकीने भं०भगवन् पु०पूर्वाहारी पो०पुद्गल चि०इकठेकिये ज०
जैसे प० परिणमें त० तैसे चि० इकठेकिये उ० उपचिने उ० उदीरे व० वेदे णि० निर्जे ए० एकेक प०
पदमें च० चार प्रकारके पो०पुद्गल हैं॥११॥ण०नारकी क०कितने प्रकारसे पो०पुद्गल भि०भेदाते हैं गो०गौतम क०
कर्म द० द्रव्य व० वर्गणा अ० आश्री दु० दोप्रकार के पो० पुद्गल भि० भेदावे अ० सूक्ष्म वा० वादर णे०
नारकी क० कितने प्रकार के पो० पुद्गल चि० चिणे गो० गौतम ! आ० आहार द० द्रव्य व० वर्गणा
परिणया तथा चियावि एवं चिया उवचिया, उदीरिया, वेइया, णिज्जिणा॥गाथा॥परिणत चियाय
उवचिया उदीरिया वेइयाय णिज्जिणा, एकिक्वस्मि पदभिंम चउव्विहा पोगगलाहोति
॥ १ ॥ ११ ॥ णेरइयाणं भंते कतिविहा पोगगला भिज्जति ? गोयसा ! कम्मदव्व
वग्गणमाहिं गिच्च दुविहा पोगगला भिज्जंति तंजहा अणूचेव, वायरचेव णेरइयाणं भंते

नहीं॥१०॥अहो भगवन् नारकीको पहिले आहारे हुवे पुद्गल एकत्रित किये! अहो गौतम इसका सब खुलाला जैसे
परिणमें का कहा वैभे ही जानना. और इसी तरह बहुत एकत्रित किये, उदीरे, वेदे और निर्जे ऐसे
एक २ पद में चार २ भेद जानना. ॥ ११ ॥ अहो भगवन् नारकी को कितने पुद्गल अनुभाग भेद से
भेदावे ! अर्थात् तीव्रभेद, मध्यभेद से भेदपावे, उद्वर्तन कारण से मन्दरस तीव्ररस मंद होवे ? अहो
गौतम कर्म द्रव्यवर्गणके आश्रित दो प्रकारके पुद्गल भेदपावे सूक्ष्म व वादर. उदारिकादि द्रव्यमें कर्म द्रव्यही
सूक्ष्म है. अहो भगवन् ! नारकी को कितने प्रकार के पुद्गल चिणे, एकत्रित हुवे ? अहो गौतम आहार
द्रव्य वर्गणा के आश्रित सूक्ष्म व वादर ऐसे दो प्रकार के पुद्गल एकत्रित होते हैं क्यों की आहार द्रव्य

अ० आश्री दु० दोषप्रकार के पो० पुद्गल चि० चिने अ० सूक्ष्म वा० वादर ए० ऐसे उपचिन णे० नारकी क० कितने प्रकार के पो० पुद्गल उ० उदीरते हैं गो० गौतम क० कर्म द० द्रव्य व० वर्गणा अ० आश्री दु० दोषप्रकार के पो० पुद्गल उ० उदीरते हैं उ० अपवर्तते हैं उ० अपवर्तते हैं उ० अपवर्तते हैं सं० संक्रमते हैं सं० संक्रमते हैं नि० विखरते हैं नि० विखरते हैं नि० विखरते हैं नि० एकत्रित होते हैं नि० एकत्रित कतिविहा पोगला चिजंति ? गोयमा ! आहारद्रव्य वर्गणमहिक्चिच, दुविहा पोगला चिजंति तंजहा अणूचेव वायराचेव । एवं उवाचिजंति ॥ णेरइयाणं भंते कतिविहा पोगला उदीरंति ? गोयमा ! कम्मदव्व वर्गणमहिक्चिच दुविहा पोगला उदीरंति, तंजहा—अणूचेव वायराचेव । सेसावि एवं चेव भाणियव्वा । वेदंति । णिजंरंति । उयट्टिसु । उयट्टंति । उयट्टिसंति ॥ संकामंति । संकामिरसंति ॥

सही शरीर संबंधी चय उपचय पहिले कहा. आहार से ही चय उपचय होता है परंतु अन्य द्रव्य से नहीं होना है. उस में सूक्ष्म सो केवालि गम्य और वादर सो चर्मचक्षु ग्राह्य है. ऐसे ही उपचिन आश्रित करना. अहो भगवन् ! नारकी को कितने प्रकार के पुद्गल की उदीरना होवे ? अहो गौतम ! नारकी को कर्मद्रव्य वर्गणा आश्रित सूक्ष्म व वादर एते दो प्रकार के पुद्गल की उदीरणा होवे. क्यों की उदीरनादिक कर्म द्रव्य को होती है ऐसे ही ५ वेदे ६ निर्जरे ७ अपवर्तन हुवे. ८ अपवर्तन होता है, ९ अपवर्तन होंगे ?

१ अध्यवसाय से कर्म स्थिति को हीन करना यहां अपवर्तन में उपलक्षण से उद्धर्तन भी ग्रहण करना उद्धर्तन सो स्थिति आदि की वृद्धि करना.

* प्रकाशक राजावहादुर लाला मुबदेवसहायजी ज्वालामुखी *

होगे स० सर्व में क० कर्म द० द्रव्य व० वर्गणा अ० आश्री भे० भेद चि० चिन उ० उपचिन उ० उदीर
वे० वेद णि० निर्जरा उ० अपवर्तन सं० संक्रमन नि० निघत्त णि० निकाच ति० तीन प्रकार का का० काल
॥ १२ ॥ न० नारकी जे जो० पो० पुद्गल ते० तेजस् क० कार्माणपने गि० ग्रहण करते हैं ते० वे किं०

निहत्तिसु । निहत्तिसु । निहत्तिसु । निहत्तिसु । निकाइस्सति । निकायति । निकाइस्सति ॥ सव्वे-
सुवि कम्म दव्ववगण भहिकिच्च ॥ गाथा ॥ भेदिय चित्ता उवचित्ता, उदीरित्ता वे-
पियाय णिज्जिण्णा । उववहण संकामण णिहत्तिकायणे तिविह कालो ॥ १ ॥ १२ ॥
णेरइयाणं भंते जे पोगल्ला तेया कम्मत्ताए गिण्हंति, ते किं तीतकाल समए गिण्हंति?

मूल व उत्तर प्रकृतियों का अध्ययनाय स परस्पर संचार होना उसे संक्रमन कहते हैं. अतीत काल में
संक्रमण ११ हुआ, वर्तमान काल में संक्रमण होता है और १२ आगामिक में संक्रमण होवेगा, भिन्न ०
विस्तरे द्वे पुद्गलों को निघत्त करना. १३ ऐसे अतीत काल में एकत्रित किये, १४ वर्तमान में कर रहे
हैं १५ आगामिक में एकत्रित करेंगे. १६ अतीत काल में निकाच, १७ वर्तमान में निकाचते हैं और १८
आगामिक में निकाचेंगे उक्तसव १८ भेद कर्म द्रव्य वर्गणा आश्रित जानना. ॥ १२ ॥ अहोभागवन् !
नारकी जो पुद्गल तेजस व कार्माण शरीरपने ग्रहण करते हैं वे क्या अतीतकाल में ग्रहण करते हैं. वर्तमान

क्या ती० अतीत काल स० समय में गि० ग्रहण करते हैं प० वर्तमान समय में गि० ग्रहण करते हैं अ० अनागत स० समय में गि० ग्रहण करते हैं गो० गौतम णो० नहीं ती० अतीत काल में गि० ग्रहण करते हैं प० वर्तमान काल में गि० ग्रहण करते हैं णो० नहीं अ० अनागत काल में गि० ग्रहण करते हैं णे० नारकी जे० जो पो० पुद्गल ते० तेजस क० कार्माणपने ग० ग्रहाहुवा उ० उदीरते हैं ते० वे किं क्या ती० अतीत काल में ग० ग्रहा हुवा पो० पुद्गल उ० उदीरते हैं प० वर्तमान काल में धि० लेते

पडुप्पण कालसमए गिण्हंति ? अणागय काल समए गिण्हंति ? गोयमा ! णो तीति कालसमए गिण्हंति, पडुप्पण कालसमए गिण्हंति, णो अणागय कालसमए गिण्हंति णेरइयाणं भंते जे पोगला तेयाक्कम्मत्ताए गहिए उदीरंति; ते किंतीत कालसमय गहिए पोगले उदीरंति, पडुप्पण काल समय धिप्पमाणे पोगले उदीरंति, गहण समय पुरवखडे पोगले उदीरंति ? गोयमा ! तीत काल समय गहिए

में ग्रहण करते हैं या अनागत में ग्रहण करते हैं ? अहो गौतम ! अतीत काल में नहीं ग्रहण करे वर्तमान काल में ग्रहण करे और अनागत काल में ग्रहण करे नहीं. अहो भगवन् नारकी जो पुद्गल तेजस कार्माण कर्मपने ग्रहण करके उदीरते हैं. वे क्या अतीत काल के ग्रहण किये पुद्गल उदीरते हैं, वर्तमानकाल में ग्रहण करते पुद्गल उदीरते हैं अथवा ग्रहण समय से आगे के पुद्गल उदीरते हैं ? अहो गौतम!

* प्रकाशक राजावहादुर लाला मुलदेवसहायजी उवालाप्रसादजी *

होगे स० सर्व में क० कर्म द० द्रव्य व० वर्णना अ० आश्री भे० भेद चि० चिन उ० उपचिन उ० उदीर
वे० वेद णि० निर्जरा उ० अपवर्तन सं० संक्रमन नि० निधत् णि० निकाच ति० तीन मकार का का० काल
॥ १२ ॥ न० नारकी जे जो० पो० पुद्रल ते० तेजस् क० कार्याणपने गि० ग्रहण करते हैं ते० वे किं०

निहत्तिसु । निहत्तंति । निहत्तिसंति निकाइंसु । निकायंति । निकाइस्संति ॥ सब्ये-
सुवि कम्म दब्बवगण भहिकिच्च ॥ गाथा ॥ भेदिय चिता उवचिता, उदीरिता वे-
धियाय णिज्जिण्णा । उवट्ठण संक्रामण णिहत्तणिकायणे तिविह कालो ॥ १ ॥ १२ ॥
णेरइयाणं भंतं जे पोगला तेया कम्मत्ताए गिण्हंति, ते किं तीतकाल समए गिण्हंति?

मूत्र व उत्तर प्रकृतियों का अध्ययनाय स परस्पर संचार होना उसे संक्रामन कहते हैं. अतीत काल में
संक्रमण ११ हुआ, वर्तमान काल में संक्रमण होता है और १२ आगाधिक में संक्रमण होवेगा, भिन्न
विखरे हुवे पुद्रलों को निधत् करना. १३ ऐसे अतीत काल में एकचित्त किये, १४ वर्तमान में कर रहे
हैं १५ आगाधिक में एकचित्त करेंगे. १६ अतीत काल में निकाचि, १६ वर्तमान में निकाचते हैं और १८
आगाधिक में निकाचेंगे उक्तसव १८ भेद कर्म द्रव्य वर्णना आश्रित जानना. ॥ १२ ॥ अहोभगवन् !
नारकी जो पुद्रल तेजस व कार्याणपने ग्रहण करते हैं वे क्या अतीतकाल में ग्रहण करते हैं. वर्तमान

संग्रहते स० सर्व में अ० अचलित नो० नहीं च० चलित ने० नारकी जी० जीव किं क्या च० चलित क० कर्म नि० निर्जरे अ० अचलित गो० गौतम च० चलित क० कर्म नि० निर्जरे णो० नहीं अ० अचलित क० कर्म नि० निर्जरे वं० बंध उ० उदय उ० अपवर्त सं० संक्रमन नि० निघ्नत नि० निकाच में अ० अचलित क० कर्म म० होवे च० चलित नि० निर्जरा में ॥ १४ ॥ अ० असुर कुमार की भं० भगवन् के० कितना का०

उदीरंति, अचलियं कम्मं उदीरंति ? गोयसा णो चलियं कम्मं उदीरंति अचलियं कम्मं उदीरंति । एवं वेदंति उयदंति । संकामंति । निहत्तंति । णिकायंति । सव्वेसु अचलियं णो चलियं णेरइयाणं भंते जीवाओ किं चलियं कम्मं निज्जेरंति अचलियं कम्मं निज्जेरंति ? गोयसा ! चलियं कम्मं निज्जेरंति, णो अचलियं कम्मं निज्जेरंति ॥ गाहा ॥ बंधोदयवेदोवट संकमण निहत्त णिकाएसु । अचलियं कम्मंतुभवे, चलियं जीवाउ निज्जेरए ॥ १४ ॥ असुरकुमारणं भंते केवइयं कालं

की उदीरणा करे या अचलित कर्म की उदीरणा करे ? अहो गौतम ! चलित कर्म की उदीरणा करे नहीं परंतु अचलित कर्म की उदीरणा करे. ऐसे ही ३ वेदना, ४ क्षीण करना ५ संक्रमाना ६ धारना ७ निकाचना इन सब में चलित कर्म लेना नहीं परंतु अचलित कर्म लेना ८ अहो भगवन् नारकी जीव-प्रदेश से चलित कर्म की निर्जरा करते हैं या अचलित कर्म की निर्जरा करते हैं ? अहो गौतम ! नारकी

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुलदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

पो० पुद्गल उ० उदीरते हैं ग० ग्रहण समय पु० आगे पो० पुद्गल उ० उदीरते हैं गो० गौतम ! ती० हवे
अतीत काल में ग० ग्रहे हुये पो० पुद्गल उ० उदीरते हैं णो० नहीं प० वर्तमान में यि० लेते
पो० पुद्गल उ० उदीरते हैं णो० नहीं ग्रहण समय पु० आगे पो० पुद्गल उ० उदीरते हैं ए० ऐसे दे०
वेदते हैं णि० निर्जते हैं ॥ १३ ॥ णे० नारकी भं० भगवन् जी० जीव किं० क्या च० चलित
कः कर्म वं० बांधे अ० अचलित क० कर्म वं० बांधे गो० गौतम णो० नहीं च० चलित क० कर्म वं०
बांधे अ० अचलित क० कर्म वं० बांधे उ० उदीरे पे० वेदे उ० अपवर्ते सं० संकूपे नि० निर्वते नि०

पोगगले उदीरंति णो षडुष्यण काल समय धिष्पमाणे पोगगले उदीरंति, णो

ग्रहण समय पुरखवडे पोगगले उदीरंति । एवं वेदंति । णिज्जरंति ॥ १३ ॥ णेरइयाणं

भंते जीवाओ किंचलियं कम्मबंधंति, अचलियं कम्मबंधंति ? गोयमा णोच्चलियं

कम्मबंधंति अचलियं कम्मं बंधंति णेरइयाणं भंते जीवाओ किंचलियं कम्मं

अतीत काल में ग्रहण किये पुद्गल उदीरते हैं परंतु वर्तमान में ग्रहण करते अथवा ग्रहण समय आगे के
पुद्गल उदीरते नहीं हैं ऐसेही वेदन निर्जरा का जानना. ॥ १३ ॥ १ अहो भगवन् ! नारकी जीव प्रदेश
में क्या चलित कर्म का बंधकरे या अचलित कर्म का बंधकरे ? अहो गौतम ! तेजस कर्म के योगसे चलित
कर्म का बंधकरे नहीं परंतु अचलित कर्म का बंधकरे अहो भगवन् नारकी जीव प्रदेश से चलित कर्म

संग्रहते स० सर्व में अ० अचलित नो० नहीं च० चलित ने० नारकी जी० जीव किं क्या स० चलित क० कर्म पि० निर्जरे अ० अचलित गो० गौतम च० चलित क० कर्म पि० निर्जरे नो० नहीं अ० अचलित क० कर्म पि० निर्जरे वं० बंध उ० उदय उ० अपवर्त सं० संक्रमन नि० निग्रह नि० निकाच में अ० अचलित क० कर्म म० होवे च० चलित पि० निर्जरा में ॥ १४ ॥ अ० असुर कुमार की भं० भगवन् के० कितना का०

उदीरंति, अचलियं कम्मं उदीरंति ? गोयसा णो चलियं कम्मं उदीरंति अचलियं कम्मं उदीरंति । एवं वेदंति उयदंति । संकामंति । निहत्तंति । निक्कायंति । सज्जेसु अचलियं णो चलियं णेरइयाणं भंते जीवाओ किं चलियं कम्मं णिज्जेरंति अचलियं कम्मं णिज्जेरंति ? गोयसा ! चलियं कम्मं णिज्जेरंति, णो अचलियं कम्मं णिज्जेरंति ॥ गाहा ॥ बंधोदयवेदोवट्ट संकमण णिहत्त णिकाएसु । अचलियं कम्मंतुभवे, चलियं जीवाउ णिज्जेरए ॥ १४ ॥ असुरकुमारणं भंते केवइयं कालं

की उदीरणा करे या अचलित कर्म की उदीरणा करे ? अहो गौतम ! चलित कर्म की उदीरणा करे नहीं परंतु अचलित कर्म की उदीरणा करे. ऐसे ही ३ वेदना, ४ क्षीण करना ५ संक्रमना ६ धारणा ७ निकाचना इन सब में चलित कर्म लेना नहीं परंतु अचलित कर्म लेना ८ अहो भगवन् नारकी जीव-प्रदेश से चलित कर्म की निर्जरा करते हैं या अचलित कर्म की निर्जरा करते हैं ? अहो गौतम ! नारकी

दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(अचलियं कम्मं उदीरंति) (चलियं कम्मं णिज्जेरंति)

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

काल की ठि० स्थिति गो० गौतम ज० जघन्य इ० दश वर्ष स० सहस्र उ० उत्कृष्ट सा० अधिक सा० सागरोपम ॥ १५ ॥ असुर कुमार के० कितनाकाल में आ० थोड़ा श्वासले पा० बहुत श्वास से ऊ० उंचा श्वासले णी० नीचाश्वासले गो० गौतम ज० जघन्य स० सात थो० स्तोक उ० उत्कृष्ट सा० अधिक प० पक्ष

ठिई प० गोथमा जहण्णेणं दस वास सहस्साइं ठिई प० उक्कोसेणं साइरेगं सागरोवमं ॥ १५ ॥ असुरकुमाराणं भंते केवइयं कालं आणमंतिवा, पाणमंति वा ऊससंतिवा, नीससंतिवा ॥ पुच्छा ॥ गोयमा ! जहण्णेणं सत्तण्हं थोवाणं, उक्कोसेणं साइरेगस्स पक्खस्स आणमंतिवा पाणमंतिवा, ऊससंतिवा, नीससंतिवा, ॥ १६ ॥ असुर-

चलित कर्म की निर्जरा करे अचलित कर्म की निर्जरा करे नहीं ॥ १४ ॥ अहो भगवन् ! असुर कुमार की कितने काल की स्थिति कही ? अहो गौतम ! असुरकुमार की स्थिति जघन्य दशहजार वर्ष की उत्कृष्ट एक सागरोपम से कुछ अधिक कही [उचर दिशके बलेन्द्र आश्रित जानना] ॥ १५ ॥ अहो भगवन् ! असुरकुमारके देव कितने काल में श्वासोश्वास लेते हैं ? अहो गौतम ! असुर कुमार के देव जघन्य सात स्तोक में उत्कृष्ट एक पक्ष से कुछ अधिक में श्वासोश्वास लेवे ॥ १६ ॥ अहो भगवन् ! असुरकुमार आहार के अर्थी हैं ? हाँ गौतम ! वे आहार के अर्थी हैं. अहो भगवन् ! कितने समय में उन को आ-

? असुरनिकायमें उत्पन्न होनेसे व कुमारकी तरह क्रीडा करनेसे असुरकुमार कहाये गये हैं:

शब्दार्थ
सूत्र
भावार्थ

॥ १६ ॥ अ० असुरकुमार भं० भगवन् आ० आहार के अर्थी हं० हां आ० आहार के अर्थी अ० असुर कुमार को भं० भगवन् के० कितना काल में आ० आहार की इच्छा स० उत्पन्न होवे गो० गौतम अ० असुर कुमार को दु० दोषकार का आ० आहार आ० आभोगनिर्वर्तित अ० अनाभोगनिर्वर्तित त० तहाँ जे० जो अ० अनाभोग निर्वर्तित से० वह अ० समय समय में अ० आंतरा रहित आ० आहार की इच्छा स० उत्पन्न होवे त० तहाँ जे० जो आ० आभोग निर्वर्तित से वह ज० जघन्य च० चतुर्थभक्त

कुमाराणं भंते आहारद्वी ? हंता आहारद्वी । असुर कुमाराणं भंते
केवइय कालस्स आहारद्वे समुप्पज्जइ ? गोयमा ! असुर कुमाराणं दुविहे
आहारे पणत्ते तंजहा आभोगनिव्वत्तिएय, अणाभोग णिव्वत्तिएय ।
तत्थणं जे से अणाभोगणिव्वत्तिए से अणुसमयं अवरिहिए आहारद्वे
समुप्पज्जइ । तत्थणं जे से आभोगणिव्वत्तिए से जहण्णेणं चउत्थ भत्तस्स उक्कोसेणं

हार की इच्छा उत्पन्न होती है ? अहो गौतम ! असुर कुमार को दो प्रकार का आहार कहा. १ आभोग निर्वर्तित सो जानते हुवे आहार लेवे और २ अनाभोग निर्वर्तित सो अनजान से करे. उस में जो अनाभोग निर्वर्तित आहार है उस की इच्छा प्रति समय विरह रहित नारकी को उत्पन्न होवे और आभोग निर्वर्तित जो आहार है उस की इच्छा जघन्य चतुर्थ भक्त (एक दिन) में उत्पन्न होवे उत्कृष्ट एक हजार

दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(संस्कृत) एवमन्वेषणं पणत्ते तंजहा आभोगणिव्वत्तिएय, अणाभोग णिव्वत्तिएय । तत्थणं जे से अणाभोगणिव्वत्तिए से अणुसमयं अवरिहिए आहारद्वे समुप्पज्जइ । तत्थणं जे से आभोगणिव्वत्तिए से जहण्णेणं चउत्थ भत्तस्स उक्कोसेणं

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

उ० उत्कृष्ट सा० सातिरेक वा० सहस्र वर्ष में आ० आहार की इच्छा स० उत्पन्न होवे ॥ १७ अ० असुर कुमार किं० क्या आ० आहार आ० ग्रहण करते हैं गो० गौतम द० द्रव्य से अ० अनंत प० प्रदेश द० द्रव्य खे० क्षेत्र का० काल भा० भाव से प० पन्नवणा में से० शेष जं० जैसे पे० नारकी को जा० यावत् ते० उनको पो० पुद्गल की० कीस्तरह भु० वारंवार प० परिणमते हैं गो० गौतम सो० श्रोतेन्द्रियपने सु० स्वरूपपने सु० अच्छावर्णपने इ० इष्टपने इ० इच्छापने अ० अच्छी वांछापने उ० प्रधानपने पो० नहीं अ०

साइरेगस्स वाससहस्रस्स आहारट्टे समुप्पज्जइ. ॥ १७ ॥ असुरकुमाराणं भंते किं आहार माहारंति ? गोयमा ! दव्वओ अणंतपएसियाइं दव्वाइं खेत्त काल भाव पण्णवाग्गेमणं सेसं जहा णेरइयाणं जाव तेणं तेसिं पोगला कीसत्ता भुज्जो भुज्जो परिणमंति ? गोयमा ! सोइंदियत्ताए, सुरूवत्ताए, सुवण्णत्ताए, इट्टत्ताए, इच्छियत्ताए,

वर्ष से कुछ अधिक समय में उत्पन्न होवे ॥ १७ ॥ अहो भगवन् ! असुरकुमार जाति के देवता क्या आहार करे ? अहो गौतम ! द्रव्य से अनंत प्रदेशी द्रव्य का आहार करे, क्षेत्र से, काल से, भाव से आहार करने की विधि जैसी पन्नवणा सूत्र में कही है वैसी यहाँ जानना और शेष सब अधिकार नारकी का कहा जैसे ही यहाँ कहना. और उनको पुद्गल कीस तरह परिणमते हैं ? उन को पुद्गल श्रोतेन्द्रियपने, स्वरूप, सर्वोत्कृष्ट वर्ण, इष्टपने, इष्टितपने-षड्कृतु में सुखदायीपना से, वारंवार ऐसाही बना रहूँ ऐसी

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

दो० दोपल्योपम की ॥ २० ॥ ना० नागकुमार भं० भगवन् के० कितना काल में आ० थोडाश्वास ले पा०
 बहुत श्वास ले ऊ० ऊंचा श्वास ले नीचा श्वास ले गो० गौतम ज० जघन्य स० सात थोभ उ० उत्कृष्ट सु०
 मुहूर्त पृथक ॥ २१ ॥ ना० नागकुमार भं० भगवन् आ० आहारके अर्थी हं० हां आ० आहार के अर्थी
 ना० नागकुमार को भं० भगवन् के० कितना काल में आ० आहार की इच्छा स० उत्पन्न होवे गो० गौतम
 ना० नागकुमार दु० दोषकार का आहार आ० आहारे आ० आभोग निर्वर्तित अ० अनाभोग

स्स आणमंतिवा, पाणमंतिवा, ऊससंतिवा, णीससंतिवा ? गोयमा ! जहणणेणं सत्तण्हं
 थोवाणं, उक्कोसेणं मुहुत्त पुहुत्तस्स आणमंतिवा, पाणमंतिवा, ऊससंतिवा, नीससंतिवा.
 ॥ २१ ॥ नागकुमाराणं भंते आहारद्वी ? हंता आहारद्वी । णागकुमाराणं भंते केवइय
 कालस्स आहारद्वे समुप्पज्जइ ? गोयमा ! णागकुमाराणं दुविहे आहारे पणणे तंजहा

नागकुमार के देवता कितने काल में श्वासोश्वास लेते हैं ? अहो गौतम ! नाग कुमार देवता जघन्य सात
 स्तोत्र उत्कृष्ट मुहूर्त से पृथक्में श्वासोश्वास लेते हैं ॥ २१ ॥ अहो भगवन् ! नागकुमार जाति के देवता
 क्या आहार के अर्थी हैं ? हां गौतम ! नागकुमार जाति के देवता आहार के अर्थी हैं. अहो भगवन् !
 उन को कितने काल में आहार की इच्छा उत्पन्न होवे ? अहो गौतम ! आहार दो प्रकार का है.

१ दो मुहूर्तसे नव मुहूर्ततक. इसको प्रत्येक मुहूर्तभी कहते हैं.

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

निवर्तित त० तहां जे० जो अनाभोग निवर्तित से० उनको अ० समय समयमें अ० आंतरा रहित आ० आहार की इच्छा स० उत्पन्न होवे त० तहां जे० जो आ० आभोग निवर्तित से० उनको ज० जघन्य च० चतुर्थभक्त उ० उत्कृष्ट दि० दिवस प्रथक् आ० आहार की स० इच्छा उत्पन्न होवे से० शेष ज० जैसे अ० असुरकुमार जा० यावत् च० चलित क० कर्म णि० निर्जरे हैं ॥ २२ ॥ ए० ऐसे सु० सुवर्ण कुमार को भी जा० यावत् च० स्तनित कुमार को ॥ २३ ॥ पु० पृथ्वी काया की भं० भगवन् के० कितना काल की ठि० स्थिति गो०

आभोगनिवृत्तियः अणभोगनिवृत्तियुः । तत्थणं जे से अणभोग णिवृत्तिए से अणुसमयं अविराहिए आहारट्टे समुप्पज्झइ, तत्थणं जे से आभोग णिवृत्तिए से जहणणेणं चउत्थमत्तस्स, उक्कोसेणं दिवस पुहुत्तरस आहारट्टे समुप्पज्झइ, सेसं जहा असुरकुमारणं जाव चलियं कम्मं णिज्जेरति ॥ २२ ॥ एवं सुवण्णकुमाराणवि जाव थणियकुमाराणंति ॥ २३ ॥ पुढविकाइयाणं भंते केवइयं कालं ठिई पणत्ता ? गोयमा !

१ आभोग निवर्तित, २ अनाभोग निवर्तित. उस में अनाभोग निवर्तित आहार की निरंतर समय २ में अविच्छिन्नपन्ने इच्छा उत्पन्न होती रहती है और आभोग निवर्तित आहार की इच्छा जघन्य चतुर्थ भक्त उत्कृष्ट दिन प्रथक् अर्थात् दो दिन से नव दिन तक शेष चलित कर्म निर्जरे वहां तकका अधिकार असुर कुमार जैसे कहना ॥ २२ ॥ जैसे नागकुमार का कहा वैसे ही सुवर्णकुमार यावत् स्तनित कुमारका

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

दो० दोपख्योपम की ॥ २० ॥ ना० नागकुमार भं० भगवन् भं० कितना काल में आ० थोडाश्वास ले पा०
 बहुत श्वास ले ऊ० ऊंचा श्वास ले नीचा श्वास ले गो० गौतम ज० जघन्य स० सात थोभ उ० उत्कृष्ट मु०
 मुहूर्त पृथक् ॥ २१ ॥ ना० नागकुमार भं० भगवन् आ० आहारके अर्थी हं० हां आ० आहार के अर्थी
 ना० नागकुमार को भं० भगवन् के० कितना काल में आ० आहार की इच्छा स० उत्पन्न होवे गो० गौतम
 ना० नागकुमार दु० दोषकार का आहार आ० आहारे आ० आभोग निर्वर्तित अ० अनाभोग

स्स आणमंतिवा, पाणमंतिवा, ऊससंतिवा, णीससंतिवा ? गोयमा ! जहण्णेणं सत्तण्हं
 थोवाणं, उक्कोसिणं मुहुत्त पुहुत्तस्स आणमंतिवा, पाणमंतिवा, ऊससंतिवा, नीससंतिवा।
 ॥ २१ ॥ नागकुमाराणं भंते आहारद्वी ? हंता आहारद्वी । णागकुमाराणं भंते केवइय
 कालस्स आहारद्वे समुप्पजइ ? गोयमा ! णागकुमाराणं दुविहे आहारे पण्णे तंजहा

नागकुमार के देवता कितने काल में श्वासोश्वास लेते हैं ? अहो गौतम ! नाग कुमार देवता जघन्य सात
 स्तोत्र उत्कृष्ट मुहूर्त से पृथक्में श्वासोश्वास लेते हैं ॥ २१ ॥ अहो भगवन् ! नागकुमार जाति के देवता
 क्या आहार के अर्थी हैं ? हां गौतम ! नागकुमार जाति के देवता आहार के अर्थी हैं. अहो भगवन् !
 उन को कितने काल में आहार की इच्छा उत्पन्न होवे ? अहो गौतम ! आहार दो प्रकार का है.

? दो मुहूर्तसे नव मुहूर्तक. इसको प्रत्येक मुहूर्तभी कहते हैं.

उत्पन्न होवे गो० गौतम अ० समय समय में अ० अंतर रहित आ० आहार की इच्छा स० उत्पन्न होवे
 पु० पृथ्वी काया भं० भगवन् किं० कौनसा आ० आहार आ० ग्रहण करे गो० गौतम द० द्रव्य से ज०
 जैसे ने० नारकी णि० निर्व्याघात छ० छदिसि में वा० व्याघात आश्री सि० क्वचित् ति० तीनदिशा में
 सि० क्वचित् च० चारदिशा में सि० क्वचित् पं० पांचदिशा में व० वर्ण से का० काला नी० नीला

आहारट्टे समुप्पज्जइ ? गोयमा ! अणुसमयं अत्रिरहिए आहारट्टे समुप्पज्जइ ॥
 पुढविकाइयाणं भंते किमाहार माहारंति ? गोयमा ! दव्वओ जहा णेरइयाणं. णिव्वा-
 घाएणं छदिसिं वाघायंपडुच्च सियतिदिसिं सियचउदिसिं, सिययंचदिसिं, वण्णओ
 काल नील लोहिय हालिइ सुक्खिलाणं, गंधओ सुब्भिगंधं, रसओ तित्ताइ

कायिक जीव क्या आहार करते हैं ? द्रव्य से अनंत प्रदेशात्मक द्रव्य का आहार करे वगैरह सब अधि-
 कार नारकी जैसे कहना. निर्व्याघात से छ दिशि का आहार लेवे पूर्वादिचार व ऊर्ध्व और अधो. व्याघात
 आश्रित अर्थात् लोकान्त के उपर या नीचे व पूर्व दक्षिण में अलोक होवे जैसे स्थान उत्पन्न होने वाले पृथ्वी का-
 यिक जीव तीन दिशा का आहार लेवें. उपर नीचे अलोक होवे जैसे स्थान में उत्पन्न होनेवाले चार
 दिशाका आहार करें, और छ दिशामें से एक दिशा में ही मात्र अलोक होवे जैसे स्थान उत्पन्न होनेवाले पांच

१ लोकान्त निष्कट को व्याघात कहते हैं उसको छोड़कर अन्यत्र उत्पन्न होनेवाले.

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामुखीजी *

गौतम ज० जयन्म अं० अन्तर्मुहुर्त उ० उत्कृष्ट त्रा० वावीसवर्ष स० सहस्र की. ॥ २४ ॥ पु० पृथ्वी
काया भं० भगवन् के० कितना काल आ० थोडा श्वास ले पा० बहुत श्वास ले ऊ० ऊंचा श्वास ले नी० नीचा
श्वास ले गो० गौतम वे० वैभवा ॥ २५ ॥ पु० पृथ्वी काया आ० आहारार्थी हं० हां गो०
गौतम आ० आहार के अर्थी पु० पृथ्वी काया को के० कितना काल में आ० आहार की इच्छा स०

जहणैणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसिणं वावीसं वाससहससाइं ॥ २४ ॥ पुढविकाइयाणं
भंते केवइयकालस्स आणमंतिवा, पाणमंतिवा, ऊससंतिवा, नीससंतिवा ? गोयमा!
वेमायाए आणमंतिवा पाणमंतिवा, ऊससंतिवा नाससंतिवा ॥ २५ ॥ पुढविकाइयाणं
भंते ! आहारट्टी ? हंता गोयमा ! आहारट्टी । पुढविकाइयाणं भंते केवइय कालस्स

जानना ॥ २३ ॥ अहो भगवन् ! पृथ्वी काया की कितने काल की स्थिति कही ? अहो गौतम ! जयन्म
अन्तर्मुहुर्त उत्कृष्ट २२ हजार वर्ष की ॥ २४ ॥ अहो भगवन् ! पृथ्वीकाया कितने काल में श्वासोश्वास
लेते हैं ? अहो गौतम ! पृथ्वी कायाके जीव वे मात्रा से श्वासोश्वास लेवे अर्थात् उन को श्वासोश्वास
लेने की मर्यादा नहीं है ॥ २५ ॥ अहो भगवन् ! पृथ्वी कायिक जीवों क्या आहार के अर्थी हैं ? हां
गौतम ! वे आहार के अर्थी हैं. अहो भगवन् ! उन को आहार की इच्छा कितने काल में उत्पन्न होती
है ? अहो गौतम ! उन को प्रति समय विरह रहित आहार की इच्छा उत्पन्न होती है. अहो भगवन् ! पृथ्वी

उत्पन्न होवे गो० गौतम अ० समय समय में अ० अंतर रहित आ० आहार की इच्छा स० उत्पन्न होवे
 पु० पृथ्वी काया भं० भगवन् किं० कौनसा आ० आहार आ० ग्रहण करे गो० गौतम द० द्रव्य से ज०
 जैसे जे० नारकी णि० निर्व्याघात छ० छदिसि में वा० व्याघात आश्री सि० क्वचित् ति० तीन्द्रिशा में
 सि० क्वचित् च० चारदिशा में सि० क्वचित् पं० पांचदिशा में व० वर्ण से का० काला नी० नीला

आहारट्टे समुप्पज्जइ ? गोयमा ! अणुसमयं अत्रिरहिण्ण आहारट्टे समुप्पज्जइ ॥
 पुढविकाइयाणं भंते किमाहार माहारेंति ? गोयमा ! दब्बओ जहा णेरइयाणं. णिव्वा-
 घाएणं छदिसिं वाधार्यंपडुच्च सियतिदिसिं सियचउदिसिं, सियपंचदिसिं, वणओ
 काल नील लोहिय हाल्लिइ सुक्किलाणं, गंधओ सुब्भिगंधं, रसओ तित्ताइं

कायिक जीव क्या आहार करते हैं ? द्रव्य से अनंत प्रदेशात्मक द्रव्य का आहार करे वगैरह सब अवि-
 कार नारकी जैसे कहना. निर्व्याघात से छ दिशि का आहार लेवे पूर्वोदिचार व ऊर्ध्व और अधो. व्याघात
 आश्रित अर्थात् लोकान्त के उपर या नीचे व पूर्व दक्षिण में अलोक होवे जैसे स्थान उत्पन्न होने वाले पृथ्वी का-
 यिक जीव तीन दिशा का आहार लेवें. उपर नीचे अलोक होवे जैसे स्थान में उत्पन्न होनेवाले चार
 दिशाका आहार करें, और छ दिशामें से एक दिशा में ही मात्र अलोक होवे जैसे स्थान उत्पन्न होनेवाले पांच

१ लोकान्त निष्कृष्ट को व्याघात कहते हैं उसको छोड़कर अन्यत्र उत्पन्न होनेवाले.

लो० राता हा० पीला सु० शुक्र गं० गंधसे सु० सुरभिगंध दु० दुरभिगंध र० रस से ति० तिक्तादि फा० स्पर्श से क० कर्कश आदि भे० श्लेष त० तैसे पा० जानना क० कीतना भाग आ० आहार करते हैं क० कीतना भाग फा० स्पर्शते हैं गो० गौतम अ० असंख्यात में भाग आ० आहार करते हैं अ० अनंत में भाग फा० स्पर्शते हैं जा० यावत् ते० उनको पो० पुद्गल की० कीस तरह भु० वारंवार प० परिणमते हैं गो० गौतम फा० स्पर्शोन्द्रियपने वे० वेमात्रा भु० वारंवार प० परिणमते हैं श्लेष ज० जैसे पे० नारकी जा०

५, फासओ कक्खडाइं ८, ॥ सेसं तेह्व णाणत्तं कइभागं आहारेंति, कइभागं फासैति ? गोयमा ! असंखेज्जइ भागं आहारेंति अणंतभाग फासैति । जाव तेणं पोगगला कीसत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति ? गोयमा फासिंदिय वेमायाए भुज्जो भुज्जो

दिशा का आहार करे. वर्ण से काला, नीला, रक्त, पीला व शुक्र पुद्गलोंका आहार करें, गंध से सुरभिगंध व दुरभिगंध का आहार करें, रस से तिक्तादि पांचों रस का आहार करें और स्पर्श से कर्कशादि आठों स्पर्श का आहार करें. श्लेष जैसे नारकी का कहा जैसे ही कहना. परंतु इतना विशेष जानना कि कितना भाग का आहार करे व कितना भाग आस्वादे ? अहो गौतम ! असंख्यात भाग का आहार करे, व अनंत में भाग में आस्वादे. वे पुद्गल कैसे परिणमते हैं ? अहो गौतम ! वे पुद्गलों स्पर्शोन्द्रियपने परिणमे अथवा त्रिणम मात्रा या विविध मात्रा से वारंवार परिणमे यावत् चलित कर्म निर्जरे वहां तक का श्लेष

यावत् णो० नहीं अ० अचलित क० कर्म णि० निर्जस्ते है॥ २६॥ ए० ऐसे जा० यावत् व० वनस्पति काया को ण० विशेष ठि० स्थिति व० कहना जा० जो ज० जिनका उ० ऊर्धास वे० वेमात्रा ॥ २७ ॥ वे० वे० वेन्द्रिय की ठि० स्थिति भौ० कहना उ० ऊर्धास वे० वेमात्रा ॥ २८ ॥ वे० वे० वेन्द्रिय को आ० आहारकी पु० पृच्छा अ० अनाभोग निवर्तित त० तैसे त० तहां जे० जो आ० आभोगनिवर्तित अ०

परिणमंति, सेसं जहा णेरइयाणं जात्र णो अचलियं कम्मं णिज्जेरंति ॥ २६ ॥ एवं जात्र वणस्सइ काइयाणं, णवरंठिती वण्णेतब्बा जा जस्स उस्सासो वेमायाए॥ २७ ॥ वेइंदियाणं ठिती भाणियब्बा, उस्सासो वेमायाए. ॥ २८ ॥ वेइंदियाणं आहारे पुच्छा,

सव अधिकार नारकी जैसे कहना ॥ २६ ॥ जैसे पृथ्वी कायिक जीवों का अधिकार कहा वैसे ही अणुकायिक, तेजकायिक, वायुकायिक व वनस्पति कायिक जीवोंका जानना. इस में मात्र स्थिति की भिन्नता बतलाइ है सो कहते हैं—सब की जघन्य अंत मुहूर्त की उत्कृष्ट अप्क्रायिक जीवों की सात हजार वर्ष की, तेजकायिक जीवों की तीन अहो रात्रि, वायु कायिक जीवों की तीन हजार वर्ष की और वनस्पति कायिक जीवों की दश हजार वर्ष की और श्वासोश्वास मर्यादा रहित ॥ २७ ॥ द्वीन्द्रिय की स्थिति बारह वर्ष की कही और श्वासोश्वास मर्यादा रहित जानना ॥ २८ ॥ अहो भगवन् ! द्वीन्द्रिय कैसे आहार करते हैं ? अहो गौतम ! आहार के दो भेद आभोगनिवर्तित व अनाभोगनिवर्तित, उस में आभोग

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जी सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

लो० राता हा० पीला सु० शुक्ल गं० गंधसे सु० सुरभिगंध दु० दुरभिगंध र० रस से ति० तिक्तादि फा० स्पर्श
मे क० कर्कश आदि भे० श्लेष त० तैसे पा० जानना क० कीतना भाग आ० आहार करते हैं क०
कीतना भाग फा० स्पर्शते हैं गो० गौतम अ० असंख्यात में भाग आ० आहार करते हैं अ० अनंत में
भाग फा० स्पर्शते हैं जा० यावत् ते० उनको पो० पुद्गल की० कीस तरह मु० वारंवार प० परिणमते हैं
गो० गौतम फा० स्पर्शोन्द्रियपने वे० वेमात्रा मु० वारंवार प० परिणमते हैं श्लेष ज० जैसे जे० नारकी जा०

५, फासओ कक्खडाइं ८, ॥ सेसं तहेव णणत्तं कइभागं आहारेंति, कइभागं
फासैति ? गोयसा ! असंखेज्जइ भागं आहारेंति अणंतभागं फासंति । जाव तेणं
पोगला कीसत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति ? गोयसा फासिंदिय वेमायाए भुज्जो भुज्जो

दिशा का आहार करे. वर्ण से काल, नीला, रक्त, पीला व शुक्ल पुद्गलोंका आहार करें, गंध से सुरभिगंध
व दुरभिगंध का आहार करें, रस से तिक्तादि पांचों रस का आहार करें और स्पर्श से कर्कशादि आठों
स्पर्श का आहार करें. श्लेष जैसे नारकी का कहा जैसे ही कहना. परंतु इतना विशेष जानना कि
कितना भाग का आहार करे व कितना भाग आस्वादे ? अहो गौतम ! असंख्यात भाग का आहार
करे, व अनंत में भाग में आस्वादे. वे पुद्गल कैसे परिणमते हैं ? अहो गौतम ! वे पुद्गलों स्पर्शोन्द्रियपने
परिणमे अथवा विषम मात्रा या विविध मात्रा से वारंवार परिणमे यावत् चलित कर्म निर्जरे वहां तक का श्लेष

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

ज० जैसे लो० रोम आहार प० कवल आहार जे० जो पो० पुद्रल लो० रोम आहारपने गि० ग्रहण करते हैं ते० वे स० सर्व अ० निर्विशेष आ० आहारकरे जे० जो० पो० पुद्रल प० कवल आहारपने गि० ग्रहण करतेहैं पो० पुद्रल को अ० असंख्यात भाग को अ० आहारकरे अ० अनेक भाग स० सहस्र अ० नहीं भोगवे अ० नहीं स्पर्शे वि० विध्वंसपते हैं ए० इन पो० पुद्रल को अ० नहीं भोगवा न० नहीं स्पर्शा क० कौन से अ० थोड़े व० बहुत तु० सरिखे वि० विशेषाधिक गो० गौतम स०सर्व से थोडा पो०पुद्रल अ० नहीं

पोगलले पक्खेवाहारत्ताए गिण्हंति तेसिणं पोगगलाणं असंखेज्जइ भागं आहारंति।
अणेगाइंचणं भागसहस्साइं अणासाइज्जमाणाइं अफासाइज्जमाणाइं विहंसमावज्जइ ॥
एणसिणं भंते पोगगलाणं अणासाइज्जमाणाणं अफासाइज्जमाणाणं य, कयरे र
हितो अप्पावा, बहुलावा, तुल्लावा, विसेसाहियावा ? गोयसा ! सव्वत्योवा पोगगला

ग्रहण करते हैं उन सब पुद्रलों का आहार करते हैं. और जो पुद्रल प्रक्षेप आहारपने ग्रहण किये जाते हैं, उन का असंख्यात में भागमें आहार करते हैं, और अनेक सहस्र भाग नहीं आस्वादते व नहीं स्पर्शते उन का विध्वंस होता है. अहो भगवन् ! नहीं आस्वादन किये हुवे व नहीं स्पर्शे हुवे पुद्रलों में से कौनसा अल्प व बहुत है ? अथवा तुल्य है या विशेषाधिक है ? अहो गौतम ! सब से

* प्रकाशक-राजावशपुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

असंख्यात समय अ० अन्तर्मुहूर्त वे० वेमात्रा आ० आहार की इच्छा स० उत्पन्न होवे से० शेष त० तैसे जा० यावत् अ० अनंत भाग आ० आस्वादे ॥ २९ ॥ वे० वेइन्द्रिय भं० भगवन् जे० जो० पो० पुद्गल आ० आहारपने गि० ग्रहण करते हैं ते० वे कि० क्या स० सर्व आ० आहार करते हैं णो० नहीं स० सर्व आ० आहार करते हैं गो० गौतम वे० वेइन्द्रिय को दु० दोषकार का आ० आहार प० कदा तं० वह

अणाभोगिण्वत्तिए तहेव ॥ तत्थणं जेसे आभोगिण्वत्तिए सेणं असंखेज्ज समइए,
अंतोमुहुत्तिए वेमायाए आहारट्टे समुप्पजइ. सेसं तहेव जाव अणंतभागं आसायंति
॥ २९ ॥ वेइंदियाणं भंते जे पोगले आहारत्ताए गिण्हंति ते किं सव्वे आहारंति,
णो सव्वे आहारंति ? गोयमा ! वेइंदियाणं दुविहे आहारे पणत्ते तंजहा लोमाहारेय
पखेवाहारेय । जे पोगले लोमाहारत्ताए गिण्हंति ते सव्वे अपरिसेसिए आहारंति, जे

निर्वात आहार असंख्यात समयिक अंतर्मुहूर्त में मर्यादा रहित आहार करे. अन्य यावत् अनंत भाग का आस्वादन करे वहांतक का सब अधिकार पहिले जैसे कहना ॥ २९ ॥ अहो भगवन् ! वेइन्द्रिय जितने पुद्गलों को आहार के लिये ग्रहण करते हैं उन सब का क्या वे आहार करते हैं? या सब का आहार नहीं करते हैं? अहो गौतम ! द्वैइन्द्रिय के आहार के दो भेद कहे हैं. १. रोम आहार सो ओष से वर्षादि समय में जो पुद्गलों प्रवेश करे और २. प्रक्षेप आहार सो कवल रूप. इस में जो पुद्गल रोम आहारपने

ज० जैसे लो० रोम आहार प० कवल आहार जे० जो पो० पुद्रल लो० रोम आहारपने गि० ग्रहण करते हैं ते० वे स० सर्व अ० निर्विशेष आ० आहारकरे जे० जो० पो० पुद्रल प० कवल आहारपने गि० ग्रहण करतेहैं पो० पुद्रल को अ० असंख्यात भाग को अ० आहारकरे अ० अनेक भाग स० सहस्र अ० नहीं भोगवे अ० नहीं स्पर्शे वि० विध्वंसपाते हैं ए० इन पो० पुद्रल को अ० नहीं भोगवा न० नहीं स्पर्शा क० कौन से अ० थोड़े व० बहुत तु० सरिखे वि० विशेषाधिक गो० गौतम स०सर्व से थोडा पो०पुद्रल अ० नहीं

पोगले पक्खेवाहारचाए गिण्हंति तेसिणं पोगगलाणं असंखेज्जइ भागं आहारंति.
अणेगाइंचणं भागसहस्साइं अणासाइज्जमाणाइं अफासाइज्जमाणाइं विट्ठंसमावज्जइ ॥
एएसिणं भंते पोगगलाणं अणासाइज्जमाणाणं अफासाइज्जमाणाणं य, कयरे २
हितो अप्पावा, बहुलावा, तुल्लावा, विसेसाहियावा ? गोयमा ! सव्वत्योवा पोगगला

ग्रहण करते हैं उन सब पुद्रलों का आहार करते हैं. और जो पुद्रल प्रक्षेप आहारपने ग्रहण किये जाते हैं, उन का असंख्यात में भागमें आहार करते हैं, और अनेक सहस्र भाग नहीं आस्वादते व नहीं स्पर्शते उन का विध्वंस होता है. अहो भगवन् ! नहीं आस्वादन किये हुवे व नहीं स्पर्शे हुवे पुद्रलों में से कौनसा जल्प व बहुत है ? अथवा तुल्य है या विशेषाधिक है ? अहो गौतम ! सब से

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखेश्वरसहायजी ज्वालामसादजी *

भोगवा अ० नहीं स्वर्शा अ० अन्तगुणा ॥ ३० ॥ वे० वेइन्द्रिय भं० भगवन् पो० पुद्गल आ० आहारपने
 गि० ग्रहण करते हैं ते० वे पो० पुद्गल की० कीसतरह मु० वारंवार प० परिणमते हैं गो० गौतम
 नि० जिब्हेन्द्रिय फा० स्पेशेन्द्रियपने वे० वेमात्रा मु० वारंवार प० परिणमते हैं वे० वेइन्द्रिय भं० भगवन्
 पु० पूर्वाहारी पो० पुद्गल प० परिणमा त० तैसे जा० यावत् च० चलित कर्म गि० निर्जरे ॥ ३१ ॥
 ते० तेइन्द्रिय च० चतुरेन्द्रिय णा० विविध प्रकार की डि० स्थिति जा० यादत् अ० अनेक भा० भाग सहस्र अ०

अणासाइज्जमाणा, अंफासाइज्जमाणा अणंतगुणा ॥ ३० ॥ वेइंदियाणं भंते पोगगला
 आहारत्ताए गिण्हंति तेणं तेसिं पोगगला कीसत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति ? गोयमा !
 जिबिभंदिय फासिंदिय वेमायाए भुज्जो भुज्जो परिणमंति ॥ वेइंदियाणं भंते पुब्वाहारिया
 पोगगला परिणया तहेव जाव चलियं कम्मं गिज्जरेति ॥ ३१ ॥ तेइंदिय चउरिंदि-

योडे आस्वाद नहीं करायें हुवे पुद्गल उस से अस्पर्शमान पुद्गल अनंत गुने कहे हैं ॥ ३० ॥ अहो भगवन् !
 जो पुद्गल द्वैइन्द्रिय आहारपने ग्रहण करते हैं वे कैसे परिणमते हैं ? अहो गौतम ! वे आहार के पुद्गल
 वेइन्द्रिय को जिब्हेन्द्रियपने स्पेशेन्द्रियपने व वमात्रासे परिणमते हैं, अहो भगवन् ! वेइन्द्रिय को पहिले के आहारे
 हुवे पुद्गल परिणमते हैं यावत् चलित कर्म की निर्जरा करते हैं वगैरह सब अधिकार पहिले जैसे कहना
 ॥ ३१ ॥ तेइन्द्रिय की स्थिति ४९ दिन की न चतुरेन्द्रिय की स्थिति ६ मास की अन्य सब अ-

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३० ॥ वेइन्द्रिय भं० भगवन् पो० पुद्गल आ० आहारपने गि० ग्रहण करते हैं ते० वे पो० पुद्गल की० कीसतरह मु० वारंवार प० परिणमते हैं गो० गौतम नि० जिब्हेन्द्रिय फा० स्पेशेन्द्रियपने वे० वेमात्रा मु० वारंवार प० परिणमते हैं वे० वेइन्द्रिय भं० भगवन् पु० पूर्वाहारी पो० पुद्गल प० परिणमा त० तैसे जा० यावत् च० चलित कर्म गि० निर्जरे ॥ ३१ ॥ ते० तेइन्द्रिय च० चतुरेन्द्रिय णा० विविध प्रकार की डि० स्थिति जा० यादत् अ० अनेक भा० भाग सहस्र अ० अणासाइज्जमाणा, अंफासाइज्जमाणा अणंतगुणा ॥ ३० ॥ वेइंदियाणं भंते पोगगला आहारत्ताए गिण्हंति तेणं तेसिं पोगगला कीसत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति ? गोयमा ! जिबिभंदिय फासिंदिय वेमायाए भुज्जो भुज्जो परिणमंति ॥ वेइंदियाणं भंते पुब्वाहारिया पोगगला परिणया तहेव जाव चलियं कम्मं गिज्जरेति ॥ ३१ ॥ तेइंदिय चउरिंदियोडे आस्वाद नहीं करायें हुवे पुद्गल उस से अस्पर्शमान पुद्गल अनंत गुने कहे हैं ॥ ३० ॥ अहो भगवन् ! जो पुद्गल द्वैइन्द्रिय आहारपने ग्रहण करते हैं वे कैसे परिणमते हैं ? अहो गौतम ! वे आहार के पुद्गल वेइन्द्रिय को जिब्हेन्द्रियपने स्पेशेन्द्रियपने व वमात्रासे परिणमते हैं, अहो भगवन् ! वेइन्द्रिय को पहिले के आहारे हुवे पुद्गल परिणमते हैं यावत् चलित कर्म की निर्जरा करते हैं वगैरह सब अधिकार पहिले जैसे कहना ॥ ३१ ॥ तेइन्द्रिय की स्थिति ४९ दिन की न चतुरेन्द्रिय की स्थिति ६ मास की अन्य सब अ-

नहीं सुंयते अ० नहीं स्वादलेते अ० नहीं स्पर्शते वि० विध्वंसपति हैं पो० पुद्रल को अ० नहीं सुंघेहुवे अ० नहीं स्वादलिये अ० नहीं स्पर्शेहुवे गो० गौतम स० सर्व से थोडा पो० पुद्रल अ० नहीं सुंघेहुवे अ० नहीं स्वादलिये अ० अनंतगुने अ० नहीं स्पर्शेहुवे ते० तेइन्द्रिय को या० घ्राणेन्द्रिय जि० जिन्हेन्द्रिय फा० स्पर्शेन्द्रियपने वे० वेमात्रा सुं० वारंवार परिणमें च० चतुरिन्द्रिय को च० चक्षु-

याणं गाणत्तं ठिईए जाव अणेगाइं च णं भागसहस्राइं अणाघाइज्जमाणाइं, अणासाइज्जमाणाइं, अफासाइज्जमाणाइं विद्धसमावज्जंति. एएसिणं भंते पोगलाणं अणाघाइज्जमाणाणं, अणासाइज्जमाणाणं अफासाइज्ज माणाणं य पुच्छा ॥ गोयमा ? सव्वत्थोवा पोगला अणाघाइज्जमाणा, अणासाइज्जमाणा अणंतगुणा अफासाइज्जमाणा अणंतगुणा ॥ तेइंदियाणं घाणेदिय जिब्भिमदिय फासिंदिय वंमायत्ताए भुज्जो भुज्जो

धिकार अनेक भाग सहस्र घ्राणेन्द्रिय से नहीं सुंघते, रसनेन्द्रिय से नहीं आस्वादते व स्पर्शेन्द्रिय से नहीं स्पर्शते नष्ट होते हैं वहां तक पहिले जैसे कहना. उन में कोनसा अल्प व बहुत है ? तुल्य व विशेषाधिक है ? अहो गौतम ! सब से थोडे घ्राणेन्द्रियपने नहीं सुंघे हुवे पुद्रलों, इस से रसनेन्द्रियपने नहीं आस्वादे हुवे पुद्रलों अनंत गुने, इस से स्पर्शेन्द्रियपने नहीं स्पर्शे हुवे पुद्रलों अनंत गुने, तेइन्द्रिय को आहार के पुद्रल घ्राणेन्द्रिय, जिन्हेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रियपने, व विविध प्रकार से परिणमते हैं. वैसे ही चतुरेन्द्रिय को

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

जा० यावत् च० चतुरेन्द्रिय अ० अवशेषं स० सब व० बढते हैं हा० हीन होते हैं. त० तेसे अ० अवस्थित
का ना० भिन्नता इ० यह स० संमूर्च्छिम ति० तिर्यच पंचेन्द्रिय दो० दो अ० अंतर्मुहूर्त ग० गर्भ व०
उपपन्न के च० चौथीस मु० मुहूर्त सं० संमूर्च्छिम म० मनुष्य का अ० अडतालीस मु० मुहूर्त ग० गर्भन
म० मनुष्य का च० चौथीस मु० मुहूर्त वा० वाणव्यंहर जो० ज्योतिषी सो० सौधर्म ई० ईशान में अ०
भइतायीस मु० मुहूर्त स० सनत्कुमार में अ० अठारठ रा० रात्रिदिन च० चालीस मु० मुहूर्त मा० माहे-

जहणं एकां समयं, उक्तासं दोअंतोमुहुत्ता एवं जाव चउरिंदिया, अवसेसा सव्वे,
वडुंति हायंति तहचेव अयट्टियाणं नाणत्तं इमं तंजहा संमुच्छिम पंचिदिय तिरिक्ख
जोणियाणं दो अंतोमुहुत्ता, गम्भवक्कतियाणं चउव्वीसं मुहुत्ता, संमुच्छिम मणुस्साणं
अट्टचचालीसं मुहुत्ता, गम्भवक्कतिय मणुस्साणं चउव्वीसं मुहुत्ता, वाणमंतरजोइस
सोहम्मीसाणेसु अट्टचचालीसं मुहुत्ता, सणकुमारि अट्टारस राइंदियाइ चत्तालीसय मु-

दो अंतर्मुहूर्त. संमूर्च्छिम तिर्यच पंचेन्द्रिय का चौथीस मुहूर्त, संमूर्च्छिम मनुष्य का ४८ मुहूर्त, गर्भन मनुष्य
का चौथीस मुहूर्त, वाणव्यंहर ज्योतिष सौधर्म व ईशान देवलोक में ४८ मुहूर्त, सनत्कुमार में अठार रात्रि
दिन, य चालीस मुहूर्त, मोहन्द में २४ रात्रि दिन ?० मुहूर्त, ब्रह्मदेवलोक में ४५ दिन, लंका में ९० दिन
परायुक्त में ?६० दिन तदस्यार में २०० आणत प्राणत में संख्यात रात्रिदिन आरण अच्युत में संख्यात वर्ष

न्द्र में चौ० चौबीस रा० रात्रिदिन वी०वीस मु० मुहूर्त वं० ब्रह्मदेवलोक में च०चालीस लं०लांतक में न०
नेऊ म० महायुक्त में स० साठ रा० रात्रिदिन स० सो स० सहस्रार में दो० दोसो रात्रिदिन आ०
आणत पा० प्राणत में मं० संख्यात मास आ० आरण अ० अच्युत में सं० संख्यात वा० वर्ष ए० ऐसे
ने० त्रैवेयक विमान के दे० देवों का वि० विजय वे० वैजयंत ज० जयंत अ० अपराजित का अ० असं-
ख्यात वां० वर्ष रा० सहस्र स० सर्वार्थ सिद्ध में प० पल्योपम का सं० संख्यात भाग दोष पूर्ववत् ॥ १४ ॥

हुत्ता, माहिंदे चउव्वीस राइंदियाइं वीसय मुहुत्ता, वंभलोए पंच चत्तालीस राइंदियाइं,
लंतए नउयराइंदियाइं, महासुक्के सट्टि राइंदियसयं, सहस्सारे दो राइंदियसयाइं,
आणयथाणयाणं संखेजामासा, आरणच्चुयाइं संखेजाइं वासाइं एवं गोवेज देवाणं,
विजयवेजयंतजयंतापराजियाणं असंखेजाइं वास सहस्साइं, सब्बट्टासिद्धिय पलिओ-
वमस्स संखेजभागो एवं भाणियव्वं, वहुंति हायंति, जहण्णेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं
आवलियाए असंखेजइभागं अवाट्टियाणं जं भणियं ॥ १४ ॥ सिद्धाणं भंते ! केव-

नवत्रैवेयक में संख्यात वर्ष, विजय वैजयंत जयंत व अपराजित में असंख्यात वर्ष सहस्र और सर्वार्थसिद्ध में पल्योपम
का संख्यात वे भाग तक अयस्थित काल रहता है. उन सब का वृद्धि होना वहीन होनेका काल जयन्य एक समय
उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यात वे भाग का है ॥ १४॥ सिद्ध भगवंत जयन्य एक समय उत्कृष्ट आठ समय तक बढ़ते

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुबद्रव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

पूवत् ॥ १५ ॥ जी० जीव भ० भगवन कि० क्या सो० वृद्धिहा सा०ने बोल हीन होने, काले सो० वृद्धि व हीन होने वाले नि० वृद्धि व हीन नहीं होने वाले ए० एकेन्द्रिय त० तीसरे प० पद में से०

इयं कालं वहुति ? गोयमा ! जहणं एकं समयं उक्कोसेणं अट्टसमया, केवइयं कालं अयाट्टिया ? गोयमा ! जहणं एकं समयं उक्कोसेणं छम्मासा ॥ १५ ॥ जीवाणं भंते ! किं सेवचया, सावचया, सेवचयसावचया, निरुवचयनिरवचया ? गोयमा ! जीवा नो सेवचया, नो सावचया, नो सेवचयसावचया, निरुवचय निरवचया ॥ एणिं दिया तइय पदे, सेसा जीवा चउहिं पएहिं भाणियव्वा ॥ १६ ॥ सिद्धाणं भंते ! पुच्छ ? गोयमा ! सिद्धा सेवचया, नोसावचया, नो सेवचयसावचया, निरुवचय-

ई.उनका अवस्थितकाल जयन्य एक समय उत्कृष्ट छ मासका है ॥ १५ ॥ अहो भगवन्! क्या जीव सेवचय-नचिन उत्पन्न होकर पढ़ने वाले सावचय-कालकर हीन होने वाले, सेवचयसावचय य कुछ बढनेवाले कुच्छ हीन होनेवाले और क्या निरुवचयनिरवचय हीन व बढनेवाले नहीं हैं? अहां गौतम! समुच्चय जीव निरुवचयनिरवचयवाले हैं अर्थात् इस में कोई नचिन जीव उत्पन्न नहीं होता है वैसे ही कोई जीव उस में से विनाश नहीं पाता है. इस में कएन्द्रिय में सेवचय सावचय का भांगा पाता है और शेष सब दंडक में चारोंही भागे पाते हैं. ॥ १६ ॥ सिद्ध भगवन् में नचिन उत्पन्न होकर वृद्धि होवे वैसे सेवचय और बढे नहीं व हीन नहीं होवे वैसे निरुवच

निरवचया ॥ १७ ॥ जीवाणं भंते ! केवइयं कालं निरुवचयनिरुवचया ? गोयमा !
 सव्वहं ॥ नेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं सोवचया ? गोयमा ! जहणं
 एकं समयं, उक्कोसिणं आवलियाए असंखेज्जइ भागं, । केवइयं कालं सावचया ?
 एवं चेव ॥ केवइयं कालं सोवचयसावचया ? एवं चेव ॥ केवइयं कालं निरुवचय
 निरवचया ? गोयमा ! जहणं एकं समयं उक्कोसं वारस मुहुत्ता, एगिंदिया सव्वे
 सोवचया, सावचया; सव्वहं ॥ सेसा सव्वे सोवचयावि, सोवचयसावचयावि

निरवचय ऐसे दो भांगे पाते हैं ॥ १७ ॥ अहो भगवन् ! जीव कितने कालतक निरुवचय निरवचय रहते हैं ? अहो गौतम ! जीव सत्र काल निरुवचय निरवचय रहते हैं. अहो भगवन् ! नारकी कितने काल तक सोवचय रहते हैं ? अहो गौतम ! नारकी जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का अमंख्यात वा भाग तक सोवचय रहते हैं. अहो भगवन् ! नारकी कितने काल तक सोवचय, व सोवचयसावचय रहते हैं ? अहो गौतम ! जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का अमंख्यात वा भाग तक रहते हैं. नारकी निरुवचय निरवचय जघन्य एक समय उत्कृष्ट वारह मुहूर्त तक रहते हैं. सब एक्कान्द्रिय सदैव सोवचय भावचय रहते हैं. शेष सब पृथक् २ जीवों का सोवचय, सावचय, व सोवचय सावचय का काल जघन्य

* प्रकाशक-राजाकहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

शाप नी० नीव च० चार प० पद से भा० कदना ॥ १६ ॥ पूर्ववत् ॥ १७ ॥ पूर्ववत् ॥ १८ ॥ सि०
भिद्ध भ० भगवन् के० कितना काल सो० बहनवाले गो० गौतम ज० जन्य ए० एक स० समय उ०
उत्कृष्ट अ० आठ स० समय के० कितनाकालतक नि० बराबर ज० जन्य ए० एक समय उ० उत्कृष्ट उ०
उपाम से० वैले भ० भगवन् ॥ ५ ॥ ८ ॥ * * *

जहणं एकां समयं उक्तासं आत्रलियाए असंखेजइ भागं अत्रट्टिएहिं वक्कंतिव कालो
भाणियव्वो ॥ १८ ॥ सिद्धाणं भंते ! केवइयं कालं सोवचया ? गोयन्ना ! जहणं
एकां समयं उक्तासं अट्टसमया. केवइयं निरुवच्यनिरवचया ? जहणं एकां समयं.
उयोसं छम्मासा संवं भंते भंतेत्ति ॥ पंचम सयस्त अट्टमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ५ ॥ ८ ॥

एक समय उत्कृष्ट आत्रलिका के असंख्यात वा भागतक जानना. निरुवचय निरवचय का पचवणासूत्र
में विरहद्वार जैमे जानना ॥ १८ ॥ अहो भगवन् ! सिद्ध कितने कालतक सोवचय रहते हैं ? अहो
गौतम ! जन्य एक समय उत्कृष्ट आठ समय. और उन का निरुवचय काल जन्य एक
समय उत्कृष्ट छ मास का है. अहो भगवन् आपके वचन सत्य हैं. यह षांचथा शतक का
आठवा उद्देशा संपूर्ण हुआ ॥ ५ ॥ ८ ॥ * * *

शब्दार्थ

सूत्र

वार्थ

निरवचया ॥ १७ ॥ जीवाणं भंते ! केवइयं कालं निरवचयनिरवचया ? गोयमा !
 सव्वद्धं ॥ नेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं सोवचया ? गोयमा ! जहणं
 एकं समयं, उक्कोसिणं आवलियाए असंखेज्जइ भागं, । केवइयं कालं सावचया ?
 एवं चेव ॥ केवइयं कालं सोवचयसावचया ? एवं चेव ॥ केवइयं कालं निरवचय
 निरवचया ? गोयमा ! जहणं एकं समयं उक्कोसं वारस मुहुत्ता, एगिंदिया सव्वे
 सोवचया, सावचया; सव्वद्धं ॥ सेसा सव्वे सोवचयावि, सोवचयसावचयावि

निरवचय ऐसे दो भांगे पाते हैं ॥ १७ ॥ अहो भगवन् ! जीव कितने कालतक निरवचय निरवचय रहते
 हैं ? अहो गौतम ! जीव सब काल निरवचय निरवचय रहते है. अहो भगवन् ! नारकी कितने काल तक
 सोवचय रहते हैं ? अहो गौतम ! नारकी जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का अभंख्यात वा भाग
 तक सोवचय रहते हैं. अहो भगवन् ! नारकी कितने काल तक सावचय, व सोवचयसावचय रहते
 हैं ? अहो गौतम ! जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का अभंख्यात वा भाग तक रहते हैं. नारकी
 निरवचय निरवचय जघन्य एक समय उत्कृष्ट वारह मुहूर्त तक रहते हैं. सब एक्कान्द्रिय सदैव सोवचय
 भावचय रहते हैं. शेष सब पृथक् २ जीवों का सोवचय, सावचय, व सोवचय सावचय का काल जघन्य

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

द० द्रव्य न० नगर रा० राजगृह चि० ऐसा प० कहाता है गो० गौतम पु० पृथ्वी न० नगर रा० राज-
गृह जा० यावत् स० सचित्त अ० अचित्त भी० मीश्र द० द्रव्य न० नगर रा० राजगृह से० अथ
के० कैमे गो० गौतम पु० पृथ्वी जी० जीववाली अ० अजीववाली न० नगर रा० राजगृह प० कहाता
है ना० यावत् स० सचित्त अ० अचित्त भी० मीश्र द्रव्य जी० जीव अ० अजीव वाले न० नगर रा०
राजगृह प० कहाता है ते० इसलिये तं० वैसा ॥ ? ॥ से० अथ पू० शंकादर्शी भं० भगवन् दि० दिन

गिंहति पवुच्चइ जात्र सचित्ताचित्तमीसयाइं दव्वाइं नगरं रायगिंहति पवुच्चइ । से
केणट्टुणं ? गोयमा ! पुठवी जीवाइय, अजीवाइय, नगरं रायगिंहति पवुच्चइ जात्र
सचित्ता चित्त मीसयाइं दव्वाइं जीवाइय अजीवाइय, नगरं रायगिंहति पवुच्चइ सेतेण-
ट्टुणं तंचेव ॥ १ ॥ सेणुणं भंते ! दिवा उज्जेणु राइ अंधयारे ? हंता गोयमा !

करना ? भदो गौतम ! पृथ्वी राजगृही कंहाती है यावत् सचित्त अचित्त व मीश्र द्रव्य राजगृही कहांते
है. भदो भगवन् ! कैमे पृथ्वी राजगृही कहांती है, यावत् सचित्त, अचित्त व मिश्र द्रव्य राजगृही कहांते
है. भदो गौतम ! पृथ्वी, पानी आदि स्थावर पशु मनुष्यादि सब जीव, गृह भवन शयनासनादि सब वस्तु
के संयोग से ही जीव अजीव का जहां संग्रह होता है वह नगर कहाता है. और वैसा संयोग राजगृही
नगरी में होने से उनको राजगृही कहा है ॥ ? ॥ अहो भगवन् ! क्या दिन को उद्योत व रात्रि को अंधकार

ते० उस काल ले० उस स० समय में ला० यावत् ए० ऐसा न० बोले किं० क्या इ० यह भं० भगवत् न० नगर अ० राजगृह ति० ऐसा प० कहाता है किं० क्या पु० पृथ्वी न० नगर रा० राजगृह प० कहाता है आ० अप् जा० यावत् व० वनस्पति ज० जैसे ए० इस का अ० अनुदेशसे पं० पंचेन्द्रिय ति० तिर्यच की व० वक्तव्यता त० जैसे भा० कहना जा० यावत् स० सचिच अ० अचिच मी० भीश्र

तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव एधं वषासी-किमिदं भंते ! णयरं रायगिंहंति पवुच्चइ
किं पुढवी णयरं रायगिंहंति पवुच्चइ, आऊ नगरं रायगिंहंति पवुच्चइ, जाव वणस्सइ
नह्हा एमणुदेसए पंचिदिय तिरिक्ख जेणियाणं वत्ताव्वया तहा भाणियव्वा जाव स-
वित्ताचिचत्तमीसयाहं, दव्वाइं नगरं रायगिंहंति पवुच्चइ ? गोथमा ! पुढवीवि नगरं राय-

आठवे उद्देशे में जीवों की उत्पत्ति व वृद्धि के प्रश्नोत्तर कहें. वे ग्रामदिक में होते हैं इसलिये, अथवा भगवंत श्री महार्थीर स्वाभी राजगृही नगरी में वारंवार प्यारे इसलिये राजगृही नगरीका प्रश्न पूछते हैं. उस काल उस समय में श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वाभी को भगवान् गौतम स्वामी पूछनेलगे कि अहे भगवन् ! इस नगरी को राजगृही क्यों कहना ? क्या पृथ्वी, अप, तेउ, वाउ, वनस्पति, यावत् सचिच अचिच भीश्र द्रव्य वगैरह जो तातेवे उद्देशे में कहे हैं उन सब पदार्थ को क्या राजगृही

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालामुखी *

ते० इमलिये ॥ ३ ॥ अ० असुरकुमार भं० भगवन् किं० क्या उ० उद्योत करने वाले अं० अंधकार
 वाले गो० गौतम अ० असुरकुमार उ० उद्योत वाले नो० नहीं अं० अंधकार वाले के० कैसे गो० गौतम
 अ० असुर कुमार को सु० शुभ पो० पुद्गल सु० शुभ पुद्गल परिणम जा० यावत् थ० स्थानित कुमार को
 ॥ ४ ॥ पु० पृथ्वी काया को जा० यावत् ते० तेइन्द्रिय ज० जैसे ने० नारकी च० चतुरेन्द्रिय भं० भगवन्
 गोयमा ! नेरइयाणं असुमा पोगला असुभे पोगलपरिणामे से तेणट्टुणं ॥ ३ ॥

असुरकुमाराणं भंते ! किं उज्जोए अंधयारे ? गोयमा ! असुरकुमाराणं उज्जोए
 नो अंधयारे ॥ से केणट्टुणं ? गोयमा ! असुरकुमाराणं सुमा पोगला सुभे पोगल
 परिणामे से तेणट्टुणं जाव एवं बुच्चइ, जाव थणियाणं ॥ ४ ॥ पुढवीकाइया जाव
 तेइदिया जहा नेरइया । चउरिंदियाणं भंते ! किं उज्जोए अंधयारे ? गोयमा ! उज्जोएवि
 परिणम हे; इम से अंधकार होता है ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! असुरकुमार को क्या उद्योत होता है अथवा
 अंधकार होता है ? अहो गौतम ! असुरकुमार को उद्योत होता है परंतु अंधकार नहीं होता है,
 क्योंकि असुरकुमार को शुभ पुद्गलों होते हैं और वे शुभपने परिणमते हैं, ऐसे ही नागकुमार यावत्
 स्थानित कुमारतक जानना ॥ ४ ॥ पृथ्वीकायादि पांच स्थावर वेइन्द्रिय व तेइन्द्रिय का नारकी जैसे
 कहना, अहो भगवन् ! चतुरेन्द्रिय को क्या उद्योत अथवा अंधकार होता है ? अहो गौतम ! चतुरे-

शब्दार्थ

सूत्र

को उ० उद्योत रा० रात्रि को अ० अंधकार हं० हां गौ० गौतम जा० यावत् अं० अंधकार से० वह के० कैसे गो० गौतम दि० दिन को सु० शुभ पो० पुद्गल सु० शुभ पुद्गल प० परिणम रा० रात्रि को अ० अशुभ पो० पुद्गल अ० अशुभ पो० पुद्गल प० परिणम ते० इसलिये ॥ २ ॥ ने० नारकी कि० क्या उ० उद्योत वाले अ० अंधकार वाले गो० गौतम ने० नारकी नो० नहीं उ० उद्योतवाले अं० अंधकार वाले के० कैसे गो० गौतम ने० नारकी में अ० अशुभ पो० पुद्गल अ० अशुभ पो० पुद्गल प० परिणम

जाव अंधयारे, से केणट्टेणं ? गोयमा ! दिवा सुभा पोगला सुभे पोगलपरिणामे,
राति असुभापोगला, असुभे पोगलपरिणामे से तेणट्टेणं ॥ २ ॥ नेरइयाणं
भंते ! कि उज्जेए अंधयारे ? गोयमा ! नेरइयाणं नो उज्जेए अंधयारे ॥ से केणट्टेणं ?

होता है ? हां गौतम ! दिन को उद्योत व रात्रि को अंधकार होता है. अहो भगवन् ! यह किस तरह है ? अहो गौतम ! दिन को सूर्य के किरण रूप शुभ पुद्गल परिणमते हैं जिस से उद्योत होता है और रात्रि को अशुभ पुद्गल परिणमते हैं जिस से अंधकार होता है ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! क्या नारकी को उद्योत या अंधकार है ? अहो गौतम ! नारकी को उद्योत नहीं है परंतु अंधकार है. अहो भगवन् ! यह किस तरह है ? अहो गौतम ! नारकी में सूर्य के अभाव से अशुभ पुद्गलों हैं और अशुभ पुद्गल का

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुत्तदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

इन्द्रिय घा० घ्राणेन्द्रिय जि० जिब्हेन्द्रिय फा० स्पर्शेन्द्रियपने भु० वारंवार प० परिणमं ॥ ३२ ॥ पं० पंचेन्द्रिय ति० तिर्यंच ठि० स्थिति भ० कहना ऊ० उश्वास वे० वेमात्रा आ० आहार अ० अनाभोग निर्वर्तित पने अ० समय समय में अ० आंतरा रहित आ० आभोग निर्वर्तितपने ज० जयन्य अ० अन्तर्मुहूर्त उ० उत्कृष्ट छ० छद्म भक्त में से० शेष ज० जैसे च० चतुरेन्द्रिय जा० यावत् च० चलित कर्म णि० निर्जरे ॥ ३३ ॥

परिणमंति चउरिंदियाणं चक्खुंदिय घाणिंदिय जिब्भंदिय फासिंदियत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति ॥ ३२ ॥ पंचिंदिय तिरिक्ख जोणियाणं ठिंई भणिऊण उसासोवेमायाए आहारो अणाभोगणिव्वत्तिए अणुसमइयं अविरहिओ आमोनिव्वत्तिओ जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं छट्टभत्तस्स सेसं जहा चउरिंदियाणं जाव चळियं कम्मं णिज्जेरंति ॥ ३३ ॥ एवं मणुस्साणवि. णवरं आभोगणिव्वत्तिए जहण्णेणं अंतो-

चक्षुशन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिब्हेन्द्रिय व स्पर्शेन्द्रियपने परिणमते हैं ॥ ३२ ॥ तिर्यंच पंचेन्द्रिय की स्थिति जयन्य अंतर्मुहूर्त की उत्कृष्ट तीन पल्योपम की. उन का श्वासोश्वास मर्यादा रहित जानना. उन को अनाभोग निर्वर्तित आहार प्राति समय विरह रहित होता है. और आभोग निर्वर्तित आहार जयन्य अंतर्मुहूर्त में उत्कृष्ट छद्म भक्त सो दो दिन में. (देवकुरु उत्तर कुरु के क्षेत्र के तिर्यंच आश्रित.) और चलित कर्म की निर्जरा करेंगे वहां तक का शेष सब अधिकार चतुरेन्द्रिय. जैसे कहना ॥ ३३ ॥ ऐसे ही

ॐ श्री गुरुभ्यो नमः ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

किं क्वा उ० उद्योत वाले अं० अंधकारवाले गो० गौतम उ० उद्योत वाले अं० अंधकार वाले भी गो० गौतम च० चतुरेन्द्रिय को सु० शुभाशुभ पो० पुद्गल परिणम ए० ऐसे जा० यावत् म० मनुष्य को वा० वाणव्यंतर जो० ज्योतिषी वे० वैमानिक ज० जैसे अ० असुरकुमार ॥ ४ ॥ अ० है भं० भगवन् ने० नारकी त० वहाँ रहे हूँ ए० ऐसे प० जाननेवाले तं० वह ज० यथा स० समय आ० आवलिका जा० यावत् ओ० अवसाँपिणी गो० गौतम णो० नहीं इ० यह अ० अर्थ स० समर्थ के० कैसे जा०

अंधयोरत्रि । से केणट्टेणं ? गोयमा ! चउरिंदियाणं सुभासुभा पोगला सुभासुभे पोगलपरिणामे से तेणट्टेणं ॥ एवं जाव मणुस्साणं, वाणमंतर जोइस वेमाणिया

जहा असुरकुमारा ॥ ५ ॥ अत्थिणं भंते ! नेरइयाणं तत्थगयाणं एवं पण्णायए तं० समयाइवा, आवलियाइवा, जाव ओसप्पिणीइवा उस्सप्पिणीइवा? गोयमा ! णो इणट्टे सम ड्ढे। सेकेणट्टेणं जाव समयातिवा आवलियातिवा ओसप्पिणीतिवा उस्सप्पिणीइवा? गोयमा।

न्द्रिय को उद्योत व अंधकार दोनों होते हैं। क्योंकि उन को शुभाशुभ पुद्गल व शुभाशुभ पुद्गल परिणम होता है। ऐसे ही त्रिर्वच पंचेन्द्रिय व मनुष्य का जानना। वाणव्यंतर ज्योतिषी व वैमानिक को असुर कुमार जैसे कहना ॥ ५ ॥ उद्योत सूर्य की कीरणों से होता है। और सूर्य से काल मान भी होता है। इसलिये काल आश्री प्रश्न पूछते हैं। अहो भगवन् ! नारकी नरक लोक में रहे हुवे क्या समय, आ-

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

यावत् स० समय आ० आबलिका ओ० अवसर्पिणी गो० गातैम् इ० यहां ते० उनका मा० मान इ० यहां ते० उनका प० प्रमाण इ० यहां ते० उनको ए० ऐसा प० जाना जावे ते० वह स० समय जा० यावत् उ० उत्सर्पिणी ए० ऐभे जा० यावत् प० पंचेन्द्रिय ति० तिर्यंच ॥६॥ अ० है भ० भगवन् म० मनुष्य को इ० यहां रहे हुवे ए० ऐसा प० जाना जाता है स० समय जा० यावत् उ० उत्सर्पिणी इह तैसि माणं, इह तैसि पमाणं, इह तैसि एत्रं पणायते: तं समयाइवा जाव उरसस्मिणीइवा, से तेणं जाव नो एत्रं पणायए समयाइवा जाव उरसस्मिणीइवा, एवं जाव पंचिन्द्रिय तिरिक्ख जोगिया ॥ ६ ॥ अत्थिणं भंते ! मणुस्साणं इहगयाणं एवं पणायइ तं समयाइवा, जाव उरसस्मिणीइवा ? हंता अत्थि ॥ से क्केणट्टुणं ?

यल्लिका, दिन, रात्रि, मास, वर्ष यावत् अवसर्पिणी उत्सर्पिणी जान सकते हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है. अहो भगवन् ! किस कारन से यह अर्थ समर्थ नहीं है ? अहो गौतम ! सूर्य का चलना मनुष्य श्लोक में होता है नरकादि स्थानों में नहीं होता है. इसलिये वे समय, आबलिका यावत् अवसर्पिणी उत्सर्पिणी नहीं जान सकते हैं. जैसे नारकी का कहा जैसे ही पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय व तिर्यंच पंचेन्द्रिय का जानना ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! क्या मनुष्य समय, आबलिका यावत् उत्सर्पिणी जानने को समर्थ है हां गौतम ! मनुष्य समयादि जान सकते हैं. अहो भगवन् ! वे कैसे जान सकते हैं ! अहो

हं हां अं हे के० कैसे गो० गौतम इ० यहां ते० उन को मां' मान इ० यहां ते० उन को प० प्रमाण इ० यहां ते० उन को ए० ऐसा प० जाना जति स० समय जा० यावत् उ० उत्सर्पिणी ते० इसलिये वा० वाणव्यंतर जो० ज्योतिषी वे० वैमानिक को ज० जैसे ने० नारकी को ॥ ७ ॥ ते० उस काल ते० उस स० समय में पा० पार्श्वनार्य के अ० अपत्य (संतानिये) थे० स्थविर भ० भगवन्त जे० जहां स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर ते० वहां उ० आकर के स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर की अ०

गोयमा ! इह तेसिं माणं इह चैव तेसिं पमाणं इह तेसिं एवं पणायइ, तंजहा-
समयाइवा जाव उस्सापिणीइवा, से तेणट्टेणं । वाणमंतर जोइस वेमाणियाणं जहा
नेरइयाणं ॥ ७ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिजा थेरा भगवंतो जेणेव
समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता, समणस्स भगवओ महा-

वीरस्स अदूरसामंते ठिच्चा एवं वयासी-सेणूणं भंते ! असंखेज्जेलोए अणंता राइंदिया
गौतम ! मनुष्य लोक में सूर्य का चलना होता है जिस से समय, आवलिका श्वासोश्वास यावत् अवसर्पिणी
उत्सर्पिणी जान सकते हैं. वाणव्यंतर ज्योतिषी व वैमानिक का नारकी जैसे जानना ॥७॥ उस काल उस
समय में श्री पार्श्वनाथ स्वामी के संतानिये श्रमण भगवंत महावीर स्वामी की पास आये और
सामनेखडे रहकर ऐसा बोले कि अहो भगवन् ! क्या असंख्यात प्रदेशात्मक लोक में अनंत रात्रिदिन

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

देखते हैं. जो जो लो० दीखता है से० वह लो० लोक हं० हां भ० भगवन् ते० इस से अ० आर्य ए० ऐसा बु० कहा है अ० असंख्यात तं० वैसे ही ॥ ८ ॥ त० उसदिन से ते० वे पा० पार्श्वनाथ के अ० अपत्य थे० स्थविर भ० भगवंत स० श्रमण भ० महावीर को प० जानते हैं स० सर्वज्ञ स० सर्वदर्शी त० तब ते० वे थे० स्थविर भ० भगवंत स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर को थं० वंदना करके न० नमस्कार करके ए० ऐसा व० बोले इ० इच्छता हूं भं० भगवन् तु० तुम्हारी अं० समीप चा०

चा २, निलीयंति ॥ से भूए उपपन्नेविगए परिणए अजीविहिं लोकइ पलोक्इ ।

जे लोकइ सेलोए, हंता भगवं से तेणट्टेणं अजो एवं बुच्चइ असंखेजे तंचेव ॥ ८ ॥ तंप्पभिइ

चणं ते पासावच्चेजा थंरा भगवंतो समणं भगवं महावीरं पच्चाभिजाणंति सब्बणुं

सब्बदरिसिं ॥ तएणं ते थेरा भगवंतो समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ नमंसइत्ता

परिता (मलेक) रात्रि होती हैं. जहां बहुत जीव उत्पन्न होंगे व नष्ट होंगे और इस तरह उत्पन्न व विनाश का स्वभाव होंगे वह लोक कहाता है. अजीवि पुद्गलादिक से जो उत्पन्न, विनाश व परिणम के स्वभाववाला दीखने में आवे मो लोक कहाता है. इस से अहो आर्य ! असंख्यात प्रदेशात्मक लोक. में अनंत रात्रि दिन व परिता रात्रि दिन उत्पन्न हुवे, होते हैं व हवेंगे ॥ ८ ॥ उस दिन से पार्श्वनाथ स्वामी के संतानी ये स्थविर भगवन्त श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी को सर्वज्ञ सर्वदर्शी जानने लगे. फीर. वे स्थविर

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

सूत्र

त्रार्थ

चार जा० याम रूप ध० धर्म से पं० पांच म० महाव्रत स० प्रतिक्रमण सहित ध० धर्म
 उ० अंगीकार कर वि० विचरने को अ० यथासुख दे० देवानुप्रिय मा० मत प०
 विलंब त० तव ते० ने पा० पार्श्वीपत्य थे० स्थविर भ० भगवंत जा० यावत् च० छेछा उ० उश्वास
 नि० निश्वास से सि० सिद्ध हुवे जा० यावत् स० सव दु० दुःखों से प० रहित हुवे अ० कितनेक दे०
 देवलोक में उ० उत्पन्न ॥ ९ ॥ क० कितनेक भं० भगवन् दे० देवलोक प० प्ररूपे गो० गौतम च० चार

एवं वयासी-इच्छामिणं भंते! तुज्झं अंतिए चाउजामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिकमं
 धम्मं उवसंपजिच्चाणं विहरिच्चाए ? अहासुहं देवाणुप्पिया ! मापडिवंधं, तएणं तेषा-

सात्रच्चिजा थेरा भगवंतो जाव चरिमेहिं उस्सासनिस्सासेहिं सिद्धा जाव सन्वदुक्ख-
 प्पहीणा. अत्थेगइया देवल्लोसु उववन्ना, ॥ ९ ॥ कइविहाणं भंते ! देवल्लोगा

भगवन्त श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी को बंदना नमस्कार कर ऐसा कहने लगे कि अहो भगवन् !
 आप की पास से चार याम रूप धर्म से पांच महाव्रत रूप धर्म अंगीकार करने को इच्छते हैं. अहो दे-
 वानुप्रिय ! तुम को जैसे सुख होवे वैसे करो, विलम्ब मत करो. फीर वे पार्श्वनाथ स्वामी के संतानिये
 स्थविर भगवन्त चरिम उश्वास निश्वास में सिद्ध हुवे, यावत् सव दुःखों से रहित हुवे और कितनेक देव-
 लोक में उत्पन्न हुवे ॥ ९ ॥ अहो भगवन् ! देवलोक कितने प्रकार के कहें ? अहो गौतम ! चार

* प्रकाशक-राजावतार लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

प्रकार के दे० देवलोक भ० भवनवासी वा० वाणव्यंतर जो० ज्योतिषि वे० वैमानिक भे० भेदसे भ० भवन
वासी द० दश प्रकार के वा० वाणव्यंतर अ० आठ प्रकार के जो० ज्योतिषी पं० पांच प्रकार के वे०
वैमानिक दु० दो प्रकार के गा० गाथा कि० क्या इ० यह रा० राजगृह उ० उद्योत अ० अंधकार स० समय
पा० पार्थनाथ के अ० शिष्य की पु० पूछा रा० रात्रिदिन दे० देवलोक से० वैसे ही भे० भगवन् प०
पांचवा म० शतक का न० नववा उ० उद्देशा स० संपूर्ण ॥ ५ ॥ ९ ॥

पणत्ता ? गोयमा ! चउव्विहा देवलोगा पं० तं० भवणवासी, वाणमंत्रा; जोइ-
सिया, वेमाणियाभेएणं, भवणवासी देसविहा, वाणमंत्रा अट्टविहा, जोइसिया पंच-
विहा, वेमाणिया दुविहा ॥ गाहा- किमियं रायगिंहंतिय, उज्जाय अंधयार समएय ।
पासंतिवासिपुच्छा राइंदिय देवलोगाय ॥ १ ॥ सेवं भंते भंतंति ॥ पंचम सयरस
नवमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ५ ॥ ९ ॥

प्रकार के देवलोक कहे हैं भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी व वैमानिक. उस में से भवनपति के दश
भेद, वाणव्यन्तर के आठ भेद, ज्योतिषी के पांच भेद, व वैमानिक के दो भेद. अब इस उद्देशे का सा-
रांग कहते हैं ? राजगृही नगरी कित को कहना, उद्योत व अंधकार, समय, पार्थनाथ स्वासी के संता-
नीये का रात्रि दिन संबंधि प्रश्न, व देवलोक. अहो भगवन् ! आपके वचन सत्य हैं. यह पांचवा शतक का
नववा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ ५ ॥ ९ ॥

* प्रकाशक राजाग्रहादुर, लाला सुखदेवसहायजी, ज्वालाप्रसादजी *

* षष्ठ शतकम्. *

वे० वेदना आ० आहार म० महाश्रव स० प्रदेश सहित त० तमस्काय भ० भव्य सा० धान्य पु० पृथ्वी क० कर्म अ० अन्यतीर्थिक द० दश छ० छेडे स० शतक में ॥ १ ॥ से० अथ णू० शंकादर्शी भे० भगवन् ज० जो म० महावेदना वाले से० वह म० महानिर्जरा वाले जे० जो म० महानिर्जरा वाले से०

वेयण आहार महस्सवेय, सपएस तमुयए भविए ॥ साली पुढवी कम्म, अण्णउत्थि दस छट्ठंगमिसए ॥ १ ॥ सेणुणं भंते ! जे महावेयणे से महानिजरे, जे महानिजरे से महावेयणे, महावेयणस्सय अप्पवेयणस्सय से सेए जे पसत्थनिजराए ?

छठ शतक में दश उद्देश कहे हैं. १ पहिले उद्देश में महावेदना महा निर्जरा का अधिकार, २ दूसरे उद्देश में आहार का अधिकार, ३ तीसरे उद्देश में महाआश्रव का अधिकार, ४ चौथे उद्देश में जीव मपदेशी है या अपदेशी है इस के प्रश्नात्तर, ५ पांचवे में तमस्काय का अधिकार ६ छेडे में नरक में उत्पन्न होनेयोग्य का अधिकार. ७ सातवे में धान्य का विचार. ८ आठवे में रत्नप्रभादि पृथ्वी का अधिकार ९ नववे में कर्मबन्ध का अधिकार व १० दशवे में अन्यतीर्थियों का अधिकार. इस तरह छेडे शतक में दश उद्देश कहे हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! जो महा वेदनावाला होता है वह क्या महा निर्जरावाला होता है ? और जो महानिर्जरावाला होता है वह क्या महा वेदनावाला होता है ? महा

वह म० महावेदना वाले म० महावेदनावंत अ०, अल्प वेदनावंत में से० वह से० श्रेय जे० जो प०
 प्रशस्तिनिर्जरावाले हं० हां गो० गौतम जे० जो म० महावेदना वाले पं० ऐसे ॥ २ ॥ छ० छठी स०
 सातवीं भं० भगवन् पु० पृथ्वी में ने० नारकी म० महावेदना वाले हं० हां म० महावेदना वाले ते०
 वे भं० भगवन् स० श्रमण नि० निर्ग्रन्थ से म० महानिर्जरा वाले गो० गौतम जो० नहीं इ० यह अ०
 अर्थ स० समर्थ से० वह के० कैसे अ० कहा जावे अ० अर्थ से भं० भगवन् ए० ऐसा बु० कहाता है
 हंता गोयमा ! जे महावेयणे एवं चैव ॥ २ ॥ छट्ट सत्तमासुणं भंते ! पुढवीसु
 नेरइया महावेयणा ? हंता महावेयणा, तेणं भंते ! समणेहिंतो निग्गंथेहिंतो
 महानिज्जरतरागा ? गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे । से केणं खाइ अट्ठणं भंते ! एवं
 बुच्चइ जे महावेयणे जाव पसत्थ निज्जराए ? गोयमा ! से जहा नामए दुवे वत्था सिया
 एगेवत्थे कइम रागरत्ते, एगेवत्थे खंजण रागरत्ते, एएसिणं गोयमा ! दोण्हं वत्थाणं कयरे
 वेदना व अल्प वेदनावाले में जो प्रशस्त निर्जरावाला है वह क्या श्रेय-प्रधान है ? हां गौतम ! जो
 महावेदनावाला होता है वह महा निर्जरावाला होता है और जो महा निर्जरावाला होता है वह महा
 वेदनावाला होता है, वैसे ही महावेदना व अल्प वेदनावन्त में जो प्रशस्त निर्जरावाला होता है वह
 श्रेष्ठ है ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! क्या छठी सातवीं पृथ्वी-नरक में नारकी महा वेदनावाले हैं ? हां

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

जै० जो म० महावेदनावाले जां० यावत् प० प्रशस्त निर्जरा वाले से० अथ ज० जैसे दु० दो व० वल्ल
 सि० होवे ए० ऐक व० वस्त्र क० कीचड के रा० रंगसे र० रक्त ए० एक व० वल्ल खं० गडिका खंजन
 के रा० रंगसे र० रक्त ए० इन दो० दोनों व० वल्ल में क० कौनसा व० वल्ल दु० कठिनतासे धोया
 जावे दु० कठिनता से रंग नीकाला जावे दु० बहूत पराक्रम क० कौनसा व० वल्ल मु० सरलता से
 वत्थे दुधोयतराए चैव, दुवामतराए चैव, सुपरिकम्मतराए चैव, कयरे वा वत्थे
 सुधोयतराए चैव, सुवामतराए चैव, सुपरिकम्मतराए चैव, जेवा से वत्थे
 कद्मरागरत्ते जेवा से वत्थे खंजणरागरत्ते; भगवं ! तंत्यणं जे से कद्म-
 राग रत्ते सेणं वत्थे दुधोयतराए चैव, दुवामतराए चैव, दुपरिकम्मतराए चैव, एवा
 गौतम ! वे महा वेदनावाले हैं. अहो भगवन् ! तव क्या वे श्रमण निर्ग्रन्थ से महा निर्जरावाले हैं ?
 भर्थात् वे महा निर्जरा करते हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है अर्थात् छठी सातवी नरक में
 नारकी महा वेदना भोगते हुये महा निर्जरा नहीं करते हैं. तव अहो भगवन् ! यह किस अपेक्षासे
 कहा है कि जो नाना वेदनावाला होता है वह महा निर्जरावाला होता है यावत् जिन को प्रशस्त निर्जरा
 देती है वह श्रेय है ? अहो गौतम ! जैसे एक कर्दम (कीचड) से भरा हुआ और दूसरा दीपक की
 शालिमा समान काला गांड के खंजन से भरा हुआ ऐसे दो वल्ल हेवे. अब अहो गौतम ! उक्त दोनों

❀❀❀ ❀❀❀ पहिला शतक का पहिला बर्ष ❀❀❀ ❀❀❀

स्थितिपद में त० तैसे भा० कहना स० सर्व जी० जीव का आ० आहार ज० जैसे प० पन्नवणा में प० प्रथम आ० आहार उद्देशे में त० तैसे भा० कहना ए० यहां से आ० लेकर णे० नारकी भं० भगवन् आ० आहार के अर्थी जा० यावत् दु० दुःखपने भु० वारंवार परिणमे ॥ ३७ ॥ जी० जीव भं० भगवन् किं० क्या आ० आत्मारंभी प० परारंभी त० उभयारंभी अ० अनारंभी गो० गौतम अ० कितनेक जी० जीव आ० आत्मारंभी प० परारंभी उ० उभयारंभी णो० नहीं अ० अनारंभी अ० कितनेक जीव णो० नहीं

ठिती जहा ठितीपदे तथा भाणियन्वा. सव्व जीवाणं आहारोय जहा पन्नवणाए प-
ढमे आहारुद्देशए तथा भाणयन्वो । एत्तो आढत्तो णेरइयाणं भन्ते आहारुद्दी जाव
दुन्नखत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमन्ति ॥ ३७ ॥ जीवाणं भन्ते किं आयारंभा, परारंभा,
तदुभयारंभा, अणारंभा? गोयमा!अथेगइया जीवा आयारंभावि, परारंभावि तदुभयारंभावि,

जानना. इसी तरह चौबिस दंडक का कहदेना अहो भगवन् ! नारकी को आहार की इच्छा होती है ?
यावत् दुःखरूप वारंवार परिणमे. इस में पहिले नारकी की वक्तव्यता कहीं वह आरंभ पूर्वक होती है इस लिये
आरंभका निरूपण करते हैं ॥ ३७ ॥ अहो भगवन् ! क्या जीव स्वतः घात करनेवाले हैं, व अन्य की पास घात
करनेवाले हैं स्वतः घात करनेवाले व अन्य की पास करनेवाले हैं, या दोनों प्रकार की घात से रहित
अनारंभी हैं ? अहो गौतम कितनेक जीव आत्मारंभी हैं, परारंभी भी हैं, आत्मपरारंभी भी हैं परंतु अनारंभी

❀❀❀ ❀❀❀ (३७) ❀❀❀ ❀❀❀

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

म० होते हैं से० अथ ज० जैसे के० कोई पु० पुरुष अ० एरण को आ० कुटते हुवे म० बडे बडे स० शब्द से घो० घोप से प० परंपरा घा० घात से जो० नहीं सं० समर्थ ती० उस अ० एरण के अ० यथा घादर पो० पुद्वल प० नीकालने को ए० ऐसे ही गो० गौतम ने० नारकी को पा० पापकर्म गा० दृढ किये हुवे जा० यात्र नो० नहीं म० महापर्यवसान वाले भ० होते हैं भ० भगवत् तं० वहां जे० जो व०

जाव नो महापज्जवसाणाइं भवंति भगवं तंत्य जे से वत्थे खंजणरागरत्ते सेणं वत्थे

सुभोयतराए चेव, सुवामतराए चेव, सुपरिकम्मतराए चेव, एवामेव गोयमा ! समणाणं

निगंथाणं अहा चायराइं कम्माइं, सिट्ठिली कयाइं, निट्ठियाइं कडाइं विप्परिणा-

मियाइं खिप्पामेव विच्छत्याइं भवंति ॥ जानइयं तावइयं पिणं ते वेयणं वेणुमाणा

पाप कर्म बहुत दृढ बन्धनवाले होते हैं, बहुत चीकने होते हैं, निश्च होते हैं, निकाचित होते हैं. इस से नारकी उक्त कर्मों भोगने विना नहीं छुटने हैं. इस तरह महावेदना वेदते हुवे नारकी महा निर्जरा नहीं कर सकते हैं जैसे ही उन का महा पर्यवसान-निर्वाण नहीं होता है. जैसे पुरुष एरण पर लोहा रावकर बडे २ शब्दों से व घोप से एक पीछे एक बडे बडे घाव मारते हुवे उस के बादर पुद्वलों दूर करने को समर्थ नहीं होता है जैसे ही नारकी पूरुक्कत पाप कर्मों को दूर करने को व निर्वाण प्राप्त करने को समर्थ नहीं होते हैं ओग जैसे खंजन से भरा हुआ बख सरलता पूर्वक स्वच्छ व शुद्ध होता है जैसे

एता एतकका पहिया उदेशा

धोयाजावे सु० सरलतासरंगनीकाला जावे सु० पराक्रम वाले जे० जो से० उस को व० वस्त्र क० कदम
 के रा० रंग से र० रंगाया हुवा जे० जो से० वह व० वस्त्र खं० खंजन के रा० रंग से र० रंगाया हुआ
 म० भगवन् त० उस में जे० जो क० कदम राग से र० रक्त ए० ऐसे गो० गीतम ने० नारकी को पा०
 पापकर्म गा० दृढ क० किये हुवे चि० चिकने किये हुए रि० निथत्त किये हुए खि० निकाचित किये हुए
 सं० दृढ ते० वे वे० वेदना वे० वेदते हुए णो० नहीं म० महानिर्जरा नो० नहीं म० महा पर्यवमान वाले

मेव गोयमा ! नेरइयाणं पावाइं कम्माइं गाठीकयाइं, चिकणी कयाइं, सिडिलीक-

याइं, खिलीकयाइं भवति, सपगाढपियणं ते वेयणं वेएमाणा णो महानिजरा, नो
 महापज्जवसाणा भवति, ॥ से जहा वा केइ पुरिसे अहिगरणिं आउडेमाणे महया महया
 सदेणं महया र घोसेणं, महयार परंपराघाएणं णो संचाएइ तीसेअहिगरणीए अहावायरे
 पोगले परिसाडित्तए ॥ एवामेव गोयमा ! नेरइयाणं पावाइं कम्माइं गाठीकयाइं

वत्तों में से कौनसा वस्त्र कठिन्ता से धोया जाता है, कौनसा वस्त्र का रंग कठिन्ता मे निकाला जाता है,
 और कौनसा वस्त्र धोने में पराक्रम करना पडता है ? ऐसे ही कौनसा वस्त्र सरलता पूर्वक धोया जाता है,
 रंग निकाला जाता है व कौनसा वस्त्र धोने में पराक्रम नहीं करना पडना है ? अहो भगवन् ! जो नय
 कदम से भरा हुवा है वह कठिन्ता से शुद्ध हो सकता है. ऐसे ही अहो गीतम ! नरक के जीवों को

दार्थ (पदमिं नित्यं पवति) (भवति)

* भकाशक-राजायहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

गुप्त तः तृण ह० हस्त जा० आग्नि में प० डालते हुए खि० शीघ्र भ० भस्म को आ० प्राप्त होता है हं०
 हां भ० भस्म को आ० प्राप्त होता है ए० ऐसे ही गो० गौतम स० श्रमण नि० निर्ग्रन्थ अ० यथा वादर
 क० कर्म जा० यावत् म० महापर्यवसान वाले भ० होते हैं से० अथ ज० जैसे के० कोई पु० पुरुष त० तप्त
 अ० लेहि में उ० पानी का वि० विन्दु जा० यावत् हं० हां विध्वंस को आ० प्राप्त होता है ए० ऐसे
 गो० गौतम स० श्रमण नि० निर्ग्रन्थ जा० यावत् म० महापर्यवसान वाले भ० होते हैं से० अथ ते०
 इसलिये जे० जो म० महावेदना वाले से० वह म० महानिर्जरा वाले जा० यावत् नि० निर्जरा वाले ॥ ३ ॥
 क० कितने प्रकार क भ० भग न् क० करण प० प्ररूपे गो० गौतम च० चार प्रकार के क० करण प०

कइ गुरसे तचंसि अयकवच्छंसि उदगविंदु जाव हंता विच्छंसमा गच्छइ, एवामेव गोयसा !

समणःणं निगंथाणं जाव महापज्जवसाणा भवंति ॥ से तेणट्टेणं जे महावेयणे से

महानिज्जेरे जाव निजराए ॥ ३ ॥ कइविहेणं भंते ! करणे पणत्ते ? गोयसा !

पढने से शीघ्र नष्ट होता है जैसे ही श्रमण निर्ग्रन्थ के वादर कर्म पुद्गलों नष्ट होजाते हैं. इसी कारण से
 कहा है कि जो महा वेदनावाले होते हैं वे महा निर्जरावाले होते हैं और जो महा निर्जरावाले होते हैं
 वे महा वेदनावाले होते हैं. और महा वेदना व अल्प वेदनावाले में जो प्रशस्त निर्जरावाला है वह श्रेष्ठ-
 ग्यान होता है ॥ ३ ॥ वेदना करण से होती है इसलिये करण का प्रश्न करते हैं. अही भगवन् !

वस्त्र खं० खंजन राग से र० रक्त से० वह व० वस्त्र सु० सरालता से धोया जावे सु० अच्छी तरह रंग
नीकाला जावे सु० अच्छा पराक्रम वाले ए० ऐसे ही गो० गौतम स० श्रमण नि० निर्ग्रन्थ को अ० यथा
वादर क० कर्म सि० शिथिल किये हुए नि० निष्ठितार्थ क० किये हुवे वि० परिणामेहुए खि० शीघ्र
वि० विध्वंस भ० होते हैं जा० जहालंग ता० वहालंग ते० वे वे० वेदना वे० वेदते हुवे म० महा
निर्जरा म० महापर्यवसान भ० होते हैं से० अथ ज० जैसे के० कोई पु० पुरुष सु० सूका त०
तृण ह० हस्त में जा० अग्नि में प० डाले से० अथ पू० शंकादर्शी गो० गौतम से० वह सु०

महानिजरा महापज्जवसाणा भवति, से जहा नामए केइ पुरिसे सुक्कं तणहत्थयं
जायतेयंसि पक्खिवेजा सेनूणं गोयमा से सुक्के तणहत्थए जायतेयंसि पक्खित्ते
समाणे खिप्पामं व मसमसा विज्जइ ? हंता मसवसाविज्जइ, एवामेव गोयमा समणाणं
निगंथाणं अहावायराइं कम्माइं जाव महापज्जवसाणाइं भवति, ॥ से जहा नामए

ही अहो गौतम ! श्रमण निर्ग्रन्थ ने वादर कर्म पुद्गलों को मंदविपाकवाले वनाये, रस रहित किये, और
शीघ्र नष्ट होवे जैसे वनाये. जहालंग उन को वे कर्मों उदय में रहते हैं वहालंग भी उन्हे वेदते हुवे
महा निर्जरा व महा पर्यवसान करते हैं. जैसे शुक्र तृण अग्नि में डालते ही जल जाता है वैसे ही श्रमण
निर्ग्रन्थ वादर कर्म पुद्गलों का विनाश करते हैं. और जैसे तप्त लोहे की सलाका पर पानी का विन्दु

दार्थ

(अत्रात्र) (अत्रात्र)

सूत्र

वार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

काय करण क० कर्म करण ॥ ४ ॥ ने० नारकी भ० भगवन् कि० क्या क० करण से अ० असाता वे० वेदना वे० वेदते हैं अ० अकरण से अ० अमाता वे० वेदना वे० वेदते हैं के० कैसे गो० गौतम ने० नारकी को च० चार प्रकार के क० करण म० मन करण व० वचन करण का० काया करण क० कर्म करण इ० इन च० चार प्रकार के अ० अशुभ करण से ने० नारकी क० करण से अ० असाता वे० वेदना वे० वेदते हैं गो० नहीं अ० अकरण से ते० इसलिये ॥ ५ ॥ अ० असुरकुमार कि० क्या क०

त्रिगल्लिदियाणं वड्ढकरणे कायकरणे कम्मकरणे, ॥ ४ ॥ नेरइयाणं भंते ! किं करणओ असायं वेयणं वेदंति; अकरणओ असायं वेयणं वेदंति ? गोयमा ! नेरइयाणं करणओ असायं वेयणं वेदंति गो अकरणओ असायं वेयणं वेदंति ॥ से केणट्टुणं ? गोयमा ! नेरइयाणं चउव्विहे करणे प० तंजहा-मण करणे, वड्ढकरणे, काय करणे कम्म करणे, इच्छेतेण चउव्विहेणं असुभेणं करणेणं नेरइया करणओ असायं वेयणं वेदंति गो अकरणओ से तेणट्टुणं ॥ ५ ॥ असुरकुमाराणं किं करणओ अकरणओ ? गोयमा !

असाता वेदना नहीं वेदते हैं. अहो भगवन् ! किस कारण से नारकी करण से असाता वेदना वेदते हैं. परंतु अकरण से नहीं वेदते हैं ? अहो गौतम ! नारकी को मन, वचन, काय व कर्म ऐसे करण रहे हूँ वे ६. इन चार अशुभ करण से नारकी असाता वेदना वेदते हैं ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! क्या असुर

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

काय करण क० कर्म करण ॥ ४ ॥ ने० नारकी भं० भगवन् किं० क्या क० करण से अ० असाता वे० वेदना वे० वेदते हैं अ० अकरण से अ० असाता वे० वेदना वे० वेदते हैं के० कैसे गो० गौतम ने० नारकी को च० चार प्रकार के क० करण म० मन करण व० वचन करण का० काया करण क० कर्म करण इ० इन च० चार प्रकार के अ० अशुभ करण से ने० नारकी क० करण से अ० असाता वे० वेदना वे० वेदते हैं णो० नहीं अ० अकरण से ते० इसलिये ॥ ५ ॥ अ० असुरकुमार किं० क्या क०

विगलितदियाणं वड्ढकरणे कायकरणे कम्मकरणे, ॥ ४ ॥ नेरइयाणं भंते ! किं करणओ

असायं वेयणं वेदंति, अकरणओ असायं वेयणं वेदंति ? गोयमा ! नेरइयाणं करणओ असायं वेयणं वेदंति णो अकरणओ असायं वेयणं वेदंति ॥ से केणट्टेणं ? गोयमा !

नेरइयाणं चउव्विहे करणे प० तंजहा-मण करणे, वड्ढकरणे, काय करणे कम्म करणे, इच्छेतेण चउव्विहेणं असुभेणं करणेणं नेरइया करणओ असायं वेयणं वेदंति णो अकरणओ से तेणट्टेणं ॥ ५ ॥ असुरकुमाराणं किं करणओ अकरणओ ? गोयमा !

भसाना वेदना नहीं वेदते हैं. अहो भगवन् ! किस कारण से नारकी करण से असाता वेदना वेदते हैं. परंतु अकरण से नहीं वेदते हैं ? अहो गौतम ! नारकी को मन, वचन, काय व कर्म ऐसे करण रहे हुवे हैं. इन चार अशुभ करण से नारकी असाता वेदना वेदते हैं ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! क्या असुर

शब्दार्थ

रूत्र

शब्दार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी बालाप्रसादजी *

करण से सा० साता वे० वेदना वे० वेदते हैं ॥ ६ ॥ जी० जीव किं० क्या म० महावेदना वाले म० महानिर्जरा वाले म० महावेदना वाले अ० अल्प वेदना वाले अ० अल्प वेदना वाले म० महानिर्जरा वाले अ० अल्प वेदना वाले अ० अल्प वेदना वाले गो० गौतम अ० कितनेक जी० जीव म० महावेदनावाले म० महानिर्जरा वाले के० कैसे प० प्रतिमा प० प्रतिपन्न (सहित) अ० अनगर म० महावेदनावाले सत्वे सुभासुभेणं वेमाथाए, ॥ देवा सुभेणं सायवेयणं वेदंति, ॥ ६ ॥ जीवाणं भंते किं महावेयणा महानिजरा, महावेयणा अप्पनिजरा, अप्पवेयणा महानिजरा, अप्पवेयणाअप्पनिजरा? गोयमा! अत्येगइया जीवा महावेयणा महानिजरा, अत्येगइया जीवा महावेयणा अप्पनिजरा, अत्येगइया जीवा अप्पवेयणा महानिजरा, अत्येगइया जीवा अप्पवेयणा अप्पनिजरा, अत्येगइया जीवा अप्पवेयणा अप्पनिजरा, अत्येगइया जीवा अप्पवेयणा अप्पनिजरा ॥ से केणट्टेणं? गोयमा! पडिमापोडवणए अण- कर्भ वेदते हैं ॥ ६ ॥ अहो भगवन्! क्या जो जीव महा वेदनावाला होता है वह महा निर्जरावाला होता है, महा वेदनावाला अल्प निर्जरावाला होता है, अल्प निर्जरावाला महा वेदनावाला होता है, या अल्प वेदनावाला अल्प निर्जरावाला होता है? अहो गौतम! कितनेक जीव महा वेदनावाले व महा निर्जरावाले हैं, कितनेक महा वेदनावाले व अल्प निर्जरावाले हैं, कितनेक अल्प वेदनावाले व महा निर्जरावाले हैं, और कितनेक अल्प वेदनावाले व अल्प निर्जरावाले हैं. अहो भगवन्! यह किस तरह

म० महानिर्जरा वाले छ० छठी स० सातमीं पु० पृथ्वी में ने० नारकी म० महावेदनावाले अ०
अल्प निर्जरा वाले से० शैलेशी प० प्रतिपन्न अ० अनगार अ० अल्प वेदनावाले म०
महानिर्जरा वाले अ० अनुत्तरोपपतिक दे० देव अ० अल्प वे० वेदना वाले अ० अल्प निर्जरा वाले से०
वेसे ही थ० भगवन् म० महावेदना व० वस्त्र क० कीचड खे० खंजन अ० एरण त० तृण द० हस्त क०

गारे महात्रेयणे महानिज्ज, छट्टसत्तमासु पुढवीसु नेरड्या महात्रेयणा अप्पनिज्जरा,
सेलेसि पडिवणए अणगारे अप्पत्रेयणरे महानिज्जरे, अणुत्तरोववाइया देवा
अप्पत्रेयणा अप्पनिज्जरा ॥ सेवं भंते भंतेत्ति ॥ महात्रेयणायवत्थे, कद्धम खंजण
कएय अहिकरणी, तणहत्थयकवल्ले, करण महात्रेयणा जीवा ॥ सेवं भंते

हैं ? अहो गौतम ! प्रतिमा भंगीकार करनेवाले अनगार महा वेदनावाले व महा निर्जरावाले होते हैं,
क्योंकि बारह प्रकार की प्रतिमा भंगीकार करते अनेक प्रकार के कष्ट उपसर्ग होते हैं. २ छठी सातवी
नरक के नारकी महा वेदनावाले व अल्प निर्जरावाले हैं ३ शैलेशी प्रतिपन्न चौदहवें गुण स्थान में रहनेवाले
अनगार अल्प वेदनावाले व महा निर्जरावाले हैं और ४ सर्वार्थ सिद्ध विमान के देवता अल्प वेदना व
अल्प निर्जरावाले हैं. इस उद्देशे का सारांश. महा वेदना का अधिकार, कर्दम व खंजनवाले दो वस्त्रका
द्रष्टान, लोहार की एरण, तृण व तप्त लोहिका द्रष्टान, चार करण का अधिकार, वेदना निर्जराकी चौभंगी.

म० महानिर्जरा वाले छ० छठी स० सातमी पु० पृथ्वी में ने० नारकी म० महावेदनावाले अ०
अल्प निर्जरा वाले से० शैलेशी प० प्रतिपन्न अ० अनगार अ० अल्प वेदनावाले म०
महानिर्जरा वाले अ० अनुत्तरोपपतिक दे० देव अ० अल्प वे० वेदना वाले अ० अल्प निर्जरा वाले से०
त्रैसे ही भ० भगवत् म० महावेदना व० वस्त्र क० कीचड खं० खंजन अ० एरण त० तृण द० इस्त क०

गारे महात्रेयणे महानिज्ज, छट्सत्तमासु पुढवीसु नेरइया महात्रेयणा अप्पनिज्जरा,
सेलसि षडिवणए अणगारे अप्पवेयणरे महानिज्जरे, अणुत्तरोववाइया देवा
अप्पवेयणा अप्पनिज्जरा ॥ सेवं भंते भंतेत्ति ॥ महात्रेयणायवत्थे, कद्दम खंजण
कएय अहिकरणी, तणहत्थयकवल्ले, करण महात्रेयणा जीवा ॥ सेवं भंते

है ? अहो गौतम ! प्रतिमा अंगिकार करनेवाले अनगार महा वेदनावाले व महा निर्जरावाले होते हैं,
क्योंकि वारह प्रकार की प्रतिमा अंगिकार करते अनेक प्रकार के कष्ट उपसर्ग होते हैं. २ छठी सातवी
नरक के नारकी महा वेदनावाले व अल्प निर्जरावाले हैं ३ शैलेशी प्रतिपन्न चौदहवें गुण स्थान में रहनेवाले
अनगार अल्प वेदनावाले व महा निर्जरावाले हैं और ४ सर्वार्थ सिद्ध विमान के देवता अल्प वेदना व
अल्प निर्जरावाले हैं. इस उद्देशे का सारांश. महा वेदना का अधिकार, कर्दम व खंजनवाले दो वस्त्रका
द्रष्टांत, लोहार की एरण, तृण व तप्त लोहेका द्रष्टांत, चार करण का अधिकार, वेदना निर्जराकी चौभंगी.

* प्रकाशक-रानावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

करण से सा० साता वे० वेदना वे० वेदते हैं ॥ ६ ॥ जी० जीव किं० क्या म० महावेदना वाले म०
महानिर्जरा वाले म० महावेदना वाले अ० अल्प निर्जरा वाले अ० अल्प वेदना वाले म० महानिर्जरा
वाले अ० अल्प वेदना वाले अ० अल्प निर्जरावाले गो० गौतम अ० कितनेक जी० जीव म० महावेदनावाले
म० महानिर्जरा वाले के० कैसे प० प्रतिमा प० प्रतिपन्न (सहित) अ० अनगर म० महावेदनावाले

सव्वे सुभासुभेणं वेमायाए, ॥ देवा सुभेणं सायवेयणं वेदंति, ॥ ६ ॥ जीवाणं भंते

किं महात्रेयणा महानिज्जरा, महात्रेयणा अप्पनिज्जरा, अप्पत्रेयणा महानिज्जरा, अ-
अप्पत्रेयणा अप्पनिज्जरा? गोयमा! अत्थेगइया जीवा महात्रेयणा महानिज्जरा, अत्थेगइया
जीवा महात्रेयणा अप्पनिज्जरा, अत्थेगइया जीवा अप्पत्रेयणा महानिज्जरा, अत्थेगइया
जीवा अप्पत्रेयणा अप्पनिज्जरा ॥ से केणट्ठुणं? गोयमा! पडिमापडवण्णए अण-

सुभं वेदते हैं ॥ ६ ॥ अहो भगवन्! क्या जो जीव महा वेदनावाला होता है वह महा निर्जरावाला
होना है, महा वेदनावाला अल्प निर्जरावाला होता है, अल्प निर्जरावाला महा वेदनावाला होता है, या
अल्प वेदनावाला अल्प निर्जरावाला होता है? अहो गौतम! कितनेक जीव महा वेदनावाले व महा
निर्जरावाले हैं, कितनेक महा वेदनावाले व अल्प निर्जरावाले हैं, कितनेक अल्प वेदनावाले व महा
निर्जरावाले हैं, और कितनेक अल्प वेदनावाले व अल्प निर्जरावाले हैं. अहो भगवन्! यह किस तरह

जोहे क० ग्वीन्या क० करण म० महावेदना जी० जीव छ० छट्टा स० शतकका प० प्रथम उ० उद्देशा ॥६॥१॥
 रा० राजगृह न० नगर जा० यावत् ए० ऐसा व० बोले आ० आहार उ० उद्देशा जो० प० पन्नवणा
 प्रे म० सव नि० निरक्षेप ने० जानना. छ० छट्टा स० शतक का वि० दूसरा उ० उद्देशा स० समाप्ता ॥६॥२॥

भंतेति ॥ छट्टु सयस्स पढमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ६ ॥ १ ॥ X
 रायगिहं णगरं जाव एवं वयासी-आहारुद्देशो जो पणवणाए सव्वो निरवसेसो
 नेपव्वो ॥ सेवं भंते भंतेति ॥ छट्टुसयस्स विद्दओ उद्देशो सम्मत्तो ॥ ६ ॥ २ ॥

अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य हैं. यह छटा शतक का पहिला उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ ६ ॥ १ ॥
 यथम उद्देशो में वेदना का अधिकार कहा. वह वेदना आहारवन्त जीव को होती है इसलिये आगे
 आहार का अधिकार कहते हैं. राजगृही नगरी में गुण शील नामक उद्यान में श्रमण भगवन्त महावीर
 स्त्री को भगवान् गौतम स्वामी वेदना नयस्कार कर पूछने लगे कि अहो भगवन् ! नरक के जीवोंको
 क्या मन्ति, अचित्त, या मीश्र का आहार है ? अहो गौतम ! नरक के जीवों सचित्त अचित्त का
 आहार करते हैं परंतु मीश्र का आहार नहीं करते हैं. इत्यादि आहार संबंधी सत्र वर्णन पन्नवणा सूत्र जैसे
 जानना. अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य हैं. यह छटा शतक का दूसरा उद्देशा संपूर्ण हुवा ॥६॥२॥

वाले को तं० वैसे ही से० अथ के० कैसे गो० गौतम ज० जैसे व० वस्त्र अ० नहीं भोगवा हुवा धो० धोया हुवा त० तंतुमें रहा हुवा आ० अनुक्रम से प० भोगमते हुने स० चारों तरफ से पो० पुद्गल व० धंधाते हैं स० चारों तरफ से पो० पुद्गल चि० चयहोते हैं उ० उपचय होते हैं जा० यावत् प० परिणमते हैं ते० इसलिये ॥ १ ॥ से० अथ भं० भगवन् अ० अल्प आश्रय वाले को अ० अल्प कर्म वाले को

दुःखत्ताए नो सुहत्ताए, भुजो भुजो परिणमंति ? हंता गोयमा ! महाकम्मस्स तंचव
सेकेणट्टेणं ? गोयमा ! से जहा नामए वत्थस्स अहतस्सवा, धोयस्सवा, तंतुगय-
स्सवा आणुपुव्वीए परिभुंजमाणस्स सब्बओ पोगगला बड्झंति, सब्बओ पोगगला
चिज्जंति, जाव परिणमंति सेतेणट्टेणं ॥ १ ॥ सेणूणं भंते ! अप्पासवस्स अप्प-
कम्मस्स, अप्पकिरियस्स, अप्पवेयणस्स, सब्बओ पोगगला भिज्जंति, सब्बओ पोगगला

जैसे उपयोग में नहीं लाया हुवा, धोया हुवा अथवा तुरीविमादिक (साल) से मात्र निकाला हुवा ऐसा वस्त्र को भोगते हुवे उस में मलिन पुद्गलों का बंध, चय, व उपचय होता है और वह वस्त्र भी खराब वर्णपने यावत् वारंवार परिणमता है वैसे ही महाकर्म, महाआश्रयवाले को संचित किये हुवे पुद्गलों दुष्ट वर्णपने यावत् वारंवार परिणमते हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! अल्प कर्मवाले, अल्प आश्रयवाले, अल्प क्रियावाले व-अल्प वेदनावाले पुरुष को सब दिशि के पुद्गलों क्या भेदाते हैं. छेदाते हैं. विभ्यंस होते हैं,

* प्रकाशक-रामावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

बदना वाले म० सब से पो० पुद्गल व० बंधते हैं म० सब पो० पुद्गल त्रि० चयहोते हैं उ० उपचय होवे हैं स० सदा स० निरंतर त० उस का आ० आत्मा दु० दुष्टल्पने दु० दुष्ट वर्णने दु० दुष्ट गंध पने दु० दुष्ट रसपने दु० दुष्ट स्पर्श पने अ० अनिष्ट अ० अकांत अ० अप्रिय, अ० अशुभ अ० अमनोद्भ भ० अमणाम अ० नहीं इच्छने योग्यपने अ० नहीं चितवने योग्य अ० जघन्यपने नो० नहीं उ० मुख्यपने दु० दुःखपने नो० नहीं सु० सुखपने मु० वारंवार प० परिणमते हैं हं० हां गो० गौतम म० महाकर्म सन्वओ पोगला उवचिजंति, सयासमियं पोगला बड्झंति, सयासमियं पोगला चिजंति, सयासमियं पोगला उवचिजंति; सयासगियं च णं तस्स आया डुरुवत्ताए, दुवणत्ताए, दुगंधत्ताए दुरसत्ताए, दुफासत्ताए, अणिट्टत्ताए, अकंत-अप्पिय-असुभ अमणुण-अमणामत्ताए-अणिच्छियत्ताए, अब्भिञ्जियत्ताए, अहत्ताए, नोउट्टत्ताए; भयरा नीव के सब प्रदेश आश्रित पुद्गलों का क्या बंध, चय, व उपचय होता है? अथवा सदैव निरन्तर उन पुद्गलों का बंध, चय व उपचय होता है? और जिन को कर्म का बंध, चय व उपचय होता है उन का आत्मा [वाद्यात्मा] क्या दुष्ट वर्ण, गंध, रस, व स्पर्शपने, अनिष्ट, अकांत, अप्रिय, अमनोद्भ व अमनापने, अथवा नहीं इच्छने योग्य, नहीं चितवने योग्यपने, जघन्यपने, मुख्यपने, व दुःखपने, वारंवार परिणमना है? हां गौतम! सब वैसे ही होता है. अहो भगवन्! यह किस तरह? अहो गौतम!

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जी सहायजी ज्वालामुखी प्रसादजी *

अ० अल्पा क्रिया वाले को अ० अल्प वेदना वाले को स० सब से पौ० पुद्गल भि० भेदाते हैं छि०
 छेदाते हैं वि० विनाश पाते हैं प० वारंवार विनाश पाते हैं स० सदैव त० उस का आ० आत्मा सु०
 रूपपने प० प्रशस्त ने० जानना जा० यावत् सु० सुखपने सु० वारंवार प० परिणमते है हं० हां० गो०
 गौतम जा० यावत् प० परिणमते है के० कैते गो० गौतम व० वस्त्र ज० मेला पं० कीचड वाला, म०
 कठिन मेलवाला र० रजयुक्त आ० अनुक्रमसे प० पराक्रम करते सु० शुद्ध पा० पानीसे घो० घोंते स० सब पौ० पुद्गल
 छिजांति, सबओ पौगला विद्धंसंति संबवओ पौगला परिविद्धंसंति, सयासमियं पौगला
 भिजांति, छिजांति, विद्धंसंति, परिविद्धंसंति, सयासमियंचणं तस्स आयारूवत्ताए पसत्थं नेयव्वं
 जाव सुहंत्ताए, नो दुक्खत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ? हंता गोयमा! जात्र परिणमइ। से
 केणट्टेणं? गोयमा! से जंहा नामए वत्थस्स जल्लियस्सवा, पंकियस्सवा, मइलियस्सवा, रति-
 त्तिपस्सवा आणुपुर्व्वाए परिकंमिजमाणस्स सुद्धेणं वारिणा धोव्वमाणस्स सबवओ पौगला
 या पारिविच्चंसं होते हैं? अथवा मदैव निरंतर पुद्गल भेदाते हैं यावत् विशेष नष्ट होते हैं उस का
 भ्रात्मा अच्छे रूप, वर्ण, गंध, रस व स्पर्शपने यावत् सुखपने वारंवार क्या परिणमता है? हां० गौतम!
 ऐसा होता है. अहो भगवन्! यह कितन तरह? अहो गौतम! जैसे मैल, कीचड व रज से भरा हुवा
 पत्थ को शुद्ध पानी से धोने से पत्थ मरुन पुद्गलों नष्ट हो जाते हैं वैसे ही अल्प कर्म, आश्रय,

जा० यावत् वे० वैमानिक ॥ ३ ॥ व० वस्त्र के० भं० भगवन् पो० पुद्गलोपचय में किं० क्या सा० आदि
 स० सान्त सा० सादि अ० अनंत अ० अनादि स० सांत अ० अनादि अ० अनंत ज० जैसे भं०
 एवं जस्स जोप्पओगो जाव वेमाणियाणं ॥ ३ ॥ वत्थस्सणं भंते ! पोगगलोवचए
 किं सादीए सपज्जवसिए, सादीए अपज्जवसिए, अणादीए, सपज्जवसिए, अणादीए
 अपज्जवसिए ? गोयमा ! वत्थस्सणं पोगगलोवचए सादीए सपज्जवसिए, नोसादिए
 अपज्जवसिए, नो अणादीए सपज्जवसिए नोअणादीए अपज्जवसिए ॥ जहाणं भंते !
 वत्थस्स पोगगलोवचए सादीए सपज्जवसिए, नोसादीए अपज्जवसिए णो अणादीए
 सपज्जवसिए नोअणादीए अपज्जवसिए, तहाणं जीवाणं कम्मविचए पुच्छा, गोयमा !

जो प्रयोग होवे वैसा वैमानिक तक जानना ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! वस्त्र का पुद्गलोपचय क्या आदि अंत-
 वाला है, आदि अंत रहित है, अनादि मान्त है व अनादि अनंत है ? अहो भगवन् ! वस्त्र के पुद्गलों
 का उपचय आदि सान्त है. इस में शेष तीन भाग नहीं भिल सकते हैं. अहो भगवन् ! जैसे वस्त्र
 का पुद्गलोपचय सादि सान्त, परंतु सादि अनंत, अनादि सान्त व अनादि अनंत नहीं है वैसे ही क्या
 कर्म का उपचय सादि सान्त यावत् अनादि अनंत है ? अहो गौतम ! कितनेक जीवों का कर्मोपचय
 सादिसान्त है, कितनेक को अनादि सांत है और कितनेक को अनादि अनंत है परंतु सादि अनंत नहीं

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

जी० जीवों को. ति० तीन प० प्रयोग प० प्रयोग से जी० जीव क० कर्मोपचय प० प्रयोग से नो० नहीं
 शी० स्वभाव मे ए० ऐसे स० सब प० पंचेन्द्रिय को ति० तीन प० प्रयोग भा० कहा पु० पृथ्वीकाय
 ए० एक प० प्रयोग से ए० ऐसे जा० जावत् व० वनस्पति का० काया वि० विकलेन्द्रिय दु० दो प्रकार
 के प० प्रयोग प० कहे व० वचन प्रयोग का० काय प्रयोग ए० ऐसे ज० जिन को जो० जो प० प्रयोग
 गेणं जीवाणं कम्मोवचये पयोगसा नो वीससा, एवंसव्वेसिं पंचिदियाणं तिविहे पयोगे
 भाणियत्त्वे, ॥ पुढविकाइयाणं एग विहपओगेणं, एवं जाव वणस्सइ काइया, ॥
 त्रिगल्लिदियाणं - दुविहे पओगे पणत्ते तंजहा-वइप्पयोगेय, कायप्पओगेय, इच्चेतंणं
 दुविहेणं पयोगेणं कम्मोवचये पयोगसा नोवीससा से एणं अट्टेणं जाव नो वीससा ॥
 नहीं होता है परंतु प्रयोग से होता है. अहो भगवन् ! किस प्रकार जीवों को प्रयाग से कर्म पुद्गलों का
 उपचय होता है ? अहो गौतम ! जीवों को तीन प्रकार का प्रयोग कहा. १. मन प्रयोग, २. वचन प्रयोग
 व ३. काय प्रयोग. इन तीन प्रयोग से जीव कर्मों का उपचय करते हैं परंतु स्वभाव से नहीं
 करते हैं. ऐसे ही सब पंचेन्द्रिय का जोना. पृथ्वीकायिकादिक पांच स्थावर को मात्र एक काय प्रयोग
 है और विकलेन्द्रिय को काया व वचन ऐसे दो प्रयोग हैं. इसलिये पांच स्थावर एक काया का प्रयोग
 से व विकलेन्द्रिय काया व वचन ऐसे दोनों के प्रयोग से कर्म का उपचय करते हैं, इस तरह जिन को

अप्रमत्त संयति त० तहां जे० जो अ० अप्रमत्त संयति ते० वे णो० नहीं आ० आत्मारंभी णो० नहीं प० परारंभी जा० यावत् अ० अनारंभी त० तहां जे० जो प० प्रमत्त संयति ते० वे सु० शुभयोग प० आश्रित णो० नहीं आ० आत्मारंभी जा० यावत् अ० अनारंभी अ० अशुभयोग प० आश्रित आ० आत्मारंभी जा० यावत् णो० नहीं अ० अनारंभी तं० तहां जे० जो० अ० असंयति ते० वे अ० अविरति

आयारंभा जाव अणारंभा ॥ तत्थणं जे ते संसार समावणगा, तेदुविहा प०, तं० संजयाय, असंजयाय । तत्थणं जे ते संजया, ते दुविहा प०, तं० पमत्त संजयाय, अपमत्त संजयाय । तत्थणं जे ते अपमत्त संजया तेणं णो आयारंभा, णो परारंभा जाव अणारंभा । तत्थणं जे ते पमत्त संजया ते सुहंजेणं पडुच्च णो आयारंभा,

गतिरूप संसार में अनंत वक्त परिश्रमण करके समस्त कर्म क्षयरूप स्थानक सो मोक्ष को प्राप्त हुवे उन को सिद्ध कहते हैं। वे सिद्ध आत्मारंभी, परारंभी व उभयारंभी नहीं हैं। परंतु अनारंभी हैं। और जो संसार समावन्न जीव हैं वे दो प्रकार के कहे हैं संयति सो चारित्र सहित व असंयति सो चारित्र रहित। उस में संयति के दो भेद ? प्रमत्त संयति २ अप्रमत्त संयति। जो सप्तम गुणस्थान वर्ती अप्रमत्त संयति हैं वे आत्मारंभी, परारंभी व उभयारंभी नहीं हैं परंतु अनारंभी हैं। और जो छठे गुणस्थान वर्ती प्रमत्त संयति हैं वे शुभ योग आश्रित आत्मारंभी, परारंभी, व उभयारंभी नहीं हैं परंतु अनारंभी हैं,

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

भावं नू व० वस्त्र का पो० पुद्गलौपचय सा० सादि स० सान्त त० तैसे नी० जीवों को क० कर्मोपचय
में पु० पृच्छा गो० गौतम अ० कितनेक जी० जीवों को क० कर्मोपचय सा० सादी स० सान्त अ०
कितनेक अ० अनादि स० सान्त अ० कितनेक अ० अनादि अ० अंत नो० नहीं सा० सादि अ०
अंत के० कैसे गो० गौतम इ० ईर्यापथिक वं० वंध के० क० कर्मोपचय सा० सादि स० सान्त भ०
भवसिद्धिक क० कर्मोपचय अ० अनादि स० सान्त अ० अत्रसिद्धिये का क० कर्मोपचय अ० अनादि

अथेगइयाणं जीवाणं कम्मोवचए, सादीए सपज्जवसिए, अथेगइए अणादीए सपज्जवसिए

अथेगइए अणादीए अपज्जवसिए, नेचवणं जीवाणं कम्मोवचए सादीए अपज्जवसिए

से केणट्टेणं ? गोयमा ! इरियावहियाबंधस्स कम्मोवचए सादीए सपज्जवसिए,

भवसिद्धियस्स कम्मोवचए अणादीए सपज्जवसिए, अभवासिद्धियस्स कम्मोवचए

हे. अहो भगवन् ! यह किस तरह है ? अहो गौतम ! ईर्यापथिक वंध का कर्मोपचय सादिप्रान्त है.
क्योंकि उपशान्त व क्षीण मोहनीय गुणस्थानवर्ती जीव ऐसा कर्मबंध करते हैं कि जो पहिले समय में
राधने हैं, दूसरे समय में वेदते हैं और तीसरे समय में निर्जस्ते हैं. भवसिद्धिक जीवों को अनादिसान्त
है क्योंकि उन के कर्मों की आदि नहीं है परंतु वे कर्मों का क्षय/करके मोक्ष में जावेंगे इसलिये सान्त है
अभवसिद्धिको कर्मोपचय अनादि, अंत है. क्योंकि उन को कर्मों की आदि नहीं होती है वैसे ही वे

अ० अनंत ते० इसलिये ॥ ४ ॥ व० वस्त्र भं० भगवन् किं० क्या सा० सादि स० सांत च० चार भांगे गो० गौतम व० वस्त्र सा० सादि स० सांत अ० शेष ती० तीन का प० प्रतिपद्य ज० जैसे भं० भगवन् सा० सादि स० सांत त० तैसे जी० जीव किं० क्या सा० सादि स० सांत च० चार भांगे गो० गौतम व० वस्त्र सा० सादि स० सांत च० चारों भा० कहना के० कैसे गो० गौतम ने० पृच्छा गो० गौतम सा० सादि सा० सांत च० चारों भा० कहना के० कैसे गो० गौतम ने० अणादीए अपज्जवसिए से तेणट्टुणं ॥ ४ ॥ वत्थेणं भंते ! किं सादीए सपज्जवसिए

चउभंगो ? गोयमा ! वत्थे सादीए सपज्जवसिए अवसेसा तिण्णिवि पडिसेहेयव्वा जहाणं भंते ! वत्थे सादीए सपज्जवसिए नो सादीए अपज्जवसिए, नो अणादीए सपज्जवसिए, णो अणादीए अपज्जवसिए ॥ तहा जीवा किं सादीया सपज्जवसिया चउभंगो,

मोक्ष नहीं प्राप्त कर सकते हैं इसलिये ऐसा कहागया है ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! क्या वस्त्र सादिसान्त, सादि अनंत, अनादिसान्त व अनादि अनंत है ? अहो गौतम ! वस्त्र में सादिसान्त भांगा मिलता है. शेष तीन भांगे नहीं मिलते हैं. अहो भगवन् ! जैसे वस्त्र सादिसान्त है वैसे ही जीव क्या सादिसान्त, सादि अनंत, अनादिसान्त, व अनादि अनंत है ? अहो गौतम ! जीव में चारों भांगे पाते हैं. अहो भगवन् ! यह किस तरह ! अहो गौतम ! नरक, तिर्यच, मनुष्य व देव इन चारों गति आश्रित सादिसान्त हैं क्योंकि उक्त चारों गति में जीव उत्पन्न होते हैं तो आदि और चवते हैं तो अंत, सिद्ध-

ज्ञाना वरणीय क० कर्म की के० कितना का० काल की बंधस्थिति गो० गौतम ज० जघन्य अ० अंतर्मुहूर्त उ० उत्कृष्ट ती० तीस सागरोपम को० कोडी ति० तीन वा० वर्ष स० सहस्र अ० अवाधा अ० अवाधा उ० कम क० कर्म स्थिति क० कर्म निषेक ए० ऐसे दं० दर्शनावरणीय वे० वेदनीय का

कइणं भंते ! कम्मपगडीओ पणत्ताओ ? गोयमा ! अट्टकम्मपगडीओ पणत्ताओ तंजहा णाणावरणिजं, दरिसणावरणिजं, जात्र अंतरायं ॥ नाणावरणिजस्सणं भंते ! कम्मस्स केवइयं कालं बंधट्टिइ पणत्ता ? गोयमा ! जहणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसं तीसं सागरोवम कोडाकोडीओ, तिणियवाससहस्साइ अवाहा, अवाहूणिया, कम्मट्टिइ कम्मनिसओ ॥ एवं दरिसणावरणिजंपि ॥ वेयणिजं जहणं दो समया उ-

७ गोत्र व ८ अंतराय ऐसे आठ कर्मप्रकृतियों कही हैं. अहो भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म की कितने काल की बंधस्थिति कही है ? अहो गौतम ! ज्ञानावरणीय की जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीस क्रोडा- क्रोड सागरोपम की स्थिति व तीन हजार वर्ष का अवाधा काल कहा है, इस अवाधा काल से कर्म स्थिति व कर्म निषेक कम होता है. ऐसे ही दर्शनावरणीय कर्म का जानना. वेदनीय की स्थिति जघन्य अंतर्मुहूर्त

१. कर्म बंध हुए पीछे उदय में आये उस के बीच का अंतर को अवाधा काल कहते हैं. २. उदय आये पीछे समय २ में हीन रस होवे.

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादनी *

क० कर्म प्रकृतिर्षी ॥ ७ ॥ ना० ज्ञानावरणीय कि० क्या सं० संयति वं० बांधता है अ० असंयति वं० बांधता है ए० ऐसे सं० संयतासंयति वं० बांधता है नो० नहीं संयती नो० नहीं असंयती नो० नहीं संयता संयती वं० बांधता है ए० ऐसे आ० आयुष्य वंजित सं० सात आ० आयुष्य हे० नीचे के ति० नो० वंधइ, एवं तिनिवि भाणियन्वा ॥ नो० इत्थी नो० पुरिसो नो० नपुंसओ न वंधइ ॥ ७ ॥ पाणावरणिज णं भंते ! कम्मं किं संजए वंधइ, असंजए वंधइ, एवं संजयासंजए वंधइ, नो० संजए नो० असंजए नो० संजयासंजए वंधइ ? गोथमा ! संजए सियबंधइ सियनोबंधइ, असंजए वंधइ, संजयासंजएवि वंधइ नो० संजए नो० असंजए नो० संजयासंजए न वंधइ । एवं आउगवजाओ सत्तवि, आउगे हे गुगस्थानवाले अवेदी ज्ञानावरणीय का बंध नहीं करते हैं, ऐसे आयुष्य कर्म छोडकर शेष सब कर्मों का अवेदी मवेदी आश्री जानना. आयुष्य कर्म का बंध तीनों वेदवाले क्वचित् करते हैं व क्वचित् नहीं करते हैं. अवेदी आयुष्य का बंध नहीं करते हैं ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म का बंध क्या संयति करते हैं, असंयति करते हैं, संयतासंयति करते हैं, व नो० संयति नो० असंयति नो० संयतासंयति (सिद्ध) करते हैं ? अहो गौतम ! संयति ज्ञानावरणीय कर्म का बंध क्वचित् करते हैं व क्वचित् नहीं करते हैं. असंयति व संयतासंयति ज्ञानावरणीय का बंध निश्चयही करते हैं.

अ० अवाधा अ० अवाधा से उ० कम क० कर्म स्थिति क० कर्म निषेक अ० अंतराय का ज० जैसे ना० ज्ञानावरणीय ॥ ६ ॥ ना० ज्ञानावरणीय भं० भगवन् क० कर्म किं० क्या इ० स्त्री वं० बांधती है पु० पुरुष वं० बांधता है न० नपुंसक वं० बांधता है नो० नहीं स्त्री नो० नहीं पुरुष नो० नहीं नपुंसक वं० बांधता है नो० गौतम इ० स्त्री भी वं० बांधती है पु० पुरुष भी वं० बांधता है, न० नपुंसक भी वं० बांधता है नो० नहीं स्त्री नो० नहीं पुरुष नो० नहीं नपुंसक वं० बांधता है ए० ऐ० आ० आयुष्य व० छोड़कर स० सात राइयं जहा नाणावरणिजं ॥ ६ ॥ नाणावरणिजं णं भंते ! कम्मं किं इत्थी बंधइ, पुरिसो बंधइ, नपुंसओ बंधइ, नो इत्थी नो पुरिसो नो नपुंसओ बंधइ ? गोयमा ! इत्थीवि बंधइ, पुरिसोवि बंधइ, नपुंसओवि बंधइ, नो इत्थी नो पुरिसो नो नपुंसओ सिय बंधइ सिय नो बंधइ ॥ एवं आउगवजाओ सत्तकम्मपगडीओ ॥ आउगं भंते ! कम्मं किं इत्थी बंधइ, पुरिसो बंधइ, पुच्छा ? गोयमा ! इत्थी सिय बंधइ, सिय उत्तुष्ट तीस क्रोडाक्रोड सागरोपम की. अवाधा काल तीन. हजार वर्ष का ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म क्या स्त्री बांधती है, पुरुष बांधता है, नपुंसक बांधता है या इन तीनों वेद रहित अवेदी बांधता है ? अहो गौतम ! ज्ञानावरणीय कर्म का बंध स्त्री पुरुष व नपुंसक तीनों ही करते हैं. नएने दसव गुणस्थान में रहेनेवालें अवेदी ज्ञानावरणीय का बंध करते हैं अग्यारहवे, बारहवे तेरहवे व चौदहवे

शब्दार्थ

(संज्ञा) (संज्ञा)

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादनी *

क० कर्म प्रकृतियों ॥ ७ ॥ ना० ज्ञानावरणीय किं० क्या सं० संयति बं० बांधता है अ० असंयति बं० बांधता है ए० ऐसे सं० संयतासंयति बं० बांधता है नो० नहीं संयती नो० नहीं असंयती नो० नहीं संयता संयती बं० बांधता है ए० ऐसे आ० आयुष्य वजित स० सात आ० आयुष्य हे० नीचे के ति० नो० बांधइ, एवं तिन्निवि भाणियन्वा ॥ नो० इत्थी नो० पुरिसो नो० नपुंसओ न बांधइ ॥ ७ ॥ णाणावरणिज्ज णं भंते ! कम्मं किं संजए बांधइ, असंजए बांधइ, एवं संजयासंजए बांधइ, नो० संजए नो० असंजए नो० संजयासंजए बांधइ ? गोयमा ! संजए सियबांधइ सियनोबांधइ, असंजए बांधइ, संजयासंजएवि बांधइ नो० संजए नो० असंजए नो० संजयासंजए न बांधइ । एवं आउगवजाओ सत्तवि, आउगो हे गुगस्थानवाले अवेदी ज्ञानावरणीय का बांध नहीं करते हैं, ऐसे आयुष्य कर्म छोडकर शेष सब कर्मों का अवेदी मचेदी आश्री जानना, आयुष्य कर्म का बांध तीनों वेदवाले क्वचित् करते हैं व क्वचित् नहीं करते हैं, अवेदी आयुष्य का बांध नहीं करते हैं ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म का बांध क्या संयति करते हैं, असंयति करते हैं, संयतासंयति करते हैं, व नो० संयति नो० असंयति नो० संयतासंयति (तिद्ध) करते हैं ? अहो गौतम ! संयति ज्ञानावरणीय कर्म का बांध क्वचित् करते हैं व क्वचित् नहीं करते हैं, असंयति व संयतासंयति ज्ञानावरणीय का बांध निश्चयही करते हैं.

तीन भ० भजता उ० उपर का न० नहीं वं० वांथता है ॥ ८ ॥ ना० ज्ञानावरणीय कि० क्या स० सम्यग् दृष्टि वं० वांथता है मि० मिथ्यादृष्टि वं० वांथता है स० सम्यग्मिथ्या दृष्टि वं० वांथता है

टिड्ड्या तिणि भयणाए उवरिहो न चंधइ ॥ ८ ॥ नाणावरणिजं भंते ! कम्मं किं सम्मादिट्ठी बंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ ? गोयमा ! सम्मादिट्ठी सियबंधइ सिय नोबंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ । एवं आउगज्जा ओ सत्तवि, आउएहोट्टिह्हा दो भयणाए सम्मामिच्छदिट्ठी नबंधइ ॥ ९ ॥ नाणावरणं

परंतु सिद्ध नहीं करते हैं. ऐसे ही आयुष्य छोड़कर शेष सात कर्मों का जानना. संयति, असंयति व संयतासंयति आयुष्य का बंध क्वचित् करते हैं व क्वचित् नहीं करते हैं. सिद्ध आयुष्य कर्म का बंध नहीं करते हैं ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! क्या समदृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म वांथते हैं, मिथ्यादृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म वांथते हैं ? अहो गौतम ! समदृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म वांथते हैं, या सममिथ्यादृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म वांथते हैं ? अहो गौतम ! समदृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म वांथते हैं व क्वचित् नहीं वांथते हैं. मिथ्यादृष्टि व सममिथ्यादृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म वांथते हैं. ऐसे ही आयुष्य छोड़कर शेष सात का जानना. समदृष्टि व मिथ्यादृष्टि आयुष्य कर्म क्वचित् वांथते हैं व क्वचित् नहीं वांथते हैं. सममिथ्यादृष्टि आयुष्य कर्म नहीं वांथते हैं ॥ ९ ॥ ज्ञाना-

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(सिद्धि)

तीन भ० भजना उ० उपर का न० नींठा वं० बांधता है ॥ ८ ॥ ना० ज्ञानावरणीय कि० क्या सम्पग् दृष्टि वं० बांधता है मि० मिथ्यादृष्टि वं० बांधता है स० सम्पग्मिथ्या दृष्टि वं० बांधता है

दुिछा तिणि भयणाए उवरिहो न बंधइ ॥ ८ ॥ नाणावरणिजं भंते ! कम्मं किं सम्मादिट्ठी बंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ ? गोयमा ! सम्मादिट्ठी सियबंधइ सिय नोबंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ । एवं आउगवजा ओ सत्तवि, आउएहोदुिछा दो भयणाए सम्मामिच्छदिट्ठी नबंधइ ॥ ९ ॥ नाणावरणं

परंतु सिद्ध नहीं करते हैं। ऐसे ही आयुष्य छोड़कर शेष सात कर्मों का जानना। संयति, असंयति व संयतासंयति आयुष्य का बंध क्वचित् करते हैं व क्वचित् नहीं करते हैं। सिद्ध आयुष्य कर्म का बंध नहीं करते हैं ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! क्या समदृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं ? अहो गौतम ! समदृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं, या सममिथ्यादृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं ? अहो गौतम ! समदृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं व क्वचित् नहीं बांधते हैं। मिथ्यादृष्टि व सममिथ्यादृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं। ऐसे ही आयुष्य छोड़कर शेष सात का जानना। समदृष्टि व मिथ्यादृष्टि आयुष्य कर्म क्वचित् बांधते हैं व क्वचित् नहीं बांधते हैं। सममिथ्यादृष्टि आयुष्य कर्म नहीं बांधते हैं ॥ ९ ॥ ज्ञाना-

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी बालाप्रसादजी *

क० कर्म प्रकृतियों ॥ ७ ॥ ना० ज्ञानावरणीय किं० क्या सं० संयति वं० बांधता है अ० असंयति वं० बांधता है ए० ऐसे सं० संयतासंयति वं० बांधता है नो० नहीं संयती नो० नहीं असंयती नो० नहीं संयता संयती वं० बांधता है ए० ऐसे आ० आयुष्य वंजित सं० सात आ० आयुष्य हे० नीचे के ति० नो० बांधइ, एवं तिन्निवि भाणियन्वा ॥ नो इत्थी नो पुरिसो नो नपुंसओ न बांधइ ॥ ७ ॥ णाणावरणिज्ज णं भंते ! कम्मं किं संजए बांधइ, असंजए बांधइ, एवं संजयासंजए बांधइ, नो संजए नो असंजए नो संजयासंजए बांधइ ? गोयमा ! संजए सियबांधइ सियनोबांधइ, असंजए बांधइ, संजयासंजएवि बांधइ नो संजए नो असंजए नो संजयासंजए न बांधइ । एवं आउगवज्जाओ सच्चि, आउगे हे गुणस्थानवाले अवेदी ज्ञानावरणीय का बांध नहीं करते हैं, ऐसे आयुष्य कर्म छोड़कर शेष सब कर्मों का अवेदी मवेदी आश्री जानना. आयुष्य कर्म का बांध तीनों वेदवाले क्वचित् करते हैं व क्वचित् नहीं करते हैं. अवेदी आयुष्य का बांध नहीं करते हैं ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म का बांध यथा संयति करते हैं, असंयति करते हैं, संयतासंयति करते हैं, व नो संयति नो असंयति नो संयतासंयति (सिद्ध) करते हैं ? अहो गौतम ! संयति ज्ञानावरणीय कर्म का बांध क्वचित् करते हैं व क्वचित् नहीं करते हैं. असंयति व संयतासंयति ज्ञानावरणीय का बांध निश्चयही करते हैं.

शब्दार्थ

सूत्र

वार्थ

तीन भ० भजना उ० उपर का न० नहीं वं० बांधता है ॥ ८ ॥ ना० ज्ञानावरणीय किं० क्या सम्पन्न दृष्टि वं० बांधता है मि० मिथ्यादृष्टि वं० बांधता है स० सम्पन्नमिथ्या दृष्टि वं० बांधता है

दृष्टि तिण्णि भयणाए उवरिहो न बंधइ ॥ ८ ॥ नाणावरणिज्जं भंते ! कम्मं किं सम्मादिट्ठी बंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ ? गोयमा ! सम्मादिट्ठी सिथंबंधइ सिय नोबंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ । एवं आउगवज्जा ओ सत्तवि, आउएहोदुह्छा दो भयणाए सम्मामिच्छदिट्ठी नबंधइ ॥ ९ ॥ नाणावरणं

परंतु सिद्ध नहीं करते हैं. ऐसे ही आयुष्य छोड़कर शेष सात कर्मों का जानना. संयति, असंयति व संयतासंयति आयुष्य का बंधन क्वचित् करते हैं व क्वचित् नहीं करते हैं. सिद्ध आयुष्य कर्म का बंधन नहीं करते हैं ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! क्या समदृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं, मिथ्यादृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं, या सममिथ्यादृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं ? अहो गौतम ! समदृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म कश्चित् बांधते हैं व क्वचित् नहीं बांधते हैं. मिथ्यादृष्टि व सममिथ्यादृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं. ऐसे ही आयुष्य छोड़कर शेष सात का जानना. समदृष्टि व मिथ्यादृष्टि आयुष्य कर्म क्वचित् बांधते हैं व क्वचित् नहीं बांधते हैं. सममिथ्यादृष्टि आयुष्य कर्म नहीं बांधते हैं ॥ ९ ॥ ज्ञाना-

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

॥ ९ ॥ ना० ज्ञानावरणीय कि० क्या स० संज्ञी अ० असंज्ञी नो० नहीं संज्ञी नो० नहीं असंज्ञी वं० बांधता है
 ॥ १० ॥ ना० ज्ञानावरणीय कि० क्या प्र० भवसिद्धिक अ० अभवसिद्धिक नो० नहीं भवसिद्धिक नो०
 किं सन्नी बंधइ असन्नी बंधइ नो० सन्नी नो० असन्नी बंधइ ? गोयमा ! सन्नी सिय बंधइ
 सिय नबंधइ, असन्नी बंधइ, नो सन्नी नो असन्नी न बंधइ एवं वेयणिजाउगवजाओ
 छकम्मपगडीओ । वेयणिजं हेड्डिछा दो बंधइ, उवरिछा भयणाए ॥ आउगं हेड्डिछा
 दोभयणाए उवरिछो न बंधइ ॥ १० ॥ नाणावरणिजं कम्मं किं भवसिद्धिए वधइ
 अभवसिद्धिए, नो भवसिद्धिए नो अभवसिद्धिए बंधइ ? गोयमा ! भवसिद्धिए भय-
 वरणीय कर्म क्या संज्ञी बांधते हैं, असंज्ञी बांधते हैं या नोसंज्ञी नोअसंज्ञी बांधते हैं ? अहो गौतम !
 मंज्ञी ज्ञानावरणीय कर्म क्वचित् बांधते हैं व क्वचित् नहीं बांधते हैं, असंज्ञी बांधते हैं, परंतु नो संज्ञी नो
 असंज्ञी नहीं बांधते हैं एसे ही वेदनीय व आयुष्य कर्म छोडकर शेष सब कर्मों का जानना. वेदनीय कर्म
 मंज्ञी असंज्ञी बांधते हैं परंतु नो संज्ञी नोअसंज्ञी क्वचित् बांधते हैं व क्वचित् नहीं बांधते हैं. आयुष्य कर्म
 संज्ञी अमंज्ञी क्वचित् बांधते हैं व क्वचित् नहीं बांधते हैं परंतु नो संज्ञी नो असंज्ञी आयुष्य कर्म नहीं बांधते
 हैं ॥ १० ॥ अहो भगवन् ! क्या भवसिद्धिक ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं, अभवसिद्धिक बांधते हैं, या
 नो भवसिद्धिक नो अभवसिद्धिक बांधते हैं ? अहो गौतम ! भवसिद्धिये ज्ञानावरणीय कर्म क्वचित्

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

नहीं अभवसिद्धिक ॥ १.१ ॥ ना० ज्ञानावरणीय किं० क्या च० चक्षुदर्शनीय अ० अचक्षुदर्शनीय आ० अवधिदर्शनीय के० केवलदर्शनीय ॥ १.२ ॥ ना० ज्ञानावरणीय किं० क्या प० पर्याप्त अ० अपर्याप्त ना० नाए अमत्रासिद्धिए बंधइ नो भवसिद्धिए नो अभवसिद्धिए न बंधइ एवं आउगवजा सत्तवि, आउगं हेट्टिछादो भयणाए, उवरिल्लो न बंधइ ॥ १ ॥ नाणावरणं किं चक्खुदंसणी बंधइ अचक्खुदंसणी बंधइ ओहिदंसणी बंधइ केवलदंसणी बंधइ ? गोयमा ! हेट्टिछा तिण्णि भयणाए उवरिल्ले ण बंधइ ॥ एवं वेयणिज्जवजाओ सत्तवि, वेयणिज्जं हेट्टिछा तिण्णि बंधइ वांधते हैं, और क्वचित् नहीं भी वांधते हैं अभवसिद्धिये ज्ञानावरणीय कर्म वांधते हैं नो भवसिद्धिये नो अभवसिद्धिये ज्ञानावरणीय कर्म नहीं वांधते हैं. ऐसे ही आयुष्य छोडकर शेष सब कर्मों का जानना आयुष्य कर्म भवसिद्धिक व अभवसिद्धिक क्वचित् वांधते हैं व क्वचित् नहीं वांधते हैं, परंतु नो भवसिद्धिक नो अभवसिद्धिक आयुष्य कर्म नहीं वांधते हैं ॥ १.१ ॥ अहो भगवन् ! क्या ज्ञानावरणीय कर्म चक्षु दर्शनी, अचक्षु दर्शनी, अवधि दर्शनी, या केवल दर्शनी वांधते हैं ? अहो गौतम ! चक्षु, अचक्षु व अवधिदर्शनी में भजना. और केवल ज्ञानी नहीं वांधते हैं ऐसे ही वेदनीय कर्म छोडकर सातों कर्मों का जानना. वेदनीय कर्म चक्षु, अचक्षु व अवधि दर्शनी वांधते हैं परंतु केवल दर्शनी नहीं वांधते हैं ॥ १.२ ॥ अहो भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म क्या पर्याप्त ना० अपर्याप्त वांधते हैं.

* मकाशक-राजाबहादुर लाला मुखर्देव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

नहीं पर्याप्त नो० नहीं अपर्याप्त ॥१३॥ ना० ज्ञानावरणीय कि० क्या भा० भापक अ० अभापक गो० गौतम दो०
केवलदंसणी भयणाए ॥ १२ ॥ नाणावरणिजं कम्मं किं पज्जत्तओ बंधइ अपज्जत्तंओ बंधइ नो
पज्जत्तओ नो अपज्जत्तओ बंधइ ? गोय ना ! पज्जत्तए भयणाए, अपज्जत्तए बंधइ, नो पज्जत्तए
नो अपज्जत्तए नबंधइ ॥ एवं आउगवजाओ, आउगं हेट्टिजा दो भयणाए, उत्ररिल्ले ण बंधइ
॥ १३ ॥ नाणावरणं किं भासए बंधइ अभासए ? गोयमा ! दोवि भयणाए ॥
एवं वंयणिज्जवजाओ सत्त, वंयणिजं भासए बंधइ, अभासए भयणाए ॥ १४ ॥
नाणावरणं किं परित्ते बंधइ, अपरित्ते नो परित्ते नो अपरित्ते बंधइ ? गोयमा !
या नां पयास नो अपर्याप्त बांधते हैं ? अहो गौतम ! ज्ञानावरणीय कर्म पर्याप्त जीव क्वचित् बांधते हैं
व क्वचित् नहीं बांधते, अपर्याप्त बांधते हैं, नो पर्याप्त नो अपर्याप्त नहीं बांधते हैं. ऐसे ही आयुष्य
कर्म छोडकर शेष स ० कर्मों का जानना. आयुष्य कर्म पर्याप्त अपर्याप्त बांधते भी हैं और नहीं भी बांधते
हैं. नो पर्याप्त नो अपर्याप्त जीव आयुष्य कर्म नहीं बांधते हैं ॥१३॥ अहो भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म क्या
भा. परु बांधते हैं व अभापक बांधते हैं ? अहो गौतम ! ज्ञानावरणीय कर्म भापक व अभापक दोनों
क्वचित् बांधते हैं व क्वचित् नहीं बांधते हैं ऐसे ही वेदनीय कर्म छोडकर शेष सब कर्मों का जान-
ना. वेदनीय कर्म भापक बांधते हैं परंतु अभापक क्वचित् बांधते हैं व क्वचित् नहीं बांधते हैं ॥ १४ ॥

दोनोंमें भ० भजना ॥१४॥ ना० ज्ञानावरणीय किं० क्या प० परित अ० अपरित वं० बांधता हैं ॥ १५ ॥
 ना० ज्ञानावरणीय किं० क्या आ० मन्त्रिज्ञानी दु० श्रुतज्ञानी ओ० अवधिज्ञानी म० मनःपर्यव ज्ञानी के०
 परित्ते भयणाए, अपरित्ते बंधइ, नो परित्ते नो अपरित्ते न बंधइ एवं आउगव-
 जाआ सत्तकम्मपगडीओ आउए परित्तोवि अपरित्तोवि भयणाए, नो परित्तो नो
 अपरित्तो नंबवइ ॥ १५ ॥ नाणावरणं किं आभाणवोहियनाणी बंधइ, सुयनाणी
 बंधइ, ओहिनाणी, मणपज्जवनाणी, केवलनाणी ? हेट्टिह्हा चत्तारि भयणाए
 केवलनाणी न बंधइ, एवं वेयणिज्जव्जाओ सत्तवि, वेयणिज्जं हेट्टिह्हा चत्तारि बंधइ
 अहो भगत् ! परित्त [अल्प संसारी] अपरित्त [अनंत संसारी] नो परित्त नो अपरित्त (सिद्ध) इन
 तीन में से कौन ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं ? अहो भगवन् ! परित्त ज्ञानावरणीय कर्म क्वचित् बांधते हैं
 व क्वचित् नहीं बांधते हैं, अपरित्त बांधते हैं, और नो परित्त नो अपरित्त नहीं बांधते हैं. ऐसे ही
 आयुष्य छोडकर सात कर्म प्रकृतियों का जानना. आयुष्य कर्म की परित्त व अपरित्त में भजना है. नो-
 परित्त नो अपरित्त आयुष्य कर्म नहा बांधते हैं ॥ १५ ॥ अहो भगवन् ! क्या मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अनधि-
 ज्ञानी, मनःपर्यवज्ञानी व केवलज्ञानी ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं ? अहो गौतम ! चार ज्ञान वाले
 क्वचित् बांधते हैं व क्वचित् नहीं बांधते हैं. केवल ज्ञानी नहीं बांधते हैं. ऐसे वेदनीय छोडकर सातों

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

केवल ज्ञानी हे० नीचे के च० चार में म० भजना के० केवली न० नहीं वं० बांधते हैं ॥ १६ ॥ म० मति अज्ञानी सु० श्रुत अज्ञानी वि० विभंगज्ञानी ॥ १७ ॥ म० मन योगी व० वचन योगी का० काय केवलनाणी भयणाए ॥ १६ ॥ नाणावरणं किं मति अण्णाणी बंधइ सुयअण्णाणी विभंगनाणी ? गोयमा ! आउगवजाओ सत्तवि बंधइ, आउगं भयणाए ॥ १७ ॥ णाणावरणं किं मणजोगी बंधइ, वंइजोगी बंधइ, कायजोगी, अजोगी बंधइ ? गोयमा ! हेट्टिह्य तिण्णिभयणाए, अजोगी नबंधइ । एवं वेयणिज्जवजाओ वेयणिजं हेट्टिह्वा बंधति, अजोगी नबंधइ ॥ १८ ॥ नाणावरणं किं सागारोवउत्ते बंधइ अना कर्मा का ज्ञानना. चारों ज्ञान वाले वेदनीय कर्म बांधते हैं परंतु केवलज्ञानवाले वेदनीय कर्म क्वचित् बांधते हैं व क्वचित् नहीं बांधते हैं ॥ १६ ॥ अहो भगवन् ! क्या मति अज्ञानी श्रुत अज्ञानी व विभंग ज्ञानी ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं ? अहो गौतम ! आयुष्य कर्म छोडकर सातों कर्म तीनों अज्ञान वाले बांधते हैं आयुष्य कर्म की उनमें भजना रहती है ॥ १७ ॥ अहो भगवन् ! क्या मनयोगी, वचन योगी, काया योगी व अयोगी ज्ञानावरणीय कर्म बांधते हैं ? अहो गौतम!! तीन योग वालों में भजना है और अयोगी नहीं बांधते हैं. ऐसे ही वेदनीय छोडकर सव का जानना. तीन योग वाले वेदनीय बांधते हैं और अयोगी नहीं बांधते हैं ॥ १८ ॥ अहो

शब्दार्थ

सूत्र

भाषार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

॥ २० ॥ सु० सूक्ष्म वा० वादर नो० नहीं सूक्ष्म नो० नहीं वादर ॥ २१ ॥ च० चरिम अ० अचरिम
॥ २२ ॥ ए० इन भं० भगवन् जी० जीवों में इ० स्त्री वेदी पु० पुरुष वेदी न० नपुंसकवेदी अ०

आउए सुहुमे वादरे भयणाए, नो सुहुमे नो वादरे नबंधइ ॥ २१ ॥ नाणावरणं
किं चरिमे बंधइ, अचरिमे बंधइ, ? गोयमा ! अट्टुवि भयणाए ॥ २२ ॥ एएसिणं
भंते ! जीवाणं-इत्थिवेयगणं, पुरिसवेयगणं, नपुंसगवेयगणं, अत्रेयगणय कयरे कयरे

कर्मों का जानना. आयुष्य की दो में भजना और नो सूक्ष्म नो वादर नहीं बांधते हैं ॥ २१ ॥ अहो
भगवन् ! ज्ञानावरणीय क्या चरिम बांधते हैं या अचरिम बांधते हैं ? अहो गौतम ! आठों कर्मों की
भजना है ॥ २२ ॥ अहो भगवन् ! स्त्री वेदी, पुरुषवेदी, नपुंसकवेदी व अत्रेदी में कौन किस से
यावत् विशेषाधिक है ! अहो गौतम ! सब से थोड़े पुरुष वेदी, इस से स्त्री वेदी संख्यात गुने उस से
अत्रेदी अनंत गुने उस में नपुंसक वेदी अनंत गुने (२) सब से थोड़े संयति. संयतासंयति संख्यातगुने
नो भंयति नो असंयति नो संयतासंयति अनंत गुने व असंयति अनंतगुने (३) सब से थोड़े समदृष्टि
मिश्र दृष्टि अनंत गुने व मिथ्या दृष्टि अनंत गुने (४) सब से थोड़े संज्ञी, नो संज्ञी नो असंज्ञी अनंत
गुने, असंज्ञी अनंत गुने (५) सब से थोड़े अभवि, नो भवि नो अभवि अनंत गुने, भवी अनंत गुने (६)

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

अप्रमत्त संयति त० तहां जे० जो अ० अप्रमत्त संयति ते० वे णो० नहीं आ० आत्मारंभी णो० नहीं प० परारंभी जा० यावत् अ० अनारंभी त० तहां जे० जो प० प्रमत्त संयति ते० वे सु० शुभयोग प० आ० अश्रित णो० नहीं आ० आत्मारंभी जा० यावत् अ० अनारंभी अ० अशुभयोग प० आश्रित आ० आत्मारंभी जा० यावत् णो० नहीं अ० अनारंभी त० तहां जे० जो अ० असंयति ते० वे अ० अविरति

आयारंभा जाव अणारंभा ॥ तत्थणं जे ते संसार समावणणागा, तेदुविहा प०, तं० संजयाय, असंजयाय । तत्थणं जे ते संजया, ते दुविहा प०, तं० प्रमत्त संजयाय, अप्रमत्त संजयाय । तत्थणं जे ते अप्रमत्त संजया तेणं णो आयारंभा, णो परारंभा जाव अणारंभा । तत्थणं जे ते प्रमत्त संजया ते सुहंजेगं पडुच्च णो आयारंभा,

गतिरूप संसार में अनंत वक्त परिश्रमण करके समस्त कर्म क्षयरूप स्थानक सो मोक्ष को प्राप्त हुवे उन को सिद्ध कहते हैं। वे सिद्ध आत्मारंभी, परारंभी व उभयारंभी नहीं हैं। परंतु अनारंभी हैं। और जो संसार समावन्न जीव हैं वे दो प्रकार के कहे हैं संयति सो चारित्र सहित व असंयति सो चारित्र रहित। उस में संयति के दो भेद १ प्रमत्त संयति २ अप्रमत्त संयति। जो सप्तम गुणस्थान वर्ती अप्रमत्त संयति हैं वे आत्मारंभी, परारंभी व उभयारंभी नहीं हैं परंतु अनारंभी हैं। और जो छठे गुणस्थान वर्ती प्रमत्त संयति हैं वे शुभ योग आश्रित आत्मारंभी, परारंभी, व उभयारंभी नहीं हैं परंतु अनारंभी हैं,

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

अनंत गुने से० वैसे ही भं० भगवन् छ० छठा स० शतक का त० तीसरा उ० उद्देशा ॥ ६ ॥ ३ ॥

सेत्रं भंते भंतेति ॥ छट्टु सयस्स तइओ उद्देशो सम्मत्तो ॥ ६ ॥ ३ ॥ * * *

जीविणं भंते ! कालादेसेणं किं सपएसे अपएसे ? गोथमा ! नियंमा संपएसे ॥ १ ॥

नेरइएणं भंते ? कालादेसेणं किं सपएसे अपएसे ? गोथमा ! सिय सपएसे सिय अ-

पएसे, एवं जाव सिद्धे ॥ २ ॥ जीवाणं भंते कालादेसेणं सपएसा अपएसा ? गोथमा !

(१.६) सब से थोड़े अचरम, चरम जीव अनंत गुने. अहो भगवन् आप के वचन सत्य हैं यह छठा शतक कर्त्तवीसरा उद्देशा पूर्ण हुआ. ॥ ६ ॥ ३ ॥ * * *

तीमरे उद्देश में जीव का अधिकार कहा आगे भी इन का ही विशेष अधिकार करते हैं. अहो भगवन् ! एक जीव काल आश्री सपदेशी है या अपदेशी है ? अहो गौतम ! एक जीव काल आश्री सपदेशी है, परंतु अपदेशी नहीं है क्यों की जीव की स्थिति अनादि अनंत है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! नरक का जीव काल आश्री सपदेशी है या अपदेशी है ? अहो गौतम ! नरक का जीव कालादेश से स्वचित् सपदेशी व अपदेशी है. क्योंकि जिस को उत्पन्न हुए एक समय हुआ है वह अपदेशी है और विशेष समय हुआ है वह सपदेशी है ऐसे ही सिद्ध तक सब जीव का जानना. ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! बहुत जीव क्या काला देशसे सपदेशी हैं. या अपदेशी हैं. ? अहो गौतम ! जीव कालादेशसे

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ श्रीमद्भागवतसूक्तम् ॥ १०. ॥ १८० ॥

अवेदी क० कौन जा० यावत् वि० विशेषाधिक गो० गौतम स० सव से थोड़े पु० पुरुषवेदी इ० खिवेदी
सं० संख्यात गुने अ० अवेदी अ० अनंत गुने न० नपुंसक वेदी अ० अनंत गुने ए० इन स० सव प०
पदकी अ० अल्यावहुत्त्र उ० कहना जा० यावत् स० सव से० थोड़े अ० अंचरिम च० चरिम अ०

जाव विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सवत्वथोवा पुरिस वेयगा, इत्थीवेयगा संखेज्जगु-
णा, अवेयगा अणंतगुणा, नपुंसग वेयगा अणंतगुणा ॥ एएसिं सव्वेसिं पयाणं
अप्पबहुगाइं उच्चारियव्वाइं जाव सवत्वथोवा जीवा अचरिमाः चरिमा अणंतगुणा ॥

सव से थोड़े अवाधि दर्शनी, चक्षुदर्शनी असंख्यात गुने, केवल दर्शनी! अनंत गुने, अचक्षु दर्शनी अनंत गुने
(७) सव से थोड़े पर्याप्त, नो पर्याप्त नो अपर्याप्त अनंत गुने अपर्याप्त अनंत गुने (८) सव से थोड़े
भापक, अभापक अनंत गुने (९) सव से थोड़े परित, नो परित नो अपरित अनंत गुने, अपरित अनंत गुने
(१०) सव से थोड़े मनःपर्यव ज्ञानी, अवाधि ज्ञानी असंख्यात गुने, मति श्रुति परस्पर तुल्य व विशेषाधिक
केवल ज्ञानी अनंत गुने (११) सव से थोड़े विभंग ज्ञानी, मति श्रुत अज्ञानी परस्पर तुल्य अनंत गुने
(१२) सव से थोड़े मन योगी, वचन योगी असंख्यात गुने, अयोगी अनंत गुने, काया योगी अनंत गुने
(१३) सव से थोड़े साकारोपयुक्त, अनाकारोपयुक्त विशेषाधिक (१४) सव से थोड़े आहारक अ-
नाहारक असंख्यात गुने [१५] सव से थोड़े नो सूक्ष्म नो वादर, वादर अनंत गुने, सूक्ष्म असंख्यात गुने

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामुखी *

॥५॥ आहारगणं जीवेगिदियवजो तिय भंगो, अणाहारगणं जीवेगिदियवजा छब्भंगा

एवं भाणियच्चा, सपएसावा, अपएसावा अहवा सपएसेय अपएसेय, अहवा सपएसेय

आहारक जीव समदेशी है या अपदेशी है ? अहो गौतम ! आहारक जीव क्वचित् समदेशी है व क्वचित् अपदेशी है. क्योंकि विग्रहगति या केवली समुद्धान में जीव अनाहारक बनकर जब आहारक होता है तब पहिले समय में अपदेशी होता है और दूसरे समय से समदेशी होता है. यह एकवचन सब सादृ भाव में कहना. अनादि भाव में नियमा समदेशी रहते हैं. अहो भगवन् ! बहुत आहारक जीव यथा समदेशी हैं या अपदेशी हैं ? अहो गौतम ! बहुत आहारक जीव समदेशी भी हैं और अपदेशी भी हैं क्योंकि बहुत जीव आहारकपन बहुत काल से रहे हुवे हैं इसलिये समदेशी और विग्रह गति अनंतर बहुत जीवों का आहारक बनने में एक समय हुआ है इसलिये अपदेशी जानना. जीवपद व एकेन्द्रिय पद छोडकर आहारक जीवों में तीन भांगे पाते हैं. सिद्ध अनाहारक होने से नहीं ग्रहण किये हैं. विग्रहगति प्रतिपन्न व केवली समुद्धातवाले को दो भांगे पाते हैं समदेशी भी होवे और अपदेशी भी होवे. अनाहारक जीवपद व एकेन्द्रियपद में समदेशी अपदेशी का एक ही भांगा पाता है इसलिये इसे छोडकर शेष सब अनाहारक में छ भांगे पाते हैं. इस में दो भांगे बहुवचन आश्रित व चार भांगे एक वचन व बहुवचन के संयोग से होते हैं. १. बहुत समदेशी २. बहुत अपदेशी ३. एक समदेशी एक अपदेशी ४

* मकाशक-राजाबहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

एहि छव्भंगो, नोसन्नि नोअसन्निजीवे मणुयसिद्धेहिं तियमंगो ॥ सलेसे जहा ओहिया,
कण्हलेस्सा नीललेस्सा, काउलेस्सा जहा आहारओ णवरं जस्स अत्थियाओ ।

नंतर एक की उत्पत्ति का समय और पहिले के उत्पन्न हुए सो २ बहुत सप्तदेशी बहुत अम-
देशी. ऐसे ही एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय व सिद्ध छोडकर सब पद में कहना, क्योंकि उक्त तीनों पद
वाले संज्ञी नहीं हैं. असंज्ञी का बहुत जीव आश्रित पृथिव्यादि में बहुत सप्तदेशी बहुत अमदेशी एक
ही भागा पाता है. और इस सिवा अन्य सब में तीन भांगे पाते हैं. नरक, भूवनपति व वाणव्यंतर में
असंज्ञी के संज्ञी होते हैं, इसलिये भूतकाल की अपेक्षा में संज्ञी को भी असंज्ञी कहे हुवे है. नरकादिकमें
असंज्ञीपना क्वचित् होता है इस अपेक्षा पूर्वोक्त छ भांगे पाते हैं. ज्योतिषी, वैमानिक व सिद्ध असंज्ञी नहीं
होने में ग्रहण नहीं किये गये हैं. नो संज्ञी नो असंज्ञी जीव के दोनों दंडक में जीव, मनुष्य व सिद्ध ऐसे
तीन पद होते हैं. इन तीन पद में बहुत जीव आश्री तीन २ भांगे पाते हैं. सलेशी के एक जीव व बहुत
जीव ऐसे दो दंडक जानना. दोनों में जीव तथा नरकादिक का अधिक दंडक जैसे जानना. क्योंकि
सलेशीपना में जीवपने की अनादि है. सिद्ध अलेशी होने से नहीं ग्रहण किये हैं.
कृष्ण, नील व कापोत लेख्यावाले के दोनों दंडक आहारक जैसे कहना. नरकी में जिस
लेख्या का मश्र होते उसी लेख्या करना. ज्योतिषी वैमानिक में कृष्णादि लेख्या नहीं होती है. तेजो लेख्या

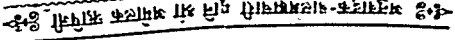
तेउलेस्साए जीवादियओ तियभंगो णवरं पुढविकाइएसु आउवणंफईसु छब्भंगो,

के दूसरे दंडक में जीवादि पद में तीन भागे पाते हैं. पृथ्वी, अप्, व वनस्पति में पूर्वोक्त छ भांगे कहना नरक, तेउ, वायु, विकलेन्द्रिय व सिद्ध में तेजोलेश्या नहीं होती है इसलिये उन को यहां ग्रहण करना नहीं. पद्म व शुक्र लेश्या में जीव, तिर्यचपंचेन्द्रिय, मनुष्य व वैमानिक यह चार पद ही पाते हैं इन में पूर्वोक्त तीन भांगे होते हैं. खलेशी के दोनों दंडक में जीव, मनुष्य व सिद्ध ये तीन ही पद पाते हैं. जीव व सिद्ध पद में तीन भांगे व मनुष्य पद में छ भांगे पाते हैं. समष्टी के एक जीव बहुत जीव ऐसे दो दंडक. इस के दूसरे दंडक जीवादि में तीन भांगे. विकलेन्द्रिय में छ भांगे क्यों कि विकलेन्द्रिय में साधदान सम्यग् दृष्टिवाले कोई पहिले उत्पन्न होते हैं इसलिये समदेश, अपदेशपने एकत्व बहुत का संभव होता है. एकेन्द्रिय में समष्टी नहीं होने से नहीं लिये गये हैं. मिथ्यादृष्टि के दूसरे दंडक के जीव पद में तीन भांगे एकेन्द्रिय में एक भांगा. मिश्रष्टी में सब दंडक में छ भांगे. इस में एकेन्द्रिय व सिद्ध नहीं हैं. संयति के दूसरे दंडक में जीवादि पद में तीन भांगे. इस में जीव व मनुष्य ऐसे दो ही पद ग्रहण करना. असंयति के दूसरे दंडक में जीवादि पद में तीन भांगे हैं, एकेन्द्रिय में एक भांगा. संयतासंयति के दूसरे दंडक में जीवादि में तीन भांगे, इस में जीव, तिर्यच पंचेन्द्रिय व मनुष्य यह तीन पद कहना. नोसंयति, नोअसंयति नोसंयतासंयति में दूसरे दंडक में जीव व सिद्ध ऐसे दो पद होते हैं. उन में तीन भांगे पाते हैं. सकपायी

* प्रकाशक-राजावशदुर लाला मुखर्देवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अजोगी जहा अलेस्सा॥सागरोवउत्तेहि जीवंगिदियवज्जो तियभंगो
 सवेयगा जहा सकसाई, इत्थीवेयग पुरिसवेयग नपुंसगेवेयगसु जीवादिओ तियभंगो
 पत्रं नपुंसगेवेदं एगिदिएसु अभंगंयं, अवेयगा जहा अकसाई ससररीरी जहा ओहि-

पृथिव्यादि पद में एक ही भांगा कहा. यह एक उपयोगसे दुसरे उपयोग में जाना इस आश्री लीया गया है.
 गिद्ध को सदाही उपयोग रहा हुआ है तथापि साकार अनाकार उपयोग की वारंवार प्राप्ति होने से
 समदेशीपना व एकवार प्राप्ति होनेसे अप्रदेशी पना जानना. ऐसे बहुत जीव वारंवार साकारोपयोग को प्राप्त
 हुये सो समदेशी एक भांगा, एक ही वक्त साकारोपयोग को प्राप्त हुए सो अप्रदेशी दूसरा भांगा, और
 वही साकारोपयोग एक बार व अनेक बार प्राप्त किया सो तीसरा भांगा, ऐसे ही अनाकारोपयोग का
 जानना. सवेदी जीव सकषायी जैसे कहना. स्त्री, वेदी पुरुषवेदी व नपुंसक वेदी में जीवादि पद में तीन
 भांगे, मात्र नपुंसक वेद में एकेन्द्रिय में एक भांगा पावे, पुरुष वेदी व स्त्री वेदी मात्र देव, मनुष्य व तिर्यच
 पंचन्द्रिय में कहना. नपुंसक वेद में दो दंडक वर्जकर कहना. अवेदी अकषायी जैसे कहना. इस में जीव
 मनुष्य व सिद्ध ऐसे तीन पद कहना. सशरीरी के दोनों दंडक में जीव समदेशी कहना क्यों की जीवों
 को शरीर अनादि हैं. नरकादिक में तीन भांगे, एकेन्द्रिय में समदेशी अप्रदेशी ऐसा एक भांगा; उदारिक
 शरीरी के जीव पद व एकेन्द्रिय पद में तीसरा भांगा और शेष में तीन भांगे होवे. उदारिक शरीर नरक व



जीवादिओ तियभंगो, एगिंदिएसु अंभंगकं, कोहकसाईहिं जीवेगिंदियवज्जो तिय-
 भंगो, देवेहिं छब्भंगो, माणकसाई माइकसाई जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो, नेरइय
 देवेहिं छब्भंगा, लोभकसाईहिं जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो, नेरइएसु छब्भंगा अकसाई
 जीवमणएहिं सिद्धेहिं तियभंगो ओहियणणे आभिणिवोहियणणे सुयणणे
 जीवादिओ तियभंगो, विगलिंदिएहिं छब्भंगा, ओहियणणे मणपज्जवणणे केवलणणे
 जीवादियओ तियभंगो ओहिए अणणणे मतिअणणणे सुयअणणणे एगिंदियवज्जो
 तियभंगो, विभंगणणे जीवादिओ तियभंगो ॥ सजोई जहा ओहिओ मणजोगि
 वइजोगि, कायजोगि, जीवादिओ तियभंगो, णवरं कायजोगी एगिंदिया तेसु अंभंगकं,

इस में विकलेन्द्रिय नहीं कहना. मनःपर्यन्त ज्ञान के दूसरे दंडक में जीव व मनुष्य में तीन भांगे केवलज्ञान में
 जीव, मनुष्य व सिद्ध पदमें तीन भांगे जानना. समुच्चय अज्ञान, मति अज्ञान व श्रुत अज्ञानमें जीवादि पदमें तीन
 भांगे, पृथिव्यादिक में एक भांगा विभंगज्ञान को अवाधि ज्ञान जैसे कहना. सजोगीमें औधिक जीवादिक
 का कहा जैसे जानना. मनयोगी संज्ञी, वचन योगी एकेन्द्रिय वर्ज कर सब, और काययोगी में सब जीव
 इन में तीन भांगे पावे. परंतु काययोगी में दूसरे दंडक में एकेन्द्रिय को एक भांगा पावे. अयोगी अलेखी
 जैसे कहना. साकारोपयोग व अनाकारोपयोग के दूसरे दंडक में नगरादिक में तीन भांगे जीव पद में

ओ ओरालिय वेडविय सररीरणं जीवेगिदियवज्जो तियंभंगो आहारगसररीरे जीव मणु
एमु छब्भंगा, तेयग कम्मगाइं जहा ओहिया, असरीरेहिं जीव सिद्धेहिं तियंभंगो, ॥
आहार पज्जत्तीए सररीर पज्जत्तीए इंदियपज्जत्तीए आणापाण पज्जत्तीए जीवेगिदियवज्जो
तियंभंगो, भासामणपज्जत्ती जहासन्नी आहारअपज्जत्ती जहा अणाहारगा, सररीर

देवलोक में नहीं है इसलिये यह भांगा नहीं लीया गया है. वैक्रेय शरीर पृथ्वी, अप, तेज, वनस्पति व
विकलेन्द्रिय में नहीं है. वायुकाय में एक भांगा, और शेष में तीन भांगे. आहारक शरीर जीव व मनुष्य
इन दोनों पद में होवे. आहारक जीव के अल्पपना से इन में छ भांगे मीले. तेजस कार्पाण में जीवादिक
पद अधिक जैसे कहना. अर्थात् जीवपद में समदेशी और नारकादि पद में तीन भांगे जानना. एके-
न्द्रिय में एक तीसरा भांगा. अशरीरी के दूसरें दंडक में जीव व सिद्ध में तीन भांगे. आहार पर्याप्ति,
शरीर पर्याप्ति, इन्द्रिय पर्याप्ति, व श्वासोश्वास पर्याप्तिवाले जीवों के दूसरें दंडक में जीव व एकेन्द्रिय में
एक ही भांगा और शेष नरकादि में तीन भांगे. भापामन पर्याप्ति संज्ञी जैसे जानना. अर्थात् सब
पद में तीन भांगे कहना. आहार अपर्याप्तिवन्त बहुत जीव विग्रहगति संपन्न होते हैं इसलिये एक भांगा
और अन्य सब स्थान छ भांगे. शरीर अपर्याप्ति, इन्द्रिय अपर्याप्ति, श्वासोश्वास अपर्याप्तिवाले के दूसरें दंडक
में जीव व एकेन्द्रिय छोडकर शेष में तीन भांगे. जीव व एकेन्द्रिय में एक भांगा. नरक देव व

सं ()

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखंदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अपज्जत्तीए, इंदिय अपज्जत्तीए, आणापाण अपज्जत्तीए जीवे एगिंदियवज्जो तियभंगो
 नेरइयदेवमणुएहिं छब्भंगा, भासामणअपज्जत्तीए जीवादिओ तियभंगो, णेरइयदेवमणु-
 एहिं छब्भंगा । संपएसुसाहारग भविय, सणिलसादिट्टि संजयकसाए ॥ नाणे जोगु-
 वयोगे वेएयसररि पज्जत्ती॥२॥६॥ जीवाणं भंते! किं पच्चक्खाणी अपच्चक्खाणी पच्चक्खाणा
 पच्चक्खाणी ? गोयना ! जीवा पच्चक्खाणीवि, अपच्चक्खाणीवि, पच्चक्खाणा पच्चक्खा-
 णीवि सब्ब जीवाणं एवं पुच्छा ? गोयमा ! नेरइया अयच्चक्खाणी जाव चउरिंदिया
 सेसा दो पडिसेहेयव्वा पंचिंदियतिरिक्खजोणिया नो पच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणीवि,

मनुष्य में छ भंगे. भाषामन की अपर्याप्ति में जीवादि पद में तीन भंगे, नारकी, देव व मनुष्य में छ
 भंगे. सिद्ध भावन्त पर्याप्तअपर्याप्त में दोनों नहीं है. अब इनसब का संग्रह गाथा में कहते हैं. २ सम्प-
 देखी, २ आहारक, ३ भव्य ४ संज्ञी; ५ लेश्या, ६ दृष्टि, ७ संयति, ८ कषाय, ९ ज्ञान, १० योग, १२ उप-
 योग, १२ वेद, १३ शरीर, १४ पर्याप्तअपर्याप्ति ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! क्या जीव प्रत्याख्यानी
 (सर्व विरति) अप्रत्याख्यानी (अविरति) व प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी (देश विरति) हैं ? अहो गौतम !
 जीव सर्व विरति, अविरति व देश विरति हैं. अहो भगवन् ! नरकादिं चौवीस दंडक के जीव प्रत्या-
 ख्यानी, अप्रत्याख्यानी व प्रत्याख्याना प्रत्याख्यानी हैं ? अहो गौतम ! नारकी, दशभुवनपति पांच

पञ्चस्वाणापञ्चस्वाणीवि, मणयातिणिवि, सेसाजहा नेरइया ॥ ७ ॥ जीवाणं भंते ! किं पञ्चस्वाणं जाणंति, अपञ्चस्वाणं जाणंति, पञ्चस्वाणापञ्चस्वाणं जाणंति ? गोयमा ! जे पंचिदिया तेतिणिवि जाणंति अवसेसा न पञ्चस्वाणं जाणंति ॥ ८ ॥ जीवाणं भंते ! किं पञ्चस्वाणं कुव्वंति अपञ्चस्वाणं कुव्वंति पञ्चस्वाणापञ्चस्वाणं कुव्वंति ? जहा ओहिया तथा कुव्वणा ॥ ९ ॥ जीवाणं भंते ! किं पञ्चस्वाणनिवत्तियाउया, अपञ्चस्वाण निवत्तियाउया पञ्चस्वाणापञ्चस्वाण निवत्तियाउया ? गोयमा ! जीवाय वेमाणियाय पञ्चस्वाण निवत्तियाउया तिणिवि,

एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, वाणव्यंतर, ज्योतिषी व वैमानिक अपत्याख्यानी हैं. तिर्यच पंचेन्द्रिय अपत्याख्यानी व प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी हैं मनुष्य में तीनों भाँगे पाते हैं ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! क्या जीव प्रत्याख्यान, अप्रत्याख्यान, व प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यान जानते हैं ? अहो गौतम ! जो पंचेन्द्रिय है वे तीनों जानते हैं और शेष जीवों प्रत्याख्यान नहीं जानते हैं ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! क्या जीव प्रत्याख्यानादि करते हैं ? अहो गौतम ! जैसे अधिक सूत्र कहा वैसे कहना. अर्थात् पंचेन्द्रिय तिर्यच, व मनुष्य छोडकर सब अप्रत्याख्यानी हैं. मनुष्य तीनों करते हैं और तिर्यच पंचेन्द्रिय अप्रत्याख्यान व प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यान करते हैं ॥ ९ ॥ अहो भगवन् ! क्या जीव प्रत्याख्यान से, अत्याख्यान से या

* मकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

किं कया इयह भं० भगवन् त० तमस्काय प० कहती है किं कया पु० पृथ्वी त० तमस्काय आ० अप्
त० तमस्काय गो० गौतम नो० नही पु० पृथ्वी त० तमस्काय प० कहती है आ० अप् त० तमस्काय से० अथ के०

अयसेसा अपच्चख्वाणनिवत्तियाउया ॥ १० ॥ गाहा-पच्चख्वाणं जाणइ, कु-
व्वंति तेणेव आउनिव्वत्ती, ॥ सपएसुहेसंमिय, एमेए दंडगा चउरो ॥ १ ॥ सेवभंते
भंतेत्ति ॥ छट्ट सयस्स चउत्थो उहेसो सम्मत्तो ॥ ६ ॥ ४ ॥ × ×

किमियं भंते ! तमुकाएत्ति पवुच्चइ, किं पुढवी तमुकाएत्ति, पवुच्चइ, आउतमुकाएत्ति
पवुच्चइ, ? गोयमा ! नो पुढावि तमुकाएत्ति पवुच्चइ, आउतमुकाएत्ति पवुच्चइ, से

प्रत्याख्यान प्रत्याख्यान से आयुष्य का बंध करते हैं ? अहो गौतम ! जीव प्रत्याख्यानानादि तीनों प्रकार
में वैमानिक का आयुबंध करते हैं शेष अप्रत्याख्यान से आयुबंध करते हैं ॥ ८ ॥ प्रत्याख्यानी
हैं, प्रत्याख्यान जानते हैं, प्रत्याख्यान करते हैं, व प्रत्याख्यान से आयुबंध करते हैं यह चार दंडक
उक्त प्रदेशात्मक प्रदेशों में विशेष कहे हैं. यह छठा शतक का चौथा उद्देश पूर्ण हुवा ॥ ६ ॥ ४ ॥

चौथे उद्देश में जीव के समदेशपने का कथना किया. पाचवे उद्देश में तमस्काय का स्वरूप कहते हैं.
तमिस पुद्गलों की राशि से तमस्काय. अहो भगवन् ! क्या पृथ्वी को तमस्काय कहते हैं, या पानीको

शब्दार्थ

सूत्र

पार्थ

महाभारत अष्टाध्याय्ये अर्जुनसंवादे अथ तमसोऽपि ज्ञानं प्राप्नुयति ॥ १० ॥

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

असंख्यान द्वी० द्वीप समुद्र वी०व्यतिक्रान्त करते अ०अरुणवर द्वीपकी वा०बाहिर की वे०वेदिका से अ० अरुणोदय स० समुद्र को वा० वीयालीस जो० योजन सहस्र उ० अवगाहकर उ० उपर के ज० जल के अंत से ए० एक प्रदेश की से० श्रेणिति त० वहां त०तमस्काय स०उत्पन्न हुई स० सत्तरह ई०इक्कीस जो० योजन सहस्र उ० ऊर्ध्व उ० जाकर त० उस प० पीछे ति० तीर्च्छी प० विस्तृत होती हुई सो० सौर्यर्ष ई० ईशान स० सनत्कुमार म० माहेन्द्र च० चारों क० कल्प को आ० ढककर उ० ऊर्ध्व

दीवस्त वाहिरिछाओ वेइयंताओ अरुणोदयं समुद्रं वायालीस जोयण सहस्साणि उगाहिता उवरिछाओ जलंताओ एग पदेसियाए सेडीए तत्थणं तमुकाए समुट्टिए सत्तरसएक्कवसि जोयणसए उट्टुं उप्पइत्ता तओ पच्छा तिरियं पवित्थरमाणे २

अरुणवर्षद्वीप आता है, उस अरुणवर्षद्वीप की बाहिर की वेदिका से ४२ हजार योजन दूर अरुणवर समुद्र में जबि वहां पानी के उपर अंतिम विभाग की एक प्रदेश की + श्रेणी में से तमस्काय नीकली हुई है वहां से १७२१ योजन ऊंची जाकर तीर्च्छी विस्तृत होती हुई सौर्यर्ष, ईशान, सनत्कुमार च० माहेन्द्र इन

→ यहां प्रदेश शब्द से आकाश का मात्र एक प्रदेश ग्रहण करना नहीं, क्योंकि एक प्रदेश में अपूकाय नहीं ठहर सकती है. परंतु जैसे एक प्रदेश में साधु समासे अर्थात् थोड़े क्षेत्र में रहे, वैसे ही यहांपर एक प्रदेश का कथन किया है. अर्थात् थोड़ा क्षेत्र जानना.

शब्दार्थः
सूत्र

जा० यावत् वं० ब्रह्म क० देवलोक में रि० रिष्ट विमान प० प्रस्तर को सं० प्राप्त ए० यहां त० तमस्काय भं० रही हुई है ॥ २ ॥ त० तमस्काय भं० भगवन् किं० क्या सं० संस्थित अ० नीचे म० सरावले के मू० मूलेसे सं० संस्थित उ० ऊपर कु० कूर्कट का पं० पिंजरे से सं० संस्थित ॥ ३ ॥ त० तमस्काय भं० भगवन् के० कितनी वि० चौड़ाई से के० कितनी प० परिधि से प० प्ररूपी गो० गौतम दू०

सोहम्मीसाणसणकुमारमहिंदे चत्तारिन्नि कप्पे आवरेत्ताणं उट्ठं पियणं जात्र वंभ-
लोए कप्पे रिट्ठविमाणपत्थंडं संपण्णे एत्थणं तमुकाए संनिट्ठिए ॥ २ ॥ तमु-
काएणं भंते ! किं संठिए ? गोयमा ! अहेमल्लगमूलसंठिए, उप्पि कुक्कुडगंपंजरग
संठिए पणत्ते ॥ ३ ॥ तमुकाएणं भंते ! केवइयं विक्खंभेणं केवइयं पस्विक्खेवेणं
पणत्ते ? गोयमा दुविहे पणत्ते तंजहा—खंखेज्जवित्थडेय, असंखेज्जवित्थडेय । तत्थणं

चारों देवलोक को घेर कर पांचवे ब्रह्मदवलोक में रिष्ट नामक तीसरी प्रतर में उस के विमानतक गढ़ हुई है।
और वहाँ परही तमस्काय स्थिर रही हुई है ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! तमस्काय का कौनसा संस्थान है ?
अहो गौतम ! नीचे सरावले के संपुट का आकारवाली है और उपर मूर्गे के पिंजर का आकारवाली है
॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! तमस्काय चौड़ाई में कितनी है, व परिधि में कितनी है ? अहो गौतम ! तम-

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जि सहायजी ज्वालामसादजी *

दो प्रकार की प० प्रकृति तं० वह ज० यथा सं० संख्यात विस्तार वाली अ० असंख्यात विस्तार वाली त० उस में जे० जो सं० संख्यात विस्तार वाली से० वह सं० संख्यात जो० योजन सं० सहस्र वि० चौड़ाई में अ० असंख्यात जो० योजन सहस्र प० परिधि से त० उस में जे० जो अ० असंख्यात वि० विस्तार वाली अ० असंख्यात जो० योजन सं० सहस्र वि० चौड़ाई में अ० असंख्यात जो० योजन सहस्र प० परिधि में ॥ ४ ॥ त० त्मस्काय भं० भगवन् के० कितनी प० बड़ी अ० इस जं०, जम्बूद्वीप में

जे से संखेज्जाद्वैत्यडे सेणं संखेज्जाइ जोयणसहस्साइं विक्खंभेणं, असंखेज्जाइं जो-
यणसहस्साइं परिक्खेवैणं पणत्ते तत्थणं जे से असंखेज्जावित्थडे सेणं असंखे-
ज्जाइं जोयणसहस्साइं विक्खंभेणं असंखेज्जाइं जोयण सहस्साइं परिक्खेवैणं प० ॥ ४ ॥
तमुक्काणुं भंते ! केमहाल्लए पणत्ते ? गोयमा ! अयणं जंबूद्वीने दीवि सब्ब दीवि

स्काय का विस्तार दो प्रकार का है? संख्यात योजन का विस्तार व २ असंख्यात योजन का विस्तार. जहाँ संख्यात योजन का विस्तार है वहाँ उस की चौड़ाई संख्यात सहस्र योजन की है और परिधि असंख्यात सहस्र योजन की है. जहाँ असंख्यात योजन का विस्तार है वहाँ असंख्यात योजन सहस्र की चौड़ाई है और भ्रगंख्यात योजन सहस्र की परिधि है ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! तमस्काय कितनी बड़ी कही ? अहो गौतम ! सब

आ० आत्मारंभी जा० यावत् णो० नहीं अ० अनारंभी से० वह के० कीसतरह भं० भवगन् ए० ऐसा
 वुं० कहा जाता है गो० गौतम अ० अविरति प० प्रत्ययिक से० वह ते० इसलिये जा० यावत् णो० नहीं
 अ० अनारंभी ए० ऐसे जा० यावत् पं० पंचेन्द्रिय तिर्यच म० मनुष्य ज० जैसे नी० जीव ण० विशेष
 सि० सिद्ध वि० रहित भा० कहना वा० वाणव्यंतर जा० यावत् वे० वैमानिक ज० जैसे गे० नारकी ॥ ३९ ॥

रंभात्रि जात्र णो अणारंभा ॥ से केणट्टेणं भंते एवं बुच्चइ ? गोयमा ! अविरतिं पडुच्च.
 से तेणट्टेणं जात्र णो अणारंभा ॥ एवं जात्र पंचिंदिय तिरिक्ख जोणिया ॥ मणुस्सा
 जहा जीवा णवरं सिद्धविरहिता भाणेयव्वा ॥ वाणमंतरा जात्र वेमाणिया जहा नेरइया

उभयारंभी हैं परंतु अनारंभी नहीं हैं. अहो भगवन् ! वह कैसे ? नारकी आत्मारंभी हैं यावत् अनारंभी
 नहीं हैं. अहो गौतम नारकी के जीव अविरति होने से आत्मारंभी हैं यावत् अनारंभी नहीं हैं. जैसे नारकी
 का कहा जैसेही दश भुवनपति, पांच स्थावर व तीन विकलेन्द्रिय व तिर्यच पंचेन्द्रियतक जानना. और मनुष्य
 को सिद्ध भगवान् छोडकर जैसे जीवको संयति, असंयति, प्रमत्त अप्रमत्त ऐसे चार भांगे कहे जैसे ही यहां
 भांगा अनुसार आत्मारंभी परारंभी, उभयारंभी व अनारंभी के भेद जानना. और जैसे नारकी को कहा
 जैसे ही वाणव्यंतर ज्योतिषी व वैमानिक का जानना. ॥ ३९ ॥ अविरति व सलेखी की साधर्म्यतासे आगे

पद्यमत्त त्वान् पणान् (भवगन्) ए

करते हैं ना० नाग प० करते हैं गो० गौतम दे० देव करते हैं अ० असुर करते हैं ना० नाग करते हैं ॥ ७ ॥ अ० है भं० भगवन् त० तमस्काय मे वा० वादर थ० स्थानित स० शब्द वा० वादर वि० विद्युत् हं० हां अ० है ॥ ८ ॥ अ० है भं० भगवन् त० तमस्काय वा० वादर पु० पृथ्वी काय वा० वादर अ० अग्निकाय पो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ न० नहीं अ० अन्य वि० विप्रहगति ॥ ९ ॥ अ० है भं० भगवन् त० तमस्काय च० चंद्रमा सू० सूर्य ग० ग्रह ग० समुह ण० नक्षत्र ता०

नागोत्रि पकरेइ ॥ ७ ॥ अत्थिणं भंते ! तमुकाए वादरे थणियसदे वादरविज्जुयाए ?

हंता अत्थि, तं भंते ! किं देवो पकरेइ ? तिण्णित्रि पकरेइ ॥ ८ ॥ अत्थिणं भंते !

तमुकाए वादरे पुढ्ढीकाए वादरे अगणिकाए ? णोइणट्टे समट्टे ॥ णणत्थ विग्ग-

हगइसमाव्वणाएणं ॥ ९ ॥ अत्थिणं भंते ! तमुकाए चंदिम सूरिय गहगणनक्खत्त तारा

वह वर्षा देव करते हैं, असुर करते हैं व नाग करते हैं ? अहो गौतम ! देव, असुर व नाग तीनों ही वर्षा करते हैं ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! तमस्काय में क्या वादर शब्द व वादर विद्युत् होते हैं ? हां गौतम ! तमस्काय में वादर विद्युत् व वादर शब्द होते हैं, अहो भगवन् ! उसे क्या देव, असुर व नाग करते हैं ? अहो गौतम ! तीनों जाति के देवों करते हैं ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! तमस्काय में वादर पृथ्वीकाय व वादर तेजकाय क्या है ? अहो गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है, अर्थात् उस में वादर

कृष्ण व० वर्ण से प० प्रला दे० देव अ० कितनेक जे० जो त० उसको प० पहिले पः० देखकर ख०
 धुब्ध होवे अ० अथ अ० प्राप्त होवे त० उस की प० पीछे सी० शीघ्र तु० त्वरित खि० शीघ्र ही वी०
 व्यतिक्रान्त करे ॥ ११ ॥ त० तमस्काय के भं० भगवन् क० कितने ना० नामे प० कहे गो० गौतम
 ते० तेरह ना० नाम प० कहे तं० वह ज० यथा त० तम त० तमस्काय अं० अंधकार म० महांधकार लो०
 लोकांधकार लो० लोक तमित्स दे० देवांधकार दे० देवतरण वे० देवव्युह दे० देवफलिह दे०
 रिसजणजे, भीमे, उत्तासणए, परमकिण्हे वणणेणं पणत्ते । देवधिणं अत्थेगइए
 जेणं तप्पटमयाए पासित्ताणं खुब्भाएजा, अहेणं अभिसमागच्छेजा, तओ पच्छा
 सीहंर तुरियंर खिण्णमेव धीइवएजा ॥ ११ ॥ तमुकायस्सणं भंते ! कइ नामधेजा पणत्ता ?
 गोयमा ! तेरस णामधेजा पणत्ता, तंजहा तमेइवा, तमुकाएइवा, अंधकारेइवा, महं-
 धकारेइवा, लोगांधकारेइवा, लोगतमिसेइवा, देवांधकारेइवा, देवतरणे-
 करनेवाला, भयंकर, त्रास उत्पन्न करे बैसा व परम कृष्ण कहा है. कितनेक देव भी उस को पहिले
 देखकर क्षुभित होते हैं. फीर तमस्काय में प्रवेश करके शीघ्र त्वरित गति से उसे उल्लंघ्य जाते हैं
 ॥ ११ ॥ अहो भगवन् ! तमस्काय के कितने नाम कहे हैं ? अहो गौतम ! तमस्काय के तेरह नाम
 कहे हैं. १. तम २. तमस्काय ३. अंधकार ४. महा अंधकार ५. लोकांधकार ६. लोक तमित्स ६. देवांधकार

दशमं च त्रयोदशं च पञ्चमं च (प्रथमं)

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसाराजी *

देवप्रतिशोभ अ० अरुणोदय० स० समुद्र ॥ १.२ ॥ त० तमस्काय भं० भगवन् किं० क्या पु० पृथ्वीपरि-
 णाम जी० जीव परिणाम आ० अप्परिणाम पा० पुद्गल परिणाम गो० गौतम नो० नहीं पु० पृथ्वी परि-
 णाम आ० अप्परिणाम क्षी० जीव परिणाम पो० पुद्गल परिणाम ॥ १.६ ॥ त० तमस्काय भं० भगवन्
 स० सब पा० प्राण भू० भूत जी० जीव स० सत्त्व पु० पृथ्वी कायपने जा० यावत् त० त्रसकाय पने
 इवा, देवबूहेइवा, देवफालिहेइवा, देवपडिक्खेभिइवा, अरुणोदएइवा, समुद्रे ॥ १.२ ॥
 तमुकाएणं भंते ! किं पुढवि परिणामे, जीव परिणामे, आउपरिणामे पोगल परिणा-
 मे ? गोयमा ! नो पुढवि परिणामे आउपरिणामेवि, जीव परिणामेवि, पोगल परि-
 णामेवि, ॥ १.३ ॥ तमुकाएणं भंते ! सत्त्वे पाणा भूया जीवा सत्ता पुढवीकाइयत्ताए
 जात्र तसकाइयत्ताए उववणपुब्बा ? हंता गोयमा ! असइ अदुवा अणंतखुत्तो ।
 ८ देवतमित्त ९ देव अरण्य १० देव ब्यूह ११ देव फलसा १२ देव प्रतिशोभ व १३ अरुणोदय ॥ १.२ ॥
 भगो भगवन् ! तमस्काय क्या पृथ्वीपरिणामवाली, पानी परिणामवाली, जीव परिणामवाली व पुद्गल
 परिणामवाली है ? अहो गौतम ! तमस्काय पृथ्वी परिणामवाली नहीं है अपितु पानी, जीव व पुद्गल
 परिणामवाली है ॥ १.३ ॥ अहो भगवन् ! तमस्काय में पृथ्वीकाय यावत् त्रसकायपने सब प्राण भूत
 जीव व सत्त्व पहिले क्या उत्पन्न हुए ! हां गौतम ! सब प्राण, भूत, जीव व सत्त्व अनेक बार अथवा

कृष्ण व० वर्ण से प० प्रत्या दे० देव अ० कितनेक जे० जो त० उसको प० पहिले पा० देखकर खु०
 खुब्य होवे अ० अथ अ० प्राप्त होवे त० उस की प० पीछे सी० शीघ्र तु० त्वरित खि० शीघ्र ही वी०
 व्यतिक्रान्त करे ॥ ११ ॥ त० तमस्काय के भं० भगवन् क० कितने ना० नामे प० कहे गो० गौतम
 ते० तेरह ना० नाम प० कहे तं० वह ज० यथा त० तम त० तमस्काय अं० अंधकार म० महांधकार लो०
 लोकांधकार लो० लोक तमिस्र दे० देवांधकार दे० देवतमिस्र दे० देवअरण्य वे० देवव्युह दे० देवफलिह दे०
 रिसजणणे, भीमे, उत्तासणए, परमकिण्हे वणणेणं पणत्ते । देवेधिणं अत्थेगइए
 जेणं तप्पढमयाए पासित्ताणं खुब्भाएजा, अहेणं अभिसमागच्छेजा, तओ पच्छा
 सीहंर तुरियंर खिप्पामेव धीईवएजा ॥ ११ ॥ तमुकायस्सणं भंते ! कइ नामधेजा पणत्ता?
 गोयमा ! तेरस णामधेजा पणत्ता, तंजहा तमेइवा, तमुकाएइवा, अंधकारेइवा, महं-
 धकारेइवा, लोकांधकारेइवा, लोगतमिसेइवा, देवंधकारेइवा, देवतमिसेइवा, देवरणे-
 करेनेवाला, भयंकर, त्रास उत्पन्न करे वैया व परम कृष्ण कहा है. कितनेक देव भी उस को पहिले
 देखकर क्षुभित होते हैं. फीर तमस्काय में प्रवेश करके शीघ्र त्वरित गति से उसे उलंघ्य जाते हैं
 ॥ ११ ॥ अहो भगवन् ! तमस्काय के कितने नाम कहे हैं ? अहो गौतम ! तमस्काय के तेरह नाम
 कहे हैं. १ तम २ तमस्काय ३ अंधकार ४ महा अंधकार ५ लोकांधकार ६ लोक तमिस्र ७ देवांधकार

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसाली *

देवप्रतिशोभ अ० अरुणोदय स० समुद्र ॥ १२ ॥ त० तमस्काय भं० भगवन् किं० क्या पु० पृथ्वीपरि-
णाम जी० जीव परिणाम आ० अप्परिणाम पो० पुद्गल परिणाम गो० गौतम नो० नहीं पु० पृथ्वी परि-
णाम आ० अप्परिणाम जी० जीव परिणाम पो० पुद्गल परिणाम ॥ १६ ॥ त० तमस्काय भं० भगवन्
स० सब पा० प्राण भू० भूत जी० जोत्र स० सत्त्व पु० पृथ्वी कायपने जा० यावत् त० त्रसकाय पने
इया, देववृहेइवा, देवफालिहेइवा, देवपडिक्खेभिइवा, अरुणोदएइवा, समुद्रे ॥ १२ ॥
तमुकाएणं भंते ! किं पुढवि परिणामे, जीव परिणामे, आउपरिणामे पोगल परिणा-
मे ? गोयमा ! नो पुढवि परिणामे आउपरिणामेवि, जीव परिणामेवि, पोगल परि-
णामेवि, ॥ १३ ॥ तमुकाएणं भंते ! सन्वे पाणा भूया जीवा सत्ता पुढवीकाइयत्ताए
जाव तसकाइयत्ताए उवत्तणपुब्बा ? हंता गोयमा ! असइ अदुवा अणंतखुत्तो !

८ देवतमिस्स ९ देव अरण्य १० देव व्युह ११ देव फलसा १२ देव प्रतिशोभ व १३ अरुणोदय ॥ १२ ॥
अहो भगवन् ! तमस्काय क्या पृथ्वीपरिणामवाली, पानी परिणामवाली, जीव परिणामवाली व पुद्गल
परिणामवाली है ? अहो गौतम ! तमस्काय पृथ्वी परिणामवाली नहीं है अपितु पानी, जीव व पुद्गल
परिणामवाली है ॥ १३ ॥ अहो भगवन् ! तमस्काय में पृथ्वीकाय यावत् त्रसकायपने सब प्राण भूत
जीव व सत्त्व पडिक्खे, क्या उत्पन्न हुए ! हां गौतम ! सब प्राण, भूत, जीव व सत्त्व अनेक बार अथवा

उ० उत्पन्न पूर्व हं० हां गो० गौतम अ० अनेक वार अ० अथवा अ० अनंतवार णो० नहीं वा० बादर
 पु० पृथ्वी कायपने वा० बादर अग्निकायपने ॥ १४ ॥ क० कितनी भं० भगवन् क० कृष्णराजियो प०
 प्ररूपी गो० गौतम अ० आठ क० कृष्णराजियो प० प्ररूपी क० कहां भं० भगवन् ए० यह अ० आठ
 क० कृष्णराजियो प० प्ररूपी गो० गौतम उ० ऊपर स० सनत्कुमार मा० माहेन्द्र क० देवलोक में हि०
 नीचे वं० ब्रह्मलोक क० देवलोक में रि० रिष्ट वि० विमान प० प्रस्तर ए० यहां अ० अखाडा के सं०

णो चेषणं बादर पुढविकाइयत्ताए, बादर अगणिकाइयत्ताए ॥ १४ ॥ कइणं

भंते ! कणहराईओ पणत्ताओ ? गोयमा ! अट्ट कणहराईओ पणत्ताओ

कहिणं भंते ! एया अट्ट कणहराईओ पणत्ताओ ? गोयमा ! उट्ठि सणकुमारमा-

हिंषणं कप्पाणं हिट्ठि बंभलोए कप्पे रिट्ठे विमाणे पत्थडे एत्थणं अक्खाडग समचउ-

रंस संठाण संठियाओ अट्टाराईओ पणत्ताओ, तंजहा पुरच्छिमेणं दो,

पच्चत्थिमेणं दो, दाहिणेणं दो, उत्तरेणं दो, पुरच्छिमब्भंतरा कणहराई दाहिणं वांहरं

अनंत वार उत्पन्न हुए, परंतु बादर पृथ्वीकाय व बादर अग्निकायपने नहीं उत्पन्न हुए, क्योंकि उन की

उत्पत्ति का वहां अभाव है ॥ १४ ॥ तमस्काय के समान रंगवाली कृष्णराजी है इस से कृष्णराजी का

प्रश्न पूछते हैं. अहो भगवन् ! कृष्णराजी कितनी कही ? अहो गौतम ! कृष्णराजी आठ कहीं अहो भगवन् !

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामसाङ्गी *

सप्त चतुस्र सं० संभ्रान से सं० रही हुई अ० आठ रा० राजियो प० प्ररूपी पु० पूर्व में दो० दो प० पश्चिम में दो० दो दा० दक्षिण में दो० दो उ० उत्तर में दो० दो पू० पूर्व की अ० आभ्यंतर क० कृष्णराजी दा० दक्षिण की वा० वाहिर की क० कृष्णराजी को पु० स्पर्शी हुई दा० दक्षिण की अ० आभ्यंतर क० कृष्णराजी प० पश्चिम की वा० वाह क० कृष्णराजियो छ० छकौने वाली दो० दो पु० पूर्व प० पश्चिम कण्हराई पुट्टा, दाहिणभंभतरा कण्हराई पच्चाच्छिम बाहिर कण्हराई पुट्टा पच्चात्थिमभंभतरा कण्हराई उत्तरबाहिर कण्हराई पुट्टा, उत्तरभंभतरा कण्हराई पुराच्छिमबाहिर कण्हराई पुट्टा, दा पुराच्छिम पच्चाच्छिमाओ बाहिराओ कण्हराईओ छलसाओ, दो उत्तरदाहिणबाहिराओ कण्हराईओ तसाओ, दो पुराच्छिमपच्चाच्छिमाओ अंभंतराओ कण्हराईओ चउरसाओ, दो उत्तर दाहिणाओ अंभंतराराओ कण्हराईओ चउर

कृष्णराजी कहां कही ? अहो गौतम ! सनत्कुमार माहेन्द्र देवलोक की उपर व ब्रह्मदेवलोक की नीचे रिष्ट विमान मस्तर में अखाडे के समान तमचउरत संभ्रानसे रही हुई है। पूर्व में दो, पश्चिम में दो, दक्षिण में दो, उपर में दो, पूर्व की आभ्यंतर कृष्णराजी दक्षिण की बाह कृष्णराजी को स्पर्शकर रही हुई है, दक्षिण की आभ्यंतर कृष्णराजी पश्चिम की बाह कृष्णराजी को स्पर्शकर रही है पश्चिम की आभ्यंतर कृष्णराजी उतर की बाह कृष्णराजी को स्पर्शकर रही है और उत्तर की आभ्यंतर कृष्णराजी पूर्व की

शब्दाथ

सूत्र

५

उ० उत्पन्न पूर्व हं० हां गो० गौतम अ० अनेक वार अ० अथवा अ० अनंतवार णो० नहीं वा० वादर
 पु० पृथ्वी कायपने वा० वादर अधिकायपने ॥ १४ ॥ क० कितनी भं० भगवन् क० कृष्णराजियो प०
 प्ररूपी गो० गौतम अ० आठ क० कृष्णराजियो प० प्ररूपी क० कहां भं० भगवन् ए० यह अ० आठ
 क० कृष्णराजियो प० प्ररूपी गो० गौतम उ० ऊपर स० सनत्कुमार मा० माहेन्द्र क० देवलोक में हि०
 नीचे वं० ब्रह्मलोक क० देवलोक में रि० रिष्ट वि० विमान प० प्रस्तर ए० यहाँ अ० अखाडा के सं०

णो चेत्रणं वादर पुढविकाइयत्ताए ॥ १४ ॥ कइणं

भंते ! कण्हराईओ पणत्ताओ ? गोयसा ! अट्ट कण्हराईओ पणत्ताओ

कहिणं भंते ! एया अट्ट कण्हराईओ पणत्ताओ ? गोयसा ! उप्पि सणकुमारमा-

हिंषाणं कप्पाणं हिट्ठिं बंभलोए कप्पे रिट्ठे विमाणे पत्थडे एत्थणं अक्खाडग समचउ-

रंस संठाण संठियाओ अट्टराईओ पणत्ताओ, तंजहा पुरच्छिमेणं दो,

पच्चत्थिमेणं दो, दाहिणेणं दो, उत्तरेणं दो, पुरच्छिममंभंतरा कण्हराई दाहिणं बाहिरं

अनंत वार उत्पन्न हुए, परंतु वादर पृथ्वीकाय व वादर अधिकायपने नहीं उत्पन्न हुए, क्योंकि उन की
 उत्पत्ति का वहां अभाव है ॥ १४ ॥ तमस्काय के समान रंगवाली कृष्णराजी है इस से कृष्णराजी का
 प्रश्न पूछते हैं. अहो भगवन् ! कृष्णराजी कितनी कही ? अहो गौतम ! कृष्णराजी आठ कहीं अहो भगवन् !

उ० उत्तर द० दक्षिण की वा० बाहिर की क० कृष्णराजी तं० तीनकौने वाली दो० दो पु० पूर्व
 प० पश्चिम की अ० आभ्यंतर क० कृष्णराजी च० चौरस ॥ १५ ॥ क० कृष्णराजियों भ० भगवन्
 के० कितनी आ० लम्बाइ में के० कितनी वि० चौडाइ में के० कितनी प० परिधि में गो० गौतम
 अ० असंख्यात जो० योजन सहस्र आ० लम्बाइ में सं० संख्यात जो० योजन सहस्र वि० चौडाइ में
 अ० असंख्यात जो० योजनसहस्र प० परिधिमें प० कही ॥ १६ ॥ क० कृष्णराजियों भ० भगवन् के० कितनी

साओ, ॥ पुष्पावरा छलंसा, तंसापुण दाहिणुत्तरावज्झा ॥ अवेसेसा चउरंसा,
 सव्वाविय कण्हराईओ ॥ १ ॥ १५ ॥ कण्हराईओणं भंते ! केवइयं आयामेणं
 केवइयं विक्खंभेणं, केवइयं परिक्खेवेणं पणत्ताओ ? गोयमा ! असंखेजाइं जोयण
 सहरसाइं आयामेणं, संखेजाइं जोयण सहस्साइं विक्खंभेणं, असंखेजाइं जोयणसहस्साइं
 परिक्खेवेणं पणत्ताओ ॥ १६ ॥ कण्हराईओणं भंते ! के महालियाओ पणत्ताओ ?

बाह कृष्णराजी को स्पर्शकर रही है. पूर्व पश्चिम की बाह दो कृष्णराजीयों छ कौनेवाली हैं, उत्तर दक्षिण
 की बाहिर की दो कृष्णराजीयों त्रिकौनाकार हैं, पूर्व पश्चिम की आभ्यंतर दो कृष्णराजीयों चौरस हैं,
 वैसीही उत्तर दक्षिण की दोनों आभ्यंतर कृष्णराजीयों चौरस हैं ॥ १५ ॥ अहो भगवन् ! कृष्णराजीयों लम्बाई
 चौडाई व परिधि में कितनी कही है? अहो गौतम! कृष्णराजीयों असंख्यात योजनकी लम्बी, संख्यात योजन
 सहस्र की चौडी, व असंख्यात योजन सहस्र की परिधिवाली हैं ॥ १६ ॥ अहो भगवन् ! कृष्णराजीयों

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

सम चतुस्र सं० संठाण से सं० रही हुई अ० आठ रा० राजियो प० प्रहरी पु० पूर्व में दो० दो प० पश्चिम में दो० दो दा० दक्षिण में दो० दो उत्तर में दो० दो पूर्व की अ० आभ्यंतर क० कृष्णराजी दा० दक्षिण की वा० बाहिर की क० कृष्णराजी को पु० सर्शी हुई दा० दक्षिण की अ० आभ्यंतर क० कृष्णराजी प० पश्चिम की वा० बाह्य क० कृष्णराजियो छ० छकौने वाली दो० दो पु० पूर्व प० पश्चिम कण्हराई पुट्टा, दाहिणभंभतरा कण्हराई पच्चाच्छिम बाहिरं कण्हराई पुट्टा पच्चात्थिमवम्भ-तरा कण्हराई उत्तरवाहिरं कण्हराई पुट्टा, उत्तरव्भंतरा कण्हराई पुराच्छिमवाहिरं कण्हराई पुट्टा, दा पुराच्छिम पच्चाच्छिमाओ बाहिराओ कण्हराईओ छलंसाओ, दो उत्तरदाहिणवाहिराओ कण्हराईओ तंसाओ, दो पुराच्छिमपच्चाच्छिमाओ अब्भंतराओ कण्हराईओ चउरंसाओ, दो उत्तर दाहिणाओ अब्भंताराओ कण्हराईओ चउरं

कृष्णराजी कहां कही ? अहो गौतम ! सनत्कुमार महेन्द्र देवलोक की उपर व ब्रह्मदेवलोक की नीचे गिष्ट विमान मस्तर में अखाडे के समान समचउरंस संठाणसे रही हुई हैं. पूर्व में दो, पश्चिम में दो, दक्षिण में दो. उपर में दो. पूर्व की आभ्यंतर कृष्णराजी दक्षिण की बाह्य कृष्णराजी को स्पर्शकर रही हुई है, दक्षिण की आभ्यंतर कृष्णराजी पश्चिम की बाह्य कृष्णराजी को स्पर्शकर रही है पश्चिम की आभ्यंतर कृष्णराजी उतर की बाह्य कृष्णराजी को स्पर्शकर रही है और उत्तर की आभ्यंतर कृष्णराजी पूर्व की

शब्दाथ ०० कृष्णराजी कृष्णराजी कृष्णराजी कृष्णराजी कृष्णराजी कृष्णराजी कृष्णराजी कृष्णराजी कृष्णराजी कृष्णराजी

शब्दाथ

सूत्र



उ० उत्तर द० दक्षिण की वा० वाहिर की क० कृष्णराजी तं० तीनकौने वाली दो० दो० पु० पूर्व प० पश्चिम की अ० आभ्यंतर क० कृष्णराजी च० चौरस ॥ १५ ॥ क० कृष्णराजीयों भ० भगवन् के० कितनी आ० लम्बाई में के० कितनी वि० चौड़ाई में के० कितनी प० परिधि में गो० गौतम अ० असंख्यात जो० योजन सहस्र आ० लम्बाई में सं० संख्यात जो० योजन सहस्र वि० चौड़ाई में अं० असंख्यात जो० योजनसहस्र प० परिधिमें प० कही ॥ १६ ॥ क० कृष्णराजीयों भ० भगवन् के० कितनी

साओं, ॥ पुष्पावरा छलंसा, तंसापुण दाहिणुत्तरावज्जा ॥ अवेससा चउरंसा, सव्वाविय कण्हराईओ ॥ १ ॥ १५ ॥ कण्हराईओणं भंते ! केवइयं आयामेणं केवइयं विक्खंभेणं, केवइयं परिक्खेवेणं पणत्ताओ ? गोयमा ! असंखेज्जाइं जोयण सहरसाइं आयामेणं, संखेज्जाइं जोयण सहसाइं विक्खंभेणं, असंखेज्जाइं जोयणसहरसाइं परिक्खेवेणं पणत्ताओ ॥ १६ ॥ कण्हराईओणं भंते ! के महालियाओ पणत्ताओ ?

वाह्य कृष्णराजी को स्पर्शकर रही है. पूर्व पश्चिम की वाह्य दो कृष्णराजीयों छ कौनेवाली हैं, उत्तर दक्षिण की वाहिर की दो कृष्णराजीयों त्रिकौनाकार हैं, पूर्व पश्चिम की आभ्यंतर दो कृष्णराजीयों चौरस हैं, वैसीही उत्तर दक्षिण की दोनों आभ्यंतर कृष्णराजीयों चौरस हैं ॥ १५ ॥ अहो भगवन् ! कृष्णराजीयों लम्बाई चौड़ाई व परिधि में कितनी कही है? अहो गौतम! कृष्णराजीयों असंख्यात योजनकी लम्बी, संख्यात योजन सहस्र की चौड़ी, व असंख्यात योजन सहस्र की परिधिवाली हैं ॥ १६ ॥ अहो भगवन् ! कृष्णराजीयों

म० बडी प० कही गो० गौतम अ० यह ज० जम्बूद्वीप जा० यावत् अ० आठ मास वी० व्यतीत होवे अ० कितनीक क० कृष्णराजियों वी० उल्लंघावे अ० कितनीक क० कृष्णराजियों गो० नहीं वी० उल्लंघावे ए० यह म० बडी गो० गौतम क० कृष्णराजियों प० प्ररूपी ॥ १७ ॥ अ० है मं० भगवन् क० कृष्णराजियों में मे० गृह मे० दुकानों गो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ अ० है मं० भगवन् क० कृष्णराजियों में गा० प्राप्त जा० यावत् स० सन्निवेश गो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ ॥ १८ ॥ अ० है मं० भगवन् क०

गोयमा ! अयणं जंबुद्वीपे जाव अट्टमासे वीईवएजा, अत्थेगइए कण्हराई वीई-
वएजा अत्थेगइए कण्हराई गो वीईवएजा, ए महल्लियाओ गोयमा ! कण्हराईओ
पण्णात्ताओ ॥ १७ ॥ अत्थिणं भंते ! कण्हराईसु गेहाइवा गेहवणाइवा ? णोइणट्टे
समेट्टे ॥ अत्थिणं भंते ! कण्हराईसु गामाइवा जाव साण्णिवेसाइवा ? णोइणट्टेसमेट्टे

कितनी बडी कही है ? अहां गौतम ! कोई देव तीन चप्पटिका में इस जम्बूद्वीप की आसपास इक्कीस वक्त परिभ्रमण करे ऐसी शीघ्र दीन्य देवगति से कृष्णराजि में आठ मास तक चले तब कितनीक कृष्णराजियों को अतिक्रमे और कितनीक कृष्णराजियों को अतिक्रमे नहीं. अहो गौतम ! इतनी बडी कृष्णराजियों कहीं है ॥ १७ ॥ अहो भगवन् ! इन कृष्णराजियों में गृह, दुकानों, ग्राम यावत् सन्निवेश है ? अहो गौतम ? इन में गृह यावत् सन्निवेश नहीं है ॥ १८ ॥ अहो भगवन् ! कृष्णराजियों में क्या बडे २ मेव बगैरह है ?

कृष्णराजियों में उ० वादर व० मेघ स० संस्वेद हं० हां वं० है तं० उसे भं० भगवन् किं० देव गो०
गौतम देव प० करते हैं नो० नहीं अ० असुर नो० नहीं ना० नाग अ० है भं० भगवन् क० कृष्णरा-
जियों में व० वादर थ० गर्जना ज० जैसे उ० बडे त० तैसे ॥ १९ ॥ अ० है भं० भगवन् क० कृष्ण-
राजियों में वा० वादर आ० अप्काय वा० वादर अ० अत्रिकाय, वा० वादर व० वनस्पतिकाय णो०

॥ १८ ॥ अत्थिणं भंते ! कण्हराईसु उरालाबलाहया संसेयंति ३ ? हंता अत्थि ॥ तं
भंते ! किं देवो ३ ? गोयमा ! देवो पकरेइ नो असुरो नो नाओ । अत्थिणं भंते !
कण्हराईसु वादरे थणियसदे २ ? जहा उराला तथा ॥ १९ ॥ अत्थिणं भंते ! कण्ह-
राईसु वायरे आउकाए वायरे अगणिकाए, वायरे वणप्फइकाए ? णोइण्ठे समट्ठे ॥ णण्ण-

हां गौतम ! बडे २ मेघ रहे हुये हैं. अहो भगवन् ! उन्हे क्या देव करते हैं, असुर करते हैं या नाग
करते हैं ? अहो गौतम ! उन मेघको देव बनाते हैं परंतु असुर व नाग नहीं बनाते हैं. अहो भगवन् !
कृष्णराजियों में क्या वादर गर्जना व वादर विद्युत् है ? हां गौतम ! उस में वादर गर्जना व वादर
विद्युत् है, और उन्हे देव बनाते हैं. परंतु असुर व नाग जाति के देव नहीं बनाते हैं. क्योंकि उन का वहां
गमन नहीं है ॥ १९ ॥ अहो भगवन् ! क्या कृष्णराजियों में वादर अप्काय, अत्रिकाय व वनस्पति

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुबदेवसहायजी ज्वालामुखी

म० बडी प० कही गो० गौतम अ० यह जे० जम्बूद्वीप जा० यावत् अ० आठ मास बी० व्यतीत होवे अ०
 कितनी क० कृष्णराजियों बी० उल्लंघावे अ० कितनी क० क० कृष्णराजियों गो० नहीं बी० उल्लंघावे ए०
 यह म० बडी गो० गौतम क० कृष्णराजियों प० प्ररूपी ॥ १७ ॥ अ० है मं० भगवन् क० कृष्णराजियों
 में गो० गृह गो० दुकानों गो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ अ० है मं० भगवन् क० कृष्णराजियों में गा०
 ग्राम जा० यावत् स० सन्निवेश गो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ ॥ १८ ॥ अ० है मं० भगवन् क०

गोयमा ! अयणं जंबुद्वीपे जाव अट्टमासं वीद्विवाएजा, अत्थेगइए कण्हराई वीद्वि-
 वएजा अत्थेगइए कण्हराई गो वीद्विवाएजा, ए महल्लियाओ गोयमा ! कण्हराईओ
 पणत्ताओ ॥ १७ ॥ अत्थिणं भंते ! कण्हराईसु गेहाइवा गेहवणाइवा ? णोइण्णट्ठे
 समट्ठे ॥ अत्थिणं भंते ! कण्हराईसु गामाइवा जाव साण्णिवेसाइवा ? णोइण्णट्ठेसमट्ठे

कितनी बडी कही है ? अहां गौतम ! कोई देव तीन चप्पटिका में इस जम्बूद्वीप की आसपास इक्कीस वक्त
 परिभ्रमण करे ऐसी शीघ्र दीव्य देवगति से कृष्णराजि में आठ मास तक चले तब कितनी क कृष्णराजियों
 को अतिक्रमे और कितनी क कृष्णराजियों को अतिक्रमे नहीं. अहो गौतम ! इतनी बडी कृष्णराजियों
 कहीं है ॥ १७ ॥ अहो भगवन् ! इन कृष्णराजियों में गृह, दुकानों, ग्राम यावत् सन्निवेश हैं ? अहो गौतम ?
 इन में गृह यावत् सन्निवेश नहीं है ॥ १८ ॥ अहो भगवन् ! कृष्णराजियों में क्या तरे ३ घेत्त तमेत्त है ?

कृष्णराजियों में उ० वादर व० मेघ सं० संस्वेद हं० हां थं० है तं० उसे भं० भगवन् किं० देव गो० गौतम देव प० करते हैं नो० नहीं अ० असुर नो० ना० नाग अ० है भं० भगवन् क० कृष्णराजियों में व० वादर थ० गर्जना ज० जैसे उ० बडे त० तैसे ॥ १९ ॥ अ० है भं० भगवन् क० कृष्णराजियों में वा० वादर आ० अप्काय वा० वादर अ० भ्रिक्काय, वा० वादर व० वनस्पतिकाय णो०

॥ १८ ॥ अत्थिणं भंते ! कण्हराईसु उरालाबलाहया संसेयंति ३ ? हंता अत्थि ॥ तं भंते ! किं देवो ३ ? गोयसा ! देवो पकरेइ नो असुरो नो नाओ । अत्थिणं भंते ! कण्हराईसु वादरे थणियसद्दे २ ? जहा उराला तथा ॥ १९ ॥ अत्थिणं भंते ! कण्हराईसु वायरे आउकाए वायरे अगणिकाए, वायरे वणफइकाए ? णोइणट्टे समट्टे ॥ णण-

हां गौतम ! बडे २ मेघ रहे हुवे हैं. अहो भगवन् ! उन्हे क्या देव करते हैं, असुर करते हैं या नाग करते हैं ? अहो गौतम ! उन मेघको देव बनाते हैं परंतु असुर व नाग नहीं बनाते हैं. अहो भगवन् ! कृष्णराजियों में क्या वादर गर्जना व वादर विद्युत् है ? हां गौतम ! उस में वादर गर्जना व वादर विद्युत् है, और उन्हे देव बनाते हैं. परंतु असुर व नाग जाति के देव नहीं बनाते हैं. क्योंकि उन का वहां गर्जन नहीं है ॥ १९ ॥ अहो भगवन् ! क्या कृष्णराजियों में वादर अप्काय, अशिकाय व वनस्पति

म० बडी प० कही गो० गौतम अ० यह जे० जम्बूद्वीप जा० यावत् अ० आठ मास वी० व्यतीत होवे अ०
 कितनीक क० कृष्णराजियों वी० उल्लंघावे अ० कितनीक क० कृष्णराजियों गो० नहीं वी० उल्लंघावे ए०
 यह म० षडी गो० गौतम क० कृष्णराजियों प० प्ररूपी ॥ १७ ॥ अ० है मं० भगवन् क० कृष्णराजियों
 में गो० गृह गे० दुकानों गो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ अ० है मं० भगवन् क० कृष्णराजियों में गा०
 ग्राम जा० यावत् स० सन्निवेश गो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ ॥ १८ ॥ अ० है मं० भगवन् क०

गोयमा ! अयणं जंबुद्वीवे जाव अट्टमासं वीद्विवाज्जा, अत्थेगइए कण्हराई वीद्वि-
 वाज्जा अत्थेगइए कण्हराई गो वीद्विवाज्जा, ए महल्लियाओ गोयमा ! कण्हराईओ
 पणत्ताओ ॥ १७ ॥ अत्थिणं भंते ! कण्हराईसु गेहाइवा गेहवणाइवा ? णोइणट्टे
 समट्टे ॥ अत्थिणं भंते ! कण्हराईसु गामाइवा जाव साण्णिवेसाइवा ? णोइणट्टेसमट्टे

कितनी बडी कही है ? अहां गौतम ! कोई देव तीन चप्पटिका में इस जम्बूद्वीप की आसपास इक्कीस वक्त
 परिभ्रमण करे ऐसी शीघ्र दीव्य देवगति से कृष्णराजि में आठ मास तक चले तब कितनीक कृष्णराजियों
 को अतिक्रमे और कितनीक कृष्णराजियों को अतिक्रमे नहीं. अहो गौतम ! इतनी बडी कृष्णराजियों
 कहीं है ॥ १७ ॥ अहां भगवन् ! इन कृष्णराजियों में गृह, दुकानों, ग्राम यावत् सन्निवेश है ? अहो गौतम !
 इन में गृह यावत् सन्निवेश नहीं है ॥ १८ ॥ अहो भगवन् ! कृष्णराजियों में क्या बडे रे मेघ वगैरह हैं ?

कृष्णराजियों में उ० वादर व० मेघ सं० संस्वेद हं० हां सं० है तं० उसे भं० भगवन् किं० देव गो०
गौतम देव प० करते हैं नो० नहीं अ० असुर नो० नहीं ना० नाग अ० है भं० भगवन् क० कृष्णरा-
जियों में व० वादर थ० गर्जना ज० जैसे उ० वडे त० तेसे ॥ १९ ॥ अ० है भं० भगवन् क० कृष्ण-
राजियों में वा० वादर आ० अप्काय ना० वादर अ० अत्रिकाय, वा० वादर व० वनस्पतिकाय पो०

॥ १८ ॥ अत्थिणं भंते ! कण्हराईसु उरालाबलाहया संसेयंति ३ ? हंता अत्थि ॥ तं
भंते ! किं देवो ३ ? गोघमा ! देवो पकरेइ नो असुरो नो नाओ । अत्थिणं भंते !
कण्हराईसु बादरे थाणियसदे २ ? जहा उराला तथा ॥ १९ ॥ अत्थिणं भंते ! कण्ह-
राईसु वायरे आउकाए वायरे अगणिकाए, वायरे वणप्फइकाए ? णोइण्ठे समंठे ॥ णण-

हां गौतम ! वडे २ मेघ रहे हुये हैं. अहो भगवन् ! उन्हे क्या देव करते हैं, असुर करते हैं या नाग
करते हैं ? अहो गौतम ! उन मेघको देव बनाते हैं परंतु असुर व नाग नहीं बनाते हैं. अहो भगवन् !
कृष्णराजियों में क्या वादर गर्जना व वादर विद्युत् है ? हां गौतम ! उस में वादर गर्जना व वादर
विद्युत् है, और उन्हे देव बनाते हैं, परंतु असुर व नाग जाति के देव नहीं बनाते हैं. क्योंकि उन का वहां
गमन नहीं है ॥ १९ ॥ अहो भगवन् ! क्या कृष्णराजियों में वादर अप्काय, अत्रिकाय व वनस्पति

* प्रकाशक-राजादहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्व २ प्रसादजी *

नहीं इ० यह अर्थ सं० समर्थ न० नहीं अ० अन्यत्र वि० विग्रहगति सं० समापन्न ॥ २० ॥ अ० है भ० भगवन् च० चंद्र सू० सूर्य णो० नहीं इ० यह अर्थ सं० समर्थ अ० है भ० भगवन् क० कृष्णराजियो मे च० चंद्र की कान्ति नो० नहीं इ० यह अर्थ सं० योग्य ॥ २१ ॥ क० कृष्णराजियो का भ० भगवन् के० कैसा व० वर्ण प० कंठा का० काला जा० यावत् खि० शीघ्र वी० व्यतिक्रान्त होवे ॥ २२ ॥ क० कृष्णराजियो

त्य विग्रहगइसमावणार्णं ॥ २० ॥ अत्थिणं भंते ! चंदिम सूरिम ? णो इण्डे-
समेट्टे ॥ अत्थिणं कण्हराइसु चंदाभाइ २ वा ? णोइण्डे समेट्टे ॥ २१ ॥ कण्हरा-
इणं भंते ! केरिसियाओ वण्णेणं पणत्ताओ ? गोयमा ! कालाओ जाव खिप्पामिव.
वीइवाएजा ॥ २२ ॥ कण्हराईणं भंते ! कइनामधंजा पणत्ता ? गोयमा ! अट्ट

काय है ? अहो गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है, परंतु विग्रहगतिवाले जीव कश्चित् उत्पन्न होते हैं ॥ २० ॥ अहो भगवन् ! क्या वहां चंद्र सूर्य अथवा चंद्र सूर्य की कान्ति है ? यह अर्थ योग्य नहीं है अर्थात् वहां नहीं है ॥ २१ ॥ अहो भगवन् ! कृष्णराजियों का वर्ण कैसा है ? अहो गौतम ! कृष्णराजियों का वर्ण काला, काली कान्तिवाला यावत् देवता भी उसे देखकर धुन्न होते हैं और शि-
री उने उच्छ्रय जाते हैं ॥ २२ ॥ अहो भगवन् ! कृष्णराजियों के कितने नाम कहे हैं ? अहो गौतम !

प०परभविक उ०उभय भविक ज्ञान द०दर्शन ए०ऐसे॥४१॥ इ०यह भ०भविक च० चारित्र्य प० परभविक चारित्र्य उ०उभयभविक चारित्र्य गो०गौतम इ०यह भविक चारित्र्य गो०नहीं प०परभविक चारित्र्य गो०नहीं उ०उभयभविक चारित्र्य ए०ऐसे त०तपस्यमा॥४२॥ अ०असंबृते अ० अनगार सि०सिद्धे बु०बुद्धे मु०मुक्त होवे प०

एवि णाणे, तदुभयभविएवि णाणेय दंसणंपि एवामेव ॥४१॥ इह भविए भंते चरित्ते,
परभविए भंते चरित्ते, तदुभय भविए चरित्ते ? गोयमा ! इह भविए चरित्ते, णो पर
भविए चरित्ते, णो तदुभय भविए चरित्ते एवं तथे, संजमे ॥ ४२ ॥ असंबुद्धेणं भंते
अणगारे सिञ्जति, बुञ्जति, मुच्चति, परिणिव्वाति, सब्वदुक्खाणमंतंकरेति ? गोयमा !

इस भविक ज्ञान होता है, परभविक ज्ञान होता है, अथवा दोनों प्रकार का ज्ञान होता है ? अहो गौतम ! इस भविक, परभविक व तदुभयभविक ज्ञान होता है ऐसे ही दर्शनका जानना ॥ ४१ ॥ अहो भगवन् ! इस भवका चारित्र्य, परभवका चारित्र्य, व दोनों भवका चारित्र्य ? अहो गौतम ! इस भव संबन्धिही चारित्र्य है परंतु परभविक व उभय भविक चारित्र्य नहीं है ऐसेही तप व संयम का जानना ॥४२॥ अहो भगवन् असंबृत आश्रवद्धार को नहीं रूथने वाला अणगार क्या सिद्धे, बुद्धे, कर्म से मुक्त होवे निर्वाणको प्राप्त होवे

१ जो ज्ञान यहां पर शीखने में आया होवे और परभव में साथ न जावे, २ इस भवमे शीखने मे आया होवे और परभवमें साथ जावे ३ इस भवमे शीखनेमें आया होवे वह परभव में व परत्तरभव में अनुवर्तसे

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामत्स्यजी *

गौतम अ० अनेकवार अ० अथवा अ० अनंतवार नो० नहीं वा० वादर आ० अप्कायपने वा० वादर
 अप्कायपने वा० वादर वायुकायपने ॥ २५ ॥ इ० इन अ० आठ क० कृष्णराजियों में अ० आठ उ०
 आंतरे में अ० आठ लो० लोकान्तिक वि० विमान प० कहे अ० अर्ची अ० अर्चिमाली व० वैरोचन प०
 प्रभंकर च० चंद्राभ मू० सूर्याभ सु० शुक्राभ सु० सुप्रतिष्ठाभ म० मध्य में रि० रिष्ठाभ ॥ २६ ॥ क०
 कदां अ० अर्ची वि० विमान प० प्ररूपा गो० गौतम उ० ईशान में ए० ऐसे ही प० परिपाटी से ने० जानना
 खुबुत्तो नो चैवणं वायर आउकाइयत्ताए, वादर अगणिकाइयत्ताएवा, वादरवप्फइ
 काइयत्ताएवा ॥ २५ ॥ एयासिणं अट्टुहं कण्हराईणं अट्टुसु उवासंतरसु अट्टुलोगं-
 तिय विमाणा पण्णत्ता, तंजहा अर्ची, अर्चिमाली, वइरोयणे, पभंकरे, चंद्राभे, सूर्याभे,
 सुक्राभे, सुप्रइट्टाभे, मज्जे रिट्टाभे ॥ २६ ॥ कहिणं भंते ! अच्चिविमाणे पण्णत्ते ?
 गोयमा ! उत्तरपुरच्छिमेणं ॥ कहिणं भंते ! अच्चिमाली विमाणे पण्णत्ते ? गोयमा !
 नीर व सत्त क्या पहिले उत्पन्न हुए ? हां गौतम ! पहिले अनेकवार व अनंत वार उत्पन्न हुवे परंतु
 वादर अप्काय, अप्काय व वनस्पति कायपने उत्पन्न नहीं हुवे हैं ॥ २५ ॥ इन आठ कृष्णराजियों के
 आठ आंतरे कहे हैं. उन आठ आंतरे में लोकान्तिक देव के आठ विमान कहे हैं:—अर्ची, अर्ची-
 माली, वैरोचन, प्रभंकर, चंद्राभ, सूर्याभ, शुक्राभ, सुप्रतिष्ठाभ और मध्यमें रिष्ठाभ ॥ २६ ॥ अहो भगवंत !

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

के क० कितने ना० नाम गो० गौतम अ० आठ क० कृष्णराजी मे० मेघराजी म० मघा मा० माघवती
 वा० वातफलिह वा० वातपरिक्षोभ दे० देवफलिह दे० देवपरिक्षोभ ॥ २२ ॥ क० कृष्णराजियों का भं०
 भगवन् कि० क्या पु० पृथ्वी परिणाम आ० अप् जी० जीव पो० पुद्गल परिणाम गो० गौतम पु० पृथ्वी
 परिणाम नो० नहीं आ० अप् परिणाम जी० जीव परिणाम पो० पुद्गल परिणाम ॥ २४ ॥ क० कृष्ण
 राजी में भं० भगवन् स० सब पा० प्राण भू० भूत जी० जीव स० सब उ० उत्पन्न पु० पूर्व हं० हां गो०
 नामधेजा पणत्ता तंजहा कण्हराईइवा, मेहराईइवा, मघाइवा, माघवईइवा, वायफलिहा
 इवा, वायफलिवखोभाइवा, देवफलिहाइवा, देवफलिवखोभाइवा ॥ २३ ॥ कण्हराईओणं
 भंते ! किं पुढवि परिणामाओ, आठ जीव पोगल परिणामाओ ? गोयमा ! पुढवि परिणा-
 माओवि, नो आठपरिणामाओ जीव परिणामाओवि, पोगलपरिणामाओवि ॥ २४ ॥ कण्हरा-
 ईसुणं भंते ! सब्बे पाणा भूया जीवा सत्ता उववण पुब्बा ? हंता गोयमा ! असइं अदुवा अणंत-
 कृष्णराजियों के आठ नाम कहे हैं ? कृष्णराजि, मेघराजि, मघा, माघवती, वातफलिह, वातपरिक्षोभ,
 देवफलिह, देवपरिक्षोभ ॥ २३ ॥ अहो भगवन् ! क्या कृष्णराजियों पृथ्वी परिणामवाली है, या अप्
 जीव व पुद्गल परिणामवाली हैं ? अहो भगवन् ! कृष्णराजियों पृथ्वी परिणामवाली हैं वैसेही जिव व पुद्गल
 परिणामवाली हैं परंतु अप् परिणामवाली नहीं हैं ॥ २४ ॥ अहो भगवन् ! कृष्णराजि में सब प्राण भूत,

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायनी ज्वालाप्रसादजी *

वि० विमान में प० रहते हैं क० कहां आ० अदित्य देव प० रहते हैं अ० अचिमाली विमान में ए० ऐसे
 ने० जानना ज० यथानुपूर्वी जा० यावत् क० कहां भं० भगवन् रि० रिष्टदेव प० रहते हैं गो० गौतम
 रि० रिष्ट विमान में ॥ २९ ॥ सा० सारस्वत आ० आदित्य को भं० भगवन् दे० देवों को क० कितने
 देव क० कितने दे० देवशत प० कं० गो० गौतम स० सात दे० देव स० सात देवशत प० परिवार व०
 गन्धि व० वरुण दे० देवों को चो० चौदह दे० देव चो० चौदहदेवमहस्र ग० गर्दतोय तु० तुषित को स०
 गोयमा ! अचिमि विमाणं परिवसंति ॥ कहिणं आइच्चा देवा परिवसंति ? गोयमा !

अचिमालिमि विमाणे, एवं नेयव्वं जहाणुपुव्वीए जाव कहिणं भंते ! रिट्ठा देवा परि-
 वसंति ? गोयमा ! रिट्ठमि विमाणे ॥ २९ ॥ सारस्वत माइच्चाणं भंते ! देवाणं
 कइदेवा कइदेवसया पणत्ता ? गोयमा सत्तदेवा सत्तदेवसया परिवारो पणत्ता ॥
 वणिहरुणाणं चोइसदेवा चोइसदेव सहस्सा पणत्ता ॥ गदतोय तुसियाणं देवाणं
 सत्तदेवा सत्तदेवसहस्सा प० ॥ अवसेसाणं नवदेवा, नवदेवसया पणत्ता ॥ पढम

में वन्धि, प्रभंकर में वरुण, चंद्राभ में गर्दतोय, सूर्याभ में तुषित, शुक्राभ में अव्यावाच, सुप्रतिष्ठाभ में अगिच्च,
 और रिष्टाभ में रिष्ट नामक लोकान्तिक देव रहते हैं ॥ २९ ॥ सारस्वत आदित्य इन दोनों देवों को सात
 देव अधिपति हैं और एक २ को एकसौ २ का परिवार रहा हुआ है इस से सातसौ देव का परिवार है.

क० कहां भं० भगवन् रि० रिष्ट विमान पं० कहा गो० गौतम व० बहुत मध्य के दे० देशमें ॥ २७ ॥ ए० इन अ० आठ लो० लोकान्तिक वि० विमान में अ० आठ लो० लोकान्तिक दे० देव प० रहते हैं सा० सारस्वत आ० आदित्य व० वन्दि व० नरुण ग० गर्दतोय त० तुपित अ० अव्यावाय अ० अगिच रि० रिष्ट ॥ २८ ॥ क० कहां भं० भगवन् सा० सारस्वत दे० देव प० रहते हैं गो० गौतम अ० अर्चि

पुरच्छिमेणं एवं परिवाडीए नेयव्वं जाव कहिणं भंते ! रिट्टविमाणे पणत्ते ? गोयमा ! बहुमज्झ देसभागे ॥ २७ ॥ एएसुणं अट्टसु लोगतिय विमाणेसु अट्टविहा लोगतिया देवा परिवसंति तंजहा—सारस्सय माइच्चा, वण्ही वरुणाय गहत्तोयाय ॥ तुसिया अब्वावाहा अगिग्घा चेत्र रिट्टाय ॥ १ ॥ २८ ॥ कहिणं भंते ! सारस्सया देवा परिवसंति ?

अर्ची विमान कहां कहा है ? अहो गौतम ! अर्ची विमान ईशान कौन में कहा है. अर्चीमाली पूर्व में, वैरोचन अग्निक्कौन में, प्रभंकर दक्षिण में, चंद्राभ नैऋत्ककौन में, सूर्याभ पश्चिम में, शुक्राभ त्रायव्य में, सुप्रतिष्ठाभ उत्तर में और मध्य में रिष्ठाभ ॥ २७ ॥ इन आठ लोकान्तिक विमान में आठ प्रकार के लोकान्तिक देव रहते हैं. १. सारस्वत, २. आदित्य ३. वन्दि ४. वरुण, ५. गर्दतोय ६. तुपित ७. अव्यावाय ८. अगिच और ९. रिष्ट ॥ २८ ॥ अर्ची विमान में सारस्वत देव रहते हैं, अर्चीमाली में आदित्य, वैरोचन

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अ० अंततवार नो० नहीं दे० देवपने लो० लोकान्तिक वि० विमान में लो० लोकान्तिक
॥ ३१ ॥ लो० लोकान्तिक दे० देवों की भं० भगवन् के० कितनी ठि० स्थिति प० प्ररूपी
गो० गौतम अ० आठ सागरोपम की ठि० स्थिति प० प्ररूपी ॥ ३२ ॥ लो० लोकान्तिक वि० विमानों से
भं० भगवन् के० कितना अ० अव्यावाध से लो० लोकान्त प० प्ररूपा गो० गौतम अ० असंख्यात
जो० योजन स० सहस्र अ० अव्यावाध से लो० लोकान्त प० प्ररूपा से० वैसे ही भं० भगवन्

अदुवा अणंतखुत्तो नो चवणं देवत्ताए लोंगतिय विमाणेसु लोंगतिया ॥ ३१ ॥
लोंगतिय देवाणं भंते ! केवइयं कालंठिई पणत्ता ? गोयमा ! अट्टसागरोवमाइ
ठिई पणत्ता, ॥ ३२ ॥ लोंगतिय विमाणेहितो णं भंते ! केवइयं अवाहाए लोंगते
पणत्ते ? गोयमा ! असंखजाइ जोयण सहस्साइ, अवाहाए लोंगते पणत्ते सेवं

योजन का तला कहा है, यावत् लोकान्तिक विमान में पृथ्वीकायादिपने अनेक वार व. अनंत वार उत्पन्न
हुए परंतु लोकान्तिक देवपने नहीं उत्पन्न हुए ॥ ३१ ॥ अहो भगवन् ! लोकान्तिक देवों की कितनी
स्थिति कही ? अहो गौतम ! लोकान्तिक देवों की आठ सागरोपम की स्थिति कही ॥ ३२ ॥ अहो
भगवन् ! लोकान्तिक विमानों से कितना दूर लोकान्त रहा है ? अहो गौतम ! अव्यावाध पने असं-
ख्यात योजन दूर लोकान्त रहा हुआ है. अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य हैं. यह छठा शतक का

शब्दार्थ, ७९. १०९. ११०. १११. ११२. ११३. ११४. ११५. ११६. ११७. ११८. ११९. १२०. १२१. १२२. १२३. १२४. १२५. १२६. १२७. १२८. १२९. १३०. १३१. १३२. १३३. १३४. १३५. १३६. १३७. १३८. १३९. १४०. १४१. १४२. १४३. १४४. १४५. १४६. १४७. १४८. १४९. १५०. १५१. १५२. १५३. १५४. १५५. १५६. १५७. १५८. १५९. १६०. १६१. १६२. १६३. १६४. १६५. १६६. १६७. १६८. १६९. १७०. १७१. १७२. १७३. १७४. १७५. १७६. १७७. १७८. १७९. १८०. १८१. १८२. १८३. १८४. १८५. १८६. १८७. १८८. १८९. १९०. १९१. १९२. १९३. १९४. १९५. १९६. १९७. १९८. १९९. २००.

सातदेव सा० सातदेव सहस्र अ० शेष न० नवदेव न० नवदेवशत प० प्रथम जु० दो में स० सात स० सो
 धी० दूसरे में चो० चौदह स० सहस्र त० तीसरे में स० सात स० सहस्र न० नव स० सो से० शेष में
 ॥ ३० ॥ लो० लोकान्तिक भं० भगवन् वि० विमान किं० क्या प० प्रतिष्ठित ए० ऐसे ही ने० जानना
 वि० विमानों का प० आधार वा० जाडाइ उ० ऊंचाइ सं० संठाण वं० ब्रह्मलोक की व० वक्तव्यता
 ज० जैसे जी० जीवाभिगम में दे० देव उ० उद्देशे में जा० यावत् हं० हां अ० अनेकवार अ० अथवा
 जुगलंभि सत्तओ सयाणि, बीयस्मि चौदहससहस्सा, ॥ तइए सत्तसहस्सा, नवंचव
 सयाणि सेसेसु ॥ १ ॥ ३० ॥ लो० गंतिय विमाणणं भंते ! किंपइट्टिया पणत्ता ?

गोयमा ! वाउपइट्टिया । एवं नेयव्वं विमाणणं पइट्टाणं बाहुल्लुच्चत्तमेव संठाणं, वंभ-
 लोय वत्तव्वया नेयव्वा, जहा जीवाभिगंम देवुद्देसए जाव ? हंता गोयमा असइं

बनिह वरुण को चौदह देव हैं, एक को एक २ हजार का परिवार होने से चौदह हजार देव का परिवार
 रहा हुआ है. गर्इतीय और तुपित को सात देव और सात हजार देव का परिवार, अब्यावाय, अग्नि-
 च व रिष्ट को नव देव नवसों देवों का परिवार है ॥ ३० ॥ अहो भगवन् ! लोकान्तिक विमान किस
 आधार से रहे हुवे हैं ? अहो गौतम ! लोकान्तिक विमान वायु प्रतिष्ठित हैं. लोकान्तिक विमान अत्यु-
 त्तम श्रेष्ठ हैं विमानमें रक्त, पीत व शुक्र ऐसे तीन वर्ण हैं सात सो योजन के ऊंचे कहे हैं, पचीस सो

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

मारणान्तिक से स० मरकर जे० जो भ० योग्य च० चौसठ अ० असुरकुमार वास स० लक्ष अ० अन्यतर
 अ० असुरकुमार वास में अ० असुरकुमार पने उ० उत्पन्न होने को ज० जैसे ने० नारकी त० तैसे भा०
 कहना जा० यावत् थ० स्थानित कुमार ॥ ३ ॥ जी० जीव भ० भगवन् मा० मारणान्तिक स० करके जे०
 जो भ० योग्य अ० असंख्यात पु० पृथ्वी कायिक वा० वर्ष स० लक्ष अ० अन्यतर पु० पृथ्वीकायिक
 वा० नाम में पु० पृथ्वीकायपने उ० उत्पन्न होने को से० अथ भ० भगवन् मं० मेरु प० पर्वत
 पुढवी ॥ २ ॥ जीवेणं भंते ! मारणंतियसमुग्धाएणं समोहंएः जे भविए चउसट्टीए
 असुरकुमारावाससयसहस्सेसु अण्णयरंसि असुरकुमारावासंसि असुरकुमारत्ताए
 उववज्जित्तए जहा नेरइया तथा भाणियंब्वा जाव थणियकुमारा ॥ ३ ॥ जीवेणं
 भंते ! मारणंतिय समुग्धाएणं समोहंए २ जे भविए असंखेज्जेसु पुढविकाइया वास
 सयसहस्सेसु अन्नयरंसि पुढविकाइयावासंसि पुढवि काइयत्ताए उववज्जित्तए सेणं
 और शरीर बांवेते हैं, ऐसे ही सातवी पृथ्वीतक का जानना ॥ २ ॥ असुरकुमार यावत् स्थानित कुमार में
 उत्पन्न होकर आहार करने का, रस परिणामने का व शरीर बांधने का नारकी जैसे कहना ॥ ३ ॥ अहो
 भगवन् ! मारणान्तिक समुद्रात से मरकर जो जीव पृथ्वीकायिक के असंख्यात स्थान में से किसी स्थान
 में उत्पन्न होने योग्य होता है वह मेरु पर्वत की पूर्व दिशा में कितना दूर जाता है और किस स्थान प्राप्त

गौतम अ० कितनेक त० वहां रहे हुवे आ० आहारकरे प० परिणमवे स० शरीर वं० बांधे अ० कितनेक
 त० वहां भे प० पीछा फीरकर इ० यहां आ० आवे आ० आकर दो० दूसरीवार मा० मारणान्तिक स०
 समुद्धात स० करे स० करके इ० इस र० रत्नप्रभा पु० पृथ्वीके ती० तीस नि० नरकावास स० लक्ष अ० अन्य
 ने० नारकीपने उ० उत्पन्न होने को त० उस प० पीछे आ० आहारकरे प० परिणमोत्रे स० शरीर
 वं० बांधे ए० ऐसे जा० यावत् अ० नीचे स० सातवी पु० पृथ्वी ॥ २ ॥ जी० जीव भं० भगवन् मा०
 बंधेजा, अर्थेगइए तत्थपडिनियचइ तओ पडिनियतित्ता इह मागच्छइ मागच्छइत्ता
 दोच्चंपि मारणंतिय समुघाएणं समोहणइ समोहणइत्ता इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए
 तीसाए निरयावास सय सहस्सेसु अण्णयंरंसि निरयावासांसि णेरइयत्ताए उव्वज्जित्ताए॥
 तओ पच्छा आहारेज्जवा परिणामेज्जवा सरिंरं वा बंधेजा, एवं जाव अहे सत्तमा
 आहार करता है, उन को खल रसपने परिणमाता है व शरीर उत्पन्न करता है ? अहो मौतम !
 कितनेक जीव वहां रहे हुवे आहार करते हैं, उसे खल रसपने परिणमते हैं, व शरीर बांधते हैं. और
 कितनेक जीव उस नरकावास से अथवा मारणान्तिक समुद्धात से पीछे फीरते हैं और जहां अपने शरीर
 हैं वहां आते हैं. आकर दूसरी वक्त मारणान्तिक समुद्धात से मरकर इस रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख
 नरकावासे में से किसी नरकावास में उत्पन्न होते हैं, फीर आहार करते हैं, खल रसपने परिणमते

शब्दार्थ (पंचमोत्रे) (पंचमोत्रे) (पंचमोत्रे) (पंचमोत्रे) (पंचमोत्रे)

सूत्र

भावार्थ

पीछे आ० आहारकर प० पारंगमान ए० - शरीर वं० वाधि ज० जैसे पु० पूर्व में म० मेरु प० पर्वत का आ०
 आलापक म० कहा ए० ऐसे दा० दक्षिण का ग० पश्चिम का उ० उत्तर का उ० ऊर्ध्व अ० अधो ज०
 जैसे पु० पृथ्वीकायिक त० तैसे ए० ऐकेन्द्रिय म० सब ए० एक का छ० छ आ० आलापक भा० कहना
 क्वस्स छ आलात्रया भाणियव्वा ॥ ४ ॥ जीवेणं भंते ! मारणंतिय समुग्धाएणं
 समोहए २ जे भविए असखेज्जेसु वेइंदियावास सय सहस्सेसु अण्णयरंसि वेइंदिया
 वासंसि वेइंदियत्ताए उववज्जित्तए, सेणं भंते ! तत्थगएचेव जहा नेरइया एवं जाव
 अणुत्तरोववाइया ॥ जीवेणं भंते ! मारणंतिय समुग्धाएणं समोहए २ जेमविए पंच
 अणुत्तरेसु महइ महालएसु महाविमाणेसु अण्णयरंसि अणुत्तरविमाणंसि अणुत्तरोववाइय
 देवत्ताए उववज्जित्तए सेणं भंते ! तत्थगएचेव जाव आहारोज्जवा परिणमेज्जवा सरिंवा बंधेज्जा
 जैसे पूर्व दिशा का कहा वैसे ही दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, ऊर्ध्व व अधो का जानना. पृथ्वीकाय के छ आ-
 लापक जैसे अए, तेउ, वायु, व वनस्पति का जानना ॥ ४ ॥ तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यच पंचेन्द्रिय, मनुष्य,
 प्राणव्यंतर इयोत्तिपी, व वैमानिक का नारकी जैसे जानना. अशो भगवन् ! जीव मारणान्तिक समुद्धात करके जो
 पांच अनुत्तर विमान में उत्पन्न होने योग्य होता है वह वहां उत्पन्न होकर क्या आहार करते हैं, खल-
 रसपने परिणमते हैं व शरीर वंधते हैं ? अशो गौतम ! कितनेक जीव वहां आहार ग्रहण करते हैं

पश्चिम दिशा (अधो) (अधो) (अधो) (अधो) (अधो) (अधो) (अधो) (अधो) (अधो) (अधो)

दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालामसादजी *

॥ ४ ॥ पूर्ववत् से० जैसे ही मं० भगवन् छ० छटा स० शतक में छ० छटा उ० उद्देशा ॥ ६ ॥ ६ ॥
 अ० अथ मं० भगवन् सा० शाल वी० व्रीहि गो० गेहुं ज० यव ज० जवार ए० इन ध० धान्य को
 को० कोठे में गुप्त प० वांस के टोपले में गुप्त मं० तृण के माले में उ० उपलिप्त लि० लिप्त पि० ढका हुआ मु०
 मुद्रित हुआ लं० लक्षित किया की के० कितना काल जो० योनि सं० रहती है गो० गौतम ज० जन्य
 अं० अंत मुहूर्त उ० उत्कृष्ट ति० तीन सं० सवत्सर ते० उस पीछे जो० योनि प० म्लान होवे ते० उस
 सेव० भंते भंतेचि पुढवि उद्देशओ सम्मत्तो ॥ छट्सए छट्टो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ६ ॥ ६ ॥

अह भंते ! सालीणं, व्रीहीणं, गोधूमाणं, जवाणं, जवजवाणं, एएसिणं धण्णाणं
 कोट्टाउत्ताणं, पद्दाउत्ताणं, मंचाउत्ताणं, मालाउत्ताणं, उलित्ताणं, लिच्चाणं, पिहियाणं
 मुद्धियाणं, लंछियाणं केवइयं कालं जौणी संचिट्ठइ ? गोयमा ! जहणं अंतोमुहुत्तं

रत्न रस पने परिणामते हैं व शरीर चांचते हैं और कितनेक वहां से पीछे स्व शरीर में आकर दूसरी वक्त मारणा
 निक सपुद्दात करके वहां उत्पन्न होते हैं और फीर आहागादि करते हैं. अहो भगवन् ! आप के
 रचन सत्य हैं. यह छटा शतक का छटा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ ६ ॥ ६ ॥

अहो भगवन् ! शाल, व्रीहि, गेहुं, यव व जवार इन धान्य को कोठा, पाला, मांचा, व माले में रखकर

ॐ शतक का सातवां उद्देश ॐ

पीछे जो योनि वि० विध्वंस होवे ते० उस पीछे वी० बीज अ० अवीज भ० होवे ते० उस पीछे जो योनि का वी० विच्छेदपना प० प्ररूपा स० श्रमण ॥१॥ अ० अथ भ० भगवन् क० चने म० मसुर ति० तिल मु० मूंग मा० उडद नि० बाल कु० कुलथी आ० चबले से० तुवर प० काले चने इ० इन ध० धान्या को ज० जैसे सा० शाली का त० तैमे ए० ऐसे न० विशेष पं० पांच सं० संवत्सर से० शेष तं० वैसे उक्कोसं तिणिण संवच्छराइं, तेणपरं जोणी पभिलायइ तेण परं जोणी विद्धंसइ, तेणं परं बीए अबीए भवइ, तेणं परं जोणी वोच्छेदे पन्नत्ते समणाउत्तो ! ॥ १ ॥ अह भंते ! कलाव, मसूर, तिल, मुग, मास, निष्फाव, कुलथ, आलिसंदग, संतीणं पलिसंथगमाईणं, एएसिणं धण्णाणं जहा सालीणं तथा एयाणित्रि णवरं पंच संव-

च्छराइं सेसं तंचेव ॥ २ ॥ अह भंते ! अयासि कुसुंभग, कोद्व, कगु, वरग, रालग, चारों तरफ से लीपे, अच्छी तरह ढके, मुद्रित करे, व रेखादिक के लक्षण करे तब उस की योनि कितने काल तक रहती है, ? अहो गौतम ! जघन्य अंतमुहूर्त उत्कृष्टं तीन वर्ष तक रहे. फीर योनि स्थान होती है, विध्वंस होती है और वीज अवीज होजाता है, और योनि का विच्छेद होजाता है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! चने, मसुर तिल, मुंग, उडद, बाल, कुलथी, चबले, तुवर व कालेचने इन धान्यों को कोठे आदि में भरकर अच्छी तरह से लीपे यावत् मुद्रित करे तब कितना काल तक रहे ?

शब्दार्थ

सुत्र

भावार्थ

(५५५)

ॐ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्देवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अ० अहोरात्रि ५० पक्ष दो० दो ५० पक्ष मा० मास दो० दो मास उ० ऋतु ति० तीन उ० ऋतु अ० अयन दो० अयन सं० सत्रत्तर पं० पांच स० संवत्तर जु० युग वी० वीसयुग वा० वर्षशत द० दश वा० वर्ष शत वा० वर्ष सहस्र स० सो वा० वर्ष सहस्र का वा० वर्ष लक्ष च० चौरासी व० वर्षलक्ष ए० एक ५० पूर्वांग च० चौरासी पु० पूर्वांग लक्ष ए० एक ५० पूर्वं ए० एसे तृ० तृटित अ० अडड अ० अपप हू० हूहूय उ० उत्पल ५० पत्र

वाससयं, दसत्रासतयाइं वाससहस्सं, सयं वाससहस्साणं वाससयसहस्सं, चउ-
रासीइं वास सयसहस्साणि से एगे पुव्वंगे, चउरासीतिं पुव्वंग सय सहस्साइं सेएगे-
पुव्वं; एवं तुडिए २, अडडे २, अपपे २, हूहुए २, उप्पले २, पउमे २, नल्लिणं २

वर्ष, चौरासी लक्ष वर्ष का एक पूर्वांग, चौरासी लक्ष पूर्वांगका एक पूर्व, चौरासी लाख पूर्व का एक तृटितांग
चौरासी लक्ष तृटितांग का एक तृटित, चौरासी लाख तृटितका एक अडडांग, चौरासी लक्ष अडडांगका एक
अडड, चौरासी लक्ष अडडका अपपांग, चौरासी लक्ष अपपांग का एक अपप, चौरासी लक्ष अपप का एक
हूहूतांग, चौरासी लक्ष हूहूतांग का एक हूहूत, चौरासी लक्ष हूहूत का एक उत्पलांग, चौरासी लक्ष उत्प-
लांग का एक उत्पल, चौरासी लक्ष उत्पल का एक पवांग, चौरासी लक्ष पवांग का एक पत्र, चौरासी
लक्ष पत्र का एक नल्लिणांग, चौरासी लक्ष नल्लिणांग का एक नल्लिण, चौरासी लक्ष नल्लिण का एक अ-
च्छिनित्रांग, चौरासी लक्ष अच्छिनित्रांग का एक अच्छिनित्र, चौरासी लक्ष अच्छिनित्र का एक

शब्दार्थ

सूत्र

भाषार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

न० नलिन अ० अच्छिणिऊर अ० अडय ए० एडय न० नउय चू० चूलिका सी० शीर्षपहेलिका ए० यह
 अ० गणित का वि० विषय ते० उस पीछे उ० उपमा ॥ ४ से० अथ किं० क्या उ० उपमा दु० दोषकार
 की प० पल्योपम सा० सागरोपम से से० अथ किं० क्या प० पल्योपम स० शत्रु से ति० तीक्ष्ण छे०
 छेदने को भे० भेदने को जं० जिसे न० नहीं कि० खरेखर स० शक्य तं० उसे प० परमाणु सि० केवली
 व० कहते हैं आ० आदि प० प्रमाण का अ० अनंत प० परमाणु पुद्गलों के स० समुदाय का स०

अच्छिणिऊरे २, अडए २, एडए २, नउएय २, चूलिय २, सीसपहेलिय २,

एयावयावगणियस्स विसए, तेणपरं उवमिए ॥ ४ ॥ से किं तं उवमिए दुविहे
 पणत्ते, तंजहा-पलिओवमेय, सागरोवमेय ॥ से किं तं पलिओवमे ? सत्थेणं सु-

तिक्खेणवि छेतुं भेतुं च जं न किरसक्का ॥ तं परमाणुं सिद्धा, वयंति आइं पमाणं
 ॥ १ ॥ अणंताणं परमाणुयोगगलाणं समुदय सामिति समागमेणं साएगा उसण्ह णि-

अडयांग एसे ही चौरासी लक्ष गुने करते अडय, एडयांग, एडय, नउयांग, नउय, चूलियांग, चूलिय,
 सीसपहेलियांग, सीसपहेलिय. वहांतक गणित का विषय है, इस से आगे मात्र उपमा है ॥ ४ ॥ उपमा
 दो प्रकार की पल्योपम व सागरोपम. उस में से पल्योपम की उपमा बतलते हैं. तीक्ष्ण शत्रुसे भी जो भेदावे
 नहीं, छेदावे नहीं उस परमाणुको केवली भगवन्त आदि प्रमाण कहते हैं. अर्थात् प्रमाणों की आदि परमाणु से है.

मीलने के स० समागम से सा० वह ए० एक उ० ओसन्न सन्निय स० शीत सन्निया उ० ऊर्ध्वरेणु त०
 त्रसरेणु र० रथरेणु वा० बालाग्र लि० लीख जू० यूका ज० यवमध्य अं० अंगूल अ० आठ उ० ओसन्न
 सन्निया का ए० एक म० शीतसन्निया अं० आठ शीतसन्निया का ए० एक उ० ऊर्ध्वरेणु
 दे० देवकुरु उ० उत्तरकुरु के म० मनुष्यों का वा० बालाग्र ए० ऐसे ह० हरिवास र० रम्यक हे० हेमवय
 याइवा, सण्हसण्हियाइवा उद्धरेणुइवा, तसरेणुइवा, रहरेणुइवा, बालगाइवा, लिखवा
 इवा, जूयाइवा, जवमज्जेइवा, अंगुलेइवा, अट्ट उसण्हसण्हियाओ साएगा सण्हसण्हिया
 अट्टसण्हसण्हियाओ साएगा उद्धरेणु, अट्ट उद्धरेणुओ साएगा तसरेणु अट्ट तसरेणुओ साएगा
 रहरेणु, अट्टरहरेणुओ से एगे देवकुरु उत्तरकुरुगाणं मणसाणं बालगो, एवं हरिवासरम्मग,
 यह परमाणु मूक्ष्य शस्त्रे भे भी भेदा नहीं जाता है. ऐसे अनंत परमाणुओं का एक उसन्नसन्निया होता
 है, आठ उमन सन्निया का एक शीतसेणीया होवे, आठ शीतसेणीयाका का एक एक ऊर्ध्वरेणु,
 आठ ऊर्ध्वरेणु का एक त्रसरेणु (पूर्वादिवायु से प्रेरित) आठ त्रसरेणु का एक रथरेणु, आठ रथरेणु
 का देवकुरु उत्तरकुरु शैत्रोत्पन्न मनुष्य का एक बालाग्र, देवकुरु उत्तरकुरुक्षेत्र के मनुष्य के आठ बालाग्र
 जितना एक हरिवर्ष रम्यकवर्ष मनुष्य का बालाग्र, हरिवर्ष रम्यकवर्ष मनुष्य के आठ बालाग्र जितना
 हेमाय परणवय मनुष्य का एक बालाग्र, हेमवय परणवय मनुष्य के आठ बालाग्र जितना पूर्व पश्चिम

ए० प्रणवय पु० पूर्व. विदेह अ० पश्चिम विदेह म० मनुष्यों के अ० आठ बा० बालाग्र ए० एक लि०
लीख अ० आठ लि० लीख की ए० एक जू० यूका अ० आठ जू० यूका का ए० एक ज० यवमध्य
अ० आठ ज० यवमध्य का ए० एक अं० अंगूल प्रमाण इ० इन अ० अंगूल प्रमाण से छ० छ अंगूल
का पा० पाँच बा० बारह अं० अंगूल की वि० वेत च० चौबीस अं० अंगूल की र० हाथ अ० अडतालीस
अं० अंगूल की कु० कुक्षि छ० छन्नु अं० अंगूल के ए० एक दं० दंड घ० धनुष्य जु० धोसरं ना०

हेमवएरन्नवयाणं, पुव्वविदेहाणं मणूसाणं अट्ट बालगगा साएगा लिक्खा, अट्ट लिक्खाओ

सा एगा जूया, अट्टजूयाओ साएगा जवमज्जे अट्ट जवमज्जाओ से एगे अंगुले एएणं

अंगुलप्पमाणेणं, छअंगुलाणि पादो, बारस अंगुलाइं विहत्थी, चउवीस अंगुलाइं रयणी

अडयालीसं अंगुलाइं कुच्छी, छणउइ अंगुलाणि से एगे दंडेइवा धणूइवा जुएइवा

नालियाइवा, अक्खेइवा, मुसलेइवा एएणं धणुप्पमाणेणं दो धणुसहस्साइं गाउयं,

महाविदेह क्षेत्र के मनुष्य का बालाग्र, पूर्वपश्चिम महाविदेह क्षेत्र के मनुष्य के आठ बालाग्र जितनी एक

लिख, आठलिख जितनी एक यूका, आठ यूका जितना एक यवमध्य, आठ यवमध्य जितना एक अंगूल,

छ अंगूल का एक पाँच, बारह अंगूल की एकवेत, चौबीस अंगूल का एक हाथ, अडतालीस अंगूल की

एक कुच्छी [कुक्षि] छिन्नु अंगुलके धनुष्य, दंड, गाडी का धूसरा, लट्टि, गाडे के चक्र का आरा व

Handwritten text in a cursive script, likely a historical document or manuscript. The text is written in a dark ink on aged paper and is oriented vertically. It appears to be a list or a series of entries, possibly related to a legal or administrative record. The script is dense and difficult to decipher without specialized knowledge of the language or dialect used.

करे आ० आयुष्य क० कर्म सि० कदाचित् वं० बांधे सि० कदाचित् नो० नहीं वं० बांधे अ० असाता
 वे० वेदनीय क० कर्म को भु० वारंवार उ० इकठाकरे अ० अनादी अ० अनंत दी० दीर्घकाल
 चा० चातुंगी सं० संसार कंतार में अ० परिभ्रमणकरे से० उसको ते० इसलिये गो० गौतम अ० अ-
 संवृत अ० अनगार णो० नहीं सि० सिद्धे ॥ ४३ ॥ सं० संवृत अ० अनगार सि० सिद्धे हं० हा
 सिय बंधइ सिय नो बंधइ, असाया वेयणिजं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणइ,
 अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतं संसार कंतारं अणुपरियट्ठति । से तेणट्ठेणं
 गोयमा ! असंवुडे अणगारे णो सिज्झइ ॥ ४३ ॥ संवुडेणं भंते अणगारे सिज्झइ ?
 हंता सिज्झइ जाव अंतं करेइ ॥ सेकेणट्ठेणं भंते एवं बुच्चइ ? गोयमा ! संवुडेणं
 कर्मो को दीर्घ काल की स्थितिभले वनाता है मं३ रस देनेवाले कर्मोको तोत्रास देनेवाला करता है, अ-
 ल्प प्रदेशात्मक कर्मो को बहुत प्रदेशात्मक कर्म करता है. आयुष्य कर्म का वंघ किसि समय करता है किसि-
 समय नहीं करता है, असाता वेदनीय कर्म पुनःपुनः संचित करता है, और अनादि अनंत संसार कंतार में
 परिभ्रमण करता है; इसलिये अहो गौतम ! असंवृत अनगार सिद्धे नहीं, यावत् संसार का अंतकरे नहीं.
 ॥ ४३ ॥ अहो भगवन् ! आश्रमद्वार का रुंधन करनेवाला संवृत अणगार क्या सिद्धे यावत् अंतकरे ? हां
 गौतम ! संवृत अणगार सिद्धे यावत् अंत करे भगवन् ! किस कारन से संवृत अणगार सिद्धे यावत् अंत

क्रोड १० हेवे द० दशगुने तं० वह सा० सागरोपम का ए० एक भ० हेवे ५० परिमाण ए० इन सा० सागरोपम का ५० प्रमाण से च० चार सा० सागरोपम क्रोडा क्रोड का का० काल सु० सुपम सुपमा ति० तीन सा० सागरोपम को० कोडा कोडी का० काल सु० सुपम दो० दो० सागरोपम को० क्रोडा कोड का० सु० सुपम दुपम ए० एक सा० सागरोपम को० क्रोडा क्रोड में वा० वीयालीस वा० वर्ष सहस्र उ० कम का० काल दु० दुपम सुपमा ए० इक्कीस वा० वर्ष सहस्र का० काल दु० दुपम ए० इक्कीस वा० वर्ष रोवमकोडाकोडीओ कालो सुसमदुसमा, एगा सागरोवमकोडाकोडीओ वायालीसए वाससहरसेहिं जणिया कालो दुसम सुसमा, एकवीसं वाससहरसाइं कालो दुसमा, एकवीसं वाससहरसाइं कालो दुसमदुसमा, पुणरत्रि उरसपिणीए एकवीसं वाससहरसाइं कालो दुसमदुसमा, एकवीसं वाससहरसाइं कालो दुसमा जाव चत्तारि होता है, एक क्रोडाक्रोड सागरोपम में वीयालीस हजार वर्ष कम का चौथा दुपम सुपम, इक्कीस हजार वर्ष का दुपम और इक्कीस हजार वर्ष का दुपम नामक छठा आरा होता है. ऐसे ही उरसपिणी काल के छ आरे इक्कीस हजार वर्ष का दुपमादुपम, इक्कीस हजार वर्ष का दूमरा दुपम, वीयालीस हजार वर्ष कम एक क्रोडाक्रोड सागरोपम का दुपम सुपम नामक तीसरा, दो क्रोडाक्रोड सागरोपम का सुपम दुपम. तीन क्रोडाक्रोड सागरोपम का सुपम और चार क्रोडाक्रोड सागरोपम का सुपमसुपम. इस

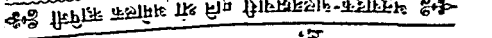
हुवा सं० खंड से भरा हुआ भ० भरा हुआ वा० बालाग्र को० क्रोड ते० उन वा० बालाग्र को नो० नहीं
 अ० अग्नि ड० जलावे नो० नहीं वा० वायु अ० लेजावे नो० नहीं कु० खण्ड हेवे नो० नहीं प० विध्वंस
 होवे नो० नहीं पू० पूतिभाव को हं० शीघ्र आ० आवे त० पीछे वा० वर्षशत ए० एक २ वा० बालाग्र
 अ० लेकर के जा० जितने का० काल में से० वह प० पाला खी० क्षीण नी० रज रहित नि० निर्मल नि०
 निष्ठित, अ० अपहृत वि० विशुद्ध भ० हेवे से० वह प० पत्योपम ए० इन प० पत्यकी को० क्रोडा
 हव्वमागच्छेज्जा; तओणं वात्ससए२ एगमेगं बालगं अवहाय जात्रइएणं कालेणं
 सेपुल्ले खीणे नीरये निम्मले निट्टिए, निल्लेत्ते, अत्रहडे, विसुद्धे भवइ, से तं पलि-
 ओवमे गाहा-एएसिणं पल्लाणं कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणिया ॥ तं सागरोवमस्स, एक्कस्स
 भवे परीमाणं ॥ १ ॥ एएणं सागरोवमपमाणेणं चत्तारिसागरोवमकोडाकोडीओ
 कालो सुत्समसुत्तमा ॥ तिणिण सागरोवमकोडाकोडीओ कालो सुत्तमा, दो साग-
 सो वर्ष में एक २ बालाग्र नीकालते जितने समय में वह पाला संपूर्ण खाली, रज रहित, निर्मल, निर्लेप
 होजाता है उतने कालको एक पत्योपम कहते हैं. ऐसे दश क्रोडाक्रोड पत्योपम का एक सागरोपम
 होता है, ऐसे चार क्रोडाक्रोड सागरोपम का एक सुपमासुपम आरा होता है, तीन क्रोडाक्रोड सागरो-
 पम का सुवम नामक दूररा आरा होता है, सुपमदुषम नामक दो क्रोडाक्रोड सागरोपम का तीसरा आरा

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

मे० अथ ज० जैसे अ० मादल ए० ऐसे उ० उत्तरकुरु व० वक्तव्यता ने० जानना जा० यावत् आ०
आस्त्रादे ती० उस स० समय भा० भरत वर्ष में त० वहां २ दे० देशविभाग में व० बहुत उ० उदार
को० कोद्रज जा० यावत् कु० कुश विकुश वि० विशुद्ध रु० वृक्षमूल जा० यावत् छ० छमकार के म०
मनुष्य अ० अनुसक्तवंत तं० वह ज० यथा प० पद्मगंधवाले मि० मृगगंध वाले अ० अममत्वी ते०
तेजस्वी स० समर्थ स० शनैः चलने वाले से० वैसे भं० भगवन् छ० छठा स० शतक का स० सातवा

जहानामए आलिंगपुक्खरेइवा, एवं उत्तरकुरुवत्त्वया नेयव्वा जाव आसयंति,
सयंति ॥ तीसरेण समाए भारेहवासे तत्थ २ देसे २ तहिं बहवे उद्वाला कोद्वाला
जाव कुसधिकुसविसुद्धरुक्खमूला जाव छव्विहा मणुस्सा अणुसाजिञ्झत्था तंजहा—
पम्हगंधा, मियगंधा, अममा, तेयली, सहा, सणिंचारी सेवं भंते भंतेत्ति ॥ छट्टुसए

वैसे ही भरतक्षेत्र का भूमिभाग था. उस स्थान में अनेक प्रकार के शाल क्रोद्रव के वृक्ष थे. उन के
मूल कूश विकुशादि रहित थे और मूल स्कंध, शाखा, प्रतिशाखा, पत्र, पुष्प व फलादि से अत्यंत
सुशोषित थे. उस में छ प्रकार के मनुष्य उत्पन्न हुये. पद्म कमल जैसी गंधवाले, मृगमद जैसी गंधवाले,
ममकार रहित, तेजस्वी, समर्थ और भद्रचालवाले. इस आरे का शेष वर्णन देवकुरु उत्तरकुरु जैसे जानना
और अन्य आरों का विवरण जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति से जानना. अहो भगवन् ! आपके वचन सत्य हैं. यह



उ० उद्देशा स० समाप्त ॥ ६ ॥ ७ ॥

क० कितनी भ० भगवन् पु० पृथ्वी प० प्ररूपी गो० गौतम अ० आठ पु० पृथ्वीयों प० कहीं र०
रत्न प्रभा जा० यावत् ई० ईपत् प्रागभार ॥ १ ॥ अ० है भ० भगवन् इ० इस र० रत्नप्रभा पु० पृथ्वी की
अ० नीचे गे० गृह गे० दुकानों गो० गौतम णो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ ॥ २ ॥ अ० है भ०

सत्तमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ६ ॥ ७ ॥

कइणं भंते पुठवीओ पणत्ताओ ? गोयमा ! अट्ट पुठवीओ पणत्ताओ, तंजहा-
रयणप्पमा जाव ईसिप्पमारा ॥ १ ॥ अत्थिणं भंते ! इमीसे रयणप्पमाए पुठवीए
अहे गेहाइवा, गेहावणाइवा ? गोयमा ! णोइणट्ठे समट्ठे ॥ २ ॥ अत्थिणं भंते !

छठा शतक का सातवा उद्देशा संपूर्ण हुवा ॥ ६ ॥ ७ ॥

मातवे उद्देशे में भरतक्षेत्र का वर्णन कहा. आठवें उद्देशे में पृथ्वी का वर्णन करते हैं. अहो भगवन् !
पृथ्वी कितनी कही ? अहो गौतम ! आठ पृथ्वीयों कहीं. रत्नप्रभा, अहो भगवन् ! अहो भगवन् !
व ईपत्प्राग्भार ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी की नीचे क्या गृह व दुकानों हैं ? अहो
गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी की नीचे ग्राम यावत्

द्वयमनं विद्या पण्णा (यगवत्)

वनस्पति क० कल्प उ० उपरके क० कृष्णराजी में ॥ १० ॥ क० कितने प्रकार का भ० भगवन् आ०
 णो इण्टे समंठे, णणत्थ विग्गहगइ समावण्णएणं । अत्थिणं भंते ! चंदिम जात्र
 तारारूवा ? गाथमा ! णो इण्टे समंठे । अत्थिणं भंते ! गामाइवा जात्र सन्निवे-
 साइवा ? गोथमा ! णो इण्टे समंठे ॥ अत्थिणं भंते ! चंदा भाइत्ता ? गोथमा !
 नो इण्टे समंठे एवं सणकुमारमाहिंसेसु णत्रं देवो एगो पकरेइ ॥ एवं बंस-
 लोएत्ते एवं बंभलोगस्स उवारि सव्वहिं देवो पकरेइ पुच्छियव्वोय, बायरे आउकाए,
 बायरे अगणिकाए, बायरे वणस्सइकाए, अण्णं तं चेव गाहा-तमुकाय कप्पपणए,

वहां वादर पृथ्वीकाय व वादर अशिकाय नहीं है परंतु विग्रहगति आश्री वहां जीव मिलते हैं. अहो
 भगवन् ! क्या वहां चंद्र यावत् तारं रहे हुवे है ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. अहो भगवन् !
 क्या वहां ग्राम यावत् संनिवेश हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. अहो भगवन् ! क्या सौधर्म
 ईशान देवलोक में चंद्रकी कान्ति व सूर्य की कान्ति है ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. जैसे
 सौधर्म ईशान का कहा जैसे ही सनत्कुमार माहेंद्र का जानना. इस में मात्र देवही उपर जासकते हैं
 परंतु असुर व नाग नहीं जासकते हैं, इसलिये मात्र देवही पानी की दृष्टि व शब्द करते हैं. इसी प्रकार
 ब्रह्म देवलोक से अच्युत देवलोकतक का जानना. वारह देवलोक में मात्र देव ही हैं उपर के देवों
 वक्रय नहीं करते हैं इसलिये वहां वैसा शब्द व मेघ नहीं है, पांचवा ब्रह्म देवलोक से उपर के सब विमानों

शब्दार्थ (१०)

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-शानावहादुर लाला सुखदेवसहायजी बालाप्रसादजी *

निर्वाणपामे स० सर्व दुःख का अंत करे गो० गौतम णो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ से० वह के० कैसे भं० भगवन् जा० यावत् अंत न० नहीं क० करे गो० गौतम अ० असंवृत अनगार आ० आयुष्य य० वर्जकर स० सात कर्म प्रकृति सि० शिथिल वं० बंधन व० बंधिहुइ को ध० निकाचित वं० बंधनसे य० बद्ध प० करे ह० ह्रस्वकाल की ठि० स्थिति को दी० दीर्घकाल की ठि० स्थिति प० करे मं० मंद अनुभाग को ति० तीव्र अनुभाग प० करे अ० अल्प प्रदेश को व० बहुत प्रदेश प० णोइण्टे समष्टे ॥ से केणट्टेणं मंते जाव अंतं न करेति ? गोयमा ! असंबुडे अण-

गारे आउय वजाओ सत्तकम्म पगडीओ सिद्धिलबंधणबद्धाओ धणिय बंधण बद्धाओ पकरेइ; हस्सकालट्टितीयाओ दीहकालट्टितीयाओ पकरेइ; मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ, अप्प पदेसगाओ बहुपदेसगाओ पकरेइ, आउयंचणं कम्मं व सव दुःखों का अंत करे ! अहो गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् ऐसा नहीं होता है. पुनः गौतम स्वामी प्रश्न करते हैं कि अहो भगवन् ! किस कारणसे असंष्टत अणगार सिद्धे नहीं, बुद्धे नहीं यावत् सव दुःख का अंतकरे नहीं? अहो गौतम ! असंवृत अणगार आयुष्ये कर्म छोडकर अन्य सात कर्म की प्रकृतियों का शिथिल बंधन हुवा हेवे तो उन का निकाचित बंध करता है, ह्रस्व कालकी स्थिति वाले

१ आयुष्य कर्मका बंध भव आश्रित एकही बन्तहोताहै.

निधरा आ० आयुष्यबंध ॥ ११ ॥ पूर्ववत् ॥ ११-१२ ॥ ल० लवण स० समुद्र कि० क्या उ० ऊंचापानी
 ओगाहणा नामनिहत्ताउए, पएसनामनिहत्ताउए, अणुभागनामनिहत्ताउए, दंडओ
 जाव वेमाणियाणं ॥ १३ ॥ जीवेणं भंते ! किं जाइनामनिहत्ता जाव अनुभाग
 नामनिहत्ता ? गोयमा ! जाइ नामनिहत्तावि जाव अणुभागनामनिहत्तावि, दंडओ
 जाव वेमाणियाणं ! जीवाणं भंते ! किं जाइनाम निहत्ताउया जाव अणुभागनाम
 निहत्ताउया ? गोयमा ! जाइनामनिहत्ताउयावि जाव अणुभागनामनिहत्ता-

एक भव में रहने का काल का बंध सो स्थितिनामनिधरा आयुष्य बंध ४ औदारिकादि शरीर प्रमाण
 का बंध सो अवगाहना नाम निधरा आयुष्य बंध ५ आयुष्य कर्म के तथाविध प्रणित जो प्रदेश का
 बंध सो प्रदेश नाम निधरा आयुष्य बंध, और ६ आयुष्य द्रव्य का विपाक सो अनुभाग नाम निधरा आयुष्य
 बंध, यह छमकार का आयुबंध चौबीस ही दंडक में पाता है ॥ ११ ॥ अहो भगवन् ! एक नीवने एके-
 न्द्रियादि जातिका बंध किया उसे जाति नाम निधरा क्या कहना ? अहो गौतम ! जिसे जातिनाम का बंध
 किया, उसे जातिनामनिधरा कहना, जाति नामनिधरा जैसे गति, रियाति, अवगाहना, प्रदेश व
 अनुभाग के छ दंडक जानना, अहो भगवन् ! अरेक जीवने जिस प्रकार एकेन्द्रियादि जाति
 नाम का बंध किया उसे क्या जाति नाम निधरा आयुष्य कहना ? अहो गौतम ! अरेक जीवने जाति

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुबद्रवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

आयुष्य बंध प० मरूपा गो० गौतम छ० छ प्रकार का आ० आयुष्यबंध जा० जातिनाम निघत्त आ०
आयुष्यबंध ग० गतिनाम निघत्त आ० आयुष्यबंध ठि० स्थितिनाम निघत्त आ० आयुष्यबंध ओ०
अवगाहन नाम निघत्त आ० आयुष्यबंध प० प्रदेश नाम निघत्त आ० आयुष्यबंध अ० अनुभाग नाम

अंगीणी पुढवीय अगणि पुढवीसु ॥ आउतेउ वणस्सइ, कप्पुवरंमि कण्हराईसु

॥ १० ॥ कइविहेणं भंते ! आउयबंधे पणत्ते ? गोयमा ! छव्विहे आउयबंधे

पणत्ते, तंजहा--जाइनाम निहत्ताउए, मतिनाम निहत्ताउए, ठिइनाम निहत्ताउए

में वादर अप्काय, वादर अशिकाय व वादर वनस्पतिकाय नहीं है यह विशेषता है. नवग्रहैयक से इपत्
माण्मार पृथ्वीतक वर्णन नहीं लिया है, परंतु इस का निषेध जानना. तमस्काय वैसेही सौधमादि पांच
देवलोक में अशिकाय व पृथ्वीकाय का प्रश्न, सातों पृथ्वीयों में अशिकाय का प्रश्न, और उपर के देवलोक
में अप्काय, तेउकाय व वनस्पतिकाय का प्रश्न कहा है: ॥ १० ॥ पृथिव्यादि जीव आयुष्य सहित हति
है इसलिये आयुष्य का प्रश्न करते हैं. अहो भगवन् ! आयुष्य का बंध कितने प्रकार का कहा ? अहो
गौतम ! आयुष्य का बंध छ प्रकार का कहा है. एकेन्द्रियादि पांच प्रकार के जातिरूप नामकर्म की उत्तर
प्रकृति विशेष अथवा जीव परिणामकी साथ प्रतिसमय कर्म पुद्गलका अनुभव के लिये जो आयुष्य बांधनेमें
आवे सो जाति नाम निघत्त आयुष्य २ नरकादिगति का आयुष्यबंध करे सो गति नाम निघत्त आयुष्य ३

निधत्ता आ० आयुष्यबंध ॥ ११ ॥ पूर्ववत् ॥ ११-१२ ॥ ल० लवण स० समुद्र किं० क्या उ० ऊंचापानी
 ओगाहणा नामनिहत्ताउए, परसनामनिहत्ताउए, अणुभागनामनिहत्ताउए, दंडओ
 जाव वेमाणियाणं ॥ १३ ॥ जीविणं भंते ! किं जाइनामनिहत्ता जाव अनुभाग
 नामनिहत्ता ? गोयमा ! जाइ नामनिहत्तावि जाव अणुभागनामनिहत्तावि, दंडओ
 जाव वेमाणियाणं ! जीवाणं भंते ! किं जाइनाम निहत्ताउया जाव अणुभागनाम
 निहत्ताउया ? गोयमा ! जाइनामनिहत्ताउयावि जाव अणुभागनामनिहत्ता-
 एक भव में रहने का काल का बंध सो स्थितिनामनिधत्ता आयुष्य बंध ४ औदारिकादि शरीर प्रमाण
 का बंध सो अवगाहना नाम निधत्ता आयुष्य बंध ५ आयुष्य कर्म के तथाविध प्रणित जो प्रदेश का
 बंध सो प्रदेश नाम निधत्ता आयुष्य बंध, और ६ आयुष्य द्रव्य का विपाक सो अनुभाग नाम निधत्ता आयुष्य
 बंध. यह छप्रकार का आयुबंध चौबीस ही दंडक में पाता है. ॥ ११ ॥ अहो भगवन् ! एक जीवने एके-
 न्द्रियादि जातिका बंध किया उसे जाति नाम निधत्ता क्या कहना ? अहो गौतम ! जितने जातिनाम का बंध
 किया, उसे जातिनामनिधत्ता कहना. जाति नामनिधत्ता जैसे गति, रिथति, अवगाहना, प्रदेश व
 अनुभाग के छ दंडक जानना. अहो भगवन् ! अनेक जीवोंने जिस प्रकार एकेन्द्रियादि जाति
 नाम का बंध किया उसे क्या जाति नाम निधत्ता आयुष्य वचना ? अहो गौतम ! अनेक जीवोंने जाति

उयात्रि ॥ दंडओ जाव वेसाणियाणं एवं एए दुवालस दंडगा भाणियव्वा ॥ ११ ॥
 ज्रीवाणं भंते ! किं जाइ नाम निहत्ता, जाइनामनिहत्ताउया, जाइनामनिउत्ता,
 जाइनामनिउत्ताउया, जाइगोयनिहत्ता, जाइगोयनिहत्ताउया, जाइगोयनिउत्ता,
 जाइगोयनिउत्ताउया, जाइनामगोय निहत्ता, जाइनामगोयनिहत्ताउया जाइ-
 नामगोयनिउत्ता, जाइ नामगोय निउत्ताउया जाव अणुभाग नामगोय निउत्ताउया ?

नाम का बंध क्रिया उन्हे भी जाति नाम निधत्ता कहना. अनेक जीवों के जाति नाम निधत्त समान गति स्थिति, अवगाहना, प्रदेश व अनुभाग का जानना. इस तरह एक जीव व अनेक जीव के बारह दंडक चौबीस ही दंडक पर उतारना ॥११॥ १ एक जीव सामान्य जातिका आयुष्य बंध करे २ बहुत जीव सामान्य जाति का आयुष्य बंध करे ३ एक जीव उत्तम जाति का आयुष्य बंध करे, ५ एक जीव जाति की साथ नीच गोत्र का आयुष्य बंध करे ६ बहुत जीव जाति की साथ नीच गोत्र के आयुष्य का बंध करे ७ एक जीव जाति की साथ उच्च गोत्र के आयुष्य का बंध करे ८ बहुत जीव जाति की साथ उच्च गोत्र के आयुष्य का बंध करे ९ एक जीव जाति की साथ नीच नाम व गोत्र के आयुष्य का बंध करे १० बहुत जीव जाति की साथ नीच नाम व गोत्र के आयुष्य का बंध करे ११ एक जीव जाति की साथ उच्च नाम व गोत्र के आयुष्य का बंध करे १२ बहुत जीव जाति की साथ

वाला, प० प्रस्तरोदक वाला खु० धुब्बजल वाला अ० अक्षुब्ध जल वाला गो० गौतम ल० लवण समुद्र उ० ऊंचापानी वाला प० प्रस्तर उदक वाला खु० धुब्ब जल वाला नो० नहीं अ० अक्षुब्ध जल वाला ए० यहाँ आ० लेकर ज० जैसे जी० जीवाभिगम में जा० यावत् से० वह ते० इसलिये गो० गौतम बा० बाहिर के दी० द्वीप समुद्र पु० पूर्ण पु० पूर्ण प्रमाण त्रि० उल्लसते वो० उल्लासपामते स० समान य० यडे

गोयमा ! जाइनामगोयनिउत्ताउयात्रि जाव अणुभागनामगोयनिउत्ताउयात्रि, दंडओ

जाव वेमाणियाणं ॥ १२ ॥ लवणेणं भंते ! समुद्दे किं उरिसओदए, पत्थडोदए,

खुभियजले, अक्खुभिय जले ? गोयमा ! लवणेणं समुद्दे उरिसओदए नो पत्थ-

डोदए, खुभियजले, नो अखुभियजले, एत्तां आढत्तां जहा जीवाभिगमे, जाव से

केणट्टेणं ? गोयमा ! बाहिरयाणं दीवसमुद्दा पुण्णा पुण्णप्पमाणा, वोलट्टमाणा, वोस-

उच्च नाम व गोत्र के आयुष्य का बंध करे. यह बारह दंडक जाति आश्रित हुए. वैसे ही अनुभागतक

छ बोल का जानना. इस तरह १२+६ ७२ दंडक होते हैं ॥ १२ ॥ अहो भगवन् ! लवण समुद्र में

क्या पानी की वृद्धि होती है, या पानी बराबर रहता है अथवा लवणसमुद्र धुब्ब रहता है या शान्त

रहता है ? अहो भगवन् ! लवण समुद्र में पानी उपर चढता है क्योंकि सोलह हजार योजन का

ऊंचा पानी का दगमाल है, इसलिये सम पानी नहीं. वैसे ही उत का जल धुब्ब है परंतु शान्त नहीं है.

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

वि० रहते हैं सं० संठान से ए० एक प्रकार का वि० स्वरूप वि० विस्तार से अ० अनेकविध वि० स्वरूप दु० दुगुने दु० दुगुने प्रमाण के जा० यवत् अ० इम ति० तिर्यक् लोकमें अ० असंख्यात दी० द्वीप समुद्र म० स्वयंभू रमण समुद्र प० छेछा प० प्ररूपा स० आयुष्यमान् श्रमण ॥ १३ ॥ दी० द्वीप ए० समुद्र के भं० भगवन् के० कितने ना० नाम प० प्ररूपे गो० गौतम जा० जितने लो० लोक में सु०

दृमाणा, समभरघडत्ताए चिद्वृत्ति, संठाणओ एगविहिविहाणा वित्थारओ अणेगविहि-
विहाणा दुगुणा दुगुणप्पमाणाओ, जात्र अस्सि तिरियलाए असंखज्ज दीवसमुद्दा स-
यंभुरमणपज्जवसाणा पणत्ता समणाउत्तो ॥ १३ ॥ दीवसमुद्धानं भंते ! केवइया
नामधेज्जेहि पणत्ता ? गोयमा ! जावइया लोए सुभा नामा, सुभारूवा, सुभागंधा;

और मत्र अधिकार जीवाभिगम मूत्र जैसे जानना यावत् बाहिर के द्वीप समुद्र किनारे तक पानी से पूर्ण भरे हुए हैं, उबरा हुआ पानी है, चारों तरफ विखरता है, परा हुआ घडा समान रहा है, बूड़ी के आकारवाला है, चौड़ाईमें एक २ एकमे दुगुने हैं, इस तरह तीच्छे लोकमें द्वीप समुद्र रहे हुवे हैं. उसमें छेछा समुद्र स्वयंभूरपण है ॥ १३ ॥ अहो भगवन् ! द्वीप समुद्र के कितने नाम हैं ? अहो गौतम ! इस लोक में जितने शुभ नाम के, शुभ रूत के, शुभ रस के, व शुभ स्वर्श के पदार्थों हैं. उतने नाम के सब द्वीप समुद्र हैं. और एक २ नाम के अनेक द्वीप समुद्र हैं. यहिले पल्योपम

शुभनाम सु० शुभरूप सु० शुभवांश सु० शुभरस सु० शुभस्पर्श ए० इतने दी० द्वीप स० समुद्र ना० नाम
प० प्ररूपे ए० ऐसे ने० जानना सु० शुभनाम उ० उद्धार प० परिणाम स० सर्व जीवों का से० ऐसे भं०
भगवन् छ० छठा शतक का अ० आठवा उ० उद्देशा स० समाप्त ॥ ६ ॥ ८ ॥

जी० जीव भं० भगवन् ना० ज्ञानावरणीय क० कर्म भं० वांशते क० कितनी क० कर्मप्रकृति वं०
सुभारसा, सुभाफासा, एवइयाणं दीव समुदा नामधेजेहिं पणत्ता, एवं नेयव्वा
सुमानामा उद्धारो परिणामो सन्व जीवाणं सेत्रं भंते भंतंत्ति, ॥ छट्टसयस्स
अट्टमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ६ ॥ ८ ॥ +

जीविणं भंते ! नाणावरणिज्जं कम्मं वंश्रमाणे कइ कम्मप्पगडीओ वंशइ ? गोयमा !

का स्वरूप वतानेवाला पाला में बालाग्र भरनेका जो दृष्टांत कहा उस पाले में से समय २ में एक २ खण्ड
नीकालते उद्धापत्य होवे ऐसे दश क्रोडाक्रोड कुवा खाली होवे तब उद्धा सागरोपम होवे, ऐसे
अडाइ सागरोपम के जितने समय होते हैं उतने ही द्वीप समुद्र होते हैं. इन में सब जीव अनेक वक्त
उत्पन्न हुवा. अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य हैं. यह छठा शतक का अठवा उद्देशा समाप्त हुवा ॥६॥८॥

गत उद्देशे के अन्त में उत्पन्न होने का कहा. उत्पन्न होना कर्म से होता है इसलिये कर्मवन्ध का अ-
धिकार कहते हैं. अहो भगवन् ! जीव ज्ञानावरणीय कर्म वांशता हुवा कितनी कर्म प्रकृतियों का वंश

* मकाशक-रानावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालामुखी *

वांघे गो० गौतम स० सात वं० वांघे अ० आठ वं० वांघे इ० वंघ उ० उद्देशा ने० जानना ॥ १ ॥ दे० देव भे० भगवन् म० महर्दिक जा० यावत् म० महानुभाव वा० बाह्य पो० पुद्गल अ० विनाग्रहण क्रिये प० समर्थ-ए० एक वर्ण ए० एक रूप वि० विकुर्वणा करने को गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ स० योग्य ॥ २ ॥ दे० देव भे० भगवन् वा० बाह्य पो० पुद्गल प० ग्रहण कर म० समर्थ हे० हां प० समर्थ

सत्त्वाविह बंधएवा, अट्टविह बंधएवा, छव्विह बंधएवा, बंधुहेत्तो पणवणाए नेयन्वो

॥ १ ॥ देवेणं भंते ! महिड्डीए जाव महाणुभाए बाहिएए पोगले, अपरियाइत्ता पभू एगवणं, एगरूवं विउव्वित्तए ? गोयसा ! तो इण्ठे समेट्ठे ॥ २ ॥ देवेणं भंते !

करता है ? अहो गौतम ! बंघि सात प्रकार की व आठ प्रकार की कर्मप्रकृतियों का बंध करता है, जब आयुष्य कर्म का बंध नहीं करता है तब सात, आयुष्य कर्म का बंध करता है तब आठ, और दशवे गुण स्थान में मोहनीय और आयुष्य दोनों कर्मों का बंध नहीं करता है तब छ कर्म प्रकृतियों का बंध करता है, इस का विशेष अधिकार पन्नवणा सूत्र के चौबीसवे पद में कहा है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! महा ऋद्धिंतं यावत् महानुभाग देव बाहिर के पुद्गलों ग्रहण क्रिये विना क्या एक वर्ण एकरूप (एक सरीला आकारवाला शरीरादि) बनाने को क्या समर्थ है ? अहो गौतम ! यह अर्थयोग्य नहीं है, अर्थात् देव इस तरह वैकल्प बनाने को समर्थ नहीं है ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! क्या महर्दिक यावत् महाजु

से० वह भं० भगवन् किं० क्या इ० यहाँ रहेहुवे पो० पुद्गल प० ग्रहण कर वि० विकुर्वणाकरे त० तहाँ रहेहुवे पो० पुद्गल प० ग्रहणकर वि० विकुर्वणाकरे अ० अन्यत्र रहेहुवे पो० पुद्गल प० ग्रहणकर वि० विकुर्वणाकरे गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ म० योग्य ॥ ३ ॥ दे० देव भं० भगवन् म० महर्द्धिक

बाहिए ए पुगले परियाइत्ता पभू । हंता पभू । से णं भंते ! किं इहगए योगले परियाइत्ता विउव्वइ, तत्थगए पोगले परियाइत्ता विकुव्वइ अपणत्थगए पोगले परियाइत्ता विउव्वइ, ? गोयमा ! नो इहगए पोगले परियाइत्ता विउव्वइ, तत्थगए पोगले परियाइत्ता विउव्वइ णो अपणत्थगए पोगले परियाइत्ता, विउव्वइ, एवं एणं गमेणं एगवणं, एगरूवं, जाव अपेगवणं अपेगरूवं चउभंगो ॥ ३ ॥

भाग देव बाहिर के पुद्गलों ग्रहण कर के वैक्रेय बनाने को समर्थ है ? हां गौतम ! देव बाहिर के पुद्गलों ग्रहण कर के वैक्रेय करने को समर्थ है. अहो भगवन् ! क्या वह यहाँ मनुष्य क्षेत्र गत पुद्गलों को ग्रहण कर वैक्रेय करे, अथवा वहाँ रहे हुवे पुद्गलों को ग्रहण कर वैक्रेय करे, अथवा अन्यत्र के पुद्गल ग्रहण करे वैक्रेय करे ? अहो गौतम ! देवलोक में रहेहुवे पुद्गलों को ग्रहण कर वैक्रेय बनाता है परंतु मनुष्य क्षेत्र अथवा अन्यस्थान के पुद्गल ग्रहण कर वैक्रेय नहीं बनाता है. इस प्रकार से एकवर्ण, एक रूप व अनेक वर्ण अनेक रूप ऐसे चार भांगे जानना. ॥ ३ ॥ अहो भगवन्

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामुखी *

जा० यावत् म० महानुभाग वा० बाह्य पो० पुद्गल अ० विनाग्रहण किये प० समर्थ का० काले पो० पुद्गल
 देवें भंते ! महिडूँए जाव महाणुभागे, बाहिरए पोगले अपरियाइत्ता पभू कालगं
 पोगलं नीलयपोगलत्ताए परिणामेत्तए, नीलं पोगलंवा कालए पोगलत्ताए परि-
 णामेत्तए ? गोयमा ! नो इणंठुं समठ्ठे, परियाइत्ता पभू ॥ सेणं भंते ! किं इहगए
 पोगले तंचेव नवरं, परिणामेइत्ति भाणियब्बं । एवं कालगपोगलंलोहिय पोग-
 लत्ताए एवं कालएणं जाव सुक्खिं, एवं नीलएणं जाव सुक्खिं । एवं लोहिणं
 जाव सुक्खिं. एवं हालिदएणं जाव सुक्खिं एवं एयाए परिवाडीए गंधरसफास
 मर्द्धिक यावत् महानुभाग देव बाहिर के पुद्गल ग्रहण किये विना काले पुद्गलों को नीले पुद्गलों में
 व नीले पुद्गलों को काले में परिणामने को क्या समर्थ है ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. परंपु
 बाहिर के पुद्गलों ग्रहण करके काले का नीले में व नीले का काले में परिणामको को समर्थ है और वह वहाँ
 के ही पुद्गलों ग्रहण कर परिणामते हैं. जैसे काला नीला का कहा जैसे ही काला व लाल, काला व
 पीला, और काला व शुक्ल पुद्गल परिणामने का जानना. ऐसे ही दो गंध, पांचरस, व आठ स्पर्शका
 जानना. १. काला नीला, २. काला लाल ३. काला पीला ४. काला श्वेत ५. नीला लाल, ६. नीला
 पीला ७. नीला श्वेत, ८. लाल पीला ९. लाल श्वेत और १०. पीला श्वेत. यह दश भागे हुए. ऐसे ही गंध

तद्व्यर्थे

सूत्र

सावार्थे

करे आ० आयुष्य क० कर्म सि० कदाचित् वं० वंधे सि० कदाचित् नो० नहीं वं० वंधे अ० असाता
 वे० वेदनीय क० कर्म को सु० वारंवार उ० इकठाकरे अ० अनादी अ० अनंत दी० दीर्घकाल
 चा० चालुंता सं० संसार कंतार में अ० परिभ्रमणकरे से० उसको ते० इसलिये गो० गौतम अ० अ-
 संवृत अ० अनगार णो० नहीं सि० सिद्धे ॥ ४३ ॥ सं० संवृत अ० अनगार सि० सिद्धे हं० हा
 सिय बंधइ सिय नो बंधइ, असाया वेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो उत्रचिणइ,
 अणाइयं च णं अणवदगं दीहमद्धं चाउरंतं संसार कंतारं अणुपरियट्ठति । से तेणट्ठेणं
 गोयमा ! असंवुडे अणगारे णो सिद्धइ ॥ ४३ ॥ संवुडेणं भंते अणगारे सिद्धइ ?
 हंता सिद्धइ जाव अंतं करेइ ॥ सेकेणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ ? गोयमा ! संवुडेणं

कर्मों को दीर्घ काल की स्थितिबले बनाता है मंत्र रस देनेवाले कर्मोंको तीव्ररस देनेवाला करता है, अ-
 ल्प प्रदेशात्मक कर्मों को बहुत प्रदेशात्मक कर्म करता है. आयुष्य कर्म का बंध किसि समय करता है किसि-
 समय नहीं करता है, असाता वेदनीय कर्म पुनःपुनः संचित करता है, और अनादि अनंत संसार कंतार में
 परिभ्रमण करता है; इसलिये अहो गौतम ! असंवृत अनगार सिद्धे नहीं, यावत् संसार का अंतकरे नहीं.
 ॥ ४३ ॥ अहो भगवन् ! आश्रवद्धार का रुंधन करनेवाला संवृत अणगार क्या सिद्धे यावत् अंतकरे ? हां
 गौतम ! संवृत अणगार सिद्धे यावत् अंत करे भगवन् ! किस कारण से संवृत अणगार सिद्धे यावत् अंत

लेसं देवं, अत्रिसुद्धलेसे देवे समोहणं अप्पाणेणं विसुद्धलेसं देवं, अत्रिसुद्धलेसे समोहया समोहणं अत्रिसुद्धलेसं देवं, अत्रिसुद्धलेसं देवे समोहया समोहणं विसुद्धलेसं देवं विसुद्धलेसे देवे असमोहणं अत्रिसुद्धलेसं देवं विसुद्धलेसे असमोहणं विसुद्धलेसं देवं, विसुद्धलेसेणं भंते ! देवे समोहणं अत्रिसुद्धलेसं देवं जाणइ पासइ, एवं विसुद्ध समोहणं विसुद्धलेसं देवं, विसुद्ध समोहयासमोहणं अत्रिसुद्धलेसं देवं, विसुद्ध समोहयासमोहणं,

ही २ विभंगज्ञानवंत देव उपयोग रहित आत्मा से अविधि ज्ञानवंत देव, देवी या अन्य को नहीं जान व देख सकते हैं. ३ विभंग ज्ञानवंत देव उपयोग सहित आत्मसे विभंग ज्ञानी देव, देवी व अन्य किसी को नहीं जान सकता है ४ विभंग ज्ञानी उपयोग सहित अविधिज्ञानी देवादि को नहीं जान सकता है ५ विभंगज्ञानी देव उपयोग सहित व रहित आत्मा से विभंगज्ञानवंत देव देवी या अन्य किसी को नहीं जान सके ६ विभंग ज्ञानी उपयोग सहित या रहित आत्मा से अविधिज्ञानवंत देव देवी को नहीं जान व देख सकते हैं, यह छ भागों मिथ्यादृष्टि देव के जानना*७ अविधिज्ञानी देव उपयोग रहित आत्मा से विभंग ज्ञानवंत देव देवी या अन्य किसी को नहीं जान सके व नहीं देख सके, ८ अविधिज्ञानी देव उपयोग रहित

* इस में से तीन भागों उपयोग रहित वाले हैं. उपयोग रहित जीव कदापि नहीं जानसकता व देख सकता है. परंतु उपयोग सहित मिथ्यादृष्टि मिथ्यात्व व अज्ञान के प्रभाव से यथार्थ वस्तु स्वरूप नहीं जान सकता है इसलिये छ भागों नहीं जानने व नहीं देखने के कहे हैं.

को नी० नीले पो० पुद्गलपत्ने प० परिणमै ॥ ४ ॥ पूर्ववत् ॥ ६ ॥ पूर्ववत् ॥ ६ ॥ ९ ॥
 कक्खड फास पोगगलं, मउअ फास पोगगलत्ताए एवं दो दो गरुअ लहुअ सीय उ-
 सिण णिद्धलुक्खवण्णाइं, सब्बत्थ परिणामेइ आलावगा य दो दो पोगगले अपरिया-
 इत्ता परियाइत्ता ॥ १४ ॥ अविमुद्धलेसेणं भंते! देवे असमोहएणं अप्पाणेणं अविमुद्धलेसं
 देवं देविं अणत्तरं जाणइ पासइ ? गोयमा ! णो इण्णट्ठे समट्ठे ॥ एवं अविमुद्धलेसे
 असमोहएणं अप्पाणेणं त्रिसुद्धलेसे देवं, अविमुद्धलेसे समोहएणं अप्पाणेणं अविमुद्ध-
 के, पांचरस के व आठ स्पर्श के दो २ भांगे ग्रहण करना. कर्कशको कोमलपत्ने परिणमात्रे
 व कोमलको कर्कशपत्ने परिणमात्रं गुरु को लघुपत्ने परिणमात्रे लघुको गुरुपत्ने परिणमात्रे शीत को ऊष्ण
 व ऊष्ण को शीतपत्ने परिणमात्रे, स्निग्ध को रूक्षपत्ने व रूक्ष को स्निग्धपत्ने परिणमात्रे. वाहिर के
 पुद्गलों ग्रहण क्रिये बिना नहीं परिणमा सकता है, परंतु वाहिर के पुद्गलों ग्रहण कर परिणमा सकता है
 यह सब परिणमानेका अधिकार कहा ॥ ४ ॥ यह देवशक्ति कही अब देवशक्तिकी भिन्नता बतलाते हैं.
 १. अविमुद्धलेशी देव, अपसवहतात्मदेव, और विमुद्धलेशी देवादिक इन तीन पद के १२ विकल्प कहते
 हैं. अहां भगवन् ! विभंगज्ञान वाले देव उपयोग रहित आत्मासे विभंग ज्ञानवंत देवता देवी व अन्य किसी
 को क्या ज्ञान से जान सकते हैं व दर्शन से देखसकते हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. ऐसे

व्यर्थ

सूत्र

भावार्थ

ॐ श्री गणेशाय नमः ॐ

मुल दु० दुःख जा० यावत् को० गुठली मात्र नि० वाल मात्र क० कलम मा० मात्रभी मा० ऊडद मा० मात्रभी मु० मंगभात्र जू० यूकामात्र लि० लिखमात्र अ० निकालकर उ० वताने को से० वह क० कैसे भ० भगवत् ए० ऐसा गो० गौतम ज० जो ते० वे अ० अन्यतीर्थिक ए० ऐसा आ० कहते हैं जा० यावत् मि० मिथ्या ते० वे ए० ऐसा आ० कहते हैं अ० मैं पु० फीर गो० गौतम ए० ऐसा आ० कहता हूँ जा० यावत् प० प्ररूपता हूँ स० सर्व लोक में स० सर्व जीव नो० नहीं च० शक्तिवत के० कोई सु०

मायमत्रि, कलममायमत्रि, मासमायमत्रि, मुष्मामायमत्रि, जूयमायमत्रि, लिखमायमत्रि, अभिनिव्वहेत्ता उवदंसिचाए से कहमेयं भंते ! एवं ? गोयमा ! जणं ते अण्णउत्थिया एव माइक्खंति जात्र भिच्छंते एव माहंसु । अहं पुण गोयमा ! एव माइक्खामि जात्र परूवेमि सच्चलोए त्रियणं सच्चजीवाणं नो चक्किया केइ सुहंवाः तं चंत्वा जात्र

कोई भी जीव बेर जितना, वाल जितना, मुंग, ऊडद, लींक्खेव यूका जितना भी सुख दुःख नीकालकर बतासकता नहीं है. अहो भगवन् ! उन का यह कथन किस तरह है ? अहो गौतम ! जो अन्यतीर्थिक ऐसा करते हैं यावत् प्ररूपते हैं वे मिथ्या ऐसा करते हैं. मैं ऐसा कहता हूँ यावत् प्ररूपता हूँ कि संपूर्ण लोकमें किसी जीव को बेरकी गुठली जितना यावत् यूका जितना सुख दुःख नीकाल कर वताने को कोई मर्ष नहीं है. अहो भगवन् ! यह किस तरह है ? अहो गौतम ! यह जम्बूद्वीप एक लक्ष योजन का

अ० धन्यतीर्थिक भ० भगवन् ए० ऐसा आ० कहते हैं जा० यावत् प० प्ररूपते हैं जा० जितने
रा० राजगृह न० नगर में जी० जीव ए० इतने जी० जीव को नो० नहीं च० शक्तिवन्त के० कोइ सु०
विसृष्टलेसं देव, एवं हेन्द्रिल्लएहि अट्टहि नजागद् नपागद्, उवरिखिएहि चउहिं जाण-
इ पत्तइ, ॥ सेव संते भंते सि ॥ छट्टसए नवमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ६ ॥ १ * ॥

अणउत्थियाणं भंते ! एवमाइम्वंति जाव परुवंति जावइया रायगिहे णगरे जीवा
एवइयाणं जीवाणं नो चक्किशा केइ सुहंवा दुहंवा जाव कोलट्टिगमायमधि, निप्पाव

आत्मा से अधिज्ञानी को नहीं जान सके व देख सके, १ अधिज्ञानी उपयोग सहित आत्मा से विभंग
ज्ञानी देव, देवी या अन्य को जान सके व देख सके, १० विभंग ज्ञानी उपयोग सहित आत्मा से अधि
ज्ञानी देव, देवी या अन्य किसी को जान व देख सके, ११ अधि ज्ञानी उपयोग सहित व रहित आत्मा
से विभंग ज्ञानी को जान व देख सके और १२ अधि ज्ञानी उपयोग सहित व रहित आत्मा से अधि
ज्ञानीको जान व देखसके यह छ भांगे समष्टि आश्री कहे हैं. इनमें से आठ भांगेवाले नहीं जान व नहीं देख
सकते हैं. अहो भगवन् ! आपके वचन सत्य हैं. यह छटा शतक का नवा उद्देश पूर्ण हुआ. ॥६॥१॥ *

नवे उद्देशे में अज्ञानिया को जानने का अभाव कहा. अब दशवे उद्देशे में इसकाही स्वरूप कहते हैं.
अहो भगवन् ! अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं यावत् प्ररूपते हैं कि राजगृही नगरी में जितने जीव हैं उन को

● भकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी

ते० उस घा० घ्राणेन्द्रिय योग्य पो० पुद्रल को को० गुठलीमात्र जा० यावत् उ० वताने को णो० नहीं
 इ० यह अर्थ स० समर्थ से० वह ते० इसलिये जा० यावत् उ० वताने को ॥ १ ॥ जी० जीव भं० भगवन्
 जी० चैतन्य जी० चैतन्य जी० जीव गो० गौतम जी० जीव जा० यावत् नि० निश्चय
 जी० चैतन्य जी० चैतन्य नि० निश्चय जी० जीव ॥ २ ॥ जी० जीव भं० भगवन् ने० नारकी ने० नार-

यमा ! केइ तोसि घाणयोगलाणं कोलट्टिमायमवि जाव उवदंसिच्चए ! णो इण
 ट्ठे समट्ठे ॥ सेतणट्ठेणं जाव उवदंसिच्चए ॥ १ ॥ जीविणं भंते ! जीवि जीवि जीवि ? गो-

यमा ! जीवि ताव नियमा जीवि, जीवि वि नियमा जीवि ॥ २ ॥ जीविणं भंते ! नेरइए

जम्बूद्वीप में विस्तृत होती है ? हां भगवन् ! वह गंध संपूर्ण जम्बूद्वीप में विस्तृत होती है. तब अहो
 गौतम ! उस गंधों से बेरकी गुठली प्रमाण यावत् यूका प्रमाण पुद्रलोंको पृथक् कर वतानेको क्या समर्थ है ?
 अहो भगवन् ! यह अर्थ योग्य नहीं है अर्थात् जैसे वताने को समर्थ नहीं है. इसी तरह जीव सुख दुःख
 स्पर्शता है परंतु पृथक् करके वताने को समर्थ नहीं होता है ॥ १ ॥ सुख दुःख का भोक्ता जीव होने से जीव
 मंत्रयी मश्र पूछने हैं. अहो भगवन् ! जो जीव है वह क्या चैतन्य है और जो चैतन्य है सो जीव है ? अहो
 गौतम ! चैतन्य व जीव परस्पर अविद्याभूत है, अर्थात् जीव बिना चैतन्य नहीं व चैतन्य बिना जीव नहीं,
 इसलिये चैतन्य है वह जीव है और जीव है वह चैतन्य है ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! क्या जीव है सो नारकी है व

(भगवती) पञ्चमः विवाहः पण्णात्ति

आत्मा सः शरीर खे० श्वेन ओ० अवगाहित पो० पुद्गल अ० आत्मा से आ० ग्रहणकर आ० आहार करे अ० अंतर रहित खे० श्वेन ओ० अवगाह्य पो० पुद्गल अ० आत्मा से आ० ग्रहणकर प० परंपर खे० श्वेन ओ० अवगाहित पो० पुद्गल अ० आत्मा से अ० ग्रहण कर आ० आहार करते हैं ॥ ८ ॥ के० केवली भं० भगवन् आ० इन्द्रिय से जा० जाने पा० देखे गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ स० योग्य अत्तमायाए आहारंति, परंपरखेत्तोगाढे पोगले अत्तमायाए आहारंति ? गोयमा ! आय सरीर खेत्तोगाढे पोगले अत्तमायाए आहारंति नो अणंतर खेत्तोगाढे पोगले अत्तमायाए आहारंति, नो परंपर खेत्तोगाढे । जहा नेरइया तहा जाव वेमाणियाणं दंडओ ॥ ८ ॥ केवलीणं भंते! आयणेहिं जाणइ पासइ ? गोयमा ! नो इणहे समट्टे । से केणट्टेणं ? गोयमा ! केवलीणं पुरच्छिमेणं मियंपि जाणइ, अमियंपि जाणइ, जाव निव्वुडे दंसणे केवल्लिस्स से तेणट्टेणं ॥ जीवाणय सुहं दुक्खं, जीवे श्वेनावगाहित आहार करने योग्य पुद्गलों का आहार करता है परंतु अनंतर व परंपर श्वेनावगाहित पुद्गलों का आहार नहीं करता है. नारकी जैसे वैमानिक तक सब दंडक का जानना ॥८॥ अहो भगवन् ! क्या केवली इन्द्रियों से जानते हैं व देखते हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है क्यों कि केवली पूर्व में मर्यादित व अमर्यादित जानते हैं व देखते हैं यावत् उन का ज्ञान आवरण रहित निर्मल रहा हुआ है

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुबोधमहायजी जालापनादजी *

सि० सिद्धे यावत् अ० अंतकरे से० वह के० कैसे भ० भगवन् ए० ऐसे दु० कहा जाता है पूर्ववत् ॥ ४४ ॥ जी० जीव भ० भगवन् अ० असंयति अ० अतिरति अ० अप्रतिहत प० प्रत्याख्यान पा०

अणगारे आउयवजाओ सत्तकम्म पगडीओ धणिय बंधण बद्धाओ सिद्धिल बंधण
बद्धाओ पकरेइ, दीहकालट्टितीयाओ हस्सकालट्टितीयाओ पकरेइ, तिक्वाणभावा-
ओ मंदाणुभावाओ पकरेइ, बहुपदेसगाओ अप्पपदेसगाओ पकरेइ, आउयंचणं
कम्मं न बंधइ, असायात्रेयणिजंचणं कम्मंणो भुज्जो उवचिणइ. अणादीयंचणं
अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंत संसारं कंतारं वीइवयइ. से तेणट्टेणं गोयमा ! एवं संवुडे
अणगारे सिज्झइ जाव अंतंकरेइ ॥ ४४ ॥ जीवेणं भंतेअसंजए, अत्रिए, अप्पडिहय

करे ? अहो गोतम ! संवृत अणगार आयुष्य छोडकर अन्य सात कर्म की प्रकृतियों का निकाचित बंधन
क्रिया होवे तो उन को शिथिलकरे, दीर्घ काल की स्थिति वाले कर्मों को ह्रस्व काल की स्थिति वाले
बनाने तीव्र रसवाले कर्मों को अल्प रसवाले बनाने, बहुत प्रदेशात्मक कर्मों को अल्प प्रदेशात्मक बनाने,
आयुष्य कर्म का बंध करे नहीं, असाता वेदनीय कर्म को वारंवार संचित करे नहीं व अनादि अनंत संसार
में परिभ्रमण करे नहीं; इसलिये अहो गौतम ! संवृत अणगार सिद्धे यावत् दुःखों का अंतकरे ॥ ४४ ॥
अहो भगवन् ! असंयति, अतिरति, व प्रत्याख्यान से पापकर्म नहीं तोडने वाला यहां से चक्कर परलोक

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ श्री भक्तिसिद्धि-प्रदायक-श्री गणेशाय नमः ॥

से० वह के० कैसे गो० गौतम के० केवली पु० पूर्वे मि० पर्यादायुक्त अ० पर्यादा रहित जा० जाने जा० यावत्
णि० निरावरण दं० दर्शन के० केवली को ते० इसलिये ॥ ६ ॥ =

जीवह तदेव भविष्यत् । एतत् दुःखत्रयेण, अत्तमाप्य केवली ॥ सेवं भंति भंति ॥

छटुसए दसमो उद्देशो समस्तो ॥ ६ ॥ १० ॥ छटुसयं सम्मत्तं ॥ ६ ॥

इसलिये केवली शिष्टियों से नहीं जानते हैं, व नहीं देखते हैं इस उद्देशो का सारांश कहते हैं. जीव का
सुख, दुःख, चैतन्य, प्राण, प्रव्य, एकान्त दुःख, आहार व केवली. अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य
हैं. यह छटा शक्त का दशा उद्देशा समाप्त हुआ ॥६॥१०॥ और छटा शक्त भी समाप्त हुआ ॥ ६ ॥ *

ANIL KUMAR



* मकानक राजावहार अथवा सुखदेवमहायजी उपासनादिनी *

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के शिष्याचारी पूज्य श्री सुधा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य स्त. तपस्वीजी श्री केवल ऋषिजी महाराज! आप श्रीने मुझे साथ ले महा परिश्रम से हेतुवाद् जैसा बडा धेन साधुमार्गिय धर्म में प्रसिद्ध किया व परमोपदेश से राजावहादुर दानवीर बाला सुखदेव सहायजी जाला प्रसादजी को परमप्रेमी बनाये. उनके प्रतापसे ही शास्त्रोद्धारादि प्रता कार्य हेतुवाद् में हूए. इस लिये इस कार्य के मुख्यधिकारी आपही हूए. जो जो भव्य जीवों इन शास्त्र द्वारा महालाभ प्राप्त करेंगे वे आपही के कृत्तव्य होंगे.

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के कविवरन्द महा पुरुष श्री तिलोक ऋषिजी महाराज के पाठ्यीय शिष्य वर्य, पूज्यपाद गुरु वर्य श्री रत्नऋषिजी महाराज! आप श्री की आज्ञासे ही शास्त्रोद्धार का कार्य स्वीकार किया और आपके परमाश्रित्वाद् से पूर्ण कर सका. इस लिये इस कार्य के परमोपकारी महाराज आप ही हैं. आप का उपकार केवल मेरे पर ही नहीं परन्तु जो जो भव्यो इन शास्त्रोद्धारा का प्र प्राप्त करेंगे उन सबपर ही होगा.

परम पूज्य श्री कथानजी ऋषिजी महाराज की
 सम्प्रदाय के शिष्याचारी पूज्य श्री खुवा ऋषिजी
 महाराज के शिष्यधर्म रत्न, तपस्विजी श्री केवल
 ऋषिजी महाराज! आप श्रीने मुझे साथ ले महा परि-
 श्रम से हैद्राबाद जेना बड़ा क्षेत्र साधुमार्गिय धर्म
 में प्रसिद्ध किया व परमोपदेश से राजावहादुर
 दानशीरलाला सुखदेव महायजी जाला प्रसादजी
 को धर्मप्रेमी बनाये. उनके मतापसे ही शाल्वोद्धा-
 रादि महा कार्य हैद्राबाद में हुए. इस लिये इन
 कार्य के मुख्यधिकारी आपही हुए, जो जो भव्य
 कीर्तों इन बाल्य द्वारा महालाभ प्राप्त करेंगे वे
 आपही के कृतज्ञ होंगे.

शिव-भक्त ऋषि

शिव-भक्त ऋषि

परम पुज्य श्री कथानजी ऋषिजी महाराज की
 सम्प्रदाय के करिन्देन्द्र, महा पुरुष श्री तिकेक
 ऋषिजी महाराज के पादवीय शिष्य धर्म, पूज्य-
 पाद गुरु धर्म श्री रत्नऋषिजी महाराज !
 आप श्रीकी आज्ञाने ही शाल्वोद्धार का कार्य स्वी-
 कार किया और आपके परमाचारेन्द्र से पूर्ण कर-
 सका इस लिये इन कार्य के परमोपकारी महा-
 रत्न आप ही हैं. आप का उपकार केवल मेरे पर
 ही नहीं परन्तु जो जो भव्यों इन शाल्वोद्धारा
 लाभ प्राप्त करेंगे उन सबपर ही होगा.

दास-भक्त ऋषि

शिव-भक्त ऋषि

दक्षिण द्वैधावाद निवासी जोहरी वर्ग में श्रेष्ठ दरबर्षि दानवीर राजा चहादुर लालाजी साहेब श्री मुखदेव सहायजी उमालापसादकी।

आपने साधु सेवा के और ज्ञान दान जैसे महा-लाभके लोभी बन साधुमार्गीय जैन धर्म के परम माननीय व परम आदरणीय वसीस शास्त्री को हिन्दी भाषानुवाद माहित छपाने का रु. २००००, का संपर्क अमूल्य देना स्वीकार किया और पुराण युद्धारंभ से सब बस्तु के भाव में बाँट देने से रु. ४०००० के खर्च में भी काम पूरा होनेका संभव नही होते भी आपने उस ही उत्साह से कार्य को समाप्त कर सबको अमूल्य महालाभ दिया, यह आप की उदारता साधुमार्गीयों की गौरव दर्शक व परमादर्शणीय है।

श्रीवाला (काठियावाड) निवासी धर्म प्रेमी कार्यदर्श कुतज्ञ मणिबाल सिवलाल शेट! इन्होंने जैन दर्शनग काछेज रतलाम में संस्कृत प्राकृत व अंग्रेजी का अभ्यास कर तीन वर्ष तपश्चक्र रह अच्छी कौशल्यता प्राप्त की. इनसे शास्त्राभ्यारका कार्य अच्छा होगा ऐसी सूचना गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज से मिलने से इनको बोलाये. इन्होंने अन्य प्रेस में शुद्ध अच्छा और शीघ्र काम होता नहीं देखे शास्त्राभ्यार प्रेस कायम किया और प्रेस के कर्मचारियों को उत्साही कार्य दक्ष बना काय लिया. तैस ही भाषानुवाद की प्रेसकोषी बनाइ. यद्यपि यह भाइ पगार से रहे थे तथापि इन्होंने इस कार्य की सेवा वेतन के प्रमाण से अधिक की. इस लिये इनको भी धन्यवाद देते हैं.

अपनी उषी ऋद्धि का त्याग कर हैदराबाद स्त्रीकभवावर्षे दीक्षाधारक बालब्रह्मचारी पण्डित भुने श्रीअमोलक ऋषिजीके शिष्यवर्षे ज्ञानानंदी श्री देव ऋषिजी. वैश्याहृत्पी श्री राज ऋषिजी. सपत्नी श्री रुद्रय ऋषिजी और विद्याविलासी श्री मोहन ऋषिजी. इन चारों मुनिवर्षेने गुरु आज्ञाका बहुमानसे स्वीकार कर आहार पानी आदिमुखोप-धार का संयोग मिला. दो महर का व्याख्यान, प्रसंगीसे पार्तालाप, कार्य दक्षता व सभाधि भाव से सहाय दिया जिस से ही यह महा कार्य इतनी शीघ्रता से लेखक पूर्ण सके. इस लिये इन कार्य वरल वक्त मुनिवर्षों का भी थडा उपकार है.

मुखदेव सहाय उमाला प्रसाद

पंजाब देश पावन कर्ता पुत्र्य श्री सोहन-लालजी, महारना श्री माधव मुनिजी, शताब्धानी श्री रत्नचन्द्रजी, तपस्वीजी माणकचन्द्रजी, कर्षिवर श्री अभी ऋषिजी, सुवक्ता श्री दौलत ऋषिजी. पं. श्री नथमलजी. पं. श्री जोरावरमलजी. कार्षिवर श्री नानचन्द्रजी. प्रवर्तिनी सतीजी श्री पार्वतीजी. गुणज्ञ-सतीजी श्री रंभाजी. योगराजी सर्वज्ञ भंडार, भीना सरवाळे कनीरापजी वहादूरमलजी बाँटीया, लीचही भंडार, कुचेरा भंडार, इत्यादिक की तरफ से ब्राह्मों व सम्मति द्वारा इन कार्य को बहुत सहायता मिली है. इस लिये इन का भी बहुत उपकार मानते हैं.

सुष्यदेव सहाय उमाला प्रसाद

कच्छ देश पावन कर्ता मोदी पक्ष के परम
पूज्य श्री कर्मसिंहजी महाराज के शिष्यवर्ग
महाराजा कश्चिद्वय श्री नागचन्द्रजी महाराज !

इस शास्त्रोद्धार कार्य में आर्घ्यादान आप श्री
माधिन शुद्ध शास्त्र, हुंडी, गुटका और सपय रत्न
भास्करकीय शुभ सम्पत्ति द्वारा मदत देते रहनेसे ही
में इस कार्य को पूर्ण कर सका. इस लिये केवल
में ही नहीं परन्तु जो जो भज्य इन शास्त्रोद्धार
कार्य मात करों वे सब ही आप के आभारी
हैं.

आपका अपेक्ष्य कपि

१३

शुद्धाचारी पूज्य श्री स्वामी ऋषिजी महाराज के
शिष्यवर्ग, आर्य मुनि श्री चैना ऋषिजी महाराज के
शिष्यवर्ग, वाल्मिल्याचारी पण्डित मुनि श्रीअमोलक
ऋषिजी महाराज! आपने वह साहस से शास्त्रोद्धार
केसे महा परिश्रम वाले कार्य का जिस उत्साह से
स्वीकार किया था उस ही उत्साह से तीन वर्ष
जितने श्रम सपय में अहर्निश कार्य को अच्छा
चलाने के शुभाशय से सदैव एक भक्त भोजन
और दिन के सात घंटे लेखन में व्यतीत कर
पूर्ण किया. और ऐसा सरल वनादिवा कि
काई भी हिन्दी भाषा सहज में समझ सके, ऐसे
ज्ञानदान के महा उपकार तल देवे हृथे हम आप
के वह आभारी हैं.

संयकी तर्क से.

सुषमदेव सहाय बाला प्रसाद

१३

दक्षिण इंद्रापाद निवासी चौहरी वर्ग में श्रेष्ठ दूरधर्मि दानवीर राजा बहादुर लालाजी साहेब श्री सुखदेव सहायजी उगालामनादजी।

आपने साधु सेवा के और ज्ञान दान जैसे महान् लाभके लोभी बन जैन साधुधर्मिय धर्म के परम पानतीय व परम आदर्णीय वस्तीन शालाओं को हिन्दी भाषानुवाद सहित छपाने को रु. २००००, का सर्वकार अमूल्य देना रतिकार किया और गुणोप युद्धारंभ से सब वस्तु के भाव में टुडि होने से रु. ४०००० के लघु में भी काम पूरा होनेका संभव नहीं होते भी आपने उन ही उरनाह से कार्य को समाप्त कर सबको अमूल्य महाकाय दिया, यह आप की उदारता साधुधर्मियों की भाव दर्शक व परमादर्णीय है।

श्रीवाला (काठीयाबाद) निवासी धर्म मेधी कार्यरत कुतूह पणिलाल शिवलाल दांडा। इनोंने जैन दर्शनाग कालेज रतलाम में संस्कृत माकृत व अंग्रेजी का अभ्यास कर तीन वर्ष उपदेशक रह अच्छी कौशल्यता प्राप्तकी. इन से शालाध्वार का कार्य अच्छा होगा प्रेमी सूचना गुरुदय श्री रतन ऋषिजी महाराज ने मिलने से इन को दोलाये, इनोंने अन्न प्रेन में शुद्ध अच्छा और शक्ति मान होता नदी देख शालाध्वार प्रेस कायन किया और प्रेस के कर्मचारियों को उरनाही कार्य दस बना काम लिया. तेने ही भाषानुवाद की प्रेसकोपी बनाइ, यद्यपि यह भाइ पागर से रहे थे तथापि इतोंने इन कार्य की सेवा वेतन के प्रमाण से अधिक की. इस लिये इनको भी धन्यवाद देते है.

पापकर्म इ० यहाँ से चु० चक्कर पे० परलाक में देव सि० होवे गो० गौतम अ० कितनेक दे० देवसि० होवे
 अ० कितनेक णो० नहीं दे० देव सि० होवे से० वह के० कैसे भं० भगवन् जा० यावत् इ० यहाँ से
 चु० चक्कर पे० परलोक में अ० कितनेक दे० देव सि० होवे अ० कितनेक णो० नहीं दे० देव सि०
 होवे गो० गौतम जे० जो जी० जीव गा० ग्राम आ० आगर न० नगर नि० निगम रा० राज्यधानि
 खे० खेइं क० कव्वड मं० मंडपदो० द्रोणमुख य० पट्टण आ० आश्रम स० सन्निवेश में अ० अकाम तृष्णा
 पच्चक्खाय पावकम्मै; इतो चुते पेच्चा देवे सिया ? गोयमा ! अत्थेगइए देवे सिया
 अत्थेगइए णो देवे सिया । सेकेणट्टुणं भंते जाव इतो चुते पेच्चा अत्थेगइए देवेसिया,
 अत्थेगइए णो देवे सिया? गोयमा ! जे इमे जीवा गामागरनगर निगम रायहाणि खेड
 कव्वड मंडव द्रोणमुह पट्टणासम सन्निवेशेसु अकामतण्हाए, अकामच्छुहाए,
 में क्या देवता होवे ? अहो गौतम ! कितनेक देव होवे और कितनेक देव न होवे. अहो भगवन् ! किस
 कारण से कितनेक देव होवे और कितनेक देव नहोवे ! जो जीव ग्राम, आगर, नगर, निगम, राज्यधानी,
 खेड, कव्वड, मंडप द्रोणमुख, पट्टण. आश्रम, सन्निवेश में अकाम-विना इच्छा से, तृष्णा, भुधा, ब्रह्मचर्य,
 शीत, आतप, दंश मशक, स्नान नहीं करना, स्वेद नहीं पुछना, शरीर का मेल दूर नहीं करना, मल,
 पंक व परिदाह से अल्प या बहुत समय तक आत्मा को केश पंहुचोवे और इस तरह आत्मा को कष्ट देते

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुलदेवसहायजी जालापसादजी *

सि० सिद्धे यावत् अं० अंतकरे से० बह के० कैसे भ० भगवन् ए० ऐसे बु० कहा जाता है पूर्ववत्
॥ ४४ ॥ जी० जीव भं० भगवन् अ० असंयति अ० अविरति अ० अप्रतिहत प० प्रत्याख्यान पा०

अणगारे आउयवजाओ सत्कम्म पगडीओ धणिय बंधण बद्धाओ सिट्ठिल बंधण
बद्धाओ पकरेइ, दीहकालट्टितीयाओ हस्सकालट्टितीयाओ पकरेइ, तिव्वाणुभावा-
ओ मंदाणुभावाओ पकरेइ, बहुपदेसगाओ अप्पपदेसगाओ पकरेइ, आउयंचणं
कम्मं न बंधइ, असायावियणिजंचणं कम्मंणो भुज्जो उवचिणइ. अणादीयंचणं
अणवदगं दीहमदं चाउरंत संसार कंतारं वीइवयइ. से तेणट्टेणं गोयमा ! एवं संवुडे
अणगारे सिज्झइ जाव अंतंकरेइ ॥ ४४ ॥ जीवेणं भंतेअसंजए, अत्रिए, अप्पडिहय

करे ? अहो गौतम ! संवृत अणगार आयुष्य छोडकर अन्य सात कर्म की प्रकृतियों का निकाचित बंधन
क्रिया होते तो उन को शिथिलकरे, दीर्घ काल की स्थिति वाले कर्मों को इस्व काल की स्थिति वाले
बनावे तीव्र रसवाले कर्मों को अल्प रसवाले बनावे, बहुत प्रदेशात्मक कर्मों को अल्प प्रदेशात्मक बनावे,
आयुष्य कर्म का बंध करे नहीं, असाता वेदनीय कर्म को वारंवार संचित करे नहीं व अनादि अनंत संसार
में परित्रमण करे नहीं; इसलिये अहो गौतम ! संवृत अणगार सिद्धे यावत् दुःखों का अंतकरे ॥ ४४ ॥
अहो भगवन् ! असंयति, अविरति, व प्रत्याख्यान से पापकर्म नहीं तोडने वाला यहां से चक्कर परलोक

अ० अकामसुधा अ० अकाम ब्रह्मचर्य अ० अकाम सी० शीत आ० आतप दं० दश म० मशक अ० स्नान रहित से० स्वेद ज० जल म० मल पं० कर्दम प० परिदाह अ० थोड़े सु० बहुत का० काल अ० आत्मा को प० कष्टदेवे प० कष्टदेकर का० काल के अवसर में का० काल कि० करके अ० अन्यतर वा० वाण व्यंजर दे० देवलोक में दे० देवपते उ० उत्पन्न भ० होवे के० कैसे भं० भगवन् वा० वाणव्यंतर दे० देवता

अकाम वंभचेरवासेंग, अकामसीतातवदंसमसंग, अण्हाणगसेयजल्लमल पंकपरि-
दाहेणं अप्पत्तरोवा भुजत्तरोवा कालं अप्पाणं परिकिलेसत्ता; कालमासे
कालंकिच्चा, अण्णयोरसु वाणमंतरेसु देवल्लोएसु देवत्ताए उवत्तारो भवति ॥ केरि-
स्साणं भंते तेसिं वाणमंतराणं देवाणं देवल्लोगा प०? गोयमा! से जहा नामए इह मणुस्स

लोगंमि असोगवणेइवा सत्तवणवणेइवा, चंपयवणेइवा, चूयवणेइवा, तिलगवणेइवा,
काल के अवसर में काल करे तो वाणव्यंतर देवलोक में देवतापने उत्पन्न होवे. अहो भगवन् ! उन
वाणव्यंतर देवता के देवलोक कैसे हैं ! अहो गौतम जैसे मनुष्य लोक में अशोकवन, सप्तपर्णवन, चंपकवन
आम्रान, तिलक वन, अलंबुक (तुम्बी का) वन, न्यग्रोधवन, छात्राहवन, अशनवृक्षवन, शणवृक्ष के वन
अलक्षीका वन, कुसुमवन, सिद्धत्य-क्षेतसप्तका वन, वंधजीव सो मध्यान्ह के कुसुमका वन वगैरह वनों
सदैव कुसुमों से फुले हुवे, मंजरी, गुच्छा, गुलम, बेल, पत्र, अन्य अनेक वृक्षोंकी श्रणियों के समुह व

के दे० देवलोक प० प्ररूपे गो० गौतम इ० यह म० मनुष्य लोकमें अ० अशोक वृक्षके वन स० सप्त
 पर्वतन चं० चंपकवन चू० आम्रवन ति० तिलकवन ला० वृक्ष विशेष नि० वड के वन छ० छत्राहवन अ०
 अशवन त० शणकवन अ० अलसीके वन कु० कुसुंभवन सि० सरसव के वन वं० वृक्ष विशेष नि० नित्य
 कु० कुसुम वाले मौ० मंजरी ल० बेल थ० फूजजाति गु० लता गो० पत्रसमुह ज० समश्रेणी जु० युगल वि०
 नभेहुवे प० विशेष नभेहुवे गु० मगट पिं० लुम्ब मं० मांजर व० नवकुंपल ध० धारन करने वाले सि० शो-

लाउयवणेइवा, निरगोहवणेइवा, छत्तोहवणेइवा, असणवणेइवा, सणवणेइवा, अयासिवणेइवा,
 कुसुंभवणेइवा, सिद्धथवणेइवा, बंधुजीवणेइवा; निचं कुसुमिय माइयलवइयथवइय गुलु-
 इय गोच्छिय जमालिय जुवालिय विणमिय पुणमिय सुविभत्त पिंडिमंजरि वाडिगधरे,
 सिरीए अतीव अतीव उवसेभमाणे उवसेभमाणे चिट्ठइ एवामेव तेसिं वाणमंतरा-

युगल वृक्ष के पुणों का भार से नभे हुवे, विशेष नभे हुवे, नविन कुंपल रूपी मुकुट को धारण करने
 वाले व बनलक्षणी से बहुत ही शोभनीक हैं वैभेही उन वाणव्यंतर देवता के देवलोक जानना. उस की
 स्थिति जयन्म दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट एक पल्योपम की जानना. वे देवलोक बहुत वाणव्यंतर देव
 व देवियों से व्याप्त, क्रीडा में आसक्त होनेसे उपरा उपर आच्छादे हुवे, परस्पर बहुत दूर तक खेलनेसे

शब्दार्थ

द्वयानिं विनाइ पणान (मन्वतो)

सूत्र

भावार्थ

जाता है जी० जीव अ० असंयति जा० यावत् दे० देव सि० होवे ॥४५॥ से० ऐसेही भ० भगवन् गो० गौतम
स० श्रमण भ० भगवन् म० महावीर को वं० वंदे ण० नमस्कार किया वं० वंदना करके सं० संयम से त०
तपसे अ० आत्मा को भा० भावते हुवे वि० विचरते हैं ॥ १ ॥ १ ॥ *

रा० राजगृह ण० नगर स० समोसरण प० परिपदाणि निर्गता जा० यावत् ए० ऐमा व० कथा जी०

गोयसे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता संजनेणं तवसाअप्पा-

णं भोवेमाणे विहरइ इति पढमसए पढमोहेसो सम्मत्तो ॥ १ ॥ १ ॥ *

रायगिहे णथरे, समोसरणं, परिसा णिरगया जाव एवं. वयासी. जीविणं भंते सय

वचनों को बहुत मान देकर गौतम स्वामीने श्रीश्रमण भगवन्त महावीर को वंदना नमस्कार किया, वंदना
नमस्कार कर के संयम व तपसे आत्मा के स्वरूप को विचरते हुवे विचरने लगे यह पहिला शतक का
पहिला उद्देशा संपूर्ण हुआ. ॥ १ ॥ १ ॥ +

गत उद्देशों में कर्म के चलनादि प्रश्नोत्तर कहे हैं वे कर्म दुःखरूप होते हैं इसलिये आगे दुःख का प्रश्न
करते हैं. राजगृह नगर के गुणशील नामक उद्यान में भगवन्त श्री महावीर स्वामी पथारे, परिपदा वांदने
को आई, वाणी सुनकर परिपदा पीछीगई. उस समय श्री गौतम स्वामीने भगवन्त को प्रश्न पुछा कि
अहो भगवन् ! जीव अपना किया हुआ दुःख वेदता है ? अहो गौतम ! कितनेक सङ्कृत कर्मवेदे, कित-

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

मनिक अ० अतीव उ० सुंदर चि० हैं ए० ऐसे ते० उन वा० वाणव्यंतर दे० देवके दे० देवलोक ज०
जघन्य द० दशवर्ष स० सहस्र त्रि० स्थिति से उ० उत्कृष्ट प० पल्योपम त्रि० स्थिति से व० बहुत वा०
वाणव्यंतर दे० देव दे० देवीसे आ० व्याप्त वि० विस्तीर्ण उ० आच्छादित सं० संस्तीर्ण पु० स्पर्श अ०
रहे गा० गुप्त सि० लक्ष्मी से अ० अतीत २ उ० सुंदर शोभते चि० हैं ए० ऐसे गो० गौतम ते० उन
वा० वाणव्यंतर दे० देवके दे० देवलोक प० प्ररूपे सो० वह ते० इसलिये गो० गौतम ए० ऐसा बु० कहा

णं देवाणं देवलोया जहण्णेणं दस वास सहस्स ठिईएहिं, उक्कोसेणं पलिओवमट्ठिईए-
हिं बहुहिं वाणमंतरेहिं देवोहिय देवीहिय आतिण्णा, वितिण्णा, उवत्थडा संथडा फु-
डा, अवगाढगाढ सिरीए, अतीव अतीव उवसेभमाणा उवसेभमाणा चिट्ठति ॥ ए-
रिसगाणं गोयमा ! तोसिं वाणमंतराणं देवाणं देवलोगा पणत्ता से तेणट्ठेणं गोयमा !
एवं बुच्चइ जीवे णं असंजए जाव देवोसिया ॥ ४५ ॥ सेवं भंते ! भंते ति भगवं

संधारा जैसे विस्तीर्ण बने हुये, आसन शयन रमण भाग से भोगवते व लक्ष्मी से अतीव सुशोभित रहे
हुये हैं. अशो गौतम ! उन वाणव्यंतर के ऐसे देवलोक कहे हैं. और इसी कारण से कितनेक असंयति
जीव देवतापने उत्पन्न होवे और कितनेक उत्पन्न नहोवे ॥ ४५ ॥ अहो भगवन् जैसे मैंने पृच्छा की वैसे
ही आपने प्रतिपादन किया है. आप जैसा कहते हैं; वैसा ही है अन्यथा नहीं है. इस प्रकार भगवन्तःके

जाता है जी० जीव अ० असंयति जा० यावत् दे० देव सि० होवि॥४५॥सि० ऐसेही भ० भगवत् गो० गौतम
स० श्रमण भ० भगवन्नू म० महावीर को वं० वंदे ण० नमस्कार किया वं० वंदना करके भं० संयम से त०
तपसे अ० आत्मा को भा० भावते हुवे वि० विचरते हैं ॥ १ ॥ १ ॥ *

रा० राजगृह ण० नगर स० समवसरण प० परिपदाणि निर्गता जा० यावत् ए० ऐमा व० कथा जी०
गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता संज्जेणं तवत्साअप्पा-

णं भवेमाणे त्रिहरइ इति पढमसए पढमोद्देशो सम्मत्तो ॥ १ ॥ १ ॥ *

रायगिहे णथरे, समोसरणं, परिसा णिग्गया जाव एवं, वयासी. जीविणं भंते सय

वचनों को बहुत मान देकर गौतम स्वामीने श्रीःश्रमण भगवन्त महावीर को वंदना नमस्कार किया, वंदना
नमस्कार कर के संयम व तपसे आत्मा के स्वरूप को विचारते हुवे विचरने लगे यह पहिला शतक का
पहिला उद्देशा संपूर्ण हुआ. ॥ १ ॥ १ ॥ +

गत उद्देश में कर्म के चलनादि प्रश्नोत्तर कहे हैं वे कर्म दुःखरूप होते हैं इसलिये आगे दुःख का प्रश्न
करते हैं. राजगृह नगर के गुणशील नामक उद्यान में भगवन्त श्री महावीर स्वामी पथारे, परिपदा बांदने
को आई, वाणी सुनकर परिपदा पीछीगई. उस समय श्री गौतम स्वामीने भगवन्त को प्रश्न पुछा कि
अहो भगवन् ! जीव अपना किया हुआ दुःख वेदता है ? अहो गौतम ! कितनेक स्वकृत कर्मवेदे, कित-

जाता है जी० जीव अ० असंयति जा० यावत् दे० देवं सि० होवे ॥ ४५ ॥ सि० ऐसेही भ० भगवन् गो० गौतम
स० श्रमण भ० भगवन् म० महावीर को वं० वंदे ण० नमस्कार किया थं० वंदना करके सं० संयम से त०
तपसे अ० आत्मा को भा० भावते हुवे वि० विचरते हैं ॥ १ ॥ १ ॥ *
रा० राजगृह ण० नगर स० समवसरण प० परिपदाणि निर्गता जा० यावत् ए० ऐमा व० कथा जी०

गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता संज्जेमणं तवसाअप्पा-
णं भोवेमाणे विहरइ इति पढमसए पढमोद्देशो सम्मत्तो ॥ १ ॥ १ ॥ *

रायगिहे णथरे, समोसरणं, परिसा णिगगया जाव एवं. वयासी. जीवेणं भंते सय
वचनों को बहुत मान देकर गौतम स्वामीने श्रीःश्रमण भगवन्त महावीर को वंदना नमस्कार किया, वंदना
नमस्कार कर के संयम व तपसे आत्मा के स्वरूप को विचारते हुवे विचरने लगे यह पहिल्या शतक का
पहिल्या उदेशा संपूर्ण हुआ. ॥ १ ॥ १ ॥ +

गत उदेशे में कर्म के चलनादि प्रश्नोत्तर कहे हैं वे कर्म दुःखरूप होते हैं इसलिये आगे दुःख का प्रश्न
करते हैं. राजगृह नगर के गुणशील नामक उद्यान में भगवन्त श्री महावीर स्वामी पथारे, परिपदा वंदने
को आई, चाणी सुनकर परिपदा पीछीगई. उस समय श्री गौतम स्वामीने भगवन्त को प्रश्न पुछा कि
अहो भगवन् ! जीव अपना किया हुआ दुःख येदता है ? अहो गौतम ! कितनेक स्वकृत कर्मवंदे, कित-

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

भक्तिक अ० अतीव उ० सुंदर चि० हैं ए० ऐसे ते० उन वा० वाणव्यंतर दे० देवके दे० देवलोक ज०
जयन्य द० दशवर्ष स० सहस्र त्रि० स्थिति से उ० उत्कृष्ट प० पल्योपम ठि० स्थिति से व० बहुत वा०
वाणव्यंतर दे० देव दे० देवीसे आ० व्याप्त वि० विस्तीर्ण उ० आच्छादित सं० संस्तीर्णि फु० स्पर्श अ०
रहे गा० गुप्त सि० लक्ष्मी से अ० अतीत २ उ० सुंदर शोभते चि० हैं ए० ऐसे गो० गौतम ते० उन
वा० वाणव्यंतर दे० देवके दे० देवलोक प० प्ररूपे सो० वह ते० इसलियं गो० गौतम ए० ऐसा बु० कहा

णं देवाणं देवलोया जहण्णेणं दस वास सहस्स ठिईएहिं, उक्कोसेणं पलिओवमट्ठिईए-
हिं बहुहिं वाणमंतराहिं देवेहिय देवीहिय आतिण्णा, वित्तिण्णा, उवत्थडा संथडा फु-
डा, अवगाढगाढ सिरीए, अतीव अतीव उवसोभेमाणा उवसोभेमाणा चिट्ठति ॥ ए-
रिसगाणं गोयमा ! तोसिं वाणमंतराणं देवाणं देवलोगा पणत्ता से तेणट्ठेणं गोयमा !
एवं बुच्चइ जीवे णं असंजए जाव देवोसिया ॥ ४५ ॥ सेवं भंते ! भंते ति भगवं

संधारा जैसे विस्तीर्ण बने हुवे, आसन शयन रमण भाग से भोगवते व लक्ष्मी से अतीव सुशोभित रहे
हुवे हैं. अहो गौतम ! उन वाणव्यंतर के ऐसे देवलोक कहे हैं. और इसी कारण से कितनेक असंयति
जीव देवतापने उत्पन्न होवे और कितनेक उत्पन्न नहोवे ॥ ४५ ॥ अहो भगवन् जैसे मैंने पृच्छा की वैसे
ही आपने प्रतिपादन किया है. आप जैसा कहते हैं; वैसा ही है अन्यथा नहीं है. इस प्रकार भगवन्तके

नहीं उदयमें आया वे० वेदे से० वह ते० इसलिये ए० ऐसा बु० कहा जाता है ए० ऐसा च० चौधिस दं० दंडक की जा० यावत् वे० वैमानिक ज० जैसे दु० दुःख में दो० दोभेद त० तैसे आ० आयुष्य में ए० एकवचन पो० पृथक् ए० एक वचन से जा० यावत् वे० वैमानिक पु० पृथक् तक ॥ १ ॥ णे० नारकी भं० भगवन् स० सर्व स० सरिखे आहारी स० सर्व स० सरिखे शरीरी स० सर्व स० सरिखे ऊर्धासनी

जीविणं भंते सयं कंड आउयं वेदंति? गोयमा! अत्येगइयं वेदंति, अत्येगइयं णो वेदंति
जहा दुक्खेणं दो दंडगा तथा आउएणवि. एगत्त पोहत्तिया, एगत्तेणं, जाव वे-
माणिया पुहुत्तेणवि तहेव ॥ १ ॥ णेरइयाणं भंते सव्वे समाहारा सव्वे समसरीरा
सव्वे समुस्सासणिसासा? गोयमा णोइणट्टे रामट्टे? सेकेणट्टेणं भंते एवं बुच्चइ णे-
रइया णो सव्वे समाहारा णो सव्वे समुस्सासणिसासा? गोयमा! णेरइयां दुविहा पण्ण

नहीं. अहो भगवन् ! किसकारन से ? अहो गौतम ! उदय आयाहुवा वेदे और उदय में नहीं आयाहुवा वेदे
नहीं इस कारण से कितनेक जीव स्वकृत आयुष्य वेदे और कितनेक वेदे नहीं. ऐसे ही अनेक जीव आ-
श्रित जानना. और चौधिस ही दंडक आश्रित दोनों बोल उतारना ॥ १ ॥ आयुष्य आहार के बलसे ही
टिकता है इसलिये आहार संबंधी प्रश्न करते हैं अहो भगवन् ! क्या सब नारकी सरिखे आहार करने
वाले हैं ? क्या सब सरिखे शरीर वाले हैं ? क्या सब सरिखे भ्रासोभ्यास लेने वाले हैं ? अहो गौतम ! यह

* प्रकाशक-राजायहादुर लाला मुखर्ज्य सहायजी ज्वालामसादजी *

जीव भं० भगवन् स० स्वकृत दु० दुःख वे० वेदता है गो० गौतम अ० कितनेक वे० वेदे अ० कितनेक पो० नहीं वे० वेदे से० यह के० कीसररु भं० भगवन् ए० ऐसा बु० कहा जाता है अ० कितनेक वे० वेदे अ० कितनेक पो० नहीं वेदे गो० गौतम उ० उदयमें आया वे० वेदे पो० नहीं अ०

कडं दुक्खं वेदेइ ? गोयमा ! अत्थेगइयं वेदेइ, अत्थेगइयं नो वेदेइ । सेकेणट्टेणं भंते एवं वुच्चइ अत्थेगइयं वेदेइ अत्थेगइयं नो वेदेति ? गोयमा ! उदिणं वेदेति णो अणुदिणं वेदेति. सेतेणट्टेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! अत्थेगइयं वेदेइ, अत्थेगइयं णो वेदेइ एवं चउवीसदंडएणं जात्र वेमाणिए ॥ जीवाणं भंते सयं कडं दुक्खं वेदेति ? गोयमा ! अत्थेगइया वेदेति, अत्थेगइया णो वेदेति. । से केणट्टेणं भंते एवं वुच्चइ ? गोयमा ! उदिणं वेदेति. णो अणुदिणं वेदेति ॥ एवं जात्र वेमाणिया

नेक स्वकृत कर्मवेदे नहीं. अहो भगवन् ! किस कारण से कितनेक स्वकृत कर्म वेदते हैं और कितनेक नहीं वेदते हैं. अहो गौतम ! उदय में आये हुये कर्म वेदते हैं और उदय में नहीं आये हुये कर्म नहीं वेदते हैं और इसी कारण से ऐसा कहा है कि कितनेक जीव स्वकृत दुःखवेदे और कितनेक जीव स्वकृत दुःख नहीं वेदे. ऐसे ही पृथक् २ चौधिसही दंडक आश्रित जानना. उपर जैसे एक जीव आश्रित कहा है वैसेही अनेक जीव आश्रित जानना. अहो भगवन् जीव स्वकृत आयुष्य वेदे ? अहो गौतम ! कितनेक वेदे और कितनेक वेदे

नहीं उदयमें आया वे० वेदे से० वह ते० इसलिये ए० ऐसा बु० कहा जाता है ए० ऐसा च० चौविस दं० दंडक को जा० यावत् वे० वैमानीक ज० जैसे दु० दुःख में दो० दोभिद त० तैसे आ० आयुष्य में ए० एकवचन पो० पृथक् ए० एक वचन से जा० यावत् वे० वैमानिक पु० पृथक् तक ॥ ? ॥ णे० नारकी भे० भगवन् स० सर्व स० सरिखे आहारी स० सर्व स० सरिखे शरीरी स० सर्व स० सरिखे उन्धासनी

जीविणं भंते सयं कडं आउयं वेदेंति? गोयमा! अत्येगइयं वेदेंति, अत्येगइयं णोवेदेंति
जहा दुक्खेणं दो दंडगा तथा आउएणवि. एगत्त पोहत्तिया, एगत्तेणं, जाव वे-
माणिया पुहुत्तेणवि तहेव ॥ १ ॥ णेरइयाणं भंते सब्बे समाहारा सब्बे समसरीरा
सब्बे समुस्सासणिस्सासा ? गोयमा णोइणट्टे समट्टे ? सेकेणट्टेणं भंते एवं बुच्चइ णे-
रइया णो सब्बे समाहारा णो सब्बे समुस्सासणिस्सासा? गोयमा! णेरइयां दुविहा पण्णा

नहीं. अहो भगवन् ! किसकारन से ? अहो गौतम ! उदय आयाहुवा वेदे और उदय में नहीं आयाहुवा वेदे
नहीं इस कारण से कितनेक जीव स्वकृत आयुष्य वेदे और कितनेक वेदे नहीं. ऐसे ही अनेक जीव आ-
श्रित जानना. और चौविस ही दंडक आश्रित दोनों बोल उतारना ॥ ? ॥ आयुष्य आहार के बलसे ही
टिकता है इसलिये आहार संबंधी प्रश्न करते हैं अहो भगवन् ! क्या सब नारकी सरिखे आहार करने
वाले हैं ? क्या सब सरिखे शरीर वाले हैं ? क्या सब सरिखे श्वासोन्धास लेने वाले हैं ? अहो गौतम ! यह

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालामसादजी *

जीव भं० भगवन् स० स्वकृत दु० दुःख वे० वेदता है गो० गौतम अ० कितनेक वे० वेदे अ० कितनेक पो० नहीं वे० वेदे से० वह के० कीसतरह भं० भगवन् ए० ऐसा बु० कहा जाता है अ० कितनेक वे० वेदे अ० कितनेक पो० नहीं वेदे गो० गौतम उ० उदयमें आया वे० वेदे पो० नहीं अ०

कडं दुक्खं वेदेइ ? गोयमा ! अथेगइयं वेदेइ, अथेगइयं नो वेदेइ । सेकेणट्टेणं भंते एवं बुच्चइ अथेगइयं वेदेइ अथेगइयं नो वेदेति ? गोयमा ! उदिणं वेदेति णो अणुदिणं वेदेति, सेतेणट्टेणं एवं बुच्चइ गोयमा ! अथेगइयं वेदेइ, अथेगइयं णो वेदेइ एवं चउवीसदंडएणं जाव वेमाणिए ॥ जीवाणं भंते सयं कडं दुक्खं वेदेति ? गोयमा ! अथेगइया वेदेति, अथेगइया णो वेदेति । से केणट्टेणं भंते एवं बुच्चइ ? गोयमा ! उदिणं वेदेति, णो अणुदिणं वेदेति ॥ एवं जाव वेमाणिया

नेक स्वकृत कर्मवेदे नहीं. अहो भगवन् ! किस कारण से कितनेक स्वकृत कर्मो वेदते हैं और कितनेक नहीं वेदते हैं. अहो गौतम ! उदय में आये हुये कर्म वेदते हैं और उदय में नहीं आये हुये कर्म नहीं वेदते हैं और इसी कारण से ऐसा कहा है कि कितनेक जीव स्वकृत दुःखवेदे और कितनेक जीव स्वकृत दुःख नहीं वेदे. ऐसे ही पृथक् २ चौबिसही दंडक आश्रित जानना. उपर जैसे एक जीव आश्रित कहा है वैसेही अनेक जीव आश्रित जानना. अहो भगवन् जीव स्वकृत आयुष्य वेदे ? अहो गौतम ! कितनेक वेदे और कितनेक वेदे

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमद्भागवतसुत्रे ॥ श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ॥ अध्यायः १० ॥ अर्जुनस्य वचनम् ॥

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

नहीं उदयमें आया वे० वेदे से० वह ते० इसलिये ए० ऐसा बु० कहा जाता है ए० ऐसा च० चौधिस दं० दंडक की जा० यावत् वे० वैमानिक ज० जैसे दु० दुःख में दो० दोभेद त० तैसे आ० आयुष्य में ए० एकवचन पो० पृथक् ए० एक वचन से जा० यावत् वे० वैमानिक पु० पृथक् तक ॥ १ ॥ णे० नारकी भं० भगवन् स० सर्व स० सरिखे आहारी स० सर्व स० सरिखे शरीरी स० सर्व स० सरिखे ऊर्ध्वासनी

जीविणं भंते सयं कडं आउयं वेदंति? गोयमा! अत्येगइयं वेदंति, अत्येगइयं णो वेदंति
जहा दुक्खेणं दो दंडगा तहा आउएणवि. एगत्त पोहत्तिया, एगत्तेणं, जाव वे-
माणिया पुहुत्तेणवि तेहेव ॥ १ ॥ णेरइयाणं भंते सब्बे समाहारा सब्बे समसरीरा
सब्बे समुस्तासणिस्तासा ? गोयमा णोइणट्टे समट्टे ? सेकेणट्टेणं भंते एवं बुच्चइ णे-
रइया णो सब्बे समाहारा णो सब्बे समुस्तासणिस्तासा? गोयमा! णेरइयां दुविहा पण्ण

नहीं. अहो भगवन् ! किसकारन से ? अहो गौतम ! उदय आयाहुवा वेदे और उदय में नहीं आयाहुवा वेदे
नहीं इस कारण से कितनेक जीव स्वकृत आयुष्य वेदे और कितनेक वेदे नहीं. ऐसे ही अनेक जीव आ-
श्रित जानना. और चौधिस ही दंडक आश्रित दोनों बोल उतारना ॥ १ ॥ आयुष्य आहार के बलसे ही
दिकता है इसलिये आहार संबंधी प्रश्न करते हैं अहो भगवन् ! क्या सब नारकी सरिखे आहार करने
वाले हैं ? क्या सब सरिखे शरीर वाले हैं ? क्या सब सरीखे श्वासोश्वास लेने वाले हैं ? अहो गौतम ! यह

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

श्वासले गो० गौतम णो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ से० वह के० कैसे भ० भगवन् ए० ऐसा बु० कहा जाता है णे० नारकी णो० नहीं स० सर्व स० समाहारी णो० नहीं स० सर्व स० समशरीरी णो० नहीं स० सर्व स० सरिखा उ० उश्वास णि० निश्वासले गो० गौतम णे० नारकी दु० दोषकार के प० प्ररूपे म० महा शरीरी अ० अल्प शरीरी त० तहां जे० जो म० महा शरीरी ते० वे व० बहुत पो० पुद्गल आ० आहार

चातंजहा महासरीराय अप्सरीराय । तत्थणं जेते महासरीरा ते बहुतराए पोगले आहारेंति, बहुतराए पोगले परिणामेंति, बहुतराए पोगले ऊससंति, बहुतराए पोगले णीससंति, अभिक्खणं आहारेंति, अभिक्खणं परिणामेंति, अभिक्खणं ऊससंति, अप्पतराए पोगले परिणामेंति, तत्थणं जेते अप्सरीरा तेषं अप्पंतराए पोगले आहारेंति, अप्पतराए पोगले परिणामेंति,

अर्थ योग्य नहीं है. अहो भगवन् ! किस कारण से सब नारकी सरिखे आहार, शरीर, श्वासोश्वास वाले नहीं हैं ? अहो गौतम ! नारकी दोषकार के कहे हैं. ? बड़े शरीर वाले और २ छोटे शरीर वाले. * जो बड़े शरीर वाले हैं. वे बहुत दुःखी होते हुवे बहुत पुद्गलों का आहार करे, बहुत पुद्गलों परिणामवे बहुत पुद्गलों को उश्वास रूप से ग्रहण करे, बहुत पुद्गलों को निश्वासरूप से नीकाले और भी वारंवार

* नारकी की भवंधारनीय अवगाहना जघन्य अंगुलका असंख्यात वा भाग उत्कृष्ट ५०० धनुष्य और उत्तर वैक्रेय जघन्य अंगुल का असंख्यातवा भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन प्रमाण.

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

करे व० बहुत पो० पुद्गल प० परिणमे व० बहुत पो० पुद्गल ऊ० ऊश्वासो व० बहुत पो० पुद्गल कां नी०
 निश्वास ले अ० वारंवार आ० आहारले अ० वारंवार परिणमे अ० वारंवार ऊ० ऊश्वासले अ०
 वारंवार नी० निश्वासले त० तहां जे० जो० अ० अल्प शरीरी ते० वे अ० थोडा पो० पुद्गल आ०
 आहार करे अ० थोडा पो० पुद्गल परिणमें अ० थोडे पो० पुद्गल ऊ० ऊश्वासले अ० थोडे पो० पुद्गल
 नी० निश्वासले ॥ २ ॥ णे० नारकी भं० भगवन् स० सर्व स० समकर्म वाले गो० गौतम णो० नहीं इ०

अप्पतराए पोगले ऊससंति, अप्पतराए पोगले णीससंति । आहच्च आहारंति,
 आहच्च परिणामंति, आहच्च ऊससंति, आहच्च णीससंति. से तेणट्टुणं गोयमा ! एवं
 वुच्चइ, णेरइया णो सव्वे समाहारा, जाव णो सव्वे समुस्सास णीसासा ॥ २ ॥ णे-
 रइयाणं भंते सव्वे समकम्मा ? गोयमा ! णोइणट्टे समट्ठे, । सेकेणट्टुणं भंते एवं

आहारकरे, वारंवार परिणामवे, वारंवार श्वासलेवे, वारंवार श्वास नीकाले, और जो छोटे शरीर वाले
 हैं वे अल्प पुद्गलों का आहार करते हैं, अल्प पुद्गलों परिणामते हैं, अल्प पुद्गलों का श्वासलेते हैं, अल्प
 पुद्गलों को श्वासरूप नीकालते हैं अथवा आंतरा सहित आहार करते हैं, परिणामते हैं, श्वास लेते हैं व
 श्वास नीकालते हैं. इसलिये अहो गौतम ! ऐसा कहा है कि सब नारकी एक सरिखे शरीर, आहार व
 उश्वास, निश्वासवाले नहीं हैं ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! क्या सब नारकी सरिखे कर्म वाले हैं ? अहो

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

पुद्गलानि त्वानि पणानि (शब्दानि) (शब्दानि) (शब्दानि)

यह अर्थ सं० समर्थ से० वह के० कैसे भं० भगवन् ए० ऐसा बु० कहा जाता है गो० गौतम णे० नारकी
दु० दोषकार के पु० पहिले के उत्पन्न प० पश्चात् उ० उत्पन्न त० तहां जे० जो पु० पूर्वोत्पन्न ते० वे
अ० अल्प कर्म वाले त० तहां ज० जो प० पश्चात् उ० उत्पन्न ते० वे म० महाकर्म वाले ॥ ३ ॥ णे०

बुच्चइ? गोयमा ! णेरइयादुविहाप० तं० पुञ्चोववण्णगाय पञ्चोववण्णगाय तत्थणं जे ते
पुञ्चोववण्णगा तेणं अप्पकम्मतरा तत्थणं जे ते पञ्चोववण्णगा तेणं महाकम्मतरा
सेतेणट्टुणं गोयमा एवं बुच्चइ ॥ ३ ॥ णेरइयाणं भंते सव्वे समवण्णगा ? गोय-

गौतम ! वह अर्थ योग्य नहीं हैं. अहो भगवन् ! किस कारन से यह अर्थ योग्य नहीं है ? अहो गौतम !
नारकी के दो भेद ? पूर्वोत्पन्न-पहिले उत्पन्न हुवे २ पश्चादुत्पन्न-पीछे से उत्पन्न हुवे उस में जो
पहिले उत्पन्न हुवे हैं वे अल्पकर्मवाले हैं क्योंकि उनों ने आयुःकर्म तथा अन्य कर्म भेदे हुवे हैं व
जो पीछे उत्पन्न हुवे हैं वे बहुत कर्मवाले हैं क्योंकि उनों ने आयुष्य कर्म बहुत थोडा छेदा
हुवा है ÷ इमलिये सब नारकी सरिवे कर्म वाले नहीं हैं. ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! क्या सब नारकी सरिवे

÷ यहां सरिवि स्थिति वाले नारकी को अंगीकार करके यह सूत्र कहा है; अन्यथा कोई एक
सागरोपम की स्थिति वाला नाकी बहुत स्थिति भोगव कर शेष एक पल्योपम रहे पीछे दूसरा दश हजार
वर्ष की स्थिति वाला नारकी उत्पन्न होवे तो; क्या पहिले उत्पन्नहुवा शेष पल्योपमके आयुष्य वाला नारकी

नारकी भं० भगवन् स० सर्व स० समवर्णवाले गो० गौतम गो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ से० वह के० कैसे गो० गौतम जे० जो पु० पूर्वोत्पन्न ते० वे वि० विशुद्ध वर्णवाले त० तैसेही से० वह ते० इसलिये ॥ ४ ॥ जे० नारकी भं० भगवन् स० सर्व स० सम लक्ष्यावाले गो० गौतम गो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ त० तहाँ जे० जो पु० पूर्वोत्पन्न ते० वे वि० विशुद्ध लक्ष्यावाले जे० जो प० पीछे

मा ! जोइण्टे समष्टे । सेकेण्टेणं तहचेव ? गोयमा ! जे ते पुव्वोववणगा तेणं विसुद्ध वण्णतरागा तहेव । सेतेण्टेणं गोयमा ॥४॥ जेणइयाणं भंते सब्बे समलेस्सा ? गोयमा ! जोइण्टे समष्टे । सेकेण्टेणं जाव णो सब्बं समलेस्सा ? गोयमा ! जेणइया दुविहा पणत्ता तंजहा पुव्वोववणगाय, पच्छोववणगाय तत्थणं जे ते पुव्वोव

वर्ण वाले हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं हैं, क्या कारण से ? अहो गौतम ! नारकी के दो भेद पहिले उत्पन्न हुवे और पीछे उत्पन्न, जो पहिले उत्पन्न हुवे वे विशुद्ध वर्णवाले होते हैं, और पीछे जो उत्पन्न हुवे हैं वे विशुद्ध वर्ण वाले नहीं हैं; इसलिये अहो गौतम ! सब नारकी सम वर्ण वाले नहीं हैं ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! सब नारकी सरिखि लक्ष्या वाले हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है, क्या कारण से ? अहो गौतम ! नारकी के दो भेद ? पहिले उत्पन्न हुवे व २ पीछे उत्पन्न हुवे जे पहिले उत्पन्न हुवे हैं वे विशुद्ध

की आपेक्षा से दश हजार वर्ष की स्थिति वाला महाकर्पीहोसके ! अर्थात् नहीं होते.

यह अर्थ स० समर्थ से० वह के० कैसे भ० भगवन् ए० ऐसा बु० कहा जाता है गो० गौतम ण० नारकी दु० दीप्रकार के पु० पहिले के उत्पन्न प० पश्चात् उ० उत्पन्न त० तहां जे० जो पु० पूर्वोत्पन्न-ते० वे अ० अल्प कर्म वाले त० तहां ज० जो प० पश्चात् उ० उत्पन्न ते० वे म० महाकर्म वाले ॥ ३ ॥ ण०

बुच्चइ? गोयमा ! णेरइयादुविहाप० तं० पुब्बोववणगाय पच्छोववणगाय तत्थणं जे ते पुब्बोववणगा तेणं अप्पकम्मतरा तत्थणं जे ते पच्छोववणगा तेणं महाकम्मतरा सेतेणट्टेणं गोयमा एवं बुच्चइ ॥ ३ ॥ णेरइयाणं भंते सव्वे समवणगा ? गोय-

गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. अहो भगवन् ! किस कारन से यह अर्थ योग्य नहीं है ? अहो गौतम ! नारकी के दो भेद ? पूर्वोत्पन्न-पहिले उत्पन्न हुवे २ पश्चादुत्पन्न-पीछे से उत्पन्न हुवे उस में जो पहिले उत्पन्न हुवे हैं वे अल्पकर्मवाले हैं क्योंकि उनों ने आयुःकर्म तथा अन्य कर्म भेदे हुवे हैं व जो पीछे उत्पन्न हुवे हैं वे बहुत कर्मवाले हैं क्योंकि उनों ने आयुष्य कर्म बहुत थोडा छेदा हुवा है ÷ इमल्लिये सब नारकी सरिखे कर्म वाले नहीं हैं. ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! क्या सब नारकी सरिखे

÷ यहां सरिखि स्थिति वाले नारकी को अंगीकार करके यह सूत्र कहा है; अन्यथा कोई एक सागरोपम की स्थिति वाला नारकी बहुत स्थिति भोगव कर शेष एक पल्योपम रहे पीछे दूसरा दश हजार वर्ष की स्थिति वाला नारकी उत्पन्न होवे तो; क्या पहिले उत्पन्न हुवा शेष पल्योपमके आयुष्य वाला नारकी

जे० जो सं० संज्ञी ते० वे म० बहुत वेदना वाले जे० जो अ० असंज्ञी अ० थोड़ी वेदना वाले ॥६॥ जे० नारकी भ० भगवत्स० सर्व स० समक्रियावाले गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ जे० नारकी ति० तीन प्रकार के स० सम्यक् दृष्टि मि० मिथ्यादृष्टि स० सममिथ्यादृष्टि जे० जो स० ससदाष्टि ते० उन को च० चारक्रिया प० प्ररूपी आ०

ते असण्णिभूया तेणं अप्पवेयणतरागा से तेणट्ठेणं गोयमा ॥ ६ ॥ जेरइयाणं भंते सव्वे समकिरिया ? गोयमा ! जेणट्ठे समट्ठे । सेकेणट्ठेणं भंते ? गोयमा ! जेरइया त्तिविहा प० तं० सम्मदिट्ठीय, मिच्छादिट्ठीय, सम्ममिच्छादिट्ठीय । तत्थणं जेतं सम्मदिट्ठी तेसिणं चत्तारि किरियाओ पणत्ताओ तं० आरंभिया, परिग्गहिया,

ऐसा भी अर्थ करते हैं कि संज्ञी पंचेन्द्रिय नारकी में उत्पन्न होते सो संज्ञीभूत वे बहुत वेदनावाले होंगे क्योंकि अशुभ अध्यवसाय में बहुत अशुभ कर्म का बंध किया और इस से नरक में उत्पन्न हुवे. और असंज्ञी पंचेन्द्रिय प्रथम नरक में असंज्ञीपने उत्पन्न होते वे अल्प वेदनावाले होंगे क्योंकि उनको अति तीव्र अशुभ अध्यवसाय नहीं होते हैं. अथवा संज्ञीभूत सो पर्याप्त बहुत वेदनावाले और असंज्ञीभूत सो अपर्याप्त अल्पवेदना वाले, इसलिये अहो गौतम ! सब नारकी सरिखी वेदनावाले नहीं हैं ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! सब नारकी सम क्रियावाले हैं ? अहो गौतम यह अर्थ योग्य नहीं हैं. क्यों कि नारकी के तीन भेद करे है. १. समदृष्टी, २. मिथ्यादृष्टी ३. सममिथ्यादृष्टि. उस में जो समदृष्टी हैं उन को चार

* प्रकाशक राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

उत्पन्न हुवे ते० वे अ० अविशुद्ध लेख्यावाले ॥ ५ ॥ ने० नारकी भं० भगवत् स० सर्व स० समवेदनावाले गो० गौतम गो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ ने० नारकी दु० दोषकार के स० संज्ञी अ० असंज्ञी

वण्णगा तेणं विसुद्धलेसतरागा । तत्थणं जे ते पच्छोववण्णगा तेणं अविमुद्ध
लेसतरागा । सेतेणट्ठेणं गोयमा ! ॥ ५ ॥ णेरइयाणं भंते सव्वे समवेदणा ? गोय-
मा ! णोइणट्ठे समट्ठे । सेकेणट्ठेणं भंते ? गोयमा ! णेरइया दुविहा पण्णत्ता तंजहा
सग्गिभूयाय, असण्णिभूयाय । तत्थणं जेते सण्णिभूया तंणमहावेदणा, तत्थणं जे

लेख्या वाले होते हैं; क्यों की उन को अल्प कर्म रहते हैं और जो पीछे उत्पन्न हुवे हैं वे अशुद्ध लेख्या वाले हैं क्यों कि उन को बहुत कर्म रहते हैं इसलिये अहो गौतम ! सब नारकी सरिखी लेख्या वाले नहीं हैं ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! सब नारकी को सरिखी वेदना है ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है, किस कारण से ? अहो गौतम ! नारकी के दो भेद १ संज्ञीभूत सो समदृष्टि व असंज्ञीभूत सो मिथ्यादृष्टि, उस में जो संज्ञी भूत समदृष्टि हैं वे बहुत वेदना वाले हैं क्यों कि सम्यग् ज्ञान से पूर्वकृत कर्म विपाक की स्मृति होनेसे अती दुःख होने और पश्चात्ताप करे कि मैंने अरिहंत प्ररूपित धर्म पाला नहीं इस कारण से उन को मानसिक दुःख बहुत होय, और जो असंज्ञीभूत-मिथ्यादृष्टि हैं वे अल्पवेदना वाले हैं क्यों कि वे अपने कृतकर्म को नहीं जानते हैं इस से उन को मानसिक दुःख अल्प रहता है, कितनेक

जे० जो सं० संज्ञी ते० वे म० बहुत वेदना वाले जे० जो अ० असंज्ञी अ० थोड़ीवेदनावाले ॥६॥ ने० नारकी भं० भगवन् स० सर्व स० समक्रियावाले गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ ने० नारकी ति० तीन प्रकार के स० सम्यक् दृष्टि मि० मिथ्यादृष्टि स० सममिथ्यादृष्टि जे० जो स० ससद्दृष्टि ते० उन को च० चारक्रिया प० प्ररूपी आ०

ते असण्णिभूया तेणं अप्पवेयणतरागा से तेणट्टेणं गोयमा ॥ ६ ॥ णेरइयाणं भंते सव्वे समाकरिया ? गोयमा ! णोइणट्टे समट्टे । सेकेणट्टेणं भंते ? गोयमा ! णेरइया तिविहा प० तं० सम्मदिट्ठीय, मिच्छदिट्ठीय, सम्ममिच्छदिट्ठीय । तत्थणं जंते सम्मदिट्ठी तेसिणं चत्तारि किरियाओ पणत्ताओ तं० आरंभिया, परिग्गहिया,

ऐसा भी अर्थ करते हैं कि संज्ञी पंचेन्द्रिय नारकी में उत्पन्न होवे सो संज्ञीभूत वे बहुत वेदनावाले होवे क्यों कि अशुभ अध्यवसाय से बहुत अशुभ कर्म का बंध कीया और इस से नरक में उत्पन्न हुवे. और असंज्ञी पंचेन्द्रिय प्रथम नरक में असंज्ञीपने उत्पन्न होवे वे अल्प वेदनावाले होवे क्यों कि उनको अति तीव्र अशुभ अध्यवसाय नहीं होते हैं. अथवा संज्ञीभूत सो पर्याप्ता बहुत वेदनावाले और असंज्ञीभूत सो अपर्याप्ता अल्पवेदना वाले, इसलिये अहो गौतम ! सब नारकी सरिखी वेदनावाले नहीं हैं ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! सब नारकी सम क्रियावाले हैं ? अहो गौतम यह अर्थ योग्य नहीं हैं. क्यों कि नारकी के तीन भेद कहे है. ? समदृष्टी, २ मिथ्यादृष्टी ३ सममिथ्यादृष्टि. उस में जो समदृष्टी हैं उन को चार

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(संज्ञी) (संज्ञी) (संज्ञी) (संज्ञी) (संज्ञी) (संज्ञी) (संज्ञी) (संज्ञी) (संज्ञी) (संज्ञी)

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

आरंभिकी प० प० परिग्रहिकी मा० मायाप्रत्ययिकी अ० अप्रत्याख्यानक्रिया मि० मिथ्यादृष्टि को पं० पांच क्रिया आ० आरंभिकी जा० यावत् मि० मिथ्यादर्शन प्रत्ययिकी ए० ए०से स० सममिथ्या दृष्टि को भी ॥ ७ ॥ ने० नारकी भं० भगवन् स० सर्व स० सम आयुष्यवाले स० सम उत्पन्न गो० गौतम गो० नहीं

मायावत्तिया, अपञ्चखणकिरिया, । तत्थणं जे ते मिच्छद्विद्वी तेसिणं पंचकिरिया ओ कज्जति तं० आरंभिया जाव मिच्छादंसणवत्तिया । एवंसम्ममिच्छद्विद्वीणंपि सेतेणट्टेणं गोयमा ॥७॥ नेरइयाणं भंते सब्वेसमाउया सब्वे समोववणणा ? गोयमा !

क्रिया लगती है ? पृथिव्यादिक का आरंभसो आरंभिकी २ शरीरादिपर मत्त्व सो परिग्रहिकी २ वक्रपना व क्रोध, मान व माया युक्त स्वभावसो मायाप्रत्ययिकी और ४ निवृत्ति के अभाव से जो क्रिया लगेसो अप्रत्याख्यान. मिथ्यादृष्टी नारकी को पांच क्रिया लगे. उक्त चार क्रियायों में मिथ्यादर्शन प्रत्ययिक क्रिया बढी. और ऐसे ही समपिथ्यादृष्टी को जानना. इस कारण से अहो गौतम ! नारकी को सरिखि क्रिया नहीं है. ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! सब नारकी सरीखे आयुष्य वाले हैं ? और सब सरीखे-एक साथ उत्पन्न होनेवाले हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. अहो भगवन् ! किस कारण से यह अर्थ योग्य नहीं है ? अहो गौतम ! नारकी के चार भेद कहे हैं. ? कितनेक सम आयुष्य वाले हैं और एक साथ उत्पन्न होनेवाले हैं २ कितनेक. सम आयुष्यवाले हैं विषम उत्पन्न होते हैं अर्थात्

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

आरंभिकी प० प० परिग्रहिकी मा० मायाप्रत्ययिकी अ० अप्रत्याख्यानक्रिया मि० मिथ्यादृष्टि को पं० पांच क्रिया आ० आरंभिकी जा० यावत् मि० मिथ्यादर्शन प्रत्ययिकी ए० ए०से स० सममिथ्या दृष्टि को भी ॥ ७ ॥ ने० नारकी भं० भगवन् स० सर्व स० सम आयुष्यवाले स० सम उत्पन्न गो० गौतम जो० नहीं

मायावृत्तिया, अपञ्चस्वाणकिरिया, । तत्थणं जे ते मिच्छद्विट्ठी तेसिणं पंचकिरिया ओ कज्जाति तं० आरंभिया जात्र मिच्छदंसणवत्तिया । एवंसम्ममिच्छद्विट्ठीणंपि. सेतेणट्टेणं गोयमा ॥७॥ णेरइयणं भंते सब्बेसमाउया सब्बे समोववणणा ? गोयमा !

क्रिया लगती है ? पृथिव्यादिक का आरंभसो आरंभिकी २ शरीरादिपर ममत्व सो परिग्रहिकी ३ वक्रपना व क्रोध, मान व माया युक्त स्वभावसो मायाप्रत्ययिकी और ४ निवृत्ति के अभाव से जो क्रिया लगेसो अप्रत्याख्यान. मिथ्यादृष्टी नारकी को पांच क्रिया लगे. उक्त चार क्रियायों में मिथ्यादर्शन प्रत्यायिक क्रिया बढी. और ऐसे ही सममिथ्यादृष्टी को जानना. इस कारण से अहो गौतम ! नारकी को सरिखि क्रिया नहीं है. ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! सब नारकी सरिखे आयुष्य वाले हैं ? और सब सरिखे-एक साथ उत्पन्न होनेवाले हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. अहो भगवन् ! किस कारण से यह अर्थ योग्य नहीं है ? अहो गौतम ! नारकी के चार भेद कहे हैं. ? कितनेक संम आयुष्य वाले हैं और एक साथ उत्पन्न होनेवाले हैं २ कितनेक. सम आयुष्यवाले हैं विषम उत्पन्न होते हैं अर्थात्

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

ना ण० विशेष क० कर्म व० वर्ण ले० लेख्या प० कहना पु० पूर्वोत्पन्न म० बहुत कर्मवाले अ० अविशुद्धवर्ण वाले अ० अविशुद्ध लेख्यावाले प० पीछे उत्पन्न हुवे प० प्रशस्त से० शेष तं० तैसे ए० ऐसे जा० यावत् थ० स्थानित कुमार

तहा भाणियव्वा, णवरं कम्म, वण्ण, लेस्साओ, परिवण्णयव्वाओ पुब्बोववण्णगा
 महाकम्मतरा, अविशुद्ध वण्णतरा, अविशुद्ध लेसतरा, पच्छोववण्णगा पसत्था से-
 संतंचेव. एवं जात्र थणियकुमाराणं ॥ ९ ॥ पुढविकाइयाणं आहारकम्म वण्ण लेस्सा

है वे बहुत पुद्गलों का आहार करते हैं, और जो छोटे शरीर वाले होते हैं वे अल्प पुद्गलों का आहार करते हैं. जयन्य चतुर्थभक्त उत्कृष्ट एक हजार वर्ष में आहार की इच्छा उत्पन्न होवे. जयन्य सातस्तोक में उत्कृष्ट पुरुष में श्वासोश्वास लेते हैं, जो पहिले उत्पन्न हुवे हैं वे महाकर्मि, अविशुद्ध वर्ण वाले, अविशुद्धले ख्या वाले हैं और जो पीछे उत्पन्न हुवे हैं वे अल्प कर्म वाले, विशुद्ध वर्ण व विशुद्ध लेख्या वाले हैं. क्यों की पहिले उत्पन्न हुवे देवताओ अतिलुब्धता से दीव्य सुखों को भोगकर बहुत शुभ कर्म का क्षय करते हैं और अशुभ कर्म का संचय करते हैं इस से कितनेक तिर्यच पृथ्वी पानी वनस्पति में उत्पन्न होते हैं. और पीछे से उत्पन्न होने वाले के पुण्य के दल रह जाने से विशुद्ध वर्ण लेख्या वाले होते हैं शेष सब अधिकार नारकी जैसे कहना जैसे असुरकुमार का कहा वैसे ही स्तनित कुमार का जानना. ॥ ९ ॥ पृथ्वी

शब्दार्थ सुत्र भावार्थ

शब्दार्थ सुत्र भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्देव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

ना ण० विशेष क० कर्म व० वर्ण ले० लेख्या प० कहना पु० पूर्वोत्पन्न म० बहुत कर्मवाले अ० अविशुद्धवर्ण वाले अ० अविशुद्ध लेख्यावाले प० पीछे उत्पन्न हुवे प० प्रशस्त से० शेष तं० तैसे ए० ऐसे जा० यावत् थ० स्थानित कुमार

तहा भाणियव्वा, णवरं कम्म, वण्ण, लेस्साओ, परिवण्णेयव्वाओ पुब्बोववण्णगा
महाकम्मतरा, अविशुद्ध वण्णतरा, अविशुद्ध लेसतरा, पच्छोववण्णगा पसत्था से-
संतंचेव. एवं जाव थणियकुमाराणं ॥ ९ ॥ पुढविकाइयाणं आहारकम्म वण्ण लेस्सा

है वे बहुत पुद्गलों का आहार करते हैं, और जो छोटे शरीर वाले होते हैं वे अल्प पुद्गलों का आहार करते हैं. जगन्प चतुर्थभक्त उत्कृष्ट एक हजार वर्ष में आहार की इच्छा उत्पन्न होती. जगन्प सातस्तोक में उत्कृष्ट एतत्पक्ष में श्वासोश्वास लेते हैं, जो पहिले उत्पन्न हुवे हैं वे महाकर्मी, अविशुद्ध वर्ण वाले, अविशुद्धले ख्या वाले हैं और जो पीछे उत्पन्न हुवे हैं वे अल्प कर्म वाले, विशुद्ध वर्ण व विशुद्ध लेख्या वाले हैं. क्यों की पहिले उत्पन्न हुवे देवताओ अतिलुब्धता से दीव्य सुखों को भोगकर बहुत शुभ कर्म का क्षय करते हैं और अशुभ कर्म का संचय करते हैं इस से किनेक तिर्यच पृथ्वी पानी वनस्पति में उत्पन्न होते हैं. और पीछे से उत्पन्न होने वाले के पुण्य के दल रह जाने से विशुद्ध वर्ण लेख्या वाले होते हैं शेष सब अधिकार नारकी जैसे कहना जैसे असुरकुमारों का कहा जैसे ही स्तनित कुमार का जानना. ॥ ९ ॥ पृथ्वी

॥ ९ ॥ पु० पृथ्वी काया को आ० आहार क० कर्म व० वर्ण लेख्या ज० जैसे णे० नारकी पु० पृथ्वीकाया भं० भगवन् स० सर्व स० समवेदना वाले हं० हा स० समवेदना वाले से० वह के० कैसे गो० गौतम पु० पृथ्वीकाया स० सर्व अ० अंशज्ञि अ० निर्द्धारविना वे० वेदते हैं से० वह ते० इसलिये पु० पृथ्वीकाया गो० भगवन् स० सर्व स० समक्रियावाले हं० हां स० सक्रिया वाले से० वह के० कैसे पु० पृथ्वी काया गो० गौतम स० सर्व मा० मांयी मि० मिथ्यादृष्टि णे० निरंतर पं० पांचक्रिया क० करते हैं आ० आर्गंभिकी

जहा णेरइयाणं, पुढविकाइयाणं भंते सब्बे समवेदणा ? हंता समवेदणा से केणट्टेणं भंते सब्बे समवेयणा ? गोयमा ! पुढविकाइया सब्बे असण्णिभूया, अणिदाए वेदणं वेदंति सेत्तेणट्टेणं । पुढविकाइयाणं भंते सब्बे समकिरिया ? हंता समकिरिया । सेकेणट्टेणं भंते पुढविकाइया ? गोयमा ! पुढविकाइया सब्बे माइमिच्छदिट्ठी ताणंणेय-

काया को आहार, कर्म, वर्ण, व लेख्या नारकी जैसे कहना. अहो भगवन् ! क्या सब पृथ्वीकायिक जीव समवेदना वाले हैं ? गौतम सब पृथ्वी कायिक जीव समवेदनावाले हैं. अहो भगवन् ! किम तरहसे वे सब समवेदना वेदते हैं ? अहो गौतम ! सब पृथ्वीकायिक असंज्ञी भूत होने से निर्धार विना वेदना वेदते हैं परंतु ये कर्म पहिले के उपाजित हैं वैसा जाने नहीं इसलिये अहो गौतम ! सब पृथ्वी कायिकजीव समवेदना वेदते हैं. अहो भगवन् ! सब पृथ्वी कायिक जीव सरिखी क्रिया वाले हैं. ! हां गौतम वे सब सरिखी

मिथ्यादृष्टि स० सममिथ्यादृष्टि त० तहां जे० जो स० समदृष्टि ते० वे हु० दो प्रकार के अ० असंयति सं० संयतासंयति त० तहां जे० जो सं० संयतासंयति ते० उनको ति० तीन कि० क्रिया तें० वह ज० जैसे आ० आरंभिकी प० परिग्रहिकी मा० मायाप्रत्ययिकी अ० असंयति को च० चार मि०

रिया ? गोयमा ! णोइणट्टे समट्टे । सेकेणट्टेणं भंते ? गोयमा ! पंचिंदिय तिरिक्खजो-
णिया, तिविहा प० तं० सम्माद्विट्ठी, मिच्छद्विट्ठी ! सम्ममिच्छद्विट्ठी, तत्थणं जे ते
सम्माद्विट्ठी ते दुविहा प० तं० असंजयाय, संजयासंजयाय, तत्थणं जे ते संजयासंजया
तेसिणं तिण्णि किरियाओकजंति, तंजहा-आरंभिया, परिग्गहिया, मायावत्तिया. असंज-

छोटा शरीरको अपनी २ अवगाहना जैसे कहना. विकलेन्द्रियादिक को प्रक्षेप आहार होता है ॥ ११ ॥
तिर्यक् पंचेन्द्रिय नारकी जैसे कहना. परंतु क्रिया में जो भेद हैं सो बताते हैं. अहो भगवन् क्या सब
तिर्यक् पंचेन्द्रिय सरिख क्रिया वाले हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं हैं. किस कारन से ? ति-
र्यक् पंचेन्द्रिय के तीन भेद, सम्यक् दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, व सममिथ्यादृष्टि; उस में जो समदृष्टि हैं उनके दो
भेद असंयति व संयतासंयति उस में जो संयतासंयति हैं. उनको तीन क्रिया लगती हैं. १ आरंभिकी, २
परिग्रहिकी व ३ मायाप्रत्यादिकी. अमंगलिके चार, सममिथ्यादृष्टि व मिथ्यादृष्टी को पांच व क्रियाओं कही

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुबदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

जा० यावत् मि० मिथ्या दर्शन प्रत्ययिकी से० वह ते० इसलिये पु० पृथ्वी काया स० समायुष्य वाले स० समवर्ण वाले ज० जैसे णे० नारकी त० तैसे भा० कहना ॥ १० ॥ ज० जैसे पु० पृथ्वी काया त० तैसे जा० यावत् च० चतुरेन्द्रिय ॥ ११ ॥ पं० पंचेन्द्रिय तिर्यच ज० जैसे णे० नारकी णा० नानाप्रकार कि० क्रियापै पं० पंचेन्द्रिय तिर्यच भं० भगवन् स० सर्व स० समक्रिया वाले गो० गौतम गो० नहीं ३० यह अर्थ स० समर्थ से० वह के० कैने गो० गौतम पं० पंचेन्द्रिय तिर्यच ति० तीन प्रकार के स० समदृष्टि मि०

तियाणं पंचकिरियाओ कज्जंति, तंजहा - आरंभिया जाव मिच्छादंसणवत्तिया. सेते-
णट्ठेणं. पुढविकाइया समाउया समोववणणा? जहा णेरइया तहा भाणियव्वा ॥ १० ॥
जहा पुढविकाइया तहा जाव चउरिंदिया ॥ ११ ॥ पंचिंदिय तिरिक्खजोणिया
जहा णेरइया, णाणत्तं किरियासु ॥ पंचिंदिय तिरिक्ख जोणियाणं भंते सव्वे समकि-

क्रिया वाले हैं ? अहो भगवन् ! वह कैसे ? अहो गौतम ! सब पृथ्वीकायिक जीव मायावी व मिथ्या दृष्टी हैं, उनको भ्रमस्पही आरंभिकी यावत् मिथ्या दर्शन प्रत्ययिकी पांच क्रियायों लगती हैं. इसी से पृथ्वी कायिक जीव समक्रिया वाले हैं. सब पृथ्वी कायिक जीव. सरिखे आयुष्य वाले. व साथ उत्पन्न होने वाले हैं? इसका सब अधिकार नारकी जैसे कहना ॥ १० ॥ जैसे पृथ्वी कायाका अधिकार कहा वैसेही अप्काय तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, द्वीन्द्रिय, तेइन्द्रिय व चतुरेन्द्रिय का जानना. यहांपर बडा शरीर व

वे० देदना म० मनुष्य भ० मगधन् स० सर्व स० समक्रिया वाले गो० गौतम गो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ भे० वह के० कैसे गो० गौतम म० मनुष्य ति० तीन प्रकार के स० समहाष्टि मि० मिथ्याहाष्टि स० सममिथ्याहाष्टि त० तहाँ जे० जो स० समहाष्टि तेः वे ति० तीन प्रकार के स० संयति अ० असंयति सं० संयतासंयति जे० जो सं० संयति ते० वे दु० दो प्रकार के स० सराग संयति वी० वीतराग संयति त० तहाँ जे० जो वी० वीतराग संयति ते० वे अ० अक्रिया वाले स० सराग संयति दु० दो-

समकिरिया ? गोयमा ! णोइणट्टे समट्टे । सेकेणट्टेण भंते ? गोयमा ! मणुस्सा तिविहा पणत्तां तं० सम्मादिट्ठी, मिच्छदिट्ठी, सम्ममिच्छदिट्ठी, तत्थणं जे ते सम्मादिट्ठी ते तिविहा प० तं० संजयाय असंजयाय संजया संजयाय । तत्थणं जे ते वीथराग संजया ते दुविहा प० तं० सराग संजयाय वीथराग संजयाय, तत्थणं जे ते वीथराग संजया तेणं अकिरिया । तत्थणं जे ते सराग संजया ते दुविहा प० तं० पमत्त संजयाय,

मनुष्य के तीन भेद कहे हैं सम्यक्हाष्टि, मिथ्याहाष्टि समाभिध्याहाष्टि; उस में जो सम्यग्हाष्टि हैं उनके तीन भेद कहे हैं संयति, असंयति व संयतासंयति; उसमें संयति के दो भेद सरागसंयति व वीतराग संयति. उसमें जो वीतराग संयति हैं वे अक्रिय हैं अर्थात् उन को किसी भी सांसारिक क्रिया नहीं लगती है. जो सरागसंयति हैं उनके दो भेद प्रमत्त संयति व अप्रमत्त संयति सातवे गुण स्थानवृत्ति हैं उनको प्रकृत, गायामत्यायिकी क्रिया लगती है और छोटे गुण स्थानवृत्ति प्रमत्त संयति को आरांभिकी व

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

मिथ्यांदाष्टिको पं०पांच स०सममिथ्यादाष्टि को पं०पांचा॥१२॥ म०मनुष्य ज०जैसे ण०नारकी णा० नानामकार
म०महाशरीरी आ० कदाचित् आ०आहार करते हैं जे० जो अ० अल्प शरीरी ते० वे अ० थोड़े पो० पुद्रल
आ० आहार करते हैं अ० वारंवार आ० आहार करते हैं से० शेष ज० जैसे णे० नारकी जा० यावत्

याणं चचारि, मिच्छद्विद्विणं पंच सम्मिच्छद्विद्विणं पंचा॥१२॥ मणुस्सा जहा णेरइया, णाणत्तं

जे महासरीरा ते आहच्च आहारंति ४ । जे अप्पसरीरा ते अप्पतराए पोग्गले आहारंति

४ । अभिक्खणं आहारंति. सेसं जहा णेरइयाणं जाव वेदणा. मणुस्साणं भंते सब्बे

॥१२॥ मनुष्य का अधिकार नारकी जैसे कहना. विशेष इतना कि-क्या सब मनुष्य सरिखे आहार करनेवाले हैं? अहो गौतम ! मनुष्य के दो भेद; बड़े शरीरवाले व छोटे शरीरवाले. उस में जो बड़े शरीर वाले हैं वे बहुत पुद्रलों का आहार करते हैं, बहुत पुद्रल परिणमते हैं, वैसे ही श्वासोश्वास लेते हैं. यहां नरकमें वारंवार आहार करने का कहा है, परंतु देवकुरु उत्तरकुरु के युगलिये तीन दिन में आहार लेते हैं. छोटे शरीर वाले अल्प पुद्रलों का आहार करते हैं, उस के दो भेद समूर्च्छिम व बालक वे दोनों वारंवार आहार करते हैं. नारकी का सब अधिकार नारकी जैसे कहना. अहो भगवन् ! सब मनुष्य सरिखि क्रिया वाले हैं? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं हैं. अहो भगवन् ! किम कारणं से यह अर्थ योग्य नहीं है? अहो गौतम !

मिथ्या दृष्टि उ० उत्पन्न हुवे अ० अल्प वेदना वाले अ० अमायी स० समदृष्टि उ० उत्पन्न हुवे म० बहुत वेदना भा० कहना जो० ज्योतिषी वे० वैमानिक को ॥ १४ ॥ म० मलेशी ण० नारकी स० सर्व स० समाहारी औ० औधिक स० सलेशी सु० शुक्लेशी ए० इन ति० तीन में ए० एक सरिले क० कृ० णलेशी नी० नीललेशी ए० एक सरिले ण० विशेष वे० वेदना में मा० मायी मि० मिथ्यादृष्टि उ० उत्पन्न

सुरकुमारा णवरं वेदणाए णाणत्तं । मायी मिच्छिद्दिट्ठी उववण्णगाय अप्पवेयणतरा,
अमायी सम्मद्दिट्ठी उववण्णगाय महात्रेयणतरा भाणियव्वा ॥ जोइस वेमणियाय
॥ १४ ॥ सल्लेस्साणं भंते णेरइया सव्वे समाहारगा ओहियाणं, सल्लेस्साणं

प्रकारकी है सो बताते हैं. ज्योतिषी वैमानिक में मायी मिथ्यादृष्टि पते उत्पन्न हुवे सो अल्पवेदनावाले हैं क्यों की उन को साता वेदनीय कर्म अल्प रहता है. और अमायी सम्यक्दृष्टि बहुत वेदनावाले हैं क्यों की उनको साता वेदनीय कर्म विशेष रहना है इतना ज्योतिषी व वैमानिक में असुरकुमार से विशेष है शेष सब असुरकुमार जैसे कहना ॥ १४ ॥ अहो भगवन् ! लक्ष्या सहित नारकी क्या सरिले आहार करनेवाले हैं ? अहो गौतम ! समुच्च जीव, सलेशी व शुक्लेशी इन तीन का एक गमा जानना. कृष्ण व नील लेशीका एक गमा जानना, वेदना में इतना विशेषता कि मायावी, मिथ्यादृष्टी को बहुत वेदना और अमायी सम्यग्दृष्टी को अल्पवेदना. मनुष्यपद में, क्रिया सूत्र में व औधिक (समुच्च) दंडक में सराग, वीतराग,

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुबरेक सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

हूँ अ० अंभायी स० समदृष्टि उ० उत्पन्न हूँ वे भा० कहना म० मनुष्य कि० क्रिया में स० सरागी
वी० वीतरागी अ० अपमत्त प० प्रमत्त भा० कहना का० कापुतलेशी ए० ऐसे ण० विशेष णे० नारकी
ज० जैसे ओ० अधिक दं० दंडक त० तैसे भा० कहना ते० तेजु लेशी प० पब्लेशी ज० जिनको अ०
है ज० जैसे ओ० अधिक त० तैसे भा० कहना ण० विशेष म० मनुष्य स० सरागी वी० वीतरागी भा०
कहना दु० दुःख आ० आयुष्य उ० उदीरणा आ० आहार क० कर्म व० वर्ण ले० लेख्या स०

सुकलेस्साणं एएसिणं तिण्हं एक्कोगमो कण्हलसणील्लेस्साणपि एगोगमो ॥ णवरं
वेदणाए मायीमिच्छद्विड्ढीउववण्णगाय, अमार्यासम्मद्विड्ढी उववण्णगाय भाणियव्वा म-
णुरसा किरियासु सराग वीतराग अपमत्ता पमत्ताण भाणियव्वा ॥ काउलेस्साणवि
एवमेवगमो णवरं णेरइए जहा ओहिए दंडए तथा भाणियव्वा, तेउलेस्सा, पमहेल्स्सा
जस्स अत्थि जहा ओहिओ तथा भाणियव्वा णवरं मणुस्सा सराग वीतरागा ण भा-

अपमत्त व प्रमत्त कहा है, परंतु कृष्ण नीलेख्यावाले मनुष्य में यह कहना नहीं; क्योंकि दोनों लेख्यावाले
को संयोग का अभाव होता है. कापुत लेख्या में बैसा जानना परंतु नारकी को अधिक दंडक जैसे कहना.
तेजो लेख्या व पब्लेश्या जिन को हैं; उन को अधिक दंडक जैसे कहना. मनुष्य सराग वीतराग कहे हूँ
हूँ वे यहांपर कहना नहीं; क्यों की तीनों लेख्यावालों को वीतरागपने का अभाव होता है. अब उद्देश
के प्रारंभ से जो अधिकार आयासे माथासे बतातैं. एक वचन व बहुवचन आश्रित क्या दुःख व आयुष्य

समवेदना स० समक्रियां स० समायुष्य वो० जानना ॥ १५ ॥ क० कितनी भ० भगवन् ले० लेख्या प०
प्ररूपी गो० गौतम छ० छत्रेश्या प० प्ररूपी ल० लेख्या का धी० दूसरा उ० उद्देशा भा० कठना जा०

णियव्वा गाथा ॥ दुक्खाउएउदिण्णे आहारे कम्म वण्ण लेस्साय सम-
वेयण समकिरिया. समाउया चव बोधव्वा ॥ १ ॥ १६ ॥ कइणं भंते
लेस्साओ पणत्ताओ ? गोयमा ! छ लेस्साओ पणत्ताओ, तंजहा लेस्साणं वीओउ-

उदय में आया हुवा वेदे ? क्या सरिखे आहार, कर्म वर्ण, लेख्या, वेदना, क्रिया व आयुष्यवाले हैं ?
वगैरह सब पूर्वोक्त जैसे कहना. ॥१५॥ नागकी सलेशी हैं ऐसा पहिले कहा इसलिये आगे लेख्याका स्वरूप
कहते हैं. अहो भगवन् ! लेख्या के कितने भेद ? अहो गौतम ! लेख्या के छ भेद कहे हैं इन छही
लेख्या का वर्णन पदवणा सूत्र में लेख्यापद का दूसरा उद्देशा में जैसा कहा है वैसा जानना: अहो भगवन् !
इन लेख्यामेंसे कौनसी लेख्यावाला विशेष ऋद्धि का धारक व कौनसी लेख्यावाला अल्पऋद्धिका धारक
होता है ? अहो गौतम ! कृष्ण लेख्या से नील लेख्यावाला अधिक ऋद्धिका धारक होता है, नील लेख्या
से कापोत लेख्यावाला अधिक ऋद्धिका धारक होता है, कापोत से तेजो लेख्यावाला अधिक ऋद्धि का
धारक होता है, तेजोसे पद्मलेख्यावाला अधिक ऋद्धिका धारक होता है, और पद्म से शुक्र लेख्यावाला

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहार लाला सुब्रह्म सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

हुवे अ० अमायी स० समदृष्टि उ० उत्पन्न हुवे भा० कहना म० मनुष्य कि० क्रिया में स० सरागी
वी० वीतरागी अ० अप्रमत्त प० प्रमत्त भा० कहना का० कापुतलेशी ए० ऐसे ण० विशेष णे० नारकी
ज० जैसे ओ० औधिक दं० दंडक त० तैसे भा० कहना ते० तेजु लेशी' प० पद्मलेशी ज० जिनकी अ०
ही ज० जैसे ओ० औधिक त० तैसे भा० कहना ण० विशेष म० मनुष्य स० सरांगी वी० वीतरागी भा०
कहना दु० दुःख आ० आयुष्य उ० उदीरणा आ० आहार क० कर्म व० वर्ण ले० लेख्या स०

सुक्कलेस्साणं एएसिणं तिण्हं एक्कोगमो कण्हलसणील्लेस्साणंपि एगोगमो ॥ णवरं
वेदणाए मायीमिच्छद्विद्वीउववणगाय, अमायीसम्मद्विद्वी उववणगाय भाणियव्वा म-
णुरसा किरियासु सराग वीतराग अपमत्ता पमत्ताण भाणियव्वा ॥ काउलेस्साणवि
एवमेवगमो णवरं णेरइए जहा ओहिए दंडए तथा भाणियव्वा, तेउलेस्सा, पमहेलस्सा
जरस आत्थि जहा ओहिओ तथा भाणियव्वा णवरं मणुरसा सराग वीतरागा ण भा-

अपमत्त व प्रमत्त कहा है, परंतु कृष्ण नीललेश्यावाले मनुष्य में यह कहना नहीं; क्योंकि दोनों लेश्यावाले
को संयोग का अभाव होता है. कापुत लेश्या में वैसा जानना परंतु नारकी को औधिक दंडक जैसे कहना.
तेजो लेश्या व पद्मलेश्या जिन को हैं; उन को औधिक दंडक जैसे कहना. मनुष्य सराग वीतराग कहे हुवे
हैं वे यथां पर कहना नहीं; क्यों की तीनों लेश्यावालों को वीतरागपने का अभाव होता है. अब उदेश
के प्रारंभ से जो अधिकार आयसो गाथासे बतातेहैं. एक वचन व बहुवचन आश्रित क्या दुःख व आयुष्य

ति० तीन प्रकार का सु० शून्य काल अ० अशून्य काल मि० मिश्रकाल ति० तिर्यच का सं० संसार सं०
संचिठण काल पु० पृच्छा गो० गौतम दु० दोप्रकार का अ० अशून्य काल मि० मिश्रकाल म० मनुष्य

संसारसंचिठण काले, देव संसार संचिठण काले। णेरइय संसार संचिठण कालेणं भंते
कइविहे प०? गोयमा। तिचिहे प०तं० सुण्णकाले, असुण्णकाले, मिस्सकाले। तिरिक्ख

संचिठन काल ३ मनुष्य के भव में रहे सो मनुष्य संसार संचिठन काल ४ देवता के भव में रहे सो देव
संसार संचिठन काल. अहो भगवन्न ! नारकी संसार संचिठन काल के कितने भेद ? अहो
गौतम ! नारक संसार संचिठन काल के तीन भेद कहे हैं ? शून्यकाल २ अशून्यकाल और ३ मिश्रकाल
* अहो भगवन्न ! तिर्यच संसार संचिठन कालके कितने भेद ? अहो गौतम ! दो भेद. अशून्यकाल

* वर्तमान कालमें सातों नरकमें जो नारकी विद्यमानहैं उनमेंसे कोई उद्वर्तनहीं, और उसमें कोई नविन
उत्पन्न होवे नहीं, जितने हैं उतने ही रहे सो नरक गति आश्रित अशून्यकाल. जैसे कहा है आइइ समइ-
याणं नेइयाणं न जाव एक्को वि उवइइ अण्णोवा उवज्जइ सो अमुण्णोउ ॥१॥ उन सातों नरक के नारकी
में से जो उद्वर्त वाले होवे उसमें एकशेष रहे सो मिश्रकाल और सब उद्वर्त सो शून्यकाल जैसे उव्वट्टे एक्कमि वि
तामीसो धइ जाव एक्को वि णिल्लेवएहिं सव्वेहिं वट्टमाणेहिं सुण्णोउ ॥ १ ॥ यहाँपर मिश्र नारक संसार-
वस्थान काल मूत्र वर्तमान भव आश्रित नहीं ग्रहण किया है परंतु वर्तमान काल के नारकी अन्य गति में

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

यान्तर इ० ऋद्धि ॥ १५ ॥ जी० जीव का ती० अतीत काल आ० कहा हुआ क० कितना सं० संसार सं०
संचिठण काल १० प्ररूपा गो० गौतम च० चार प्रकार का सं० संसार संचिठन काल णे० नारकी सं०
संसार संचिठन काल ति० तिर्यच संसार सं० संचिठन काल म० मनुष्य संसार सं० संचिठण काल दे०
देवसंसार सं० संचिठण काल णे० नारकी सं० संसार संचिठण काल क० कितना प्रकार का गो० गौतम

देसओ भाणयव्यो जात्र इड्डी ॥ १६ ॥ जीवरसनं भंते तीयद्वाए आदिट्टस्स कइविहे

संसार संचिठण काले पणत्ते ? गोयमा! चउव्विहे संसार संचिठण काले पणत्ते, तंजहा

णेइए संसार संचिठण काले, तिरिक्ख जोणिय संसार संचिठण काले, मणुस्स

अधिक ऋद्धि का धारक होता है ॥ १६ ॥ सलेशी जीव संसार में रहते हैं इसलिये संसार में रहनेका प्रश्न
करते हैं. ÷ अहो भगवन् ! नारकी आदि जीवों को अतीत काल में कितने प्रकार के संसार संचिठनकाल
कहे हैं ? अहो गौतम ! उपधिभेद से एक भव से भवान्तर में रहने की क्रिया का काल के चार भेद कहे
हुं. १. नारकी के भव में जीव रहे सो नरक संसार संचिठनकाल २. तिर्यच के भव में रहे सो तिर्यच संसार

÷ कितनेक की ऐसी मान्यता होती है कि मनुष्य प्रकार मनुष्य व ५ शुभ प्रकार पशु ही होता है इसका
निर्णय यहाँपर किया गया है.

? एक भवसे दूसरे भव में रहने की क्रिया का काल.

शब्दार्थ

त्र

भावार्थ

ति० तीन प्रकार का सु० शून्य काल अ० अशून्य काल मि० मिश्रकाल ति० तिर्यच का सं० संसार सं० संचिठन काल पु० पृच्छा गो० गौतम दु० दोप्रकार का अ० अशून्य काल मि० मिश्रकाल म० मनुष्य

संसार संचिठण काले, देव संसार संचिठण काले। णेरइय संसार संचिठण कालेणं भंते कइविहे प०? गोयसा! तिविहे प० तं० सुणणकाले, असुणणकाले, मिस्सकाले। तिरिक्ख

संचिठन काल ३ मनुष्य के भव में रहे सो मनुष्य संसार संचिठन काल ४ देवता के भव में रहे सो देव संसार संचिठन काल. अहो भगवन् ! नारकी संसार संचिठन काल के कितने भेद ? अहो गौतम ! नारक संसार संचिठन काल के तीन भेद कहे हैं ? शून्यकाल २ अशून्यकाल और ३ मिश्रकाल * अहो भगवन् ! तिर्यच संसार संचिठन कालके कितने भेद ? अहो गौतम ! दो भेद. अशून्यकाल

* वर्तमान कालमें सातों नरकमें जो नारकी विद्यमान हैं उनमेंसे कोई उद्वर्तनी, और उसमें कोई नविन उत्पन्न होते नहीं, जितने हैं उतने ही रहे सो नरक गति आश्रित अशून्यकाल. जैसे कहा है आइड समइ-याणं नेइयाणं न जाव एक्को वि उवट्ठइ अणोवा उवज्जइ सो अमुणोउ ॥१॥ उन सातों नरक के नारकी में से जो उद्वर्त वाले होते उसमें एकशेष रहे सो मिश्रकाल और सब उद्वर्तें सो शून्यकाल जैसे उब्बट्टे एकंमिवि तामीसो धइ जाव एक्कोवि णिल्लेवएहिं सब्बेहिं वट्टमाणेहिं सुणोउ ॥ १ ॥ यहांपर मिश्र नारक संसार-वस्थान काल मूत्र वर्तमान भव आश्रित नहीं ग्रहण किया है परंतु वर्तमान काल के नारकी अन्य गति में

शब्दार्थ सत्र भावार्थ

(पृच्छा गो)

पृच्छा गो

दे० देवता को न० जैसे ने० नारकी ए० यह भ० भगवन् ने० नारकी का सं० संसार संचिठण काल मु० शून्य अ० अशून्य मि० मिश्र क० कौन क० किससे अ० अल्प व० बहुत तु० तुल्य वि० विशेषाधिक गो० गौतम स० सब से थोडा अ० अशून्य काल मी० मिश्रकाल अ० अनंत गुणा सु० शून्य काल अ० अनंतगुणा ति० तिर्यच का स० सर्व से थोडा अ० अशून्य काल मी० मिश्रकाल अनंतगुणा म० मनुष्य

जोणिय संसार संचिट्टण काल पुच्छा ? गोयमा ! दुविहे प० तं० असुण्णकालेय, मि रसकालेय. मणुस्साणय देवाणय जहा नेरइयणं । एयस्सणं भंते नेरइय संसार संचिट्टण कालस्स सुण्णकालस्स, असुण्णकालस्स मीसकालस्स, कयरे कयरेहिंतेो अप्पेवा, बहुएवा, तुल्लेवा. विसेसाहिएवा ? गोयमा ! सब्बत्थोवा असुण्णकाले, मीसकाले अणंतगुणे,

व मिश्रकाल. मनुष्य व देवता में तीनों काल जानना. अहो भगवन् ! इस नरक संसार संचिठन काल के शून्य, अशून्य व मिश्रकाल में से कौन किससे अल्प, बहुत तुल्य व विशेषाधिक है ! अहो गौतम सब से

जाकर पुनः नरक गति में उत्पन्न होवे उन जीवों आश्रित लिया गया है. यदि उसी नरक भव आश्रित क- हा जन्मि तो अल्प बहुत सूत्र में अशून्य कालकी अपेक्षा से मीश्र काल को अनंत गुना कहा है वह नहीं हो सकता है जैसे एयं पुण ते जीधि पडुच्चं मुत्तं न तब्भवं चैव। जइ होज्जंत भवंतो अणंतकालो न संभवइत्तु ॥ १ ॥

शब्दार्थ सुत्र भावार्थ

दे० देव ज० जैसे नारकी भ० भगवन् ने० नारकी का सं० संसार संचिठण काल जा० यावत् दे० देव संसार संचिठण काल का जा० यावत् वि० विशेषाधिक गो० गौतम स० सर्व से थोडा म० मनुष्य संसार संचिठण काल ने० नारकी संसार संचिठण काल अ० असंख्यातगुणा दे० देव संसार संचिठण काल अ० असंख्यात गुणा ति० तिर्यच संसार संचिठण काल अ० अंनंतगुणा ॥ १७ ॥ जी० जीव भ०

सृणुकाले अणंतगुणे, ॥ तिरिक्ख जॉणियाणं सब्वत्थोवे असुण्णकाले, सीसकाले अणंतगुणे, ॥ भणुस्साणय, देवाणय जहा णेरइयाणं एयस्सणं भंते णेरइय संसार संचिठुण कालस्स जाव देव संसार संचिठुण कालस्स जाव विसंसाहिएवा गोयमा ? सब्वत्थोवे मणुस्स संसार संचिठुण काले, णेरइय संसार संचिठुण काले असंखज्जगुणे, देव

थोडा अशून्यकाल है, क्योंकि उत्पाद व उद्धर्तना काल का बिरह बारह मुहूर्त का है, उस से भीश्रकाल अनंत गुना, और उस से शून्यकाल अनंत गुना कहा है. तिर्यच में सब से थोडा अशून्यकाल उस से भीश्रकाल अनंत गुना. मनुष्य व देवता का नारकी जैसे कठना. अदो भगवन् ! चारों संसारसंचिठन कालमेंसे कौन किस से अल्प, बहुत, तुल्य व विशेषाधिक है अहो ? गौतम ! सब से थोडा मनुष्य संसार संचिठन काल, उस से नारकी संसार संचिठन काल असंख्यात गुना, उस से देव संसार संचिठन काल असंख्यात

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुबदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

भगवन् अ० अंतक्रिया क० करे गो० गौतम अ० कितनेक क० करे अ० कितनेक णो० नहीं करे अ० अंतक्रिया पद णे० जानना ॥ १८ ॥ अ० अहो भं० भगवन् अ० असंयति ५० भविव्य देव अ० अ-विराधिक सं० संयति वि० विराधिक संयतासंयति वि० विराधिक सं० संयता संयति अ० असंशी ता० तापस कं० कंदर्पिक च० चरक परित्राजक कि० अशुभ परिणाम वाले ति०

संसार संचिद्वृण काले असंखज्जगुणे, तिरिख्व जोणिय संसार संचिद्वृण काले अणंत-गुणे ॥ १७ ॥ जीवेणं भंते अंत किरियं करेजा ? गोयसा ! अत्येगइए करेजा, अत्येगइए णो करेजा. अंतकिरिया पदं णेतव्वं ॥ १८ ॥ अहंते असंजय भविय दव्व देवाणं, अविराहिय संजमाणं, विराहिय संजमाणं, अविराहिय संजमासंजमाणं, विराहिय संजमासंजमाणं, असण्णीणं, तावसाणं, कंदप्पियाणं, चरगपरव्वायगाणं,

गुना उस से तिर्यच संसार संचिद्वृण काल अनंत गुना ॥ १७ ॥ अहो भगवन् ! जीव अंतक्रिया करे ? अहो गौतम ! कितनेक जीव अंतक्रिया करे और कितनेक अंतक्रिया करे नहीं इस का विशेष अधिकार पक्कवणा के वीस वे अंतक्रिया पद में जानना. ॥ १८ ॥ अंतक्रियाके अभावसे कोई जीव देवलोक में उत्पन्न होवे इसलिये उस का विशेष स्वरूप बताते हैं. अहो भगवन् ! चारित्र परिणाम से शून्य मिथ्यादृष्टि,

* प्रकाशक-राजावहारुं लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

देवलोक वि० विराधिक सं० संयताभयति ज० जघन्य भवनपति उ० उत्कृष्ट जो० ज्योतिषी अ० असंज्ञी ज० जघन्य भ० भवनपति उ० उत्कृष्ट वा० वाणव्यंतर अ० वाकी के स० सव ज० जघन्य भ० भवनपति मे० उत्कृष्ट ता० तापस जो० ज्योतिषी मे० कं० कंदर्पिक सो० सौधर्म देवलोक मे० च० चरक परिव्राजिक वं० ब्रह्मदेवलोक मे० कि० क्षिप्रपरिणामी लं० लंतक देवलोक मे० ति० तिर्यंच स० सहस्रार देवलोक मे० आ० आजी

संजमाणं जहण्णं भवणवासीसु, उक्कोसेणं सोहम्मकेकप्पे; अविराहिय संजमासंजमा-
णं जहण्णं सोहम्मकेकप्पे, उक्कोसेणं अच्चुएकप्पे, विराहिय संजमासंजमाणं जहण्ण-
णं भवणवासीसु, उक्कोसेणं जोइसिएसु, असण्णीणं जहण्णं भवणवासीसु उक्कोसेणं
वाणमंतरसु अवसेसा सब्बे जहण्णं भवणवासीसु उक्कोसेणं वोच्छामि—तावसाणं
जोइसिएसु, कंदप्पियाणं सोहम्मकेकप्पे, चरग परिव्वायगाणं वंभलाए कप्पे, किच्चिसि-

विराधिक संयमी, अविराधिक संयमासंयमी विराधिक संयमासंयमी, असंज्ञी, तापस, कंदर्प कथा करने वाले, त्रिदंडिये, कपिल मुनि के संतानिये, ज्ञानादिक के अर्घणवार बोलने वाले, तिर्यंच, आजीविक धर्म वाले व्यवहार में चारित्रवंत हाते हुये भंत्र यंत्रादिक के करने वाले आभियोगिक, और साधु वेप होने पर सम्पत्क से भ्रष्ट निन्हन देवलोक में उत्पन्न होते किस २ स्थान पर उत्पन्नहवे ? अही गौतम असंयति भवि द्रव्य देव जघन्य भवनपति मे० उत्कृष्ट उपर की श्रेयक मे० अविराधिक साधु जघन्य सौधर्म देवलोक मे०

विक्रि अ० अच्युत देवलोक आ० आभियोगिक अ० अच्युत देवलोक में स० सलिंगी दर्शन भ्रष्ट
 द० उपर की गे० प्रेयसक में ॥ १९ ॥ क० कितने प्रकार का भ० भगवत् अ० असंज्ञी आ० आयुष्य
 गा० गौतम च० चार प्रकार का अ० असंज्ञी आयुष्य ण० नारकी अ० असंज्ञी आयुष्य ति० तिर्यच
 अ० असंज्ञा आयुष्य म० मनुष्य अ० असंज्ञी आयुष्य दे० देव असंज्ञी आयुष्य अ० असंज्ञी भ० भगवत्

याणं लंतगे कल्पे, तिरिच्छियाणं सहसारे कल्पे, आजोवियाणं अच्युएकल्पे, आभि-
 ओगिया अच्युए कल्पे, सलिंगीदंसनवावणगा उवरिसगेविजाएसु ॥ १९ ॥ कइविहे-
 णं भंते असणियाउए, पणत्ते ? गोयसा ! चउव्विहे असणियाउए १० तं० णेरइय
 असणियाउए तिरिक्खजोणिय असणियाउए, मणुस्स असणियाउए, दे-
 य असणियाउए ॥ असण्णीणं भंते ! जीवे किं णेरइयाउयं पकरेइ, तिरिक्ख

उत्कृष्टं सर्वार्थसिद्ध विमान में, विराधिक साधु जघन्य भवनपति में. उत्कृष्ट सौधर्म देवलोक में
 अविराधिक श्रावक जघन्य सौधर्म देवलोक में, उत्कृष्ट अच्युत देवलोक में, विराधिक श्रावक जघन्य भवन-
 पति, उत्कृष्ट ज्योतिषि में, असंज्ञी जघन्य भवनपति, उत्कृष्ट वाणव्यंतरमें शेष सब जघन्य भवनपति में उत्पन्न
 होवे और उत्कृष्ट तापस ज्योतिषि में, असंज्ञी कथा करनेवाले सौधर्म देवलोकमें, चरक परिव्राजिक ब्रह्मदेवलोक
 में ज्ञानादि के अवर्णनाद बोलनेवाले लांतक देवलोकमें तिर्यच सहसार देवलोकमें आजीविक मतानुसारी अच्युत
 देवलोक में आभियोगिक अच्युत देवलोकमें और दर्शन सं भ्रष्ट सलिंगी उपर की प्रेयसकमें उत्पन्न होते हैं.
 ॥ १९ ॥ अब असंज्ञी का आयुष्य कहते हैं. अहो भगवन् ! असंज्ञी परभव योग्य कितने प्रकार का आयुष्य

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

संज्ञा (संज्ञा) पणत्ते (संज्ञा) पणत्ते

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीदेवसहायजी जवालाप्रसादजी *

भी जीव भ० भगान् क० कांक्षा मोहनीय क० कर्म क० करे ह० हां क० करे से० वह भ० भगवन् कि० क्या दे० देश ने दे० देश क० करे दे० देश ने स० सर्व क० करे स० सर्व से दे० देश क० करे स० सर्व से स० सर्व क० करे गो० गौतम गो० नहीं दे० देश ने दे० देश क० करे गो० नहीं दे० देश से स० सर्व क० करे गो० नहीं स०

जीवाणं भंते ! कंखामोहणिजे कस्मे कडे ? हंता कडे. से भंते ! किं देसेणं देसे कडे देसेणं सव्वे कडे सव्वेणं देसे कडे सव्वेणं देसे कडे ? गायमा ! गो देसेणं देसे कडे गो.

द्वितीय उद्देश में आयुष्य का स्वरूप कहा. वह मोहनीय कर्म से हाँवे इचलिये आगे मोहनीय कर्म का स्वरूप कहते हैं. अहो भगवन् ! क्या जीव कांक्षा मोहनीय कर्म (मिथ्याता मोहनीय कर्म) करे ? हाँ गौतम ! जीव कांक्षा मोहनीय कर्म करे. अहो भगवन् ! जैने ? हस्तादि देश में किसी वस्तु का देश आच्छादे, २ हस्तादि देश में समस्त वस्तु आच्छादे, ३ समस्त शरीर से वस्तु का देश आच्छादे, ४ समस्त शरीर से समस्त वस्तु का आच्छादन करे; जैसे ही क्या जीव का देश कांक्षा मोहनीय का एक देश करे, जीव का एक देश सब कांक्षा मोहनीय कर्म करे, संपूर्ण जीव कांक्षा मोहनीय का एक देश करे, अथवा संपूर्ण जीव संपूर्ण कांक्षा मोहनीय कर्म करे ? अहो गौतम ! जीव का एक देश कांक्षा मोहनीय का एक देश नहीं करे, जीव का एक देश संपूर्ण कांक्षा मोहनीय कर्म नहीं करे, संपूर्ण जीव कांक्षा मोहनीय का एक देश नहीं करे, परंतु संपूर्ण जीव

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

सर्व से दे० देश क० करे स० सर्व से स० सर्व क० करे ॥ १ ॥ ने० नारकी भं० भगवन् क० कांक्षा मो-
हनीय कर्म क० करे हं० हां क० करे जा० यावत् स० सर्व क० करे ए० ऐसे जा० यावत्
वे० वैमानिक दं० दंडक भा० कहना ॥ २ ॥ जी० जीवने भं० भगवन् क० कांक्षा मोहनीय कर्म क० क्रिया
हं० हा क० क्रिया तं० उन को भं० भगवन् कि० क्या दे० देश से दे० देश क० क्रिया ए० यह अ०

देसंणं सव्वेकडे, णो सव्वेणं देसेकडे, सव्वेणं सव्वे कडे ॥ १ ॥ णेरइयाणं भंते ! कंखा मोहणिजे
कस्सेकडे ? हंताकडे, जाव सव्वेणं सव्वेकडे । एवं जाव वेमाणियाणं दंडओ भाणियव्वो ॥ २ ॥
जीवाणं भंते ! कंखा मोहणिजं कस्सें करिंसे ? हंताकरिंसे । तं भंते ! किं देसेणं
देसं करिंसे, ? एणुणं अभिल्लवेणं दंडओ जाव वेमाणियाणं । एवं करंति, एत्थवि
दंडओ जाव वेमाणियाणं । एवं करिस्संति, एत्थवि दंडओ जाव वेमाणियाणं ॥ एवं
च्चि, चिणिंसे, चिणिंसे, चिणिंसे । उवचिए, उवचिणिंसे, उवचिणिंसे, उवचिणिंसे

संपूर्ण कांक्षा मोहनीय कर्म करे ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! क्या नारकी कांक्षा (विध्यात्व) मोहनीय कर्म करे ? हां
गौतम! नारकी कांक्षा मोहनीय कर्म करे; यावत् सबभे सब कांक्षा मोहनीय कर्म करे वैसेही चौबीस दंडक का
जानना ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! जीव ने क्या अतीत काल में कांक्षा मोहनीय कर्म किया ? हां गौतम
क्रिया. देश से देश यावत् सर्व से सर्व क्रिया वगैरह वैमानिक तक जानना. और वैसे ही वर्तमान काल

द्वितीय कर्म वे० वेदते है० हां वे० वेदते है० क० कैसे भं० भगवन् जी० जीव कं० कांक्षा मोहनीय कर्म वे० वेदते है० गो० गौतम ते० उस २ का० कारनसे सं० शंक्रित कं० कांक्षा सहित त्रि० फल में संदेह सहित भं० भेदका प्राप्त क० संक्षिप्त परिणामी श्री० जीव कं० कांक्षा मोहनीय कर्म वे० वेदे ॥ ४ ॥ तं० वहही स० सत्य णी० शंकारहित जं० जो जि० जिनने प० प्ररूपा हं० हां गो० गौतम तं० वहही स० सत्य णी० शंकारहित जं० जो जि० जिनने प० प्ररूपा ॥५॥ से० वह णू० निश्चय भं० भगवन् ए० ऐसा

वेदति । कहणं भंते ! जीवा कंखा मोहणिजं कम्मं वेदंति ? गोयमा ! तेहिं तेहिं

कारणेहिं संक्रिया, कंखिया, वित्तिगिच्छिया, भेदसभावणगा, कलुससभावणगा,

एवं खलु जीवा कंखामोहणिजं कम्मं वेदंति ॥ ४ ॥ सणुणं भंते ! तमेवसच्चं,

णिसंकं, जं जिणेहिं पवेइयं ? हंता गोयमा ! तमेव सच्चं णिसंकं जं जिणेहिं पवेइयं

पदार्थ में देश से या सर्व से शंका उत्पन्न होवे, अन्य दर्शन ग्रहण करने की इच्छा उत्पन्न होवे, कृत त्रार्य के फल में संदेह उत्पन्न होवे, द्वैधीभाव उत्पन्न होवे, अथवा मतिभ्रम होवे, इस तरह से जीव कांक्षा मोहनीय कर्म वेदता है ॥ ४ ॥ अग्रे भगवन् ! जो जित भगवान् ने कहा है वह क्या निःशंक सत्य है ? गौतम ! जो जित भगवान् ने कहा है वह ही निःशंक सत्य है ॥ ५ ॥ अग्रे भगवन् ! इस तरह मन में धारता हुआ, ऐसे करना हुआ, ऐसे रहता हुआ ऐसे ही प्राणातिपातादिक से आत्मा को संवरता हुआ

अभिधाप से दं० दंडक जा० यावत् वे० वैमानिक को ए० ऐसे क० करता है ए० इस का दं० दंडक जा० यावत् वे० वैमानिक ए० ऐसे क० करेगे ए० यह दं० दंडक जा० यावत् वे० वैमानिक ए० ऐसे क० किरे चि० इकठे किरे उ० त्रिशप इकठे किरे उ० उदीरे वे० वेदे नि० निर्जरे आ० आदिके ति० तीनके च० चाम्पेद ति० तीनभेद प० पीछेके ति० तीन के ॥३॥ जी० जीव भं० भगवन् कं० कांक्षा मो-

उदीरँसु, उदीरँति, उदीरँस्सति, वेदँसु, वेदँति, वेदिस्सति । गिज्जरँसु, गिज्जरँति, गिज्जरँस्सति
गाहा ॥ कडे चिए य उवचिए, उदीरियां वदियाय गिज्जिण्ण ॥ आदिति ए चउभेया, तियभेया
पच्छिमातिणि ॥ १ ॥ ३ ॥ जीवाणं भंते ! कंखा मोहणिजं कम्मं वेदँति ? हंता-

आश्रितं जीव कांक्षा मोहनीय कर्म करता है, और भविष्यकाल आश्रित जीव कांक्षा मोहनीय कर्म करेगा, वगैरह चौबीस दंडक में जानना. ऐसी ही विय, उपचिय, का सामान्य, भूत भविष्य व वर्तमान काल आश्रित जानना. और उदीरणा, वेद व निर्जरा इन तीन बोल को भूत, भविष्य व वर्तमान काल आश्रित चौबिस दंडक पर उतारना ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! जीव कांक्षा मोहनीय कर्म वेदता है ? हाँ गौतम ! जीव कांक्षा मोहनीय कर्म वेदता है. अहो भगवन् ! किन तरह से जीव कांक्षा मोहनीय कर्म वेदता है ? अहो गौतम ! पिथयात्व की संगति से या परदर्शन के वचन श्रवण से श्री वीतराग प्रकृषित

परिणमे ण० नास्ति त्व ण० नास्ति रूप प० परिणमे हे० हां गो० गौतम जा० यावत् प० परिणमे
 जं० जो भं० भगवत् अ० अस्ति त्व अ० अस्ति रूप पने प० परिणमे न० नास्ति त्व न० नास्ति रूप पने
 प० परिणमे तं० उस को० किं क्या प० प्रयोगे वी० स्वभावं से गो० गौतम प० प्रयोगे वी० स्वभा-
 वसे ॥ ७ ॥ से० वह भं० भगवत् अ० अस्ति त्व अ० अस्ति रूप पने ग० प्रकाशने योग्य ज० जैसे प०

नत्थिचे परिणमइतं किंपओगसावीससा? गोयमा! पओगसावितं वीससावितं जहाते भंते!
 अत्थिचं अत्थिचे परिणमइ, तहाते णत्थिचं णत्थिचे परिणमइ, जहाते नत्थिचं नत्थिचे परि
 णमइ, तहाते अत्थिचं अत्थिचे परिणमइ? हेता गोयमा! जहामे अत्थिचं अत्थिचे परिणमइ
 तहामे नत्थिचं नत्थिचे परिणमइ. जहामे नत्थिचं, नत्थिचे परिणमइ तहामे अत्थिचं
 अत्थिचे परिणमइ ॥ ७ ॥ सेणुणं भंते! अत्थिचं अत्थिचे गमणिजं जहा

जैसे ही क्या आपके मत में नास्तिपत्ता नास्ति पने परिणमता है? और जैसे नास्तिपत्ता नास्तिपने
 परिणमता है वैसे ही क्या अस्तिपत्ता अस्तिपने परिणमता है? हां गौतम! जैसे हमारे मत में अस्तिपत्ता
 अस्तिपने परिणमता है वैसे ही नास्तिपत्ता नास्तिपने परिणमता है और जैसे नास्तिपत्ता नास्तिपने
 परिणमता है! वैसे ही अस्तिपत्ता अस्तिपने परिणमता है ॥७॥ अहो भगवन्! अस्तिपत्ता अस्तिपने गमनीय

परिणमे ण० नास्तित्त्वं ण० नास्तिरूपं प० परिणमे हं० हां गो० गौतम जा० यावत् प० परिणमे
जं० जो भं० भगवन् अ० अस्तित्त्वं अ० अस्तिरूपं प० परिणमे न० नास्तित्त्वं न० नास्तिरूपं प०
प० परिणमे तं० उस को० किं क्या प० प्रयोगे वी० स्वभाव से गो० गौतम प० प्रयोगे वी० स्वभा-
वसे ॥ ७ ॥ से० वह भं० भगवन् अ० अस्तित्त्वं अ० अस्तिरूपं प० प्रकाशने योग्य अ० जैसे प०

नत्थित्त्वं परिणमइ तं किं पओगसा वीससा? गोयमा ! पओगसावितिं वीससावितिं जहाति भंते!
अत्थित्तं अत्थित्त्वं परिणमइ, तहाते णत्थित्तं णत्थित्त्वं परिणमइ, जहाते नत्थित्तं नत्थित्त्वं परि-
णमइ, तहाते अत्थित्तं अत्थित्त्वं परिणमइ? हंता गोयमा ! जहामे अत्थित्तं अत्थित्त्वं परिणमइ
तहामे नत्थित्तं नत्थित्त्वं परिणमइ. जहामे नत्थित्तं, नत्थित्तं परिणमइ तहामे अत्थित्तं
अत्थित्त्वं परिणमइ ॥ ७ ॥ सेणुणं भंते ! अत्थित्तं अत्थित्त्वं गमणिजं जहा

जैसे ही क्या आपके मत में नास्तिपना नास्ति पने परिणमता है ? और जैसे नास्तिपना नास्तिपने
परिणमता है वैसे ही क्या अस्तिपना अस्तिपने परिणमता है ? हां गौतम ! जैसे हमारे मत में अस्तित्त्वं
अस्तिपने परिणमता है वैसे ही नास्तिपना नास्तिपने परिणमता है और जैसे नास्तिपना नास्तिपने
परिणमता है ! वैसे ही अस्तित्त्वं अस्तिपने परिणमता है ॥७॥ अबो भगवन् ! अस्तित्त्वं अस्तिपने गमनीय

वदार्थ

सूत्र

भाषार्थ

(पओगसा वीससा) (पओगसा)

* मयाशक-राजावहापुर लाला सुबद्रवमहायजी जाजाप्रसादजी *

परिणमे में दो० दोआलापक त० तैसे ग० प्रकाशने में दो० दो आ० आलापक भा० कहना ॥ ८ ॥ जी०
जीव भं० भगवन् क० कांक्षा मोहनीय कर्म वं० बांधे हं० हां गो० गौतम वं० बांधे क० कैसे भं० भगवन्
जी० जीव क० कांक्षा मोहनीय कर्म वं० बांधे गो० गौतम प० प्रमाद प्रत्यय जो० जोगनिमित्त से० वह

परिणमइ दो आलावगा, तहा गमणिजेणवि दो आलावगा भाणियव्वा, जात्र तहामे अत्थित्तं
अत्थित्ते गमणिज्जं जहा ते भंते! एत्थं गमणिज्जं तहाते इह गमणिज्जं जहाते इह गमणिज्जं
तहाते इत्थं गमणिज्जं? हंता गोयमा! जहामे इत्थं गमणिज्जं तहामे इह गमणिज्जं ॥ ८ ॥ जीवाणं
भंते कंखा मोहणिज्जं कम्मं बंधंति? हंता गोयमा! बंधंति। कहणं भंते! जत्रिा कंखा

अर्थात् छती वस्तु छेतपने ही प्रकाशने योग्य है अन्य को जताने योग्य है? यहां पर जैसे
परिणमते के दो आलापक कहे वैसे ही प्रकाशने के हमारे मतमें अस्तित्व अस्तित्पने
प्रकाशने योग्य है वहां तक दो आलापक कहना. और भी अहो भगवन्! जैसे आप के मत में मेरे
जैसे सुशिष्य को वस्तु प्ररूपी वैतही क्या आपके मन में पाखंडी गृहस्थादिक को प्ररूपी? और जैसे पाखंडी
गृहस्थादिक को वस्तु प्ररूपी वैतही क्या मेरे जैसे सुशिष्य को वस्तु प्ररूपी? हां गौतम! जैसे मेरे मत में
सुशिष्यादिक को वस्तु स्वरूप प्ररूपा वैते ही पाखंडी गृहस्थादिक को वस्तु स्वरूप प्ररूपा और जैसे
पाखंडी को वस्तु स्वरूप प्ररूपा वैते ही सुशिष्य को वस्तु स्वरूप प्ररूपा ॥ ८ ॥ अहो भगवन्! जीव कांक्षा

शब्दार्थ कलाप्रकृति कलाप्रकृति कलाप्रकृति कलाप्रकृति कलाप्रकृति कलाप्रकृति कलाप्रकृति कलाप्रकृति कलाप्रकृति कलाप्रकृति

शब्दार्थ

सूत्र

मांवाथे

प० उत्पन्नहोवे स० शरीर कि० किमसे प० उत्पन्न होवे जी० जीवसे प० उत्पन्नहोवे ए० एसे स० होते अ० हे उ०
 उत्थान क० कर्म व० बल वी० वीर्य पु० पुरुषात्कार प० पराक्रम ॥१॥ से० बहू णू० निश्चय भ० भगवन् अ०
 आत्मा से उ० उदीरे ग० निन्दे सं० संवेरे हं० हा गो० गौतम आ० आत्मा सं० तं० तैत्ते ही उ० कहना

गोयमा! जीवप्पवहे एयंसइ अत्थि उट्ठाणेइवा. कम्मइवा, बल्लेइवा वीरिएइवा पुरिसक्कार

परक्कमेइवा ॥ ९ ॥ सेणुणं भंते, अप्पणाचेव उदीरेइ, अप्पणाचेव. गरहइ, अप्पणा

चेव संवरइ ? हंता गोयमा! अप्पणा चेव उच्चारेयव्वं ॥ जंतंभंते । अप्पणाचेव उदीरेइ,

बहु शरीर के व्यापार से होता है. अहो भगवन् ! शरीर कैसे उत्पन्न होवे ? अहो गौतम जीव से उत्पन्न होवे +
 यदि ऐसा होवे तो उद्धान-कार्य साधन के लिये खड़े होना, कर्म-गमनादि कर्म करना, बल-
 शरीर की माप्रथ्यता, वीर्य-उत्साह, पुरुषात्कार-पुरुषका अभिमान, व पराक्रम-कार्य पूर्ण करना, इस में
 भी जीव की प्रधानता है. ॥१॥ अहो भगवन् ! कर्मबंधादिक में जीव की प्रधानता है तो क्या स्वयंही कर्म
 की उदीरणा करे, स्वयंही कृत कर्म की निन्दाकरे और स्वयंही संवेरे, अर्थात् कर्म करे नहीं ? हां गौतम; स्वयंही
 कर्मकी उदीरणा करे यावत् स्वयं कर्म करे नहीं. अहो भगवन् जब जीव स्वयं उदीरता है, गर्हता है, व संवरता है तो क्या

+ यद्यपि शरीर में कर्म भी कारण है निष्कैवल जीव ही कारण नहीं है, तथापि कर्म का कर्ता जीव
 होने से जीव से शरीर उत्पन्न होना कहा है.

जं० जो भं० भगवन् आ० आत्माने उ० उदीरे ग० निन्दे सं० संवरे ते० उन को कि० क्या उ० उदे आया उ० उदीरे अ० उदे नहीं आया अ० उदीरे उ० उदे नहीं आया उ० उदीरे उ० उदयान्तर प० पीछे क० कीया कर्म उ० उदीरे गो० गौतम णो० नहीं उ० उदे आया उ० उदीरे णो० नहीं अ० उदे नहीं आया

अप्यणाचेत्र गरहइ, अप्यणाचेत्र संवरइ, तंकि उदिणं उदीरेइ, अणुदिचं उदीरेइ
अणुदिचं उदीरणा भवियं कम्मं उदीरेइ, उदयानंतरं पच्छाकडं कम्मं उदीरेइ !
गोयमा ! नो उदिणं उदीरेइ, णो अनुदिणं उदीरेइ, अनुदिणं उदीरणा भवियं कम्मं
उदीरेइ, नो उदयानंतरं पच्छाकडं कम्मं उदीरेइ ॥ जंतंभंते ! अणुदिचं उदीरणा

उदय आया हुना उदीरता है, उदय नहीं आया हुवा उदीरता है, उदय में नहीं आया है परंतु उदीरणा के योग्य जो उतैह उदीरता है, अथवा उदय के अनंतर समय में पश्चात् कृत कर्म को उदीरता है ? अहो गौतम ! जो कर्म उदयमें आये हैं उनको उदीरणा करे नहीं क्योंकि उदयमें आये हुये कर्मों की उदीरणा नहीं होती है, जो उदय में नहीं आये हैं उन की भी उदीरणा नहीं होती है क्योंकि बहुत काल में उदय में आयेगे इस लिये वर्तमान काल में उन की उदीरणा का अभाव है, जो उदय में नहीं आये हैं परंतु उदीरणा के योग्य हुवे हैं उन को उदीरते हैं और उदयान्तर कृत कर्म को नहीं उदीरते हैं अहो भगवन् ! जो उदय में नहीं आये हैं और उदीरणा के योग्य बने हुये उन को उदीरते हैं तो क्या

प० उत्पन्नहोवे स० शरीर कि० किमसे प० उत्पन्न होवे जी० जीमसे प० उत्पन्नहोवे ए० एसे स० होते अ० हे उ०
उत्थान क० कर्म व० बल धी० धीर्य पुं० पुरुपात्कार प० पराक्रम ॥१॥ से० ब्रह्म णू० निश्चय भं० भगवन् अ०
आत्मा से उ० उदीरे ग० निन्दे सं० संवरे हं० हां गो० गौतम आ० आत्मा सं० तं० तैत्ते ही उ० कहना

गोयमा! जीवप्पवहे एयंसइ अत्थि उट्टणेइथा. कम्मइथा, बल्लइथा वीरिएइथा पुरिसक्कार
परक्कमेइथा ॥ ९ ॥ सेणणं भंते, अप्पणाच्चैव उदीरेइ, अप्पणाच्चैव. गरहइ, अप्पणा
च्चैव संवरइ ! हंता गोयमा! अप्पणा चैव उच्चरियच्चं ॥ जंतंभंते । अप्पणा चैव उदीरेइ,

ब्रह्म शरीर के व्यापार से होता है. अहो भगवन् ! शरीर कैसे उत्पन्न होवे ? अहो गौतम जीव से उत्पन्न होवे—
यदि ऐसा होवे तो उट्टान-कार्य साधन के लिये खड़े होना, कर्म-गमनादि कर्म करना, बल-
शरीर की सामर्थ्यता, धीर्य-उत्ताह, पुरुपात्कार-पुरुषका अभिमान, व पराक्रम-कार्य पूर्ण करना, इस में
भी जीव की प्रधानता है. ॥१॥ अहो भगवन् ! कर्मबंधादिक में जीव की प्रधानता है तो क्या स्वयंही कर्म
की उदीरणा करे, स्वयंही कृत कर्म की निन्दाकरे और स्वयंही संवर, अर्थात् कर्म करे नहीं ? हां गौतम; स्वयंही
कर्मकी उदीरणा करे यावत् स्वयं कर्म करे नहीं. अहो भगवन् जब जीव स्वयं उदीरता है, गर्हता है, व संवरता है तो क्या

+ यद्यपि शरीर में कर्म भी कारण है निष्कैवल जीव ही कारण नहीं है, तथापि कर्म का कर्ता जीव
होने से जीव से शरीर उत्पन्न होना कहा है.

अ० अवल अ० वीर्यरहित अ० पुरुषात्कार पराक्रम रहित ॥ १० ॥ से० वह भ० भगवन् अ० आत्मा से उ० उपशमावे ग० निन्दे सं० संवरे हं० हां ए० यहां त० तैसे भा० कहना ण० विशेष अ० उदे नहीं आया उ० उपशमावे से० शेष प० वर्जना ति० तोन जं० जो भ० भगवन् अ० उदे नहीं आया उ० उपशमावे तं० उन को किं० क्या

अपुरिसक्कार परक्कमेणं अणुदिन्नं उदीरणा भात्रियं कम्मं उदीरंति. एवं सइ अत्थि उट्टणेइवा, कम्मेइवा, बलेइवा, वीरिएइवा, पुरिसक्कार परक्कमेइवा ॥ १० ॥
संणुणं भंते अप्पणाचेव उवसामेइ, अप्पणाचेव गरहइ, अप्पणाचेव संवरइ ? हंता गोयमा ! एत्थवि तेहव भाणियन्वं, णवरं अणुदिन्नं उवसामेइ, सेसा पडिसेहियन्वा तिणि ॥ जं तं भंते! अणुदिन्नं उवसामेइ तंकिं उट्टणेणं जाव पुरिसक्कार परक्कमेइवा

अनुदित कर्म को उदीरता है ॥ १० ॥ अब कांक्षा मोहनीय का उपशम कहते हैं. अहो भगवन् ! क्या जीव स्वयं कांक्षा मोहनीय कर्म उपशमावे, गेहं, व संवरे ! हां गौतम ! जीव स्वयं ही कांक्षा मोहनीय कर्म उपशमावे यावत् संवरे. यहांपर पूर्वोक्त उदीरणा जैसे कहना, परंतु यहां अनुदित कर्म का उपशम करते हैं और शेष तीन को छोड़ना. जो उदय में आया है वह अवश्यही वेदाता है इस लिये अनुदित कर्म का उपशम कहा है. अहो भगवन् ! जो अनुदित कर्म का उपशम करता है वह क्या उत्थान, कर्म यावत् पराक्रम से करता है या उत्थानादि बिना उपशम करता है ? वगैरह अधिकार पहिले जैसे

* प्रकाशक-राजावहादुर लाल मुखदेवसंहायजी ज्वालाप्रसादजी *

उ० उदीरे अ० उदं नहीं आया उ० उदीरणा योग्य क० कर्म उ० उदीरे नो० नहीं उ० उदयान्तर प० पीछे क० कीया कर्म उ० उदीरे जं० जो भं० भगवन् अ० उदं नहीं आया उ० उदीरणा योग्य क० कर्म उ० उदीरे तं० उन को उ० उदयान क० कर्म व० बल वी० वीर्य पु० पुरुषात्कार पराक्रम से अ० उदं नहीं आया उ० उदीरणा योग्य उ० उदीरे उ० अश्वा तं० उन को अ० अनुत्थान अ० अकर्म

भत्रियं कम्मं उदीरेइ तंकिं उट्टणं, कम्मणं, बलेणं, वीरिणुणं, पुरिसक्कार परक्कमेणं अणुदिन्नं उदीरणा भत्रियं कम्मं उदीरेति. उाद्धु तं अणुट्टणं, अकम्मणं; अबलेणं अवीरिणुणं, अपुरिसक्कार परक्कमेणं; अणुदिणं उदीरणा भत्रियं कम्मं उदीरेइ ? गोय-
मा ! तं उट्टणंणवि, कम्मणवि, बलेणवि, वीरिणुणवि, पुरिसक्कार परक्कमेणवि, अणु-
दिन्नं उदीरणा भत्रियं कम्मं उदीरेइ नो, तं अणुट्टणंणं अकम्मणं अबलेणं अवीरिणुणं

उत्थान; कर्म, बल, वीर्य; व पुरुषात्कार पराक्रम से उदीरता है ? अथवा उत्थान; कर्म, बल, वीर्य; व पुरुषात्कार पराक्रम विना उदीरता है ? अहो गौतम ! उत्थान यावत् पराक्रम से उदीरणा के योग्य अनुदित कर्म उदीरता है. परंतु उत्थान यावत् पराक्रम विना उदीरणा के योग्य अनुदित कर्म को नहीं उदीरता है. इस लिये उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, व पुरुषात्कार पराक्रम में अस्ति है जिस से उदीरणा योग्य

जा० यावत् प० पराक्रम ॥ १३ ॥ णे० नारकी भं० भगवन् कं० कांक्षा मोहनीय क० कर्म वे० वेदे
ज० जैसे ओ० अधिक जीव त० जैसे ने० नारकी जा० यावत् थ० स्तनित कुमार ॥ १४ ॥ पु० पृथ्वी-
काया भं० भगवन् कं० कांक्षा मोहनीय क० कर्म वे० वेदे हं० हां वे० वेदे क० कैमे भं० भगवन् पु०
पृथ्वीकाया कं० कांक्षा मोहनीय कर्म वे० वेदे गो० गौतम ते० उन बी० जीवों को णे० नहीं हं० ए० ऐसा

णिज्जेग्इ एवं जाव परक्कमेइवा ॥ १३ ॥ णेरइयाणं भंते ! कंखा मोहणिज्जं कम्मं वेदं-

ति ? जहा ओहिंया जीवा तथा णेरइया जाव थाणिय कुमार ॥ १४ ॥ पुढवि-

काइयाणं भंते ! कंखा मोहणिज्जं कम्मं वेदंति ? हंता वेदंति । कहणं भंते ! पुढवि-

काइया कंखा मोहणिज्जं कम्मं वेदंति ? गोयसा ! तेसिणं जीवाणं णो एवं तक्काइवा,

शेष पुरुषात्कार पराक्रम तक का सब अधिकार पहिले जैसे कहना ॥ १३ ॥ अहां भगवन् ! क्या नार-
की कांक्षा मोहनीय कर्म वेदता है ? अहां गौतम ! जैसे समुच्चय जीव का कहा जैसे ही नारकी का
जानना. और जैसे ही स्तनित कुमार तक का जानना ॥ १४ ॥ पंचेन्द्रिय को शंकितादि दोष होने इस से
कांक्षा मोहनीय कर्मकी वेदनादि होवे परंतु एकेन्द्रियादिकको शंकितादि दोष नहीं होने से कांक्षा मोहनीय की
वेदना होवे नहीं इस लिये एकेन्द्रिय को विशेषता से कांक्षा मोहनीय का स्वरूप बताते हैं. अहां भगवन् !
पृथ्वी काय कांक्षा मोहनीय कर्म वेदे ? हां गौतम ! पृथ्वी कायिक जीव कांक्षा मोहनीय कर्म वेदे.

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुबोधप्रसादजी बालाप्रसादजी *

उ० उत्थान जा० यावत् पु० पुरुषात्कार पराक्रमे ॥ ११ ॥ से० वह भं० भगवन् अ० आत्मा से
वे० वेदे ग० निन्दे हं० हां गो० गौतम ए० यहाँ सं० सर्व प० परंपरा ण० विशेष उ० उदेआया वे० वेदे
णो० नहीं अ० उदे नहीं आया वे० वेदे ए० ऐसे जा० यावत् पु० पुरुषात्कार पराक्रम ॥ १२ ॥ से० वह
भं० भगवन् अ० आत्मा से णि० निर्जे अ० आत्मा से ग० निन्दे हं० हां गो० गौतम ए० यहाँ सं०
सर्व प० परंपरा ण० विशेष उ० उदयान्तर प० पीछे क० कीया क० कर्म ति० निर्जे ए० ऐसे

॥ ११ ॥ सेणुणं भंते ! अप्पणा चेव वेदेइ, अप्पणा चेव गरहइ ? हंता गोयसा !
एत्थवि सब्बिं परिवाडी, णवरं उदिण्णं वेदेइ, णो अणुदिंनं वेदेइ. एवं जांवं
पुरिसकार परक्कमेइवा ॥ १२ ॥ सेणुणं भंते ! अप्पणा चेव णिज्जेइ अप्पणा चेव
गरहइ ? हंता गोयसा ! एत्थवि सब्बेवि परिवाडी, णवरं उदयान्तरं पच्छा कंडं कम्मं

कहना ॥ ११ ॥ अहो भगवन् ! जीव स्वयं वेदता है, स्वयं गर्हता है ? हां गौतम ! यहाँपर सब परि-
पाटी पहिले जैसे कहता. इसमें उदय अथि हुंवे कर्म वेदते हैं इतना ही विशेष है और पुरुषात्कार
पराक्रमक पहिले जैसे कहना ॥ १२ ॥ अहो भगवन् ! जीव क्या स्वयं कर्म की निर्जरा करता है व
गर्हा करता है ! हां गौतम ! यहाँपर उदयान्तर समय पश्चात् कृतकर्म निर्जे इतना विशेष जानना

जा० यावत् १० पराक्रम ॥ १३ ॥ णे० नारकी भं० भगवन् कं० कांक्षा मोहनीय क० कर्म वे० वेदे
 ज० जैसे ओ० औधिक जीव त० तैसे ने० नारकी जा० यावत् थ० स्तानित कुमार ॥ १४ ॥ पु० पृथ्वी-
 काया भं० भगवन् कं० कांक्षा मोहनीय क० कर्म वे० हां वे० वेदे क० कैसे भं० भगवन् पु०
 पृथ्वीकाया कं० कांक्षा मोहनीय कर्म वे० वेदे गो० गौतम ते० उन जी० जीवों को णो० नहीं है ए० ऐसा

णिजेरइ एवं जाव परक्कमेइवा ॥ १३ ॥ णेरइयाणं भंते । कंखा मोहणिजं कम्मं वेदं-
 ति ? जहा ओहिंया जीवा तथा णेरइया जाव थणिय कुमारा ॥ १४ ॥ पुढवि-
 काइयाणं भंते ! कंखा मोहणिजं कम्मं वेदंति ? हंता वेदंति । कहणं भंते । पुढवि-
 काइया कंखा मोहणिजं कम्मं वेदंति ? गोयमा ! तेसिणं जीवाणं णो एवं तक्काइवा,

शेष पुरुषात्कार पराक्रम तक का सब अधिकार पहिले जैसे कहना ॥ १३ ॥ अहां भगवन् ! क्या नार-
 की कांक्षा मोहनीय कर्म वेदता है ? अहो गौतम ! जैसे समुच्चय जीव का कहा जैसे ही नारकी का
 जानना. और जैसे ही स्तनित कुमार तक का जानना ॥ १४ ॥ पंचेन्द्रिय को शक्तिदि दोष हेवे इस से
 कांक्षा मोहनीय कर्मकीवेदनादि होवे परंतु एकेन्द्रियादिको शक्तिदि दोष नहीं होने से कांक्षा मोहनीय की
 वेदना होवे नहीं इस लिये एकेन्द्रिय को विशेषता से कांक्षा मोहनीय का स्वरूप वताते हैं. अहो भगवन् !
 पृथ्वी काय कांक्षा मोहनीय कर्म वेदे ? हां गौतम ! पृथ्वी कायिक जीव कांक्षा मोहनीय कर्म वेदे.

(सुत्रार्थ) सुत्रार्थ

सुत्र

भावार्थ

व्यर्थ

निर्ग्रथ कं कांक्षा मोहनीय कर्म वे० वेदे हं० हां कं कैसे भ० भगवन् स० श्रमण नि० निर्ग्रथ कं कांक्षा मोहनीय कर्म वे० वेदे गो० गौतम ते० उस का० कारन से ना० ज्ञानांतरसे दं० दर्शनांतर से च०

मोहणिजं कं वेदंति ? हंता अस्थि । कहणं भंते ? समणा निगंथा कंखामोहणिजं कं वेदंति ? गोतमा ! तेहिं तेहिं कारणेहिं, नाणंतरेहिं, दंसणंतरेहिं, चरिंचंतरेहिं

जीवोंको मिथ्यात्व मोहनीय कर्म वेदना कहा परंतु वह निर्ग्रथ को नहीं होता हे क्यों कि जिनागम जानने वाले को निर्मल बुद्धि रहती है, इस लिये निर्ग्रथ संबंधी पृच्छा करते हैं. अहो भगवन् ! वाह्याभ्यंतर परिग्रह रहित श्रमण तपस्वी कांक्षा मोहनीय कर्म वेदते हैं ? हां गौतम ! वे वेदते हैं. अहो भगवन् ! वे श्रमण निर्ग्रथ किस प्रकार से कांक्षा मोहनीय कर्म वेदते हैं ? अहो गौतम ! इस का कारण मैं बताता हूँ. १. ज्ञानांतर से - एक ज्ञान से दूसरे ज्ञान में शंका उत्पन्न होवे जैसे अत्रि ज्ञानवाला परमाणु औरह सकल रूपी द्रव्य अत्रि ज्ञान से जाने और मनःपर्यव ज्ञानी अढाइद्वीप में रहे हुवे संज्ञी के मन का भाव जाने. इस में मन द्रव्य रूपी होने से अत्रि ज्ञानी अत्रि ज्ञान से मन का भाव जाने जब मनः पर्यव ज्ञान में क्या विशेषता ? ऐसी शंका करे. २ दर्शनांतर से अर्थात् एक दर्शन से दूसरे दर्शन में शंका उत्पन्न होवे जैसे चक्षुदर्शन व अचक्षुदर्शन को भिन्न क्यों कहा ? अथवा सम्यक् दर्शन में शंका उत्पन्न होवे ३ चारिवांतरसे - अर्थात् एक चारित्र से दूसरे चारित्र में शंका उत्पन्न होवे जैसे सामायिक चारित्र

०१ ०२ ०३ ०४ ०५ ०६ ०७ ०८ ०९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

त० तर्कसं० संज्ञा० प० प्रज्ञाम० मनव० वचन अ० अम्हे कं० कांक्षा मोहनीय क० कर्म वे० वेदते हैं वे० जाते
 पु० फीर तं० बह्वी स० सत्य नी० शंकारहित जं० जो जि० जिनने० प० प्रख्या० से० शेष तं०
 तैसे जा० यावत् पु० पुरुषात्कार पराक्रम ए० एमे जा० जावत् च० चतुरेन्द्रिय ॥ १५ ॥ पं० पंचेन्द्रिय
 तिर्यच जा० यावत् वे० वैमानिक ज० जैसे ओ० औधिक जीव ॥ १६ ॥ भं० भगवन् स० श्रमण० नि०

सण्णाइवा, पण्णाइवा, मण्णइवा, वइइवा, अम्हेणं कंखा मोहणिजं कम्मं वेदेमो वे-
 दंति । पुणते सेणणंभंते ! तमेवसच्चं णसंकंजजिणेहिं पवेइयं सेसं तंचेव जाव परिसक्का-
 र परक्कमेइवा एवं जाव चउरिंदियाणं ॥ १५ ॥ पंचिंदिय तिखिखजोणिया जाव
 वेमाणिया जहा ओहिया जीवा ॥ १६ ॥ अत्थिणं भंते ! समणा निगंथा कंखा

अहो भगवन् ! वे कैसे कांक्षा मोहनीय कर्म वेदे ? अहो गौतम ! उन जीवोंको तर्क, संज्ञा,
 प्रज्ञा, मन, वचनः व मैं कांक्षा मोहनीय कर्म वेदता हूँ ऐसा ज्ञान नहीं है तथापि वे कांक्षा
 मोहनीय कर्म वेदे इस कारण से ऐसे स्थान में साधु को ऐसा कहना कि जो जिन भगवान्ने
 प्रख्या है बह्वी निःशंक सत्य है शेष पुरुषात्कार पराक्रम तकका सब अधिकार पूर्ववत् जानना और
 एमे ही अपू, तेउ, बागु, वनस्पति, देइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चतुरेन्द्रिय तक कहना ॥ १५ ॥ पंचेन्द्रिय
 तिर्यच, मनुष्य, वाणव्यंतर, ज्यातिपी व वैमानिक का अधिक (समुच्चय) जीव जैसे कहना ॥ १६ ॥ सब

मतांतरसे भं० भंगीकेअंतरसे ण० नयांतर से णि० नियमांतरसे सं० प्रमाणांतरसे सं० शंक्ति कं० वांछा
 वाला वि० संदेह वाला कं० कांक्षा मोहनीय कर्म वे० वेदे ॥ १७ ॥ भं० भगवन् तं० वहही सं० सत्य नी०
 शंकारहित जा० यावत् पु० पुरुषात्कार पराक्रम सं० वह ए० ऐसे भं० भगवन् ॥ १॥३॥ *

णयंतरहिं, णियमंतरेहिं, पमाणंतरेहिं, संकिया कंखिया, चित्तिगिच्छिया, भेदसमावणणा,
 कलुससमावणणा, एवं खलु समणा निगंथा कंखा मोहणिजं कम्मं वेदंति ॥ १७ ॥
 सेणुणं भंते ! तमेव सच्चं नीसंकं जं जिणेहिं पवेइयं ? हंता गोयमा तमेव सच्चं नीसंकं
 एवं जाव पुरिसक्कार परक्कमेइवा ॥ सेवंभंते भंते ! चि पढमसए तइओ उहेसो
 सम्मत्तो ॥ १ ॥ ३ ॥

+

x

यिकादिक का प्रत्याख्यान है तो पहरसी वगैरह की क्या विशेषता है ऐसी शंका करे १३ प्रमाणान्तर से-
 प्रत्यक्ष प्रमाण व आगम प्रमाणमें भेद क्यों ? आगम प्रमाण से सूर्य ८०० योजन ऊंचे उदित होता है और
 चक्षु दृष्टि से जमीन में से नीकलता हुआ दीखता है इस में शंका उत्पन्न होवे। इस तरह तरह प्रकार की
 शंका उत्पन्न होवे, मिथ्या दर्शन की वांछा होवे, धर्म करणी में फलका भेद लोवे, सत्य अस-
 त्यका भेद करे, मतिभ्रम होने से कालुष्यतामाले बने, इसी कारण से श्रमण निर्ग्रथ कांक्षा मोहनीय कर्म
 वेदंत हैं ॥ १७ ॥ अहो भगवन् ! जां जिन भगवान्ने प्ररूपा है वह सत्य है ? हां गौतम ! जो जिन
 भगवान्ने प्ररूपा है वहरी निःशंक सत्य है, ऐसे ही पुरुषात्कार पराक्रमक कहना. श्री गौतम स्वामी कहते
 हैं कि अहो भगवन् ! जैसे आप प्ररूपते हैं वह सच सत्य है, यह पहिला शतकका तीसरा उद्देश।

वदार्थ

सूत्र

भावार्थ

(संस्कृत) (संस्कृत) (संस्कृत) (संस्कृत) (संस्कृत)

मतांतरसे भं० भंगीकेअंतरसे णः नयांतर से णि० नियमांतरसे सं० प्रमाणांतरसे सं० शक्ति सं० वांछा
वाला वि० संदेह वाला कं० कांक्षा मोहनीय कर्म वे० वेदे ॥ १.७ ॥ भं० भगवन् तं० वहही सं० सत्य नी०
शंकारहित जा० यावत् पु० पुरुषात्कार पराक्रम सं० वह ए० ऐसे भं० भगवन् ॥१.॥३॥ *

णयंतरहिं, णियमंतरहिं, पमाणंतरहिं, संकिया कंखिया, चित्तिगिच्छिया, भेदसमावण्णा,
कलुससमावण्णा, एवं खलु समणा निगंथा कंखा मोहणिजं कम्मं वेदंति ॥ १.७ ॥
सेणुणं भंते ! तंभव सच्चं नीसंकं जं जिणेहिं पवेइयं ? हंता गायमा तंभव सच्चं नीसंकं
एवं जाव पुरिसक्कार परक्कमेइवा ॥ सेवंभंते भंते ! त्ति पढमसए तइओ उद्देशो
सम्मत्तो ॥ १ ॥ ३ ॥

+

x

यिकादिक का प्रत्याख्यान है तो प्रहरसी बगैरह की क्या विशेषता है ऐसी शंका करे १३ प्रमाणान्तर से-
प्रत्यक्ष प्रमाण व आगम प्रमाणमें भेद क्यों ? आगम प्रमाण से सूर्य ८०० योजन ऊंचे उदित होता है और
चक्षु दृष्टि से जमीन में से नीकलता हुआ दीखता है इस में शंका उत्पन्न होवे. इस तरह तरह प्रकार की
शंका उत्पन्न होवे, मिथ्या दर्शन की वांछा होवे, धर्म करणी में फटका भेदह लावे, सत्य अम-
त्यका भेद करे, मतिभ्रम होने से कालुष्यतानाले बने, इसी कारण से श्रमण निर्ग्रथ कांक्षा मोहनीय कर्म
वेदते हैं ॥ १.७ ॥ अहो भगवन् ! जो जिन भगवान् ने प्रस्था है वह सत्य है ? हां गौतम ! जो जिन
भगवान् ने प्रस्था है वहरी निःशंक सत्य है. ऐसे ही पुरुषात्कार पराक्रमतक कहना. श्री गौतम स्वामी कहते
हैं कि अहो भगवन् ! जैसे आप प्रकृते हैं वह सच सत्य है. यह पहिला शतकका तीसरा उद्देश.

विविधार्थ

सूत्र

भावार्थ

पणानुसारेण (पणानुसारेण) पणानुसारेण पणानुसारेण

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुब्रह्मदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

क० कितनी भ० भगवन् क० कर्म प्रकृति प० प्ररूपी गो० गौतम अ० आठ कर्म प्रकृति प० प्ररूपी
क० कर्म प्रकृतिका प० पहिला उदेशा ने० जानना जा० यावत् अ० अनुभाग क० कितनी क० कर्म
प्रकृति क० कैसे वं० वांघे क० कितने ठा० स्थानमें वं० वांघे प० प्रकृति क० कितनी वे० देदे प० प्रकृति अ०
अनुभाग क० कितना प्रकारका क० किपका ॥ १ ॥ जी० जीव भं० भगवन् मो० मोहनीय क० कीये

कतिणं भंते ! कम्म पगडीओ पणत्ताओ ? गोयमा ! अट्टु कम्म पगडीओ पणत्ता-
ओ, । कम्म पयडीए पढमोउद्देशो नेयव्वो ॥ जाव अणुभागो सम्मत्तो ॥ गाहा-कति
पगडी कहि वंधइ । कतिहिं ठाणेहिं वंधए पगडी ॥ कइ वेदेइ च पगडी । अणुभागो
कतिविहो कस्स ॥ १ ॥ १ ॥ जीविणं भंते ! मोहणिजेणं कडेणं कम्मणं उदिण्णे-

गत उदेशे में कर्म की वेदना उदीरणा आदिका कथन किया है. अब इस उदेशे में कर्म का स्वरूप
बतते हैं. अहो भगवन् ! कितनी कर्म प्रकृतियों कही ? अहो गौतम ! कर्म की मूल आठ प्रकृति
कही. इन का विस्तार पूर्वक कथन पत्रवणा सबूके तीसवा पद के प्रथम उदेशे में कहा है. उस में से
अनुभाग तक का जानना. उस का संक्षेप में अर्थ बतानेवाली संग्रह गाथा कहते हैं. ? कितनी कर्म
प्रकृतियों २ प्रकृति कैसे वांघे ३ कितने स्थानक में प्रकृति वांघे, ४ कितनी प्रकृति वेदे और ५ कितने
प्रकार का अनुभाग होवे ऐसे पांच द्वार कहे हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! मिथ्यात्व मोहनीयसे कराये हुये

क० कर्म उ० उदय० से क्रे उ० अंगीकार करे हं० हां गो० गौतम उ० अंगीकार करे से० वह भं० भगवन् कि० क्या वी० वीर्यपने उ० अंगीकार करे अ० अवीर्यपने उ० अंगीकार करे गो० गौतम वी० वीर्यपने उ० अंगीकार करे णो० नहीं अ० अवीर्यपने उ० अंगीकार करे ज० यदि वी० वीर्यपने उ० अंगीकार करे कि० क्या वा० बाल वीर्यपने उ० अंगीकार करे पं० पंडित वीर्यपने उ० अंगीकार करे वा० बाल पंडित वीर्यपने उ०

णं उवट्टाएज्जा ? हंता गोयसा ! उवट्टाएज्जा । से भंते ! किं वीरियत्ताए उवट्टाएज्जा, अवीरियत्ताए उवट्टाएज्जा ? गोयसा ! वीरियत्ताए उवट्टाएज्जा, णो अवीरियत्ताए उवट्टाएज्जा ॥ जइ वीरियत्ताए उवट्टाएज्जा, किं बाल वीरियत्ताए उवट्टाएज्जा, पंडित वीरियत्ताए उवट्टाएज्जा, बालपंडित वीरियत्ताए उवट्टाएज्जा ? गोयसा ! बाल वी-

कर्मों के उदय से क्या जीव परलोक क्रिया अंगीकार करे अर्थात् अन्य दर्शनी बने ? हां गौतम ! अन्य दर्शनी बने. अटो भगवन् ! जीव वीर्य सहित अन्य दर्शन अंगीकार करे अथवा वीर्य रहित अंगीकार करे ? अहो गौतम ! जीव वीर्य से परलोक क्रिया अंगीकार करे परंतु वीर्य रहितपने अंगीकार करे नहीं. अहो भगवन् ! यदि वीर्य से परलोक क्रिया अंगीकार करे तो क्या बल वीर्य से, पंडित वीर्य से अथवा बालपंडित वीर्य से परलोक क्रिया अंगीकार करे ? अहो गौतम ! मिथ्यात्व के उदय से मिथ्या-दृष्टिपना से जीव को जो बाल वीर्य स्थिर रहता है उस से ही अन्य दर्शन अंगीकार करता है, पंडित

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

क० कितनी भ० भगवन् क० कर्म प्रकृति प० गौतम अ० आठ कर्म प्रकृति प० प्ररूपी क० कर्म प्रकृतिका प० पहिला उदेश ने० जानना जा० यावत् अ० अनुभाग क० कितनी क० कर्म प्रकृति क० कैसे वं० वांधे क० कितने ठा० स्थानमें वं० वांधे प० प्रकृति क० कितनी वे० वेदे प० प्रकृति अ० अनुभाग क० कितना प्रकारका क० किपका ॥ १ ॥ जी० जीव भ० भगवन् मो० मोहनीय क० कीपे

कतिपं भंते ! कम्म पगडीओ पणत्ताओ ? गोयमा ! अट्टु कम्म पगडीओ पणत्ताओ, । कम्म पयडीए पढमोउदेसो नेयव्वो ॥ जाव अणु भागो सम्मत्तो ॥ गाहा—कति पगडी कहिं बंधइ । कतिहिं ठाणेहिं बंधए पगडी ॥ कइ वेदेइ च पगडी । अणु भागो कतिविहो कस्स ॥ १ ॥ १ ॥ जीविणं भंते ! मोहणिज्जेणं कडेणं कम्मणं उदिण्णे-

गत उदेशे में कर्म की वेदना उदीरणा आदिका कथन किया है. अब इस उदेशे में कर्म का स्वरूप बताते हैं. अहो भगवन् ! कितनी कर्म प्रकृतियों कही ? अहो गौतम ! कर्म की मूल आठ प्रकृति कही. इन का विस्तार पूर्वक कथन पद्यमणा सूत्रके तीसरी मवा पद के प्रथम उदेशे में कहा है. उस में से अनुभाग तक का जानना. उस का संक्षेप में अर्थ बतानेवाली संग्रह गाथा कहते हैं. १. कितनी कर्म प्रकृतियों २. प्रकृति कैसे वांधे ३. कितने स्थानक में प्रकृति वांधे, ४. कितनी प्रकृति वेदे और ५. कितने प्रकार का अनुभाग होवे ऐसे पांच द्वार कहे हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! मिथ्यात्व मोहनीयसे कराये हुये

सि० कदाचित् बा० बालपंडित वीर्यपने अ० अतिक्रमे ॥ ३ ॥ ज० जैसे उ० उदयमें दो० दो आलापक त० तैसे उ० उपशांत में दो० दो आलापक भा० कहना ण० विशेष उ० अंगीकार करे पं० पंडित वीर्यपने अ० अतिक्रमे बा० बालपंडित वीर्यपने अ० अतिक्रमे ॥ ४ ॥ से यह भं० भगवन् कि० क्या आ० आ०

वीर्यपने अ० अतिक्रमे ॥ ३ ॥ जहा उदिन्नणं दो आलावगा, तथा उवसंतेणवि दो आलावगा भाणियन्वा, णवरं उवट्टाएजा, पंडियवीरियत्ताए अवक्कमेजा, बाल पंडिय वीरियत्ताए अवक्कमेजा ॥ ४ ॥ से भंते ! कि आयाए अवक्कमइ, अणयाए

वीर्य से अपक्रमे अर्थात् बाल पंडित वीर्य से देशविरति (श्रावक) होता है. पाठान्तर ऐसा भी है कि यात्र बालवीर्यपने मिथ्यात्व मोहनीय कर्म का उदयसे अपक्रमे परंतु अन्य दो वीर्य सहित अपक्रमे नहीं ॥ ३ ॥ जैसे उदय का दो आलापक कहा जैसेही उपशान्तका दो आलापक जानना. इन में विशेष इतना कि पहिला आलापक में क्रिया करते सर्वथा मोहनीय उपशान्त रहे इसलिये उपशान्त मोह अबस्था में पंडित वीर्य का भाव है और अन्य दो का अभाव है. दूसरा आलापक में संयतपना से मोहनीय कर्म उपशान्त और पाल पंडित वीर्य से पीछा पडकर देश विरति हुवा उनको मोहनीय कर्म के उपशान्त का सद्भाव है परंतु मिथ्यात्वी नहीं हुवा है क्योंकि मोह के उदय से ही मिथ्यात्वी होवे परंतु यहां पर मोह मिथ्यात्व के उपशान्त का अधिकार है ॥ ४ ॥ अब सामान्य से अपक्रम का अधिकार चकता

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला मुखर्जीसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अंगीकारकरे गो० गौतम वा० बालवीर्य पने उ० अंगीकार करे गो० नहीं पं० पंडित वीर्यपने नो० नहीं वा० बाल-
पंडित वीर्यपने ॥ २ ॥ जी० जीव भं० भगवन् मो० मोहनीय क० कीये क० कर्म के उ० उदयसे अ०
अतिक्रमे हं० हां अ० अतिक्रमे से० वह भं० भगवन् जा० यावत् वा० बाल पंडित वीर्य पने अ० अतिक्रमे

रियत्ताए उवट्टाएजा णो पंडिय वीरियत्ताए उवट्टाएजा, णो बाल पंडिय वीरियत्ताए
उवट्टाएजा ॥ २ ॥ जीवणं भंते ! मोहणिज्जेणं कडेणं कस्सेणं उदिस्सेणं अवक्खमेज्जा?
हंता अवक्खमेज्जा. से भंते ! जाव बालपंडिय वीरियत्ताए अवक्खमेज्जा ? गोयमा !
बाल वीरियत्ताए अवक्खमेज्जा, नो पंडिय वीरियत्ताए अवक्खमेज्जा. सिय बाल पंडिय

वीर्य व बाल पंडित वीर्य से अंगीकार नहीं करता है ॥ २ ॥ अब अपक्रमण सो पीछा पडना उस संबंध में
प्रश्न पूछते हैं. अहो भगवन् ! जीव मोहनीय कर्म के उदय से अपक्रमता है, उपर के गुणस्थान पर
गया हुआ पीछा पडता है ? हां गौतम ! जीव मोहनीय कर्म के उदय से उत्तम गुणस्थान से हीन गुणस्थान को
जाता है. अहो भगवन् ! क्या वीर्य सहित जाता है या वीर्य रहित जाता है ? अहो गौतम ! वीर्य
सहित जाता है. यदि वीर्य सहित जाता है तो क्या बाल वीर्य से, पंडित वीर्य से या बाल पंडित वीर्य से
जाता है ? अहो गौतम ! बाल वीर्य से अपक्रमे परंतु पंडित वीर्य से अपक्रमे नहीं कदाचित् बाल पंडित

शब्दार्थ

सूत्र

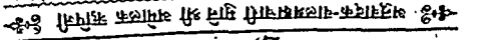
भावार्थ

महाशक्त-राजाबहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी

त्मा से अ० अतिक्रम अ० परात्मा से अतिक्रमे गो० गौतम आ० आत्मासे अ० अतिक्रमे गो० नहीं
अ० परात्मासे अ० अतिक्रमे मो० मोहनीय क० कर्म वे० वेदता से० वह क० कैसे ए० यह भ० भगवन्
ए० ऐसे गो० गौतमे पु० पहिले से वह ए० यह ए० बेसा रो० रुचे इ० पीछे से० वह ए० यह ए०
ऐसा गो० नहीं रो० रुचे ए० ऐसे ख० निश्चय ए० यह ॥५॥ से० वह नू० निश्चय भ० भगवन् ने० नार-

अवक्कमइ ? गोयमा ! आयाए अवक्कमइ, गो अणयाए अवक्कमइ ! मोहणिज्जं कम्मं
वेदमाणे । सेक्कहमेयं भंते ! एवं ? गोयमा ! पुब्बि से एयं एवं रोयइ, इयाणि से एयं
एवं नो रोयइ, एवं खलु एयं-एवं ॥ ५ ॥ सेणुणं भंते ! नेरइयस्सवा, तिरिक्ख जो-

अहो भगवन् ! जीव अपनी आत्मासे अपक्रमता है या अन्य की आत्मा से अपक्रमता है. अहो गौतम !
जीव मिथ्यात्व मोहनीय व. चारित्र मोहनीय वेदता हुआ अपनी आत्मा से अपक्रमे परंतु अन्यकी आत्मा से
अपक्रमे नहीं. अहो भगवन् ! मोहनीय कर्म वेदनेवाले को पहिले पंडितपने की रुचि थी और फीर
मिथ्यात्व की रुचि हुई वह कैसे ? अहो गौतम ! अपक्रमण से पहिले अपक्रमणकारी जीव इस जीवादि
पदार्थ अथवा अहिंसादि वस्तु को जैसे जिनेश्वर भगवान् ने कहीं वैम ही श्रद्धता था; अब मोहनीय कर्म के
उदय से जीवादि पदार्थ व. अहिंसादिक वस्तु को जैसे तीर्थकरने कहीं वैम श्रद्धे नहीं इसलिये निश्चय में
उक्त प्रकार से मोहनीय कर्म वेदते हुवे जीव स्वात्मा से अपक्रमे ॥ ५ ॥ मोहनीय कर्म के आधिकार से



शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

लिये गो० गौतम ने० नारकी जा० यानव मो० मोक्ष ॥ ६ ॥ ए० यह भं० भगवत् प्रो० पुद्गल ती० अ
तीत काल में अ० अनंत सा० शाश्वत स० काल भु० हुवा इ० ऐसे व० कहना हं० हां गो० गौतम ए०
घ० प्रो० पुद्गल ती० अतीत काल में अ० अनंत सा० शाश्वत स० काल भु० हुवा इ० ऐसा व० कहना
ए० वह भं० भगवत् प्रो० पुद्गल प० वर्तमान काल में सा० शाश्वत स० काल भं० हे इ० ऐसा व० कहना

गरणं, जहा जहा तं भगवया दिट्ठं तथा तथा तं विपरिणमिरसतीति. सेतेणट्टेणं
गोयमा ! नेरइयस्सवा जाव सोक्खो ॥ ६ ॥ एसणं भंते ! पोगले तीतमणंतं सासयं
समयं भुवीति वच्चवंसिया ? हंता गोयमा ! एसणं पोगले तीतमणंतं सासयं
समयं भुवीति वच्चवं सिया । एसणं भंते ! पोगले पडुप्पणसासयं समयं
भवतीति वच्चवं सिया ? हंता गोयमा ! तंवेव उच्चरियव्वं । एसणं भंते ! पोगले

नारही, तिर्यंच, मनुष्य व देवता किये हुये कर्णों से मुक्त नहीं हो सकते हैं ॥ ६ ॥ उपर कर्म की चिन्त-
ना की वह कर्म पुद्गल रूप है इस लिये परमाणु आदि पुद्गल की चिन्तना कहते हैं. अथवा परि-
श्राम अधिकार से पुद्गल परिणाम कहते हैं. अहो भगवत् ! अतीत काल में सब पुद्गल अनंत, शाश्वत थे
ऐसा कहना ? हां गौतम ! परमाणु पुद्गल अतीत काल में सदा थे. ऐसा कदापि नहीं हुवा कि अतीत
काल में सून्य समय [काल] हुवा. अहो भगवत् ! वर्तमान काल में सब पुद्गल क्या शाश्वत है ऐसा

शब्दार्थ (शब्दार्थ) शब्दार्थ शब्दार्थ शब्दार्थ शब्दार्थ शब्दार्थ शब्दार्थ शब्दार्थ शब्दार्थ शब्दार्थ

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला गुबदेवसहायजी ज्वालामुखी *

मोक्ष ए० ऐसे म० मैने दु० दोगकारै क० कर्म प० प्ररूपे प० प्रदेश कर्म अ० अनुनाग कर्म-स० तर्हा ज० जो प० प्रदेश कर्म त० उस को णि० निश्चय वे० वेदे ज० जो अ० अनुपाग कर्म त० उस को अ० क्तितः ने० वे० वेदे अ० क्तितनेक नो० नहीं वे० वेदे णा० जाना अ० अरिहंतने सु० यूना अ० अरिहंतने वि० विशेषजाना अ० अरिहंतने इ० इस कर्म को अ० यह जीव उ० उदय आये वे० वेदना वे० वेदेगा अ० अने कर्म अ० बांधे हैं ज० जैसे त० उ०को म० भगवन्तने दि० देखे त० तैसे प० परिणमैगे ते० इस

दुविहे कम्मै पणत्ते तंजहा, पएसकम्मैय, अणुभागकम्मैय । तत्थणं जं तं पएसकम्मं तं नियमा वेदेइ, तत्थणं जं तं अणुभागकम्मं तं अत्थेगइयं वेदेइ अत्थे गइयं नो वेदेइ णायमेयं अरहया, सुयमेयं अरहया, विण्णायमेयं अरहया, इमं कम्मं अयं जीवि अब्भोवगमियाए वेयणाए वेयइरसइ, इमं कम्मं अयं जीवि उवक्कमियाए वेयणाए वेयइरसइ, अहाकम्मं अहाणि

वादिक अनेक प्रकार से भिन्न प्रकार के विभाग करके जाने हैं, अरिहंत को ' यह कर्म है, यह जीव है' ऐसा प्रत्यक्ष है. प्रवर्ज्या काल से लेकर ब्रह्मचर्य भूमिशयन, केशलोचनादिक का अंगीकार से निवर्तना से अभ्युपगमिनी वेदना उस को यह जीव वेदेगा. स्वयंपत्र उदय में आये हुवे अथवा उदरिणा से उदय में लाये हुवे कर्मों को वेदना से औपक्रमिनी वेदना, उस को यह जीव वेदेगा. जैसे कर्म बांधे हैं, जैसे कर्म के देश कालादि है और जैसे २ भगवन्तने कर्म देखे वैसे २ परिणमैगे. इसलिये अहो गौतम !

संकाल के संपूर्ण संयम से के संपूर्ण संवर से के संपूर्ण ब्रह्मचर्य से के संपूर्ण प्रवचन माता से सिं सिद्धे
 दुः खुँ जा० यावत् स० सर्व दुः दुःख का अं० अंत किया गो० गीतम नो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ
 से० वह के० कैसे भं० भगवन् ए० ऐसे बु० कहा जाता है जा० यावत् अं० अंत क० किया गो०
 गीतम जे० जो के० कोई अं० अंत करने वाले अ० चरम शरीरी स० सर्व दुः दुःखों का अं० अंत क०
 किया क० करते हैं क० करेंगे स० सब ते० वे उ० उत्पन्न ना० ज्ञान दर्शन वाले अ० अरिश्त जिं
 जिन के० केवली भ० होकर त० पीछे सिं सिद्धते हैं बु० बुद्धते हैं मु० मुक्त होते हैं प० निर्वाणपति

केवलेण संवरेण, केवलेण बंभचेरवासेण, केवलीहिं पवयणमायाहिं, सि-
 जिस्सु, बुज्झिनु जाव सव्वदुक्खाणमंतं करिसु ? गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे !
 सेकेणट्ठेणं भते ! एवंवुच्चइ, तंचेव जाव अंतं करिसु ? गोयमा ! जेकेइ अंतकरावा
 अंतिम सररीरियावा सव्व दुक्खाणमंतं करिसुवा, करिस्संतिवा, करिस्संतिवा, सव्वे

केवल संवर से, केवल ब्रह्मचर्य से व केवल आठ प्रवचन माता से सिद्धे, बुद्धे, यावत् सब दुःखों का अंत
 किया ? अहो गीतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. अहो भगवन् ! किस कारण से छप्रस्थ मनुष्य सिद्धे,
 बुद्धे नहीं यावत् सब दुःखों का अंत किया नहीं ? अहो गीतम ! संसार के अंत करनेवाले
 व चरम शरीरी ने सब दुःखों का अंत किया, करते हैं, व करेंगे. वे सब केवलज्ञान, केवलदर्शन के

द्वयार्थ (संस्कृत) (पद्य) (संस्कृत) (पद्य) (संस्कृत) (पद्य) (संस्कृत) (पद्य) (संस्कृत) (पद्य)

द्वयार्थ

सूत्र

भावार्थ

संकाल के संपूर्ण संयम से के संपूर्ण संवर से के संपूर्ण ब्रह्मचर्य से के संपूर्ण प्रवचन माता से सिद्धे बुद्धे जां यावत् सर्व दुःख का अंत अंतकिया गो गौतम नो नहीं इ० यह अर्थ संसमर्थ से वह के कैसे भं भगवन् ए० ऐसे बुद्धे कहा जाता है जां यावत् अंत क० किया गो गौतम जे जो के कोई अंत करने वाले अ० चरम शरीरी स० सर्व दुःखों का अंत अंत क० किया क० करते हैं क० करेंगे स० सब ते० वे उ० उत्पन्न ना० ज्ञान दर्शन वाले अ० अरिहंत जि० जिन के केवली भ० होकर त० पीछे सि० सिद्धते हैं बु० बुद्धते हैं मु० मुक्त होते हैं प० निर्वाणपते

केवलेण संवरेण, केवलेण बंभचेरवासिणं, केवलीहिं पत्रयणमायाहिं, सिद्धिसु, बुद्धिसु जाव सब्बदुक्खाणमंतं करिसु ? गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे । सेकेणट्ठेणं भंते ! एवंबुच्चइ, तंचेव जाव अंतं करिसु ? गोयमा ! जेकेइ अंतकरावा अंतिम सरीरियावा सब्ब दुक्खाणमंतं करिसुवा, करिंतिवा, करिसंतिवा, सब्बे

केवल संवर से, केवल ब्रह्मचर्य से व केवल आठ प्रवचन माता से सिद्धे, बुद्धे, यावत् सब दुःखों का अंत किया ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. अहो भगवन् ! किस कारण से छत्रस्थ मनुष्य सिद्धे, बुद्धे नहीं यावत् सब दुःखों का अंत किया नहीं ? अहो गौतम ! संसार के अंत करनेवाले व चरम शरीरी ने सब दुःखों का अंत किया, करते हैं, व करेंगे. वे सब केवलज्ञान, केवलदर्शन के

प्रकाशक-राजाबहादुर लाला मुखर्जीदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी

है जा० यावत् स० सब दुःखों का अ० अंत क० किया क० करते हैं क० करेंगे से० वह ते० इस लिये गो० गौतम जा० यावत् स० सब दुःखों का अ० अंत किया प० वर्तमान में ए० ऐसे न० विशेष सि० भिन्नते हैं भा० कहना अ० अनागत में ए० ऐसे न० विशेष नि० निश्चिंते भा० कहना ॥ ९ ॥ ज० जैसे छ० छद्मस्थ त० तैसे अ० अवधि त० तैसे प० परमावधि ति० तीन २ आ० आलापकं भा० कहना ॥ १० ॥ के० केवला मं० भगवन् म० मनुष्य ती० अतीत काल में अ० अंत सा० शाश्वत सं०

ते उप्पन्न नाणदंसणधरा अरहा जिणे केवली भवित्ता तओ पच्छा सिज्झति, बुज्झति, मुच्चंति, परिनिव्वायंति, जाव सब्बदुक्खाणमंतं करिसुवा करिंतिवा करिस्संतिवा से तेणट्ठणं गोयमा ! जाव सब्ब दुक्खाणमंतं करिसु । पडुपेत्तेत्रि एवं चेव, नवरं सिज्झंति भाणियव्वं. अणागएवि एवंचेव, नवरं सिज्झिस्संति भाणियव्वं ॥ ९ ॥ जहा छउमत्थो तहा आहोहिओवि, तहा परमाहिओवि तिच्चित्तिन्नि आलावगा भाणियव्वा ॥ १० ॥ केवलीणं भंते ! मणूसे तत्तिमणंतं सासयं समयं जाव अंतं करेसु ? हंता

घारक जिन हुवे पीछे भिन्नते हैं, बुझते हैं व निर्वाण को प्राप्त होते हैं यावत् सब दुःखों का अंत किया, करते हैं व करेंगे. इसलिये अहो गौतम ! सब दुःखों का अंत किया वहां वर्तमान काल में भिन्नते हैं व भविष्य काल में निश्चिंते कहना शेष सब पहिले जैसे कहना ॥ ९ ॥ जैसे छद्मस्थ का कहा वेभे ही अवधि व परम अवधिज्ञानी का ज्ञानना ॥ १० ॥ अब केवल ज्ञानी की पृच्छा करते हैं. अहो

काल जा० यावत् अ० अंत किया हं० हां गो० गौतम जा० यावत् अ० अंत किया ए० ये ति० तीन आ० आलापक भा० कहना छ० छद्मस्थ को ज० जैसे ण० विशेष सि० सिद्धे सि० सिद्धते हैं सि० सिद्धेगे ॥ ११ ॥ से० वह भं० भगवन् ती० अतीत काल में अ० अंत सा० शाश्वत स० काल प० वर्तमान सा० शाश्वत स० समय अ० अनागत अ० अनंत सा० शाश्वत स० समय जे० जो के० कोई अं० अंत करने वाले

गोयमासिद्धिसु जाव अंतंकरिसु एते तिन्निआलावगा भाणियव्वा छउमत्थस्स जहा णवरं सिद्धंसु सिद्धंति, सिद्धिसंति ॥ १ ॥ सेणुणं भंते! तीमणंतं सासयं समयं पडुप्पन्नं वासासयं समयं अणागय मणंतं वा सासयं समयं जिकेइ अंतकरावा अंतिम सरीरियावा सव्व दुक्खाण.

भगवन् ! केवली अतीत शाश्वत काल में सिद्धे, बुद्धे यावत् सब दुखों का अंत किया ? हां गौतम ! सिद्धे यावत् अंत किया. ऐसे अतीत, अनागत व वर्तमान के तीन २ आलापक जानना. जैसे छद्मस्थ का कहा जैसे ही केवली का जानना मात्र विशेषता यह है कि अतीत काल में सिद्धे, वर्तमान में सिद्धते हैं और आगामिक में सिद्धेगे ॥ ११ ॥ अहां भगान् ! अतीत काल में अनंत शाश्वत समय में वर्तमान का भी शाश्वत समय में, अनागत काल के अवन शाश्वत समय में जो कोई अंत करनेवाले अन्तिम शरीरीने सब दुःखों का अंत किया, करते हैं व करेंगे वे क्या सब उत्पन्न केवल ज्ञान, केवल दर्शन के धारक अरिहंत केवली हुवे पीछे सिद्धते हैं यावत् सब दुःखों का अंत करते हैं ? हां गौतम ! अतीत

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(संस्कृत) (संस्कृत) (संस्कृत) (संस्कृत) (संस्कृत)

* प्रकाशक राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अं० चरिम शरीरी स० सर्व दुःख का अं० अंतकिया क० करता है क० करेगा स० सर्व ते० वे उ०
उत्पन्न ना० ज्ञान दं० दर्शन वाले अ० अरिहंत जि० जिन के० केवली भ० होकर त० पीछे सि० सिद्धते
हैं जा० यावत् अं० अंत क० करेंगे हं० हां गो० गौतम ती० अतीत काल में अ० अनंत सा० शाश्वत
जा० यावत् अं० अंत करेंगे ॥ १२ ॥ से० वह भं० भगवन् उ० उत्पन्न नां० ज्ञान दर्शन वाले
अ० अरिहंत जि० जिन के० केवली अ० चाहिए उतना व० कहना हं० हां गो० गौतम उ० उत्पन्न

मंतं करिसुत्रा, करितिवा, करिसंसतिवा ॥ सन्वेते उत्पण्ण नाण दंसण धरा अरहा
जिणे केवली भवित्ता, तओ पच्छा सिञ्जति जाव अंतं करिसंसतिवा ? हंता गोयमा !
तीत मणंतं सामयं जाव अंतंकरिसंसतिवा ॥ १२ ॥ संपूणं भंते ! उत्पण्ण नाण
दंसण धरे अरहा जिणे केवली अलमत्थुत्ति वत्तब्बं सिया ? हंता गोयमा ! उत्पण्ण

काल के अनंत शाश्वत समय में भिद्यते हैं यावत् सब दुःखों का अंत करते हैं ॥ १२ ॥ अहो भगवन् !
उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक, अरिहंत जिन केवली ही संपूर्ण ज्ञानवाले हुवे ! उन से अधिक ज्ञान प्राप्त करने
को अन्य कोई भी समर्थ नहीं है ? हां गौतम ! उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली
ही संपूर्ण ज्ञानवाले हैं अन्य कोई इस से अधिक ज्ञानी नहीं है. अहो भगवन् ! आपने कहा

शब्दार्थ

सुत्र

भावार्थ

ना० ज्ञान दर्शन वाले अ० अरिहंत जि० जिन के० केवली अ० चाहिए उतना व० कहना से० ऐसे ही भ० भगवन् ॥ १ ॥ ४ ॥

क० कितनी भ० भगवन् पु० पृथ्वी प० प्ररूपी गो० गौतम स० सात पु० पृथ्वी प० प्ररूपी र० रत्न प्रभा जा० यावत् त० तमतम इ० इस भ० भगवन् र० रत्नप्रभा पृथ्वी में क० कितने नि० नरकावास नाण दंसण धरे अरहा जिणे केवली अलमत्युत्ति वत्तव्वं सिया सेव भंते

भंतेत्ति पढमसए चउत्थोद्देशो सम्मत्तो ॥ १ ॥ ४ ॥

कइणं भंते ! पुढवीओ पणत्ताओ ! गोयमा ! सत्त पुढवीओ पणत्ताओ, तंजहा-र-यणप्पभा जाव तमत्तमा । इमीसेणं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए कइ निरयात्रास

वह वैसे ही है अन्यथा नहीं है. यह पहिला शतकका चौथा उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ १ ॥ ४ ॥
 पहिले उद्देशे के अंत में अरहंतादिक कहे वे पृथ्वी पर हुवे इस लिये इस उद्देशे में पृथ्वी संबंधी प्रश्न करते हैं. अहो भगवन् ! कितनी पृथ्वी कहीं ? अहो गौतम ! पृथ्वी सात कहीं उन के नाम ? रत्न-प्रभा इस में रत्नों की प्रभा २ शंकर प्रभा इस में कंकरों की प्रभा ३ बालु प्रभा जिस में बालु की कान्ति ४ पंक प्रभा जिस में अशुचि रूप कर्दम की कान्ति ५ घूम प्रभा जिस में धूम्र सरिखी कान्ति ६ अंधकार की प्रभा सो तम प्रभा और ७ महा अंधकार की प्रभा. सो तमतम प्रभा. अहो भगवन् !

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(सूत्रार्थ) (भावार्थ) (सूत्रार्थ) (भावार्थ)

* प्रकाशक राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अं० चरिम शरीरी स० सर्व दुःख का अं० अंतकिया क० करता है क० करेगा स० सर्व ते० वे उ०
उत्पन्न ना० ज्ञान दं० दर्शन वाले अ० अरिहंत जि० जिन के० केवली भ० होकर त० पीछे सि० सिद्धते
हैं जा० यावत् अं० अंत क० करेंगे हं० हां गो० गौतम ती० अतीत काल में अ० अनंत सा० शाश्वत
ज्ञा० यावत् अं० अंत करेंगे ॥ १२ ॥ से० वह भं० भगवन् उ० उत्पन्न ना० ज्ञान दर्शन वाले
अ० अरिहंत जि० जिन के० केवली अ० चाहिए उतना व० कहना हं० हां गो० गौतम उ० उत्पन्न

मंतं करिसुवा, करितिवा, करिस्संतिवा ॥ सव्वेत्ते उप्पण्ण नाण दंसण धरा अरहा
जिणे केवली भवित्ता, तओ पच्छा सिज्झंति जाव अंतं करिस्संतिवा ? हुंता गोयमा !
तीत मणंतं सामयं जाव अंतंकरिस्संतिवा ॥ १२ ॥ सणूणं भंते ! उप्पण्ण नाण
दंसण धरे अरहा जिणे केवली अलमत्थुत्ति वत्तव्वं सिया ? हुंता गोयमा ! उप्पण्ण

काल के अनंत शाश्वत समय में सिद्धते हैं यावत् सर्व दुःखों का अंत करते हैं ॥ १२ ॥ अहो भगवन् !
उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक, अरिहंत जिन केवली ही संपूर्ण ज्ञानवाले हुंते? उन से अधिक ज्ञान प्राप्त करने
को अन्य कोई भी समर्थ नहीं है? हां गौतम ! उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली
ही संपूर्ण ज्ञानवाले हैं अन्य कोई इस से अधिक ज्ञानी नहीं है. अहो भगवन् ! आपने कहा

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

तीन स० सात वि० विमान स० शत च० चार क० देवलोक में ए० अग्यारह उ० उत्तर हे० नीचे की स० सात उ० उत्तर म० मध्यकी स० शत उ० उपर की पं० पांच अ० अनुत्तर विमान में ॥ ३ ॥ पु० पृथ्वी डि० स्थिति ओ० अवागहना स० शरीर सं० संघयण सं० संठाण ले० लेख्या दि० दृष्टि पा० ज्ञान जो० जोग उ० उपयोग द० दश स्थान इ० इस भं० भगवन् र० रत्नप्रभा पु० पृथ्वी के ती०

एकारसुत्तरहेट्टिमए सत्तुत्तरंच माञ्जिमए ॥ सयमेयं उवरिमए ॥ पंचेवय अणुत्तर-
विमाणा ॥ ३ ॥ १ ॥ पुढवि द्विइ ओगाहण सरिर संघयण मेव संठाणे ॥ लेस्सा
दिट्ठी णाणे, जोगुवओगे य दसठाणा ॥ १ ॥ इमीसिणं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए

अच्युत इन दोनों में तीनसौ. नवैशैयक की प्रथम त्रिक में १११, दूसरी त्रिक में १०७, तीसरी त्रिक में १०० और उपर पांच अनुत्तर विमान के पांच सब मिलकर ८४१७०२३ विमान हुवे ॥ ३ ॥ अब आगे उदेशा के लीये द्वार माथाने बतते हैं. १ स्थिति २ अवागहना ३ शरीर ४ संघयण ५ संठाण ६ लेख्या ७ दृष्टि ८ ज्ञान ९ जोग १० उपयोग, इस में प्रथम स्थिति द्वार कहते हैं अहो भगवन् ! इस रत्नप्रभा नामक पृथ्वी में तीस लाख नरकावास में सं प्रत्येक नरकावास में नारकी के कितने स्थिति स्थान कहे हैं ? अहो गौतम ! प्रत्येक नरकावास में अंतख्याते स्थिति स्थान कहे हैं क्योंकी प्रथम पृथ्वी की अपेक्षासे नारकी की जघन्य दश हजार वर्ग की स्थिति है. और एक २ समय बढ़ते उत्कृष्ट एक सागरोपम की

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(एकारसुत्तरहेट्टिमए सत्तुत्तरंच माञ्जिमए) (सयमेयं उवरिमए) (पंचेवय अणुत्तर-विमाणा) (३) (१) (पुढवि द्विइ ओगाहण सरिर संघयण मेव संठाणे) (लेस्सादिट्ठी णाणे, जोगुवओगे य दसठाणा) (१) (इमीसिणं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए)

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी बालाप्रसादजी *

जो० ज्योतिषी-वि० विमान-वास-स० शत-सहस्र-मो० सौधर्म में भं० भगवंतू-क० कितने वि० विमान-वास-स० शतसहस्र-गो० गौतम व० बत्तीस-विमानवास-स० शतसहस्र-ए० ऐसे व० बत्तीस-अ० अष्टा-वीस-व० बारह-अ० आठ-च० चार-स० शतसहस्र-प० पचास-व० चालीस-छ० छ-स० सहस्र-स० सहस्रार में आ० आनत-पा० माणत-क० देवलोक-व० चार-स० शत-आ० आरण-अ० अच्युत-में-ति०

प० ॥ सोहम्मेणं भंते ! कइविमाणा वास-सयसहस्सा पणत्ता ? गौयसा !

बत्तीसं विमाणावास-सयसहस्सा प० । एवं (गाथा) बत्तीसट्टवीसा, वारस-अट्ट-

चउरो सयसहस्सा ॥ पण्णा चत्तालीसाछच्चसहस्सा सहस्सारे ॥१॥ आणय-पाणयकप्पे,

चत्तारि सयारणच्चुए-तिणि ॥ सत्त-विमाण-सयाइं, चउसुवि-एएसु-कप्पेसु ॥ २ ॥

अपू, तेऊ, वायु, वनस्पतिक्रायिक जीव द्विन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चतुरेन्द्रिय, तिर्यच-पंचिन्द्रिय, मनुष्य, बाणव्यंतर-व-ज्योतिषी के असंख्यात-स्थान कहे हैं. अहो भगवन् ! सौधर्म-देवलोक में कितने वास कहे हैं ? अहो गौतम ! सौधर्म-देवलोक में बत्तीस लाख विमान वास कहे हैं. दूसरे-इशान-देवलोक में अष्टावीस लाख विमान-कहे हैं तीसरे-सनत्कुमार में बारह-लाख विमान कहे हैं, चौथे-मोहेन्द्र-देवलोक में आठ-लाख पांचवे-ब्रह्म-देवलोक में चार-लाख-छठे-लांतक में ५० हजार, सातवे-महाशुक्र में ४० हजार, आठवे-सहस्रार में छ-हजार-नवके-आणत-दशके-माणत में इन दानों-देवलोक में चारसो-अग्यारके-आरण-बारके

वास स० शत सहस्र में ए० एकैक नि० नरकावास में ज० जघन्य ठि० स्थिति वाले व० वर्तते ने०
 समयसहस्रमें सु एगमेगति निरयात्रासंसि जहणियाए ठिईए वट्टमाणा नेरइया किं को-
 होवउत्ता, माणोवउत्ता, मायोवउत्ता, लोभोवउत्ता ? गोयमा ! सव्वेवि ताव होज्ज.
 कोहोवउत्ता, अहवा कोहोवउत्ता माणोवउत्तंय, । अहवा कोहोवउत्ताय,
 माणोवउत्ताय, । अहवा कोहोवउत्ताय मायोवउत्तंय, । अहवा कोहो-
 वउत्ताय मायोवउत्ताय । अहवा कोहोवउत्ताय लोभोवउत्तंय, । अहवा कोहोवउत्ताय,
 लोभोवउत्ताय । अहवा कोहोवउत्ताय माणोवउत्तंय, मायोवउत्तंय; । कोहोवउत्ताय,

प्रकार का है ॥ ४ ॥ अब इन स्थिति स्थान में क्रोधादि त्रिपय का विभाग कर बताते हैं. अहो भगवन् !
 रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नरकावासमें से प्रत्येक नरकावास में जघन्य स्थितिवाले नरकीरहे हैं
 उनमें से क्या क्रोधवाले ज्यादा हैं ? मानवाले ज्यादा हैं ? मायावाले ज्यादा हैं ? अथवा लोभवाले ज्यादा
 हैं ? अहो गौतम ! प्रत्येक नरक में जघन्य स्थिति वाले नरकी सदैव रहते हैं उन में क्रोध युक्त विशेष
 रहते हैं. इम से उन के २७ भागे क्रिये हैं. और एतादि से संख्यात समयधिक जघन्य स्थितिवाले नर-
 की हैं वे कश्चित्तु हैं और कश्चित्तु नहीं भी हैं. इतलिये उसमें क्रोध सहित एक भी होवे अनेकभी होते इतसे

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

तेप न० नरकावास म० शा सदस्य में ए० एकेक नि० नरकावास में ने० नारकी क० कितने ठि०
स्थि० म० न गोता अ० असंख्यात नि० स्थिति स्थान ५० प्ररूपे तं० वह ज० जघन्य ठि० स्थिति
स० सायािक त० अ० जघन्य स्थिति दु० दोमः अधिक जा० यात् अ० असंख्य त ममयाधिक ज० जघ-
न्य स्थिति त० उ० योग उ० उत्कृष्ट ति० स्थिति ॥४॥ इ० इस र० रत्नप्रभा पृथ्वी में ती० तीन नि० नरका

तीसाए नियावास समयसहसे तु एगमेगति निरयावाससि नेइयाणं केवइया ठिइ-

ट्टाणा प० ? गोपमा ! असंखे ना ठि,ट्टाणा प० तं० जहाणिया ठिई समयाहिया,

जहाणिया ठिई दुममयाहिया, जात्र असंखज समयाहिया जहाणिया ठिई. तप्याउ-

गुक्कासिया ठिई ॥ ४ ॥ इमीसंजं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावास

स्थिति होती है. उन में असंख्यात समय होते हैं. इनलिये असंख्यात स्थिति स्थान होते. वैसेही प्रत्येक
नरकावास की अपेक्षाने भी असंख्याते स्थिति स्थान होते. जो रत्नप्रभा के पहिले पायडे में जघन्य दश
हजार वर्ष उत्कृष्ट १० हजार वर्ष की स्थिति है वह एक स्थिति स्थान वह भी प्रत्येक नरक में भिन्न
है. उन से एक समय अधिक सो दूसरा जघन्य स्थिति स्थान वह भी अनेक प्रकार का है. ऐसीही
असंख्यात समय अधिक जघन्य स्थिति स्थान वह भी अनेक प्रकार का है. स्थिति स्थानक प्रत्येक नरक
व प्रत्येक पायडे में भिन्न है. ऐसीही निवृत्त नरकावास को योग्य उत्कृष्ट स्थिति स्थानक भी अनेक

वास स० शत सहस्र में ए० एकैक ति० नरकावास में ज० जघन्य ठि० स्थिति वाले व० वर्तते ने०
 सयसहरमेसु एगमेगंसि निरयावासंसि जहणियाए ठिईए चटमाणा नरइया किं को-
 होवउत्ता, माणोवउत्ता, मायोवउत्ता, लोभोवउत्ता ? गोयमा ! सव्वेवि ताव होल.
 कोहोवउत्ता, अहवा कोहोवउत्ता माणोवउत्तं, । अहवा कोहोवउत्ताय,
 माणोवउत्ताय, । अहवा कोहोवउत्ताय मायोवउत्तेय, । अहवा कोहो-
 वउत्ताय मायोवउत्ताय । अहवा कोहोवउत्ताय लोभोवउत्तेय, । अहवा कोहोवउत्ताय,
 लोभोवउत्ताय । अहवा कोहोवउत्ताय माणोवउत्तेय, मायोवउत्तेय; । कोहोवउत्ताय,

प्रकार का है ॥ ४ ॥ अब इन स्थिति स्थान में क्रोधादि विषय का विभाग कर बताते हैं. अहो भगवन् !
 रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में प्रत्येक नरकावास में जघन्य स्थितिवाले नारकीरों हैं
 उनमें से क्या क्रोधवाले ज्यादा हैं ? मानवाले ज्यादा हैं ? मायावाले ज्यादा हैं ? अथवा लोभवाले ज्यादा
 हैं ? अहो गौतम ! प्रत्येक नरक में जघन्य स्थिति वाले नारकी सदैव रहते हैं; उन में क्रोध युक्त विशेष
 रहते हैं. इस से उन के २७ भागों किये हैं. और एकादि से संख्यात सपयाधिक जघन्य स्थितिवाले नार-
 की हैं वे क्वचित् हैं और क्वचित् नहीं भी हैं. इसलिये उसमें क्रोध सहित एक भी होवे अनेकभी होंवे इससे

नि० नरका वास स० शन सहस्र में ए० एकैक नि०नरका वाग में म० समयाधिक ज० जघन्य ठि० स्थिति में व० वर्तते ने० नरकी कि० क्या को० क्रोधयुक्त मा० मान्युक्त मा० मायायुक्त लो० लोभयुक्त गो० इमीसिणं भंते ! रयणप्यभाए पुढवीए तीसाए निरयावात सयसहरभेसु एगमेगंसि निरयावासंसि समयाहियाए जहणट्टिईए बट्टमाणा नेरइया किं कोहांवउत्ता, माणो-वउत्ता, मायोवउत्ता, लोभोवउत्ता ? गोयमा ! कोहोवउत्तेय, माणोवउत्तेय, मायो-वउत्तेय, लोभोवउत्ताय । कोहोवउत्ताय, माणोवउत्ताय, मायोवउत्ताय, लोभोवउत्ताय ॥ अहवा

की जघन्य स्थितिवाले नरकी क्या क्रोधवाले ज्यादा है । मानवाले ज्यादा है । मायावाले ज्यादा है ? या लोभवाले ज्यादा है ? अहो गौतम ! एक समय से अधिक समय की व संख्यात समय से अधिक समय की जघन्य स्थिति वाले नरकी होवे और नभी होवे इ वलिये इत में अस्सी भाग होते हैं । उस में असंयोगी आठ भाग १ क्रोध का एक २ मान का एक ३ माया का एक ४ लोभ का एक ५ क्रोध का बहुत ६ मान का बहुत ७ माया का बहुत व ८ लोभ का बहुत । द्वि संयोगी भागि २४-१ क्रोधवंत एक मानवत एक २ क्रोधवत एक मानवत बहुत ३ क्रोधवत बहुत ४ क्रोधवत बहुत मानवत बहुत ५ क्रोधवत एक मायावत एक ६ क्रोधवत एक ७ क्रोधवत बहुत मायावत एक ८ क्रोध वत बहुत मायावत बहुत ९ क्रोधवत एक लोभवत एक १० क्रोधवत बहुत ११ क्रोधवत बहुत लोभवत

गौतम को क्रोधयुक्त मा० मानयुक्त मा० मायायुक्त लो० लोभयुक्त ए० ऐसे अ० अस्मी भं० भांगा ने०
जाता ए० ए० ए० जा० यात् स० संख्यात म० समयाधिक ठि० स्थिति वाले अ० असंख्यात स० समया-
धिक स्थिति वाले त० उभयेष्य उ० उत्कृष्ट ठि० स्थिति वाले स० सत्तावीस भं० भांगे भा० कहागं ॥६॥

कोदोत्रउत्तय, माणोत्रउत्तय, अहवाकोदोत्रउत्तयमाणोत्रउत्ताय एवंअसीइ भंगा नेयञ्चा ॥
एवं जात्र संखंज समथाहिया ठि०, अखंज नमथाहिया ठि०, तप्याउगुक्कोसियाए ठिईए
सत्तावीसं भंगा भाणियब्बा॥६॥ इभीसिणं भं०, रयणप्पभाए पुढवीए तीत्ताए निरयात्तास

एक? २ क्रोधयंत बहुत लोभयंत बहुत? ३ मानयंत एक मायायंत एक? ४ मानयंत एक मायायंत बहुत? ५ मानयंत
बहुत मायायंत एक? ६ मानयंत बहुत? ७ मानयंत एक लोभयंत एक? ८ मानयंत एक लोभ-
यंत बहुत? ९ मानयंत बहुत लोभयंत एक? १० मानयंत बहुत व लोभयंत बहुत २१?
मायायंत एक? २२ मायायंत एक? २३ मायायंत एक? २४ मायायंत एक? २५ मायायंत
बहुत व लोभयंत बहुत. त्रिसंयोगी भांग ३२-१ क्रोधयंत, मानयंत, मायायंत एक, अनेक ऐसे मीलकर ३२
भांगे होते हैं और चतुःसंयोगी के १६ भांगे होते हैं वों तम मील कर जघन्य स्थिति के नारकी में
एक से अस्ती पर्यंत भांगे होते हैं. और संख्यात समय से अधिक समय तक के जन्य
स्थिति वाले नारकी से लगाकर उत्कृष्ट स्थिति वाले तरु सत्तावीस भांगे होते हैं यह प्रथमद्वार हुआ

एवमनं त्रयो पञ्चाशत् (सप्तशतं) सप्तशतं (सप्तशतं) सप्तशतं

वदार्थ सूत्र भावार्थ

द० दृढकी भी० कहना ॥ ४ ॥ जी० जीय भं० भगवन् किं० क्या वि० विग्रहगति स० प्राप्त अ० अवि-
ग्रहगति स० प्राप्त गो० गौतम सि० कदाचित् वि० विग्रहगति स० प्राप्त सि० कदाचित् अ० अविग्रहगति
स० प्राप्त ए० ऐसे जा० यावत् भं० वैमानिक ॥ ७ ॥ ने० नारकी भं० भगवन् किं० क्या वि० विग्रह-

भाणियव्वं ॥ एवं णाणत्तं, एवं सव्वेवि सोलसदंडगा भाणियव्वं ॥ ६ ॥

जीविणं भते किंविग्गहगइ समावणणए, अविग्गहगइ समावणणए? गोयमा! सियविग्गह-
गइ समावणणए, सिय अविग्गहगइ समावणणए एवं जाव वेमाणिए ॥ जीवाणं भंते ।
किं विग्गहगइ समावणणगा, अविग्गहगइ समावणणगा ? गोयमा ! विग्गहगइ समा-
वणणगावि, अविग्गहगइ समावणणगावि ॥ ७ ॥ नेरइयाणं भंते ! किं विग्गहगइ

व चरण प्रायः गति पूर्वक होता है. इसलिये आगे गति का वर्णन करते हैं. अहो भगवन् ! गति करते
जीव क्या विग्रह गति में जाता है या अविग्रह गति से जाता है ? अहो गौतम ! किसी समय जीव
विग्रह गति से जाता है और किसी समय जीव अविग्रह गति से जाता है. ऐसा वैमानिक तक का जानना
अब बहुत जीव भात्री प्रश्न करते हैं अहो भगवन् ! बहुत जीव विग्रह गतिवाले हैं या अविग्रह गतिवाले
हैं ? विग्रहगतिवाले भी हैं और अविग्रहगतिवाले भी हैं ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! क्या नारकी विग्रह

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी जवा लामसदाजी *

छा प० परिपह आ० आहार नो० नहीं आ० आहार करे आ० आहारकरे आ० आहार करता
आ० आहार करे प० परिणमता प० परिणमे प० क्षीण आ० आयुष्य वाला भ० होने ज० जहाँ उ० उपजे
त० उस आ० आयुष्य प० अनुभवे तं० उस ति० तिर्यच आयुष्य म० मनुष्य आयुष्य गो० गौतम दे० देव
म० महर्दिक जा० यावत् म० मनुष्य आ० आयुष्य ॥ ९ ॥ जी० जीव भं० भगवन् ग० गर्भ में व०

छावत्तिग्रं, परिसह वत्तियं, आहारं नो आहारइ, अहेणं आहारइ आहारिजमाणे
आहारिए, परिणामिजमाणे परिणामिए, पहीणिय आउए भवइ, जत्थं उववज्जइ, तमाउयं
पडिसंवेदेइ तिरिक्ख जोणियाउयंवा, मणुस्साउयंवा ? हंता गोयमा ! देवेणं
महट्टिए जाव मणुस्साउयं वा ॥ ९ ॥ जीवेणं भंते ! गव्भं वक्कममाणे किं सइदिए वक्कमइ,

मुखवाले, य महानुभाव देवों चवन होने का समय पास आया हुवा जानकर माता पिता का क्रीडा स्थान
देख लज्जा आन से, शुक्र शोणित का आहार की दुर्गच्छा आने से व पुत्रल ग्रहणरूप अरति परिपह से
कीचित्कालतक आहार करे नहीं परंतु चवे पीछे क्षुधा वेदनीय के उदय से आहार करे. ऐसा आहार
हित्ये हुवे, परिणमाये हुवे य प्रक्षीण आयुष्यवाले देव मनुष्य तिर्यच का आयुष्य क्या वेदे ? हां गौतम !
ऐसा महर्दिक देव मनुष्य तिर्यच का आयुष्य वेदे ॥ ९ ॥ गर्भ में उत्पन्न होने के कारण से गर्भ की अं-

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

१७४

उपजता किं कया स० सइन्द्रियपने व० उपजता हे अ० अनिन्द्रियपने व० उपजता हे गो० गौतम सि० कदाचित् स० सइन्द्रियपने व० उपजता हे सि० कदाचित् अ० अनिन्द्रियपने उपजता हे से० वह के० कैसे गो० गौतम द० द्रव्येन्द्रिय प० प्रत्यय अ० अनिन्द्रिय व० उपजे भा० भाव इन्द्रिय प० प्रत्यय स० सइन्द्रिय व० उपजे से० वह ते० इसलिये ॥ १० ॥ जी० जीव भं० भगवन् ग० गर्भ में व० उपजता किं०

अणिदिए वक्कमइ ? गोयमा ! सिय सइदिए वक्कमइ, सिय अणिदिए वक्कमइ । से केणट्टेणं ? गोयमा ! दन्विदियाइं पडुच्च अणिदिए वक्कमइ, भाविदियाइं पडुच्च सइदिए वक्कमइ से तेणट्टेणं ॥ १० ॥ जीवेणं भंते ! गब्भं वक्कममाणे किं सरिरी वक्कमइ,

स्थान का प्रश्न पूछते हैं अहो भगवन्! गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव कया इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है अथवा इन्द्रिय रहित उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! क्वचित् इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है और क्वचित् इन्द्रिय रहित भी उत्पन्न होता है. अहो भगवन् ! किम कारन से जीव क्वचित् सइन्द्रियपने उत्पन्न होता है और क्वचित् अनिन्द्रियपने होता है ? अहो गौतम ! द्रव्य इन्द्रिय आश्रित अनिन्द्रिय उत्पन्न होता है क्यों कि निवृत्त्युपकरण रूप, स्पर्शन, रस, घ्राण, चक्षुः व श्रोतेन्द्रिय पर्याप्त हुये पीछे होती है और भावेन्द्रिय आश्रित सइन्द्रिय होता है क्यों की ज्ञानरूप इन्द्रिय जीव को सदा काल रहती हैं. इसलिये अहो गौतम ! क्वचित् इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है और क्वचित् इन्द्रिय रहित उत्पन्न होता है. ॥ १० ॥ इन्द्रिय

छा प० परिपह आ० आहार नो० नहीं आ० आहार करे आ० आहारकर आ० आहार करता
 आ० आहार करे प० परिणमता प० परिणमे प० क्षीण आ० आयुष्य वाला म० होवे ज० जहाँ उ० उपजे
 त० उस आ० आयुष्य प० अनुभवे तं० उस ति० तिर्यंच आयुष्य म० मनुष्य आयुष्य गो० गौतम दे० देव
 म० महर्द्धिक जा० यात्रतू म० मनुष्य आ० आयुष्य ॥ ९ ॥ जी० जीव भं० भगवन् ग० गर्भ में व०

छावत्तियं, परिसह वत्तियं, आहारं नो आहारंइ, अहेणं आहारंइ आहारंजमाणे
 आहारिणं, परिणामिजमाणे परिणामिणं, पहीणिय आउए भवइ, जत्थं उववज्जइ, तमाउयं
 पडिसंवेइ तिरिक्ख जौणियाउयंवा, मणुस्साउयंवा ? हंता गोयमा ! देवेणं
 महड्डिए जाव मणुस्साउयं वा ॥ ९ ॥ जीवेणं भंते ! गब्भं वक्कममाणे किं सइंदिए वक्कमइ,

सुखवाले, व महानुभाव देवों चक्रन होने का समय पास आया हुआ जानकर माता पिता का क्रीडा स्थान
 देख लज्जा आने से, शुक शोणित का आहार की दुर्गच्छा आने से व पुत्रल ग्रहरूप अरति परिपह से
 किंचित्कालक आहार करे नहीं परंतु चवे पछि क्षुधा वेदनीय के उदय से आहार करे. ऐसा आहार
 मंत्र्ये हुये, परिणमाये हुये व प्रक्षीण आयुष्यवाले देव मनुष्य तिर्यंच का आयुष्य क्या वेदे ? हां गौतम !
 ऐसा महर्द्धिक देव मनुष्य तिर्यंच का आयुष्य वेदे ॥ ९ ॥ गर्भ में उत्पन्न होने के कारण से गर्भ की अव-

आहार आ० आहारकरे गो० गौतम मा० माता का ओ० रुधिर पि० पिताका मु० वीर्य तं० उस उ०
 दोनों सं० मिलाहुवा क० मलिन कि० किलीपरूप प० प्रथम आ० आहार आ० आहारकरे ॥ १२ ॥
 जी० जीव भं० भगवन् ग० गर्भ में ग० गयाहुवा कि० क्या आ० आहार आ० आहारकरे गो० गौतम जं०
 जो मा० माता ना० नानाप्रकार र० रस वि० विकृति आ० आहारकरे तं० उस का ए० एक दे० देश
 ओ० ओज आ० आहारकरे ॥ ३ ॥ जी० जीव को भं० भगवन् ग० गर्भ में ग० उत्पन्न हुवा अ० है उ०

वक्त्रममाणे तप्यढमयाए कमाहाग्माहारेइ ? गोयमा ! माउओयं पिउसुर्कं तं तदुभय
 संसिद्धं कलुसं किञ्चिसं, तप्यढमयाए आहारमाहारेइ ॥ १२ ॥ जीविणं भंते !

गव्भगए समाणे किं आहारमाहारेइ ? गोयमा ! जं से माया नाणाविहाओ रसविगईओ
 आहारेइ तेदगेदेसेणय ओय माहारेइ ॥ १३ ॥ जीवस्सणं भंते ! गव्भगयस्स
 हे. ॥ ११ ॥ शरीर आहार से होता है इसलिये आहार का प्रश्न करते हैं. अहो भगवन् ! गर्भ में उत्पन्न
 होता जीव पहिलेही क्या आहार करता है ? अहो गौतम ! माता का ऋतुकाल संबंधी रुधिर व पिता का
 वीर्य यह दोनों परस्पर मिलने से किलिप रूप बने हुवे पुद्गलों का आहार जीव प्रथम करता है. ॥ १२ ॥
 अहो भगवन् ! गर्भ में रहा हुवा जीव किस का आहार करता है ? अहो गौतम ! गर्भवती स्त्री दुग्ध घृता-
 दिक का जो आहार करती है और उस का जो रस होता है उस में से एक देश (कुछ थोडा विभाग)

आहार आ० आहारकरे गो० गौतम मा० माता का ओ० रुधिर पि० पिनाका सु० वीर्य तं० उस उ०
दोनों सं० मिलाहुवा क० मलिन कि० किलयीपरूप प० प्रथम आ० आहार आ० आहारकरे ॥ १२ ॥
जी० जीव भं० भगवन् ग० गर्भ में ग० गयाहुवा कि० क्या आ० आहार आ० आहारकरे गो० गौतम जं०
जो मा० माता ना० नानामकार र० रस त्रि० विक्रिति आ० आहारकरे तं० उस का ए० एक दे० देश
ओ० ओज आ० आहारकरे ॥ ३ ॥ जी० जीव कां भं० भगवद् ग० गर्भ में ग० उत्पन्न हुआ अ० है उ०

वक्त्रमाणे तप्यन्मयाए कमाहाग्माहारेइ ? गोयमा ! माउआयं पिउमुकां तं तदुभय

संसिद्धं कलुसं किञ्चित्सं, तप्यन्मयाए आहारमाहारेइ ॥ १२ ॥ जीविणं भंते !

गव्भगाए समाणे किं आहारमाहारेइ ? गोयमा ! जं से माया नाणाविहाओ रसविगईओ

आहारेइ तेदगेदेसेणय ओय माहारेइ ॥ १३ ॥ जीवस्सणं भंते ! गव्भगंयस्स

हे. ॥ ११ ॥ शरीर आहार से होता है इसलिये आहार का प्रश्न करते हैं. अहो भगवन् ! गर्भ में उत्पन्न
होता जीव पहिलेहि क्या आहार करता है ? अहो गौतम ! माता का ऋतुकाल संबंधी रुधिर व पिता का
वीर्य यह दोनों परस्पर मिलने से क्लिप्त रूप बने हुवे पुद्गलों का आहार जीव प्रथम करता है. ॥ १२ ॥
अहो भगवन् ! गर्भ में रहा हुआ जीव किस का आहार करता है ? अहो गौतम ? गर्भवती स्त्री दुग्ध घृता-
दिकं का जो आहार करती है और उस का जो रस होता है उस में से एक देश (कुच्छ योडा विभाग)

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायनी ज्वालाप्रसादजी *

वडीनीत पा० लघुनीत खे० थूक सिं श्लेष्य वं० वमन पि० पित्त गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ से० वह के० कैस गो० गौतम जी० जीव ग० गर्भ में ग० गयाहुवा जं० जो आ० आहार करता है तं० उसको चि० इकठा करता है तं० उसको सो० श्रोत्रेन्द्रियपने जा० यावत् फा० स्योत्रेन्द्रियपने अ० हडि अ० हडि कीभिनी के० केश मं० इमश्रु रो० रोम न० नखपने से० वह ते० इसलिये ॥ १४ ॥ जी० जीव भं०

समाणरस अत्थि उच्चारइवा, पासवणेइवा, खेलेइवा, सिंघाणेइवा, वंतेइवा, पिचेइवा ?

गोयमा ! णोइणट्टे समट्टे ! से केणट्टेणं ? गोयमा ! जीवेणं गब्भगए समाणे

जमाहरइ तं चिणाइ, तं सोइदियत्ताए जाव फासिदियत्ताए, अट्टि अट्टिमिज केस

मंसुरोम नहत्ताए से तेणट्टेणं ॥ १४ ॥ जीवेणं भंते ! गब्भगए समाणे पभूमहेणं

रूप ओज आहार करता है ॥ १३ ॥ जहां आहार होता है वहां निहार होता है इसलिये निहार भंत्रधि

प्रश करते हैं अहो भगवन् ! गर्भ में रहा हुवा जीव को वडीनीत, लघुनीत खेंकार, श्लेष्य, वमन

व पित्त क्या होता है ? अहो गौतम ! गर्भ में रहे हुवे जीव को यह नहीं होता है अहो भगवन् ! ऐसा

नहीं होने का क्या कारण है ? अहो गौतम ! गर्भ में रहा हुवा जीव जो आहार करता है वह सब आहार

श्रोत्रेन्द्रियादि पांचो इन्द्रियपने, हडि, हडि की पिंजी, केश, इमश्रु रोम व नखपने परिणमता है इस लिये

उन जीवों को लघुनीत वडीनीत वगेरह नहीं होते हैं ॥ १४ ॥ अहो भगवन् ! गर्भ में रहा हुवा जीव क्या

शब्दार्थ

मूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

जीव प० प्रतिबद्ध पु० पुत्रका जीव पु० स्पर्शा हुवा त० इसलिये आ० आहार करे प० परिणमे अ० अथ-
 वा पु० पुत्रका जीव प० प्रतिबद्ध मा० माता का जीव से फु० स्पर्शा हुवा त० इस लिये वि० चिने उ० उप-
 चेने से० वह ते० इसलिये जा० यावत् नो० नहीं मु० मुख से का० कवल आ० आहार आ० आहार
 करे ॥ १५ ॥ क० कितने भ० भगवन् मा० माता के अंग गो० गौतम त० तीन मा० माता के अंग
 प० प्ररूपे म० मास सो० शत्रु म० मस्तक ॥ १६ ॥ क० कितने भ० भगवन् पे० पिता के
 फुडा, तम्हा आहारइ, तम्हा परिणामेइ, अनिरात्रियणं पुत्तजीव पडिवद्धा माउजीव
 फुडा तम्हा चिणाइ, तम्हा उवचिणाइ. से तेणट्टेणं जाव नो पभू मुहेणं कावलियं
 आहारं आहारित्तए ॥ १५ ॥ कइणं भंते ! माइअंगा पणत्ता ? गोयमा ! तओ
 माइयंगा पणत्ता तंजहा मंससोणिए मत्थुलंगं ॥ १६ ॥ कइणं भंते ! पेइयंगा प-

आहार करता है और शरीर में परिणमाना है. दूसरी पुत्रजीवसहरणी नाडी पुत्रके जीव की साथ बंधी
 हुई व माता की साथ स्पर्शी हुई है. इस से गर्भस्थ जीव के शरीर की वृद्धि होती है. इसीसे अहो
 गौतम ! कवल आहार लेने को गर्भस्थ जीव नहीं समर्थ होता है ॥ १५ ॥ अहो भगवन् ! माता के कितने
 अंग कइ हैं ? अहो गौतम ! माता के तीन अंग कइ हैं. मांस, रुधिर व मस्तक की मीजी. फफसा अथवा
 कलेजा ऐसा भी अर्थ कितनेक करते हैं. ॥ १६ ॥ अहो भगवन् ! पिता के कितने अंग हैं ? अहो गौतम !

शब्दार्थ

मूत्र

वृत्रार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥ श्रीनारायणाय नमः ॥ श्रीव्यासदेवाय नमः ॥ श्रीमद्भगवद्गीता ॥ १८० ॥

ॐ

अंग गो० गौतम त० तीन पे० पिता के अंग अ० हृद्धि अ० हृद्धिकीर्षिज के० केश मं० श्मश्रु रो० रोम न० नख ॥ १॥
 अ० माता पिता का भं० भगवन् स० शरीर के० कितना का० काल सं० रहे गो० गौतम जा० जितना का० काल
 भ० भवधारणीय स० शरीर अ० नाश न पाये ए० इतना का० काल सं० रहे अ० अब स० समय २ में
 वो० हीन होता च० चरिम का० काल स० समय में वो० नाश भ० होवे ॥ १८ ॥ जी० जीव भं० भगवन्

णत्ता ? गोयमा ! तओ पेइयंगा पणत्ता तंजहा आट्टि, केसमंसुरोमनहे
 ॥ १७ ॥ अस्मा पेइएणं भंते ! सरिएए केवइयं कालं संचिट्ठइ ? गोयमा ! जावइयं
 से कालं भवधारणिजे सरिएए अब्वावण्णे भवइ, एवतियं कालं संचिट्ठइ. अहेणं
 समए समए वोयसिजमाणे चरिम काल समयसि वोच्छिण्णे भवइ ॥ १८ ॥ जीविणं

शरीर में पिता के तीन अंग होते हैं. १ अस्थि, २ अस्थि की रींजी ३ केश श्मश्रु रोम व नख. ॥ १७ ॥
 अहो भगवन् ! माता व पिता के अंग जीव की साथ कितने काल तक सम्वन्ध रखते हैं ? अहो गौतम !
 जहाँलग मनुष्यादिक का भवधारणीय शरीर विनाश होवे नहीं वहाँ लग माता व पिता के अंग रहते हैं.
 अर्थात् शरीर का विनाश होनेपर इन अंगों का भी विनाश होता है. जिस समय से माता व पिता के
 अंगों संबंधी आहार ग्रहण किया था उस समय से लगाकर प्रति समय क्षीण होते २ अन्तिम काल में

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला मुखर्देवसहायजी अनालाप्रसादजी *

ग० गर्भ में ग० रहाहुवा ने० नरक में उ० उत्पन्न होवे गो० गौतम अ० कितनेक उ० उत्पन्न होवे अ० कितनेक नो० नहीं उ० उत्पन्न होवे से० वह के० कैसे गो० गौतम स० संक्षीपंचन्द्रिय स० सर्व प० पर्याप्तने प० पर्याप्त-शी० वीर्यलब्धिसे वे० वैक्रेयलब्धिसे प० शत्रुमैन्य आ० आया हुवा सो० सुनकर नि० अवधारकर प० प्रदेश नि० बहार निकाले वे० वैक्रेय समुद्रघात से स० ग्रहण करे स० ग्रहण करके

भंते गवभगए समाणे नरइएसु उवजेज्जा ? गोयमा ! अत्थेगंइए उववजेज्जा, अत्थे-
गइए नो उववजेज्जा। सेकेणट्टेणं ? गोयमा ! सेणं सण्णी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीएहिं
पज्जत्तए वीरियलब्धीए, वेउब्बिय लब्धीए पराणियं आगयं सोच्चां निसम्मं पएसे नि-

नष्ट होजाते हैं: ॥ १८ ॥ अब गर्भस्थ जीव कदाचित् गर्भ में ही काल अवस्था को प्राप्त होवे तो कहां पर उत्पन्न होता है उस संबंधी प्रश्न करते हैं. अहो भगवन् ! गर्भस्थ जीव आयुष्य पूर्ण होने से कालकर क्या नरक में उत्पन्न होते हैं ? अहो गौतम ! कितनेक जीव नरक में उत्पन्न होते हैं और कितनेक नरक में नहीं उत्पन्न होते हैं. अहो भगवन् ! किस तरह से गर्भस्थ जीव नारकी में उत्पन्न होते हैं अहो गौतम ! कोई संक्षीपंचन्द्रिय जीव राणी की कुक्षि में उत्पन्न होवे अर्थात् गजपुत्र होवे. वहां उन को पूर्ण पर्याय बांधकर पर्याप्ता हुवे पीछे पूर्व कार्णी के प्रभाव से वीर्य लब्धि व वैक्रेय लब्धि की प्राप्ति होवे.

दार्थ

सूत्र

भावार्थ

चा० चतुरंगी से० सैन्य वि० विकुर्वे वि० विकुर्वे कर चा० चतुरंगी से० सैन्य से प० शत्रु शैल्य की स० साथ
 सं० संग्राम सं० संग्राम करे से० वह जी० जीव अ० अर्थ का इच्छक र० राज्य का इच्छक भो० भोग
 की इच्छा वाला का० काम की इच्छा वाला अ० अर्थ की कांक्षा वाला र० राज्य की कांक्षा वाला भो० भोग की
 कांक्षा वाला का० काम की कांक्षा वाला अ० अर्थ पिपासु र० राज्य पिपासु भो० भोग पिपासु का० काम पिपासु
 त० उत्तम चित्त वाला प० मन वाला ले० लक्ष्या वाला अ० अश्वत्थसय वाला ति० तीव्र आरंभ वाला अ०

च्छुभइ, त्रैलोक्यिय समुग्धाएण समोहणइ, समोहणइए चालरंगिणीए सेणाए त्रिउव्वइ, त्रिउव्व
 इत्ता चाउरंगिणीए सेणाए पराणीएणं सद्धिसंगामं संगामेइ, सेणं जीवे अत्थ कामए,
 रज्जकामए, भोग कामए, कामकामए, अत्थकंखिए, रज्जकंखिए, भोगकंखिए, काम

वह गर्भस्थ जीव ऐसी बात सुने की परचक्री की सेना आई है और अपन को दुःखी करेगी. ऐसी बात
 सुनकर, अवधारकर जीव के प्रदेश गर्भ की याहिर निकाले और वैक्रेय समुद्रघात से तथाविध पुद्गलों
 को ग्रहण कर हाथी, घोड़े, रथ, पायदल गैरह सेना की विकुरर्णा करे, विकुर्र्णा करके परचक्री की
 सेना साथ संग्राम करे. द्रव्य की अभिलाषावाला राज्यक्रुद्धि की अभिलाषावाला, गंधरम स्पर्शरूप भोग
 की अभिलाषावाला, शब्द रूपादि कामकी अभिलाषावाला धन की इच्छा से आसक्त बनाहुवा, राज्य,
 भोग, व कामकी इच्छा से आसक्त बना हुवा. धन, राज्य, भोग व काम का पिपासु, [अतुप्त,] तन्मय

ग० गर्भ में ग० रहाहुवा ने० नरक में उ० उत्पन्न होते गो० गौतम अ० कितनेक उ० उत्पन्न होते अ० कितनेक नो० नहीं उ० उत्पन्न होते से० वह के० कैसे गो० गौतम स० संशीपंचन्द्रिय स० सर्व प० प० योसिने प० पर्याप्त-वी० वीर्यलब्धिसे वे० वैक्रेयलब्धिसे प० शत्रुमैन्य आ० आया हुवा सो० सुनकर नि० अवधारकर प० प्रदेश नि० बहार निकाले वे० वैक्रेय समुद्रयात से स० ग्रहण करे स० ग्रहण करके

भंते गव्भगए समाणे नेरइएसु उवजेज्जा ? गोयमा ! अत्थेगइए उवजेज्जा, अत्थे-
गइए नो उवजेज्जा। सेकेणट्टेणं ? गोयमा ! सेणं सण्णी पंचिंदिए सब्वाहिं पज्जत्तीएहिं
पज्जत्तए वीरियलद्धीए, वेउब्बिय लद्धीए पराणियं आगयं सोच्चां निसम्मं पएसे नि-

नष्ट होजाते हैं: ॥१८॥ अब गर्भस्थ जीव कदाचित् गर्भ में ही काल अवस्था को प्राप्त होते तो कहां पर उत्पन्न होता है उस संबंधी प्रश्न करते हैं. अहो भगवन् ! गर्भस्थ जीव आयुष्य पूर्ण होने से कालकर क्या नरक में उत्पन्न होते हैं ? अहो गौतम ! कितनेक जीव नरक में उत्पन्न होते हैं और कितनेक नरक में नहीं उत्पन्न होते हैं. अहो भगवन् ! किस तरह से गर्भस्थ जीव नारकी में उत्पन्न होते हैं अहो गौतम ! कोई संशी पंचन्द्रिय जीव राणी की कुक्षि में उत्पन्न होते अर्थात् गजपुत्र होते. वहां उन को पूर्ण पर्याय बांधकर पर्याप्त हुवे पीछे पूरे कारणी के प्रभाव से वीर्य लब्धि व वैक्रेय लब्धि की प्राप्ति होते.

कैसे गो० गौतम स० संज्ञी पं० पंचेन्द्रिय स० सर्व पं० पर्याप्त से पं० पर्याप्त त० तथाख्य स० श्रमण
मा० माहण की अं० पास ए० एक आ० आर्य ध० धर्म का सु० अच्छा वचन सो० सुत्तकर० नि० अव-
धारकर त० पीछे भ० होवे सं० वैराग्य से उ० उत्पन्न स० श्रद्धा ति० तीव्र ध० धर्मानुराग र० रक्त
जी० जीव ध० धर्म कौ० कामी पु० पुन्य का कामी मो० स्वर्ग का कामी मो० मोक्षका कामी ध० धर्म

वज्जेज्जा, अथेगइए णो उववज्जेज्जा । सेकेणट्टेणं ? गोयमा ! सेणं सण्णी पंचिदिए
सव्वाहिं पजत्तीहिं पजत्तए तहारुवरस समणस्सवा, माहणस्सवा अंतिए एगमवि
आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा, निसम्म तओ भवइ संवेगजायसहे तिव्वधम्ममाणुराग-
रत्ते, सेणं जीवे धम्मकामए, पुण्णकामए, सगकामए; मोक्खकामए; धम्मकंखिए,

कितनेक जीव देवलोक में नहीं उत्पन्न होते हैं. अहो भगवन् ! किस कारन से कितनेक जीव देवलोक में
उत्पन्न होते हैं और कितनेक जीव देवलोक में नहीं उत्पन्न होते हैं ? अहो गौतम ! कोई जीव धर्मिष्ठ
स्त्री की कुक्षि में संज्ञी पंचेन्द्रियपने उत्पन्न हुआ. वहां पूर्ण पर्याय बांधकर पर्याप्त हवे पीछे तथारूप श्रमण
माहण की पास एकान्त आर्य धार्मिक वचन श्रवण कर, अवधारकर संवेग से धर्मादि में श्रद्धावन्त हुआ व
तीव्र धर्मानुराग से रक्त बनगया. फीर वह श्रुत चारित्र रूप धर्म का अभिलाषी बनाहुवा; पुण्य का

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुबदेवसहायजी बालाप्रसादजी *

अर्थात् अ० रहाहुवा करण भा० भावना भं० भावता ए० इन अं० अंतर में का० काल क० करे
ने० नरक में उ० उत्पन्न होवे से० वह ने० इस लिये गो० गौतम जा० यावत् अ० कितनेक नो० नहीं
उ० उत्पन्न होवे । १९ ॥ जी० जीव भं० भगवत् ग० गर्भ में ग० रहाहुवा दे० देवलोक में उ० उत्पन्न
होवे गो० गौतम अ० कितनेक उ० उत्पन्न होवे अ० कितनेक नो० नहीं उ० उत्पन्न होवे से० वह के०

कंखिए, अथ पिवासिए, रज्जपिवासिए भोगपिवासिए काम पिवासिए, तच्चित्ते,
तम्मणे, तल्लेस्से, तदञ्जवसिए तच्चिव्वञ्जवसाणे तदट्ठोवउत्ते, तदप्पिय करणे
तव्भावणा भाविए । एयंसिणं अंतरंसि कालं करेजा नेरइएसु उववज्जइ । से
तेणट्ठुणं गोयमा ! जाव अत्थेगइए नो उववज्जेजा ॥ १९ ॥ जीविणं भंते !
गव्भगए समाणे देवलोगेसु उववज्जेजा ? गोयमा ! अत्थेगइए उव-

वनाहुवा, तीन अशुद्ध लक्ष्या से ध्यानयुक्त, काम भोगों की भावना भावता हुवा व करण करावण व अनु-
मोदन रूप अधवसाय की प्रवृत्ता करता हुवा वह जीव यदि उसी समय काल कर जावे अर्थात् आयुष्य
पूर्ण कर के चरे तो वह नरक गतिमें उत्पन्न होवे इसलिये अहो गौतम! कितनेक जीव नरक में उत्पन्न होते हैं
और कितनेक नहीं होते हैं ॥ १९ ॥ अहो भगवत् ! गर्भ में रहा हुवा जीव यदि आयुष्य पूर्ण कर जावे
तो क्या देवलोक में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! कितनेक जीव देवलोक में उत्पन्न होते हैं और

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १८४ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १८४ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १८४ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १८४ ॥

फल जैसे अ० होवें चि० खडारहे नि० बैठे तु० सोवें मा० माता सु० सोती होवें सु० सोवें जा० जगती होवें जा० जगे सु० सुखी होती सु० सुखी होवे दु० दुःखी होती दु० दुःखी होवे हं० हां गो० गौतम जी० जीव ग० गर्भ में ग० गया हुआ जा० यावत् दु० दुःखी होते दु० दुःखी भ० होवे ॥ २१ ॥ प० प्रसन्न का० अवसर में सी० मस्तक से पा० पाँचसे आ० आवे स० सीधा आ० आवे ति० तिच्छी आ० अंबखुजएवा, अच्छेज्जवा, चिट्ठेज्जवा, निसीएज्जवा, तुयट्टेज्जवा; माऊए सुयमाणीए सुयइ, जागरमाणीए जागरइ, सुहियाए सुहिए भवइ, दुहियाए दुहिए भवइ ? हंता गायमा ! जीवेणं गव्वमगए समाणे जाव दुहियाए दुहिए भवइ ॥ २१ ॥ अहेणं पसवण काल समयंसि सीसिणवा, पाएहिंवा आगच्छइ, सममागच्छइ, तिरिय माग- जीव किस प्रकार गर्भ में रहता है और गर्भ से निकले पीछे करणी के फल किस तरह प्राप्त करता है वह बतलाते हैं. अहो भगवन् ! गर्भ में रहा हुआ जीव क्या उत्तान - छत्राकार रहता है, एक पसली की तरह पडा रहता है, आत्र फल की तरह उत्कट आमनेसे रहता है, ऊर्ध्व स्थान चैवा रहता है, खडा होता है, बैठाहोता है, शयन करता है, जब उस की माना शयन करती है तब सोता है, माता जगती है तब जागृत होता है, माता सुखी तो वह सुखी रहता है, और माता दुःखी रहनेपर क्या दुःखी रहता है? हां गौतम ! गर्भ में रहनेवाले जीव को उक्त सब क्रियाओं होती हैं. ॥ २१ ॥ अब जब प्रसन्न काल

ॐ मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी वालाप्रसादजी ॐ

का कांशी पु० पुन्य का कांशी स० स्वर्ग का कांशी मो० मोक्ष का कांशी ध० धर्म पि० पिपासु पु० पुन्य
पिपासु स० स्वर्ग पिपासु मो० मोक्ष पिपासु त० उम में चित्त वाला म० मनवाला ले० लेख्या वाला अ०
अध्यवसाय वाला अ० अर्थयुक्त अ० अर्पित करण वाला उ० उस भा० भावना से भा० भावता ए० इस
अं० अंतर में का० काल क० करे दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे से० वह ते० इस लिये गो० गौतम
॥ १० ॥ जी० जीव भं० भगवान् ग० गर्भ में ग० गया हुआ उ० उलटा होवे पा० पसली जैसे अं० आन्त्र

पुण्यकंखिए, सगकंखिए, मोक्खकंखिए; धम्मपिवासिए, पुण्यपिवासिए, सग्गपिना-
सिए, मोक्खपिवासिए, तच्चित्ते, तस्मणे, तल्लेसे तदज्जवसिए, तदट्ठोवउत्ते; तदप्पि-
यकरणे तव्भावणाभाविए, एयंसिणं अंतरंमि कालं करेज्जा देवलोएसु उववज्जइ-

सेतेणंठुणं गोयसा ॥ २० ॥ जीवणं भंते गव्भगए समणे उच्चाणएवा, पासल्लएवा
कामी, स्वर्ग का कामी व मोक्ष का कामी; धर्म, पुण्य, स्वर्ग व मोक्षका कांशी; धर्म, पुण्य; स्वर्ग व मोक्ष का
पिपासु, धर्मादिमें तथा प्रकारका चित्तवाला, तन्मय, तीनुभुभ लेख्यावन्त, वैसेही अध्यवसाय युक्त, उस अर्थ
प्रयोजन युक्त उभी अर्थ में आत्मा को अर्पण करनेवाला व वैसा भाव को चिन्तवनेवाला यदि उसी
समय काल कर जावे तो देवलोक में देवतापने उत्पन्न होता है. इस कारन से अहो गौतम! कितनेक
जीव देवलोक में उत्पन्न होतें हैं और कितनेक जीव देवलोक में नहीं उत्पन्न होते हैं ॥ २० ॥ अब

फल जैसे अ० हाँवें चि० खडारहे नि० बँठे तु० सोत्रें मा० माता सु० सेती होवें सु० सोवे जा० जगती होवें जा० जगे सु० सुखी होती सु० सुखी होवे दु० दुःखी होती दु० दुःखी होवे हं० हाँ गो० गौतम जी० जीव ग० गर्भ में ग० गया हुवा जा० यावत् दु० दुःखी होते दु० दुःखी भ० होवे ॥ २१ ॥ प० प्रसन्न का० अवसर में सी० मस्तक से पा० पाँवसे आ० आँवे स० मीघा आ० आँवे ति० तिच्छी आ०

अंबवज्जुएवा, अच्छेज्जवा, चिट्ठेज्जवा, निसीएज्जवा, तुयट्टेज्जवा; माऊए सुयमाणीए सुयइ, जागरमाणीए जागरइ, सुहियाए सुहिए भवइ, दुहियाए दुहिए भवइ? हंता गौयसा ! जीविणं गब्भगए समणे जात्र दुहियाए दुहिए भवइ ॥ २१ ॥ अहेणं पसवण काल समयंसि सीसिणवा, पाएहिंवा आगच्छइ, सममागच्छइ, तिरिय माग-

जीव किस प्रकार गर्भ में रहता है और गर्भ से नीकले पीछे करणी के फल किस तरह प्राप्त करता है वह बतलाते हैं. अहो भगवन् ! गर्भ में रहा हुआ जीव क्या उत्तान - छवाकार रहता है, एक पसली की तरह पडा रहता है, आम्र फल की तरह उत्कट आगनसे रहता है, ऊर्ध्व स्थान बैठा रहता है, खडा होता है, बैठादेता है, शयन करता है, जब उस की माना शयन करती है तब सोता है, माता जगती है तब जागृत होता है, माता सुखी तो वह सुखी रहता है, और माता दुःखी रहनेपर क्या दुःखी रहता है? हाँ गौतम ! गर्भ में रहनेवाले जीव को उक्त सब क्रियाओं होती हैं. ॥ २१ ॥ अब जब मसबन काल

* प्रकाशक राजावहादुर लाला मुखर्जीदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

शब्दार्थ

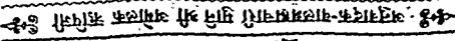
सूत्र

वार्थ

आवे वि० विनाश आ० पात्रे व० वर्ण व० वध्य क० कर्म व० बाधे हुवे पु० स्तर्शे हुवे पि० निकाचित
वापे क० कीये प० स्थापे अ० तीव्र स्थापे अ० सन्मुख आये उ० उदय आये णो० नहीं उ० उपशांत
हुवे दु० कुरूप दु० खराबवर्ण वाला दु० दुर्ग्री दु० खराब र वाला दु० खराब स्पर्श वाला अ० अनिष्ट
अ० अकान्त अ० अप्रिय अ० अशुभ अ० अमनोज्ञ अ० अयनाम ही० हीनस्वर वाला दी० दीनस्वर

च्छइ, विणिहाय मावजइ, वणवज्जाणिय से कम्माइं बढाइं, पुट्टाइं, णिहत्ताइं, कडाइं,
पट्टवियाइं, अभिनिविट्टाइं, अमिसमणगयाइं उदिण्णाइं, णोउवसंताइं भवंति, तओ
भवइ, दुख्खे, दुवण्णे, दुग्गंधे, दुस्से, दुक्कासे, आणिट्ठे, अकंते, आधिपु, असुभे,
अमण्णो, अमणामे, हीणस्सरे, दीणस्सरे आणिट्ठस्सरे, अकंतरस्सरे आप्पियस्सरे, असुभस्सरे,

पास होता है तब कितनेके जीव मस्तक से नीकलते हैं, और कितनेके पांव से नीकलते हैं, अथवा माता व
जीव दोनों की घात न होवे वैसे नीकलते हैं, और अशुभ कर्मोदय से कदाचित् तिर्छी होजाना है तो नीकलने
व नीकालने के अभाव से मृत्यु को प्राप्त होजाना है, अब गर्भ से नीकलें वाद जो होता है सो कहते हैं,
जिनोंने पूर्व भव में पपाचरण व अयोग्य कर्तव्य से निकाचित कर्मों का बंध किया है वैसेही जिन को मनुष्य
तिर्पचादि गति, पंचेंद्रियादि जाति, त्रसादि नामकर्म से व्यवस्थापित किये, तीव्र अनुभाव से स्थापित किये,
उदय सन्मुख हुवे, स्वतः की उदीरना से उदय में आये और उपशान्त न हुवे, उन को अशुभ वर्ण, गंध,



अ० अनिष्टस्वर, अ० अनादेय वचन वाला प० उत्पन्न भ० होवे व० वर्ण व० वध्य क० कर्म नो० नहीं
 ष० बंधुके प० प्रशस्त ने० जानना. जा० यावत् आ० आदेय वचन वाला प० उत्पन्न भ० होवे से० वह
 ए० ऐसे भं० भगवन् ॥ १ ॥ ७ ॥

x

x

अमंगुणस्वरे, अमणामस्सरे, अणाएज्वयणं, पच्चायाएवि भवइ, वण्णवज्झाणिय, से
 कम्माइं नोबढ्ढाईं पसत्थं णेयव्वं जाव आदेज्जवयणं पच्चायाएवि भवइ ॥ सेव्वं भंते भंतेत्ति
 पढमे सए सत्तमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ १ ॥ ७ ॥

*

*

रस, स्पर्श होवे. उन को सब संयोग अनिष्ट, अकान्त, अमिय, अशुभ, अमनोज्ञ, अमणाम होवे. वैसे ही
 वह जीव हीनस्वर, दीनस्वर, अनिष्टस्वर, अप्रियस्वर, अशुभस्वर, अमनोज्ञस्वर, अमनामस्वर व अनादेय
 वचनवाला होवे अर्थात् उन का वचन किसी को माननीय होवे नहीं. यह अशुभ कर्म का फलकहा और
 जिनोंने अशुभ कर्म नहीं किये हैं और धर्माचरण से शुभ कर्म की उपार्जना की है उन को शुभ फलका
 उदय होते वेशुभ वर्ण, गंध, रस व स्पर्शवन्त होवे. वैसे ही प्रियकारि, शुभ मनोज्ञ व सब मान्य करे ऐसे
 अच्छे संयोग मिले. सब में माननीय पूजनीय होवे और सब प्रकार के सुख भोगवे. यह सब पुण्य फल
 जानना. अहो भगवन् ! आपने जो प्रतिपादन किया है वह सत्य है. यह पहिला शतक का सातवा
 उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ १ ॥ ७ ॥

x

x

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

आवे वि० विनाश आ० पावे व० वर्ण व० वध्य क० कर्म व० वधि हुवे पु० स्तशे हुवे णि० निकाचित
वांधे क० कीये प० स्थाये अ० तीत्र स्थाये अ० सन्मुख आये उ० उदय आये णो० नहीं व० उपशांत
हुवे दु० कुरूप दु० खरावर्ण वाला दु० दुर्गंधी दु० खरावर वाला दु० खराव स्पर्श वाला अ० अनिष्ट
अ० अकान्त अ० अप्रिय अ० अशुभ अ० अमनोज्ञ अ० अमनाम ही० हीनस्वर वाला दी० दीनस्वर

च्छइ, विणिहाय मावजइ, वणवज्झाणिय से कम्माइ बढाइ, पुट्टाइ, णिहित्ताइ, कडाइ,

पट्टवियाइ, अभिनिविट्टाइ, अभिसमणगयाइ उदिण्णाइ, णोउवसंताइ भवंति, तओ

भवइ, दुल्ले, दुवण्णे, दुग्गंधे, दुरसे, दुफासे, अणिट्ठे, अकंते, अप्पिए, असुभे,

अमणुणे, अमणामे, हीणस्सरे, दीणस्सरे अणिट्ठस्सरे, अकंतरस्सरे अप्पियस्सरे, असुभस्सरे,

पास होता है तत्र कितनेक जीव मस्तक से नीकलते हैं, और कितनेक पांव से नीकलते हैं, अथवा माता व
जीव दोनों की घात न होवै वैसे नीकलते हैं, और अशुभ कर्मोदय से कदाचित् तिच्छी होजाना है तो नीकलने
व नीकालने के अभाव से मृत्यु को प्राप्त होजाता है. अब गर्भ से नीकलें बाद जो होता है सो कहते हैं.

जिनोने पूर्व भव में पापाचरण व अयोग्य कर्तव्य से निकाचित कर्मों का घंध किया है वैसेही जिन को मनुष्य
तिर्यचादि गति, पंचेंद्रियादि जाति, त्रसादि नामकर्म से व्यवस्थापित किये, तीत्र अनुभाव से स्थापित किये,
उदय सन्मुख हुवे, स्वतः की इंदीरना से उदय में आये और उपशान्त न हुवे, उन को अशुभ वर्ण, गंध,

ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे नि० तिर्यच म० मनुष्य दे० देव आ० आयुष्य प० बांधे ने० नारकी का आ० आयुष्य कि० करक ने० रक में उ० उत्पन्न होवे ति० तिर्यच म० मनुष्य दे० देव आ० आयुष्य कि० करके दे० देव लोक में उत्पन्न होवे ॥ १ ॥ ए० एकान्त पं० पंडित भं० भगवत् म० मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देव का आ० आयुष्य कि० कारके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित म० मनुष्य आ० आयुष्य लोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत बालिणं मणुस्से नेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरिमणु- देवाउयंपि पकरेइ, । नेरइयाउयंपि किच्चा नेरइएसु उववज्जइ; तिरिमणुदेवाउयं कि- चां देवलोएसु उववज्जइ ॥ १ ॥ एगंत पंडिणं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेइ, जात्र देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत पंडिणं मणुस्से आउ-

के आयुष्य का बंध कर के देवलोक में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त बाल मनुष्य नारकी, तिर्यच मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है वैसे ही नारकी, तिर्यच मनुष्य व देवता के आयुष्य बंध करे नारकी, तिर्यच, मनुष्य व देवता में उत्पन्न होता है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! एकान्त पंडित मनुष्य क्या नरक, तिर्यच, मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है ? और नरक का आयुष्य बांध कर नरक में उत्पन्न होता है यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त

महाभक्त-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी

ए० एकान्त वा० अज्ञानी भ० भगवन् म० मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य ५० बांधे
ति० तिर्यच का आ० आयुष्य ५० बांधे म० मनुष्य का आ० आयुष्य ५० देव का आ० आयुष्य ५० बांधे
ने० नारकी का आ० आयुष्य कि० करके ने० नरक में उ० उपजे ति० तिर्यच का आ० आयुष्य कि०
करके ति० तिर्यच में उ० उपजे म० मनुष्य का आ० आयुष्य कि० करके म० मनुष्य में उ० उपजे दे०
देव का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उपजे गो० गौतम ए० एकान्त वा० अज्ञानी म० मनुष्य

एगंत बालिणं भंते ! मणूसे किं नेरइयाउयं पकरेइ, तिरिआउयं पकरेइ, मणुआउयं
पकरेइ, देवाउयं पकरेइ, नेरइयाउयं किच्चा नेरइएसु उववज्जइ, तिरियाउयं कि-
च्चा तिरिएसु उववज्जइ, मणुयाउयं किच्चा मणुएसु उववज्जइ, देवाउयं किच्चा देव-

सातवे उद्देश में गर्भ की वक्तव्यता कही. गर्भ आयुष्य से होता है इसलिये आगे आयुष्य संबंधि प्रश्न
करते हैं. अहो भगवन् ! एकान्त बाल (पिथ्याली) मनुष्य क्या नरक के आयुष्य का बंध करता है.
मनुष्य के आयुष्य का बंध करता है, तिर्यच के आयुष्य का बंध करता है, या देव के आयुष्य का बंध
करता है ! और नरक के आयुष्य का बंध कर के क्या नरक में उत्पन्न होता है, तिर्यच के आयुष्य का
बंध कर के तिर्यच में उत्पन्न होना है, मनुष्य के आयुष्य का बंध कर के मनुष्य में उत्पन्न होता है या देव

शब्दार्थ

सूत्र

र्थ

ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे नि० तिर्यच म० मनुष्य दे० देव आ० आयुष्य प० बांधे
 नारकी का आ० आयुष्य कि० करक ने० रक में उ० उत्पन्न होवे ति० तिर्यच म० मनुष्य दे० देव
 आ० आयुष्य कि० करके दे० दे० शोक में उत्पन्न होवे ॥ १ ॥ ए० एकान्त पं० पंडित भं० भगवन् म०
 मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देव का आ० आयुष्य कि०
 करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित म० मनुष्य आ० आयुष्य

लोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत बालिणं मणुस्से नेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरिमणु-
 देवाउयंपि पकरेइ, । नेरइयाउयंपि किच्चा नेरइएसु उववज्जइ, तिरिमणुदेवाउयं कि-
 च्चा देवलोएसु उववज्जइ ॥ १ ॥ एगंत पंडिणं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेइ,
 जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत पंडिणं मणुस्से आउ-

के आयुष्य का बंध कर के देवलोक में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त बाल मनुष्य नारकी, तिर्यच
 मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है वैसे ही नारकी, तिर्यच मनुष्य व देवता के आयुष्य बंध
 करे नारकी, तिर्यच, मनुष्य व देवता में उत्पन्न होता है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! एकान्त पंडित मनुष्य
 क्या नरक, तिर्यच, मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है ? और नरक का आयुष्य बांध कर नरक में
 उत्पन्न होता है यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त

मि० कदाचित् प० बांधे मि० कदाचित् नो० नहीं प० बांधे ज० यदि प० बांधे नो० नहीं ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे नो० नहीं नि० तिर्यच का आ० आयुष्य प० बांधे नो० नहीं म० मनुष्य का आ० आयुष्य प० बांधे दे० देवता का आ० आयुष्य प० बांधे नो० नारकी का आ० आयुष्य कि० करके ने० नरक में उ० उत्पन्न होवे जो० नहीं ति० तिर्यच नो० नहीं म० मनुष्य दे० देव का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवता में उ० उत्पन्न होवे से० वह के० कैसे जा० यावत् दे० देवका

यं सिय पकरेइ सिय जो पकरेइ । जइ पकरेइ जो नरेइया उयं पकरेइ । तिरिया उयं पकरेइ । जो

मणुया उयं पकरेइ देवा उयं पकरेइ । जो नरेइया उयं किच्चा नरेइए सु उववज्जइ, जोतिरि नोमणु देवा उयं किच्चा देवे सु उववज्जइ । सेकेणट्टेणं जाव देवा उयं किच्चा देवे सु उववज्जइ ?

गोयमा ! एगंत पंडियस्सणं मणुस्सस्स केवलमेव दांगईओ पण्णायंति तंजहा—अंत-

पंडित मनुष्य किसी समय आयुष्य का बंध करता है और किसी समय आयुष्य का बंध नहीं करता है। जब आयुष्य का बंध करता है, तब नरक तिर्यच व मनुष्य का आयुष्य नहीं बांधता है और वहां नहीं उत्पन्न होता है परंतु मात्र एक देवगति का आयुष्य बांधता है और वहां उत्पन्न होता है, अहो भगवन् ! किस कारण से एकान्त पंडित नरक तिर्यच व मनुष्य का आयुष्य नहीं बांधता है यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त पंडित मनुष्य को केवल दो गति कही ? सब कर्मों का अंत करना जो अंतक्रिया और सपस्त कर्म क्षय नहीं होने से व पुण्य की वृद्धि होने से

आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित मं० मनुष्य को के० मात्र दो० दोगति प० कही है अं० अंतक्रिया क० कल्पोत्पन्न से० वह ते० इस लिये जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे ॥ २ ॥ वा०वाल पंडित मं० भगवन् मं० मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवता में उ० उत्पन्न होवे गो० गौतम गो० नहीं ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० उत्पन्न होवे किरिया चैव, कल्पोत्पत्तिया चैत्र; से तेणट्टेणं गोयमा ! जाव देवालयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ॥ २ ॥ बाल पंडिणं भंते ! मणूसे किं नेरइयालयं पकरेइ, जाव देवालयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! णो णेग्इयालयं पकरेइ जाव देवालयं किच्चा देवेसु उववज्जइ । सेकेणट्टेणं जाव देवालयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! बाल-

वैमानिक देवलोकमें उत्पन्न होवे ऐसी दंगति कही. इसलिये अहो गौतम ! एकान्त पंडित मनुष्य देवगति के आयुष्य का धंधकर देवगति में उत्पन्न होता है. ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! बाल पंडित (श्रावक) मनुष्य क्या नारकी का आयुष्य यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होवे ? अहो गौतम ! बाल पंडित मनुष्य नारकी का आयुष्य बांधे नहीं, तिर्यंच का आयुष्य बांधे नहीं, मनुष्य का आयुष्य

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुलदेवसहायजी बालाप्रसादजी *

मे० वह के० कैसे जा० यात्र दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवता में उ० उत्पन्न होने
 गो० गौतम बा० श्रावक त० तथारूप स० श्रमण मा० माःण की अं० पाम ए० एक आ० आर्य धः
 धर्म का सु० सुवचन सो० सुनकर नि० अवधारकर दे० देशसे उत्रिसे दे० देशसे नो० नहीं उत्रिसे
 दे० देश प० प्रत्याख्यान करे दे० देश नो० नहीं प० प्रत्याख्यान करे ते० इत लिये दे० देश विरति से
 दे० देश प्रत्याख्यान से नो० नहीं ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यात्र दे० देवता का
 भा० आयुष्य कि० करके दे० देवता में उ० उत्पन्न होवे ॥ ३ ॥ पु० पुरूप भ० भगवन् क० कच्छ द०

पंडिएणं मणुस्से तहारुवस्स समणस्सवा, माहणरसवा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुव-
 यणं सोच्चा निसम्म देसं उवरमइ, देसं णो उवरमइ; देसं पच्चक्खाइ, देसं णो पच्चक्खाइ;
 से तेणं देसोवरमइ, देसपच्चक्खाणेणं णो णेरइयाउयं पकरइ जाव देवाउयं किच्चा
 देवेषु उववजइ । से तेणट्टेणं जाव देवेषु उववजइ ॥ ३ ॥ पुरिसेणं भंते ! कच्छंसि-

बधि नहीं परंतु देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होंगे. अहो भगवन् ! किम कारण से बाल
 पंडित मनुष्य देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होंगे ? अहो गौतम ! बाल पंडित मनुष्य तथा-
 हा अन्न माहण की पासे एकान्त आर्यधर्म श्रवणकर अवधारकर देश से निवर्ते, देश से निवर्ते नहीं, देश से
 प्रत्याख्यान करे, देश से प्रत्याख्यान करे नहीं; इस तरह देश से निवर्तने से ब प्रत्याख्यान करने से

शब्दार्थ

सूत्र

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥

द्रह उ० पानी द० द्रव्य व० बलय ण० गुप्तस्थान ग० गहन त्रि० त्रिपम प० पर्वत त्रि० त्रिपम
 स्थान व० वन व० वनविषम स्थान मि० मृगवृत्ति बाला मि० मृगभक्ष्य बाला मि० मृगकेवच का अध्यव-
 सायी मि० मृग व० वधकरने को गं० गथा हुआ मि० मृग त्रि० ऐसा का० करके अ० अन्य कोई मि०
 मृग व० मारने को कू० कूटपाश उ० बनाये त० तव भं० भगवन् से० लभ पुरूप को क० कितनी कि०
 क्रिया गो० गौतम मि० कदाचित् ति० तीनक्रिया च० चारक्रिया पं० पांचक्रिया से० वह के० कैसे भं०
 वा दहंसिवा, उदगंसिवा, दधियंसिवा, बलयंसिवा, णमंसिवा, गहनंसिवा, गहण वि-
 दुगंसिवा, पव्वयंसिवा, पव्वय विदुगंसिवा, वणंसिवा, वणविदुगंसिवा, मियवित्ताए
 मियसंकप्पे, मियपणिहाणे, मियवहाए गंताए एमिएत्ति काओ, अण्णयरस्सामियवहाए,
 कूडपासं उड्डाइ । तओणं भंते ! से पुरिसे कइक्किरिए ? गोयमा ! सिय त्तिकिरिए,
 नारकी, तियंच व मनुप्य का आयुष्य बंधे नहीं परंतु देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होये
 ॥ ३ ॥ आयुष्य बंध के कारन मृत क्रियाओं हैं इसलिये क्रिया के बंध में प्रश्न पूछते हैं. अहो भगवन् ?
 अच्छे, द्रह, उदके, द्रव्य, बलय, तूर्म, गहन, गहनविदुर्गे, पर्वत, पर्वत विदुर्गे, वन; व वनविदुर्गे में
 मृग की वृत्तिबाला, मृग के वच का अध्यवसायबाला, मृग को मारने के लिये एकाग्र चित्त करनेवाला

१. नदी का पानी व दृशादि से घेराया हुआ भूमिभाग २ तडागादि में कुंड ३ अल्पजल ४ तृणादिस-
 मुदाय ५ बर्तुलाकार नदी के जरु की कुटिलगति बाला प्रदेश ६ गुफाआदियुक्त स्थान

द्वार्य (५५५५)

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

भगवन् ए० ऐसा दु० कहा जाता है सि० कदाचित् ति० तीनक्रिया सि० कदाचित् च० चारक्रिया पं० पांचक्रिया गो० गौतम जे० जो भ० भव्य उ० बनाने से णो० नहीं वं० बंधन करने से णो० नहीं मा० मारने से ता० तव से० उस पु० पुरुष को का० कायिकी अ० अधिकरणी की पा० प्रद्वेषिकी ति० तीन कि० क्रिया पं० स्पर्शी जे० जो भ० भव्य उ० बनाने से वं० बंधन करने से नो० नहीं म० सिय चउकिए, सियपंचकिए । से केणट्टेणं भंते ? एवं बुच्चइ सिय तिक्किए सिय चउकिए, सिय पंच किए ? गोयमा ! जे भविए उडवणयाए णां बंधणयाए, णो मारणयाए, तावं चणं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए, पाउसियाए, तिहि कि० रियाहिं पुट्टे । जे भविए उडवणयाएवि बंधणयाएवि, णोमारणयाए तावंचणं

कोई पुरुष मृग को मारने के लिये कूटपाश करे; तब अहो भगवन् ! उस मृगपाश करनेवाले पुरुष को कितनी क्रिया लगती है ? अहो गौतम ! उस मृगपाश बनानेवाले को तीन, चार व पांच क्रिया लगती हैं. अहो भगवन् ! किस कारण से तीन चार व पांच क्रिया उस पुरुष को लगती हैं ? अहो गौतम ! जिस को जितने कालतक कूटपाश करने का भाव है परंतु बंधन करने का व मारने का भाव नहीं है उस पुरुष को उतने कालतक तीन क्रियाओं लगती हैं. १. गमनादि रूप से कायिकी क्रिया, कूटपाशादिक को उत्पन्न कराना सो अधिकरणकी और मृग में दृष्ट भाव रखना सो प्रद्वेषिकी जिस. पुरुष को

मारने से ता० तव मे० उस पु० पुरुष को का० कायिकी अ० अधिकरण की प० प्रद्वेषिकी प०
 परितापनिकी च० चार कि० क्रिया पु० स्पर्शी जे० जो भ० भव्य उ० वनाने से वं० वंधन करने से
 मा० मारने से ता० वहांलगा से० उस पु० पुरुष को का० कायिकी जा० यावत् पा० प्राणातिपातिकी पं०
 पांच कि० क्रिया पु० स्पर्शी से० वह ते० इसलिये जा० यावत् पं० पांच कि० क्रिया ॥ ४ ॥
 पु० पुरुष क० कच्छ जा० यावत् व० वन वि० विषम त० तृण उ० ऊंचा करके अ० अधिक्राय

से पुरिसे काइयाए अहिगरणयाए, पाओसियाए, परियावणियाए, चउहिं किरियाहि
 पुटे । जे भविए उडवणयाएवि बंधणयाएवि, मारणयाएवि तांवंचणसे पुरिसे काइ-
 याए जाव पाणाइवाय किरियाए पंचहिं किरियाहिं पुटे । से तेणट्टेणं जाव पंचकिरिए

॥ ४ ॥ पुरिसेणं भंते ! कच्छंसिवा, जाव वणविदुगंसिवा, तणाइं ऊसंविप २ अ-

जितने काल पर्यंत कूटपाश बनाने का व मृग बांधने का भाव है परंतु मारने का भाव नहीं है उस को उतने काल तक चार
 क्रिया लगती हैं। उक्त तीनों में उक्त मृग को परिताप दुःख दिया सो परितापनिकी क्रिया बढी। जिस को
 जितने काल तक कूटपाश बनाने का, बांधने का व मारने का भाव है उस को उतने काल तक पांच क्रिया
 ओं लगती हैं। कायिकी, अधिकरणकी, प्रद्वेषिकी, परितापनिकी व प्राणातिपातिकी। इसी कारण से
 अबो गौतम ! उक्त पुरुष को कश्चित् तीन, कश्चित् चार व कश्चित् पांच क्रियाओं लगती हैं ॥ ४ ॥

व्यसन्नत्वान् (सुवन्त) व्यसन्नत्वान् पवन्त

व्यसन्नत्वान्

सूत्र

भावार्थ

भगवन् ए० ऐसा बु० कहा जाता है सि० कदाचित् ति० तिनिक्रिया सि० कदाचित् च० चारक्रिया पं० पांचक्रिया गो० गौतम जे० जो भ० भव्य उ० बनाने से णो० नहीं वं० बंधन करने से णो० नहीं मा० मारने से ता० तव से० उस पु० पुरुष को का० कायिकी अ० अधिकरणी की पा० प्रद्वेषिकी ति० तीन कि० क्रिया प० स्पर्शी जे० जो भ० भव्य उ० बनाने से वं० बंधन करने से नो० नहीं म० सिय चउकिरिए, सियपंचकिरिए । से केणट्टुणं भंते ? एवं बुच्चइ सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए, सिय पंच किरिए ? गोयमा ! जे भविए उडुवणयाए णो बंधणयाए, णो मारणयाए, तावं चणं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए, पाउसियाए, तिहि कि-रियाहि पुट्टे । जे भविए उडुवणयाएवि बंधणयाएवि, णोमारणयाए तावंचणं

कोई पुरुष मृग को मारने के लिये कूटपाश करे; तब अहो भगवन् ! उस मृगपाश करनेवाले पुरुष को कितनी क्रिया लगती है ? अहां गौतम ! उस मृगपाश बनानेवाले को तीन, चार व पांच क्रिया लगती है. अहो भगवन् ! किस कारण से तीन चार व पांच क्रिया उस पुरुष को लगती हैं ? अहो गौतम ! जिस को जितने कालतक कूटपाश करने का भाव है परंतु बंधन करने का व मारने का भाव नहीं है उस पुरुष को उतने कालतक तीन क्रियाओं लगती हैं. ? गमनादि रूप सो कायिकी क्रिया, कूटपाशादिक को उत्पन्न कराना सो अधिकरणही और मृग में दृष्ट भाव रखना सो प्रद्वेषिकी जिस पुरुष को

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

नि० डाले ता० तब भ० भगवन् से० उस पु० पुरुष को क० कितनी कि० क्रिया सि० कदाचित् ति०
तीनक्रिया सि० कदाचित् च० चारक्रिया सि० कदाचित् प० पांचक्रिया से० वह के० कैसे गो० गौतम
जे० जो भ० योग्य उ० ऊंचा करने से ति० तीन उ० ऊंचा करने से नि० डालने से नो० नहीं द०
जलाने से च० चार जे० जो० भ० योग्य उ० ऊंचा करने से नि० फँकने से द० जलाने से से० उस

गणिकायांसि निसिरइ तावंचणं भन्ते ! सेपुरिसे कइकिरिए ? गोयमा !

सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए । से केणट्टेणं ? गोयमा ! जे भवि-

ए उस्सवणयाए तिहिं, उस्सवणयाएवि निसिरणयाएवि नोदहणयाए चउहिं, जेभविए

अहो भगवन् ! कोई पुरुष कच्छ में यावत् वनदुर्ग में तृणका ढग करके उस में अग्निकाय का प्रसेप करे
तो उन को कितनी क्रिया लगती है ? अहो गौतम ! उन को तीन, चार व पांच क्रियाओं लगती हैं।
अहो भगवन् ! किस कारण से उन को तीन, चार, व पांच क्रियाओं लगती हैं ? अहो गौतम ! जितना
काल पर्यंत तृणका समुदाय एकत्रित करता है उतना कालतक उन को कायिकी. अधिकरणकी व मदे-
पिकी ऐसी तीन क्रियाओं लगती हैं और तृण एकत्रित कर अग्नि में डाले परंतु जले नहीं बहातक का-
पिकी, अधिकरण की, मदेपिकी, व परितापनिकी ऐसी चार क्रियाओं लगती हैं, और जो तृण एकत्रित
करके अग्नि में डालता है और उस में जलता है उसको कायिकी आदि पांचों क्रियाओं लगती हैं।

कान्तक उ०वाण को आ०खींचकर चि०खडारहे अ०अन्य कोई पु०पुरुष म०पीछेसे आ०आकर स० अपने पा० हस्त से अ० आसिसे सी० शीर्ष छि० छेदे से० वह उ० वाण ता० उस पु०पूर्वार्कषण मे तं०उस मि० मृगको वि० विधे से० वह भं० भगवन् पु० पुरुष किं मि० मृग वैरसे पु० स्पर्शा पु० पुरुष वे० वैरसे पु० स्पर्शा गो० गौतम जे० जो मि० मृगको मा० हने से० वह मि० मृगवैर से पु० स्पर्शा जे० जो पु० पुरुष को मा० हने से० वह पु० पुरुष वैरसे पु० स्पर्शा से० वह के० कैते भं० भगवन् ए० ऐसा बु० कहा

आय कर्णाययं उंसुं आयामेत्ता चिट्टिजा. अन्नयरे पुरिसे मगओ आगम्म सय-
पाणिणा असिणा सीसं छिंदेज्जा, सेय उसू ताएचव पव्वायामणयाए तंमियं विंधेज्जा ।

सेणं भंते ! पुरिसे किं मियवैरेण य पुट्ठे पुरिसवैरेणं पुट्ठे ? गोयमा ! जेमियं मारेइ,
से मियवैरेणं पुट्ठे, जे पुरिसं मारेइ से पुरिसवैरेणं पुट्ठे । सेकेणट्ठेणं भंते ! एवं बुच्चइ

अहो भगवन् ! कच्छ यावत् वट्ठुर्गं मे मृग का वध के लिये कोई पुरुष धनुष्य में वाण रखकर कान पर्यंत प्रत्यंचा खींच कर खडारहे; उतने में पीछे से अन्य कोई पुरुष आकर अपने हस्त में खडालेकर उस मृग वधक का मस्तक छेदे. उस समय उस मृग को उदंशकर खींचा हुआ उस पुरुष के हस्त में से छुटकर उमी मृग को भेदे. अब अहो भगवन् ! उस मस्तक छेदनेवाला पुरुष को क्या मृग का वैर हुआ अथवा पुरुष का वैर हुआ ? अहो गौतम ! जिराने पुरुष को मारा उस को पुरुष का वैर हुआ और जिसने

अंदर में छ० छमास की म० मरे का० कायिकी जा० यावत् पं० पांचक्रियां पु० स्वर्शे वा० चाहिर छ०
 छमास की म० मरे च० चागक्रिया पु० स्वर्शे ॥ ७ ॥ पुं० पुरुष भं० भावंत् पुं० पुरुष को स० भाला से
 मं० नाथि मः सतः के पा० हस्त मे अ० असिमे सी० शीर्ष छिं० छेदे त० तत्र से० उस पुं० पुरुष
 को क० कितनी कि० क्रिया गोः गौतम जा० जब से० वह पुं० पुरुष तं० उस पुं० पुरुष को सः

काइयाए जात्र पंचहिं किरियाहिं पुट्टे : वाहिं छण्हं मासाणं मरइ, काइयाए जात्र पा-
 रियावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्टे ॥ ७ ॥ पुरिसेणं भंते ! पुरिसं सर्वाए समभि-
 संघेज्जा सयवाणिणावा से असिणा सीसं छिंदेज्जा । तओणं भंते ! से पुरिसे कइकि-

मारनेवाले को पुरुष का वैर लगता है. वह मृग यदि छ मांस की अंदर मरजावे तो घातक पुरुष को पांच
 क्रियाओं लगती हैं क्यों की छ मासतक मृग को प्रहार हेतुक मरण होता है. छ मास पीछे यदि वह मृग
 मरजावे तो प्राणतिपातिकी क्रिया छेडकर अन्य चार क्रियाओं लगती हैं * ॥ ७ ॥ अहो भगवन् !
 कोई पुरुष शक्ति भात्रा से, अथवा अपने हस्त में रहा हुना लज्ज से कितनी पुरुष का शिरच्छेदन करे तब

यहांपर व्यवहारको अपेक्षाये प्राणानिपातिकी क्रिया मात्र व्यपदेश इतनिकी कर्तव्य है. अन्यथा जब
 प्रहारेहेतुक मरण होवे उत समय उस वधकको कायिकी यात्र प्रणतिपातिकी पांच क्रिया लगती हैं:

जाता है जा० यावत् से० वह पु० पुरुषैर से पु० स्पर्शा से० वह गो० गौतम क० करते को क० क्रिया
 सं० सांथते को सं० सांथां नि० स्वीचते को नि० स्वीचा नि० निकलते को नि० निकला व० कहना
 है० ही भे० भगवन् क० करते कां क्रिया जा० यात् नि० निःशला जे० जो मि० मृगको मा० हने से०
 वह मि० मृगैर से पु० स्पर्शे जे० जो पु० पुरुष कां मा० हने से० वः पु० पुरुषैर से पु० स्पर्शे अं०
 जाव से पुरिसवेरेणं पुष्टे । सेणूणं गोयमा ! कज्जमाणे कडे, संधज्जमाणे संधिए, नि-

व्वत्तिज्जमाणे निव्वत्तिए, निसिखिज्जमाणं निस्सिट्ठत्ति वत्तव्वंसिया । हंता भगवं ! क-
 ज्जमाणे कडे जाव निसट्ठत्ति वत्तव्वंसिया । से तेणट्ठणं गोयमा ! जे मियंमारइ से
 मियवेरेणं पुष्टे, जे पुरिसं मारइ से पुरिसवेरेणं पुष्टे. अंतो छण्हं मासाणं मरइ-

मृग को मारा उस को मृग का वैर हुआ. अहो भगवन् ! यह अर्थ किस तरह है ? अहो गौतम ! 'कज्ज-
 माणे कडे' करते हुवे को क्रिया अर्थात् धनुष्य बाण करने लगा सो स्वीचा व 'संघिज्जमाणं संधिए' धनुष्य
 बाण बांधनेलगा सो मंथा, 'निव्वत्तिज्जमाणे निव्वत्तिए' धनुष्य स्वीचने लगा सो स्वीचा व 'निसखिज्जमाणे
 निस्सिट्ठे' धनुष्य में से बाण निकटवेरगा सो निकट आ गया कहा जा सकता है: हां भगवन् ! करते को
 क्रिया हुआ यावत् निकलने को निकला हुआ कहा जा सकता है. इन्हीं से अहो गौतम ! जो मृग मारता है
 वह मृग का वैर से स्पर्शता है अर्थात् उस मृग मारनेवाले को मृग का वैर लगता है और पुरुष

सर्वकाल ए० ऐसे उ० उपर का ए० एकैक को सं० जोडना जो० ओ० हे० निचे का तं० उन को छ०
 छोडना ने० जानना जा० यावत् अ० अतीत अ० अनागतकाल प० पीछे स० सर्वकाल जा० यावत्
 अ० अनुक्रम मे सा० वह सो० रोहा से० वह ए० ऐसे भं० भगवन् जा० यावत् वि० विचरते हैं ॥१४॥
 भ० भगवान् गो० गौतम स० श्रमण जा० यावत् ए० ऐसा व० बोले क० कितना प्रकार की भं० भगवन्

एकैक संजोयं, तेणं जो जो हेट्टिहो तं तं छडेतेणं नेयव्वं जाव् अतीय अणागयद्धा,
 पच्छासव्वद्धा. जाव् अणाणुपुव्वीए सा रोहा, सेवं भंते ३ जाव् विहरइ ॥ १४ ॥
 भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं जाव् एवं वयासी कइविहाणं भंते ! लोयट्ठिइ पण-
 ता ? गोयमा ! अट्ठविहा लोयट्ठिइ पणत्ता, तंजहां - आगासपइट्ठिए वाए

भी वैसे ही कहना. इस में कोई पहिले पीछे नहीं, सब अनुक्रम रहित बराबर हैं. सदा शाश्वत है. फीर
 रोहक अनगार बोले की अहो भगवन् ! आपने जो कदा वः वैसे ही है यों कहकर तथ संयम से आत्माको
 भावते हुवे विचरने लगे ॥ १४ ॥ श्री गौतम स्वामिने प्रश्न किया कि अहो भगवन् ! लोक स्थिति
 कितने प्रकार की है ? अहो गौतम ! लोक स्थिति आठ प्रकार की है. १. आकाश प्रतिष्ठित वायु अर्थात्
 आकाश के आधार मे घनवात तनुवात एव दोनों वायु रहे हैं. २. वायु के आधार से उदधि है ३. उद-
 धि प्रतिष्ठित पृथ्वी ४. पृथ्वी प्रतिष्ठित घन स्थावर प्राणी ५. जीव के आधार से अजीव रहे हैं ६. कर्म के आ-

ली० लोकस्थिति गो० गौतम अ० आठ प्रकार की लो० लोकस्थिति आ० आकाश प० प्रतिष्ठित वा० वायु वा० वायु प० प्रतिष्ठित पु० पृथ्वी पु० पृथ्वी प० प्रतिष्ठित त० त्रत था० स्यावर प्राणी अ० अजीव जी० जीव प्रतिष्ठित जी० जीव क० कर्म प० प्रतिष्ठित अ० अजीव जी० जीव सं० संग्रहित जी० जीव क० कर्म सं० संग्रहित ॥ १५ ॥ से० वह के० कैसे भ० भगवन् ए० ऐसा बु० कदा जाता है अ० आठ प्रकार की जा० यावत् जी० जीव क० कर्म सं० संग्रहित गो० गौतम से० वह ज० जैसे के० कोइ पुरुष

वायु पइष्टिइए उदही, उदहि पइष्टिया पुढवी, पुढवी पइष्टिया तसा, थावरा पाणा, अजीवा जीव पइष्टिया, जीवा कम्मपइष्टिया, अजीवा जीव संगहिया, जीवा कम्म संगहिया ॥ १५ ॥ सेकेणट्टेणं भंते ! एवं बुच्चइ, अट्टविहा जाव जीवा कम्म संगहिया ? गोयमा ! सेजहा नामए केइपुरिसे वत्थिमांडोवेइ . २ चा उप्पि सिइं

धार से जीव है ७ जीवने अजीव ग्रहण किया, मन भाषा के पुद्गलों जीवने ग्रहण किये ८ कर्म संग्रहित संसारी जीव हैं. उदय में आयें हुवे कर्मों के वश से जो प्रवर्तते हैं, जो जिन में रहते हैं, वे उस में प्रतिष्ठित हैं जैसे घटादि में रूप रहने से घटादि प्रतिष्ठित रूप कहा जाता है ॥ १५ ॥ अहो भगवन् ! किस कारण से आठ प्रकार की लोक स्थिति कही ? अहो गौतम ! जैसे कोई पुरुष चमड़े की मशक में वायु भरे और फिर उस का उपर का मुल कंधे कर देवे उस चमड़े के मध्य भाग में

दार्थ (ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ) (ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ) (ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ) (ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ)

व० मशक को आँ० भरकर उ० उपर सि० बंधन व० बांधे म० मध्य में ग० गांठ न० बांध उ० उपर की ग० गांठ को मु० छोड़े उ० उपर के दे० भाग को वा० नीकाले उ० उपला दे० भाग में आ० पानी पू० भरे उ० उर का सि० बंधन व० बांधे म० मध्य की ग० गांठ को मु० छोड़े से० वह गो० गौतम आ० पानी वा० वायु की उ० उपर चि० रहे ह० हां चि० रहे से० वह

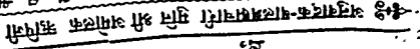
बंधइ २ ता, मञ्जे गंठि बंधइ २ ता, उवरिळिं गंठिं मुयइ २ ता, उवरिळिं देसं वामेइ २ ता, उवरिळिं देसं आउयायस्स पूरेइ २ ता, उप्पिं सियं बंधइ २ ता, मञ्जिळिं गंठिं मुयइ ॥ सेणुणं गोयमा ! से आउयाए तस्स वाउयायस्स उप्पिं उव-रितले चिट्ठइ ? हंता चिट्ठइ । से तेणट्टेणं जाव जीवा कम्मसंगहिया, ॥ ॥ से

दूसरा बंध बांधे, मध्य में बंध बांधकर उपर का मुख खोलकर वायु नीकाल देवे और पानी भरे फिर उस का मुख बांधकर बीच का बंध छोड़ देवे तो क्या गौतम ! उस मशक में रहे हुवे नीचे के वायु से पानी रह सकता है ? हां भगवन् ! उपर के विभाग में वायु के आधार से पानी रह सकता है तब भगवन्तने कहा कि जैसे वायु के आधार से मशक में पानी रहा वैसे ही आकाश के आधार से वायु, वायु के आधार से पानी यावत् कर्म संग्रहीत जिव है दूसरा दृष्टान्त जैसे कोई पुरुष वायु से घुरित चपड़े की मशक को कहि से बांधकर पुरुष प्रमाण से अधिक अगाध पानीवाले द्रव में प्रवेश

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ



ते० तेसे जा० यावत् जी० जीव क० कर्म संग्रहित से० वह श० जैसे क० कोई पुरुष वः मशक को
आ० भरे क० कटि से बंधाविअ० अगाध म० तल अ० बहुत पु० पुरुषप्रमाण उ० पानी में ओ० प्रवेश करे से०
वह णू० निश्चय० गो० गौतम मे० वह पु० पुरुष त० उस आ० पानी की उ० उपर चि० रहे ह० हां
चि० रहे ए० ऐसे अ० आठ प्रकार की लो० लोकस्थिति प० प्ररूपी जा० यावत् जी० जीव क० कर्म
संग्रहित ॥ १६ ॥ अ० है भं० भगवन् नी० जीव पो० पुद्गल अ० अन्योन्य व० बंधाये हुवे अ० अन्योन्य

जहावा केइ पुरिसे वत्थिमाडेवेइ २ चा कडीए बंधइ अत्थाह मतारम पोरिसिय
उदगंसि ओग्गहिजा ॥ सेणुणं गोयमा ! से पुरिसे तस्स आउयायस्स उवरिमत्तले
चिट्ठइ ? हंता चिट्ठइ ॥ एवं वा अट्ठविहा लोयट्ठिई पणत्ता, जात्र जीवा कम्म
संगहिया ॥ १६ ॥ अस्थिणं भंते ! जीवा य पोगगला य अणमण्णबद्धा, अणमण्ण

करके आगे जावे तो क्या गौतम ! वह पुरुष पानी पर तीरता हुआ रहता है ? गौतम स्वामी कहते हैं कि
वह पुरुष पानी पर ही तीरता हुआ रहता है. जैसे वह पानी पर ही तीरता हुआ रहता है वैसे ही अहो
गौतम ! आकाश प्रतिष्ठित वायु वगैरह आठ प्रकार की लोक स्थिति कही है ॥ १६ ॥ अहो भगवन् !
जीव व पुद्गल परस्पर क्या बंधे हुवे हैं ! परस्पर एक २ को स्वर्श हुवे हैं ? परस्पर चिक्कनाइ से लगे

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

पु० स्पर्शिये अ० अन्योन्य ओ० अवगाहे हुवे अ० अन्योन्य सि० स्निग्ध प० बंधयि अ० अन्योन्य
 व० घडापने चि० रहते हैं हं० हां अ० है से० वह के० कैसे भं० भगवन् जा० यावत् चि० रहते हैं गो०
 गीतम से० वह ज० जैसे ह० द्रह सि० होवे पु० पूर्ण प० प्रतिपूर्णे वो० उच्छ्रिता तो० विकसता स० सम
 य० घडापने चि० रहे अ० अब के० कोइ पु० पुरुषतं० उस ह० द्रहमें ए० एक अ० बढा ना० नाव स०

पुट्टा, अणमण मोगाढा, अणमण सिंगेह पडिवढा, अणमण घडत्ताए चि-
 ट्टति ? हंता अत्थि ॥ सेकेणट्टेणं भंते ! जाव चिट्ठति ? गोयमा ! से जहा नामए
 हरदे सिया पुणे पुणपमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभर घडत्ताए चिट्ठइ ॥ अ-
 हेणं केइपुरिसे तांसि हरदंसि एगं महं नावं सदासवं सयच्छिदं ओग्गाहेजा, सेणुणं
 गोयमा ! सानावा तेहिं आसवदारेहिं आपूरमाणी २ पुण्णा पुणपमाणा वोलट्टमाणा

हुवे हैं ? भगवन्त कहते हैं कि हां गौतम ! जीव पुट्टल परस्पर बंधे हुवे रहते हैं यावत् लोली भूत
 रहते हैं. अहो भगवन् ! किस प्रकार से जीव अजीव दोनों बंधे हुवे हैं यावत् लोलीभूत हैं ? अहो
 गौतम ! जैसे कोई द्रह पानी से परिपूर्ण होवे किचिन्मात्र खाली न होवे, उस में पानी उछलता होवे,
 और बहुत सुशोभित होवे, वैसे द्रह में कोई पुरुष एक बडी छिद्रवाली नाव सहित प्रवेश करे. अब अहो
 गौतम ! छिद्रों से आता हुआ पानी से भरकर वह नावा भरे हुवे घडे समान क्या नीचे बैठे ? हां

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्देवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

पु० स्वर्णायि अ० अन्योन्य ओ० अवगाहे हुवे अ० अन्योन्य सि० स्निग्ध प० वंधयि अ० अन्योन्य
घ० घडापने चि० रहते हैं हं० हां अ० है से० वह के० कैसे भं० भगवन् जा० यावत् चि० रहते हैं गो०
गीतम से० वह ज० जैसे ठ० द्रह सि० होवे पु० पूर्ण प० प्रतिपूर्ण वो० उच्छ्रिता वो० विकसता स० सम
घ० घडापने चि० रहे अ० अव के० कोइ पु० पुरुषतं० उस ह० द्रहमें ए० एक अ० वहां ना० नाव स०

पुट्टा, अणमण मोगाढा, अणमण सिगेह पडिबद्धा, अणमण घडत्ताए चि-
ट्टति ? हंता अत्थि ॥ सेकेणट्टेणं भंते ! जाव चिट्ठति ? गोयमा ! से जहा नामए
हरंदं सिया पुणे पुणपपमाणे वोळट्टमाणे वोसट्टमाणे समभर घडत्ताए चिट्ठइ ॥ अ-
हेणं केइपरिसे तांसि हरंदंसि एगं महं नावं सदासवं सयच्छिदं ओगाहेजा, सेणुणं
गोयमा ! सानावा तेहिं आसवदारेहिं आपूरमाणी २ पुण्णा पुणपपमाणे वोळट्टमाणे

हुवे हैं ? भगवन्त कहते हैं कि हां गौतम ! जीव पुद्गल परस्पर बंधे हुवे रहते हैं यावत् लोली भूत
रहते हैं. अहो भगवन् ! किस प्रकार से जीव अजीव दोनों बंधे हुवे हैं यावत् लोलीभूत हैं ? अहो
गीतम ! जैसे कोई द्रह पानी से परिपूर्ण होवे किचिन्मात्र खाली न होवे, उस में पानी उछलता होवे,
और बहुत सुशोभित होवे, वैसे द्रह में कोई पुरुष एक बड़ी छिद्रवाली नाब सहित प्रवेश करे. अब अहो
गीतम ! छिट्टों से आता हुआ पानी से भरकर वह नाब घरे हुवे घडे समान क्या नीचे बैठे ? हां

सदा आश्रय स० शतच्छेद ओ० प्रवेशकरे गो० गौतम मा० वह ना० वो० उच्छलता वो० वीकसता स० मम
घ० घडापने चि० रहे ह० हां चि० रहे से० वह ते० ऐसे गो० गौतम अ० है जी० जीव जा० यावत् चि०
रहे ॥ १७ ॥ अ० हे भं० भगवन् स० सदैव सु० सूक्ष्म सि० अप्काय प० गीरता है हं० हां अ० है
से० वह भं० भगवन् किं० क्या उ० ऊर्ध्व प० गीरे अ० अघो प० गीरे ति० तिर्यक् प० गीरे गो०

वोसदृमाणसभमर घडत्ताए चिट्ठइ! हंता चिट्ठइ। से तेणट्टेणं गोयमा! अत्थिणं जीवाय
जाव चिट्ठति ॥ १७ ॥ अत्थिणं भंते सदासमियं सुहुम सिणेहकाये पवडइ ? हंता
अत्थि । से भंते ! किउट्टु पवडइ, अहेपवडइ, तिरिए पवडइ ! गोयमाउट्टुवि पवडइ,
अहेवि पवडइ, तिरिएवि पवडइ, ॥ १८ ॥ जहा से वादरे आउयाए अणमण

भगवन् ! वह नावां पानी भराने से नीचे बैठे। ऐसे ही अहो गौतम ! जीव व पुद्गल परस्पर बंधे हुवे,
पीले हुवे, यावत् लोलीभूत बने हुवे हैं ॥ १७ ॥ अहो भगवन् ! सदैव सूक्ष्म पानी पडता है ? हां गौतम !
सदैव सूक्ष्म अप्काय पडती है। अहो भगवन् ! क्या वह उपर पडती है, नीचे पडती है, या तिर्यक्
पडती है ! अहो गौतम ! ऊर्ध्व लोक में वाटलादि पर्वत पर पडती है, अधो लोक में अधोगामिनी
विजय में पडती है और तिर्यक् लोक में भी पडती है ॥ १८ ॥ अहो भगवन् ! जैसे वादर पानी की
वर्षा होने से वह पानी तडागादि में एकत्रित होकर बहुत काल पर्यंत टिकता है वैसे ही क्या सूक्ष्म अप्काय

गौतम उ० ऊर्ध्व प० गीरे अ० अथो प० गीरे ति० तिर्यक् प० गीरे ॥१८॥ ज० जैमिं से० वह चा० वादर आ०
 अपूकाय अ० अन्योन्य स० रहता चि० चिरकाल दी० दीर्घकाल चि० रंठ तं० तैसे से० वह नो० नहीं
 इ० यह अर्थ स० समर्थ से० ब्रह्म खि० शीघ्र चि० विधंस आ० आता है० से० एने भं० भगवन् ॥१९॥
 ने० नारकी भं० भगवन् ने० नरकमें उ० उपजता किं० क्या दे० देशे दे० देश उ० उपजे दे० देश से स०
 सर्व उ० उपजे स० सर्व से दे० देश उ० उपजे स० सर्व से स० सर्व उ० उपजे गो० गौतम नो० नहीं

समाउत्ते चिरंयि दीहकालं चिट्टइ, तहाणं सेवि ? णोइणट्टे समट्टे । सेणं खिप्पामेव वि-
 ङ्समागच्छइ ॥ सेवं भंते भंतेत्ति पढमे सए छट्ठो उद्देशो सम्मत्तो ॥१॥ ६॥
 नैरइएणं भंते ! नैरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देसं उववज्जइ, देसेणं सव्वं उवव-
 ज्जइ, सव्वेणं देसं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ ? गोयमा ! नो देसेणं देसं उव-

भी बहुत काल तक टिकती है ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है क्यों की सूक्ष्म अपूकाय
 बहुत काय पर्यंत नहीं टिकती है अल्प समय में नष्ट होती है गौतम स्वामी कहते हैं कि अहो
 भगवन् ! आपका वचन सत्य है अन्यथा नहीं है यह पहिले शतकका छोटा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥१॥ ६ ॥
 छोटे उद्देशे में विधंस की कथा कही अब सातवें उद्देशे में इससे विपरीत उत्पन्न होने की वक्तव्यता करते

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

पश्चिम अतकका सातवा प्रदेश

ए० ऐसे जा० यावत् वे० वैमानिक ॥ २ ॥ ने० नारकी भ० भगवन् ने० नरक से उ० चवता कि० क्या
दे० देश से दे० देश उ० चवे ज० जैसे उ० उपजने में त० तैसे उ० चवने में दे० दंडक भा० कहना ॥ ३ ॥ ने०
नारकी भ० भगवन् ने० नरक से उ० चवता कि० क्या दे० देश मे दे० देश आ० आहार करे त०

वा देस आहारेइ, सबेण वा सब्ब आहारेइ, एवं जाव वेमाणिए ॥ २ ॥ नेरइएणं
भंते ! नेरइएहितो उव्वट्टमाणे, किं देसेणं देसं उव्वट्टइ ? जहा उव्वजमाणं, तहेव उ-
व्वट्टमाणिवि दंडगो भाणियच्चो ॥ ३ ॥ नेरइएणं भंते ! नेरइएहितो उव्वट्टमाणे किं
देसेणं देसं आहारेइ ? तहेव जाव सबेणं वा देसं आहारेइ, सबेणं वा सब्बं आहारेइ ॥

दंडक का जानना. ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! नारकी में से उद्वर्तता हुआ जीव क्या अपने देश से देशकी
उद्वर्तना करे, देशसे सर्व की उद्वर्तना करे, सर्व से देश की उद्वर्तना करे, या सर्व से सर्व की उद्वर्तना करे ?
अहो गौतम ! जैसे उत्पन्न आश्रित कहा जैसे ही उद्वर्तन आश्रित जानना. इस में सर्व से सर्व उद्वर्तता
है ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! नारकी में से उद्वर्तता हुआ जीव क्या देश से देश पुद्गलों का आहार करे ?
देश से सर्व पुद्गलों का आहार करे ? सर्व से देश का आहार करे ? अथवा सर्व से सर्व का आहार करे ?
अहो गौतम ! सर्वसे देश का आहार करे व सर्व से सर्व का आहार करे, शेष सब पहिले उपजने के समय
आहार का कण जैसे ही यहां कहना. जैसे नरक का उद्वर्तन व आहार का कहा जैसे ही शेष सब

(१६०)

सूत्र

भाष्यार्थ

पहिला अतकका सातवा अध्याय

ए० ऐसे जा० यावत् वे० वैमानिक ॥ २ ॥ ने० नारकी भ० भगवन् ने० नरक से उ० चवता कि० क्या दे० देश से दे० देश उ० चये ज० जैसे उ० उपजने में त० तैसे उ० चवने में दे० दंडक भा० कहना ॥ ३ ॥ ने० नारकी भ० भगवन् ने० नरक से उ० चवता कि० क्या दे० देश से दे० देश उ० चवने में त० तैसे उ० चवने में दे० दंडक भा० कहना ॥ ३ ॥

वा देस आहारेइ, सबेण वा सब आहारेइ, एंज जाव वेमाणिए ॥ २ ॥ नेरइएणं भंते ! नेरइएहितो उव्वट्टमाणे, किं देसेणं देसं उव्वट्टइ ? जहा उववजमाणे, तहेव उव्वट्टमाणेवि दंडगो भाणियव्वो ॥ ३ ॥ नेरइएणं भंते ! नेरइएहितो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ ? तहेव जाव सबेणं वा देसं आहारेइ, सबेणं वा सबं आहारेइ ॥

दंडक का जानना. ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! नारकी में से उद्वर्तता हुआ जीव क्या अपन देश से देशकी उद्वर्तना करे, देशसे सर्व की उद्वर्तना करे, सर्व से देश की उद्वर्तना करे, या सर्व से सर्व की उद्वर्तना करे ? अहो गौतम ! जैसे उत्पन्न आश्रित कहा जैसे ही उद्वर्तन आश्रित जानना. इस में सर्व से सर्व उद्वर्तता है ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! नारकी में से उद्वर्तता हुआ जीव क्या देश से देश पुद्गलों का आहार करे ? देश से सर्व पुद्गलों का आहार करे ? सर्व से देश का आहार करे ? अथवा सर्व से सर्व का आहार करे ? अहो गौतम ! सर्वसे देश का आहार करे व सर्व से सर्व का आहार करे, शेष-सर्व पहिले उपजने के समय आहार का कण जैसे ही यहाँ कहना. जैसे नरक का उद्वर्तन व आहार का कहा जैसे ही शेष सर्व

(५५५५)

व्याथ

सूत्र

भावार्थ

तेसे जा० यावत् स० सर्व से स० सर्व आ० आहार करे ए० ऐसे जा० यावत् वे० वैमानिका॥४॥ ने० नारकी
 भ० भगवन् ने० नरक में उ० उत्पन्न हुआ कि० क्या दे० देश से दे० देश उ० उत्पन्न हुआ ए० यह त० तेसे
 जा० यावत् स० सर्व से स० सर्व उ० उत्पन्न हुआ ज० जैसे उ० उपजता उ० चवता में च० चार दे०
 दंडक त० तेसे उ० उत्पन्न हुआ उ० चवा च० चार दे० दंडक भा० कहना स० सर्व से स०
 सर्व उ० उत्पन्न हुआ ग० सर्व से दे० देश आ० आहार करे स० सर्व आ० आहारकरे ए०

एवं जात्र वैमाणिया ॥ ४ ॥ नेरइएसु भंते ! नेरइएसु उववणणे किं
 देसेणं देसं उववणणे ? एसोवि तेहेव जात्र सव्वेणं सव्व उववणणे जहा
 उववज्जमाणे उव्वट्टमाणेय चत्तारि दंडगा तथा उववणणे उव्वट्टणेवि चत्तारि
 दंडगा भाणियव्वा, सव्वेणं सव्वं उववणं सव्वेण वा देसं आहारैइ सव्वेणं सव्वं

दंडक में जानना ॥ ४ ॥ अब उत्पन्न हुआ व उत्पन्न हुए का आहार संबंधी दो दंडक कहते हैं. अहो
 भगवन् ! नारकी में उत्पन्न हुआ जीव क्या अपने देश से नारकी का देशपने उत्पन्न हुआ यावत् सर्व से
 सर्वपने उत्पन्न हुआ ? अहो गौतम ! इस का अधिकार उत्पन्न होते हुवे में जैसा कहा जैसा यहां पर
 कहना. उत्पन्न होते व उद्भूतते के चार दंडक जैसे कहा वैसे ही उत्पन्न हुवे व उद्भूतते का आहार की साथ
 चार दंडक जनना. इस में सब से सब उत्पन्न हुआ, उत्पन्न हुए जीव सब से देश का आहार करे, सब

यह अ० अभिलाष से उ० उत्पन्न हुआ उ० चर्चामें ने० जानना ॥ ५ ॥ ने० नारकी भं० भगवन् ने० नरक में उ० उपजता कि० क्या अ० अर्थ से अ० अर्थ उ० उपजे अ० अर्थ से स० सर्व उ० उपजे स० सर्व से अ० अर्थ उपजे स० सर्व से स० सर्व उ० उपजे ज० जैसे प० प्रथम अ० आठ दं० दंडक त० तैसे अ० अर्थ में अ० आठ दं० दंडक भा० कहना ण० विशेष अ० जहाँ दे० देश से दे० देश उ० उपजे त० तहाँ अ० अर्थ से अ० अर्थ उ० उपजे भा० कहना ए० ऐसे ना० नानामकार स० सर्व सौ० सोलह

आहारइ. ए० एणं अभिलाषेणं उववणे उव्वहेवि नेयव्वं ॥ ५ ॥ नेरइएणं भंते ! नेर-

इएसु उव्वज्जमाणे किं अंढणं अंढं उववज्जइ, अंढेणं सव्वं उववज्जइ, सव्वेणं अंढं

उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ ? जहापढमिस्सेणं अट्टदंडगा तथा अंढेणवि अट्ट

दंडगा भाणियव्वा, णवरं जहिं दंसेणं देसं उववज्जइ तहिं अंढेणं अंढं उववज्जइ ति-

से सब का आहार करे ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! नरकमें उत्पन्न होता जीव क्या अपना अर्थ से अर्थ नारकीपने

उत्पन्न होता है, अर्थ ने सर्व उत्पन्न होता है, सर्व से अर्थ उत्पन्न होता है, सर्व से सर्व उत्पन्न होता है ?

अहो गौतम ! जैसे पहिले देश के आठ दंडक कटे वैते ही यहाँ अर्थ के आठ दंडक जानना. इतनी

भिन्नता कि देश के स्थान में यहाँ पर अर्थ तहथा. * एने सब मीळकर सोलह दंडक हुने ॥ ६ ॥ उत्पन्न

* यहाँ कोई प्रश्न करे कि देश व अर्थमें क्या भिन्नता है ? देशके थोडे, बहुत एमे अनेक भेद होते है, और अर्थके दो विभागही होते है

तेसे जा० यावत् स० सर्व से स० सर्व आ० आहार करे ए० ऐसे जा० यावत् वे० वैमानिका॥१॥ ने० नारकी
 भ० भगवन् ने० नरक में उ० उत्पन्न हुआ कि० क्या दे० देश से दे० देश उ० उत्पन्न हुआ ए० यह त० तेसे
 जा० यावत् स० सर्व से स० सर्व उ० उत्पन्न हुआ ज० जैसे उ० उपजता उ० चवता में च० चार दं०
 दंडक त० तेसे उ० उत्पन्न हुआ उ० चवा च० चार दं० दंडक भा० कहना स० सर्व से स०
 सर्व उ० उत्पन्न हुआ ग० सर्व से दे० देश आ० आहार करे स० सर्व आ० आहार करे ए०

एवं जात्र वैमाणिया ॥ ४ ॥ नेरइणुं भंते ! नेरइएसु उववणणे किं
 देसेणं देसं उववणणे ? एसोत्रि तहेव जाव सव्वेणं सव्व उववणणे जहा
 उववज्जमाणे उव्वट्टमाणेय चत्तारि दंडगा तहा उववणणे उव्वट्टणेवि चत्तारि
 दंडगा भाणियव्वा, सव्वेणं सव्वं उववणं सव्वेण वा देसं आहारैइ सव्वेणं सव्वं

दंडक में जानना ॥ ४ ॥ अब उत्पन्न हुआ व उत्पन्न हुए का आहार संबंधी दो दंडक कहते हैं. अहो
 भगवन् ! नारकी में उत्पन्न हुआ जीव क्या अपने देश से नारकी का देशपने उत्पन्न हुआ यावत् सर्व से
 सर्वपने उत्पन्न हुआ ? अहो गौतम ! इस का अधिकार उत्पन्न होते हुए में जैसा कहा जैसा यहां पर
 कहना. उत्पन्न होते व उद्भूतते के चार दंडक जैसे कहा जैसे ही उत्पन्न हुए व उद्भूतते का आहार की साथ
 नार दंडक बनना. इस में सब से सब उत्पन्न हुआ, उत्पन्न हुए जीव सब से देश का आहार करे, सब

गति स० प्राप्त अ० अविग्रहगति स० प्राप्त गो० गीतम स० सर्व ता० तैसे ही० होवे ए० ऐसे जी० जीव ए०
 एकेन्द्रिय व० वर्जकर ति० तीन भांगे ॥ ८ ॥ दे० देव भं० भगवन् म० महाद्विक म० ज्योतिर्वित म० बलवन्त
 म० यशस्वी म० महासुखी म० महानुभाव अ० नजदीक च० चवता कि० थोडाकाल हि० लज्जा दु० दुर्गि-

समावण्णगा अविग्रहगइ समावण्णगा ? गोयमा ! सञ्चेवि तावहेज्जा. अविग्रहगइ

समावण्णगा, अहवा अविग्रहगइ समावण्णगाय, विग्रहगइ समावण्णगेय,

अहवा अविग्रहगइ समावण्णगाय विग्रहगइ समावण्णगाय एवं जीव एगिदिय

धज्जा तिय भंगो ॥ ८ ॥ देवेणं भंते ! महड्डिए, महज्जुइए, महब्बले,

महाजसे, महेसक्खे, महाणुभावे, अविउक्कंतियं चयमाणे किंचिकालं हिरवत्तियं, दुग्-

गति करनेवाले हैं या अविग्रह गति करनेवाले हैं ? अहो गीतम ! नारकी में अविग्रहगतिवाले विशेष
 होने से अविग्रहगति में बहुतचन लीया है. और विग्रह गतिवाले थोड़े होवे अथवा न होवे इसलिये एक
 वचन लिया है. इस के तीन भांगे होते हैं ? नारकी में सब जीव अविग्रहगति संयुक्त २ अविग्रहगतिवन्त
 बहुत व विग्रहगतिवन्त एक ३ अविग्रह गतिवन्त बहुत व विग्रहगतिवन्त बहुत. ऐसे ही एकेन्द्रिय के पांच
 दंडक छोडकर अन्य सब दंडक में उक्त तीनों भांगे पाते हैं. एकेन्द्रिय में विग्रहगतिवन्त व अविग्रहगति-
 वन्त बहुत होने से भांगा नहीं होता है ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! महाद्विक, महाद्युतिवन्त, महाबलवन्त, महा

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

पुनः विज्ञापणं (भावार्थ) सूत्र

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुल्दंन सहायजी जालाप्रयादनी *

द० दृढकी भा० कहता ॥ ६ ॥ जी० जीव भं० भगवन् किं० क्या वि० विग्रहगति स० प्राप्त अ० अवि-
ग्रहगति स० प्राप्त गो० गौतम० सि० कदाचित् वि० विग्रहगति स० प्राप्त सि० कदाचित् अ० अविग्रहगति
स० प्राप्त ए० ऐसे जा० यावत् वे० वैमानिक ॥ ७ ॥ ने० नारकी भं० भगवन् किं० क्या वि० विग्रह-

भाणियव्वं ॥ एवं णाणत्तं, एवं सव्वेवि सोलसदंडगा भाणियव्वं ॥ ६ ॥

जीविणं भते किंविग्गहगइ समावणए, अविग्गहगइ समावणए ? गोयमा! सियविग्गह
गइ समावणए, सिय अविग्गहगइ समावणए एवं जाव वेमाणिए ॥ जीवाणं भंते ।

किं विग्गहगइ समावणगा, अविग्गहगइ समावणगा ? गोयमा ! विग्गहगइ समा-
वणगावि, अविग्गहगइ समावणगावि ॥ ७ ॥ नेरइयाणं भंते ! किं विग्गहगइ

य चवण प्रायः गति पूर्वक होता है. इसलिये आगे गति का वर्णन करते हैं. अहो भगवन् ! गति करते
जीव क्या विग्रह गति में जाता है या अविग्रह गति में जाता है ? अहो गौतम ! किसी समय जीव
विग्रह गति में जाता है और किसी समय जीव अविग्रह गति में जाता है. ऐसा वैमानिक तक का जानना
अब बहुत जीव भाश्री प्रश्न करते हैं अहो भगवन् ! बहुत जीव विग्रह गतिवाले हैं या अविग्रह गतिवाले
हैं ? विग्रहगतिवाले भी हैं और अविग्रहगतिवाले भी हैं ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! क्या नारकी विग्रह

गति स० प्राप्त अ० अविग्रहगति स० प्राप्त गो० गीतम स० सर्व ता० तैसे ही० होवे ए० ऐसे जी० जीव ए० ए० एकेन्द्रिय व० वर्जकर ति० तीन भागि ॥ ८ ॥ दे० देव भं० भगवन् प० महाद्विक्रम० ज्योतिर्वित म० चलवत म० यशस्वी म० महासुखी म० महानुभाव अ० नजदीक च० चवता किं० थोडाकाल हि० लज्जा दु० दुर्गं-

समावणगा अविग्रहगइ समावणगा ? गोयमा ! सत्वेवि तावहोज्जा. अविग्रहगइ

समावणगा, अहवा अविग्रहगइ समावणगाय, विग्रहगइ समावणगेय,

अहवा अविग्रहगइ समावणगाय विग्रहगइ समावणगाय एवं जीव एगिदिय

वज्जो तिय भंगो ॥ ८ ॥ देवेंण भंतं ; महड्डिए, महज्जुइए, महव्वले,

महाजसे, महसखे, महानुभावे, अविडक्कतियं चयमाणे किंचिकालं हिरवत्तियं, दुग्ं-

गति करनेवाले हैं या अविग्रह गति करनेवाले हैं ? अहो गीतम ! नारकी में अविग्रहगतिवाले विशेष होने से अविग्रहगति में बहुवचन लीया है. और विग्रह गतिवाले थोड़े होवे अथवा न होवे इसलिये एक वचन लिया है. इस के तीन भांगे होते हैं ? नारकी में सब जीव अविग्रहगति संयुक्त २ अविग्रहगतिवन्त बहुत व विग्रहगतिवन्त एक ३ अविग्रह गतिवन्त बहुत व विग्रहगतिवन्त बहुत. ऐसे ही एकेन्द्रिय के पांच दंडक छोडकर अन्य सब दंडक में उक्त तीनों भांगे पाते हैं. एकेन्द्रिय में विग्रहगतिवन्त व अविग्रहगतिवन्त बहुत होने से भांगा नहीं होता है ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! महाद्विक्रम, महाचलवन्त, महा

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

उपजता किं क्या स० सइन्द्रियपने व० उपजता है अ० अनिन्द्रियपने व० उपजता है गो० गौतम सि० कदाचित् स० सइन्द्रियपने व० उपजता है सि० कदाचित् अ० अनिन्द्रियपने उपजता है से० वह के० कैसे गो० गौतम द० द्रव्येन्द्रिय प० प्रत्यय अ० अनिन्द्रिय व० उपजे भा० भात्र इन्द्रिय प० प्रत्यय स० सइन्द्रिय व० उपजे से० वह ते० इसलिये ॥ १० ॥ जी० जीव भं० भगवन् ग० गर्भ में व० उपजता किं

अणिदिण् वक्कमइ ? गोयमा । सिय सइदिण् वक्कमइ, सिय अणिदिण् वक्कमइ । से केणट्टेणं ? गोयमा ! दव्विदियाइं पडुच्च अणिदिण् वक्कमइ, भाविदियाइं पडुच्च सइदिण् वक्कमइ से तेणट्टेणं ॥ १० ॥ जीवेणं भंते ! गव्भं वक्कममाणे किं सरिरी वक्कमइ;

स्थान का प्रश्न पूछते हैं अहो भगवन्! गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव क्या इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है अथवा इन्द्रिय रहित उत्पन्न होता है? अहो गौतम! क्वचित् इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है और क्वचित् इन्द्रिय रहित भी उत्पन्न होता है. अहो भगवन्! किस कारण से जीव क्वचित् सइन्द्रियपने उत्पन्न होता है और क्वचित् अनिन्द्रियपने होता है? अहो गौतम! द्रव्य इन्द्रिय आश्रित अनिन्द्रिय उत्पन्न होता है क्यों कि निवृत्त्युपकरण रूप, स्पर्शन, रस, घ्राण, चक्षुः व श्रोतन्त्रिय पर्याप्त हुये पीछे होती है और भावेन्द्रिय आश्रित सइन्द्रिय होता है क्यों की ज्ञानरूप इन्द्रिय जीव को सदा काल रहनी है. इसलिये अहो गौतम! क्वचित् इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है और क्वचित् इन्द्रिय रहित उत्पन्न होता है. ॥ १० ॥ इन्द्रिय

शब्दार्थ

सूत्र

भाष्य

उपजता किं कया स० सइन्द्रियपने व० उपजता है अ० अनिन्द्रियपने व० उपजता है गो० गौतम सि० कदाचित् स० सइन्द्रियपने व० उपजता है सि० कदाचित् अ० अनिन्द्रियपने उपजता है से० वह के० कैसे गो० गौतम द० द्रव्येन्द्रिय प० प्रत्यय अ० अनिन्द्रिय व० उपजे भा० भाव इन्द्रिय प० प्रत्यय स० सइन्द्रिय व० उपजे से० वह ते० इसलिये ॥ १० ॥ जी० जीव भं० भगवन् ग० गर्भ में व० उपजता किं०

अणिदिए वक्कमइ ? गोयमा ! सिय सइदिए वक्कमइ, सिय अणिदिए वक्कमइ । से केणट्टुणं ? गोयमा ! दब्बिदियाइं पडुच्च अणिदिए वक्कमइ, भाविदियाइं पडुच्च सइदिए वक्कमइ से तेणट्टुणं ॥ १० ॥ जीवेणं भंते ! गब्भं वक्कममाणे किं सररी वक्कमइ,

स्थान का प्रश्न पूछते हैं अहो भगवन् गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव कया इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है अथवा इन्द्रिय रहित उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! क्वचित् इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है और क्वचित् इन्द्रिय रहित भी उत्पन्न होता है. अहो भगवन् ! किन कारण से जीव क्वचित् सइन्द्रियपने उत्पन्न होता है और क्वचित् अनिन्द्रियपने होता है ? अहो गौतम ! द्रव्य इन्द्रिय आश्रित अनिन्द्रिय उत्पन्न होता है कयो कि निवृत्त्युपकरण रूप, स्पर्शन, रस, घ्राण, चक्षुः व श्रोतेन्द्रिय पर्याप्त हुये पण्डि होती है और भवेन्द्रिय आश्रित सइन्द्रिय होता है पर्यो की ज्ञानरूप इन्द्रिय जीव को सदा काल रहती हैं. इसलिये अहो गौतम ! क्वचित् इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है और क्वचित् इन्द्रिय रहित उत्पन्न होता है. ॥ १० ॥ इन्द्रिय

उपजता किं कया स० सइन्द्रियपने व० उपजता है अ० अनिन्द्रियपने व० उपजता है गो० गौतम सि० कदाचित् स० सइन्द्रियपने व० उपजता है सि० कदाचित् अ० अनिन्द्रियपने उपजता है से० वह के० कैसे गो० गौतम द० द्रव्येन्द्रिय प० प्रत्यय अ० अनिन्द्रिय व० उपने भा० भाव इन्द्रिय प० प्रत्यय स० सइन्द्रिय व० उपने से० वह ते० इसलिये ॥ १० ॥ जी० जीव भं० भगवत् ग० गर्भे मँ व० उपजता किं० अणिदिष्ट वक्कमइ ? गोयमा ! सिय सइदिष्ट वक्कमइ, सिय अणिदिष्ट वक्कमइ । से केणट्टेणं ? गोयमा ! दत्विदियाइं पडुच्च अणिदिष्ट वक्कमइ, भाविदियाइं पडुच्च सइदिष्ट वक्कमइ से तेणट्टेणं ॥ १० ॥ जीवेणं भंते ! गव्भं वक्कममाणे किं सरिरी वक्कमइ,

उपजता किं कया स० सइन्द्रियपने व० उपजता है अ० अनिन्द्रियपने व० उपजता है गो० गौतम सि० कदाचित् स० सइन्द्रियपने व० उपजता है सि० कदाचित् अ० अनिन्द्रियपने उपजता है से० वह के० कैसे गो० गौतम द० द्रव्येन्द्रिय प० प्रत्यय अ० अनिन्द्रिय व० उपने भा० भाव इन्द्रिय प० प्रत्यय स० सइन्द्रिय व० उपने से० वह ते० इसलिये ॥ १० ॥ जी० जीव भं० भगवत् ग० गर्भे मँ व० उपजता किं० अणिदिष्ट वक्कमइ ? गोयमा ! सिय सइदिष्ट वक्कमइ, सिय अणिदिष्ट वक्कमइ । से केणट्टेणं ? गोयमा ! दत्विदियाइं पडुच्च अणिदिष्ट वक्कमइ, भाविदियाइं पडुच्च सइदिष्ट वक्कमइ से तेणट्टेणं ॥ १० ॥ जीवेणं भंते ! गव्भं वक्कममाणे किं सरिरी वक्कमइ,

इयान् भा० भश्च पूजते है अहो भगवन्गर्भे नो उत्पन्न होता हुआ जीवकया इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है अथवा इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! क्वचित् इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है और क्वचित् इन्द्रिय सहित भी उत्पन्न होता है, अहो भगवन् ! किम कारन से जीव क्वचित् सइन्द्रियपने उत्पन्न होता है और गोविण् भाविदियपने होता है ? अहो गौतम ! द्रव्य इन्द्रिय आश्रित अनिन्द्रिय उत्पन्न होता है क्यों कि अणुपणुसंख्येण कस्य, संसृजेत, संस, भाष्य, संसृजः च श्रुतेन्द्रिय पर्याप्तं हुंरं पीडंते ही है और भावेन्द्रिय आ-अणुपणु होता है क्यों की अणुसंख्येण सहिष्य शीघ्र को सदा काल रहती है, इसलिये अहो गौतम ! अणुसंख्येण सहिष्य शीघ्र को सदा काल रहती है, उत्पन्न होता है ॥ १० ॥ इन्द्रिय

उपजता किं कया स० सइन्द्रियपने व० उपजता है अ० अनिन्द्रियपने व० उपजता है गो० गौतम सि० कदाचित् स० सइन्द्रियपने व० उपजता है सि० कदाचित् अ० अनिन्द्रियपने उपजता है से० वह के० कैसे गो० गौतम द० द्रव्येन्द्रिय प० प्रत्यय अ० अनिन्द्रिय व० उपने भा० भाव इन्द्रिय प० प्रत्यय स० सइन्द्रिय व० उपने से० वह ते० इसलिये ॥ १० ॥ जी० जीव भं० भगवत् ग० गर्भे मँ व० उपजता किं० अणिदिष्ट वक्कमइ ? गोयमा ! सिय सइदिष्ट वक्कमइ, सिय अणिदिष्ट वक्कमइ । से केणट्टेणं ? गोयमा ! दत्विदियाइं पडुच्च अणिदिष्ट वक्कमइ, भाविदियाइं पडुच्च सइदिष्ट वक्कमइ से तेणट्टेणं ॥ १० ॥ जीवेणं भंते ! गव्भं वक्कममाणे किं सरिरी वक्कमइ,

आहार आ० आहारकरे गो० गौतम मा० माता का ओ० रुधिर पि० पिताका सु० वीर्य तं० उस उ०
 दोनों सं० मिलाहुवा क० मलिन कि० किलीवरूप प० प्रथम आ० आहार आ० आहारकरे ॥ १२ ॥
 जी० जीव भं० भगवन् ग० गर्भ में ग० गयाहुवा कि० क्या आ० आहार आ० आहारकरे गो० गौतम जं०
 जो मा० माता ना० नानाप्रकार र० रस वि० विकृति आ० आहारकरे त० उस का ए० एक दे० देश
 ओ० ओज आ० आहारकरे ॥ १३ ॥ जी० जीव को भं० भगाव् ग० गर्भ में ग० उत्सन्न हुवा अ० हे उ०

वक्त्रमाणे तप्लढमयाए कमाहाग्माहारेइ ? गोयमा ! माउअंयं पिउमुक्कं तं तदुभय
 संसिट्ठं कलुसं किव्विसं, तप्लढमयाए आहारमाहारेइ ॥ १२ ॥ जीविणं भंते !
 गब्भगए समाणे किं आहारमाहारेइ ? गायमा ! जं से माया नाणाविहाओ रसविगइओ
 आहारेइ तेदग्देसेणय ओय साहारेइ ॥ १३ ॥ जीवस्सणं भंते ! गब्भगयस्स

हे ॥ ११ ॥ शरीर आहार से होता है इसलिये आहार का प्रश्न करते हैं. अहो भगवन् ! गर्भ में उत्पन्न
 होता जीव पहिलेहि क्या आहार करता है ? अहो गौतम ! माता का ऋतुकाल संबंधी रुधिर व पिता का
 वीर्य यह दोनों परस्पर मिलने से किलिप रूप बने हुवे पुत्रलौ का आहार जीव प्रथम करता है. ॥ १२ ॥
 अहो भगवन् ! गर्भ में रहा हुवा जीव किस का आहार करता है ? अहो गौतम ? गर्भवती स्त्री दुग्ध घृता-
 दिकं का जो आहार करती है और उस का जो रस होता है उस में से एक देश (कुच्छ योडा विभाग)

आहार आ० आहारकरे गो० गौतम मा० माता का ओ० रुधिर पि० पिनाका सु० वीर्य तं० उस उ०
 दोनों सं० मिलाहुवा क० मलिन कि० किलीपरूप प० प्रथम आ० आहार आ० आहारकरे ॥ १२ ॥
 जी० जीव भं० भगवन् ग० गर्भ में ग० गयाहुवा कि० क्या आ० आहार आ० आहारकरे गो० गौतम जं०
 जो मा० माता ना० नानाप्रकार र० रस वि० विक्रति आ० आहारकरे त० उस का ए० एक दे० देश
 ओ० ओज आ० आहारकरे ॥ ३ ॥ जी० जीव को भं० भगवन् ग० गर्भ में ग० उत्पन्न हुवा अ० हे उ०

वक्त्रमाणे तप्लढमयाए कमाहाग्माहारेइ ? गोयमा ! माउओयं पिउमुक्कं तं तदुभय
 संसिटुं कलुसं किच्चिसं, तप्लढमयाए आहारमाहारेइ ॥ १२ ॥ जीविणं भंते !

गव्भगए समाणे किं आहारमाहारेइ ? गोयमा ! जं से माया नाणाविहाओ रसविगईओ
 आहारेइ तेदग्देसणय ओय माहारेइ ॥ १३ ॥ जीवस्सणं भंते ! गव्भगयस्स

हे ॥ ११ ॥ शरीर आहार से होता है इसलिये आहार का प्रश्न करते हैं. अहो भगवन् ! गर्भ में उत्पन्न
 होता जीव पहिलेहि क्या आहार करता है ? अहो गौतम ! माता का ऋतुकाल संबंधी रुधिर व पिता का
 वीर्य यह दोनों परस्पर मिलने से किल्विप रूप बने हुवे पुद्गलों का आहार जीव प्रथम करता है ॥ १२ ॥
 अहो भगवन् ! गर्भ में रहा हुवा जीव किस का आहार करता है ? अहो गौतम ? गर्भवती स्त्री दुग्ध घृता-
 दिकं का जो आहार करती है और उस का जो रस होता है उस में से एक देश (कुच्छ थोडा विभाग)

संज्ञा (भगवती) विवाह १० गति

भगवन् ग० गर्भं मे उत्पन्नं सु० मुखसे का० कवल आ० आहार आ० आहार करे गो० गौतम नो० नदी
 इ० यह अर्थ स० समर्थ से० वह के० कैसे गो० गौतम जी० जीव ग० गर्भ मे उत्पन्ना त्० सर्व तरफ
 से आ० आहारकरे प० परिणमे उ० ऊर्ध्वासले नि० निश्वासले अ० वारंवार आ० आहारकरे प० प-
 रिणमे उ० ऊर्ध्वासले नि० निश्वासले आ० कदाचित् आ० आहार करे प० परिणमे उ० ऊर्ध्वासले
 नि० निश्वासले पा० माताका जीव र० नाभिनाल पु० पुत्रका जीव र० नाभिनाल मा० माता का
 क्वायलियं आहारं आहारित् ए ? गोयमा ! णो इणट्टे समट्टे । सेकेणट्टेण ? गोयमा-
 जीवेणं गढ्भणए समाणे सव्वओ आहारइ, सव्वओ परिणामेइ, सव्वओ उरससइ,
 सव्वओ निरससइ अभिक्खण आहारइ अभिक्खणं परिणामेइ अभिक्खणं उरससइ
 अभिक्खणं निरससइ, आहच्च आहारइ आहच्च परिणामेइ, आहच्च उरससइ, आहच्च
 निरससइ, माउ जीव रसहरणी पुत्तजीव रसहरणी । माउ जीव पडिबट्टा पुत्तजीव
 कवल का आहार कर सकता है ? अहो गौतम ! यह अर्थयोग्य नहीं है. अहो भगवन् ! किस कारण से !
 अहो गौतम ! गर्भ मे रहा हुआ जीव सब आत्मा से आहार करता है, परिणमाता है, उश्वास लेता है,
 निश्वास लेता है, वारंवार आहार करता है, वारंवार परिणमाता है, वारंवार श्वासोश्वास लेता है, अथवा
 क्वाचित् अहार करता है, परिणमाता है व श्वासोश्वास लेता है, गर्भवती स्त्री को नाभीस्थान में रसहरणी
 नामक एक नाडी नली रूप होती है. वह नाली गर्भस्थ जीव को स्पर्शकर रहती है. उस से वह जीव

भगवन् ग० गर्भ में उत्पन्न सु० मुलसे का० कवल आ० आहार आ० आहार करे गो० गौतम नो० नदी
 इ० यह अर्थ स० समर्थ से० वह के० कैसे गो० गौतम जी० जीव ग० गर्भ में उपजा त० सर्व तरफ
 से आ० आहारकरे प० परिणमे उ० ऊर्वासले नि० निश्वासले अ० वारंवार आ० आहारकरे प० प-
 रिणमे उ० ऊर्वासले नि० निश्वासले आ० कदाचित् आ० आहार करे प० परिणमे उ० ऊर्वासले
 नि० निश्वासले मा० माताका जीव र० नाभिनाल पु० पुत्रका जीव र० नाभिनाल मा० माता का
 कावलियं आहारं आहारित्तए ? गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे । सेकेणट्ठेणं ? गोयमा-
 जीवेणं गब्भगए समाणे सव्वओ आहारेइ, सव्वओ परिणामेइ, सव्वओ उस्ससइ,
 सव्वओ निस्ससइ अभिक्खण आहारेइ अभिक्खणं परिणामेइ अभिक्खणं उस्ससंइ
 अभिक्खणं निस्ससइ, आहच्च आहारेइ आहच्च परिणामेइ, आहच्च उस्ससइ, आहच्च
 निस्ससइ, माउ जीव रसहरणी पुत्तजीव रसहरणी माउ जीव पडिवद्धा पुत्तजीव
 कवल का आहार कर सकता है ? अहो गौतम ! यह अर्थयोग्य नहीं है. अहो भगवन् ! किस कारण से !
 अहो गौतम ! गर्भ में रहा हुआ जीव सब आत्मा से आहार करता है, परिणमाता है, उर्वास लेता है,
 निश्वास लेता है, वारंवार आहार करता है, वारंवार परिणमाता है, वारंवार श्वासोश्वास लेता है, अथवा
 क्वचित् अहार करता है, परिणमाता है व श्वासोश्वास लेता है, गर्भवती स्त्री को नाभीस्थान में रसहरणी
 नामक एक नदी नली रूप होती है. यह नली गर्भस्थ जीव को स्पर्शकर रहती है. उस से वह जीव

व्यर्थ

सूत्र

भावार्थ

(१७९)

पंचमं विवाह (१००) भगवती (१००)

भगवन् ग० गर्भं मे उत्पन्न मु० मुलसे का० कवल आ० आहार आ० आहार करे गो० गौतम नो० नदी
 इ० यह अर्थ स० समर्थ से० वह के० कैरे गो० गौतम जी० जीव ग० गर्भ मे उत्पजा स० सर्व तरफ
 से आ० आहारकरे प० परिणमे उ० ऊर्ध्वासले नि० निश्वासले अ० वारंवार आ० आहारकरे प० प-
 रिणमे उ० ऊर्ध्वासले नि० निश्वासले आ० कदाचित् आ० आहार करे प० परिणमे उ० ऊर्ध्वासले
 नि० निश्वासले मा० माताका जीव र० नाभिनाल पु० पुत्रका जीव र० नाभिनाल मा० माता का
 कानालियं आहारं आहारित्तए ? गोयमा ! णां इणट्टे समट्टे । सेकेणट्टेणं ? गोयमा-
 जीवेणं गन्धमाए समणे सव्वओ आहारइ, सव्वओ परिणामेइ, सव्वओ परिणामेइ, उस्ससइ,
 सव्वओ निस्ससइ अभिक्खण आहारइ अभिक्खणं परिणामेइ अभिक्खणं उस्ससइ
 उस्ससइ, आहच्च आहारइ आहच्च परिणामेइ, आहच्च उस्ससइ, आहच्च
 निस्ससइ, माउ जीव रसहरणी पुत्तजीव रसहरणी माउ जीव पडिबद्धा पुत्तजीव
 कवल का आहार कर सकता है ? अहो गौतम ! यह अर्थयोग्य नहीं है. अहो भगवन् ! किस कारण से !
 अहो गौतम ! गर्भ मे रहा हुआ जीव सब आत्मा से आहार करता है, परिणमाता है, उश्वास लेता है,
 निश्वास लेता है, वारंवार आहार करता है, वारंवार परिणमाता है, वारंवार श्वासोश्वास लेता है, अथवा
 कश्चित् अहार करता है, परिणमाता है व श्वासोश्वास लेना है, गर्भवती स्त्री को नाभीस्थान मे रसहरणी
 नामक एक नाडी नली रूप होती है. वह नाली गर्भस्थ जीव को स्पर्शकर रहती है. उस से वह जीव

अंग गो०गौतम त०तीन पे०पिता के अंग अ०हृदि अ०हृदिकीभिज के०केश भं०श्मश्रु रो०रोम न०नख॥१७॥
 अ०माता पिता का भं०भगवन् स०शरीर के०कितना का०काल सं० रहे गो०गौतम जा० जितना का०काल
 भ० भवधारणीय स० शरीर अ० नाश न पाये ए० इतना का० काल सं० रहे अ० अब स०समय २ में
 वो० हीन होता च० चरिम का० काल स०समय में वो० नाश भ० होवे ॥ १८ ॥ जी० जीव भं० भगवन्

णत्ता ? गोयमा ! तओ वेइयंगा पणत्ता तजहा अट्टि, अट्टिमिजा, केसमंसुरोमनहे
 ॥ १७ ॥ अस्मा पेइएणं भंते ! सरिए केवइयं कालं संचिट्ठइ ? गोयमा ! जावइयं
 से कालं भवधारणिजे सरिए अर्वावणणे भवइ, एवतियं कालं संचिट्ठइ. अहेणं
 समए समए दोयसिज्जमाणे चरिम काल समयंसि वोच्छिण्णे भवइ ॥ १८ ॥ जीविणं

शरीर में पिता के तीन अंग होते हैं. १ अस्थि, २ अस्थि की भीजी ३ केश श्मश्रु रोम व नख. ॥ १७ ॥
 अहो भगवन् ! माता व पिता के अंग जीव की साथ कितने काल तक सम्बन्ध रखते हैं ? अहो गौतम !
 जहांलग मनुष्यादिक का भवधारणीय शरीर विनाश होवे नहीं वहां लग माता व पिता के अंग रहते हैं.
 अर्थात् शरीर का विनाश होनेपर इन अंगों का भी विनाश होता है. जिस समय से माता व पिता के
 अंगों संबंधी आहार ग्रहण किया था उस समय से लगाकर प्रति समय क्षीण होते २ अन्तिम काल में

पंचमांश विवाह पणत्त (भगवतो) सूत्र

अंग गो० गौतम त० तीन पं० पिता के अंग अ० हृदि अ० हृदिकीमिंज के० केश मं० इमश्रु रो० रोम न० नख ॥ १७ ॥
 अ० माता पिता का भं० भगवन् स० शरीर के० कितना का० काल सं० रहे गो० गौतम जा० जितना का० काल
 भ० भवधारणीय स० शरीर अ० नाश न पाये ए० इतना का० काल सं० रहे अ० अब स० समय २ भं
 वो० शिन होता च० चरिम का० काल स० समय में वो० नाश भ० होवे ॥ १८ ॥ जी० जीव भं० भगवन्

पणत्ता ? गोयमा ! तओ वेइयंगा पणत्ता तंजहा आट्टि, आट्टिमिंजा, केसमंसुरेमनंह
 ॥ १७ ॥ अम्मा वेइएणं भंते ! सरिए केवइयं कालं संचिट्टइ ? गोयमा ! जावइयं
 से कालं भवधारणिज्जे सरिए अवांवावणे भवइ, एवतियं कालं संचिट्टइ. अहेणं
 समए समए वोयसिज्जमाणे चरिम काल समयंसि वोचिछणे भवइ ॥ १८ ॥ जीविणं

शरीर में पिता के तीन अंग होते हैं. १ अस्थि, २ अस्थि की भीजी ३ केश इमश्रु रोम व नख. ॥ १७ ॥
 अहो यगवन् ! माता व पिता के अंग जीव की साध कितने काल तक सम्बन्ध रखते हैं. ? अहो गौतम !
 जहालग मनुष्यादिक का भवधारणीय शरीर विनाश होवे नहीं वहां लग माता व पिता के अंग रहते हैं.
 अर्थात् शरीर का विनाश होनेपर इन अंगों का भी विनाश होता है. जिस समय से माता व पिता के
 अंगों संबंधी आहार ग्रहण किया या उस समय से लगाकर प्रति समय क्षीण होते २ अन्तिम काल में

अंग गो० गौतम त० तीन पे० पिता के अंग अ० हड्डि अ० हड्डिकीभिंज के० केश मं० श्मश्रु रो० रोम न० नख ॥ १७ ॥
 अ० माता पिता का भं० भगवन् स० शरीर के० कितना का० काल सं० रहे गो० गौतम जा० जितना का० काल
 भ० भवधारणीय स० शरीर अ० नाश न पाये ए० इतना का० काल सं० रहे अ० अब स० समय २ में
 बो० हीन होता च० चरिम का० काल स० समय में वो० नाश भ० होवे ॥ १८ ॥ जी० जीव भं० भगवन्

पणत्ता ? गोयमा ! तओ पेइयंगा पणत्ता तंजहा आट्टि, आट्टिभिंजा, केसमंसुरोमनहे
 ॥ १७ ॥ अम्मा पेइएणं भंते ! सरिए केवइयं कालं संचिट्ठइ ? गोयमा ! जावइयं
 से कालं भवधारणिजे सरिए अंब्वावण्णे भवइ, एवतियं कालं संचिट्ठइ. अहेणं
 समए समए वोयसिजमाणे चरिम काल समयंसि वोच्चिण्णे भवइ ॥ १८ ॥ जीविणं

शरीर में पिता के तीन अंग होते हैं. १ अस्थि, २ अस्थि की भीजी ३ केश श्मश्रु रोम व नख. ॥ १७ ॥
 अहो भगवन् ! माता व पिता के अंग जीव की साथ कितने काल तक सम्बन्ध रखते हैं ? अशो गौतम !
 जहाँलग मनुष्यादिक का भवधारणीय शरीर विनाश होवे नहीं वहाँ लग माता व पिता के अंग रहते हैं.
 अर्थात् शरीर का विनाश होनेपर इन अंगों का भी विनाश होता है. जिस समय से माता व पिता के
 अंगों संबंधी आहार ग्रहण किया था उस समय से लगाकर प्रति समय क्षीण होते २ अन्तिम काल में

सूत्र (भगवती) पंचमोऽङ्ग विवाह पणानि

वा० चतुरंगी से० सैन्य वि० विकुर्वे वि० विकुर्वे कर चा० चतुरंगी से० सैन्य से प० वाचु शैल्य की स० माय सं० संग्राम सं० संग्राम करे से० वह जी० जीव अ० अर्थ का इच्छक र० राज्य का इच्छक भो० भोग की इच्छा वाला का० काम की इच्छा वाला अ० अर्थ की कांक्षा वाला र० राज्य की कांक्षा वाला भो० भोग की कांक्षा वाला का० काम की कांक्षा वाला अ० अर्थ पिपासु र० राज्य पिपासु भो० भोग पिपासु का० काम पिपासु स० अर्थसे चित्त वाला प० मन वाला ले० लेश्या वाला अ० अन्वयसाय वाला ति० दीप्य आरंभ वा श अ०

बहुभद्र, वेडाद्विष्य समुग्धाएणं समोहणइ, समोहणइए चातरंगिणीए सेणाए विउव्वइ, विउव्वइत्ता चाउतरंगिणीए सेणाए पराणीएणं सद्धिसंगामं संगामेइ, सेणं जीवे अत्थ कामए, रत्नकामए, भोग कामए, कामकामए, अत्थकंखिए, रत्नकंखिए, भोगकंखिए, काम

वह गर्भस्थ जीव ऐसी बात सुने की परचकी की संना आई है और अपन को दुःखी करेगी. ऐसी बात सुनकर, अन्वयकर जीव के प्रदंश गर्भ की याहिर नीकालं और वैकेय ममुदघात से तथाविष पुद्गलों को ग्रहण करे. हाथी, घोड़े, गध, पायदल गौरह सेना की विकुर्वा करे, विकुर्वाणा करके परचकी की सेना साथ संग्राम करे. द्रव्य की अभिलाषावाला राज्यक्रुद्धि की अभिलाषावाला, गंधरम स्वर्गारूप भोग की अभिलाषावाला, शब्द रूपादि कामकी अभिलाषावाला धन की इच्छा से आसक्त बनाहुवा, राज्य, भोग, व काम की इच्छा से आसक्त बना हुआ. धन, राज्य, भोग व काम का पिपासु, [अतएव,] तन्मय

वा० चतुरंगी से० सैन्य वि० विकुर्वे वि० विकुर्वे कर वा० चतुरंगी से० सैन्य से प० शत्रु सैन्य की स० साथ से० संग्राम से० संग्राम करे से० वह जी० जीव अ० अर्थ का इच्छक र० राज्य का इच्छक भो० भोग की इच्छा वाला का० काम की इच्छा वाला अ० अर्थ की कांक्षा वाला र० राज्य की कांक्षा वाला भो० भोग की कांक्षा वाला का० काम की कांक्षा वाला अ० अर्थ पियासु र० राज्य पियासु भो० भोग पियासु का० काम पियासु त० डसमें वित्त वाला प० मन वाला ले० लेश्या वाला अ० अध्यवसाय वाला ति० तीव्र आरंभ वा० अ०

शुभइ, वेडविय समुग्धाएणं समोहणइ, समोहणइ चालरंगिणीए सेणाए विडव्वइ, विडव्व

इत्ता चालरंगिणीए सेणाए पराणीएणं सद्धिसंगामं संगामेइ, सेणं जीवे अत्थ कामए, रज्जकामए, भोग कामए, कामकामए, अत्थकंखिए, रज्जकंखिए, भोगकंखिए, काम

वह गर्भस्थ जीव ऐसी बात सुने की परचक्री की सेना आई है और अपन को दुःखी करेगी. ऐसी बात सुनकर, अवधारकर जीव के प्रदंश गर्भ की बाहिर निकालें और वैक्रेय ममुदयात से तथाविध पुद्गलों को ग्रहण कर-हाथी, घोड़े, रथ, पायदल वगैरह सेना की विकुर्णणी करे, विकुर्णणा करके परचक्री की सेना साथ संग्राम करे. द्रव्य की अभिलाषावाला राज्यकुट्टि की अभिलाषावाला, गंधरम स्पर्शरूप भोग की अभिलाषावाला, शब्द रूपादि कामकी अभिलाषावाला धन की इच्छा से आसक्त बनाहुवा, राज्य, भोग, व कामकी इच्छा से आसक्त बना हुवा. धन, राज्य, भोग व काम का पियासु, [अतृप्त,] तन्मय

पंचमोऽङ्ग विवाह पञ्चाङ्ग (भगवती)

चा० चतुरंगी से० सैन्य वि० विकुर्वे वि० विकुर्व कर चा० चतुरंगी से० सैन्य से प० शत्रु सैन्य की संज्ञा प
सं० संग्राम सं० संग्राम करे से० वह जी० जीव अ० अर्थ का इच्छक र० राज्य का इच्छक भो० भोग
की इच्छा वाला का० काम की इच्छा वाला अ० अर्थ की कांक्षा वाला र० राज्य की कांक्षा वाला भो० भोग की
कांक्षा वाला का० काम की कांक्षा वाला अ० अर्थ पिपासु र० राज्य पिपासु भो० भोग पिपासु का० काम पिपासु
स० उदरमें चित्त वाला प० मन वाला ले० लेख्या वाला अ० अध्ययनसाय वाला ति० तीव्र आरंभ वाला अ०

चतुर्भद्र, वेदाविव्यय समुग्धाएणं समोहणइ, समोहणइ चान्तरंगिणीए सेणाए विउज्जइ, विउज्ज
इत्ता चान्तरंगिणीए सेणाए पराणीएणं सद्धिसंगामं संगामेइ, सेणं जीवे अत्थ कामए,
रज्जकामए, भोग कामए, कामकामए, अत्थकंखिए, रज्जकंखिए, भोगकंखिए, काम

वह गर्भस्य जीव ऐसी धात सुने की परचक्रो की सेना आई है और अपन को दुःखी करेगी. ऐसी बात
सुनकर, अत्रधारकर जीव के प्रदंश गर्भ की गाहिर नीकालं और वैकेय ममुद्घात से तथाविध पुढलों
को ग्रहण करे. हाथी, घोड़े, रथ, पायदल यौगंड सेना की विकुर्वणा करे, विकुर्वणा करके परचक्रो की
सेना साथ संग्राम करे. इन्ध की अभिलाषावाला राज्यकृद्धि की अभिलाषावाला, गंधरम स्पर्शरूप भोग
की अभिलाषावाला, शब्द रूपादि कामकी अभिलाषावाला धन की इच्छा से आसक्त बनाहुवा, राज्य,
भोग, व कामकी इच्छा से आसक्त बना हुवा. धन, राज्य, भोग व काम का पिपासु, [अतुष्ट,] तन्मय

पंचमोऽपि विवाहः पण्णात्ति (भगवती) सूत्र

कैसे गो० गौतम स० संज्ञी पं० पंचेन्द्रिय स० सर्व प० पर्याप्ति से प० पर्याप्त त० तथारूप स० श्रमण
मा० माहण की अं० पास ए० एक आ० आर्य ध० धर्म का सु० अच्छा वचन सो० सुनकर नि० अत्र-
धारकर त० पीछे भ० होवे सं० वैराग्य से उ० उत्पन्न स० श्रद्धा ति० तीव्र ध० धर्मःतुराग र० रक्त
जी० जीव ध० धर्म को कामी पु० पुन्य का कामी स० स्वर्ग का कामी मो० मोक्षका कामी ध० धर्म
वज्रैजा, अर्थेगार्ह ए णो उववज्रैजा । सेकेणट्टेणं ? गोयसा ! सेणं सण्णी पंचिदि ए
सत्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्त ए तहास्त्वस्स ससणरसत्ता, माहणरसत्ता अति ए एगामवि
आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा, निसम्म तओ भवइ संवेगजायसइ तिच्चधम्मणुराग-
रत्ते, सेणं जीवे धम्मकामए, पुण्णकामए, ससगकामए; भोक्खकामए; धम्मकंखिए,

कितनेक जीव देवलोक में नहीं उत्पन्न होते हैं. अहो भगवन् ! किस कारण से कितनेक जीव देवलोक में
उत्पन्न होते हैं और कितनेक जीव देवलोक में नहीं उत्पन्न होते हैं ? अहो गौतम ! कोई जीव धर्मिष्ठ
स्त्री की कुक्षि में संज्ञी पंचेन्द्रियपत्ने उत्पन्न हुआ. वहां पूर्ण पर्याय वांछकर पर्याप्त हुवे पीछे तथारूप श्रमण
माहण की पास एकान्त आर्य धार्मिक वचन श्रवण कर, अवधारकर संवेग से धर्मादि में श्रद्धावन्त हुआ न
सोच धर्मानुराग से रक्त वनगाया. कीर वह श्रुत चारित्र रूप धर्म का अभिलषी बनाहुवा, पुण्य का

शब्दार्थ

सूत्र

भाष्यार्थ

सूत्र (भगवती) पंचमोऽध्यायः पञ्चाक्षरः

कैसं गो० गौतम स० संक्षी पं० पंचेन्द्रिय स० सर्व प० पर्याप्तिसि से प० पर्याप्त त० तथारूप स० श्रमण
 मा० माहण की अं० प्राप्त ए० एक आ० आर्ष ध० धर्म का सु० अच्छा वचन सो० सुनकर नि० अत्र
 धारकर त० पीछे भ० ह्ये से० वैराग्य से उ० उत्पन्न स० श्रद्धा ति० तीव्र ध० धर्मानुराग र० रक्त
 जी० जीव ध० धर्म का कामी पु० पुण्य का कामी स० स्वर्ग का कामी मो० मोक्षका कामी ध० धर्म
 वज्जेजा, अस्थेगइए णो उववज्जेजा । सेकेणट्टेणं ? गोयमा ! सेणं सणणी पंचिदिए
 सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए तहास्त्वस्स समणस्सवा, माहणस्सवा अतिए एगमावि
 आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा, निसम्म तओ भवइ संवेगजायसइहे तिव्वधम्मणुरागः
 रत्ते, सेणं जीवे धम्मकामए, पुण्णकामए, सग्गकामए, मोक्खकामए; धम्मकंखिए,
 कितनेक जीव देवलोक में नहीं उत्पन्न होते हैं. अहो भगवन् ! किस कारन से कितनेक जीव देवलोक में
 उत्पन्न होते हैं और कितनेक जीव देवलोक में नहीं उत्पन्न होते हैं ? अहो गौतम ! कोई जीव धार्मिक
 स्त्री की कुक्षि में संक्षी पंचेन्द्रियपते उत्पन्न हुआ. वहां पूर्ण पर्याय बांधकर पर्याप्त हुवे पीछे तथारूप श्रमण
 माहण की प्राप्त एकान्त आर्ष धार्मिक वचन श्रवण कर, अवधारकर संवेग से धर्मादि में श्रद्धावन्त हुआ व
 सिद्ध धर्मानुराग से रक्त वनगाया. फीर वह श्रुत चारित्र रूप धर्म का अभिलाषी बनाहुवा, पुण्य का

सूत्र (भगवती) पंचमोऽध्यायः पञ्चाक्षरः

कैसे गो० गौतम स० संज्ञी पं० पंचेन्द्रिय स० सर्व प० पर्याप्त से प० पर्याप्त त० तथारूप स० श्रमण
मा० माहण की अं० पाम ए० एक आ० आर्य ध० धर्म का सु० अच्छा वचन सो० सुनकर नि० अव-
धारकर त० पीछे भ० होवे सं० वैराग्य से उ० उत्पन्न स० श्रद्धा ति० तीव्र ध० धर्मनुराग र० रक्त
जी० जीव ध० धर्म को कामी पु० पुन्य का कामी मो० स्वर्ग का कामी मो० मोक्षका कामी ध० धर्म

वज्जेजा, अर्थेगइए णो उववज्जेजा । सेकेणट्टेणं ? गोयमा ! सेणं सण्णी पंचिदिए
सव्वाहिं पज्जतीहिं पज्जत्तए तहारुवरस समणस्सवा, माहणस्सवा अंतिए एगमन्नि
आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा, निसम्म तओ भवइ संवेगजायसहेट्ठु तिव्वधम्ममाणुराग-
रत्ते, सेणं जीवे धम्मकामए, पुण्णकामए, सगकामए; मोक्खकामए; धम्मकंखिए,

कितनेक जीव देवलोक में नहीं उत्पन्न होते हैं. अहो भगवन् ! किस कारन भे कितनेक जीव देवलोक में
उत्पन्न होते हैं और कितनेक जीव देवलोक में नहीं उत्पन्न होते हैं ? अहो गौतम ! कोई जीव धर्मिण
श्री को छोड़ दे ही पंचेन्द्रियपने उत्पन्न हुवा. वहां पूर्ण पर्याय बांधकर पर्याप्त हवे पीछे तथारूप श्रमण
गण को सब संवेग से धर्मादि में श्रद्धावन्त हुवा व
अध्यापितर से संवेग रत्ते.

पंचमाह विवाह पण्णत्ति (भगवती) सूत्र

फल जैसे अ० होंवे चि० खडारहे नि० वैठे तु० सोवे० मा० माता सु० सोती होवे सु० सोवे जा० जगती होंवे जा० जगे सु० सुखी होती सु० सुखी होवे दु० दुःखी होती दु० दुःखी होवे हं० हां गो० गौतम जी० जीव ग० गर्भ में ग० गया हुआ जा० यावत् दु० दुःखी होते दु० दुःखी भ० होवे ॥ २१ ॥ प० पसवन का० अवसर में सी० मस्तक से पा० पांचसे आ० आवे स० सीया आ० आवे ति० तिच्छर्त्ति आ० अंबलुज्जवा, अच्छंजवा, चिट्टेज्जवा, निसीएज्जवा, तुयट्टेज्जवा; माऊए सुयमाणीए सुयइ, जागरमाणीए जागरइ, सुहियाए सुहिए भवइ, दुहियाए दुहिए भवइ ? हंता गांयमा ! जीवेणं गळ्भगए समाणे जाव दुहियाए दुहिए भवइ ॥ २१ ॥ अहेणं पसवण काल समयंसि सीसेणवा, पाएहिवा आगच्छइ, सममागच्छइ, तिरिय माग- जीव किस प्रकार गर्भ में रहता है और गर्भ से निकले पीछे करणी के फल किस तरह प्राप्त करता है वह बतलाते हैं. अही भगवन् ! गर्भ में रहा हुआ जीव क्या उचान - छत्राकार रहता है, एक पसली की तरह पडा रहता है, आस्र फल की तरह उत्कट आपनसे रहता है, ऊर्ध्व स्थान वैठा रहता है, खटा होता है, वैठहोता है, शयन करता है, जब उस की मात्रा शयन करती है तब सोता है, माता जगती है तब जागृत होता है, माता सुखी तो वह सुखी रहता है, और माता दुःखी रहनेपर क्या दुःखी रहता है? हां गौतम ! गर्भ में रहनेवाले जीव को उक्त सब क्रियाओं होती हैं. ॥ २१ ॥ अब जब पसवन काल

पण्णत्ति शतकम् भाष्यार्थ

पञ्चमस्क विवाह. पण्णासि (भगवती) सूत्र

फल जैस अ० हंविं चि० लडारहे नि० वैठे तु० सोवे० मा० माता सु० सेती होवे सु० सोवे जा० जगती होवे जा० जगे सु० सुखी होती सु० सुखी होवे दु० दुःखी होती दु० दुःखी होवे हं० हां गो० गौतम जी० जीव ग० गर्भ में ग० गया हुआ जा० यावत् तु० दुःखी होते दु० दुःखी भ० होवे ॥ २१ ॥ प० पसवन का० अवसर में सी० मस्तक से पा० पांचसं आ० आवे स० सीया आ० आवं ति० तिच्छी आ०

अंबलुज्जवा, अच्छेज्जवा, चिट्टेज्जवा, निसीएज्जवा, तुयट्टेज्जवा; माऊए सुयमाणीए सुयइ, जागरमाणीए जागरइ, सुहियाए सुहिए भवइ, दुहियाए दुहिए भवइ ? हंता गायमा ! जीवेणं गम्भाणए समाणे जाव दुहियाए दुहिए भवइ ॥ २१ ॥ अहेणं

पसवण काल समयंसि सीसेणवा, पाएहिंवा आगच्छइ, सममागच्छइ, निरिय माग-

जीव किस प्रकार गर्भ में रहता है और गर्भ से निकलने पीछे करणी के फल किस तरह प्राप्त करता है वह बतलाते हैं. अहो भगवन् ! गर्भ में रहा हुआ जीव क्या उत्तान - छत्राकार रहता है, एक पसली की तरह पडा रहता है, आस्र फल की तरह उत्कट आगनसे रहता है, ऊर्ध्व स्थान वैठा रहता है, सदा होता है, वैठहोता है, शयन करता है, जब उस की माता शयन करती है तब सोता है, माता जगती है तब जागृत होता है, माता सुखी तो वह सुखी रहता है, और माता दुःखी रहनेपर क्या दुःखी रहता है? हां गौतम ! गर्भ में रहनेवाले जीव को उक्त सब क्रियाओं होती हैं. ॥ २१ ॥ अत्र जत्र पसवन्न काल

अ० अनिष्टस्वर, अ० अनादेय वचन वाला प० उत्पन्न भ० होवे व० वर्ण व० वक्ष्य क० कर्म नो० नहीं
 व० बंधुद्वेप० प्रशस्त ने० जानना. जा० यावत् आ० आदेय वचन वाला प० उत्पन्न भ० होवे से० वह
 ए० ऐसे भ० भगवन् ॥ १ ॥ ७ ॥

x

अमंगुणसरे, अमणामसरे, अणाएज्जवयणं, पच्चायाएवि भवइ, वण्णवज्झाणिय, से
 कम्माइं नोवद्धाइं पसत्थं पेयव्वं जाव अंदिज्जवयणं पच्चायाएवि भवइ ॥ सेवं भंते भंतेत्ति
 पढमे सए सत्तमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ १ ॥ ७ ॥

*

*

रस, स्पर्श होवे. उन को सब संयोग अनिष्ट, अक्रान्त, अनिय, अशुभ, अमनोद्ग, अमणाम होवे. जैसे ही
 वह जीव हीनस्वर, दीनस्वर, अनिष्टस्वर, अप्रियस्वर, अशुभस्वर, अमनोद्गस्वर, अमनामस्वर व अनादेय
 वचनवाला होवे अर्थात् उन का वचन किसी को माननीय होवे नहीं. यह अशुभ कर्म का फलकहा और
 जिनोंने अशुभ कर्म नहीं किये हैं और धर्माचरण से शुभ कर्म की उपार्जना की है उन को शुभ फलका
 उदय होते वेशुभ वर्ण, गंध, रस व स्पर्शवन्त होवे. जैसे ही प्रियकारि, शुभ मनोद्ग व सब मान्य करे ऐसे
 अच्छे संयोग मीले. सब में माननीय पूजनीय होवे और सब प्रकार के सुख भोगवे. यह सब पुण्य फल
 जानना. अहो भगवन् ! आपने जो प्रतिपादन किया है वह सत्य है. यह पहिला शतक का सातवा
 उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ १ ॥ ७ ॥

x

x

पंचमानं विवाह पञ्चाङ्गि (भगवती) सूत्र

अ० अनिष्टस्वर, अ० अनादय वचन वाला प० उत्पन्न भ० होवे व० वर्ण व० वक्ष्य क० कर्म नो० नहीं
 प० वेषदूकें प० प्रकास्व ने० जानना. जा० यावत् आ० आदय वचन वाला प० उत्पन्न भ० होवे से० वह
 ए० ऐसे भ० भगवत् ॥ १ ॥ ७ ॥

अंमणुष्णसरे, अमणामस्सरे, अणाएज्जवयणं, पच्चायाएवि भवइ, वण्णवड्झाणिय, से
 कम्मइं नोवड्झइं पस्सथं णेयड्वं जाव आदेज्जवयणं पच्चायाएवि भवइ ॥ सेवं भंते भंतेसि
 पट्ठमे सए सत्तमो उद्दसो सम्मत्तो ॥ १ ॥ ७ ॥

रस, स्पर्श होते. उन को सब संयोग अनिष्ट, अकान्त, अनिय, अद्रुम, अमनोज्ञ, अंमणाम होवे. जैसे ही
 वह जीव क्षिनस्वर, दीनस्वर, अनिष्टस्वर, अप्रियस्वर, अशुभस्वर, अमनोज्ञस्वर, अमनामस्वर व अनादय
 वचनवाला होवे अर्थात् उन का वचन किसी को माननीय होवे नहीं. यह अशुभ कर्म का फलकहा और
 जिनोंने अद्रुम कर्म नहीं किये हैं और धर्माचरण से शुभ कर्म की उपार्जना की है उन को शुभ फलका
 उदय होते वेशुभ वर्ण, गंध, रस व स्पर्शवन्त होवे. जैसे ही प्रियकारि, शुभ मनोज्ञ व सब मान्य करे ऐसे
 अच्छे संयोग मिले. सब में माननीय पूजनीय होवे और सब प्रकार के सुख भोगवे. यह सब पुण्य फल
 जानना. अहो भगवन् ! आपने जो प्रतिपादन किया है वह सत्य है. यह पहिला श्लोक का सातवा
 उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ १ ॥ ७ ॥

अ० अनिष्टस्वर, अ० अनादेय वचन वाला प० उत्पन्न भ० होवे व० वर्ण व० वक्ष्य क० कर्म नो० नहीं
 व० बंधुके प० प्रशस्त ने० जानना. जा० यावत् आ० आदेय वचन वाला प० उत्पन्न भ० होवे से० वह
 ए० ऐसे भ० भगवन् ॥ १ ॥ ७ ॥

x

x

अमंगुणसरे, अमणामरसरे, अणाएज्जवयणं, पच्चायाएवि भवइ, वण्णवज्झाणिय, से
 कम्माइं नोवद्धाइं पसत्थं पेयव्वं जात्र आदेज्जवयणं पच्चायाएवि भवइ ॥ सेव्वं भंते भंतेत्ति
 पढमे सए सत्तमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ १ ॥ ७ ॥

*

*

रस, स्पर्श होवे. उन को सब संयोग अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय, अशुभ, अमनोज्ञ, अमणाम होवे. जैसे ही
 वह जीव हीनस्वर, दीनस्वर, अनिष्टस्वर, अप्रियस्वर, अशुभस्वर, अमनोज्ञस्वर, अमनामस्वर व अनादेय
 वचनवाला होवे अर्थात् उन का वचन किसी को माननीय होवे नहीं. यह अशुभ कर्म का फलकहा और
 जिनोंने अशुभ कर्म नहीं किये हैं और धर्माचरण से शुभ कर्म की उपार्जना की है उन को शुभ फलका
 उदय होते वेशुभ वर्ण, गंध, रस व स्पर्शवन्त होवे. जैसे ही प्रियकारि, शुभ मनोज्ञ व सब मान्य करे ऐसे
 अच्छे संयोग मीले. सब में माननीय पूजनीय होवे और सब प्रकार के सुख भोगवे. यह सब पुण्य फल
 जानना. अहो भगवन् ! आपने जो प्रतिपादन किया है वह सत्य है. यह पहिला शतक का सातवा
 उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ १ ॥ ७ ॥

x

x

सूत्र (भगवतो) पण्डितः पण्डितः

अ० अनिष्टस्वर, अ० अनादेय वचन बाला प० उत्पन्न भ० हेवे व० वर्णं व० वध्य क० कर्म नो० नहीं
 ष० वैधेदुक् प० प्रकृत नो० जानना. जा० यावत् आ० आदेय वचन बाला प० उत्पन्न भ० हेवे से० वह
 ए० हेसे भं० भगवन् ॥ १ ॥ ७ ॥

x

x

अमंणुणसरे, अमणामसरे, अणाएज्वयणं, पच्चायाएवि भवइ, वण्णवज्झाणिय, से
 कम्मइं नीवइइं पसत्थं णेयव्वं जाव आदेज्वयणं पच्चायाएवि भवइ ॥ सेवं भंति भंतेचि
 पट्ठसे सए सत्तमो उद्वंसी सम्मत्तो ॥ १ ॥ ७ ॥

*

*

रस, स्वर्श हेवे. उन को सब संयोग अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय, अशुभ, अमनोह, अंमणाम हेवे. वैसे ही
 वह जीव दिनस्वर, दीनस्वर, अनिष्टस्वर, अप्रियस्वर, अशुभस्वर, अमनोहस्वर, अमनामस्वर व अनादेय
 वचनबाला हेवे अर्थात् उन का वचन किसी को माननीय हेवे नहीं. यह अशुभ कर्म का फलकथा और
 जिनोंने अशुभ कर्म नहीं किये हैं और धर्माचरण से शुभ कर्म की उपाजना की है उन को शुभ फलका
 उदय हेवे वैशुभ वर्ण, गंध, रस व स्वर्शवन्त हेवे. वैसे ही प्रियकारि, शुभ मनोह व सब मान्य करे ऐसे
 अच्छे संयोग मिले. सब में माननीय पूजनीय हेवे और सब प्रकार के सुख योग्य. यह सब पुण्य फल
 जानना. अहो भगवन् ! आपने जो प्रतिपादन किया है वह सत्य है. यह पहिला श्रवक का सातवा
 उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ १ ॥ ७ ॥

x

x

ने० नारकी का आ० आयुष्य प० चिंते नि० तिर्यच म० मनुष्य दे० देव आ० आयुष्य प० बांधि ने० नारकी का आ० आयुष्य कि० करक ने० नरक में उ० उत्पन्न होवे ति० तिर्यच म० मनुष्य दे० देव आ० आयुष्य कि० करके दे० देवशोक में उत्पन्न होवे ॥ १ ॥ ए० एकान्त पं० पंडित भं० भगवत् म० मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधि जा० यावत् दे० देव का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित म० मनुष्य आ० आयुष्य

लोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत बालिणं मणुस्से नेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरिमणु-
देवाउयं पि पकरेइ, । नेरइयाउयं पि किच्चा नेरइएसु उववज्जइ; तिरिमणुदेवाउयं कि-
च्चा देवलोएसु उववज्जइ ॥ १ ॥ एगंत पंडिएणं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेइ,
जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत पंडिएणं मणुस्से आउ-

के आयुष्य का बंध कर के देवलोक में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त बाल मनुष्य नारकी, तिर्यच मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है वैसे ही नारकी, तिर्यच मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करे नारकी, तिर्यच, मनुष्य व देवता में उत्पन्न होता है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! एकान्त पंडित मनुष्य क्या नरक, तिर्यच, मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है ? और नरक का आयुष्य बांध कर नरक में उत्पन्न होता है यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय (भवगती) ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे तिन० तिर्यंच म० मनुष्य दे० दूष आ० आयुष्य प० बांधे ने० नारकी का आ० आयुष्य कि० करके ने० नरक में उ० उत्पन्न होते ति० तिर्यंच म० मनुष्य दे० देव आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उत्पन्न होते ॥ १ ॥ ए० एकान्त पं० पंडित भं० भगवन् म० मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देव का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होते गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित म० मनुष्य आ० आयुष्य लोएसु उचवज्जइ ? गोयमा ! एगंत वालिणं मणुस्से नेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरिमणु- देवाउयं पि पकरेइ, । नेरइयाउयं पि किच्चा नेरइएसु उचवज्जइ, तिरिमणुदेवाउयं कि- च्चा देवलोएसु उचवज्जइ ॥ १ ॥ एगंत पंडिएणं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उचवज्जइ ? गोयमा ! एगंत पंडिएणं मणुस्से आउ-

के आयुष्य का बंध कर के देवलोक में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त बाल मनुष्य नारकी, तिर्यंच मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है वैसे ही नारकी, तिर्यंच मनुष्य व देवता के आयुष्य बंध करे नारकी, तिर्यंच, मनुष्य व देवता में उत्पन्न होता है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! एकान्त पंडित मनुष्य क्या नरक, तिर्यंच, मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है ? और नरक का जानुष्य बांध कर नरक में उत्पन्न होता है यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त

ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे नि० तिर्यच म० मनुष्य दे० देष आ० आयुष्य प० बांधे ने० नारकी का आ० आयुष्य कि० करक ने० रक में उ० उत्पन्न, हविं ति० तिर्यच म० मनुष्य दे० देष आ० आयुष्य कि० करके दे० दे० शोक में उत्पन्न हविं ॥ १ ॥ ए० एकान्त पं० पंडित भं० भगवन् म० मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देव का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न हविं गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित म० मनुष्य आ० आयुष्य

लोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत बालेणं मणुस्से नेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरिमणु-
देवाउयंयि पकरेइ, । नेरइयाउयंयि किच्चा नेरइएसु उववज्जइ, तिरिमणुदेवाउयं कि-
च्चा देवलोएसु उववज्जइ ॥ १ ॥ एगंत पंडिएणं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेइ,
जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत पंडिएणं मणुस्से आउ-

के आयुष्य का बंध कर के देवलोक में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त बाल मनुष्य नारकी, तिर्यच मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है वैसे ही नारकी, तिर्यच मनुष्य व देवता के आयुष्य बंध करे नारकी, तिर्यच, मनुष्य व देवता में उत्पन्न होता है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! एकान्त पंडित मनुष्य क्या नरक, तिर्यच, मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है ? और नरक का आयुष्य बांध कर नरक में उत्पन्न होता है यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त

ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे ति० तिर्यच म० मनुष्य दे० देव आ० आयुष्य प० बांधे ने०

नारकी का आ० आयुष्य कि० करके ने० नरक में उ० उत्पन्नु होवे ति० तिर्यच म० मनुष्य दे० देव

आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उत्पन्न होवे ॥ १ ॥ ए० एकान्त पं० पंडित मं० भगवन् म०

मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देव का आ० आयुष्य कि०

कारके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित म० मनुष्य आ० आयुष्य

लोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत बालेणं मणुस्से नेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरिमणु-

देवाउयं पि पकरेइ, । नेरइयाउयं पि किच्चा नेरइएसु उववज्जइ, तिरिमणुदेवाउयं कि-

च्चा देवलोएसु उववज्जइ ॥ १ ॥ एगंत पंडिएणं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेइ,

जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत पंडिएणं मणुस्से आउ-

के आयुष्य का बंध कर के देवलोक में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त बाल मनुष्य नारकी, तिर्यच

मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है वैसे ही नारकी, तिर्यच मनुष्य व देवता के आयुष्य बंध

करे नारकी, तिर्यच, मनुष्य व देवता में उत्पन्न होता है. ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! एकान्त पंडित मनुष्य

क्या नरक, तिर्यच, मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है ? और नरक का आहुष्य बांध कर नरक में

उत्पन्न होता है यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त

पंचमंगल विवाह पण्यत्ति (भवगती)

ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे नि० तिर्यच म० मनुष्य दे० देव आ० आयुष्य प० बांधे ने० नारकी का आ० आयुष्य कि० करक ने० नरक में उ० उत्पन्न, होंवे ति० तिर्यच म० मनुष्य दे० देव आ० आयुष्य कि० करके दे० देव लोक में उत्पन्न होंवे ॥ १ ॥ ए० एकान्त पं० पंडित भं० भगवन् म० मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देव का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होंवे गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित म० मनुष्य आ० आयुष्य

लोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत वालिणं मणुस्से नेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरिमणु-
देवाउयंपि पकरेइ, । नेरइयाउयंपि किच्चा नेरइएसु उववज्जइ, तिरिमणुदेवाउयं कि-
च्चा देवलोएसु उववज्जइ ॥ १ ॥ एगंत पंडिएणं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेइ,
जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत पंडिएणं मणुस्से आउ-

के आयुष्य का बंध कर के देवलोक में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त वाल मनुष्य नारकी, तिर्यच मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है जैसे ही नारकी, तिर्यच मनुष्य व देवता के आयुष्य बंध करे नारकी, तिर्यच, मनुष्य व देवता में उत्पन्न होता है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! एकान्त पंडित मनुष्य क्या नरक, तिर्यच, मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है ? और नरक का आयुष्य बांध कर नरक में उत्पन्न होता है यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त

पंचमंग विवाह पण्यति (भवती)

ने० नारकीं का आ० आयुष्य प० गाय त० तपन म० मनुष्य दे० देव आ० आयुष्य प० वांघि ने० नारकी का आ० आयुष्य कि० करक ने० नरक में उ० उत्पन्न होवे ति० तिर्यंच म० मनुष्य दे० देव आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उत्पन्न होवे ॥ १ ॥ ए० एकान्त पं० पंडित मं० भगवन् म० मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य प० वांघि जा० यावत् दे० देव का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित म० मनुष्य आ० आयुष्य लोएसु उचवज्जइ ? गोयमा ! एगंत बाल्लेणं मणुस्से नेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरिमणु- देवाउयं पि पकरेइ, । नेरइयाउयं पि किच्चा नेरइएसु उचवज्जइ, तिरिमणुदेवाउयं कि- च्चा देवल्लोएसु उचवज्जइ ॥ १ ॥ एगंत पंडिणं भंति ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवल्लोएसु उचवज्जइ ? गोयमा ! एगंत पंडिणं मणुस्से आउ- के आयुष्य का बंध कर के देवलोक में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त बाल मनुष्य नारकी, तिर्यंच मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है वैसे ही नारकी, तिर्यंच मनुष्य व देवता के आयुष्य बंध कर नारकी, तिर्यंच, मनुष्य व देवता में उत्पन्न होता है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! एकान्त पंडित मनुष्य क्या नरक, तिर्यंच, मनुष्य व देवता के आयुष्य का बंध करता है ? और नरक का आयुष्य बांध कर नरक में उत्पन्न होता है यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होता है ? अहो गौतम ! एकान्त

आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होंगे गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित म० मनुष्य को के० मात्र दो० दोगति प० कही है अं० अंतर्क्रिया क० कल्पोत्पन्न से० वह ते० इस लिये जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होंगे ॥ २ ॥ वा० बाल पंडित भं० भगवन् म० मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवता में उ० उत्पन्न होंगे गो० गौतम जो० नहीं ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवता में उ० उत्पन्न होंगे किरिया चंद्र, कपोववाचिया चंद्र; से तेणट्टेणं गोयमा ! जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ॥ २ ॥ बाल पंडिणं भंते ! मणूसे किं नेरइयाउयं पकरइ, जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! जो णेरइयाउयं पकरइ जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ । सेकेणट्टेणं जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! बाल-
 वैमानिक देवलोकमें उत्पन्न होंगे ऐसी दोगति कही. इसलिये अहो गौतम ! एकान्त पंडित मनुष्य देवगति के आयुष्य का पंधकर देवगति में उत्पन्न होता है. ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! बाल पंडित (श्रावक) मनुष्य क्या नारकी का आयुष्य यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होंगे ? अहो गौतम ! बाल पंडित मनुष्य नारकी का आयुष्य बांधे नहीं, तिर्यंच का आयुष्य बांधे नहीं, मनुष्य का आयुष्य

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥

आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होते गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित प० मनुष्य को क्र० मात्र दो० दोगति प० कही है अं० अंतर्क्रिया क० कल्पोत्पन्न से० वह ते० इस लिये जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होते ॥ २ ॥ वा० बाल पंडित यं० भगवन् म० मनुष्य कि० कया ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवता में उ० उत्पन्न होते गो० गौतम णो० नहीं ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधे जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवता में उ० उत्पन्न होते किरिया चैव, कर्पोत्रवात्तिया चैथ; से तेणट्टेणं गोयमा ! जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ॥ २ ॥ बाल पंडिणुणं भंते ! मणुसे किं नेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेइ जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! बाल-वैमानिक देवलोकमें उत्पन्न होते ऐसी दोगति कही. इसलिये अहो गौतम ! एकान्त पंडित मनुष्य देवगति के आयुष्य का पंथकर देवगति में उत्पन्न होता है. ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! बाल पंडित (श्रावक) मनुष्य कया नारकी का आयुष्य यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होते ? अहो गौतम ! बाल पंडित मनुष्य नारकी का आयुष्य बांधे नहीं, तिर्यंच का आयुष्य बांधे नहीं, मनुष्य का आयुष्य

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥

सावार्थ

सूत्र

आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे गो० गौतम ए० एकान्त पं० पंडित म० मनुष्य को के० मात्र दो० दोगति प० कही है अं० अंतर्क्रिया क० कल्पोत्पन्न से० वह ते० इस लिये जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे ॥ २ ॥ बा० बाल पंडित मं० भगवन् म० मनुष्य कि० क्या ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधि जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवता में उ० उत्पन्न होवे गो० गौतम णो० नहीं ने० नारकी का आ० आयुष्य प० बांधि जा० यावत् दे० देवता का आ० आयुष्य कि० करके दे० देवता में उ० उत्पन्न होवे किरिया चैव, कर्णोत्पत्तिया चेश्र; से तेणट्टेणं गोयमा ! जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ॥ २ ॥ बाल पंडिणं भंते ! मणूसे किं नेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेइ जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ । संकेणट्टेणं जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! बाल-

धैमानिक देवलोकमें उत्पन्न होवे ऐसी दोगति कही. इसलिये अहो गौतम ! एकान्त पंडित मनुष्य देवगति के आयुष्य का बांधकर देवगति में उत्पन्न होता है. ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! बाल पंडित (श्रावक) मनुष्य क्या नारकी का आयुष्य यावत् देवता का आयुष्य बांधकर देवता में उत्पन्न होवे ? अहो गौतम ! बाल पंडित मनुष्य नारकी का आयुष्य बांधि नहीं, तिर्यंच का आयुष्य बांधि

मारने से ता० तव से० उस पु० पुरुष को का० कायिकी अ० अधिकरण की प० मद्रूपिकी प० परित्तापनिकी च० चार कि० क्रिया पु० स्पर्शी जे० जी भ० भव्य उ० वनने से वं० ध्वन करने से गा० मारने से ता० वहांलगा से० उस पु० पुरुष को का० कायिकी जा० यावत् पा० माणातिपातिकी पं० पांच कि० क्रिया पु० स्पर्शी से० वह ते० इसलिये जा० यावत् पं० पांच कि० क्रिया ॥ ४ ॥ पु० पुरुष क० कच्छ जा० यावत् व० वन वि० विषम त० तूण ऊ० ऊंचा करके अ० अग्रिकाय से पुरिसे काइयाए अहिगरणयाए, पाओसियाए, परियात्राणियाए, चउहिं किरियाहिं पुट्टे । जे भविए उडवणयाएवि बंधणयाएवि, मारणयाएवि तावंचणंसे पुरिसे काइयाए जाव पाणाइवाय किरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्टे । से तेणहुणं जाव पंचकिरिए ॥ ४ ॥ पुरिसेणं भंते ! कच्छंसिवा, जाव वणाविदुभांसिवा, तणाइं ऊसंविच २ अ-

जितने कालं पर्यंत कूटपाश घनने का व मृग बांधने का भाव है परंतु मारनेका भाव नहीं है उनको उतने कालतक चार क्रिया लगती हैं. उक्त तीनों में उक्त मृग को परित्ताप दुःख दिया सो परित्तापनिकी क्रिया बढ़ी. जिसको जितने कालतक कूटपाश घनने का, बांधने का व मारने का भाव है उसको उतने कालतक पांच क्रियाओं लगती हैं. कायिकी, अधिकरणकी, मद्रूपिकी, परित्तापनिकी व माणातिपातिकी. इसी कारन से अहो गौतम ! उक्त पुरुष को वमचित् तीन, वमचित् चार व वमचित् पांच क्रियाओं लगती हैं ॥ ४ ॥

शुद्धशक्तशास्त्राचार्यस्य सुवर्देननयनी कालाप्रवादनी

जाता है जा० यावत् से० बह पु० पुरुषैर से पु० स्पर्शा से० बह गो० गीतम क० करते को क० क्रिया
सं० सांथते को सं० सांथां नि० स्वीचते को नि० स्वीचा नि० निकलते को नि० निकला व० कहना
है० हां भं० भगवन् क० करते को क्रिया जा० यात् नि० क्रिया जे० जो मि० मृगको मा० हने से०
बह मि० मृगैर से पु० स्पर्शे जे० जो पु० पुरुष को मा० हने से० व० पु० पुरुषैर से पु० स्पर्शे अं०
जाव से पुरिसवेरेणं पुष्टे । सेणूणं गायमा ! कज्जमाणे कडे, संघजमाणे रंधिए, नि-

व्यत्तिजमाणे निव्वत्तिए, निसिज्जमाणे निसिट्ठित्ति वत्तव्वंसिया । हंता भगवं ! क-
जमाणे कडे जाव निसट्ठित्ति वत्तव्वंसिया । से तेणट्ठेणं गायमा ! जे मियंमारिइ से
मियवेरेणं पुष्टे, जे पुरिसं मारिइ से पुरिसवेरेणं पुष्टे. अतो छण्हं मासाणं मरिइ-

मृग को मारा उस को मृग का वैर हुआ. अओ भगवन् ! यह अर्थ किस तरहने है ? अओ गीतम ! 'कज्ज-
माणे कडे' करते हुवे को क्रिया अर्थात् धनुष्य बाण करने लगा सो क्रिया, 'संघिज्जमाणे संघिए' धनुष्य
बाण सांथनेलगा सो मंथा, 'निव्वत्तिज्जमाणे निव्वत्तिए' धनुष्य स्वीचने लगा सो स्वीचा व 'निसिज्जमाणे
निसिट्ठे' धनुष्य में से बाण निकळवेला सो निकळ वेला कथा ना सफता है. हां भगवन् ! करते को
क्रिया हुआ यावत् निकलते को निकळा हुआ कहा जा सफता है. इसी से अओ गीतम ! जो मृग मारता है
वह मृग का वैर से स्पर्शता है अर्थात् उस मृग मारनेवाले को मृग का वैर लगता है और पुरुष

शुद्धशक्तशास्त्राचार्यस्य सुवर्देननयनी कालाप्रवादनी

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

अंदर में छ० छमास की म० मरे का० कायिकी जा० यावत् पं० पांचक्रिया पु० स्पर्श वा० बाहिर छ०
 छमास की म० मरे च० चागक्रिया पु० स्पर्श ॥ ७ ॥ पुं० पुरुष भं० भावंत्र पु० पुरुष की स० भालासे
 मं० नांवे मः सतः रे पा० हस्त मे अ० अस्तिमे सी० शीर्षे छिं० छेदे त० तव से० उस पु० पुरुष
 को क० कितनी कि० क्रिया गो० गौतम जा० जब से० वह पु० पुरुष तं० उस पु० पुरुष को सः

काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्टे : बाहिं छण्हं मासाणं मरइ, काइयाए जाव पा-
 रियात्रणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्टे ॥ ७ ॥ पुरिसेणं भंते ! पुरिसं सत्तीए समभि-
 संधेजा सयपणिणावा से अत्तिणा सीसं छिंदेजा । तओणं भंते ! से पुरिसे कइकि-

मारनेवाले को पुरुष का धैर लगता है. वह मृग यदि छ मांस की अंदर मरजावे तो घातक पुरुष को पांच
 क्रियाओं लगती हैं क्यों की छ मासतक मृग को प्रहार हेतुक मरण होता है. छ मास पीछे यदि वह मृग
 मरजावे तो प्राणतिपातिकी क्रिया छोडकर अन्य चार क्रियाओं लगनी हैं * ॥ ७ ॥ अहो भंगवन् !
 कोई पुरुष शक्ति भाकी से, अथवा अपने हस्त में रहा हुना खड्ग से किनी पुरुष का शिरच्छेदन करे तब

यहांपर व्याखारकी अर्थशक्ति प्राणतिपातिकी क्रिया मात्र व्यपदेश इतनेको कहाँ है. अन्यथा जब
 प्रहारहेतुक मरण होने उस समय उस वचकको कायिकी यावत् प्राणतिपातिकी पांच क्रिया लगती हैं.

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीदेवसहायजी बालाप्रसादजी *

शक्तिमें स० साथे स० स्वतः के पा० हस्त से अ० अग्निसे सी० शीर्ष छि० छेदें ता० तत्र से० उस
 पु० पुरुष को का० कायिकी जा० यावत् पा० प्राणतिपातिकी पं० पांच कि० क्रिया पु० स्पष्ट आ०
 नजदीक व० बंध करने वाला अ० आकांक्षा रहित पु० पुरुषवैर से पु० स्पर्शा ॥ ८ ॥ दो० दो भं० भगवन्
 पु० पुरुष स० सरिले स० सरिली त्वचावाले स० सरिली बयवाले स० सरिले भं० भंडोपकरणवाले
 अ० अन्योन्य स० साथ भं० संग्राम सं० करे त० तहां ए० एक पु० पुरुष प० जीते ए० एक पु० पुरुष
 रिए ? गोयमा ! जावंचणं से पुरिसे तं पुरिसं सत्तीए समभिसंधेइ सयपाणिणावा से
 असिणा सीसं छिदइ तावंचणं से पुरिसे काइयाए जाव पाणाइवाए पंचहिंकिरियाहि
 पुट्टे । आसण बहएणय अणवकंखवत्तीएणं पुरिसदेरेणं पुट्टे ॥ ८ ॥ दो भंते !
 पुरिसा सरिसया, सरित्तया, सरिसव्वया, सरिसभंडमत्तोवगरणा अणमण्णेणं सद्धिं
 संगमं संगामेइ, तत्थणं एगे पुरिसे पराइणइ, एगे पुरिसे पराइजइ, से कहमेयं भंते !
 अहो भगवन् ! उन पुरुष को कितनी क्रियाओं लगती हैं ? अहो गौतम ! जितने कालतक वह पुरुष किसी
 अन्य पुरुष का शक्ति या खड्गसे शीर्ष का छेदन करता है उतनाकाल तक उस पुरुष को कायिकीआदि
 पांच क्रियाओं लगनी हैं. आसन्न वयक पाप की निवृत्ति के लिये निरपेक्ष वृत्ति से वैर का बंधन करता
 है. ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! शरीर के प्रमाण में व कञ्चलता में सरिले, सरिली बयवाले, सरिले भंडोप

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

शक्तिमे स० साथे स० स्वतः के पा० हस्त से अ० अमिसे सी० शीर्ष छि० छेडे ता० तत्र से० उस
 पु० पुरुष को का० कायिकी जा० यावत् पा० प्राणातिपातिकी पं० पांच क्रि० क्रिया पु० स्पर्श आ०
 नजदीक व० वध करने वाला अ० आकांक्षा रहित पु० पुरुषैवर से पु० स्पर्शा ॥ ८ ॥ दो० दो भं० भगवन्
 पु० पुरुष स० सरिखे स० सरिखी त्वचावाले स० सरिखी वयवाले स० सरिखे भं० भंडोपकरणवाले
 अ० अन्योन्य स० साथ सं० संग्राम सं० करे त० तहां ए० एक पु० पुरुष प० जीते ए० एक पु० पुरुष
 रिष्ट ? गोयमा ! जावंचणं से पुरिसे तं पुरिसं सत्तीए समभिसंधेइ सयपाणिणावा से
 असिणा सीसं छिदइ तावंचणं से पुरिसे काइयाए जाव पाणाइवाए पंचाहिकिरियाहि
 पुट्टे ! आसण वहेणय अणवकंखवत्तीएणं पुरिसत्तेरेणं पुट्टे ॥ ८ ॥ दो भंते !
 पुरिसा सरिसया, सरित्तया, सरिसव्वया, सरिसभंडमत्तोवगरणा अणमण्णेणं सद्धिं
 संगामं संगामेइ, तत्थणं एगे पुरिसे पराइणइ, एगे पुरिसे पराइजइ, से कहमेयं भंते !
 अहो भगवन् ! उन पुरुष को कितनी क्रियाओं लगती हैं ? अहो गौतम ! जितने कालतक वह पुरुष किसी
 अन्य पुरुष का शक्ति या स्वप्नसे शीर्ष का छेदन करता है उतनाकाल तक उस पुरुष को कायिकीआदि
 पांच क्रियाओं लगती हैं. आसन्न वयक पाप की निवृत्ति के लिये निरपेक्ष वृत्ति से वैर का बंधन करता
 है. ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! शरीर के प्रमाण में व कज्जलता में सरिखे, सरिखी वयवाले, सरिखे भंडोप

शक्तिमे स० साथे स० स्वतः के पा० हस्त से अ० अमिसे सी० शीर्ष छि० छेडे ता० तत्र से० उस
 पु० पुरुष को का० कायिकी जा० यावत् पा० प्राणातिपातिकी पं० पांच क्रि० क्रिया पु० स्पर्श आ०
 नजदीक व० वध करने वाला अ० आकांक्षा रहित पु० पुरुषैवर से पु० स्पर्शा ॥ ८ ॥ दो० दो भं० भगवन्
 पु० पुरुष स० सरिखे स० सरिखी त्वचावाले स० सरिखी वयवाले स० सरिखे भं० भंडोपकरणवाले
 अ० अन्योन्य स० साथ सं० संग्राम सं० करे त० तहां ए० एक पु० पुरुष प० जीते ए० एक पु० पुरुष

शब्दार्थ

सूत्र

र्थ

ते० वे दु० दोप्रकार के से० निश्चल आत्मा वाले अ० निश्चल आत्मा रहित त० तहां जे० जो से० शैलेशी युक्त ते० वे ल० लब्धिवीर्य से स० सवीर्य क० करणवीर्य से अ० अवीर्य त० तहां जे० जो अ० अशैलेशीयुक्त ते० वे ल० लब्धिवीर्य ने स० सवीर्य क० करणवीर्य से स० सवीर्य अ० अवीर्य से०

तत्थणं जे ते अंसेसार समावणगा तेणं सिद्धा, सिद्धाणं अवीरिया तत्थणं जे ते संसार समावणगा ते दुविहा पणचा तंजहा सेलेसि पडिवणगाय, असेलेसि पडिवणगाय । तत्थणं जे ते सेलेसि पडिवणगा तेणं लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं अवीरिया । तत्थणं जे ते असेलेसि पडिवणगा, तेणं लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं सवीरियावि अवीरियावि. सेतेणट्टेणं गोयमा

अभाव है इसलिये वे वीर्य रहित हैं और जो संसार समापन्नक हैं उन के दो भेद कहे हैं. १ शैलेशी प्रतिपन्न सो चउदहवे गुणस्थानवर्ती अयोगी केवली के जीव और २ अशैलेशी सो प्रथम गुणस्थान से तेरहवे गुणस्थानवर्ती जीव. उसमें चउदहवे गुणस्थानवर्ती शैलेशी जीव लब्धि वीर्य की अपेक्षा से वीर्य सहित और करण वीर्य की अपेक्षा से वीर्य रहित हैं. प्रथम गुणस्थान से तेरहवे गुणस्थानवर्ती अशैलेशी प्रतिपन्न जीव लब्धि वीर्य से वीर्य सहित हैं और करण वीर्य से वीर्य सहित व वीर्य रहित हैं. इस कारन से अहो

१ वीर्योत्पाय के क्षय से जो वीर्य होता है सो लब्धिवीर्य २ उत्थानादि क्रिया सो करण वीर्य.

ते० वे दु० दोषकार के से० निश्चल आत्मा वाले अ० निश्चल आत्मा रहित त० तहां जे० जो से० शैलेशी युक्त ते० वे ल० लब्धिवीर्य से स० सवीर्य क० करणवीर्य से अ० अवीर्य त० तहां जे० जो अ० अशैलशीयुक्त ते० वे ल० लब्धिवीर्य भे स० सवीर्य क० करणवीर्य से स० सवीर्य अ० अवीर्य से०

तत्थणं जे ते' असंसार समावणगा तेणं सिद्धा, सिद्धानं अवीरिया तत्थणं जे ते संसार समावणगा ते दुविहा पणत्ता तंजहा सेलसि पडिवणगाय, असेलसि पडिवणगाय । तत्थणं जे ते सेलसि पडिवणगा तेणं लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं अवीरिया । तत्थणं जे ते असेलसि पडिवणगा, तेणं लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं सवीरियावि अवीरियावि. सेतेणट्टेणं गोयमा

अभाव है इसलिये वे वीर्य रहित हैं और जो संसार समापन्नक हैं उन के दो भेद कहे हैं. १ शैलेशी प्रतिपन्न सो चउदहवे गुणस्थानवर्ती अयोगी केशली के जीव और २ अशैलेशी सो प्रथम गुणस्थान से तेरहवे गुणस्थानवर्ती जीव. उसमें चउदहवे गुणस्थानवर्ती शैलेशी जीव लब्धि वीर्य की अपेक्षा से वीर्य सहित और करण वीर्य की अपेक्षा से वीर्य रहित हैं. प्रथम गुणस्थान से तेरहवे गुणस्थानवर्ती अशैलेशी प्रतिपन्न जीव लब्धि वीर्य से वीर्य सहित हैं और करण वीर्य से वीर्य रहित हैं. इस कारण से अहो

१ वीर्यतराय के क्षय से जो वीर्य होता है सो लब्धिवीर्य २ उत्थानादि क्रिया सो करण वीर्य.

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेव सहायजी ज्वालामुखी

वह ते० इसलिये गो० गौतम ए० ऐसा बु० कहा जाता है ॥ १० ॥ ने० नारकी भं० भगवन् कि० क्या स० सर्वीर्य अ० अवीर्य गो० गौतम ने० नारकी ल० लब्धिवीर्य से स० सर्वीर्य क० करणवीर्य से स० सर्वीर्य अ० अवीर्य से० वह के० कैसे गो० गौतम, जे० जिस ने० नारकी को अ० है उ० उत्थान क० कर्म व० बल वी० वीर्य पु० पुरुषात्कार प० पराक्रम ते० वे ने० नारकी ल० लब्धिवीर्य से स० सर्वीर्य क० करणवीर्य से स० सर्वीर्य जे० जो ने० नारकी को न० नहीं है उ०

एव बुच्चइ जीवा दुविहा प० तं० सवीरियावि, अवीरियावि ॥ १० ॥ नेरइयाणं०

भंते किं सवीरिया अवीरिया ? गोथमा नेरइया लब्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं सवीरियाय अवीरियाया सेकेणट्टेणं? गोथमा! जेसिणं नेरइयाणं आत्थि उट्टुणे, कम्मे

बले, वीरिए पुरिसक्कार परक्कमे तेणं नेरइया लब्धि वीरिएणवि सवीरिया, करणवीरिएण

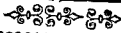
गौतम ! ऐसा कहा है कि जीव वीर्य सहित व वीर्य रहित हैं ॥ १० ॥ अहो भगवन् ! क्या नरक के जीव वीर्य सहित हैं या वीर्य रहित हैं ? अहो गौतम ! नरकके जीव लब्धि वीर्य से वीर्य सहित हैं और करण वीर्य से वीर्य सहित व वीर्य रहित हैं. अहो भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा गया है ! अहो गौतम ! जिन नारकियों को उत्थान, कर्म, बल, वीर्य पुरुषात्कार व पराक्रम हैं वे नारकी लब्धि वीर्य से वीर्य सहित हैं और करण वीर्य से भी वीर्य सहित हैं. और जो नारकी उत्थानादि रहित हैं वे लब्धि

शब्दार्थ सूत्र वार्थ

शब्दार्थ

सूत्र

वार्थ



उस्थान जा० यावत् प० पराक्रम ते० वे ने० नारकी ल० लब्धिवीर्य से स० सर्वीर्य क० करणवीर्य से
अ० अवीर्य से० वह ते० इसलिये ज० जैसे ने० नारकी जा० यावत् प० पंचेन्द्रिय ति० तिर्यच म०
मनुष्य ज० जैसे ओ० औधिक जीव न० विशेष सि० सिद्ध व० वर्जना भा० कहना वा० वाणव्यंतर
जो० ज्यातिपी वे० वैमानिक ज० जैसे ने० नारकी से० वह ए० ऐसे भं० भगवत् ॥ १ ॥ ८ ॥

वि सवीरिया । असिणं नेरइयाणं नत्थि उट्टुणे जाव परक्कमे तेणं नेरइया लद्धिवी-
रिणं सवीरिया, करणवीरिणं अवीरिया । से तेणट्टुणं जहा नेरइया एवं जात्र पंचि-
दिय तिरिक्ख जोगिया । मणूसा जहा ओहिया जीवा नवरं सिद्ध वज्जा भाणियव्वा ।
वाणमंतर जोइस वेमाणिया जहा नेरइया ॥ सेवं भंते २ त्ति ॥ पढमेसए अट्टमो

उद्देशो सम्मत्तो ॥ १ ॥ ८ ॥

* * *
वीर्य से वीर्य सहित हैं परंतु करण वीर्य से वीर्य रहित हैं इस लिये अहो गौतम ! ऐसा कहागया है
कि नारकी के जीव वीर्य सहित व वीर्य रहित है. जैसा नारकी का कहा वैसे ही मनुष्य छोडकर अन्य
सब दंडक का कहना मनुष्य का समुच्चय जीव जैसे कहना परंतु समुच्चय जीव के दंडक में सिद्ध है यह
यहां नहीं कहना अहो भगवन् ! आपने जो कहा व सत्य है यह पहिला शतकका आठवा

* * *
॥ १ ॥ ८ ॥

प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालामसादजी

वह ते० इसलिये गो० गौतम ए० ऐसा बु० कहा जाता है ॥ १० ॥ ने० नारकी भं० भगवन् कि० क्या स० सर्वीर्य अ० अवीर्य गो० गौतम ने० नारकी ल० लब्धिवीर्य से स० सर्वीर्य क० करणवीर्य से स० सर्वीर्य अ० अवीर्य से० वह के० कैसे गो० गौतम जे० जिस ने० नारकी को अ० है उ० उत्थान क० कर्म व० बल वी० वीर्य पु० पुरुषात्कार प० पराक्रम ते० वे ने० नारकी ल० लब्धिवीर्य से स० सर्वीर्य क० करणवीर्य से स० सर्वीर्य जे० जो ने० नारकी को न० नहीं है उ०

एव बुच्चइ जीवा दुत्रिहा प० तं० सर्वीरियावि, अवीरियावि ॥ १० ॥ नेरइयाणं

भंते किं सर्वीरिया अवीरिया ? गोयमा नेरइया लब्धिवीरिएणं सर्वीरिया, करणवीरिएणं सर्वीरियाय अवीरियाया सेकेणट्टेणं? गोयमा! जेसिणं नेरइयाणं अत्थि उट्टुणे, कम्मे वल्ले, वीरिए पुरिसक्कार परक्कमे तेणं नेरइया लब्धि वीरिएणवि सर्वीरिया, करणवीरिएण

गौतम ! ऐसा कहा है कि जीव वीर्य सहित व वीर्य रहित हैं ॥ १० ॥ अहो भगवन् ! क्या नरक के जीव वीर्य सहित हैं या वीर्य रहित हैं ? अहो गौतम ! नरकके जीव लब्धि वीर्य से वीर्य सहित हैं और करण वीर्य से वीर्य सहित व वीर्य रहित हैं. अहो भगवन् ! किस कारन से ऐसा कहा गया है ? अहो गौतम ! जिन नारकियों को उत्थान, कर्म, बल, वीर्य पुरुषात्कार व पराक्रम हैं वे नारकी लब्धि वीर्य से वीर्य सहित हैं और करण वीर्य से भी वीर्य सहित हैं. और जो नारकी उत्थानादि रहित हैं वे लब्धि



शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

जा० यावत् मिथ्यादर्शन शल्य के वे० निवर्तने से ए० ऐसे स्व० निश्चय गो० गौतम जी० जीव ल० लघुत्व
को आ० आते हैं ॥ २ ॥ ए० ऐसे सं० संसार आ० बहुत क० करे प० थोडा क० करे दी० दीर्घ क०
करे ह० छोटा क० करे अ० वारंवार भ्रमण करे वी० तीरे प० प्रशस्त च० चार अ० अप्रशस्त च०

गोयमा ! पाण्डुवायवेरमणेणं जात्र मिच्छादंसणसह्ण वेरमणेणं एवं खलु
गोयमा ! जीवा लहुयत्तं हव्वमागच्छंति ॥ २ ॥ एवं संसार आउली करैति, एवं
परिच्ची करैति, दीही करैति, हरसी करैति, एवं अणुपरियट्ठंति, एवं

अवर्णवाद बोलना १.७ माया मृषा और १.८ मिथ्यादर्शन शल्य-देवगुरु धर्म से भी मन का मिथ्यात्व
नाश नहीं होवे, इन अठारह कारणों से जीव अधोगति गमनरूप गुरुत्व धारण करता है ॥ १ ॥ अहो
भगवन् ! जीव लघुत्व कैसे धारण करता है ? अहो गौतम ! प्राणातिपात से निवर्तना यावत् मिथ्या
दर्शन शल्य से निवर्तना इन अठारह कारणों से जीव लघुत्व प्राप्त कर सकता है ॥ २ ॥ उक्त अठारह
पाप स्थानों के आचारण से जीव संसार प्रचुर करे, संसार परत्त करे, दीर्घ करे, ह्रस्व करे, संसार में
वारंवार परिभ्रमण करे और संसार से उच्चीर्ण होवे. इन आठ में से लघुत्व, परित्त, ह्रस्वत्व व संसार का
उच्छेदन ऐसे चार बोल प्रशस्त और गुरुत्व, संसार का प्रचूर करना, दीर्घ करना व संसार का उच्छेदन

पवणं त्वं पणं (सर्वान्) मं

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालापसादजी *

क० कैसे भं० भगवन् जी० जीव ग० गुरुत्व को ह० शीघ्र आ० आते हैं गो० गौतम पा० प्राणाति-
पात से मु० मृषावाद से अ० अदत्तादान मे० मैथुन प० परिग्रह को० क्रोध मा० मान मा० माया लो०
लोभ पे० राग दो० द्वेष क० कलह अ० कलंक चढाना पे० चुगली र० रति अ० अरति प० परपरिवाद
पा० कपट मि० मिथ्यादर्शन शल्य ए० ऐसे ख० निश्चय जी० जीव ग० गुरुत्व को ह० शीघ्र आ० आते
हैं ॥ १ ॥ भं० भगवन् जी० जीव ल० लघुत्व ह० शीघ्र आ० आते हैं गो० गौतम पा० प्राणातिपात
कहणं भंते ! जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छंति ? गोयमा ! पाणाइवाएणं, मुसावाएणं,
आदिन्न, मेहुण, परिग्गह, कोह, माण, माया, लोह, पेज, दोस, कलह, अब्भक्खाण,
पेसुन्न, रति, अरति, परपरिवाए, मायामोस, मिच्छादंसणसङ्खेणं, एवं खलु गोयमा !
जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छंति ॥ १ ॥ कहणं भंते ! जीवा लहुयत्तं हव्वमागच्छंति ?

आठवे उद्देश्य के अंत में वीर्य का वर्णन किया है. और जीव वीर्य से भारी होता है इसलिये आगे
गुरुत्व का अधिकार चलता है. अहो भगवन् ! अथोगति गमनरूप गुरुत्व किस तरह से जीव प्राप्त करे ?
अहो गौतम ! १. प्राणातिपात-जीव का अतिपात से, २. मृषावाद-असत्य बोलने से ३. अदत्तादान-चौरी
करने से ४. मैथुन से ५. परिग्रह ६. क्रोध ७. मान ८. माया ९. लोभ, १०. राग ११. द्वेष १२. कलह १३.
अभ्याख्यान-कलंक चढाने से १४. पैशुन्य-चुगली करने से १५. रति अरति १६. परपरिवाद अन्य का

शब्दार्थ सूत्र

शब्दार्थ

सूत्र

शब्दार्थ

सातवा वृ० आकाशान्तर ज० जैसे त० तनुवात ए० ऐसे ग० गुरुलघु ग० घनवात घ० घनोदधि
पु० पृथ्वी दी० द्वीप स० सागर वा० क्षेत्र ॥ ४ ॥ ने० नारकी भं० भगवन् किं० क्या ग० गुरु जा०
यावत् अ० अगुरुलघु गो० गौतम नो० नहीं गुरु नो० नहीं लघु गु० गुरुलघु अ० अगुरुलघु से० वह के०

घणवाए, सत्तमे घणोदही, सत्तमा पुढवी, उवासंतराईं सव्वाइं जहा सत्तमे उवासं-
तरे। जहा तणुवाए एवं गरुयलहुए घणवाय घणउदहि, पुढवी, दीवाय, सागरा,
वासा, ॥ ४ ॥ नेरइयाणं भंते ! किं गरुया जात्र अगरुलहुया ? गोयमा ! नो गुरुया,
नोलहुया, गरुयलहुयावि, अगरुयलहुयावि । सेकेणट्टेणं ? गोयमा ! वेउल्विय

आकाशान्तर जैसे कहना. अर्थात् जैसे सातवा आकाशान्तर गुरु, लघु, व गुरुलघु नहीं है परंतु अगुरुलघु
है वैसेही इस का जानना. जैसे तनुवात का कहा वैसेही घनवात, घनोदधि, पृथ्वी, द्वीप, सागर व भरतादि
क्षेत्र का जानना अर्थात् जैसे तनुवात गुरुलघु है वैसेही उक्त सब पदार्थों गुरुलघु हैं ॥ ४ ॥ अहो
भगवन् ! नारकी क्या गुरु, लघु, गुरुलघु या अगुरुलघु है ? अहो गौतम ! गुरु भी नहीं है, लघु भी
नहीं है, परंतु गुरुलघु व अगुरुलघु हैं. अहो भगवन् ! किस कारन से नारकी गुरु व लघु नहीं हैं परंतु
गुरुलघु व अगुरुलघु हैं ? अहो गौतम ! वक्रैय व तेजस शरीर की अपेक्षा से नारकी गुरुलघु हैं परंतु

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुब्रह्मचर्यसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

चार ॥ ३ ॥ स० सातवा उ० आकाशांतर कि० क्या ग० गुरु ल० लघु ग० गुरुलघु अ० अंगुरुलघु गो० गौतम नो० नहीं गुरु नो० नहीं लघु नो० नहीं गुरुलघु अ० अंगुरुलघु स० सातवा त० तनुवाते कि० क्या गो० गौतम नो० नहीं गुरु नो० नहीं लघु ग० गुरुलघु नो० नहीं अंगुरुलघु ए० ऐसे स० सातवा घ० घनवात स० सातवा घ० घनोदधि स० सातवी पु० पृथ्वी उ० आकाशांतर स० सर्व ज० जैसे स०

वीर्द्वयंति, पसत्था चचारि अपसत्था चचारि ॥ ३ ॥ सत्तमेणं भंते ! उवांसंतरे किं गरुए, लहुए,

गरुय लहुए, अंगुरुय लहुए ? गोयमा ! नोगरुए, नोलहुए, नो गरुय लहुए, अंगरुय

लहुए सत्तमेणं भंते ! तणुवाए किं गरुए, लहुए, गरुयलहुए, अंगरुयलहुए ?

गोयमा ! नोगरुए, नोलहुए, गरुय लहुए, नो अंगरुय लहुए एवं सत्तमे

नहीं करना ये चार बोल अपशस्त कहाये गये हैं ॥ ३ ॥ जीव के गुरुत्व लघुत्व से आकाशादिक का गुरुत्व लघुत्व कहते हैं ? अहो भगवन् ! सातवी नरककी नीचिका आकाशान्तर क्या गुरुत्व, लघुत्व, गुरुलघुत्व, व अंगुरुलघुत्ववाला है ? अहो गौतम ! सातवी नरक का आकाशान्तर गुरु, लघु व गुरुलघु नहीं है परंतु अंगुरुलघु है, अहो भगवन् ! सातवी नरक की नीचे का तनुवात क्या गुरु, लघु, गुरुलघु व अंगुरुलघु है ? अहो गौतम ! सातवा तनुवात गुरु नहीं है, लघु नहीं है परंतु गुरु लघु है और अंगुरु लघु नहीं है, ऐसे ही सातवा घनवात, सातवा घनोदधि, सातवी पृथ्वी व सब आकाशान्तर को सातवा

शब्दार्थ

सूत्र

सांवायं

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ३ ॥

॥ ६ ॥ ३० धर्मास्त्रिकाय जा० यावत् जी० जीव च० चौथापद में ॥ ६ ॥ पो० पुद्गलास्ति काया भ० भगवन् किं० क्या ग० गुरु ल० लघु ग० गुरुलघु अ० अगुरुलघु गो० गौतम नो० नहीं गु० गुरु नो० नहीं ल० लघु ग० गुरुलघु अ० अगुरुलघु से० वह के० कैसे गो० गौतम गु० गुरुलघु द० द्रव्य प० प्रत्यय नो० नहीं गुरु नो० नहीं ल० लघु गु० गुरु लघु नो० नहीं अ० अगुरुलघु अ० अगुरु लघु द० द्रव्य प० प्रत्यय नो० नहीं

थिकाए चउत्थपएणं ॥ ६ ॥ पोमगलत्थि काएणं भंते ! किं गरए, लहुए, गरयलहुए, अगुरुयलहुए ? गोयमा ! नो गुरुए, नोलहुए, गुरुयलहुएनि, अगुरुयलहुएनि सेकेणट्टेणं ? गोयमा ! गुरुयलहुय दव्वाइं पडुच्च णो गरए णो लहुए, गरयलहुए, नो अगुरुयलहुए । अगुरुयलहुय दव्वाइं पडुच्च णो गुरुए, नोलहुए, नोगुरुयल-

अगुरुलघु जानना. ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! पुद्गलास्ति काय क्या गुरु, लघु, गुरुलघु या अगुरुलघु है ? अहो गौतम ! पुद्गलास्ति काय गुरु नहीं है, लघु नहीं है परंतु गुरुलघु व अगुरुलघु है ? अहो भगवन् ! किस तरह से पुद्गलास्तिकाय गुरु नहीं है लघु नहीं है परंतु गुरुलघु व अगुरुलघु है ? अहो गौतम ! औदारिक, वैक्य, आहारक व तेजस इन गुरुलघु द्रव्य आश्रित पुद्गलास्तिकाय गुरु नहीं है, लघु नहीं है, परंतु गुरुलघु है. व अगुरुलघु नहीं है और कार्माण, मन व भाषा इन तीन अगुरुलघु द्रव्यकी अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय गुरु

लेख्या ॥ ९ ॥ दि० दृष्टि दं० दर्शन ना० ज्ञान अ० अज्ञान स० संज्ञा च० चौथे पद में ने० जानना हे० नीचे के च० चार स० शरीर ना० जानना त० तीसरे पदमें क० कार्माण च० चौथा पद में० म० मनजोग० व० वचनजोग च० चौथा पद में का० कायाजोग त० तीसरापद में सा० साकारोपयोग अ० अनाकारोपयोग च० चौथापद में स० सर्व द्रव्य स० सर्व प्रदेश स० सर्व पर्यव ज० जैसे पो० पुहलास्ति काय ती०

चउत्थपणं । एवं जाव सुक्कलेस्सा ॥ ९ ॥ दिट्ठी—दंसण—नाण—अन्नाण—सण्णाओ
 चउत्थपणं णेयव्वाइं, हेट्ठिन्ना चत्तारि सरिरा नायव्वा तइएणं पएणं ॥ कम्मय
 चउत्थएणं पएणं, ॥ मणजोगे, वइजोगे, चउत्थएणं पदेणं ॥ कायजोगो तइयएणं
 पएणं ॥ सागारोवओगो, अणागारोवओगो चउत्थपदेणं ॥ सव्वदव्व, सव्वपदेसा,

कृष्ण लेख्याका कहा जैसे ही नील, कापुत, तेजो, पत्र व शुक्ल लेख्या का जानना. ॥ ९ ॥
 दृष्टि, दर्शन, ज्ञान, अज्ञान व संज्ञा में अगुरुलुत्त जानना. उदारिक, वैक्रिय, आहारक व तेजस शरीर में
 गुरु लुत्त और कार्माण शरीर में अगुरु लुत्त जानना. मनयोग वचन योग में अगुरु लुत्त और
 काय योग में गुरुलुत्त जानना. साकारोपयुक्त व अनाकारोपयुक्त उपयोग में अगुरु लुत्त. धर्मास्ति-
 कायादि पदद्रव्य, उन के सब प्रदेश, व सब पर्यवकी पुहलास्तिकाय जैसे गुरुलुत्त व अगुरुलुत्त दोनों कहना.

लेख्या ॥ ९ ॥ दि० दृष्टि दं० दर्शन ना० ज्ञान अ० अज्ञान स० संज्ञा च० चौथे पद में ने० जानना हे० नीचे के च० चार स० शरीर ना० जानना त० तीसरे पदमें क० कार्माण च० चौथा पद में० म० मनजो- ग० व० वचनजोग च० चौथा पद में का० कायाजोग त० तीसरापद में सा० साकारोपयोग अ० अनाकारोप योग च० चौथापद में स० सर्व द्रव्य स० सर्व प्रदेश स० सर्व पर्यव ज० जैसे पो० पुद्गलास्ति काय ती०

चउत्थपएणं । एवं जाव सुक्खेस्सा ॥ ९ ॥ दिट्ठी-दंसण-नाण-अन्नाण-सण्णाओ
चउत्थपएणं पेयव्वाइं , हेट्ठिञ्जा चत्तारि सरिरा नायव्वा तइएणं पएणं ॥ कम्मय
चउत्थपएणं पएणं, ॥ मणजोगे, वइजोगे, चउत्थपएणं पदेणं ॥ कायजोगो तइयएणं
पएणं ॥ सागारोवओगो, अणागारोवओगो चउत्थपदेणं ॥ सब्बदब्बा, सब्बपदेसा,

कृष्ण लेख्याका कक्षा वैसे ही नील, कापुत, तेजो, पद्म व शुक्र लेख्या का जानना. ॥ ९ ॥
दृष्टि, दर्शन, ज्ञान, अज्ञान व संज्ञा में अगुरुलघुत्व जानना. उदारिक, वैक्रय, आहारक व तेजस शरीर में
गुरु लघुत्व और कार्माण शरीर में अगुरु लघुत्व जानना. मनयोग वचन योग में अगुरु लघुत्व और
काय योग में गुरुलघुत्व जानना. साकारोपयुक्त व अनाकारोपयुक्त उपयोग में अगुरु लघुत्व. धर्मास्ति-
कायादि षड्द्रव्य, उन के सब प्रदेश, व सब पर्यवको पुद्गलास्तिकाय जैसे गुरुलघु व अगुरुलघु दोनों कहना.

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामत्सराजी *

अतीतकाल अ० अनागतकाल स० सर्वपना काल च० चौथा पद में ॥ १० ॥ से० वह भं० भगवन् ला० लघुता अ० अल्पइच्छा अ० मूर्च्छारहित अ० अगुद्री अ० अप्रतिबन्ध स० श्रमण नि० निर्ग्रन्थ को प० प्रशस्त है० हां गो० गौतम ला० लघुता जा० यावत् प० प्रशस्ता ॥ १ ॥ भं० भगवन् अ० क्रोध रहित अ० मान रहित अ० मायारहित अ० लोभ रहित स० श्रमण नि० निर्ग्रन्थ को प० प्रशस्त है० हां गो० गौतम अ० क्रोध रहित अ० जा० यावत् प० प्रशस्त ॥ १२ ॥ भं० भगवन् कं० कांक्षा प० द्वेष स्त्री० क्षीण स० श्रमण नि० निर्ग्रन्थ अ० अंत सव्वपज्जवा, जहा पोगलत्थिकाओ, तीतद्धा अणागंयद्धा, सव्वद्धा, चउत्थएणं पएणं ॥ १० ॥ सेणुणं भंते ! लाघवियं, अपिच्छा, अमुच्छा, अगेही, अपडिबद्धया समणानं निर्गंथाणं पसत्थं ? हंता गोयमा ! लाघवियं जाव पसत्थं ॥ ११ ॥ सेणुणं भंते अकेहत्तं अमाणत्तं अमायत्तं अलोभत्तं समणानं निगंथाणं पसत्थं ? हंता ! अतीतकाल, अनागतकाल व सव काल में चौथा अगुलघुत्त जानना ॥ १० ॥ अब गुरुलघुपने का अन्य प्रकार से प्रश्न करते हैं. अहो भगवन् ! श्रमण निर्ग्रन्थ को लघुता, अल्प इच्छा, अमूर्च्छा, अगुद्री, व अप्रतिबन्ध क्या प्रशस्त है ? हां गौतम ! श्रमण निर्ग्रन्थ को लघुता यावत् अप्रतिबन्ध प्रशस्त है ॥ ११ ॥ अहो भगवन् ! श्रमण निर्ग्रन्थ को क्रोध, मान, माया व लोभ रहितपना क्या श्रेष्ठ है ? हां गौतम ! क्रोध रहितपना यावत् लोभ रहितपना श्रमण निर्ग्रन्थ को श्रेष्ठ है ॥ १२ ॥ अहो भगवन् !

शब्दार्थ सूत्र चार्थ

करने वाले अं० चरिम शरीरी व० बहुत मोहवाले पु० पहिले वि० विचरकर अ० अथ प० पीछे सं० संवृत का० कालकरे त० पीछे सि० मिश्रे बु० बुझे मु० मुक्त होवे जा० यावत् अं० अंतकरे हं० हां गो० गौतम कं० कांक्षा प० द्वेष स्त्री० क्षीण जा० यावत् अं० अंतकरे ॥ १३ ॥ अ० अन्य तीर्थिक भं० भगवन् ए० ऐसा आ० कहते हैं भा० विशेष कहते हैं प० परूपते हैं ए० एक जी० जीव ए० एक गौयमा ! अकोहत्तं जाव पसत्थं ॥ १२ ॥ सेणुणं भंते ! कंखापदोसे खीणे समणे

णिगंथे अंतकरे भवइ अंतिम सारीरिया, बहुमोहे विय णं पुंवि विहरित्ता, अह पच्छा संवुडे कालं करेइ तओ पच्छा सिज्झइ, बुज्झइ, मुच्चइ, जाव अंतं करेइ ? हंता गौयमा ! कंखापदोसे खीणे जाव अंतंकरेइ ॥ १३ ॥ अण्णउत्थियाणं भंते ! एवमाइक्खंति, एवं भासंति, एवं पण्णवेंति, एवं परूवेंति, एवं खलु एणे जीवे एणेणं समएणं दो आ-

कांक्षा-मिथ्यात्व-मोहनीय कर्मक्षय करनेवाला श्रमण क्या दुःख का अंत करनेवाला होवे ? अथवा चरिम शरीरी व पहिले मोह में रमण करके पुनः लघुभूत शुद्ध बना हुआ काल करें तो क्या सिद्धता, बुद्धता, मुक्त होता यावत्-सब दुःखों का अंत करता है ? हां गौतम ! कांक्षां प्रद्वेषं का क्षय करनेवाला, चरिम शरीरी व मोहका क्षय करनेवाला संसार का अंत करे ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं; बोलते हैं, हेतु सहित कहते हैं, व परूपते हैं कि एकही जीव एक समय में दो प्रकार के आयुष्य का बंध करता है:

से प० परभव का आयुष्य प० वांधे प० परभवका आयुष्य प० वांधेने से इ० यह भवका आ० आयुष्य प० वांधे
 ए० ऐसे ए० एक जीव ए० एक समय में दो० दो आयुष्य प० वांधे इ० इस भवका आ० आयुष्य प०
 परभवका आयुष्य से० वह क० कैसे ए० इस भ० भगवन् ए० ऐसे गो० गौतम जं० जो अ० अन्यती-
 गोयमा ! जणंति अणउत्थिया एवमाइक्खंति जात्र परभवियाउयंच, जे ते एव
 माहंसु मिच्छंते एव माहंसु ॥ अहं पुण गोयमा ! एव माइक्खामि जात्र परुवेमि
 एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं आउयं पकरेइ. तंजहा—इहभवियाउयंवा,
 परभवियाउयंवा. । जं समयं इह भवियाउयं पकरेइ णो तं समयं परभवियाउयं पकरे-
 इ, जं समयं परभवियाउयं पकरेइ णो तं समयं इह भवियाउयं पकरेइ, इह भविया-
 उयस्स पकरणयाए णो परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउयस्स पकरणयाए णो
 करता है तो अहो भगवन् ! यह किस तरह से है ? अहो गौतम ! अन्य तीर्थी जो ऐसा कहते हैं कि
 एक जीव एक समय में इस भव व परभव का आयुष्य वांधता है वौरह जो कहते हैं सो मिथ्या है.
 परंतु अहो गौतम ! मैं ऐसा कहता हूँ यावत् प्ररूपता हूँ कि एक जीव एक समय में इस भवका अथवा
 परभव का ऐसे दोनों में से एक भवका आयुष्य वांधता है. जिस समय में इस भवका आयुष्य वांधता है
 उस समय में परभव का आयुष्य नहीं वांधता है और जिस समय में परभव का आयुष्य वांधता है उस

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी ज्वालामतादजी *

सं समय में दो० दो आ० आयुष्य प० वांधे इ० इस भवका आयुष्य प० परभवका आयुष्य मं० जिस सं समयमें इ० इस भ० भवका आ० व युग प० वांधते० उस सं समयमें प० परभवका आयुष्य प० वांधे जं० जिस समयमें प० परभवका आयुष्य प० वांधे तं० उस समयमें इ० इस भवका आयुष्य प० वांधे इ० इस भवका आ० आयुष्य प० वांधे

उपाई पगोइ तंजहा—इह भवियाउयंच, पर भवियाउयंच, । जं समयं इह भवियाउयं पकरोइ तंसमयं पर भवियाउयं पकरोइ, जंसमयं पर भवियाउयं पकरोइ तंसमयं इह भवियाउयं पकरोइ; इह भवियाउयस्स पकरणयाए पर भवियाउयं पकरोइ, पर भवियाउयस्स पकरणयाए इह भवियाउयं पकरोइ, एवं खलु एगे जीवे एगे समएणं दो आउयाइ पकरोइ तंजहा इह भवियाउयंच, पर भवियाउयंच ॥ से कहमेयं भंते ! एवं ?

इस में विरोध नहीं आता है क्यों की जीव स्वर्णाय समूहात्मक है. जब वह आयुष्य का बंध करता है तब दो भव का आयुष्य बांधता है. इस भव का आयुष्य व परभव का आयुष्य. जिस समय में इस भवका आयुष्य का बंध करता है उस समय में परभव के आयुष्य का बंध करता है; और जिस समय में परभव के आयुष्य का बंध करता है उस समय में इस भव के आयुष्य का बंध करता है. हे इस भव के आयुष्य का बंध करते परभव के आयुष्य का बंध करता है; और परभव के आयुष्य का बंध करते इस भव के आयुष्य का बंध करता है. इसी प्रकार एक ही जीव एक ही समयमें दो भव के आयुष्य का बंध

उस समय में पा० पार्श्वनाथ के अ० शिष्य का० कालासत्रेसित पुत्र अ० अनगार जे० जहाँ थे० स्थविर भ० भगवन्त ते० तहाँ उ० आये उ० आकर थे० स्थविर भ० भगवन्त को ए० ऐसा व० कहा थे० स्थविर सा० सामायिक ण० नहीं या० जानते हैं थे० स्थविर सा० सामायिक का अ० अर्थ ण० नहीं या० जानते हैं थे० स्थविर प० प्रत्याख्यान न० नहीं या० जानते हैं थे० स्थविर प० प्रत्याख्यान का अर्थ ण० नहीं या० जानते हैं थे० स्थविर सं० संयम व संयम का अर्थ न० नहीं जानते हैं थे० स्थविर सं० संवर ण० थैरा सामाइयं ण याणंति, थैरा सामाइयस्स अट्टं णयाणंति, थैरा पच्चक्खाणं नयाणंति, थैरा पच्चक्खाणस्स अट्टं णयाणंति, थैरा संयमं णयाणंति, थैरा संजमस्स अट्टं णयाणंति, थैरा संवरं णयाणंति, थैरा संवरस्स अट्टं नयाणंति, थैरा विवेगं णयाणंति, थैरा विवेगस्स अट्टं णयाणंति, थैरा विउस्सग्गं णयाणंति, थैरा विउस्सग्गस्स अट्टं नयाणंति ॥ तएणं ते, थैरा भगवंतो कालासत्रेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी, जाणामोणं भगवन्त को ऐसा कहने लगे. अहो स्थविर ! तुम ममताभाव रूप सामायिक नहीं जानते हो, कर्म का अनुपादान व निर्जरारूप सामायिक का प्रयोजन को नहीं जानते हो, पोरिशी यगैरह प्रत्याख्यान तुम नहीं जानते हो, आश्रव द्वार निरोध रूप प्रत्याख्यानका प्रयोजन तुम नहीं जानते हो, पृथिव्यादि का संरक्षण रूप संयम तुम नहीं जानते हो, अनाश्रवपना सो संयम का अर्थ तुम नहीं जानते हो, इन्द्रिय

इन्द्रिय (कलह) मूत्र

इन्द्रिय

मूत्र

भावाथे

उस समय में पा० पार्श्वनाथ के अ० शिष्य का० कालासवेसित पुत्र अ० अनगर जे० जहाँ थे० स्थविर भ० भगवन्त ते० तहाँ उ० आये उ० आकर थे० स्थविर भ० भगवन्त को ए० ऐसा व० कहा थे० स्थविर सा० सामायिक ण० नहीं या० जानते हैं थे० स्थविर सा० सामायिक का अ० अर्थ ण० नहीं या० जानते हैं थे० स्थविर प० प्रत्याख्यान न० नहीं या० जानते हैं थे० स्थविर प० प्रत्याख्यान का अर्थ ण० नहीं या० जानते हैं थे० स्थविर सं० संयम व संयम का अर्थ न० नहीं जानते हैं थे० स्थविर सं० संवर ण०

थेरा सामाइयं ण याणंति, थेरा सामाइयस्स अट्ठं णयाणंति, थेरा पच्चक्खाणं नयाणंति,

थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठं णयाणंति, थेरा संयमं णयाणंति, थेरा संजमस्स अट्ठं णया-

णंति, थेरा संवरं णयाणंति, थेरा संवरस्स अट्ठं नयाणंति, थेरा विवेगं णयाणंति,

थेरा विवेगस्स अट्ठं ण याणंति, थेरा विउस्सगं णयाणंति, थेरा विउस्सगस्स अट्ठं नया-

णंति ॥ तएणं ते, थेरा भगवंतो कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी, जाणामोणं

भगवन्त को ऐसा कहने लगे. अधो स्थविर ! तुम समताभाव रूप सामायिक नहीं जानते हो, कर्म का अनुपादान व निर्जैरारूप सामायिक का प्रयोजन को नहीं जानते हो, पोरिशी वगैरह प्रत्याख्यान तुम नहीं जानते हो, आश्रव द्वार निरोध रूप प्रत्याख्यानका प्रयोजन तुम नहीं जानते हो, पृथिव्यादि का संरक्षण रूप संयम तुम नहीं जानते हो, अनाश्रवपना सो संयम का अर्थ तुम नहीं जानते हो, इन्द्रिय

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जी सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

नहीं या० जानते हैं सं० संवर का अ० अर्थ न० नहीं या० जानते हैं थे० स्थविर वे० विवेक ण०
 नहीं या० जानते हैं वि० विवेक का अर्थ वि० कायोत्सर्ग वि० कायोत्सर्ग का अर्थ न० नहीं या०
 जानते हैं त० तब ते० वे थे० स्थविर का० कालासेवेसित पुत्र अ० अनगर को ए० ऐसा व० कहे
 जा० जानता हूँ अ० आर्य सा० सामायिक जा० जानता हूँ अ० आर्य सा० सामायिक का अर्थ जा०

अजो सामाइयं, जाणामोणं अजो सामाइयस्स अट्ठं, जात्र जाणामोणं अजो विउस्सग्ग-
 स्स अट्ठं । तएणसे कालासेवेसियपुत्ते अणगारे ते थरे भगवंते एवं वयासी, जइणं
 अजो तुब्भे जाणह सामाइयं, जाणह सामाइयस्स अट्ठं, जात्र जाणह विउस्सग्गस्स
 अट्ठं; के भं अजो सामाइए ? केभे सामाइयस्स अट्ठं, जात्र के भे विउसग्गस्स

नोइन्द्रिय का निग्रह रूप संवर तुम नहीं जानते हो, अनाश्रवणना सो संवर का अर्थ तुम नहीं जानते हो,
 विशिष्ट बोध रूप विवेक तुम नहीं जानते हो, त्याग व त्यागादि जो विवेक उस का अर्थ तुम नहीं जानते
 हो, त्यागरूप कायोत्सर्ग तुम नहीं जानते हो, और कायोत्सर्ग का अर्थ तुम नहीं जानते हो. तब श्री स्थ-
 विर भगवंत उन कालासेवेसित पुत्र अनगर को ऐसे बोले कि अहो आर्य ! मैं सम्परिणाम रूप
 सामायिक जानना हूँ. कर्मका अनुपादान व निर्जरा रूप सामायिक का अर्थ मैं जानता हूँ. यावत् कायो-
 त्सर्ग व कायोत्सर्ग का अर्थ मैं जानता हूँ-तब कालासेवेसित पुत्र नामक अनगर उन स्थविर भगवंत को

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

यावत् जा० जानता हूँ अ० आर्य वि० कायोत्सर्ग का अर्थ त० तव का० कालासर्वेसित पुत्र अ० अन-
 गार थे० स्थविर भ० भगवन्त को ए० ऐसा व० कहा ज० यदि अ० आर्य तु० तुम जा० जानते हो
 सा० सामायिक जा० जानते हो सा० सामायिक का अर्थ जा० यावत् जा० जानते हो वि० कायोत्सर्ग
 का अर्थ के० क्या अ० आर्य सा० सामायिक के० क्या सा० सामायिक का अर्थ जा० यावत् के० क्या
 वि० कायोत्सर्ग का अर्थ त० तव थे० स्थविर भ० भगवन् का० कालासर्वेसित पुत्र अ० अनगार को
 अट्टे ? तएणं ते थेरा भगवंतो कालासर्वेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी-आयाणे
 अज्जो ! सामाइए, आयाणे अज्जो सामाइयस्स अट्टे, जात्र विउरसग्गस्स अट्टे ॥ तएणं से
 कालासर्वेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते एवं वयासी-जइ भे अज्जो ! आया सामाइए,
 आया सामाइयस्स अट्टे जात्र आया विउरसग्गस्स अट्टे, अवहट्टु कोह माणमाया लोभे,
 किमट्टं अज्जो गरहह ? कालासा ! संजमट्टयाए । से भंते ! किं गरहासंजमे, अग-
 एसे बोले की यदि तुम सामायिक, सामायिकका अर्थ यावत् कायोत्सर्ग का अर्थ जानते हो तो अहो आर्य !
 सामायिक क्या है, सामायिक का अर्थ क्या है, यावत् कायोत्सर्ग का अर्थ क्या है ? तव स्थविर भगवंत
 कालासर्वेशित पुत्र नामक अनगार को ऐसे बोले की अहो आर्य ! हमारे मतमें सामायिक गुण प्रतिपन्न
 जीव को ही सामायिक कही है, आत्मा को ही सामायिक का अर्थ कहाँ है यावत् आत्मा का ही कायो

व्दार्थ (१) (२) (३) (४) (५) (६) (७) (८) (९) (१०) (११) (१२) (१३) (१४) (१५) (१६) (१७) (१८) (१९) (२०) (२१) (२२) (२३) (२४) (२५) (२६) (२७) (२८) (२९) (३०) (३१) (३२) (३३) (३४) (३५) (३६) (३७) (३८) (३९) (४०) (४१) (४२) (४३) (४४) (४५) (४६) (४७) (४८) (४९) (५०) (५१) (५२) (५३) (५४) (५५) (५६) (५७) (५८) (५९) (६०) (६१) (६२) (६३) (६४) (६५) (६६) (६७) (६८) (६९) (७०) (७१) (७२) (७३) (७४) (७५) (७६) (७७) (७८) (७९) (८०) (८१) (८२) (८३) (८४) (८५) (८६) (८७) (८८) (८९) (९०) (९१) (९२) (९३) (९४) (९५) (९६) (९७) (९८) (९९) (१००)

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुलशंख सहायजी बालाप्रसादजी *

नहीं या० जानते हैं सं० संवर का अ० अर्थ न० नहीं या० जानते हैं ये० स्थविर वे० विवेक वे०
नहीं या० जानते हैं वि० विवेक का अर्थ वि० कायोत्सर्ग वि० कायोत्सर्ग का अर्थ न० नहीं या०
जानते हैं त० तब ते० वे थे० स्थविर का० कालासवेसित पुत्र अ० अनगर को ए० ऐसा व० कहे
जा० जानता हूँ अ० आर्य सा० सामायिक जा० जानता हूँ अ० आर्य सा० सामायिक का अर्थ जा०

अजो सामाइयं, जाणामोणं अजो सामाइयस्स अट्ठं, जात्र जाणामोणं अजो विउस्सग्ग-
स्स अट्ठं । तएणसे कालासवेसियपुत्ते अणगारे ते थरे भगवन्ते एवं वयासां, जइणं
अजो तुब्भे जाणह सामाइयं, जाणह सामाइयस्स अट्ठं, जात्र जाणह विउस्सग्गस्स
अट्ठं; के भे अजो सामाइए ? केभे सामाइयस्स अट्ठं, जात्र के भे विउसग्गस्स

नोइन्द्रिय का निग्रह रूप संवर तुम नहीं जानते हो, अनाश्रवणना सो संवर का अर्थ तुम नहीं जानते हो,
विशिष्ट बोध रूप विवेक तुम नहीं जानते हो, त्याग व त्यागादि जो विवेक उस का अर्थ तुम नहीं जानते
हो, त्यागरूप कायोत्सर्ग तुम नहीं जानते हो, और कायोत्सर्ग का अर्थ तुम नहीं जानते हो. तब श्री स्थ-
विर भगवंत उन कालासवेसित पुत्र अनगर को ऐसे बोले कि. अहो आर्य ! मैं समपरिणाम रूप
सामायिक जानना हूँ. कर्मका अनुपादान व निर्जरा रूप सामायिक का अर्थ मैं जानता हूँ. यावत् कायो-
त्सर्ग व कायोत्सर्ग का अर्थ मैं जानता हूँ. तब कालासवेसित पुत्र नामक अनगर उन स्थविर भगवंत को

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

क्रोध मा० मान मा० माया लो० लोभ कि० क्या अ० आर्य ग० गहते हो का० कालासवेसित सं० संयम
केलिये से० वह भ० भगवन् कि० क्या ग० गहाँ सं० संयम अ० अगर्हा सं० संयम का० कालासवेसित
ग० गहाँ सं० संयम नो० नहीं अ० अगर्हा सं० संयम ग० गहाँ सं० सब दो० दोष प० क्षणवे स० सत्र
वा० मिथ्यात्व प० जानकर ए० ऐसे आ० आत्मा स० संयम में उ० स्थिर भ० होवे उ० पुष्ट भ० होवे
उ० उपस्थित भ० होवे ए० यहाँ से० वह का० कालासवेसित पुत्र अ० अनगर सं० स्वयं बुद्धे

अणभिगमेणं, अदिट्टणं असुयाणं असुयाणं, अविण्णयाणं अव्वोगडाणं अब्बो-
च्छिण्णाणं, अणिज्जूढाणं, अणुवधारियाणं, एयमट्ठं णो सहहिइ, णोपचिइए
णोरोइए, इयाणं भंते ! एएसिणं पयाणं जाणयाए, सवणयाए, वोहियाए,
अभिगमेणं दिट्ठणं सुयाणं मुयाणं विण्णयाणं, वोगडाणं, वोच्छिण्णाणं, णिज्जूढाणं
उवधारियाणं; एयमट्ठं सहहामि, पचियामि, रोएमि, एवमेयं सेज्जेयं तुब्भे
वयह ॥ तएणंते थेरा भगवंतो कालासवेसिय पुत्त अणगरं एवं वयासी

अहो अनगर ! गहाँ संयम है परंतु अगर्हा संयम नहीं है. गहाँ से सब रागादि दोषों अथवा पूर्व कृत
पाप क्षय होता है और सब मिथ्यात्व ज्ञान परिज्ञान से जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञान से छूटता है इस
तरह से हमारे मत में आत्मा स्थिर व पुष्ट होता है. ऐसा सुनकर कालासवेसित पुत्र नामक अन्गारने
स्थविर भगवन्त को वदना नमस्कार किया. वंदना नमस्कार करके कहने लगे कि अहो भगवन् ! मुझे

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

ए० ऐसा व० कहा आ० आत्मा ने० हमारे में सा० सामायिक आ० आत्मा ने० हमारे में सा० सामायिक का अर्थ जा० यावत् वि० कायोत्सर्ग आ अर्थ त० तव से० वद का० कालासर्वेशित पुत्र अ० अनगार थे० स्थविर भ० भगन्वत को ए० ऐसा व० कहा अ० आर्य आ० आत्मा सा० सामायिक आ० आत्मा सा० सामायिक का अर्थ जा० यात् आ० आत्मा वि० कायोत्सर्ग का० अर्थ अ० छोडकर को रहासंजमे ? कालासा ! गरहासंजमे नो अगरहा संजमे; गरहानियणं सव्वं दोसं प-विणेइ सव्वं बालियं परिणाय । एवं खु ने आया संजमे उवहिए भवइ, एवंखु नेआया संजमे उवचिए भवइ, एवंखु से कालासर्वेशियपुत्त अणगारे संबुद्धे थरे भगवंते वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसइत्ता एवं वयासी-एएसिणं भंते ! पयाणं पुब्बि अण्णाययाए, असवणयाए, अबोहियाए, त्सर्गं का अर्थ कहा है. तव वह कालामवेशित पुत्र नामक अनागर बोले की अहो आर्य ! यदि तुमारे मत में आत्मा सामायिक, आत्मा सामायिक का अर्थ यावत् आत्मा कायोत्सर्ग का अर्थ है तो क्रोध, मान, माया व लोभ का त्याग कर के उसकी निन्दा क्यों करते हो ? क्यों कि निन्दा, गर्हा यह प्रद्वेष का कारण है; और क्रोधादि त्यागने वाला सामायिक वृत्तिवाला निन्दा गर्हा नहीं कर सकता है तब स्थविर भगवंतेने उत्तर दीया कि अहो कालासर्वेशित पुत्र ! अबद्य पापकी गर्हा करते संयम होता है. तब पुनः वह कालासर्वेशित अनगार बोले कि अहो भगवन् ! क्या गर्हा संयम है या अगर्हा संयम है ?

०० प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी ००

शब्दार्थ

सूत्र

आवार्थ

ए० यह प० पद जा० जाने त० सुने उ० अवधारे ए० यह अर्थ स० श्रद्धता हूँ प० प्रतीति करता हूँ ए० ऐसे ज० जैसे तु० तुम व० कहते हो त० तब थे० स्थविर भ० भगवान् का० कालासवेसित अ० अनगार को ए० ऐसा व० कहा स० श्रद्धा करो अ० आर्य प० प्रतीति करो रो० रुचिकरो ज० जैसे अ० मैं व० कहता हूँ त० तब का० कालासवेसित पुत्र अ० अनगार थे० स्थविर भ० भगवन्त को व० वंदनकर न० नमस्कारकर इ० इच्छता हूँ तु० तुमारी अं० पास चा० चार महाव्रत ध० धर्म से पं० पांच म० महाव्रत स० प्रतिक्रमण सहित ध० धर्म उ० अंगीकार करके वि० विचरने को अ० यथासुख दे० देवानुप्रिय मा० नहीं

मा पडिवंधं करेह, तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसइत्ता चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उव्वसंपज्जित्ताणं विहरइ ॥ तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे बहूणिवासाणि सामण्य परि-

यह अर्थ अच्छी तरह से मैंने स्वीकार किया है, अब मैं इन की श्रद्धा, प्रतीति व रुचि करता हूँ आपने जो कहा है वैसाही भाव है. तब स्थविर भगवंत कालासवेसित पुत्र नामक अनगार को बोले की अहो आर्य! जो मैं कहता हूँ उन वचनों की तुम श्रद्धा प्रतीति व रुचि करो. तब कालासवेसित पुत्र नामक अनगार श्री स्थविर भगवंत को वंदना नमस्कार कर के बोले की अहो भगवन्! मैं आपकी समीप चार महाव्रत रूप धर्म से प्रतिक्रमण सहित पांच महाव्रत रूप धर्म अंगीकार करने को इच्छता हूँ. तब स्थ-

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्जालाप्रसादजी *

स्वविर भ० भगवन्त को व वंदनकर न० नमस्कारकर ए० ऐसा व० कहा ए० यह भ० भगवन् प० पद गे
पु० पहिले अ० जाना नहीं अ० सुना नहीं अ० बोध नहीं अ० ज्ञान नहीं अ० देखा नहीं अ० सुना नहीं अ०
स्मरण नहीं किया अ० विज्ञान हुवा नहीं अ० गुरुगम नहीं हुवा अ० व्यवच्छेद नहीं हुवा भ० सुखाव बोध नहीं
अ० धारा नहीं ए० यह अर्थ णो० श्रद्धे नहीं नो० प्रतित कीये नहीं णो० रुचे नहीं इ० अव० भ० भगवन्

सद्वहाहि अजो, पत्तियाहि अजो, रोएहि अजो, सेजहेयं अन्हे वयामो ॥

तएणं से कालासवोसिय पुत्ते अणगारे थेरे भगवंतो वंदइ नमंसइ वंदित्ता
नमंसइत्ता एवं वयासी-इच्छामिणं भंते ! तुब्भे अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंच-

महव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जिच्चाणं विहरित्तए ? । अहासुहं देवाणुप्पिया
इन पदों का इस प्रकार के अर्थ का ज्ञान नहीं था, मैंने उस का स्वरूप नहीं पहिचानाथा, मैंने पहिले
किसी की पास ऐसा श्रवण नहीं कियाथा. मुझे ऐसी प्रतीति नहीं हुईथी; मुझे ऐसा साक्षात्कार नहीं हु-
वा था, मुझे ऐसा गुरुगम नहीं हुवा था, मेरा संदेह इस प्रकार किसीने नहीं मीटायाथा, मुझे ऐसा सुखाव
बोध नहीं हुआ था, मैंने इस प्रकार ऐसा धारण नहीं किया था, मैं इस प्रकार इसे नहीं श्रद्धता था, मुझे
ऐसा रुचिकर नहीं हुआ था, अब अहो भगवन् ! इन का अर्थ मैंने जाना है, ज्ञान से बोधित हुवा है, स-
म्यक्त्व से विस्तृत अर्थबोधवाला हुआ है विशेषकर धारनकिया है, सर्वथा प्रकार से संदेह दूर हुआ है,

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* मकाशक-राजावहापुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

प० प्रतिबंध क० करो त० तव का० कालासवेसित पुत्र अ० अनगार थे० स्थविर भ० भगवान् को वं०
 वंदनकर न० नमस्कारकर चा० चार महाव्रत ध० धर्म से पं० पांच महाव्रत स० प्रतिक्रमण सहित ध०
 धर्म उ० अंगीकार कर वि० विचरता है का० कालासवेसित पुत्र अ० अनगार व० बहुत व० वर्ष सा०
 साधु पर्याय पा० पाली पा० पालकर ज० जिसलिये की० करे न० नम्र भाव मुं० मुंडभात्र अ० स्नान
 करना नहीं अ० दंत प्रक्षालन नहीं अ० छत्र नहीं अ० उपानह रहित भू० भूमि शैथ्या फ० पात्रशैथ्या क०
 काष्ट शैथ्या के० केशलोच वं० ब्रह्मचर्य प० परगृह प्रवेश ल० प्राप्त अ० अप्राप्त उ० ऊंच नीच गा०
 शिन्द्रिय समुह वा० वावीस प० परिपह उ० उपसर्ग अ० सहन त० इसलिये आ० आरा-

यागं पाउणइ पाउणइत्ता, जससट्टाए कीरइ नग्गभावे मुंडभावे, अन्हणयं, अदंत
 धुवणयं, अच्छत्तयं, अणोवाहणयं, भूमिसेज्जा फलहसेज्जा, कट्टसेज्जा, कंसलोओ, वंभ
 चेरवासो, परघरप्पवेसो, लद्धावलद्धी, उच्चावया गामकंटया, वावीसं परीसहोवसग्गा

विर भावन्त बोले की ज्यों तुम्हारा आत्मा को सुख होत्रे वैभे करो। ऐसा कार्य में प्रतिबंध [विलंब]
 मत करो। तव कालासवेसित पुत्र अनगारने स्थविर भगवंत को वंदना नमस्कार किया; वंदना नमस्कार
 करके चार महाव्रत रूप धर्म में से प्रतिक्रमण सहित पांच महाव्रत रूप धर्म अंगीकार कर विचरने लगे।
 तव उन कालासवेसित पुत्र अनगारने बहुत कालतक साधु की पर्याय का पालन किया। और पालन
 करके जिस लिये नम्रपना, मुंड भाव, स्नान नहीं करना, दंत प्रक्षालन नहीं करना, छत्र व उपानह रहित

अ० परिभ्रमण से० वह के० कैसे जा० यावत् आ० आधाकर्मी भुं० भोगवता जा० यावत् अ० परिभ्रमण करे गो० गौतम आ० आधाकर्मी भुं० भोगवता आ० आत्मा से ध० धर्म अ० अतिक्रमे आ० आत्मा से ध० धर्म अ० अतिक्रमता पु० पृथ्वी कायाकी ण० नहीं अ० अनुकंपाकरे जा० यावत् त० त्रसकाया की, ण० नहीं अ०

बद्धाओ धाणिय बंधन बद्धाओ पकरेइ, जात्र अणुपरियट्टइ। से कण्ठेणं जात्र आहाकम्ममं भुंज-
माणे जात्र अणुपरियट्टइ? गोयमा! आहाकम्ममं भुंजमाणे आयाए धम्मं अइक्कमइ आयाए
धम्मं अइक्कममाणे पुट्टविकायं णावकंखइ जात्र तसकायं णावकंखइ, जेसिंपियणं जात्राणं

[अनुभाग की अपेक्षा से] और प्रदेश बंध की अपेक्षा से क्या उपचिते ! अहो गौतम ! आधाकर्मी आहार भोगनेवाला श्रमण निर्ग्रथ आयुष्य कर्म वर्जकर अन्य सात कर्म मकृतियों यदि शिथिल बंधनवाली होवे तो दृढ बंधनवाली बनावे, अल्प काल की स्थितिवाली को दीर्घ काल की स्थितिवाली बनावे, यावत् अनंत कालतक चतुर्गति रूप संसार में परिभ्रमण करे. अहो भगवन् ! किस कारन से आधा कर्मी भोगनेवाला सायु सात कर्म मकृतियों को दृढ बंधनवाली बनावे यावत् चतुर्गतिक संसार में परिभ्रमण करे ? अहो गौतम ! आधाकर्मी आहार भोगनेवाला आत्मासे धर्म अतिक्रमता है, आत्मा से धर्म अतिक्रमते पृथ्वीकायादि पदकाया की अनुकम्पा रहित होता है और जिन जीवों के शरीर का

सि० शिथिल व० बंधन व० बंधीहुइ प० करे ज० जैसे सं० संवृति ण० विशेष आ० आयुष्य क० कर्म सि० कदा-
चिद् व० बांधे सि० कदाचित् नो० नहीं वं० बांधे से० शेष त० तैसे जा० यावत् वी० तीरे से० वह के०
केसे जा० यावत् वी० तीरे गो० गौतम फा० प्रामुक ए० शुद्ध भुं० भोगनता स० श्रमण नि० निग्रय
आ० आत्मा से ध० धर्म ना० अतिक्रमे नहीं आ० आत्मा से ध० धर्म अ० नहीं अ० अनिक्रमेनेसे से
पु० पृथ्वी काया की अ० अनुकंपाकरे जा० यावत् त० त्रसकाया की अ० अनुकंपाकरे जे० जिस ली०

ओ पकरेइ जहा से संवुडेणं णवरं आउयंचणं कम्मं सि बंधइ सिय नो बंधइ सेसं
तहेव जात्र दीइवयइ । सेकेणट्टेणं जात्र दीइवयइ ? गोयमा ! फासुएसणिजं भुंज-
माणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं नाइक्कमइ, आयाए धम्मं अणइक्कममाणे पुढविकायं

छोडकर अन्यसात कर्मो यदि दृढ बंधनवाले होंवे तो शिथिल बंधनवाले वनवे और आयुष्य कर्म क्वचित् बांधे
क्वचित् बांधे नहीं. उस में यदि आयुष्य कर्म का बंध करे तो वैमानिक देवता होंवे और आयुष्य का
बंध नहीं करे तो मुक्तिगामी जीव होंवे. अहो भगवन् ! ऐसा किस तरह से होता है ? अहो गौतम !
प्रामुक एपणिक आहार भोगनेवाला आत्मधर्म का उल्लंघन नहीं करता है इस तरह उल्लंघन नहीं करता
हुवा पृथ्वीकायादि पदकायाकी अनुकम्पावाला होता है यावत् जिन जीवों के शरीर का आहार करता है,
उन जीवों की भी अनुकम्पावाला होता है. इस लिये अहो गौतम ! ऐसा कहा गया है कि प्रामुक एपणिक

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

अनुकंपाकरे जे० जिन जी० जीव के श० शरीर का आधार आ० करे ते० उन जी० जीवों की ण० नहीं
अ० अनुकंपाकरे से० वह ते० इसलिये गो० गौतम ए० ऐसा बु० कहा जाता है आ० आधाकर्षी भुं०
भोगवता आ० आयुष्य व० वर्जकर स० सात क० कर्म प्रकृति जा० यावत् अ० परिश्रमण करे ॥ १७ ॥
फा० प्रासुक ए० शुद्ध भं० भगवन् भुं० भोगवता किं० क्या वं० वांधे जा० यावत् उ० उपचिने गो० गौतम फा०
प्रासुक भुं० भोगवता आ० आयुष्य वर्ज कर स० सात क० कर्म प्रकृति ध० दृढ वं० बंधन व० वंधी हुइ

सरीराइं आहारमाहारेइ तेविजीने नावकंखइ, सेतेणट्टेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, आहा-
कम्मणं भुंजमाणे आउयवज्जाओ सत्तकम्म पगडीओ जाव अणुपरियट्टइ ॥ १७ ॥ फासुएस-
णिज्जं भंते ! भुंजमाणे किंबंधइ ? जाव उवचिणाइ ? गोयमा ! फासुएसणिज्जं
भुंजमाणे आउय वज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ धाणिय बंधन वद्धाओ सिट्ठिल बंधण वद्धा

वह आहार करता है उन जीवों की भी अनुकम्पण रहित होता है. इस लिये अहो गौतम ! आधाकर्षी
आहार भोगनेवाला आयुष्य कर्म छोडकर अन्य सात कर्मों का दृढ बंधन करता है यावत् चतुर्गतिक
संसार में परिश्रमण करता है ॥ १७ ॥ प्रासुक एणिक वस्तु भोगनेवाला श्रमण निश्रय किस का बंध
करे यावत् क्या उपचिने ? अहो गौतम ! प्रासुक एणिक वस्तु भोगनेवाला श्रमण निश्रय आयुष्य कर्म

शब्दाथि

सूत्र

वार्थ

सिंशिथिल वंबंधन वंबंधीहुइ पंकरे जंजैसे संसंवृति णं विशेष आं आयुष्य कं कर्म सिं कदा-
चित् वं वंधे सिं कदाचित् नों नहीं वं वंधे सें शेप तं तैसे जां यावत् वीं तीरे सें वह कें
केसे जां यावत् वीं तीरे गों गौतम फां प्रासुक एं शुद्ध भुं भोगनता सं श्रमण निं निग्रय
आं आत्मा से धं धर्म नां अतिक्रमे नहीं आं आत्मा से धं धर्म अं नहीं अं अनिक्रमनेसे से
पुं पृथ्वी काया की अं अनुकंपाकरे जां यावत् तं त्रसकाया की अं अनुकंपाकरे जें जिस जीं

ओ पकरेइ जहा से संवुडेणं णवरं आउयंचणं कम्मं सिं वंधइ सिय नो वंधइ सेसं
तहेव जाव वीइवयइ । सेकेणट्टेणं जाव वीइवयइ ? गोयमा ! फासुएसणिजं भुंज-
माणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं नाइक्कमइ, आयाए धम्मं अणइक्कममाणे पुढविकायं

छोडकर अन्यसात कर्मों यदि दृढ बंधनवाले होवे तो शिथिल बंधनवाले बनावे और आयुष्य कर्म वचिन् वंधे
वचिन् वंधे नहीं. उस में यदि आयुष्य कर्म का बंध करे तो वैमानिक देवता होवे और आयुष्य का
बंध नहीं करे तो मुक्तिगामी जीव होवे. अहो भगवन् ! ऐसा किस तरह से होता है ? अहो गौतम !
प्रासुक एपणिक आहार भोगनेवाला आत्मधर्म का उल्लंघन नहीं करता है इस तरह उल्लंघन नहीं करता
हुवा पृथ्वीकायादि पदकायाकी अनुकम्पावाला होता है यावत् जिन जीवों के शरीर का आहार करता है,
उन जीवों की भी अनुकम्पावाला होता है. इस लिये अहो गौतम ! ऐसा कहा गया है कि प्रासुक एपणिक

शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ ()

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

बालक वा० बालपना अ० अशाश्वत सा० शाश्वत पं० पंडित पं० पंडितपना अ० अशाश्वत हं० हां गो०
 गौतम अ० अस्थिर प० पस्विर्तन होवे जा० यावत् पं० पंडितपना अ० अशाश्वत स० बढ ए० ऐसा
 भं० भगवन् जा० यावत् वि० विचरते हैं ॥ ? ॥ ९ ॥ + x

असासयं सासए पंडिए पंडियत्तं असासयं ? हंता गोयमा ! अधिरे पलोदइ जाव पंडि-
 यत्तं असासयं सेवं भंते भंतेचि जाव विहरइ ॥ पढमेसए नवमो उद्देशो *
 सम्मत्तो ॥ ? ॥ ९ ॥ *

अस्थिर भेद्य स्वभाव वाले हैं आध्यात्म चिन्ता में अस्थिर कर्म भेदावे, लोहकी शलाका अभेद्य स्वभाव
 वाली है और शाश्वतपना से जीव के टुकड़े होवे नहीं. व्यवहार से बालक शाश्वत है और निश्चय से
 जीव शाश्वत, व्यवहार से बालक भाव अशाश्वत निश्चय से असंयत भाव अशाश्वत, निश्चय से पंडित तत्त्व
 के जान-शाश्वत, व्यवहार से संयती जीव शाश्वत, व्यवहार से पंडितपना अशाश्वत और निश्चय से संयत
 भाव अशाश्वत होवे. अहो भगवन् ! आपने कहा बढ सव सत्य है अन्यथा नहीं है ऐसा कहकर बंदना नम-
 स्कार कर श्री गौतम स्वामी संयम व तप से आत्मा को भावते हुये विचरने लगे. यह पहिला शतक का
 नववा उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ ? ॥ ९ ॥ *

को अ० हे सि० स्निग्धपना त० इसलिये ति० तीन प० परमाणु पुद्गल ए० एकात्रित सा० मीले त०
 वे पि० भेदाते दु० दोप्रकार से ति० तीन प्रकार से क० करे दु० दोप्रकार से कि० करते ए० एक तरफ
 दि० देह प० परमाणु पुद्गल भ० होवे ए० एक तरफ दि० देह प० परमाणु पुद्गल भ० होवे ति० तीन
 प्रकार से क० करते ति० तीन प० परमाणु पुद्गल ह० होवे ए० ऐसे जा० यात्रत् च० चार पं० पांच प० परमाणु
 पुद्गल ए० एक बाजु से सा० मीले ए० एक बाजुमे मा० मीलकर दु० दुःखपने क० करे दु० दुःख सा० शब्धत स०

साहंगति, तिणिण परमाणु पोगलाणं अत्थि सिणेह काए, तम्हा तिणिण परमाणु
 पोगला एगयओ साहंगति, ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जंति. दुहा किज्जमाणा
 एगयओ दिवड्डे परमाणु पोगले भवइ, एगयओ दिवड्डे परमाणु पोगले भवइ,
 तिहा कज्जमाणा तिणिण परमाणु पोगला हवति एवं जाव चत्तारि पंच परमाणु
 गुण है वह उन परमाणु पुद्गलों में नहीं है. परंतु तीन परमाणु पुद्गल मीलकर स्कंधरूप बनजाते हैं क्यों
 की इसमें स्निग्धता रही हुई है. उस तीन परमाणु पुद्गल का स्कंध को भेदने में आवेता इस के दो अथवा
 तीन विभाग होसकते हैं. जब दो विभाग किया जाता है तब देह २ परमाणु का एक २ विभाग होता है
 और जब तीन विभाग किया जाता है तब एक २ परमाणु का तीन विभाग होता है. जैसे दो
 परमाणु का स्कंध होता है वैसे ही तीन, चार पांच परमाणुओं का स्कंध बनता है वे स्कंध रूप बनकर

सा० वह पु० पहिली कि० क्रिया दुःख क० करते कि० क्रिया अ० अदुःख कि० क्रिया स० समय की० व्यती-
तहुवे क० कीहुइ कि० क्रिया दुःख क० करण दु० दुःख अ० अकरण दु० दुःख० णो० नहीं सा०
वह क० करण दु० दुःख व० कहना अ० नहीं क्रिया दु० दुःख अ० नहीं स्पर्शा अ० नहीं करते पा० प्राण भू० भूत

भासा, अभासओ? भासा अभासओणं साभासा णो खलुसा भासओ भासा। पुब्बि किरिया दु-
क्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा, किरिया समयवीतिकंतं चणं कडा किरिया दुक्खा, जा सा
पुब्बि किरिया दुक्खा, कज्जमाणा किरिया अदुक्खा किरिया समय वीइक्कंतं चणं
कडा किरिया दुक्खा । सा किं करणओ दुक्खा अकरणओ दुक्खा ? अकरणओणं
सा दुक्खा, णो खलु सा करणओ दुक्खा, सेव वत्तव्वं सिया, अकिच्चं दुक्खं, अफुसं-

बोलाइ जो भापा उमे भापा कहना, तव क्या वह भापा भापकको होती है या अभापक को होती है
तव अन्यतीर्थिक ऐसा उत्तर देते हैं कि भापक को भापा नहीं; परंतु अभापक को भापा होती है-
और भी अन्य तीर्थिक ऐसा कहते हैं कि जहां तक कायिकादि क्रिया नहीं की जावे वहांतक ही वह
क्रिया दुःख के हेतु भूत होती है, और क्रिया करने लगे तब वह दुःख के हेतु भूत नहीं होती है, क्रिया समय
व्यतीत हुवे पीछे कराइ हुइ क्रिया दुःख के हेतु भूत है, और जो पहिले की क्रिया दुःख के हेतु भूत है,
कराती हुई क्रिया दुःख के हेतु भूत नहीं है और क्रिया समय व्यतीत हुण पीछे कराइ क्रिया दुःख के हेतु

शब्दार्थ (सूत्र) भावार्थ

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

सदाकाल उ० चयपामे अ० अपचयपामे पु० पहिले भा० भाषा भा० भाषा भा० बोलाती हुई भा० भाषा
 अ० अभाषा भा० भाषा समय वि० व्यतीत हुवा भा० बोली हुई भा० भाषा अ० अभाषा भा० भाषा
 समय वि० व्यतीत हुवा भा० बोलीहुई भा० भाषा किं० क्या भा० भाषक को भा० भाषा अ० अभाषक
 भा० भाषा णो० नहीं सा० वह भा० भाषक को भा० भाषा पु० पहिली कि० क्रिया दु० दुःख क० करते
 कि० क्रिया अ० अदुःख कि० क्रिया स० समय बी० व्यतीत हुवे क० कीहुई कि० क्रिया दु० दुःख
 पोगला एगयओ साहणंति, एगयओ साहणित्ता दुक्खत्ताए कज्जंति, दुक्खेवियणं
 सेसासए सयासमियं उवचिज्जइयं अत्रचिज्जइयं, पुब्बिं भासा भासा, भासिज्जमाणी भा-
 साअभासा, भासांसमयंत्रित्किंतंचणं भासिया भासा, जा सां पुब्बं भासा भासाभासि-
 ज्जमाणी भासा अभासा, भासा समयंत्रित्किंतंचणं भासियाभासा सा किं भासओ

दुःख रूप (कर्म पने) परिणमते हैं. कर्म अनादि होने से वह दुःख भी शाश्वत होता है. वह सदैव
 सम्यक् प्रकार से चय उपचय-हानि वृद्धि को प्राप्त होता रहता है. और भी वे अन्य तीर्थिक कहते हैं
 कि पहले बोलाइ हुई प्रथम की भाषा को भाषा कहना; परंतु वर्तमान में बोलाती हुई भाषा को भाषा
 कहना नहीं, भाषा का समय अतिक्रान्त हुवे पीछे भाषा को भाषा कहना. और जब बोलाइ हुई प्रथम
 की भाषा को भाषा कहना, बोलाती हुई भाषा को अभाषा कहना, और भाषा समय व्यतीत हुए पीछे

सा० वह पु० पहिली कि० क्रिया दुःख क० करते कि० क्रिया अ० अदुःख कि० क्रिया स० समय थी० व्यती-
तहुवे क० कीहुइ कि० क्रिया दुःख क० करण दु० दुःख अ० अकरण दु० दुःख० णो० नहीं सा०
वह क० करण दु० दुःख व० कहना अ० नहीं क्रिया दु० दुःख अ० नहीं स्पर्शा अ० नहीं करते पा० प्राण भू० भूत

भासा, अभासओ? भासा अभासओणं साभासा णो खलुसा भासओ भासा। पुब्बि किरिया दु-
क्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा, किरिया समयवीतिकंतं चणं कडा किरिया दुक्खा, जा सा
पुब्बि किरिया दुक्खा, कज्जमाणा किरिया अदुक्खा किरिया समय वीइकंतं चणं
कडा किरिया दुक्खा । सा किं करणओ दुक्खा अकरणओ दुक्खा ? अकरणओणं
सा दुक्खा, णो खलु सा करणओ दुक्खा, सेव वत्तव्वं सिया, अकिच्चं दुक्खं, अफुसं-

बोलाइ जो भापा उमे भापा कहना, तव क्या वह भापा भापकओ होती है या अभापक को होती है
तव अन्यतीर्थिक ऐसा उत्तर देते हैं कि भापक को भापा नहीं; परंतु अभापक को भापा होती है
और भी अन्य तीर्थिक ऐसा कहते हैं कि जहां तक कायिकादि क्रिया नहीं की जावे वहां तक ही वह
क्रिया दुःख के हेतु भूत होती है, और क्रिया करने लगे तव वह दुःख के हेतु भूत नहीं होती है, क्रिया समय
व्यतीत हुवे पीछे कराइ हुइ क्रिया दुःख के हेतु भूत है, और जो पहिले की क्रिया दुःख के हेतु भूत है,
कराती हुई क्रिया दुःख के हेतु भूत नहीं है और क्रिया समय व्यतीत हुए पीछे कराइ क्रिया दुःख के हेतु

कहता हूँ च० चलते को च० चला जा० यावत् नि० निर्जरे को नि० निर्जरा दो० दो प० परमाणु पुद्गल ए० एकत्रित साहणंति? दोणहं परमाणु पोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए तम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति तेभिज्जमाणा दुहा कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ वि० परमाणु पोग्गले एगयओ परमाणु पोग्गले भवइ, तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति, कम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति? तिण्हं परमाणु पोग्गलाणं अत्थि सिणेह काए तम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणु पोग्गले एगयओ दु पदेसिए खंधे भवइ, तिहा

निर्जरे लगे को निर्जरे कहना. और भी दो परमाणु पुद्गल एकत्रित हांकर स्कन्ध रूप बनजाते हैं क्यों की उस में स्नेह का गुण रहा हुवा है. एक परमाणु में शीत, ऊष्ण, स्निग्ध व रूक्ष ऐसे चार स्पर्श में से अविरोधी दो स्पर्श पाते हैं. इसलिये दो परमाणु में स्निग्धता होने से एकत्रित मीलकर स्कन्ध रूप बन जाते हैं. वैसे ही दो परमाणु को पृथक् करने से उस के एक २ परमाणु के दो विभाग होसकते हैं, वैसे ही तीन परमाणु मीलकर भी स्निग्धता के कारण से स्कन्ध होता है. उस का यदि भेद किया जावे तो दो व तीन होसकते हैं. दो में एक परमाणु का एक विभाग और द्विप्रदेशी स्कन्ध का दूसरा विभाग, तीन विभाग एक २ परमाणु पृथक् २ होजाते से होते हैं. ऐसे ही तीन चार पांच आदि परमाणु राशिका

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुबद्रव सहायजी ज्वालामसाजी *

सा० मीलते हैं क० कैसे दो० दो प० परमाणु पुद्गल ए० एकत्रित सा० मीलते हैं दो० दो-प० परमाणु कज्जमाणा तिष्णि परमाणु पोगला भवति एवं जाव चत्तारि पंचपरमाणु पोगला एगयओ साहणंति साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति, खंधवियणं से असासए सयासमियं उवाचिच्चइय अवाचिज्जइय ॥ पुर्वि भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा, भासा समय वीतिकंतंचणं भासिया भासा अभासा. जासा पुर्वि भासा अभासा भासिज्जमाणी भासा भासा, भासा समय वीतिकंतंचणं भासिया भासा अभासा। सा किं भास ओ भासा अभासओ भासा ? भासओणं भासा सा, णो खलु सा अभासओ भासा ।

स्कन्ध जानना. वह स्कन्ध अशाथत, सर्वदा सम्यक् प्रकार से चय उपचय (हानि वृद्धि) को पाता है. अत्र तीसरा प्रश्न का उत्तर देते हैं. पहिले बोलाई हुई प्रथम की भाषा तो अभाषा होती है, बोलाती हुई भाषा को ही भाषा कह सकते हैं. क्यों की उस समय शब्द अर्थ की उत्पत्ति होती है. भाषा समय व्यतीत हुवे पीछे भाषा अभाषा होजाती है, अब जो पहिले बोलाई हुई भाषा भाषा नहीं है, बोलाती हुई भाषा भाषा है व भाषा समय व्यतीत हुवे पीछे भाषा को अभाषा कही जाती है ऐसा कहागया है तो क्या वह भाषा भाषक को होती है या अभाषक को होती है ? वह भाषा भाषक को ही होती है परंतु अभाषक को नहीं होती है. अब चौथा प्रश्न का उत्तर देते हैं. पहिले की हुई क्रिया दुःख

पुत्रल में अ० है० लिग्घपना ॥ १ ॥ अ० अन्यतीर्थक ए० ऐमा आ० कहते हैं जा० यावत् ए० एक जी० जीव ए० एक स० समय में दो० दो क्रिया प० करे इ० ईर्यापथिक सं० संपरायिकी जं० जिस स० समय में इ० ईर्यापथिक प० करे तं० उस स० समय में सं० संपरायिकी प० करे जं० जिस स० समय में सं० संपरायिकी प० करे तं० उस स० समय में इ० ईर्यापथिक प० करे इ० ईर्यापथिक प० करे तं० उस स० समय में सं० संपरायिकी प० करे

पुत्रिं किरिया अदुक्खा जहा भासा तथा भाणियन्वा, किरियावि जाव करणओणं सा दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा, सेवं वत्तव्वं सिया, किच्चं दुक्खं, फुसं दुक्खं, कज्जमाणकडं दुक्खं कट्टु कट्टु पाणभूयजीवसत्ता वेदणं वेदंति चि वत्तव्वं सिया ॥ १ ॥ अणउत्थियाणं भंते ! एवमाइक्खंति जाव एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेइ तंजहा—इरियावहियंच, संपराइयंच, जं समयं इरियावहियं पकरेइ

देनेवाली होती है शेष सब अधिकार भाषा जैसे कहना यावत् करण से दुःख परंतु अकरण से दुःख नहीं है. किया हुआ दुःख है, स्वर्शो हुआ दुःख है. करने लगा किया वही दुःख करके प्राण भूत जीव व सत्व वेदना वेदते हैं यह चारों प्रश्नोंका उत्तर हुआ ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! अन्य तीर्थिक ऐसा कहते हैं कि एक समय में ईर्यापथिक व संपरायिक ऐसी दो क्रियाओं जीव करता है, जिस समय में जीव ईर्यापथिक क्रिया करता है उस समय में ही संपरायिक क्रिया करता है और जिस समय में संपरायिक

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

सं संपरायिकी प० करते इ० ईर्यापथिक प० करे ए० ऐसे ए० एक जीव ए० एक स० समय में दो० दा
कि० क्रिया पं० करे तं० वह ज० जैसे इ० ईर्यापथिक सं० संपरायिकी. से० वह क० कैसे भं० भगवन्
गो० गौतम ज० जो अ० अन्यतीर्थिक ए० ऐसा आ० कहते हैं जा० यावत् जे० जो ए० ऐसा आ०
कहते हैं मि० मिथ्या ते० वे आ० कहते हैं अ० मैं पु० फीर गो० गौतम ए० ऐसा आ० करता हूँ ए०
तंसमयं संपराइयं पकरेइ, जंसमयं संपराइयं पकरेइ तंसमयं इरियावाहियं पकरेइ ।

इरियावाहिय पकरणयाए संपराइयं पकरेइ, संपराइयं पकरणयाए इरियावाहियं पकरेइ ।
एवं खलु एगे जीवे एगेण समएणं दो किरियाओ पकरेइ तंजहा—इरियावहियंच सं-
पराइयच ॥ सेकहमेयं भंते एवं ? गोयमा ! जणंते अण्णउत्थिया एवमाइक्खंति
तं चेव जाव जे ते एवमाहंसु मिच्छा ते एवमाहंसु ॥ अहं पुण गोयमा ! एव माइ-

क्रिया करता है उस समय में ईर्यापथिक क्रिया करता है सांपरायिक करते क्रिया ईर्यापथिक क्रिया करता
है और ईर्यापथिक क्रिया करते सांपरायिक क्रिया करता है इस तरह ईर्यापथिक वं साम्परायिक ऐसी
दोनों क्रियाओं जीव एक समय में करता है तव अदो भगवन् ! यह कथन किस प्रकार है ? अहो
गौतम ! अन्य तीर्थिक जो इस प्रकार कहते हैं वह मिथ्या है, अर्थात् उसका कथन मिथ्या है. मैं ऐसा
कहता हूँ यावत् प्ररूपता हूँ कि एक समय में जीव एक ही क्रिया करता है क्यों कि ईर्यापथिक क्रिया

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

ऐसा व० चरने का प० पद भा० कहना नि० निर्विशेष स० वह ए० ऐसा भं० भगवन् जा० यावत् वि०
विचरते हैं ॥ १ ॥ १० ॥

x

x

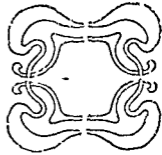
त्ता, एवं वक्तृती पयं भाणियब्धं निरवसेसं । सेवं भंते भंतेत्ति जावविहरइ ॥ पढमसाए
दसमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ १ ॥ १० ॥ पढमसयं सम्मत्तं ॥ १ ॥

*

अहो भगवन् ! जो आपने फरमाया वह वैसा ही है, अन्यथा नहीं है. ऐसा कह कर तप व समय से आ-
त्मा को भावते हुवे श्री गौतम स्वामी विचरने लगे. यह प्रथम शतक का दशवा उद्देशा समाप्त हुवा.
और प्रथम शतक भी समाप्त हुवा ॥ १ ॥ १० ॥ १ ॥

+

+



शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

॥ द्वितीयं शतकम् ॥

उ० उश्वास खे० खंदक पु० पृथ्वी ई० इन्द्रिय अ० अन्यतीर्थिक भा० भाषा दे० देव च० चमर चंचा
स० समय खे० क्षेत्र अ० अस्तिकाय वी० दूसरे शतक में ॥ * ॥ ते० उस काल तं० उस समय में

ऊसासे खंदक विय । पुढावैदिय अण्णउत्थिभासाय ॥ देवाय चमरचंचा । समय

खित्तात्थिकाय वीयसए ॥ १ ॥ * ॥ तेणं कालेणं, तेणं समएणं, रायागेहे नामं

प्रथम शतक के अंतमें जीवों का उत्पन्न होने का व चक्रन का विरह कहा. अत्र दूसरे शतक में उत्पन्न व
चक्रन के मध्य का श्वासोश्वास का प्रश्न चलता है. इस शतक के सब मीलकर दश उद्देश्य हैं. पहिले उद्देश्य में
उश्वास व खंदक का अधिकार है, दूसरे में पृथिवी का अधिकार है, तीसरे में इन्द्रिय का अधिकार है, चौथे
में अन्य तीर्थियों का अधिकार है, पाँचवें में भाषा का अधिकार है, छठे में देव का अधिकार, सातवें
में चमर चंचाका अधिकार, आठवें में समय क्षेत्र सो अहाइ द्वीप का अधिकार, नववें में क्षेत्राधिकार
और दशवें में अस्तिकाया का स्वरूप ॥*॥ उस काल सो चौथे आरे में उस समय सो महावीर स्वामी
विचरने के समय में राजगृही नामक नगर अत्यंत सुशोभित था. उस का वर्णन उक्ताइ सूत्र में जैसा
चंपा नगरी का वर्णन किया है वैसा जानना. राजगृही के गुणशील नामक उद्यान में श्री श्रमण भगवन्त

रिदार्थ

सूत्र

भावार्थ

पुमानं विना पणानं (सूत्रार्थ) (सूत्रार्थ)

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

रा० राजगृह न० नगर हो० या व० वर्णनयुक्त सा० स्वामी स० पथारे प० परिपदा नि० निर्गता य० धर्म क० कदा प० परिपदा प० प्रतिगता ॥ * ॥ ते० उसकाल ते० उस समय में जे० ज्येष्ठ अं० अंते-वासी जा० यावत् प० पूजते ए० ऐसा व० बोले जे० जो वे० वेइन्द्रिय ते० तेइन्द्रिय च० चतुरेन्द्रिय पं० पंचेन्द्रिय जी० जीव ए० उनका आ० श्वास पा० विशेष श्वास उ० उश्वास निं० निश्वास जा० जानते हैं पा० देखते हैं जे० जो पु० पृथ्वी काया जा० यावत् व० वनस्पति काया ए० एकेन्द्रिय जीव

नगरे होरथा, वण्णओ सामीसमोसडे, परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ, परिसा पडि-
गया ॥ * ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं जेट्ठे अंतेवासी जाव पज्जुवासमाणं एवं-
वयासी जे इमे भंते ! वेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचेंदिया जीवा एएसिणं आणा-
मंवा, पाणामंवा, उरसासंवा, निस्तासंवा जाणामो, पासामो जे इमे पुढविकाइया

महावीर स्वामी सब परिवार सहित पथारे, यथोचित अनुज्ञा ग्रहण कर बगीचे में विराजित हुए, परिपदा
वदन को आई, और श्री भगवन्त से धर्म सुनकर पीछीगइ ॥८॥ उस काल उस समय में भगवन्त श्री
महावीर स्वामीके ज्येष्ठ अंतेवासी श्री गौतम स्वामी सेवा पर्थुपासना करते ऐसा बोले कि अहो भगवंत !
वेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चतुरेन्द्रिय व पंचेन्द्रिय इन जीवों का श्वासोश्वास मैं जानता हूँ यावत् देखता हूँ अ-
र्थान् तस जीव का श्वासोश्वास मैं जानता हूँ व देखता हूँ, परंतु पृथ्वीकायादिक जीव की आगमादि

गमो दे० जानना जा० यावत् पं० पांचदिशि में कि० कैसे भं० भगवन् णे० नारकी आ० श्वासले पा० विशेष श्वासले उ० उश्वासले नि० निश्वासले तं० तैसे जा० यावत् छ० छदिशा में आ० श्वासले पा० बहुत श्वासले उ० उश्वासले नि० निश्वासले ए० ए०कन्द्रिय जी० जीव वा० व्याघात नि० निर्व्याघात भा० कहना से० शेष नि० निश्चय छ० छदिशा में ॥ ? ॥ ना० वायुकाय भं० भगवन् वा० वायु आ० श्वासले पा० बहुत श्वासले उ० उश्वासले नि० निश्वासले हं० हां गो० गौतम वा० वायुकाय जा० यावत् नि०

नेयव्वो जाव पंचदिसं ॥ किण्णं भंते ! णेरइया आणमंतिवा, पाणमंतिवा,
उस्ससंतिवा, निस्ससंतिवा तं चेव जाव नियमा छदिसिं आणमंतिवा, पाणमंतिवा,
उस्ससंति वा निस्ससंतिवा । जीव एगिंदिया वाघाया निव्वाघाया भाणियव्वा
सेसा नियमा छदिसिं ॥ १ ॥ वाउयाएणं भंते ! वाउयाए चेव आणमंतिवा, पाणमंतिवा,

नरक के जीव कैसे पुद्गलों का श्वासोश्वास लेते हैं ? इस का सब अधिकार पहिले जैसे कहना यावत् निश्चय ही छ दिशिका श्वासोश्वास लेते हैं. एकेन्द्रिय जीव में व्याघात निर्व्याघात कहना. अन्य किसी दंडक में कहना नहीं. क्योंकि वे छ दिशिका श्वासोश्वास लेते हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! क्या वायुकाय श्वासोश्वास ग्रहण करे ? हां गौतम ! वायुकाय श्वासोश्वास लेता है. अहो भगवन् ! क्या वायुकाय के जीव अनेक

प्रकाशक-राजावशुभर लाला सुबोधेश्वरशायजी ज्वालाप्रसादजी *

स्थिति वाले अ० अन्य टि० स्थिति वाले आ० श्वासलेते हैं पा० विशेष भा० मात्रा से व० वर्णवाले गं० गंधवाले र० रसवाले फा० स्पर्श वाले आ० श्वासलेते हैं जा० यदि मा० मात्रा से व० वर्ण वाले आ० श्वासलेते हैं उ० उश्वासलेते हैं नि० निश्वासलेते हैं ना० तो कि० क्या ए० एक व० लेते हैं पा० विशेष श्वासलेते हैं उ० उश्वासलेते हैं नि० निश्वासलेते हैं आ० आहार वर्ण वाले आ० श्वासलेते हैं पा० विशेष श्वासलेते हैं उ० उश्वासलेते हैं

मंतिवा उरससंतिवा, निस्ससंतिवा ? गोयमा ! दव्वओणं अणंत पणुसियाइं दव्वाइं, खित्तां असंखेज पणुसोगाढाइं, कालओ अणयरुठियाइं, भावओ, वणमंताइ, गंधमंताइ, रसमंताइ, फासमंताइ आणमंतिवा, पाणमंतिवा, उरससंतिवा, निस्ससंतिवा. जाइं भावओ वणमंताइ आणमंतिवा उरससंतिवा निस्ससंतिवा, ताइं किं एण वण्णाइंआणमंतिवा, पाणमंतिवा उरससंतिवा, आहारगमो

समय की स्थिति वाले पुद्गल और भाव से वर्णवाले, गंधवाले, रसवाले व स्पर्श वाले द्रव्य का श्वासोश्वास लेते हैं. अहो भगवन् ! जब भाव से वर्ण सहित पुद्गल श्वासोश्वासपने ग्रहण करते हैं तो क्या वह एक वर्ण वाले पुद्गल का श्वासोश्वास लेते हैं? अहो गौतम ! इनका सब अधिकार पद्मवर्णा सूत्र के अष्टावोस में पद में कहा है वैसे व्याघ्रात आश्री तीन चार पांच व छ दिशा के पुद्गल ग्रहण करे वहांतक कहना. अहो भगवन्,

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

नि० निकले से० वह के० कैसे ए० ऐसा बु० कहा जाता है गो० गौतम वा० वायुकायाको च० चार स० शरीर प० प्ररूपे उ० उदारिक वे० वैक्रेय ते० तेजस क० कार्माण उ० उदारिक वे० वैक्रेय वि० छोडकर ते० तेजस क० कार्माण सहित नि० निकले से० वह ते० इसलिये गो० गौतम ए० ऐसा बु० क-हाजाता है ॥ २ ॥ म० प्रासुक भोजन करने वाला नि० निर्ग्रय नो० नहीं नि० रंथा हुवा भ० भव नो०

एवं वुच्चइ सियससरीरी निक्खमइ सियअसरीरी निक्खमइ ? गोयमा ! वाउकायस्सणं चत्तारि सररीथा प० तं० उरालिए, वेउव्विए, तेयए, कम्मए । उरालिय वेउव्वि-याइं विष्पजहाय, तेय कम्मएहिं निक्खमइ. सेतेणट्टेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ सियस-सरीरी, सिय असरीरी निक्खमइ ॥ २ ॥ मडाइणं भंते नियंठे नो निरुद्ध भवे, नो

नीकलते हैं और कथंचित् शरीर रहित नीकलते हैं. अहो भगवन् ! वायुकाय के जीव किस तरह से कथंचित् सशरीरी व कथंचित् अशरीरी नीकलते हैं ? अहो गौतम ! वायुकाय को उदारिक, वैक्रेय, तेजस और कार्माण ऐसे चार शरीर होते हैं. उस में से उदारिक वैक्रेय को छोडकर नीकले इस लिये अशरीरी और तेजस, कार्माण शरीर सहित नीकले इसलिये सशरीरी, इसी से अहो गौतम ! वायु-काय के जीव कथंचित् शरीर सहित नीकले और कथंचित् शरीर रहित नीकले ॥ २ ॥ अहो भगवन् !

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

निश्चासले वा० वायुकाय वा० वायु कायमें अ० अनेक स० शतसहस्र बार उ० मरे उ० मरकर त०
 तहां भु० वारंवार प० उत्पन्नहोवे हं० हां गो० गौतम जा० यावत् प० उत्पन्नहोवे से० वह भं० भगवन्
 किं० पया पु० स्पर्शी उ० मरे अ० नहीं स्पर्शी उ० मरे गो० गौतम पु० स्पर्शी उ० मरे नो० नहीं
 अ० अस्पर्शी उ० मरे सें० वह भं० भगवन् किं० क्या स० सशरीरी नि० निकले अ० अशरीरी
 नि० निकले गो० गौतम सि० कदाचित् स० सशरीरी नि० निकले सि० कदाचित् अ० अशरीरी

उरससंतिवा, निरससंतिवा ? हंता गोयमा ! वाउयाएणं जाव निरससंति वा ॥ वाउया-
 एणं भंते ! वाउयाएचव अणेगसयसहसखुत्तो उदाइ उदाइत्ता, तत्थेव भुज्जो भुज्जो
 पचायाइ ? हंता गोयमा ! जाव पचायाइ. से भंते! किपुट्टे उदाइ अपुट्टे उदाइ? गोयमा!
 पुट्टे उदाइ, नो अपुट्टे उदाइ । से भंते ! किं ससरीरी निक्खमइ, असरीरी निक्खमइ ?
 गोयमा ! सियससरीरी निक्खमइ, सियअसरीरी निक्खमइ । से केणट्टेणं भंते !

लगावार मरकर वहांही वारंवार उत्पन्न होते हैं ? हां गौतम वायुकायके जीव अनेक बार मरकर वहांही
 वारंवार उत्पन्न होते हैं. अहो भगवन् ! वायुकाय के जीव क्या स्पर्श कर मरते हैं या बिना स्पर्श मरते
 हैं ? अहो गौतम ! सोपक्रम की अपेक्षा से स्पर्शा हुआ मरे, परंतु नहीं स्पर्शा हुआ मरे नहीं. अहो भगवन् !
 क्या वे सकलेश्वर से शरीर सहित नीकलते हैं या शरीर रहित नीकलते हैं ? अहो गौतम ! कथंचित् शरीर सहित

स० सत्त्व वि० विज्ञ वे० वेदक व० कहना पा० प्राण भू० भूत जी० जीव स० न्त्व वि० विज्ञ वे० वेदक व० कहना से० वह के० कैसे पा० प्राण जा० यावत् वे० वेदक व० कहना ज० जिसलिये आ० श्वासलेता है पा० विशेष श्वासलेता है उ० उ० श्वासलेता है नि० निश्वासलेता है त० इसलिये पा० प्राण व० कहना ज० जिसलिये भू० हुवा भ० होता है भ० होगा त० इसलिये भू० भूत व० कहना ज० जिसलिये जी० जीव जी० जीता है जी० जीवपना आ० आयुष्य क० कर्म उ० अनुभवे त० इसलिये जी० जीव व०

सिया. पाणे मये जीवे सत्ते विष्णुवेदेति वत्तव्वंसिया ॥ से केणट्टेणं पाणेतिवत्तव्वं-

सिया जाव वेदेतिवत्तव्वंसिया? जम्हा आणमंतिवा पाणमंतिवा, उरससंतिवा, निस्ससं-

तिवा, तम्हा पाणेतिवत्तव्वंसिया । जम्हा भूए भवइ भविस्सइ, तम्हा भूएतिवत्तव्वं-

सिया, जम्हा जीवे जीवइ जीवत्तं आउयं च कम्मं उवजीवइ तंम्हा जीवेति वत्तव्वं-

विरार का अंत नहीं करनेवाला यावत् अपूर्ण प्रयोजन की करणीवाला निर्ग्रथ पुनः मनुष्यादि गति में आता है. अहो भगवन् ! जो ऐसा निर्ग्रथ मनुष्यादि गति में आता है उन को क्या कहना ? अहो भौतम ! उन को प्राण, भूत, जीव, सत्त्व, विज्ञ व वेदक कहना. अहो भगवन् ! किस कारण से उन को प्राण, भूत यावत् वेदक कहना ? अहो गौतम ! वह श्वासोश्वास लेता है इस लिये प्राण कहाता है, वह अतीत काल में था, वर्तमान में है और आगापिक में होगा इस लिये भूत कहाता है, वह आत्मा जनि

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(सूत्रार्थ) (सूत्रार्थ) (सूत्रार्थ) (सूत्रार्थ) (सूत्रार्थ)

ह० शीघ्र आ० आते हैं ह० हां गो० गौतम म० मृतभोजी नि० निग्रय जा० यावत् नो० नहीं पु० फीर
इ० यहां ह० शीघ्र आ० आते हैं से० उनको भं० भगवन् किं० क्या व० कहना सि० सिद्ध
बु० बुद्ध मु० मुक्त पा० पारंगत प० परंपरा तग व० कहना सि० सिद्ध मु० मुक्त प० परिनिवृत्त अ०
अंतकृत स० सर्व दु० दुःख से प० मुक्तहुवे व० कहना स० वह ए० ऐसा भं० भगवन् भ० भगवान्

रणिजे णो पुणरवि इच्छत्तं हव्व मागच्छइ ? हंता गोयमा ! मडाईणं नियंठे जाव
नो पुणरवि इत्थत्तं हव्वं आगच्छइ ॥ सेणं भंते ! किं वत्तव्वं सिया ? गोयमा ! सि-
द्धेत्तिवत्तव्वं सिया, बुद्धेत्ति वत्तव्वं सिया, मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया, पारगएत्ति वत्तव्वं सि-
या, परंपरगएत्ति वत्तव्वं सिया, सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनिव्वुडे, अंतकडे सव्व दुक्खएव-

तार्थ करणीकरनेवाले निग्रय क्या पुनः मनुष्यादि गति में नहीं आते हैं ? हां गौतम ! मा-
सुक भोजन करनेवाले यावत् निष्टितार्थ करणीवाले पुनः मनुष्यादि गति में नहीं आते हैं, अहो भगवन् !
उन को क्या कहना ? अहो गौतम ! उन को सब कार्य की सिद्धि होने से सिद्ध कहना, चराचर पदार्थ
के ज्ञाता होने से बुद्ध कहना, समस्त कर्म से मुक्त होने से मुक्त कहना, संसार सागरको उत्तीर्ण होने से
पारंगत कहना, मिथ्यात्वादि गुणस्थान अथवा मनुष्यादि गति को परंपरा से जानने से अर्थात् भव रुमुद्र
के पार पहुंचने से परम्परागत कहना, कपाय से निवर्तने से परिनिवृत्त, संसार का अंत करने से अंतकृत

शब्दार्थ (सूत्र) भावार्थ

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्देवसहायजी ज्वालामसाहजी *

कहना ज० जिभलिये स० अस्तु सु० शुभाशुभ क० कर्म से त० इसलिये स०सत्व व० कहना ज० जिस-
लिये ति० तिक्त क० कटुक क० कपाय अं० अंबट म० मधुर र० रस जा० जाने त० इसलिये वि० विज्ञ
व० कहना दे० वेदता है सु०सुख दु० दुःख० त० इसलिये वे० वेदक व० कहना से० वह ते० इसलिये जा०
यावत् पा० प्राण जा० यावत् वे० वेद व० कहना ॥ ३ ॥ म० मृतभोजी नि० निर्ग्रथ नि० रुंधा भ० भव
नि० रुंधा भ० भवविस्तार जा० यावत् नि० पूरा हुवा अ० अर्थ कार्य नो० नहीं पु० फीर इ० यहां

सिया, जम्हा सत्ते सुहासुहेहिं कम्मोहिं तम्हा सत्तेवि वत्तव्वं सिया, जम्हा तिच्च, कटु,
कसाय अंबिल महुरे रसे जाणइ, तम्हा विण्णतत्ति वत्तव्वं सिया, वेदेइय सुहदुक्खं
तम्हा वेदेतिवत्तव्वं सिया, से तेणट्टेणं जाव पाणेति वत्तव्वंसिया, जाव वेदेतिवत्तव्वंसि-
या ॥ ३ ॥ मडाईणं भंते ! नियंठे निरुद्ध भवे निरुद्ध भवपंचे जाव निट्टियट्ट क-

अर्थात् प्राणों को धारन करता है और उपयोग लक्षणरूप जीवत्व जैसे ही आयुः कर्म को अनुभवता है
इस लिये जीव कहाता है. वह शुभाशुभ कर्म में आस्तु अथवा समर्थ है इसलिये सत्व कहाता है, वह
तिक्त, कटुक, कपाय, अम्बट व मधुर रस को जानता है इस लिये विज्ञ कहाता है और सुख दुःख को
वेदनेवाला होने से वेदक कहाता है. इस लिये अहो गौतम ! वह प्राण यावत् वेदक कहाता है ॥ ३ ॥
अहो भगवन् ! प्राणक भोजन करनेवाले जैसे ही भव व भव प्रपंच का निरुधन करनेवाले यावत् निष्टि-

शुभाशुभ कर्मों से तत्त्व व कहना ज जिभलिये स अस्तु सु शुभाशुभ क कर्म से त इसलिये ससत्व व कहना ज जिभलिये वि विज्ञ व कहना दे वेदता है सुसुख दु दुःख त इसलिये वे वेदक व कहना से वह ते इसलिये जा यावत् पा प्राण जा यावत् वे वेद व कहना ॥ ३ ॥ म मृतभोजी नि निर्ग्रथ नि रुंधा भ भव नि रुंधा भ भवविस्तार जा यावत् नि पूरा हुवा अ अर्थ कार्य नो नहीं पु फीर इ यहां

सूत्र

भावार्थ

शब्दार्थ

दिशा में छ० छत्रपलाश चे० चेत्य हो० था व० वर्णन युक्त स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर उ०
उत्पन्न णा० ज्ञान दर्शन युक्त जा० यावत् स० समवसरण प० परिपदा नि० निर्गता ॥६॥ ती० उस क०
क० गला न० नगरी की अ० नजदीक सा० सावत्थी ना० नामकी न० नगरी हो० थी व० वर्णनयुक्त
त० तहाँ सा० सावत्थी ण० नगरी में ग० गर्दभाली का अ० अंतेवासी खं० खंदक ना० नामका क०
कात्यायन गोत्रीय प० परित्राजक प० रहता है रि० ऋग्वेद ज० यजुर्वेद सा० सामवेद अ० अथर्ववेद इ०

छत्तपलासए णामं चेइए होत्था, वण्णओ । तएणं समणे भगवं महावीरे उप्पन्नणण

दंसणधरे जाव समोसरणं परिसा निग्गया ॥ ६ ॥ तीसेणं कयंगलाए नयरीए अदुर-

सामंते सावत्थीणामं नयरीहोत्था. वण्णओ तत्थणं सावत्थीए णयरीए गह्मालिस्स

अंतेवासी खंदए नाम कच्चायणसगोत्ते परिव्वायगे परिवसइ रिउब्बेय, जजुब्बेय, साम-

में चंपा नगरी का वर्णन कहा है वैया कहना. उस कयंगला नामक नगरी के बाहिर उत्तरपूर्व-ईशान
कोन में छत्र पलाश नामक यक्षका चैत्य है, उस का भी वर्णन उक्ताइ से जानना. वहांपर केवल ज्ञान
केवल दर्शन के धारक श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी पधारे. परिपदा बंदन करने को आइ. भगवन्त से
धर्मकथा सुनकर परिपदा पीछी गई. ॥ ६ ॥ उस कयंगला नगरी की पास एक सावत्थी नामकी नगरी
थी. उस का वर्णन भी उक्ताइ में से जानना. उस सावत्थी नगरी में गर्दभाली नामक तापस का

सा० श्रवण करनेवाला अ० कोई वक्त जे० जहाँ खं० खंदक क० कात्यायन गोत्री ते० तहाँ उ० आये आ०
 आकर खं० खंदक क० कात्यायन गोत्री को इ० यह अ० आक्षेप से पु० पूछे मा० मागध कि० क्या स०
 अन्त वाला लो० लोक अ० अन्तलोक स० अंतसहित जी० जीव अ० अनंत जी० जीव स० अन्त सहित सिद्धी अ०
 अनंत सिद्धी स० अंत सहित सिद्ध अ० अनंत सि० सिद्ध के० किस म० मरण से म० मरता जी०
 जीव व० वृद्धिप्राप्ति हा० हानिप्राप्ति ए० इतना आ० कहीं दु० बोलते ए० ऐसा से० वह खं० खंदक
 सावए परिवसइ ; तएणं से विंगलए नामं नियंठे वेसालिय सावए अण्णया कयाइं

जेणेव खंदए कच्चायणसगोत्ते तेणेव उवागच्छइ २ चा खंदयं कच्चायणसगोत्तं इण

मखेखवं पुच्छे, मागहा ! किं सअंतेलोए अणंतेलोए ? सअंतेजीवे, अणंते जीवे ?

सअंतासिद्धी, अणंतासिद्धी ? सअंतेसिद्धे, अणंतेसिद्धे ? केण वा मरणेण मरमाणे जीवे

छंइ निमित्त सो शब्द उत्पत्ति का शास्त्र, ज्योतिष शास्त्र, व अनेक ब्राह्मण सन्यासी संबंधी नीति शास्त्र

में निपुण थे ॥ ७ ॥ उस सावर्धी नगरी में श्री महावीर के वचन सुनने में रसिक पिंगलक नामक निर्ग्रंथ

रहता था. महावीर भगवन्त के वचन सुनने में रसिक ऐसे पिंगलक निर्ग्रन्थ एकदा कात्यायन गोत्रीय

खंदक नामक परिव्राजक की पास आये, आकर के उन को ऐसा प्रश्न पुछा कि अहो मागध ! क्या

? मागध देश में उत्पन्न होनेवाले.

शब्दार्थ (अन्तलोक) अन्तसहित जीव अन्त सहित सिद्धी अन्त सिद्धी स अंत सहित सिद्ध अ अनंत सिद्ध के किस म मरण से म मरता जीव व वृद्धिप्राप्ति हा हानिप्राप्ति ए इतना आ कहीं दु बोलते ए ऐसा से वह खं खंदक सावए परिवसइ ; तएणं से विंगलए नामं नियंठे वेसालिय सावए अण्णया कयाइं

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

क्या स० अंतःसाहित लोक जा० यावत् के० यावत् के० किस म० मरण से म० परता जी० जीव व० वृद्धिपामे हा०
 हानिपामे ए० इतना आ० कही बु० बोलता त० तत्र ते० वह खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय पि०
 पिंगलक निर्ग्रथ वे० वैशालिक सा० सुननेवाला दो० दो० त० तीन वक्त इ० यह अ० आक्षेप से पु० पूछते सं०
 शंकेत कं० कांक्षित वि० संदेहवाला भे० भेद को प्राप्त क० कालुष्य वाला नो० नही सं० शक्तिमान

तएणं से पिंगलए नियंठे वेसालीसावए खंदयं कच्चायणसगोत्तं दोच्चंपि इणमक्खेवं
 पुच्छे मागहा! किं सअंतेलोए जाव० केणवा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्डइवा, हायइवा,
 एतावंताव आइक्खाहि बुच्चमाणो एवं तएणं तेखंदए कच्चायणसगोत्तं पिंगलएणं नियंठेणं
 वेसालीसावएणं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए कंखिए चित्तिगिंछिए,

जानने की कांक्षा, अन्य को उत्तर देने में प्रतीति होवे वैसी वित्तिगिच्छा उत्पन्न हुई. जैसे ही मैंने
 इस का उत्तर नहीं जाना सो मतिभंग, भेद व मन में कालुष्यता हुई. जैसे ही वैसालिय श्रावक पिंगलक
 अनगर के एक ही प्रश्नों का उत्तर देने को असमर्थ हुआ. और मौन खडा रहा. तब उन वैसालिय
 श्रावक पिंगलक निर्ग्रथने पुनः यही प्रश्न पूछा की अहो मागध! अंत सहित लोक है यावत् किस मरण
 से संसार की वृद्धि होती है और किस मरणसे संसार का क्षय होता है? इस तरह पिंगलक निर्ग्रथने दो

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामुखी *

हे पि० पिंगलक नि० निर्ग्रथ वे० वैशालिक सा० सुननेवाला को कि० किंचित् पि० उत्तर अ० कहने को तु० तुष्णीक सं० रहे ॥ ८ ॥ त० तत्र सा० सावत्थी न० नगरी से सि० सिंघाडे जैसे जा० यावत् प० रस्ते में म० महो पुरहो सं० संमर्द ज० जन समुदाय प० परिपदा नि० गइ त० तत्र खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय व० बहुत ज० मनुष्य की अ० पास स० यह अर्थ सो० सुनकर नि० अघाकर इ० इसरूप अ० भेदसमांघने, कलुससमांघने नांसांवाइ पिंगलरस नियंठरस वेसालिय सात्रयस्स किं- चित्रि पमोक्खमक्खाइओ तुसिणीए संचिट्ठइ ॥ ८ ॥ तएणं सावत्थीए नयरीए सिं- घाडग जाव पहेसु महाजण सम्मंइइवा, जण बूहेइवा, निगइछइ तएणं तस्स खंदयस्स कच्चायणसगोत्तरस्स बहुजणरस अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म इमंएयारूवे अज- रिथए, चिंतिए, पाच्छिए, मणोगए संकपे समुप्पज्जित्था एवं खलु समणे भगवं महा- तीन चार वैसाही प्रश्न पूछा परंतु कात्यायन गोत्रीय स्कंदक परिब्राजक को शंका, कांक्षा, वित्तिगिच्छा, भेद व कालुष्यता प्राप्त होने से उन के प्रश्न का उत्तर नहीं दे सका और मौन खड़ा रहा ॥ ८ ॥ उस समय श्रावस्ती नगरी के तीन रस्ते मिलने के स्थान, चौक यावत् बहुत रस्ते मिलने के स्थान पर बहुत मनुष्यों के समुदाय की परिपदा श्री श्रमण भगवन्त को बंदना करने को नीकली. और परस्पर, ऐसा बोलने लगे की श्री श्रमण भगवन्त महावीर कयलंगा नगरी के छत्रपलाश नामक उद्यान में पधारे हैं. ऐसा बहुत मनुष्यों की पाससे श्रवण करके

शब्दार्थ कलुससमांघने नांसांवाइ पिंगलरस नियंठरस वेसालिय सात्रयस्स किंचित् पि० उत्तर अ० कहने को तु० तुष्णीक सं० रहे ॥ ८ ॥ त० तत्र सा० सावत्थी न० नगरी से सि० सिंघाडे जैसे जा० यावत् प० रस्ते में म० महो पुरहो सं० संमर्द ज० जन समुदाय प० परिपदा नि० गइ त० तत्र खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय व० बहुत ज० मनुष्य की अ० पास स० यह अर्थ सो० सुनकर नि० अघाकर इ० इसरूप अ० भेदसमांघने, कलुससमांघने नांसांवाइ पिंगलरस नियंठरस वेसालिय सात्रयस्स किं- चित्रि पमोक्खमक्खाइओ तुसिणीए संचिट्ठइ ॥ ८ ॥ तएणं सावत्थीए नयरीए सिं- घाडग जाव पहेसु महाजण सम्मंइइवा, जण बूहेइवा, निगइछइ तएणं तस्स खंदयस्स कच्चायणसगोत्तरस्स बहुजणरस अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म इमंएयारूवे अज- रिथए, चिंतिए, पाच्छिए, मणोगए संकपे समुप्पज्जित्था एवं खलु समणे भगवं महा- तीन चार वैसाही प्रश्न पूछा परंतु कात्यायन गोत्रीय स्कंदक परिब्राजक को शंका, कांक्षा, वित्तिगिच्छा, भेद व कालुष्यता प्राप्त होने से उन के प्रश्न का उत्तर नहीं दे सका और मौन खड़ा रहा ॥ ८ ॥ उस समय श्रावस्ती नगरी के तीन रस्ते मिलने के स्थान, चौक यावत् बहुत रस्ते मिलने के स्थान पर बहुत मनुष्यों के समुदाय की परिपदा श्री श्रमण भगवन्त को बंदना करने को नीकली. और परस्पर, ऐसा बोलने लगे की श्री श्रमण भगवन्त महावीर कयलंगा नगरी के छत्रपलाश नामक उद्यान में पधारे हैं. ऐसा बहुत मनुष्यों की पाससे श्रवण करके

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

मं लकर छ० छत्र वा० पंगरखा सं० युक्त धा० धातुरक्त व० वस्त्र प० पहनकर सा० सावत्थी न० नगरी
की म० मध्य से नि० निकलकर जे० जहां क० कयंगला न० नगरी जे० जहां छ० छत्रपलास चे० चैत्य
जे० जहां स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर ते० तहां पा० निश्चय क्रिया ग० जाने को ॥ ९ ॥ गो०
गौतमादि स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर भ० भगवान् गो० गौतम को ए० ऐसा व० बोले द०

छत्रोवाहण संजुत्ते, धाउरत्त वत्थ परिहिण्ण, सावत्थीए नयरीए मज्झं मज्झेणं निगच्छइ
निगच्छइत्ता जेणेव कयंगला नगरी, जेणेव छत्रपलासए चेइए, जेणेव समणे भगवं
महावीरे तेणेव पाहारेच्छ गमणाए ॥ ९ ॥ गोयमाइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं
वयासी दच्छिसिणं गोयमा! पुव्वसंगइयंकंतं, कं भंते? खंदयं नाम । से काहेवा, कि-

नीकलकर त्रिदंड, कमंडल, रुद्राक्षमाला, मृत्तिका का भाजन, मृत्तिका आसन विशेष, प्रमार्जन करने का
कषडा, पङ्नालिका, वृक्ष पल्लव को छेदनेवाला अंकुश, ताम्बेकी मुद्रिका व कालाचिका इत्यादि हस्त में
धारन करके, शिरपर छत्र रखकर, पांव में उपानह रखकर, भगवे वस्त्र पहिन कर, सावत्थी नगरी के
मध्य में से नीकलकर जहां कयंगला नामक नगरी के छत्र पलाश उद्यान में श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी
थे वहां आनेका अभिलाषी हुवा ॥ ९ ॥ उस समय श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामीने गौतम स्वामी को
बोलाकर कहा कि अहो गौतम ! तूं तेरा पूर्व संगतिवाला भिन्न को देखेगा. तव गौतम स्वामी बोले की

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

क० कल्याण कारी म० मंगल कारी दे० देव चे० ज्ञानरूप प० पूजते इ० उस ए० ऐसा अ० अर्थ हे० हेतु प० मन्त्र वा० व्याकरण पु० पूछना क० करके ए० ऐसा सं० आलोचकर जे० जहाँ प० परिव्राजक की व० वसति ते० तहाँ आ० आकर ति० त्रीदंड कुं० कर्मंडल कं० रुद्राक्ष माला क० मिट्टिका भाजन० भि० आसन के० चीवरखंड० छ० त्रिगुडी अ० अंकुश प० ताँबे की मुद्रिका ग० आभरण० विशेष छ० छत्र वा० पगरत्ना पा० पावडी धा० श्राटिका गे० ग्रहणकर प० परिव्राजक व० वसति से प० निकलकर ह० हस्त में च्छिन्न ए० चिकट्टु एवं संपेहेइ २ ता, जेणेव परिव्वायगा वसही तेणव उत्रागच्छइ उवा-

गच्छइत्ता तिदंडंच, कुडियंच, कंचणियंच, करोडियंच, भिसियंच, केसरियंच, छणालियंच, अंकुसयंच, पवित्तयंच, गणत्तियंच, छत्तयंच, वाहणाउय पाउयाउय धाउरत्ताउयगेण्हइ गेण्हइत्ता परिव्वायगवसहीओ परिनिक्खमइत्ता, परिनिक्खमइत्ता, तिदंडं कुडियं, कंचणियं, करोडियं, भिसियकेसारियछनालयअंकुसयपवित्तियगणेत्तिय हत्थगए,

आकर १ त्रिदंड, २ कर्मंडल ३ रुद्राक्षमाला ४ मृत्तिका का भाजन ५ मृत्तिका का आमन विशेष ६ प्रमाजने का कपडा ७ पइनालिका-त्रिकाष्टिका ८ दृक्षपल्लव को छेदनेवाला अंकुश ९ ताम्बेकी मुद्रिका १० कान्थाचिका आभरण विशेष ११ शिरपर धारन करने का छत्र १२ पाँव में पहिने का उपानह १३ लकडी की चाखडी १४ गेरु से रंगे हुये भगवे वस्त्र ऐसे भाव ग्रहण कर परिव्राजककी वसति में से नीकला,

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

गो० गौतम स० श्रमण भ० भगवान् भ० महावीर को वं० वंदनाकर न० नमस्कार कर वं० चोले प० समर्थ भं० भगवन् खं० स्कंदक क० कात्यायन गोत्रीय दे० देवानुप्रियाकी अं० पास मुं० मुंड भ० होकर अ० अगारसे अ० अन्नगर को प० प्रव्रजित होनेको हं० हां प० प्रभु ॥ १ ॥ जा० जितना काल स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर भ० भगवान् गो० गौतम की पास ए० यह अर्थ प० करते हैं ता० उस वक्त में खं० स्कंदक

भगवं गौयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ २ चा एवं वयासी पहुणं भंते !

खंदए कच्चायणसगोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भावित्ता अगाराओ अणगारियं

पव्वइत्तए ? हंता पभु ! ॥ ११ ॥ जावंचणं समणे भगवं महावीरे भगवओ

गोयमस्स एयमटुं परिकहेइ तावंचणं खंदए कच्चायणसगोत्ते तं देसं हव्वमागए. तए-

स्वामी महावीर भगवंत को वंदना नमस्कार करके ऐसा पूछने लगे की अहो भगवन् ! क्या कात्यायन गोत्रीय स्कंदक परिव्राजक आपकी पास दीक्षा ग्रहण कर मुंड होने को समर्थ है ? हां गौतम ! वह स्कंदक परिव्राजक दीक्षा लेने को समर्थ है ॥ ११ ॥ श्री महावीर भगवन्त गौतम स्वामी को ऐसा कह रहे थे इतने में कात्यायन गोत्रीय स्कंदक परिव्राजक उस वगीचे के एक देश में आ पहुंचे. उम समय श्री गौतम स्वामी कात्यायन गोत्रीय स्कंदक मुनि को पास आये जानकर उपस्थित हुये, * उपस्थित होकर

श्री गौतम स्वामी स्कंदक परिव्राजक असंयतीको देखकर खंडेहुवे जिसका कारन यह है कि वह आंगे

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्याजप्रनादजी *

देसों गो० गौतम पु० पूर्व सं० मित्रको कं० किनको भं० भगवन् खं० खंदक को का० किसवक्त कि०
किसतरह के० कितने वक्त में ए० ऐसा गो० गौतम ते० उस समय में सा० सावथी न० नगरी ग० गर्द-
भालिका अं० अंतेवासी खं० खंदक का० कात्यायन गोत्रीय प० परिव्राजक प० रहता है उ० उनको जा०
यावत् म० मेरीपास पां० निश्चय किया ग० आने को से० वह अ० नजदीक व० बहुत नजदीक अ०
पार्ग में प० रहाहुवा अं० रस्ते में व० रहा है अ० आजही दि० देखेगा ॥ १० ॥ भ० भगवान् गो०

हंवा, केवचिरेणवा? एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणंसमएणं सावथी णागं णयरी होत्था,
वण्णओ, तत्थणं सावथीए नगरीए गह्मालिस्स अंतेवासी खंदए णामं कच्चायणसगोत्ति
परिव्यायए परिवसइ तच्चैव जाव जेणैव मम अंतिए तेणव पाहरेच्छ गमणाए सेअदुरामए
वहुसंपत्ते, अट्ठाणपडिवण्णे अंतरापहे वट्ठइ अजेवणं विच्छसि गोयमा ! ॥ १० ॥ संतेत्ति

पूर्व संगतिवाला कौनसा मित्रको मैं देखूंगा ? तब श्री भगवन्त बोलें की तू खंदक को देखेगा. तब गौतम
साथी बोलें की किस समय, किस प्रकार व कितनी देर में मिलेगा ? तब श्री भगवन्त बोलें की उस
काल उस समय में श्रावस्ती नामक नगरी में गर्दभाली परिव्राजकका शिष्य कात्यायन गोत्रीय खंदक
नामक परिव्राजक रहता है. उनको पिंगलक निर्ग्रथने प्रश्न किया. जिस का उत्तर नहीं दे सकने से
श्री गौतम ने कहा है. वह अभी रस्ते के मध्य में है और उसे तू आज ही देखेगा ॥ १० ॥ श्री गौतम

शब्दार्थ

सूत्र

वार्थ

भूमा शनकका पादिला बंदशा

धिगलक नि० निर्ग्रय वे० वैशालिक सा० श्रवण करनेवाला इ० इत अ० आक्षेप पु० पूछा मा० मागध कि० अ० अर्थ स० समर्थ हं० हो अ० है त० तव से० वह खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय भ० भगवान् गो० गौतम को ए० ऐसा व० कहा से० वह के० कौन गो० गौतम त० तथारूप णा० ज्ञानी त० तपस्वी जे० जिससे त० तुमने ए० यह अर्थ म० मेरा र० रहस्य ह० शीघ्र अ० कहा ज० जिससे तु० तुम जा० जानते हो त० तव भ० भगवान् गो० गौतम खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय को ए० ऐसा

त्रयणं इणमक्खेवं पुच्छिणु मागहा ! किं सअंतिलोए, एवं तंचेव जेणेव इहं तेणेव हव्व मागएः सेणुणं खंदया ! अट्टे समट्ठे ? हंता अत्थि ॥ तएणं से खंदए कच्चायणस- गोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी—से केसिणं गोयमा ! तहारूवे णाणीवा, तवस्सीवा, जेणं तव एसअट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वमक्खाए, जओणं तुमं जाणासि तएणं

होती है ? उस का उचर नहीं आने से तुम महावीर भगवन्त की पास से सुनने को आये हो. अहो स्कंदक क्या यह सत्य है ? स्कंदकने उत्तर दिया की हां यह सत्य है. तव कात्यायन गोत्रीय स्कंदकने पुछा कि अहो गौतम ! ऐसा कौन तथारूप ज्ञानी व तपस्वी है कि जिनेने मेरे मन का रहस्य तुम को कहा ! अहो स्कंदक ! मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक धर्मगुरु श्री श्रमण भगवंत केवल ज्ञान केवल दर्शन के

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

पुत्राणि त्रयानि पणानि (मातुं) भूमा

व० कथा खं० खंदक म० भरे ध० धर्माचार्य ध० धर्मोपदेशक स० श्रमण भं० भगवान् म० महात्मार उ०
 उत्पन्न पा० ज्ञान द० दर्शन युक्त अ० अरिहंत जि० जिन के० केवली ती० अतीत प० वर्तमान
 अ० अनागत वि० विज्ञानक स० सर्वज्ञ स० सर्वदर्शी जे० जिनने म० मुझे ए० यह अर्थ त० तुमारा र०
 हृदय भाव ह० शीघ्र अ० कथा ज० जिनसे अ० मैं जा० जानताहूँ खं० खंदक ॥ १२ ॥ त० तव खं०
 खंदक क० कात्यायन गोत्रीय भं० भगवान् गो० गौतम को ए० ऐसा व० बोले ग० जात्रे गो० गौतम
 से भगवंतं गोयमे खंदयं कच्चायणसगोत्तं एवं वयासी एवं खलु खंदया ! मम धम्मयारिए
 धम्मोवएसए, समणे भगवंतं महावीरे उप्पण्णणणदंसणधरं अरहा जिणे केवली,
 तीय पच्चुप्पण मंणागय वियाणए सव्वण्ण सव्वदरिसी, जेणं ममएसअट्ठे तवताव
 रहस्सकडे हव्वमक्खाए जओणं अहं जाणामि खंदया ? ॥ १२ ॥ तण्णं से खंदए
 कच्चायणसगोत्ते भगवंतं गोयमं एवं वयासी. गच्छामोणं गोयमा ? तव धम्मयारियं
 धारक श्री महावीर स्वामी है. वे इन्द्रादिक के वंदनीक पूजनीक, रागादि शत्रु को जीतनेवाले,
 सत्र दोष रहित, व अतीत, अनागत व वर्तमान के ज्ञानी सर्वज्ञ, सर्वदर्शी है. इन्होंने मुझे यह
 अर्थ तुम्हारे आये पहिले बतलाया. उन के कथनसेही मैं यह जानता हूँ ॥ १२ ॥
 तव स्कंदक परित्राजक बोले की अहो गौतम ! मैं तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्री श्रमण भगवंत महा-

त० तुमारे ध० धर्माचार्य पास की ध० धर्मोपदेशक की पास स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर को
 वं० वदि नं० नमस्कार कर जा० यावत् प० पूजे अ० यथासुखम् दे० देवानुग्रिय मा० मत प० प्रति
 वंथ क० करो त० तव भ० भगवान् गो० गौतम खं० स्कंदक क० कात्यायन गोत्रीय की स० साथ जे० जहां
 स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर ते० तहां प० निश्चय कीया ग० जाने को ॥ १३ ॥ ते०
 उम काल ते० उस समय में स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर वि० नित्य भोजी हो० थे त०
 तव स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर वि० नित्यभोजी का स० शरीर को उ० उदार सिं० शो-
 धस्मोवदेसयं समणं भगवं महाधीरं वंदामो नमंसामो जाव पञ्जुवासामो । अहासुहं
 देचाणुप्पिया ! मापडिबंधंकरेह ॥ तएणं भगवं गोयमे खदएणं कच्चायणसगोत्तिणं सद्धिं
 जेणेव समणे भगवं महावीरे तेनेव पहारेच्छ गमणाए ॥ १३ ॥ तें कालेणं तेणं समएणं
 समणे भगवं महावीरे त्रियट्ठभोजीयावि होत्था ॥ तएणं समणस्स भगवओ महावीर-
 स्स त्रियट्ठभोइस्स सरीरयं उरालं सिंगारं कल्लाणं सित्रं धन्नं मंगल्लं अणलंकिय त्रिभू-
 वीर स्वापी को वंदना नमस्कार करूं. अहो स्कंदक ! जैसे तुम को सुल हेवे वैसे करो, विलम्ब मत करो.
 तव श्री गौतम स्वामी स्कंदक परित्रागक को साथ लेकर जहां श्रमण भगवंत महावीर स्वामी थे वहां
 आये ॥ १३ ॥ उस काल उस समय में श्री श्रमण भगवंत महावीर नित्यभोजी थे. उन का शरीर

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

भावन्त कः कल्याण करी सि० श्रेयकारी ध० धन्य म० मंगलकारी अ० अलंकार रहित वि० विभू-
पित ल० लक्षण वं० व्यंजन गु० गुणयुक्त सि० श्री जैसे अ० अतीव उ० शोभते चि० रहते हैं ॥ १४ ॥
त० तहां से० वह खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रिय स०श्रमण भ० भगवान् म० महावीर का वि०
नित्य भोजी स० शरीर उ० उदार जा० यावत् अ० अतीव उ० शोभता पा० देखकर ह० आनंद
तु० तुष्ट चि० चित्तमें आ० आनंद हुवा पी० प्रीति हुइ प० उत्कृष्ट सा० अच्छा मन हुवा ह० हर्षयुक्त

सियं लखलण वंजन गुणोववेयं, सिरीए अतीव उवसोभमाणे चिट्ठइ ॥ १४ ॥
तएणं से खंदए कच्चांयणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्ठभोइस्स सररीयं
उरालंयं जाव अतीव अतीव उवसोभमाणं पासइ पासइचा हट्टुट्टुचिच्चमाणंदिए
पीइमाणे परमसोमणसिए हरिसवसविसप्पमाणहियए, जेणेव समणे भगवं महावीरे

अतिशय शोभावन्त, श्रेयकारी, उपद्रवकारी, वस्त्राभरण रहित होनेपर शोभनिक व लक्षण व्यंजन युक्त था.
॥ १४ ॥ उस समय कात्यायन गोत्रीयं स्कंदक परिव्राजक नित्यभोजी श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी
का शरीर को अत्यंत शोभनिक यावंत लक्षण व्यंजन युक्त देखकर हृष्ट पुष्ट चित्तवाला हुआ, बहुत संतोषित
हुआ, आनंदित चित्तवाला हुआ, मन में प्रीति उत्पन्न हुई और परम उत्कृष्ट हर्ष उत्पन्न हुआ. इस तरह से

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

वि० विस्तार हि० हृदय वाला जे० जहाँ स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर ते० तहाँ उ० आकर
 स० श्रमण भ० भगवन्त महावीर को ति० तीनवार आ० आदान प० प्रदक्षिणा क० करके जा० यावत्
 प० पूजनेलगे ॥ ५ ॥ स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय की
 ए० ऐसा व० बोले तु० तुम को खं० खंदक सा० सावत्थी ण० नगरी में पि० पिंगलक निर्ग्रथ वे० वैशालिक
 सा० सुनने वाला इ० इस अ० प्रश्न से मा० मागध कि० क्या स० अंतसहित लोक अ० अनंत-

तेणेव उवागच्छइ रत्ता, समणं भगवं महावीरं तिम्वुत्तो आयाहिणं पयाहिणं पयाहिणं करेइ जाव
 पज्जुवासइ ॥ १५ ॥ खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं कच्चायणसगोत्तं एवं
 वयासी सेणणंतुमं खंदया ! सावत्थीए णयरीए पिंगलएणं नियंठेणं वेसालिसावएणं
 इणमक्खेवं, मागहा ! किं सअंतलोए, अणंतलोए एवं तंचेव जाव जेणेव मम अंति-

हर्षित बनाहुआ जहाँ श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी थे वहाँ आपे ; आकर श्री श्रमण भगवंत महा-
 वीर को तीन आदान व प्रदक्षिणा की, यावत् सेवाभक्ति की ॥ १५ ॥ तव श्री श्रमण भगवंत महावीर
 स्वामीने कात्यायन गोत्रीय खंदक को पूछा कि अहो खंदक ! श्रावस्ती नगरी में महावीर के वचन सुनने
 का रसिक पिंगल निर्ग्रन्थने ऐसा पूछा कि अहो मागध ! अंत सहित लोक है या अंत रहित लोक है यावत्
 किम मरण भे जीव संसार की वृद्धि व हानि करता है ? उस का उत्तर नहीं दे सकनेसे तू शीघ्र मेरी

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेव सहायजी ज्वालप्रसादजी *

लोक जा० यावत् म० मेरी अं० पास ह० शीघ्र आ० आया से० वह खं० खंदक अ० अर्थ-स० समर्थ
हं० हां अ० है खं० खंदक ए० ऐसा अ० आत्मविषय में चि० चिंतन प० प्रार्थनारूप म० मनोगत सं०
संकल्प स० उत्पन्न हुआ कि० क्या स० अंतसहित लोक अ० अंतलोक त० उस का अ० यह अर्थ म०
मैंने खं० खंदक च० चार प्रकार का प० प्ररूपा द० द्रव्य से खं० क्षेत्र से का० काल से भा० भाव से
द० द्रव्य से ए० एक लो० लोक म० अंतसहित खं० क्षेत्र से लो० लोक अ० असंख्यात जो० योजन

ए तेणैव हव्वमागए । सेणणं खंदया ! अट्टे समट्टे ? हंता आत्थि ॥ जेविय ते खंदया !
अयमेवाह्वे अब्झात्थिए चित्थिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था, किं
सअंतैलेए अणंतैलेए तस्सवियणं अयमट्टे, एवं खलुमए खंदया ! चउव्विहे लेए
पणत्ते तंजहा-दव्वओ, खत्तओ, कालओ, भावओ. । दव्वओणं एगेलोए सअंतं, ॥

पास आया है तो क्या यह बात सत्य है? खंदक बोले हां यह सत्य है. अहो खंदक! तेरे मन में ऐसा अश्र्वत्र
माय, चिन्तन, मनन, व मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि क्या अंत सहित लोक है या अंत रहित लोक
है. परंतु अहो खंदक! मैं लोक को इस प्रकार प्ररूपता हूँ. लोक के चार भेद कहे हैं द्रव्यसे, क्षेत्रसे,
कालसे व भाव से. द्रव्य से पंचास्तिकायरूप एक, वह द्रव्य तत्त्व से अंत सहित है, क्षेत्र से सब लोक
का मध्य मेरुपर्यंत है उससे वह ऊर्ध्व, अधो व तिर्यक् दिशा की लम्बाई व चौड़ाई में असंख्यात योजन का

को० कोडा कोडा आ० लंबा वि० चौडा अ० असंख्यात जो० योजन को० कोडा कोड प० परिधि में अ० है से० उस का अं० अंत का० काल से लो० लोक न० नहीं क० कदापि न० नहीं आ० हुवा न० नहीं कदापि न० नहीं है न० नहीं कदापि न० न होगा सु० हुवा भ० होता है भ० होगा धु० धुव नि० नित्य सा० शाश्वत अ० अक्षय अ० अवस्थित अ० नित्य नि० नित्य नि० नित्य नि० नित्य नि० अंत मा० भाव से लो० लोक अ० अंतत वर्ण प० पर्यव गं० गंध र० रम फा० स्पर्श अ० अंत सं०

स्वच्छओणं लोए असंखजाओ जोयण कोडाकोडीओ आयामत्रिख्वेमणं, असंखजाओ जोयण कोडाकोडीओ परिख्वेवणं पणत्ता, आत्थि पुण सेअंते. ॥ कालओणं लोए

न कयाइ न आसि, न कदाइ न भवइ, न कदाइ न भविसइ, भविसुय, भवतिय, भविससइय धुवे, णियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अत्रिट्टिए, णिच्चं, णत्थियुणसे अंते, भावओणं

लोए अणंतावण पज्जावा, गंधरसफास, अणंता संटुण पज्जावा, अणंता गुरुय लहुय

है और परिधि भी उस की असंख्यात योजन की है ताहापि वह लोक अंत सन्निह है काल से पहिला लोक नहीं था वैसा नहीं, वर्तमान में नहीं है वैसा नहीं, भविष्य में नहीं होगा वैसा नहीं; परंतु अतीतकाल में था, वर्तमान में है और भविष्य में होगा. और भी वह ध्रुव, नित्य, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित व नित्य है. इसलिये कालसे लोक का अंत नहीं है. भाव से लोक के अनंत वर्ण पर्यव गंध, रस व स्पर्श

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालामुखी *

लोक जा० यावत् म० मेरी अ० पास ह० शीघ्र आ० आया से० वह ख० खंदक अ० अर्थ स० समर्थ
ह० हां अ० है ख० खंदक ए० ऐसा अ० आत्मविषय में चि० चिंतवन प० प्रार्थनारूप म० मनोगत सं०
संकल्प स० उत्पन्न हुआ कि० क्या स० अंतर्निहित लोक अ० अनंतलोक त० उस का अ० यह अर्थ म०
मैंने ख० खंदक च० चार प्रकार का प० प्ररूपा द० द्रव्य से ख० क्षेत्र से का० काल से भा० भाव से
द० द्रव्य से ए० एक लो० लोक स० अंतर्निहित ख० क्षेत्र से लो० लोक अ० असंख्यात जो० योजन

ए तेणैव हव्वमागए । सेणणं खंदया ! अट्टे समेट्ठे ? हंता अत्थि ॥ जेवियि ते खंदया !
अयमेवाख्वे अज्झत्थिए चित्थिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था, किं
सअंतेलोए अणंतेलोए तस्सावियणं अयमट्ठे, एवं खलुमए खंदया ! चउत्थिवहे लोए
पणत्ते तंजहा—दव्वओ, खच्चओ, कालओ, भावओ. । दव्वओणं एगेलोए सअंतं, ॥

पास आया है तो क्या यह बात सत्य है? खंदक बोले हां यह सत्य है. अहो खंदक! तेरे मन में ऐसा अर्थात्
माप, चिंतवन, मनन, व मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि क्या अंतर्निहित लोक है या अंतर्निहित लोक
है. परंतु अहो खंदक! मैं लोक को इस प्रकार प्ररूपता हूँ. लोक के चार भेद कहे हैं. द्रव्यसे, क्षेत्रसे,
कालसे व भाव से. द्रव्य से पंचास्तिकायरूप एक, वह द्रव्य तत्त्व से अंतर्निहित है, क्षेत्र से सब लोक
का मध्य मेरुपर्यंत है उससे वह ऊर्ध्व, अधो व तिर्यक् दिशा की लम्बाई व चौड़ाई में असंख्यात योजन का

अवगाधिक अ० है मे० उसका अं० अंत का० काल से जी० जीव न० नहीं क० कदापि नहीं हुवा णि० नित्य न० नहीं हैं से० उसका अं० अंत भा० भाव से जी० जीव अ० अनंत ना० ज्ञान पर्यव अ० अनंत द० दर्शन पर्यव अ० अनंत च० चारित्र पर्यव अ० अनंत गु० गुरुलघु पर्यव अ० अनंत अ० अगुरुलघु पर्यव न० नहीं है से० उसका अं० अंत द० द्रव्य से जी० जीव स० अंतसहित खे० क्षेत्र से स० अंतसहित का० काल से अ० अनंत भा० भाव से जी० जीव अ० अनंत ॥ १७ ॥ जे० जो खं०

नत्थि पुणसे अंतं, भावओणं जीवे अणंता णाणपज्जवा, अणंता दंसण पज्जवा, अणंता चरित्तपज्जवा, अणंता गुरुय लहुय पज्जवा, अणंता अगुरुय लहुय पज्जवा, नत्थि पुण से अंते । सेत्तं दब्बओ जीवे सअंतं, खत्तओ जीवे सअंते, कालओजीवे अणंतं, भावओ जीवे अणंते ॥ १७ ॥ जेवियणं तेखंदया पुच्छा अंतासिद्धी,

ख्यात प्रदेशात्मक है इसलिये अंत सहित है, कालसे जीव पहिले नहीं था वैया नहीं, नहीं है वैया नहीं व नहीं होगा वैया नहीं, परंतु अतीत कालमें था, वर्तमानमें है और आगामिकमें होगा, वैसे ही वह नित्य, शश्वत है, इसलिये काल से जीव अंत रहित है. भावसे जीव को अनंत ज्ञान पर्यव, अनंत दर्शन पर्यव, अनंत चारित्र पर्यव, अनंत गुरुलघु पर्यव है, इसलिये जीव अंत रहित है. इत तरह द्रव्यसे जीव अंत सहित है, क्षेत्र से जीव अंत सहित है, काल से व भाव से जीव अंत रहित है ॥ १७ ॥ अशे खंदक !

(अन्तः)

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

संस्थान प० पर्यव अ० अंनंत गु० गुरुलघुके प० पर्यव अ० अंनंत अ० अगुरुलघु पर्यव न० नहीं है से० उस का अ० अंत ख० खंदक द० द्रव्य से लो० लो० अ० अंतसहित खे० क्षेत्र से लो० लोक स० अंतसहित का० काल से लो० लोक अ० अंनंत भा० भाव से लो० लोक अ० अंनंत ॥ १६ ॥ खे० खंदक जा० यावत् स० अंतसहित जी० जीव अ० अंनंत जीव त० उस का अ० यह अर्थ जा० यावत् द० द्रव्य से ए० एक जीव स० अंतसहित खे० क्षेत्र से जी० जीव अ० अंतसख्यात प० प्रदेशिक अ० अंतसख्यात प्रदेश पञ्चवा, अणता अगुरुलघुपञ्चवा, नस्थिपुणसे अंते ॥ सेत्तं खंदया ! दब्बओ लोगेसअंते, खेत्तओलोए सअंते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते ॥ १६ ॥ जिविय ते खंदया ! जाव सअंतेजीवे अणंतेजीवे, तस्सवियणं अयमट्ठे एवं खलु जाव दब्बओणं एंगंजीवे सअंते, खेत्तओणं जीवे असंखेज्ज एएसिए, असंखेज्ज एएसोगाढे, अत्थिपुण से अंते, कालओणं जीवे नक्कदाइ न आसि णिच्चे पर्यव, अंनंत संठान पर्यव, अंनंत गुरुलघु पर्यव, व अंनंत अगुरुलघु पर्यव हैं. इसलिये भावसे लोक अंनंत हैं. इसतरह से अहो स्कंदक ! द्रव्यसे लोक अंत सहित, क्षेत्रसेभी अंत सहित, कालसे व भाव से लोक अंनंत है ॥ १६ ॥ अहो स्कंदक ! जीव अंत सहित है या अंत रहित है उस प्रश्न के उत्तर में जीव के चार भेद कहे हैं द्रव्य से, क्षेत्रसे, कालसे व भावसे, द्रव्य से एकही जीव है वह द्रव्य से अंत सहित है. क्षेत्रसे अपं-

शब्दाथ

सुत्र

पार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥

अवगाधिक अ० हे मे० उसका अं० अंत का० काल से जी० जीव न० नहीं क० कदापि नहीं हुवा णि० नित्य न० नहीं हैं से० उसका अं० अंत भा० भाव से जी० जीव अ० अनंत ना० ज्ञान पर्यव अ० अनंत द० दर्शन पर्यव अ० अनंत च० चारित्र पर्यव अ० अनंत गु० गुरुलघु पर्यव अ० अनंत अ० अगुरुलघु पर्यव न० नहीं है से० उसका अं० अंत द० द्रव्य से जी० जीव स० अंतसहित खे० क्षेत्र से स० अंतसहित का० काल से अ० अनंत भा० भाव से जी० जीव अ० अनंत ॥ १७ ॥ जे० जो खं०

नत्थि पुणसे अंतं, भावओणं जीवे अणंता णाणपज्जावा, अणंता दंसण पज्जावा, अणंता चरित्तपज्जावा, अणंता गुरुय लहुयपज्जावा, अणंता अगुरुय लहुय पज्जावा, नत्थि पुण से अंते । सेत्तं दव्वओ जीवे सअंते, खेत्तओ जीवे सअंते, कालओजीवे अणंते, भावओ जीवे अणंते ॥ १७ ॥ जेवियणं तेखंदया पुच्छा अंतासिद्धी,

ख्यात प्रदेशात्मक है इसलिये अंत सहित है, कालसे जीव पहिले नहीं था वैसा नहीं, नहीं है वैसा नहीं व नहीं होगा वैसा नहीं, परंतु अतीत कालमें था, वर्तमानमें है और आगामिकमें होगा, वैसे ही वह नित्य, शा- श्वत है, इसलिये काल से जीव अंत रहित है. भावसे जीव को अनंत ज्ञान पर्यव, अनंत दर्शन पर्यव, अनं- त चारित्र पर्यव, अनंत गुरुलघु पर्यव है, इसलिये जीव अंत रहित है. इत तरह द्रव्यसे जीव अंत सहित है, क्षेत्र से जीव अंत सहित है, काल से व भाव से जीव अंत रहित है ॥ १७ ॥ अशे खंडक !

खंदक पु० पृच्छा अं० अंत सहित सि० सिद्धि अं० अनंत सिद्धि तं० उनका अं० यह अं० अर्थ मं०
 धेने च० चार प्रकार की सि० सिद्धि पं० प्ररूपी दं० द्रव्य से ए० ए० सिद्धि स० अंतसहित खे० क्षेत्र से पं०
 पैतालीस जो० योजना स० लक्ष आ० लंबी वि० चौड़ी ए० एक जो० योजना क्रोड वा० वीयालीस स०
 लक्ष ती० तीस स० सहस्र दो० दो उ० इगुणपचास जो० योजना स० शत किं० किंचित् वि० विशेषाधिक
 पं० परिधि में पं० प्ररूपी अं० है से० उसका अं० अंत का० काल से सि० सिद्धि न० नहीं क० कदपि न० नहीं
 अण्तासिद्धी, तरसवियणं अयमट्टे, मए चरव्विहासिद्धी पं० तं० दव्वओ खेत्तओ,
 कालओ, भावओ. दव्वओणं एगासिद्धी, सअंता । खेत्तओणंसिद्धी पणयालीस
 जोयणसयसहरसाइं आयाम व्तिक्खभेणं, एगाजोयण कोडी बायालीसं सयसहरसाइं
 तीसंच सहसाइं दोण्णियअ उणापण्णे जोयणसए किंचित्तिससाहिए परिवेखवेणं
 पण्णत्ता, अत्थियणसे अंते, कालओणंसिद्धी नकदाइनआसि, ॥ भावओय जहा
 तुम को सिद्ध शिला अंत सहित है या अंत रहित है ऐसा प्रश्न पुछाया उस का भी यह अर्थ
 है. त्रिदशिला चार प्रकार की कही है. द्रव्य से सिद्धशिला एक होने से अंत सहित है,
 क्षेत्र से सिद्धशिला ४२ लाख योजना की लम्बी ध चौड़ी, वैसेही १४२३०२४२ से कुछ अधिक
 परिधि होने से अंत रहित है. काल से भूत भविष्य च वर्तमान ऐसे तीनों काल में शश्वत होने

दु० दो प्रकारों के म० मरण वा० बाल मरण प० पंडित मरण कि० कैसे वा० बाल मरण वा० बाल मरण
 दु० बारह प्रकारका व० क्षुधासे मरण व० इन्द्रिय वश मरण अ० अंतः शल्यमरण त० तद्भवमरण गि०
 गिरिपडन त० तरुपडन ज० जल प्रवेश ज० अग्निप्रवेश वि० त्रिप भक्षण स० शस्त्र से मरना वे० फांसी
 देकर गि० गृद्ध के पृष्ठ में प्रवेश करना ख० खंदक टु० बारह प्रकारका वा० बालमरण से म० मरता जी०
 तरस्तवियणं अयमष्टे एवं खलु खंदया ! मए दुश्चिहे मरणे पणत्ते तंजहा-बालमरणेय.
 पंडियमरणेय. । से किं तं बालमरणे ? बालमरणे दुबालसत्रिहे पणत्ते तंजहा
 बलयमरणे, वसट्टमरणे, अंतोसह्यमरणे, तब्भवमरणे, गिरिपडणे, तरुपडणे, जलपपत्रेसे,
 जलणपपत्रेसे विसभक्खणे, सत्थोवाडणे, वेहाणसे, गिद्धपिट्टे । इच्चेएणं खंदया ? दुबालस-
 त्रिहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइय भवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ,
 तिर्येच होना सो तद्भव मरण ५ पर्वत से पडकर मरना सो गिरिपडण मरण ६ वृक्ष से गिरकर मरना सो
 तरुपडण मरण ७ पानी में प्रवेश कर मरे सो जलप्रवेश मरण ८ अग्नि में प्रवेश कर मरना सो जलन
 प्रवेश मरण ९ विप खाकर मरना सो विप भक्षण मरण १० शस्त्रसे छेदकर मरना ११ वृक्षकी शाखादिक से
 फांसी खाकर मरना सो वेहानस और १२ गृद्धप्रमुख के मृतक शरीर में प्रवेश कर मरना. इस तरह बारह
 प्रकार के व अन्य भी बाल मरण से जीव अनंत चार नरक, तिर्येच, मनुष्य व देव का भव ग्रहण करता

ॐ (५५५५) ॐ

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

का० काल से सिद्ध सा० सादी अ० अपर्यावसित न० नहीं है पु० फीर मे० उसका अं० अंत भा० भाव से सि० सिद्ध अ० अनंत पा० ज्ञान पर्यंत दं० दर्शन पर्यंत अ० अगुरुल्लु पर्यंत न० नहीं है से० उसका अं० अंत॥१९॥ खं० खंदक ए० एतारूप अ० आत्मविषय चि० चिंतवन जा० यावत् स० उत्पन्न हुआ के० क्रि० म० मरण जी० जीव व० वृद्धि पाये हा० हीनपदे त० उसका अ० यह अर्थ खं० खंदक म० मेने

ओणं सिद्धे अणंता णाणपज्जा अणंता दंसणपज्जा, अणंता अगुरुल्लुह्य पज्ज्वा,
नत्थिपुण से अंते ॥ सेत्तं दव्वओ सिद्धे सअंते, खेत्तओ सिद्धे सअंते, कालओ
सिद्धे अणंते, भावओ सिद्धे अणंते ॥१९॥ जे विय ते खंदया ! इमेयारुवे अज्झ-
त्थिए चित्तिए जाव समुप्पज्जित्था केणवा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्डइवा, हायइवा, ।

ज्ञानपर्यंत, दर्शनपर्यंत; व अनंत अगुरुल्लु पर्यंत होने से अंत रहित है. इस तरह सिद्ध द्रव्य क्षेत्र से अंत सहित व काल भाव से अंत रहित है ॥ १९ ॥ अहो खंदक ! तुम को ऐसा विचार हुआ कि किस मरण से जीव मंसारकी वृद्धि या हानि कर सकता है ? अहो खंदक ! मरण दो प्रकार के कहे है बाल मरण व पंडित मरण. उस में से बाल मरण के बारह भेद कहे हैं ? धर्म से भ्रष्ट होकर या धुथा से बलबलाट करता मरने मे जो बलय मरण २ इन्द्रियों के वश में पड़कर मेरे सो ब्रह्म मरण ३ अंतःकरण में शल्य रखकर मेरे सो अंतःशल्य मरण ४ मनुष्य मरकर मनुष्य होना व

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी जालाप्रसादजी *

जीव अ० अनंत ने० नारकी भवग्रहण से अ० आत्मा को सं० योजे ति० तिर्यच म० मनुष्य दे० देव
अ० अनादि अ० अनंत दी० दीर्घकाल चा० चतुर्गति सं० संसार कं० कंतार में अ० परिभ्रमण करे
से० वह कि० कैमे पं० पंडित मरण पं० पंडितमरण दु०दोषप्रकार का पा० पादोपगमन भ० भक्तप्रत्याख्यान
पा० पादोपगमन दु० दोषप्रकार नी० नीहारिम अ० अनीहारीम ति० निश्चय अ० प्रतिक्रमण रहित से०
तिरिय मणुदेव अणाइयंचणं अणवदग्गं दीहळं, चाउरंत संसारकंतारं अणुपरियट्टइ-
सेतं बालमरणेणं मरमाणे वडुइ । सेत्तं बालमरणे ॥ से किं तं पंडियमरणे ? पंडिय-
मरणे ! दुविहे प० तं० (ग्रंथ संख्या १०००) पाओवगमणेयं भत्त पच्चक्खणाय ।
से किं तं पाओवगमणे ? पाओवगमणे ! दुविहे पणत्ते, तंजहा-नीहारिमिय, अनीहां-

हे य अनादि अनंत चतुर्गतिक संसार में पर्यटन करता है. इसलिये बाल मरण से संसार की वृद्धि होती है.
पंडित मरण क्या है ? पंडित मरण के दो भेद कहे हैं. १. पादोपगमन अर्थात् वृक्ष की गिरी हुई शाखा
की तरह अपने शरीर को स्थिर करे २ भक्त प्रत्याख्यान सो जीवन पर्यंत अशनादि चारों आहार का
त्याग करे. उसमें से प्रथम पादोपगमन के दो भेद कहे हैं ? नीहारिम सो नगरमें भरे. उन के शरीर का
निहारन (संस्कार) होवे और २ अनीहारिम. पद्मतादिक में करे. उन के शरीर का निहारन (संस्कार)
होवे नहीं. पादोपगमन मरण मरने वाला प्रतिक्रमण नहीं करता है क्यों कि वह 'हलन' चलनादि क्रिया

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

वृष्टा० पादोपगमन भ० भक्त प्रत्याख्यान दु० दोषकार का नी० नीहारिम अ० अनीहारिम नि० निश्चय
 स० प्रतिक्रमण भ० भक्त प्रत्याख्यान खं० खंदक दु० दोषकार का पं० पंडित मरण से म० मरता जी०
 जीव अ० अन्त ने० नारकी भ० भव भे अ० आत्मा को वि० पृथक्करे जा० यावत् वी० तीरे इ० इन
 खं० खंदक दु० दोषकार के म० मरण मे म० मता जीव व० वृद्धि पावे हा० हानीपावे ॥ २० ॥ से०
 रिमेय. नियमा अपडिक्कमे. सेत्तं पाओवगमणे । से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ? भत्ताप-
 च्चक्खाणे दुव्विहे प० तं० नीहारिमेय, अनीहारिमेय, नियमा सपडिक्कमे. सेत्तं भत्त
 पच्चक्खाणे इच्चंतेणं खंदया ! दुव्विहेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवि अणंतेहि
 नेरइय भवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ जाव वीथिवियइ. सेत्तं मरमाणे हायइ. सेत्तं
 पंडियमरणे ॥ इच्चेएणं खंदया ! दुव्विहेणं मरणेणं मरमाणे जीवि वट्टइ वा, हायइ वा ॥ २० ॥
 नहीं करता है. भक्त प्रत्याख्यान के दो भेद कहे हैं नीहारिम और अनीहारिम. यह प्रतिक्रमण करता है
 क्यों कि इन को हलन चलनादि क्रिया होती है. इस तरह अहो खंदक ! दो प्रकार के पंडित मरण मरने
 वाला नरक, तिर्यच, मनुष्य व देव के भव में अनंतवार उत्पन्न नहीं होता है यावत् संसार में परिभ्रमण नहीं
 करता है. इस तरह मरण मरने वाला संसार का क्षय करता है. अहो खंदक ! ऐसे दो मरण मरनेसे जीव संसार
 की वृद्धि व हानि करता है. ॥ २० ॥ इस तरह उत्तर सुनकर. कात्यायन गोत्रीय खंदक परिव्राजक

(५५५५)

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

वह खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय सं० संबुद्ध सं० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर को वं० वंदन कर न० नमस्कारकर ए० ऐसा व० बोले इ० इच्छता हूं भ० भगवन् तु० तुमारी अं० पास के० केवली प० प्रकृपा धर्म को नि० धारने को अ० यथासुख दे० देवानुप्रिय मा० मत प० प्रतिबंध करो त० तब स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय ती० उस मं० बडी म० महान् प० परिपट्टामें ध० धर्म प० कहा ध० धर्म कथा भा० कही॥२१॥ त० तब मे० वह खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय

एत्थणं से खंदए कच्चायण सगोत्ते संबुद्धे ! समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ,
नमंसइत्ता एवं वयासी इच्छामिणं भंते ! तुज्झं अंतिए केवली पन्नत्तं धम्मं निसामिच्चए.
अहासुहं देवाणुप्पिया मापडिबंथं ॥ तएणं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायण
सगोत्तस्स तीसियमहइ महालियाए परिस्ताए धम्मं परिकहेइ. धम्मकहा भाणियत्वा

मति बोध पाये और श्री श्रमण भगवतं को वंदना नमस्कार कर कहने लगे कि अहो भगवन् ! आप की समीप कैली प्ररूपित धर्म सुनने को मैं चाहता हूं. अहो देवानुप्रिय ! जैसा तुम को सुख होवे वैसा करो, विलम्ब मत करो. उस समय श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी ने उस महती परिषदा में खंदक परिव्राजक को धर्म कथा कही. ॥ २१ ॥ उस समय कात्यायन गोत्रीय खंदक ने महावीर स्वामी की

स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीरकी अ० पास ध० धर्म सो० सुनकर नि० अवधारकर ह० दृष्ट
 वु० तुष्ट जा० यावत् ह० हृदयमें उ० स्थान से उ० खड़े हुवे उ० खड़े होकर स० श्रमण भ०
 भगवन्त म० महावीर की ति० तीनवार आ० आदान प० प्रदक्षिणा की क० करके ए० ऐसा व० बोले स०
 श्रद्धता हूँ भ० भगवन् नि० निग्रंथ पा० प्रवचन को प० प्रतीन करता हूँ रो० रुचि करता हूँ अ० उद्यम-
 करता हूँ ए० ऐसे ही भ० भगवन् त० तैसे भ० भगवन् अ० सत्य अ० संदेहरहित इ० इच्छित प०

तएणसे खंदए कच्चायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा

निसम्म हट्टुत्तुट्ट जाव हयहियए उट्टाए उट्टेइ उट्टेइत्ता समणं भगवं महावीरं तिलुत्तो

आयाहिणं पयाहिणं करेइ करेइत्ता एवंवयासी, सद्वहामिणं भंते ! निगंगंथं पावयणं,

पात्तियामिणं भंते निगंगंथं पावयणं रोएमिणं भंते ! निगंगंथं पावयणं, अब्भुट्टेमिणं भंते ! नि-

गंगंथं पावयणं, एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवित्तहमेयं भंते ! असंदिद्धमेयं भंते ! इच्छिय

सपीप धर्म सुनकर व अवधार कर अत्यंत हर्षित हुए. और तत्काल उठकर श्रमण भगवतें महावीर को
 तीन आदान प्रदक्षिणा कर के ऐसा कहा कि अहो भगवन् ! निग्रंथ्य वचन को मैं श्रद्धता हूँ, उन की रुचि कर-
 ता हूँ, उन प्रवचनों की मैं प्रतीति करता हूँ, उन प्रवचनों में मैं उद्यमवन्त बना हुआ हूँ, अहो भगवन् !
 निग्रंथ्य प्रवचन वैसे ही यथायोग्य है, संदेह रहित, इष्ट है. प्रतीतिरुत है. ऐसा कहकर श्री महावीर स्वामी

* प्रकाशक-राजायहापुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

वह खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय सं० संबुद्ध सं० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर को वं० वंदन कर न० नमस्कारकर ए० ऐसा व० बोले इ० इच्छता हूं भं० भगवन् तु० तुमारी अं० पास के० केवली प० प्ररूपा धर्म को नि० धारने को अ० यथासुख दे० देवानुप्रिय मा० मत प० प्रतिबंध करो त० तव स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय ती० उस मं० वडी म० महान् प० परिपदा में ध० धर्म प० कदा ध० धर्म कथा भा० कही॥२१॥ त० तव से० वह खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय

एत्थणं से खंदए कच्चायण सगोत्ते संबुद्धे ! समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, नमंसइत्ता एवं वयासी इच्छामिणं भंते ! तुज्झं अंतिए केवली पन्नत्तं धम्मं निसामित्तए. अहासुहं देवाणुप्पिया मापडिबंधं ॥ तएणं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायण समोत्तस्स तीसेयमहइ महाल्लियाए परिसाए धम्मं परिकहेइ. धम्मकहा भाणियन्वा

मति बोध पाये और श्री श्रमण भगवत को वंदना नमस्कार कर कहने लगे कि अहो भगवन् ! आप की समीप कैली प्ररूपित धर्म सुनने को मैं चाहता हूं. अहो देवानुप्रिय ! जैसा तुम को सुख होवे वैसा करो, विलम्ब मत करो. उस समय श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी ने उस महती परिपदा में खंदक परित्रानक को धर्म कथा कही. ॥ २१ ॥ उस समय कात्यायन गोत्रीय खंदक ने महावीर स्वामी की

शरदार्थ

सूत्र

भाषार्थ

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥

कोई गा० गाथापति आ० गूढ में जि० जलते जे० जो त० तहाँ भं० भंडोपकरण भ० होवे अ० अल्पभार
 मो० बहुमूल्यवाली तं० उस को ग० ग्रहणकर आ० आत्मा से ए० एकान्त अ० अतिक्रमे. ए० यह नि०
 निकालते प० पीछे पु० पहिले हि० हितके लिये सु० सुख के लिये ख० क्षमाकेलिये नि० मुक्तिकेलिये अ०
 अनुगापिक भ० होगा ए० ऐमा दे० देवानुप्रिय म० मेरा आ० आत्मा ए० एकभंड इ० इष्ट कं० कान्त पि०
 प्रिय म० मनोज्ञ म० भनाम धि० धैर्य वि० विश्वास स० स्वमत व० बहुमत अ० अनुमत भं० आभरण क०

आलित्तेणं भंते ! लोए पलित्तेणं भंते ! लोए, आलित्तपलित्तेणं भंते ! लोए जराए मरणेणय
 से जहा नामए केइ गाहावई आगारंसि झियायमाणंसि जे से तत्थ भंडे भवइ

अप्पभारे मोल्लगुरुए तं गहाय आयाए एगंतमंतं अत्रक्कमइ, एस मे नित्थारिए समाणे
 पच्छापुराए हियाए सुहाए खमाए निरसेयसाए आणुगामियत्ताए भविरसइ. एवामेव
 देवाणुप्पिया ! मज्झात्रि आया एगे भंडे इट्ठे कंते पिए मणुण्णे मणामे धिज्जे त्रिस्सासिए

वना हुवा देखकर उस में जो अल्प भार व बहुत मूल्यवाली वस्तु होती हैं उन्हें नीकालता है, और
 नीकाल कर एकान्त स्थान में रखता है. और ऐसा विचारता है कि इस अग्नि में से नीकाली हुई वस्तु
 पीछे से हित, सुख, कल्याण की कर्ता व दारिद्र्य को हरनेवाली होगी. इस प्रकार अहो देवानुप्रिय ! मुझे,
 मेरा आत्मारूप एक बहु मूल्य पदार्थ इष्टकारी, मनीषी, मियकारी, मन को गमता, धैर्यता, स्थिरता व

* महाशय्य-राजावहापुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

विशेष इच्छित से० वह ज० जैसे तु० तुम ब० कहते हो ति० ऐसाकरके स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीरको
 व० वंदनाकर न० नमस्कार करे उ० ईशान कोन में अ० आकर ति० त्रिदंड कुं० कर्मडल जा० यावत् धा०
 पातु से रक्त वृत्त ए० एकान्त वें ए० रखकर जे० जहां स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर ते० तहां आ०
 आकर स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर को ति० तीन वार आ० आदान प० प्रदाक्षिणा क० करके
 जा० यावत् न० नमस्कार कर आ० आदीप्त हुवे लो० लोक प० प्रदीप्त हुवे ज० जरा म० मरण से ज० जैसे के०
 सेयं भंते! पडिच्छियमेयं भंते ! इच्छियपडिच्छियमेयं भंते ! से जहेयं तुज्झे वदह-
 चिकहु, समणं भगवं महावीरं वंदइ, णमंसइ, वंदित्ता, णमंसइत्ता, उत्तरपुरच्छिमं
 दिसीभायं अवक्कमइ, अवक्कमइत्ता तिमंडंच कुंडियंच जाव धाउरत्ताउय एगंते एडेइ
 एडेइत्ता जेणेव समणं भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता समणं भगवं
 महावीरं तिलुचो आदाहिणपयाहिणं करेइ करेइत्ता जाव नमंसइत्ता एवं वयासी,
 को वंदना नमस्कार कर के ईशान कोन में गया. वहां जाकर त्रिदंड कर्मडल यावत् गेरु से रंगे
 बस्त्रों को एकान्त में रखकर श्रमण भगवन्त महावीर की पास आया. वहां आकर महावीर भगवन्त को
 तीन आदान प्रदाक्षिणा की. प्रदाक्षिणा कर यावत् नमस्कार कर ऐसा बोले की अहो भगवन् ! यह
 नीवलोक जरा व मरण से ज्वलित बना हुआ है. जैसे कोई गृहपति अपने घर को आग्नि से प्रज्वलित

कोई गा० गाथापति आ० गृह में जि० जलते जे० जो त० तहां भं० भंडोपकरण भ० होवे अ० अल्पभार
 मो० बहुमूल्यवाली तं० उस को ग० ग्रहणकर आ० आत्मा से ए० एकान्त अ० अतिक्रमे. ए० यह नि०
 निकालते प० पीछे पु० पहिले हि० हितके लिये सु० सुख के लिये ख० क्षमाकेलिये नि० मुक्तिकेलिये अ०
 अनुगामिक भ० होगा ए० ऐसा दे० देवानुमिय म० मेरा आ० आत्मा ए० एकभंड इ० इष्ट कं० कान्त पि०
 प्रिय म० मनोस म० भनाम धि० धैर्य वि० विश्वास स० स्वमत व० बहुमत अ० अनुमत भं० आभरण क०

आलिच्छेणं भंते ! लोए गलिच्छेणं भंते ! लोए, आलिच्छपलिच्छेणं भंते ! लोए जराए मरणेणय

से जहा नामए केइ गाहावई आगारंसि क्षियायमाणंसि जे से तत्थ भंडे भवइ

अप्पभारे मोल्लगुरुए तं गहाय आयाए एगंतमंतं अक्कमइ, एस मे नित्थारिए समणे

पच्छापुआए हियाए सुहाए खमाए निस्सेयसाए आणुगामियत्ताए भविरसइ. एवामेव

देवाणुप्पिया ! मज्झवि आया एगे भंडे इट्ठे कंते पिए मणुणे मणामे धिजे विस्सासिए

बना हुवा देखकर उस में जो अल्प भार व बहुत मूल्यवाली वस्तु होती हैं उन्हें नीकालता है, और
 नीकाल कर एकान्त स्थान में रखता है. और ऐसा विचारता है कि इस अग्नि में से नीकाली हुई वस्तु
 पीछे से हित, सुख, कल्याण की कर्ता व दारिद्र्य को हनेवाली होगी. इस प्रकार अहो देवानुमिय ! मुझे,
 मेरा आत्मारूप एक बहु मूल्य पदार्थ इष्टकारी, मियकारी, मनोस, धैर्यता, धैर्यता, स्थिरता व

* भकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

भाजन ज० जैसे मा० मत सी० शीत उ० ऊष्ण खु० क्षुधा पि० तृषा चो० चोर वा० सर्प दं०
 दंस म० मशक वा० वात पि० पीत सं० श्लेष्म स० स० सन्निपात वि० विविध रो० रोग आ० आ-
 तंक प० परिपह उ० उपसर्ग फ० स्वर्ण चि० ऐशा उ० करके नि० निकालते प० परलोक का हि०
 शितकेलिये सु० सुख केलिये ख० समकालिये नि० मुक्तिके हेतु अ० अनुगामिक भ० होंगे ते० उसको
 इ० इच्छता ई० दे० देवानुग्रिय म० स्वतः प० मन्त्रजित मुं० भुंडहोकर से० शिक्षा ग्रहणकर सि० शिक्षा
 समए घहुमए अणुमए भंडकरंडगसमाणं माणंसीयं, माणंउण्हं, माणंखुहा माणंयिवासा,
 माणंनोरा, माणंबाला, माणंदंसा, माणंमंसया माणंवाइय-पित्तिय-संभिय-सण्णिवाइय-
 त्रिविहारीगायंका परीसहोत्रसग्गा फुसंतु त्ति कट्टु, एस नित्थारियसमाणे परलोयस्स
 हियाए, सुहाए, खमाए, निरसंयसाए आणुगामियत्ताए भविसइ, तं इच्छामिणं देवाणुप्पिया!
 सयमेव पव्वाविमं सयमेव मुंडाविमं, सयमेव सेहाविमं, सयमेव सिक्खाविमं, सय-
 विषाम का कर्ता है. आत्मकृत कार्य के सम्प्रतपने से बंधुमत व अनुमत है. आभरण के करंडिये समान
 है. इसे धैने शीत, ऊष्ण, क्षुधा, तृषा चोर, सर्प, दंश, मशक, बाल, पित्त, कफ, संनिपात आदि माणान्तिक
 रूपर्ग व परिपह से बचाया है. इस आदीस प्रवीस भे मेरा आत्मा की धै रक्षा करुंगा. यह मुझे
 इस लोक व परलोक में हित, सुख, कल्याण, क्षमा, निस्तार के कर्ता व अनुगामी दोगा. जैसे ही मुक्ति

शब्दार्थ पुत्र

* प्रकाशक-राजाइहादुर लाल सुखदेवसहायजी बालाप्रसादजी *

जी० जीव स० सत्त्व सं० संयम से सं० यतना काना अ० इस अ० अर्थ केलिये णो० नहीं किं० किं० चित् प० प्रमाद करना ॥ २१ ॥ त० तव से० वह खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर का ए० ऐसा ध० धर्म उ० उपदेश स० सम्यक् सं० अंगीकार क्रिया त० उस आ० आश्रमको त० जैसे ग० जावे चि० रहे नि० बैठे तु० सोवे भुं० भोजनकरे भा० बोले उ० खडाहोवे पा० प्राणभू० भूत जी० जीव स० सत्त्व सं० संयम मं० यत्तकरे अ० इस अ० अर्थ में णो० नहीं प० प्रमादकरे संजमेणं संजमियव्वं. आस्सिचणं अट्टे णोकिंचि पमाइयव्वं. ॥ २१ ॥ तएणं से खंदए

कचायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयाख्वं धम्मियं उवएसं सममं संपडिव-
जइ, तमाणाए तहगच्छइ, तहचिट्ठइ, तहनिसीयइ, तहतुयइ, तहभुंजइ तहभासइ, तहउट्ठा
एइ तहपाणंहिं भूएहिं जीविहिंसत्तहिं संजमेणं संजमेइ, आस्सिचणं अट्टे गोपमायइ ॥ २२ ॥

व यत्पूर्वक बोलना. ऐसे ही उद्यमवन्त बनकरके प्राणभूत जीव व सत्त्व सं० संयम पालना. इस अर्थ किंचिन्मात्र प्रमाद करना नहीं ॥ २१ ॥ तव कात्यायन गोत्रीय सं० अर्थने श्रमण भगवान् महावीर का ऐसा धार्मिक उपदेश सुनकर उसे सम्यक् प्रकारसे अंगीकार किया. और उनकी आज्ञासे यत्पूर्वक जाना, खड़े रहना, बैठना, सोना, भोजन करना, बोलना व सावध रहना ऐसे करने लगे. तत्र होकर प्राणभूत जीव व सत्त्व ही रखा कर संयम पालने लगे. इस में किंचिन्मात्र प्रमाद नहीं करने लगे ॥ २२ ॥ तव ईर्या स-

* प्रकाशक-रामावहादुर लाल सुखदेवसहायजी बबालाप्रसादजी *

नी० जीव स० सत्व सं० संयम से सं० यतना कान्ता अ० इस अ० अर्थ केलिये णो० नहीं कि० कि० चित् प० प्रपाद करना ॥ २१ ॥ त० तब से० वह खं० खंदक क० कात्यायन गोत्रीय स० श्रमण भ० भगवन्त प० महावीर का ए० ऐसा ध० धर्म उ० उपदेश स० सम्यक् सं० अंगीकार क्रिया त० उम आ० आश्राको त० जैसे ग० जावे चि० रहे नि० बैठे तु० सोवे भुं० भोजनकरे भा० बोले उ० खडाहोवे पा० प्राणभू० भूत जी० जीव स० सत्व सं० संयम मं० यत्तकरे अ० इस अ० अर्थ में णो० नहीं प० प्रमादकरे संजमेणं संजमियव्वं. अस्सिचणं अट्टे णोकिंचि पमाइयव्वं. ॥ २१ ॥ तएणं से खंदए कचायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूव्वं धम्मियं उवएसं सम्मं संपडिव-जइ, तमाणाए तहगच्छइ, तहचिट्ठइ, तहनिसीयइ, तहतुयट्ठइ, तहभुंजइ तहमासइ, तहउट्ठा एइ तहपाणं हिं भुएहिं जीविहिं सत्तहिं संजमेणं संजमेइ, अस्सिचणं अट्टे गोपमायइ ॥ २२ ॥

व यत्नापूर्वक बोलना. ऐसे ही उद्यमवन्त वनकरके प्राप्सून जीव व सत्व सं० संयम पालना. इस ई किंचिन्मात्र प्रमाद करना नहीं ॥ २१ ॥ तब कात्यायन गोत्रीय खं० करने श्रमण भगवान् महावीर का ऐसा धार्मिक उपदेश सुनकर उसे सम्यक् प्रकारसे अंगीकार किया. और उनकी आज्ञामें यत्नापूर्वक जाना, खड़े रहना, बैठना, सोना, भोजन करना, बोलना व सावध रहना ऐसे करने लगे. सावध होकर प्राणभूत जीव व सत्व की रक्षा कर संयम पालने लगे. इस में किंचिन्मात्र प्रमाद नहीं करने लगे ॥ २२ ॥ तब ईर्या स-

म० महावीर ते० तहां उ० आये उ० आकर स० श्रमण भ० भगवन्त जा० यावत् न० नमस्कार कर ए० ऐसा व० बोले इ० इच्छता हूं भ० भगवन् तु० तुमारी अ० आज्ञामिलते दो० दोमास की भि० भिक्षु प्रतिमा उ० अंगीकार कर वि० विचरने को अ० यथानुसुख दे० देवानुप्रिय मा० मत प० मति-बंधकरो ए० ऐसे दो० दोमास की ति० तीनमास की च० चार मास की पं० पांच छ० छ स० सात

समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता, समणं भगवं जाव नमंसि

त्ता, एवं वयासी इच्छामिणं भंते ! तुञ्जंहिं अब्भणुणाए समाणे दोमासियं भिक्खु-

पडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्ताए. अहासुहं देवाणुप्पिया ! मापडिञ्चंधं. तंचेव एवं दोमासियं,

तिमासियं, चाउम्मासियं, पंचसत्त पढमं सत्तराइंदियं, दोच्चं सत्तराइंदियं, तच्चं

भगवन्त को बंदना नमस्कार कर ऐसा बोले कि अहो भगवन् ! आपकी आज्ञा होवे तो दो मास की भिक्षु प्रतिमा अंगीकार कर विचरूं. अहो देवानुप्रिय ! जैसे तुम को सुख होवे वैसे करो. विलम्ब मत करो. तब सहर्ष आज्ञा लेकर दो मास पर्यंत दो दात आहार की व दो दात पानी की ग्रहण की. वैसे ही तीसरी तीन मास की भिक्षु प्रतिमा में तीन दात आहारकी व तीन दात पानीकी ग्रहण की. चार मासकी चौथी भिक्षु प्रतिमा में चार दात आहार की व चार दात पानी की वैसेही पांच छ व सात मास की भिक्षु प्रतिमाओं में पांच, छ व सात मास तक पांच छ व सात दात आहार की व सात दात पानी की

* प्रकाशक-राजावधदुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामुखी *

हृष्ट तु० तुष्ट जा० यावत् न० नमस्कारकर मा० एकमासकी भि० भिक्षु प्रतिमा उ० अंगीकारकर वि० विचरनेलगे ॥ २५ ॥ से० बह सं० खंडक अ० अनगार मा० एकमास की भि० भिक्षु प्रतिमा अ० यथासूत्र अ० यथाकल्प अ० यथापार्ग अ० यथातथ्य अ० यथा सम्यक् का० काया से फा० स्पर्शे पा० पाले सो० संभांग करे ती० दांपटाले पू० पूर्ण करे कि० कीर्तनकरे अ० पाले आ० आज्ञा से आ० आराधे स० सम्यक् का० काया से फा० स्पर्शकर जा० यावत् आ० आराधकर जे० जहां स० श्रमण भ० भगवन्त

अवमणुणाए समाने हट्टतुष्ट जाव नमंसित्ता मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ

॥ २५ ॥ तएणं से संदए अणगारे मासियं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं, अद्वाक्कप्पं, अहा-

मगं, अहात्तच्चं, अहासमं, सम्मं काएणं फासेइ, पालेइ, संभेइ, तीरेइ, पूरेइ, किट्टेइ

अणुपालेइ, आणाए आराहेइ; सम्मं काएण फासित्ता जाव आराहेत्ता, जेणेव

पा अंगीकार कर विचरने लगे ॥ २५ ॥ तव श्री खंडक अनगार जैसी सूत्र में एक मास की भिक्षु प्रतिमा की विधि कही है वैसी भिक्षु प्रतिमा को कल्प अनुसार, मार्ग अनुसार पालने लगे. जैसे ही क्षयोपशम भाव से अतिक्रमे नहीं. सम्यक् प्रकार से काया से स्पर्शी, विधि से ग्रहण की, वारंवार उपयोग रखकर पाली, पूर्ण की, कीर्ति की, अनुपालना की यावत् आज्ञा पूर्वक आराधी. सम्यक् प्रकार काया से स्पर्श कर यावत् आज्ञासे आराध कर जहां श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी थे वहां आये, आकर श्रमण

वदार्थ

सूत्र

प्रवार्थ

* प्रकाशक-राजाव हादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

हृष्ट तु०तुष्ट जा०यावत् न०नमस्कारकर मा०एकमासकी भि०भिषु प्रतिमा उ०अंगीकारकर वि०विचरनेलगे
॥ २५ ॥ से० वह खे० खंदक अ० अन्नगर मा० एकमास की भि० भिषु प्रतिमा अ० यथासूत्र अ०
यथाकल्प अ० यथापार्श्व अ० यथादृश्य अ० यथा सम्यक् का० काया से फा० स्वर्शे पा० पाले
तो० संभांग करे ती० दांपटाले पू० पूर्ण करे कि० कीर्तनकरे अ०पाले आ०आज्ञा से आ० आराधे स०
सम्यक् का० काया मे फा० स्पर्शकर जा० यावत् आ० आराधकर जे० जहां स० श्रमण म० भगवन्त
अ०भणुणाए समाने हट्टतुष्ट जाव नमंसिचां मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जिचाणं विहरइ

॥ २५ ॥ तएणं से खंदए अणगारे मासियं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं, अद्वाकण्यं, अहा-
सगं, अहातच्चं, अहासमं, समं काएणं फासेइ, पालेइ, सोभेइ, तीरेइ, पूरेइ, किट्टेइ
अणुपालेइ, आणाए आराहेइ; समं काएण फासिचा जाव आराहेत्ता, जेणव

पा अंगीकार कर विचरने लगे ॥ २५ ॥ तव श्री खंदक अन्नगर जैसी सूत्र में एक मास की भिषु प्रतिमा
की विधि कही है वैसी भिषु प्रतिमा को कल्प अनुसार, मार्ग अनुसार पालने लगे. वैसे ही क्षयोपशम
भाव से अतिक्रमे नहीं. सम्यक् प्रकार से काया से स्वर्शे, विधि मे ग्रहण की, बारंबार उपयोग रखकर
पाली, पूर्ण की, कीर्ति की, अनुपालना की-यावत् आज्ञा पूर्वक आराधी. सम्यक् प्रकार काया से
स्पर्श कर यावत् आज्ञासे आराध कर जहां श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी थे वहां आये, आकर श्रमण

उपवास से वा० वारवा मास में छ० वार उपवास से ते० तेरह मास में अ० तेरह उपवास से चौ० चौदह मास में ती० चौदह उपवास से प० पन्धरह मास व० पन्धरह उपवास सो० सोलह मास में च० सोलह उपवास अ० निरंतर त० तप कर्म से दि० दिनको वा० स्थान उ० उत्कट सू० सूर्य की सन्मुख आ० आतापना भू० भूमि में आ० आतापना लेवे हुवे र० रात्रि में वी० वीरासन अ० नश त० तत्र खं० खंदक अ० अनगार गु० गणरत्न सं० संवत्पर त० तप कर्म अ० जैसा सुना अ० कल्प अनुत्तर जा० यावत् आ० आराध कर जे० जहां स० श्रमण भ० भगवन् प० महावीर ते० वहां उ० आय उ० आकर व० मास अट्टात्रीसइमें अट्टात्रीसइमें, चौदसममास तीसइमें तीसइमें, पन्धरसमं मास वत्तीसइमें वत्तीसइमें, सोलसमंमासं चउत्तीसइमें चउत्तीसइमें, अनिक्खित्तेणं तत्रो कम्मणं दिया ठाणक्कुडुए सूरभिमुहे, आयावणभूमिए आयावमाणे रत्ति वीरा- सजेणं अवाउडेणं, ॥ तएणंसे खंदए अणगारे गुणरयणं संवच्छरं तत्रोकम्मं अहा- सुत्तं, अहाकप्पं, जाव आराहित्ता जेणव समणे भगवं महावीरे तंणेव उवागच्छइ करे. इस तरह सोलह मास तक आंतरा रहित तप करे. दिन को उत्कट आसन करे, सूर्य की आता- पना लेवे और रात्रि में वीरासन से वस्त्र रहित रहे. इस तरह सूत्र व कल्प अनुत्तर गुणरत्न संवत्सर तप कर्म को आराधकर जहां श्रमण भगवन्त महावीर थे वहां आये. वहां आकर भगवन्त महावीर

शब्दार्थ

(पञ्चमोऽध्यायः)

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

बहुत व० चार छ० छ अ० आठ द० दश दु० द्वादश मा० अर्ध मास मा० मासखमण वि० त्रिचित्र त० तप कर्म से अ० आत्मा को भा० विचारते वि० विचरते है ॥२६॥ त० तबखं० खंदकते० उसउ० उदार वि० विपुल प० गुरु की आज्ञा से कराया हुवा (प० प्रमाद रहित कराया) प० मान पूर्वक रहा हुवा क० कन्याण कारी सि० मोक्ष के हेतु भूत ध० धर्म धनवाञ्छा प० मंगल स० सुशोभित उ० प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त उ० उत्तम उ० उदार प० बहुत प्रभाव वाला त० तप कर्म से सु० शुष्क लु० रुक्ष नि० मांस रहित अ०

उद्योगच्छिन्ना समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ. बहुहिं चउत्थ छट्टुमदसम दु-
वालसेहि मासद्धमासखमणेहि विचिच्छहि तत्रोकम्महि अप्पाणं भावेमाणे विहरइ

॥ २६ ॥ तएणसेखंदएअणगारेतेणं उरालेणं विउलेणं पयत्तेणं पग्गहिणं कळ्हाणेणं,
सिउणं धन्नेणं, मंगल्लेणं, सरिसरीएणं, उदग्गणं, उदत्तेणं, उत्तमेणं उदारिणं, महाणुभागेणं,

स्वामी को वंदना नमस्कार कर एक उपवास, दो उपवास, तीन उपवास यावत् पंद्रह उपवास, मास खमण ऐसे त्रिचित्र प्रकार के तप करते हुवे खंदक अनार विवरने लगे ॥२६॥ उन समय में खंदक अगार आशंसा सोहन सो उदार, प्रमान, विपुल, गुरुकी आज्ञा से कराया हुवा, बहुत मान पूर्वक कराया हुवा, कन्याण-कारी, मंगलकारी, धर्मरु धन करनेवाला, सुशोभनिक, उत्तरोत्तर वृद्धि करनेवाला, उत्तम, उदार व

शब्दार्थः ॥ २६ ॥ तएणसेखंदएअणगारेतेणं उरालेणं विउलेणं पयत्तेणं पग्गहिणं कळ्हाणेणं, सिउणं धन्नेणं, मंगल्लेणं, सरिसरीएणं, उदग्गणं, उदत्तेणं, उत्तमेणं उदारिणं, महाणुभागेणं,

शब्दार्थः

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालप्रसादजी *

सुकाया हुआ स० शब्द सहित ग० जाता है स० शब्द सहित चि० खड़ा रहता है ए० ऐसे खं० खंदक अ० अनगार स० शब्द सहित ग० जाता है स० शब्द सहित चि० बैठता है उ० पुष्ट त० तप से अ० दुर्बल पं० मांस मो० रुधिर से हु० अग्नि समान अ० भस्म में प० छुपाहुवा त० तपके ते० तेजसे त० तपतेज की सी० लक्ष्मी से अ० बहुत उ० शोभते चि० रहता है ॥ २८ ते० उसकाल ते० उस समय में रा० राजगृह न० नगर में स० समयसरण जा० यावत् प० परिपदा प० पीछीगई ॥ २९ ॥ त० तव त० उस

दिण्णा सुकासमाणी ससदंगच्छइ, ससदंविट्ठइ, एवामेव खंदए अणगारे ससदंगच्छइ
ससदंविट्ठइ । उवाचितं तवेणं अवाचिए मंससोणिणं हुयासणेवि भासरासि पडि-
च्छण्णे, तवेणं तेणं, तवतेय सिरीए अतीव उवसोभमाणे २ चिट्ठइ ॥ २८ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहेनयरे समोत्तरणं जात्र परिसा पडिगया ॥ २९ ॥ तएणं

लकडी में भरा हुआ गांडा, और कोयले से भरा हुआ गांडा है. उस में रही हुई वस्तु सूर्य की ऊष्णता में जब सुक जाती है और उस समय जब गांडा चलता है तब उस में जैसे कडकडाट शब्द निकलता है वैसे ही शब्द खंदक अनगार के रक्तमांस बिना के शरीरमें से निकलता है. खंदक अनगार के शरीर में रक्त मांस नहीं होने पर तपरूप तेजसे उनका शरीर भस्ममें ढकी हुई अग्नि संयान तेजस्वी दीखता है ॥ २८ ॥ उस काल उस समयमें श्री महावीर स्वामी राजगृह नगरमें पधारे और परिपदा बंदन करने को आई और धर्मोपदे

खं खंदक अ० अनगर को अ० अन्यदा क० कदापि पु० पूर्व रात्रिके का० काल में घ० धर्म जा० जागरणा जा० करते इ० यह ए० ऐसा अ० अध्यवसाय चि० चिन्तन जा० यावत् स० उत्तान् हुवा ए० ऐसे ख० निश्चय अ० मैं इ० इस उ० उद्गार जा० यावत् कि० कृश ध० नाडियों की सं० संतती जा० यावत् जी० जीव जी० जीव से ग० जाता हूँ चि० खडा रहता हूँ जा० यावत् गि० रग्नानि करता हूँ जा० यावत् ए० ऐसे अ० मैं भी स० शब्द सहित ग० जाता हूँ चि० खडा रहता हूँ

तस्स खंदयस्स अणगारस्स अणणया कयाइं पुब्बरत्तावरत्तकाल समयंसि धम्म जागरियं जागरमाणस्स इभेयारूत्वे अब्भत्थिए जाव समुप्पजेत्था, एवं खलु अहं इमं एयारूत्वेणं उरालेणं जाव किसे धमणि संतए जाव जीवं जीवं गच्छामि जीवं जीवं चिट्ठामि, जाव गिल्लामि. एवामेव अहंपि ससद्गच्छामि, ससद्दंचिट्ठामि तं अत्थि तामे उट्ठानं

सुनकर पीछी गई ॥ २९ ॥ उन समय में एकदा मध्यरात्रि में धर्म जागरणा करते खंदक अनगर को ऐसा अध्यवसाय यावत् चिंतन उत्पन्न हुवा कि ऐसा उदार व प्रधान तपकर्म से मैं कृश बन गया हूँ मेरी सब नाडियों दीख रही है, शरीर से मुझे कुञ्च भी होता नहीं है, हलन चलनादि क्रियाओं जो होती हैं वे सब जीव से होती हैं, यावत् भाषा बोलते भी मैं खेदित होता हूँ, और काष्ठ का गाड़ा यावत्

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामसादनी *

तं० इसलिये अ० हे ता० उतने म० मेरे उ० उत्थान क० कर्म व० बल वी० वीर्य पु० पुरुषात्कार प०
 पराक्रम तं० इसलिये जा० जहालग ता० वे मे० मेरे अ० है उ० उत्थान क० कर्म व० बल वी० वीर्य
 पु० पुरुषात्कार प० पराक्रम जा० जहालग मे० मेरे ध० धर्माचार्य ध० धर्मोपदेशक स० श्रमण भ० भग-
 वन्त म० महावीर जि० जिन मु० सुवर्धि वि० विचरते हैं ता० बहालग मे० मुझे से० श्रेय क० कल पा०
 प्रकट प० प्रभात में र० रात्रि को कु० विकशित उ० उत्पल क० हरिण के नेत्र को० कोमल उ० खुले

कम्मबले वीरिए पुरिसक्कार परक्कमे तं जाव तामे आत्थि उट्टणे कम्ममे बले वीरिए

पुरिसक्कार परक्कमे जाव मम धम्मायरिए धम्मोवएसए समणे भगवं महावीरे

जिणे सुहत्थी विहरइ ताव तामे सेयं कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमल

कोमलुमिलियंभि, अहंपंडरे पभाए रत्तासोगप्पकासे, किंसुय सुयमुह गुंजद्ध रागसरिसे,

कोयले का गाडा चलते जैसा शब्द होवे वैसे ही मेरे चलने पर शब्द होता है. ताहांपि मेरे में उत्थान,
 कर्म, बल, वीर्य, पुरुषात्कार व पराक्रम है. और जहां लग मेरे में उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषात्कार
 व पराक्रम है और जहां लग मेरे धर्माचार्य: धर्म गुरु, रागद्वेष के जीतनेवाले व सुखार्थी श्री श्रमण भग-
 वन्त महावीर स्वामी विचर रहे हैं वहां लग विकशित कोमल कमल (हरिण के नेत्र) से उन्मीलित, पांडुर

हुवे अ० अनंतर पं० पाण्डुर प० प्रभात में र० रक्त अ० अशोक प० प्रकाश किं० किशुक सु० शुक्रमुख
 गुं० गुंजार्थ रा० रंग स० सदृश क० कमल का आ० गृह (दृह) स० नलिनी खंड के० वोधक उ०
 उदित होते स० सूर्य स० सहस्र किरणों वाला दि० दिनकर ते० तेजस ज० ज्वलंत स० श्रमण भ०
 भगवन्त म० महावीर को अ० आज्ञा देते स० स्वयं पं० पांच म० महाव्रत की आ० आराधना कर स०
 साधु स० साध्वी से खा० क्षमा याचकर त० तथारूप थे० स्थविर क० कृतयोगी की स० साथ वि०
 कमालगर संडबोहए उट्टियंमि सूरै सहस्सरस्सिमि दिणथे तेयसा जलंते समणं
 भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता जात्र पज्जुवासेत्ता, समणेण भगवया महावीरेण
 अब्भणुणाए समणे सयमेव पंचमहव्रयाणि आराहेत्ता समणाय समणीओय खामित्ता
 तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं साद्धिं विपुलं पव्वयंसणियं २ दुरूहित्ता मेहघण खंनिगासं,
 प्रभात में, रक्त वर्णवाले अशोककी प्रभा समान, किशुक व शुक्र मुख व गुंजार्थ के रंग समान, कमल का
 आगर सो द्रह में कमलों को विकशित करनेवाला व सहस्र किरणवाला दिनकरमणि सूर्य उदय होते
 श्री श्रमण भगवन्त को वंदना नमस्कार कर श्रमण भगवन्त की आज्ञा से स्वयं पांच व्रत की आराधना
 करके, गौतम स्वामी प्रमुख सब साधु व चंदन वाला प्रमुख सब साध्वियों की क्षमा याचकर, तथारूप कृत-
 योगी स्थविर को साथ लेकर, बड़ा पर्वत पे शनैः २ चडकर, मेघ समान श्याम व देवताओं का संनिपान

शब्दार्थ (कलकत्ता) प्रकाशनालय, प्रकाशनालय, प्रकाशनालय

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

इ० ये ए० ऐसा अ० अध्ययनसाय च० चिंतन जा० यावत् स० उत्पन्न हुआ ए० ऐसे अ० में इ० इस ए० ऐसा उ० उदार वि० विपुल जा० यावत् का० काल को अ० नहीं वांछते वि० विचरते को सि० ऐसा क० करके ए० ऐसा सं० विचारकरके क० कल प० मकट प० प्रभात में जा० यावत् ज० ज्वलंत जे० जहां म० मेरी अ० समीप ते० वहां ह० शीघ्र आ० आया हुआ है. से० अथ पू० शकादर्शी खं० खंदक

तत्र खंदया ! पुंवरत्ताव्रत्तं जाव जागरमाणस इमेयारूत्रे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था एवं खलु अहंइमेणं एयारूत्रेणं उरालेणं विउलेणं तंचेव जाव कालं अणवकंखमाणस विहरित्तिए च्चिकट्टु, एवं संपेहेइ २ त्ता, कल्लं पाउप्पमायाए जाव जलंते जेणव ममअंतिए तंगेव हव्वमागए ॥ सेणुणं खंदया ! अट्टेसमट्टे ? हंताअत्थि.

गार को ऐसा बोले की अहो स्कंदक ! मध्य रात्रि में धर्म जागरण करते तुम को ऐसा अध्ययनसाय यावत् भंकल्प हुआ कि मेरा शरीर क्षीण होगया है, यावत् मेरी सब नाडियों दौखती है, परंतु उत्थानादि होने से प्रभात में मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक की पास जाकर वंदना नमस्कार कर काल की वांछा नहीं करता हुआ संलेखना करना मुझे श्रेय है. और ऐसा विचार करके सूर्य का उदय होते ही तुम मेरी पास आये हो. अहो खंदक ! क्या यह बात सत्य है ? हां, भगवन् ! यह बात सत्य है. अहो देवानु-

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुबेदेवसहायजी जालामसादजी *

बड़ा प० पर्वत स० शनैः दृ० चढकर मे० मेखन सं० समान दे० देव सन्निपात पु० पृथ्वी शिलापट प० देव
कर द० दर्भ का सं० संथारा मं० विछाकर द० दर्भके सं० संथारेपर रहाहुवा मं० संलेखना को झू० सेवा
मे झू० सेवित भ० भक्त पानका प० प्रत्याख्यान कराने वाला पा० पादोपगमन का का० काल अ० नहीं
वांच्छता वि० विचरने को ते० ऐसा क० करना ॥ ३० ॥ ए० ऐसा सं० विचारबा है से० विचारकर
क० काल प० मगट प० प्रभात मे० र० रात्रि को जा० यावत् ज० जलंत जा० यावत् प० पयुभासना की
॥ ३१ ॥ खंडकादि त० तुम को णू० शंकादर्शी पु० पूर्णरात्रि मे० अ० अरक्त जा० यावत् जा० जाने

देवसन्निवायं, पुढविशिलापटयं पडिलेहेत्ता, दब्भ संथारयं संथारित्ता, दब्भ संथारो-
वगयस्त संलेहणा झूत्तणा झूत्तियस्त भत्तुषणपीडयाइक्खियस्त पाअेवायस
कालं अणवंकखमाणस्त विहरित्तए त्तिकट्टु ॥ ३० ॥ एवं संपेहेइ एवं संपेहेइत्ता
कळं पाउप्पभायाए रयणिए जाव जलंते जेणवे समणे भगवं महावीरे जाव पज्जुवासइ
॥ ३१ ॥ खंदयादि समणे भगवं महावीरे खंदयं अणगारं एवं वयासी सेणणं

होने से सुंदर ऐसी शिलापट को देखकर दर्भ का संथारा विछाकर दग्भ संथारा में रहा हुवा संलेखना से
अपनी आत्मा को कर्म से निर्मूल बना कर व भक्त पान का प्रत्याख्यान कर काल को नहीं वांच्छता
हुवा विचारना मुझे श्रेय है ॥ ३० ॥ ऐसा विचार करके प्रभात होते जहां श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी
ये यहां आकर वंदना नमस्कार यावत् पर्युभासना की ॥ ३१ ॥ श्रमण भगवन्त महावीर खंडक अन-

इ० ये ए० ऐसा अ० अथयत्राय च० चितवन जा० यावत् स० उत्पन्न हुआ ए० ऐसे अ० मैं इ० इस ए० ऐसा उ० उदार वि० विपुल जा० यावत् का० काल को अ० नहीं बाँच्छते वि० विचरते को सि० ऐसा क० करके ए० ऐसा सं० विचारकरके क० कल प० प्रकट प० प्रभात में जा० यावत् ज० ज्वलंत जे० जहाँ म० मेरी अ० समीप ते० वहाँ ह० शीघ्र आ० आया हुआ है. से० अथ नू० शकादर्शी खं० खंदक

तत्र खंदया ! पुंवरत्तात्रत्तं जाव जागरमाणस्त इमेयास्त्रे अब्भित्थिए जाव समुप्पजित्था एवं खलु अहंइमेणं एयास्त्रेणं उरालेणं विउलेणं तंचेव जाव कालं अणवकंखमाणस्त विहरित्तिए त्तिकट्टु, एवं संपेहेइ २ त्ता, कल्लं पाउप्पमायाए जाव जलंते जेणव ममअंतिए तंगेव हव्वमागए ॥ सेणुणं खंदया ! अट्टेसमट्टे ? हंताअत्थि.

गार को ऐसा बोले की अहो स्कंदक ! मध्य रात्रि में धर्म जागरणा करते तुम को ऐसा अध्यवसाय यावत् संकल्प हुआ कि मेरा शरीर क्षीण होगया है, यावत् मेरी मत्र नाडियों दावती है, परंतु उत्थानादि होने से प्रभात में मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक की पास जाकर बंदना नमस्कार कर काल की बाँच्छा नहीं करता हुआ संलेखना करना मुझे श्रेय है. और ऐसा विचार करके सूर्य का उदय होते ही तुम मेरी पास आये हो. अहो खंदक ! क्या यह बात सत्य है ? हाँ, भगवन् ! यह बात सत्य है. अहो देवानु-

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(अथयत्राय च) (चितवन) (यावत्) (उदार) (विपुल) (काल) (मेरी) (समीप) (शीघ्र) (आया) (अथ) (नू) (शकादर्शी) (खं) (खंदक) (तत्र) (खंदया) (पुंवरत्तात्रत्तं) (जाव) (जागरमाणस्त) (इमेयास्त्रे) (अब्भित्थिए) (जाव) (समुप्पजित्था) (एवं) (खलु) (अहंइमेणं) (एयास्त्रेणं) (उरालेणं) (विउलेणं) (तंचेव) (जाव) (कालं) (अणवकंख) (माणस्त) (विहरित्तिए) (त्तिकट्टु) (एवं) (संपेहेइ) (२) (त्ता) (कल्लं) (पाउप्पमायाए) (जाव) (जलंते) (जेणव) (ममअंतिए) (तंगेव) (हव्वमागए) (॥) (सेणुणं) (खंदया) (अट्टेसमट्टे) (?) (हंताअत्थि) .

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

के वि० विचहं ॥ ३३ ॥ त० तव खं० खंदक अ० अनगार स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर के त० तथारूप ये० स्थविर की अं० पास सा० सामायिकादि ए० अग्यारह अं० अंग अ० अध्ययन कर ब० बहुत प० पूर्ण दु० वारह वा० वर्ष सा० साधु की प० पर्याय पा० पालकर मा० मास की से० संलेखना से अ० आत्मा को झू० झूसकर स० साठ भक्त अ० अनशन से छे० छेदकर आ० आलोचते प० प्रतिक्रमण करते स० समाधि प्राप्त आ० अनुक्रम से का० कालको पहुंचे ॥ ३४ ॥ त० तब ये० स्थविर भ० भगवन्त खं० खंदक अ० अनगार को का० काल को प्राप्त जा० जानकर प० परिनिवर्तिक ॥ ३५ ॥ तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए

सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिस्सित्ता, बहु पडिपुण्णाइं दुवालस वासाइं सामण परियागं पाउणित्ता मासियाए संलहणाए अत्ताणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइय पडिक्कंते समाहिपत्ते आणुपुव्वीए कालं गए ॥ ३४ ॥

तएणं ते थेरा भगवंतो खंदथं अणगारं कालगयं जाणित्तां, परिनिव्वात्तियं काउ- भगवन्त महावीर स्वामी के तथारूप स्थविर की पास सामायिकादि छे आचर्यक व अग्यारह अंग का अध्ययन किया, और वारह वर्ष तक साधुपना पालकर एक मास की संलेखना सहित आत्मा को क्रमकर साठ भक्त अनशन करके आलोचना प्रतिक्रमण करते हुये अनुक्रम से समाधि सहित काल को प्राप्त हुये

का० कायोत्सर्ग क० करे प० पात्र ची० उपकरण गि० ग्रहण करे वि० चडे प० पर्वत से स० शनैः २
 प० उतरकर जे० जहाँ स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर ते० तहाँ उ० आकर स० श्रमण भ०
 भगवन्त म० महावीर को वं० वंदना कर न० नमस्कार कर व० बोले दे० देवानुप्रिय का अ० अंतवासी
 खं० खंदक अ० अनगार प० प्रकृति भद्रक प० प्रकृति उ० उपशांत प० पतला को० क्रोध मा० मान मा० माया लो०
 लोभ मि० मृदु म० मार्दव सं० युक्त अ० अलीन भ० भद्रक वि० धिनीन से० वह दे० देवानुप्रिय से
 सगं करेइ, पत्तचीवराणि गिंहंति, विपुलाओ पव्वथाओ सणियं २ पच्चोरुहंति
 पच्चोरुहइत्ता जेणवसमणे भगवं महावीरे तेणव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता
 समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी एवं खलु-
 देवाणुप्पियाणं अंतवासी खंदए णामं अणगारं पगइभदए पगइउवसंते पगइ पयणु
 कोहमाण माया लोभे, मिउ मद्दव संपण्णे, अल्लणि, भदए, त्रिणीए सेणं देवाणुप्पिएहि.

॥ ३४ ॥ उस समय में उन की पास रहे हुवे स्थविर भगवन्त खंदक अनगार को काल प्राप्त हुए जानकर
 निर्वाण संबंधि कायोत्सर्ग करके व खंदक अनगार के पात्र वस्त्रादि लेकर उस पर्वत से उतरे. उतरकर
 श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी की पास आये और भगवन्त को वंदना नमस्कार करके ऐसा बोले कि
 अहो देवानुप्रिय ! आपका अंतवासी भद्रक प्रकृतिवाले, उपशान्त प्रकृतिवाले, स्वभाव से क्रोधादि को

? साधु निर्वाण हुवे पीछे कायोत्सर्ग करना सो

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

वि० विचरं ॥ ३३ ॥ त० तव खं० खंदक अ० अनगर स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर के
 त० तथारूप ये० स्थविर की अं० पास सा० सामायिकादि ए० अग्यारह अं० अंग अ० अध्ययन कर
 ब० बहुत प० पूर्ण दु० वारह वा० वर्ष सा० साधु की प० पर्याय पा० पालकर मा० मास की से०
 संलेखना से अ० आराम को झू० झूसकर स० साठ भक्त अ० अनशन से छे० छेदकर आ० आलोचने
 प० प्रतिक्रमण करते स० समाधि प्राप्त आ० अनुक्रम से का० कालको पहुंचे ॥ ३४ ॥ त० तब ये०
 स्थविर भ० भगवन्त खं० खंदक अ० अनगर को का० काल को प्राप्त जा० जानकर प० परिनिर्वर्तिक

॥ ३३ ॥ तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए

सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिस्सित्ता, बहु पडिपुण्णाइं दुवालस वासाइं

सामण परियागं पाउणित्ता मासियाए संलहणाए अत्ताणं झूसित्ता सट्ठि भत्ताइं

अणसणाए छेदित्ता आलोइय पडिक्कंते समाहिपत्ते आणुपुव्वीए कालं गए ॥ ३४ ॥

तएणं ते थेरा भगवंतो खंदयं अणगारं कालगयं जाणित्तां, परिनिव्वात्तियं काउ-

भगवन्त महावीर स्वामी के तथारूप स्थविर की पास सामायिकादि छे अवश्यक व अग्यारह अंग का
 अध्ययन किया, और वारह वर्ष तक साधुपना पालकर एक मास की संलेखना सहित आत्मा को क्रमकर
 साठ भक्त अनशन करके आलोचना प्रतिक्रमण करते हुये अनुक्रम से समाधि सहित काल को प्राप्त हुये

गये क० कहां उ० उत्पन्न हुवे गो० गौतमादि स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर भ० भगवान् गो०
 गौतम को व० बोले गो० गौतम म० मेरा अ० अंतेवासी खं० खंदक अ० अनगर प० प्रकृति भद्रक
 जा० यावत् म० मेरी अ० आत्मा मिलते स० स्वयं पं० पांच महाव्रत आ० आराधकर स० सर्व अ० अय-
 शेष ने० जानना जा० यावत् आ० आलोचकर प० प्रतिक्रमणकर स० समाधि को प्राप्त का० काल
 के अवसर में कां० काल करके अ० अच्युत दे० देवलोक में दे० देवपने उ० उत्पन्न हुवे त० तहां अ०
 कितनेक दे० देवताकी वा० वाचीस सा० सागरोपम की ठि० स्थिति प० प्ररूपी खं० खंदक दे० देव
 समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी एनं खलु गोयमा ! मम अंतेवासी खंदए

णामं अणगारे पगइभइए जात्र सेणं मए अब्भणुणाए समाणे सयमेव पंचमहव्वयाइं आरा-
 हेत्ता तंचेव सव्वं अवसेसयं नेयव्वं जात्र आलोइय पडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं
 किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववण्णे. तत्थणं अत्थेगइयाणं देवाणं वावसिं सागरोवमाइं

देवानुप्रिय ! आपका अंतेवासी खंदक अनगर काल कर कहां गये, और कहां उत्पन्न हुवे ? अहो
 गौतम ! मेरा अंतेवासी खंदक नामक अनगर मेरी आज्ञा से पांच महाव्रत की आराधना यावत्
 संलेखनादि कर आलोचना प्रतिक्रम सहित काल करके अच्युत देवलोक में देवतापने उत्पन्न हुवे. वहांपर कितनेक
 देवताओं की वाचीस सागरोपम की स्थिति कही. उस में खंदक देवता की भी वाचीस सागरोपम की

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(अन्तेवासि) (वाचीस) (सागरोपम) (स्थिति) (देवता) (अच्युत) (देवलोक) (पांच) (महाव्रत) (आराधना) (नामक) (अनगर) (उत्पन्न) (हुवे) (कहां) (गये) (और) (कहां) (उत्पन्न) (हुवे) (अहो) (गौतम) (मेरा) (अंतेवासी) (खंदक) (नामक) (अनगर) (मेरी) (आज्ञा) (से) (पांच) (महाव्रत) (की) (आराधना) (यावत्) (संलेखनादि) (कर) (आलोचना) (प्रतिक्रम) (सहित) (काल) (करके) (अच्युत) (देवलोक) (में) (देवता) (अपने) (उत्पन्न) (हुवे) (वहांपर) (कितनेक) (देवताओं) (की) (वाचीस) (सागरोपम) (की) (स्थिति) (कही) (उस) (में) (खंदक) (देवता) (की) (भी) (वाचीस) (सागरोपम) (की)

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अ० आज्ञा मिलते स० स्वतः पं० पांच महाव्रत आ० आराधकर स० साधु स० साधियों को खा०
 क्षमाकर अ० हमारी स० साथ वि० वडा प० पर्वत को नि० निरविशेष जा० यावत् आ० अनुक्रम से
 का० काल को प्राप्त हुये इ० यह आ० आचार भ० भंडोपकरण ॥ ३५ ॥ ४० भगवान् गो० गौतम
 स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर को वं० वंदनाकर न० नमस्कार कर व० बोले दे० देवानुप्रिय
 का अं० अंतवासी खं० खंदक अ० अन्नगर का० काल के अवसर में का० काल कर के क० कडां ग०
 अब्भणुणाए समणे सयमेव पंच महव्वयाणि आराहेत्ता समणाय समणीओय
 खामेत्ता अम्हेहिं सद्धिं विपुलं पव्वयं तंचेव निरवसेसं जाव आणुपुव्वीए कालगए ।
 इमेयसे आयाभंडए ॥ ३५ ॥ भंतैत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं
 वंदइ णमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतवासी
 खंदएणामं; अणगारे कालमासे कालंकिच्चा कहिं गए कहिं लववण्णे ? गोयमादि,
 पत्ता करनेवाले, मृदुता को धारन करनेवाले, अलीन, भद्रिकं व विनीत खंदक अन्नगर आपकी आज्ञा
 मिलने से पांच महाव्रत की आराधना कर और साधु साध्वी को खमाकर हमारी साथ पर्वत पर आये थे,
 यहां मिलेखनादि करके काल को प्राप्त हुये हैं, अहो भगवन् ! इन के यह भंडोपकरण हैं ॥ ३५ ॥
 उस समय में श्री गौतम स्वामी श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार करके बोले कि अहो

शब्दार्थः ॥ ३५ ॥ अन्वयः कालमासे कालंकिच्चा कहिं गए कहिं लववण्णे ? गोयमादि, पत्ता करनेवाले, मृदुता को धारन करनेवाले, अलीन, भद्रिकं व विनीत खंदक अन्नगर आपकी आज्ञा मिलने से पांच महाव्रत की आराधना कर और साधु साध्वी को खमाकर हमारी साथ पर्वत पर आये थे, यहां मिलेखनादि करके काल को प्राप्त हुये हैं, अहो भगवन् ! इन के यह भंडोपकरण हैं ॥ ३५ ॥

सूत्र

वार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी जालामसादजी *

की वा० वाचीस सागरोपम की ठि० स्थिति प० प्ररूपी ॥ ३६ ॥ भं० भगवन् खं० खंदक दे० देवता
में दे० देवलोक में से आ० आयुष्य क्षयसे म० भवक्षय से अ० पीछे च० चक्कर क० कहां ग० जा-
वेंगे क० कहां उ० उत्पन्नहोंगे गो० गौतम म० महाविदेह में सि० सिद्धेगा बु० बुद्धेगा मु० मुक्तहोगा निर्वाण पा-
मेगा स० सब दु० दुःखों का अं० अंतकरेगा ॥ २ ॥ १ ॥ ÷

ठिई पणत्ता. तत्थणं खंदयस्सवि देवस्स वाचीसं सागरोवमाइं ठिई पणत्ता
॥ ३६ ॥ सेणं भंते ! खंदए देवत्ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं भवक्खएणं
ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गमिहिति, कहिं उव्वज्जिहिति? गोयमा !
महाविदेहे सिज्झिहिति, बुज्झिहिति मुच्चिहिति, परिनिव्वहिहिति, सब्बदुक्खाण मंतं
करिहिति, ॥ खंदओ सम्मत्तो ॥ ३ ७ ॥ विइय सयस्स पढमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ २ ॥ १ ॥

स्थिति है ॥ ३६ ॥ वहां देवलोक में आयुष्य, भव व स्थिति का क्षय होने से चक्कर खंदक अनगर कहां
उत्पन्न होंगे ? अहो गौतम ! वहां से चक्कर महाविदेह क्षेत्र में उचम कुल में जन्म लेकर वैराग्य को
प्राप्त होकर सिद्धेगे, बुद्धेगे, मुक्त होंगे, निर्वाण को प्राप्त करेंगे यावत् सब दुःख का अंत करेंगे यह
खंदक शीव का अधिकार समाप्त हुआ. यह दूसरा शतकका पहिला उद्देशा सम्पूर्ण हुआ ॥ २ ॥ १ ॥

शब्दार्थ सूत्रार्थ

सूत्र

वार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी जालापसादजी *

की वा० वाचीस सागरोपम की ठि० स्थिति प० प्ररूपी ॥ ३६ ॥ भं० भगवन् खं० खंदक दे० देवता
में दे० देवलोक में से आ० आयुष्य क्षयसे भ० भवक्षय से अ० पीछे च० चक्कर क० कहां ग० जा-
वेंगे क० कहां उ० उत्पन्नहोंगे गो० गौतम म० महाविदेह में सि० सिद्धिगा बु० बुद्धिगा मु० मुक्तहोना निर्वाण पा-
भेगा स० सब दु० दुःखों का अ० अंतकरेगा ॥ २ ॥ १ ॥ ÷ ÷

ठिई पणत्ता. तत्थणं खंदयस्सवि देवस्स वाचीसं सागरोवमाइं ठिई पणत्ता
॥ ३६ ॥ सेणं भंते ! खंदए देवत्ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं भवक्खएणं
ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गमिहिति, कहिं उववाजिहिति? गोयमा !
महाविंदेहे सिद्धिहिति, बुद्धिहिति मुच्चिहिति, परिनिव्वाहिति, सब्बदुक्खाण मंतं
करिहिति, ॥ खंदओ सम्मत्तो ॥ ३७ ॥ विईय सयस्स पढमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ २ ॥ १ ॥

स्थिति है ॥ ३६ ॥ वहां देवलोक में आयुष्य, भव व स्थिति का क्षय होने से चक्कर खंदक अन्नगर कहां
उत्पन्न होंगे ? अशो गौतम ! वहां से चक्कर महाविदेह क्षेत्र में उत्तम कुल में जन्म लेकर वैराग्य को
प्राप्त होकर सिद्धिगे, बुद्धिगे, मुक्त होंगे, निर्वाण को प्राप्त करेंगे यावत् सब दुःख का अंत करेंगे यह
खंदक जीव का अधिकार समाप्त हुआ. यह दूसरा शतकका पहिला उद्देश सम्पूर्ण हुआ ॥ २ ॥ १ ॥

शब्दार्थ सूत्र पार्थ

शब्दार्थ

सूत्र

पार्थ

दूसरा उ० उद्देशा ण० जानना पु० पृथ्वी अ० अत्रगाहकर कर नि० नरकावास सं० संस्थान त्रा०
जाडपना वि० चौडा प० परिधि व० वर्ण गं० गंध फा स्पर्श किं० क्या स० सर्व पा० प्राणी उ० उत्पन्न

द्वितीया उद्देशो सो नयन्वो ॥ गाहा ॥ पृथ्वी ओगाहिता निरयासंठाणमेव

बाहहं, विक्खंभ परिक्खेवो, वण्णो गंधोय फासोय ॥ किं सच्चपाणा उववण्णपुब्बा ?
हंता गोयमा ! असतिं अदुवा अणंतखुत्तो पृथ्वी उद्देशो ॥ बीइयसए तइओ उद्देशो

लाख नरकावास रहे हुये हैं. ऐसे ही सब सतों पृथ्वी का कथन करना. जो आबलिका (पंक्ति) वंघ
नरकावास हैं वे बर्तुलाकार, व्यंस, चउरंस हैं और दुसरं विविध प्रकार के हैं. नरक का जाडपना तीन
हजार योजनका है नीचे एक हजार योजन का घन है. बीच में एक हजार योजन का सुत्तिर है, और
उपर एक हजार योजन का संकुचित है. नरक का विष्कंभपना. संख्यात योजनवाले नरकावास का संख्यात
योजन का है, और परिधि भी संख्यात योजन की है. जो अंख्यात योजन के हैं उन का विस्तार व
परिधि असंख्यात योजन की है. नरक के वर्ण, गंधरस व स्पर्श अनिष्ट है इस का सब अधिकार जीवाभि-
गम सूत्र के नरक नामक द्वितीय उद्देशे में कहा है वैसा जानना. रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नरकावास
में क्या सब प्राणी उत्पन्न हुये हैं? हां गौतम! उन नरकावासों में सब प्राणी एकवार नहीं परंतु अनेकवार

* प्रकाशक-राजबहादुर लाला सुब्रह्म सहायजी बालाप्रसादजी *

को भं० भगवन् भा० भवितात्मा के० केवली समुद्रात जा० यावत् सा० शाश्वत अ० अनागतकाल
वि० रहे स० समुद्रात प० पद ने० जानना ॥ २ ॥ २ ॥

क० कितनी भं० भगवत् पु० पृथ्वी प० प्ररूपी गो० गौतम जी० जीवाभिगम ने० नारकी को वि०
यपणो केवली समुद्राय जाव सासय मणागयद्वं चिट्ठति, समुद्रायपयं णेयव्वं

॥ २ ॥ विईयसए वीओ उदेसो सम्मत्तो ॥ २ ॥ २ ॥

कइणं भंते ! पुढवीओ पणत्ताओ ? गोयमा ! जीवाभिगमो नेरइयाणं जो

समुद्रात. - इस का सब अधिकार कपाय समुद्रात की अलयात्तुत्त्व तक पत्रवणा सूत्र के समुद्रात पद
जैसे कहना ॥ १ ॥ भवितात्मा अन्गार को केवली समुद्रात यावत् शाश्वत अनागत काल तक रहे यह
समुद्रात पद जैसे जानना. यह दूसरा शतक का दूसरा उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ २ ॥ २ ॥

गत उद्देशे में समुद्रात का कथन किया. जो जीव नारणान्तिक समुद्रात करना है वह जीव मरकर
पृथ्वी में उत्पन्न होता है इसलिये पृथ्वी का अधिकार करते हैं. अहो भगवन् ! पृथ्वी कितनी कधी ?
अहो गौतम ! पृथ्वी सात कधी. उस के नाम रत्नप्रभा यावत् तमत्तम प्रभा. इन पृथ्वीयों को अवागाह कर
कितने दूर नरकावास रहे है ! रत्नप्रभा पृथ्वी का एक लाख अस्सी हजार योजन का पृथ्वी पिंड है
उस में उपर नीचे एक २ हजार छोडकर बीच में एक लाख अष्टतर हजार की पोलार है. उस में तीस

दूसरा उ० उद्देशा ण० जानना पु० पृथ्वी अ० अवागाहकर कर नि० नरकावास सं० संस्थान वा० जाडपना वि० चौडा प० परिधि व० वर्ण गं० गंध फा स्पर्श कि० क्या स० सर्व पा० प्राणी उ० उत्पन्न

द्वितीया उद्देशो सो नयव्यो ॥ गाहा ॥ पृथ्वी ओगहिता निरयासंठाणमेव

बाहहं, विक्खंभ परिव्वेवो, वण्णो गंधाय फासोय ॥ किं सव्वपाणा उववण्णपुब्बा ?

हंता गोयमा ! असतिं अदुवा अणंतखुत्तो पृथ्वी उद्देशो ॥ बीड्यसए तइओ उद्देशो

लाख नरकावास रहे हुये हैं. ऐसे ही सब सारों पृथ्वी का कथन करना. जो आवलिका (पंक्ति) बंध नरकावास हैं वे वर्तुलाकार, व्यंस, चउरंस हैं और दुमंरं विविध प्रकार के हैं. नरक का जाडपना तीन हजार योजनका है नीचे एक हजार योजन का घन है. बीच में एक हजार योजन का सुप्तिर है, और उपर एक हजार योजन का संकुचित है. नरक का विष्कंभपना. संख्यात योजनवाले नरकावास का संख्यात योजन का है, और परिधि भी संख्यात योजन की है. जो अमंख्यात योजन के हैं उन का विस्तार व परिधि असंख्यात योजन की है. नरक के वर्ण, गंधरस व स्पर्श अनिष्ट है इस का सब अधिकार जीवाभिगम सूत्र के नरक नामक द्वितीय उद्देशे में कहा है वैसा जानना. रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में क्या सब प्राणी उत्पन्न हुये हैं ? हां गौतम ! उन नरकावासों में सब प्राणी एकवार नहीं परंतु अनेकवार

को भं० भगवन् भ्रा० भवितात्त्रा के० केवली समुद्रात जा० यावत् सा० शाश्वत अ० अनागतकाल
वि० रहे स० समुद्रात प० पद ने० जानना ॥ २ ॥ २ ॥ *

क० कितनी भं० भगवत् पु० पृथ्वी प० प्ररूपी गो० गौतम जी० जीवाभिगम ने० नारकी को वि०
यप्यणो केवली समुद्राय जाव सासय मणागयद्वं चिट्ठति, समुद्रायपयं णेयव्वं

॥ २ ॥ विईयसए वीओ उदेसो सम्मत्तो ॥ २ ॥ २ ॥ *

कइणं भंते ! पुढवीओ पणत्ताओ ? गोयमा ! जीवाभिगमो नेरइयाणं जो

समुद्रात. इस का सब अधिकार कपाय समुद्रात की अत्याहुत्व तक पन्नपणा सूत्र के समुद्रात पद
जैसे कहना ॥ १ ॥ भवितात्मा अनगर को केवली समुद्रात यावत् शाश्वत, अनागत काल तक रहे यह
समुद्रात पद जैसे जानना. यह दूसरा शतक को दूसरा उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ २ ॥ २ ॥ *

गत उद्देशे में समुद्रात का कथन किया. जो जीव नारणान्तिक समुद्रात करता है वह जीव मरकर
पृथ्वी में उत्पन्न होता है इसलिये पृथ्वी का अधिकार करते हैं. अहो भगवन् ! पृथ्वी कितनी कधी ?
अहो गौतम ! पृथ्वी सात कधी. उत के नाम रत्नप्रभा यावत् तमत्तम प्रभा. इन पृथ्वीयों को अवागाह कर
कितने दूर नरकावास रहे है ! रत्नप्रभा पृथ्वी का एक लाख अस्सी हजार योजन का पृथ्वी पिंड है
उस में उपर नीचे एक २ हजार छोडकर बीच में एक लाख अष्टत्तर हजार की पोलार है. उस में तीस

वन् ए० ऐसा गो० गौतम ज० जो अ० अन्य तीर्थिक ए० ऐसे आ० कहते हैं जा० यावत् इ० स्त्रीवेद
 पु० पुरुष वेद जे० जो ए० ऐसे आ० कहते हैं मि० मिथ्या ते० वे ए० ऐना आ० कहते हैं अ० में
 गो० गौतम ए० ऐसा आ० कहता हूँ जा० यावत् प० प्ररूपता हूँ नि० निर्ग्रथ-का० काल को प्राप्तहुवे
 अ० अन्यतर दे० देवलोक में दे० देवपते उ० इत्यत्र भ० होवे म० महर्द्धिक जा० दा० म० महाशक्तिंत दु० ऊंचे
 देवलोक में चि० लंबी स्थिति वाले त० तहां दे० देव भ० होवे म० महर्द्धिक जा० यावत् द० दशदिशा

वत्तव्वया णेयव्वा जाव इत्थिवेयंच, पुरिसेवेयंच ॥ से कहेमयं भंते एवं ? गो-
 यमा ! जणं ते अण्णउत्थिया एव माइक्खंति जाव इत्थिवेयंच पुरिसेवेयंच,
 जे ते एव माहंसु मिच्छा ते एव माहंसु ॥ अहं पुण गोयमा ! एव माइक्खामि
 जाव परूवेमि एवं खलु नियंठे कालगए समणे अन्नयरंसु देवलोएसु देवत्ताए उव-

तीर्थिक एक समय में एक जीव दो वेद वेदने का बोलते हैं वे मिथ्या हैं अर्थात् उन का कथन असत्य
 है. क्योंकि देवको स्त्रीरूप करने पर भी पुरुषपना होने से पुरुष वेद का ही उदय होता है परंतु स्त्री वेद
 का उदय नहीं होता है. अहो गौतम ! मेरा कथन ऐसा ही कि कोई निर्ग्रथ काल करके किसी महर्द्धिक
 यावत् महानुभाग बहुत स्थितिवाले उपर के देवलोक में देवतापने उत्पन्न हुआ. वहां पर वह देव महर्द्धिक,

ज० जघन्य अं० अंतर्मुहूर्त उ० उत्कृष्ट चा० वारह सं० संवत्सर ॥ ४ ॥ का० काय भव० में रहा हुआ का० कालसे के० कितना काल हो० होवे गो० गौतम ज० जघन्य अं० अंतर्मुहूर्त उ० उत्कृष्ट च० चौथीस सं० संवत्सर ॥ ५ ॥ म० मनुष्य पं० पंचेन्द्रिय ति० तिर्यंच बी०० शीज से मं० भगवन् जो० योनिमें गम्भेति कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नं अतो मुहुत्तं उक्कोसं वारस संवच्छराइं ॥ ४ ॥ कायभवत्थेणं भंते ! कायभवत्थेति कालओ केवचिरं होइ ?

गोयमा ! जहण्ण मंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं चउवीसं संवच्छराइं ॥ ५ ॥ मणुस्सपंचिदिय तिरिस्ख जौणिय वीएणं भंते ! जौणियब्भूए केवइयं कालं संचिट्ठइ ? जहन्नेणं

मनुष्य कां गर्भ कितने कालतक रहता है ? अहो गौतम ! मनुष्य का गर्भ जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट वारह वर्ष ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! कायभवस्थे जीव कायभवस्थ में कितना कालतक रहे ? अहो गौतम ! कायभवस्थ जीव जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट चौथीस वर्ष. स्त्री के गर्भ में एक जीव वारह वर्ष रहकर काल कर आवे और पुनः वहांही उत्पन्न होकर वारह वर्ष रहे अथवा उस वारह वर्ष रहकर चयाहुवा जीवके शरीर में अन्य जीव आकर वारह वर्ष रहे ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! संशी पंचेन्द्रिय मनुष्य व संशी पंचे-

! जनन्युदरमध्यव्यवस्थितनिजदेह एव यो भवो जन्म स कायभवः तत्र तिष्ठति यः स कायभवः सः । अर्थात् माताके उदरमें रहवाहा निजदेहरूप भवमें रहनेवाला सो कायभवस्थ. ॥

जी० जीव पु० पुत्रपने ह० शीघ्र आ० आत्रे मे० वह के० कैसे भं० भगवन् ए० ऐसा बु० कहा जाता है जा० यावत् ह० शीघ्र आ० आवे गो० गौतम इ० स्त्री पु० पुरुषका क० किये कर्म जी० योनि मे० मैथुन संबंधि सं० संयोगमें स० उत्पन्न होवे ते० वे दु० दोनों सि० स्त्रियता चि० इकठी करे त० तहां ज० जघन्य ए० एक दो० दो ति० तीन उ० उत्कृष्ट स० प्रत्येक लक्ष जी० जीव पु० पुत्रपने ह०

इक्कोवा, दोवा, तिण्णिवा, उक्कोसेणं : सयसहस्सपुहत्तं जीवाण पुत्तत्ताए हव्वमार-
च्छंति ॥ सेकेणट्ठेणं भंते ! एवं बुच्चइ जाथ हव्वमागच्छइ ? गांयसा ! इत्थीएय

पुरिसस्सय कम्मकडाए जोणीए मेहुणवत्तिए नामं संजोए समुप्पज्जइ, ते दुहओसिणेहं चि-
णंति, तत्थणं जहन्नेणं एक्कोवा दोवा तिण्णिवा, उक्कोसेणं सयसहस्स पुहत्तं जीवाणं

गौतम ! जघन्य एक, दो, तीन उत्कृष्ट प्रत्येक लाख [नव लाख] जीव पुत्रपने उत्पन्न होवे. मत्स्यादिक को एक संयोग में माछली की योनि में नव लाख जीव गर्भपने उत्पन्न होवे और निष्पन्न भी होवे. मनुष्य को बहुत उत्पन्न होवे परंतु बहुत निष्पन्न नहीं होवे. अहो भगवन् ! एक भव में एक ही जीव को नव लाख जीव पुत्रपने किस तरह से उत्पन्न होवे ? अहो गौतम ! नाम कर्म निर्वर्तित (मदनोदीपक व्यापारवाली) योनि में स्त्री और पुरुषका मैथुन संबंधी संयोग हुआ, उस समय उन दोनों का स्नेह एकत्रित हुआ. उस में जघन्य एक दो, तीन उत्कृष्ट नवलक्ष जीव पुत्रपने उत्पन्न होवे इसलिये अहां गौतम ! नवलाख जीव

पुत्रपने (नवलाख) (नवलाख) (नवलाख) (नवलाख) (नवलाख) (नवलाख) (नवलाख) (नवलाख) (नवलाख) (नवलाख)

रहा हुआ के० कितना काल सं० रहे गो० गौतम ज० जघन्य अ० अंतर्मुहूर्त उ० उत्कृष्ट वा० वारह मुहूर्त ॥ ६ ॥ ए० एक
 जी० जीव भं० भगवन् ए० एक भव में के० कितनेका पु० पुत्र पने ह० शीघ्र आ० आवे गो० गौतम ज० जघ-
 न्य इ० एक दो० दो ति० तीन उ० उत्कृष्ट स० प्रत्येक सो जी० जीवों का० पु० पुत्रपने ह० शीघ्र
 आ० आवे ॥ ७ ॥ ए० एक जी० जीव को भं० भगवन् ए० एक भव में के० कितने जीव पु० पुत्रपने
 ह० शीघ्र आ० आवे गो० गौतम ज० जघन्य इ० एक दो० दो ति० तीन उ० उत्कृष्ट स० प्रत्येक लक्ष
 अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं वारस मुहुत्ता ॥ ६ ॥ एग जीविणं भंते ! एग भवगगहणेणं

केवइयाणं पुत्तत्ताए हव्वंमागच्छइ ? गोयमा ! जहणेणं इक्कस्सवा दोण्हस्सवा, ति-
 ण्हस्सवा उक्कोसं सयपुहत्तस्स जीवाणं पुत्तत्ताए हव्वमागच्छइ ॥ ७ ॥ एग जीवस्सणं
 भंते एग भवगगहणेणं केवइया जीवा पुत्तत्ताए हव्वमागच्छंति ? गोयमा ! जहणेणं

न्द्रिय तिर्यच का वीजरूप वीर्य योनि में कितने कालतक रहे ? अहो गौतम ! जघन्य अंतर्मुहूर्त
 उत्कृष्ट वारह मुहूर्त ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! एक जीव एक भव आश्रित कितने पिता का पुत्र होवे ?
 अहो गौतम ! जघन्य एक, दो, तीन का पुत्र होवे, उत्कृष्ट प्रत्येक (नव) सो पिताका पुत्र होवे. क्योंकि वारह
 मुहूर्त तक योनि संचित रहती है; उस से नव सो का वीज योनि में प्रविष्ट होने से उन सब का वह पुत्र
 कहाता है ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! एक भव में एक जीव को कितने जीव पुत्रपने उत्पन्न होवे ? अहो

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

महावीर रा० राजगृह न० नगरके गु० गुणशील चे० उद्यान से प० निकलकर व० वाहिर
 में वि० विचारलेलगे ॥ १० ॥ ते० उन काल ते० उस समय में तुं० तुंगीया न० नगरी हो० थ,
 वर्णनयुक्त ॥ ११ ॥ ती० उस तुं० तुंगीया न० नगरीकी व० वाहिर उ० ईशान कौन में पु० पुष्पवती च०
 उद्यान हो० था त० तहां तुं० तुंगीया न० नगरी में व० बहुत स० श्रमणोपासक प० रहते हैं अ० ऋद्धि-
 समणे भगवं महावीर रायगिहाओ नयराओ गुणसिलाओ चेइयाओ पडिनि
 क्वमइ पडिनिक्खमइत्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ ॥ १० ॥ तेणं कालेणं
 तेणं समएणं तुंगिया नामं नयरी होत्था, वण्णओ, तीसेणं तुंगियाए नयरीए बहिया
 उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए पुप्फवइए नामं चेइए होत्था. वण्णओ ॥ ११ ॥
 तत्थणं तुंगियाए नयरीए बहेवे समणोपासया परिवसंति. अड्ढा, दित्ता, विच्छिण्ण
 तव श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी राजगृह नगरके गुणशील नामक उद्यान में से निकल-
 कर अन्यदेशमें विचारने लगे ॥ १० ॥ उर काल उर समय में तुंगिया नाम की नगरी थी. उस का
 वर्णन उक्ताई सूत्र में चंपा नगरी का वर्णन जैसे कहना. उस तुंगिया नगरी की ईशान कौन में पुष्प-
 वती नामक उद्यान था. उस का वर्णन उक्ताई में से जानना ॥ ११ ॥ उस तुंगीया नगरी में बहुत
 श्रमणोपासक (श्रावक) रहते थे. वे धन धान्य से परिपूर्ण, बलवंत, विस्तार युक्त बहुत भवन, शयन

● मरुतः-राजावहादुर याका पुत्रदेव महापत्नी ज्वालामाद्री ●

शीघ्र आ० आवे ॥ ८ ॥ मे० मैथुन भं० भगवन् से० मेवता के० कैसे अ० अभंगप क० करे गो०
गौतम से० वह ज० जैसे के० कोई पु० पुरुष रु० रुईकी नालिका वू० वांसके बुरेकी नालिका में तःतया हुंवा कः
खिन्ना से स० जगत्वे ए० ऐसे गो० गौतम मे० मैथुन सं० सेवता अ० असंगप क० करे म० वह ए०
ऐसे भं० भगवन् लि० ऐसे जा० यावत् वि० विचरने लगे ॥ ९ ॥ त० तव स० श्रयण भ० भाष्यन् मः

पुत्रत्ताए हव्यमागच्छति. से तेणट्टेणं जात्र हव्यमागच्छइ ॥ ८ ॥ मेहुणं भंते !
सेवमाणरस केरिसे असंजमे कज्जइ ? गोयमा ! से जहानामए कइ पुरिसे ख्य-
नालियंवा, चूरनालियंवा, तत्तेणं कणएणं समभिधंसेजा, पुरिसएणं गोयमा ! मेहुणं
सेवमाणरस असंजमे कज्जइ ॥ सेवं भंते भंतेत्ति जाव विहरइ ॥ ९ ॥ तएणं

एक जीव को पुत्रपने एक भव में उत्पन्न होते हैं. ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! मैथुन भेवने वाले को - किम
तरह असंगप होवे ? अहो गौतम ! जैसे कोई पुरुष रूइ या सूके काष्ठ के बुरे को नालीका में परे, फीर
भूमि में तपाकर रक्त बनाया हुआ लोहे का दंड उस नाली में डाले, इससे उस में रही हुई रूइ जैसे जलजाली
है वैसे ही मैथुन करते योनियों में रहे हुंवे जीवों नष्ट होजाते हैं. और इस तरह जीवों का नाश होने से असंगप
होता है. अहो भगवन् ! आपके वचन यथातथ्य हैं ऐसा कहते श्री गौतम स्वामी विचर रहे हैं ॥ ९ ॥

आ० आश्रव सं० संवर नि० निर्जरा कि० क्रिया अ० अधिकरण धं० वंध प० मोक्ष कु० कुशल अ०
सहे नहीं दे० देव अ० अमुर ना० नाग सु० सुवर्ण ज० यक्ष र० राक्षस कि० किन्नर कि० किंपुरुष ग०
गरुड गं० गंधर्व म० महोरगादि दे० देवगण से नि० निर्ग्रथके पा० प्रवचन को अ०
अतिक्रमे नहीं नि० निर्ग्रथ पा० प्रवचन में नि० शंकारहित नि० कांक्षारहित वि० संदेहरहित ल० प्राप्त-

जकख रकखस किण्णर किंपुरिस गरुल गंधव्व महोरगादीएहि देवगणेहि निगं-

थाओ पावयणाओ अणत्तिकमणिजा ॥ निगंथ पावयणे निरसंक्रिया, निक्कंखि-

या, . निव्वितिगिच्छा, लद्धट्टा, गहियट्टा, पुच्छियट्टा अभिगयट्टा, विणिच्छियट्टा,

अट्टिमिजप्पमाणुरायत्ता ॥ अयमाउत्तो ! निगंथ पावयणे अट्टे, अयं परमट्टे:

पुण्य, पाप, आश्रव, संवर, निर्जरा, क्रिया, अधिकरण, धंध व मोक्ष को जानने में बहुत कुशल थे. आपत्ति
काल में देव, अमुर, नाग, सुवर्ण, यक्ष, किन्नर, किंपुरुष, गरुड, गंधर्व व महोरगादिक की सहायता
नहीं लेने वाले थे. स्वयं कृत कर्म भोगने की मनोवृत्तिवाले थे, वैसे ही उक्त देवों निर्ग्रथ के प्रवचन
से चलित करने पर भी वे श्रमणोपासक चलित नहीं होते थे. वैसे ही वे जीवादि तत्व है या नहीं
ऐसी शंका, कांक्षा व अन्य दर्शनी की वांछा रहित थे. वैसे ही शास्त्र के अर्थ का उन को लाभ
हुवा था. उन्होंने अच्छी तरह सम्यक् प्रकार से ग्रहण किया था. किसी प्रकार का संशय उत्पन्न होने पर

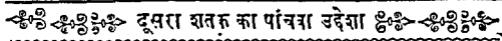
* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

वाले दि० बलवन्त वि० विस्तीर्ण वि० बहुत थ० भवन स० शयन आ० आसन जा० यान वा० वाहन
युक्त व० बहुत थ० धन व० बहुत जा० सुवर्ण र० रूपा आ० आयोग प० प्रयोग सं० युक्त वि०
उच्छिष्ट वि० बहुत थ० आहारपानी व० बहुत दा० दासी दा० दास गो० गौ म० महिषी ग० बकरें प०
बहुत व० बहुत न० मनुष्य से अ० अपराजित अ० जाने हुं जे जी० जीवाजीव उ० ओलखे पु० पुन्य पा०
त्रिपुल भवण सयणासण जाण वाहणाइण्णा, बहुधण बहुजायरुवरयया, आओगप.

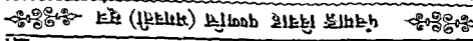
ओगसंपउत्ता विच्छड्डियविउल भत्त पाणा, बहुदासीदास गो महिसगत्रेलगप्पभूया,
बहु जणस्स अपरिभूया, अभिगयजीवाजीवा, उवलद्धपुण्णपात्ता, आसव संवर
निजर किरियाहिगरण बंधप्पमोक्ख कुसला ॥ असेहेज देवासुर नाग सुवण्ण

आसन, यान, सुवर्ण व वाहन से व्याप्त, वैसे बहुत धन सुवर्ण चांदी व आयोग प्रयोगसे संयुक्त थे. जिनकी भोजन
शालमें इतना आहार निपजता था कि जिस को भोग कर पीछे जो बढा था उसमें से बहुत लोगोंकी आ-
जीविका चलती थी, उन को बहुत दास दासी, गाय बैल, माहिषी, गाडर वगैरह का संग्रह था.
उनकी पास इतनी ऋद्धि थी कि इतनी ऋद्धि बहुत से लोगों की पास नहीं थी. यह द्रव्य
ऋद्धि का कयन किया. अब भाव ऋद्धि का कयन चलता है. जीव अजीव को जानने वाले थे.

१ लोगों को व्याज से देना २ व्यापार में लगाना.



आ० आश्रव सं० संवर नि० निर्जरा कि० क्रिया अ० अधिकरण धं० बंध प० मोक्ष कु० कुशल अ०
 सहे नहीं दे० देव अ० असुर ना० नाग सु० सुवर्ण ज० यक्ष र० राक्षस कि० किन्नर कि० किंपुरुष ग०
 गरुड गं० गंधर्व म० महोरगादि दे० देवगण से नि० निर्ग्रथके पा० प्रवचन को अ०
 अतिक्रमे नहीं नि० निर्ग्रथ पा० प्रवचन में नि० शंकारहित नि० कांक्षारहित वि० संदेहरहित ल० प्राप्त-
 जक्ख रक्खस किण्णर किंपुरिस गरुल गंधव्व महोरगादीएहिं देवगणेहिं निग्गं-
 थाओ पावयणाओ अणत्तिकमणिज्जा ॥ निग्गंथ पात्रयणे निरसंक्रिया, निक्कंखि-
 या, निव्वित्तिगिच्छा, लब्ध्हा, गहिय्हा, पुच्छिय्हा अभिगय्हा, त्रिणिच्छिय्हा,
 अट्टिमिजंपम्मणुरायरत्ता ॥ अयमाउसो ! निग्गंथ पात्रयणे अट्ठे, अयं परमट्ठेः
 पुण्य, पाप, आश्रव, संवर, निर्जरा, क्रिया, अधिकरण, बंध व मोक्ष को जानने में बहुत कुशल थे. आपत्ति
 काल में देव, असुर, नाग, सुवर्ण, यक्ष, किन्नर, किंपुरुष, गरुड, गंधर्व व महोरगादिक की सहायता
 नहीं लेने वाले थे. स्वयं कृत कर्म भोगने की मनोछत्तिलाे थे, जैसे ही उक्त देवों निर्ग्रथ के प्रवचन
 से चलित करने पर भी वे श्रमणोपासक चालित नहीं होते थे. जैसे ही वे जीवादि तत्व है या नहीं
 ऐसी शंका, कांक्षा व अन्य दर्शनी की वांछा रहित थे. जैसे ही शास्त्र के अर्थ का उन को लाभ
 हुआ था. उनोंने अच्छी तरह सम्यक् प्रकार से ग्रहण किया था. किसी प्रकार का संशय उत्पन्न होने पर



शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

वाले दि० चलन्त वि० विस्तीर्ण वि० बहून भ० भवन स० शयन आ० आसन जा० यान वा० वाहन
युक्त व० बहुत ध० धन व० बहुत जा० सुवर्ण र० रूपा आ० आयोग प० प्रयोग सं० युक्त वि०
उच्छिष्ट वि० बहुत भ० आहारपानी व० बहुत दा० दासी दा० दास गो० गौ म० महिषी ग० बकरें प०
बहुत व० बहुत ज० मनुष्य से अ० अपराजित अ० जाने हुंवे जी० जीवाजीव उ० ओलखे पु० पुन्य पा०

त्रिपुल भवण सयणासण जाण वाहणाइण्णा, बहुधण बहुजायरुवरयया, आओगप

ओगसंपउत्ता विच्छड्ढियविउल भत्त पाणा, बहुदासीदास गो महिसगवेलगप्पभूया,

बहु जणस्स अपरिभूया, अभिगयजीवाजीवा, उवलद्धपुण्णपावा, आसव संवर

निज्जर किरियाहिगरण बंधप्पमोक्ख कुसला ॥ असहेज देवासुर नाग सुवण्ण

आमन, यान, सुवर्ण व चाहन से व्याप्त, वेसे बहुत धन सुवर्ण चांदी व आयोग प्रयोगसे संयुक्त थे. जिनकी भोजन
शालामें इतना आहार निपजता था कि जिस को भोग कर पीछे जो बढा था उसमें से बहुत लोगोंकी आ-
जीविका चलती थी, उन को बहुत दास दासी, गाय बैल, महिषी, गाडर वगैरह का संग्रह था.
उनकी पाम इतनी ऋद्धि थी कि इतनी ऋद्धि बहुत से लोगों की पास नहीं थी. यह द्रव्य
ऋद्धि का कथन किया. अब भाव ऋद्धि का कथन चलता है. जीव अजीव को जानने वाले थे.

१ लोगों को व्याज से देना २ व्यापार में लगाना.

सम्यक् अ० पालते स० श्रमण नि० निर्ग्रथ फा० प्रासुक ए० एपनिक अ० अशन पा० पानी खा०
 खादिम सा० स्वादिम व० वस्त्र प० पात्र कं० कंबल पा० रजोहरण पी० आसन फ० पाट से० शैय्या
 सं० संधारा ओ० औपथ भे० भेषज प० प्रतिलाभते अ० यथा प० ग्रहण किये त० तप कर्म से आ०
 आत्मा को भा० भावते वि० विचरते हैं ॥ १२ ॥ ते० उस काल ते० उस समय में वा० पार्श्वनाथ के शिष्य
 थे० स्थविर भ० भगवन्त जा० जातिसंपन्न कु० कुलसंपन्न व० बलसंपन्न रू० रूपसंपन्न वि० विनय संपन्न
 खाइम साइमेणं वत्थ पडिग्गह कंबल पायपुच्छणेणं, पीढफल्लग सेज्जा संथारएणं
 ओसहभेसजेणं पडिल्लभेमाणा अहापरिग्गहिएहिं तवोकम्ममेहिं अप्पाणं भावि-
 माणा विहरंति ॥ १२ ॥ तेषं कालेणं तेणंसमएणं पासात्रच्चिज्जा थेरा भगवंतो
 जाइसंपण्णा, कुलसंपण्णा, बलसंपण्णा, रूत्रसंपण्णा, विणयसंपण्णा, पाणसंपण्णा
 होते थे. वे श्रावकों बहुत शीलव्रत, अनुव्रत, गुन्व्रत, प्रत्याख्यान, पोपथ उपवास वगैरह करते थे. चतु-
 र्दशी, अष्टमी, अमावास्या व पूर्णिमा को प्रतिपूर्ण पोपथ सम्यक् प्रकार से करते थे. अशन,
 पान, खादिम, स्वादिम, वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण, वाजोठ, पटिया, शैय्या, संधारा, व औपथादि
 श्रमण निर्ग्रथ को प्रतिलाभते हुवे (देते हुवे) वैसे ही जैसा ग्रहण किया वैसा तप कर्म से आत्माको चित-
 वते हुये विचरते थे ॥ १२ ॥ उम काल उस समय में जाति संपन्न, कुल सम्पन्न, बल सम्पन्न, रूप सम्पन्न

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालामुखी *

शब्दार्थ
मन्त्र
भावार्थ

अर्थ ग० ग्रहणकिया है अर्थ पु० पूछा है अर्थ अ० जाना है अर्थ वि० विशेष जाना है अ० अर्थ अ०
हृष्टी पि० भिज पे० प्रेमानुरक्त अ० यह आ० आयुष्यमान् नि० निर्ग्रथ पा० प्रवचन अ० अर्थ प०
परमार्थ से० शेष अ० अनर्थ उ० अच्छा फा० स्फटिक जैसे अ० खुश्रा टु० द्वार चि० प्रसन्न अ० अंतः
पुर प० परगृह प० प्रवेश व० बहुत सी० शीलव्रत गु० गुन वे० वेरमण प० प्रत्याख्यान पो० पोपध उप-
वास से वा० चतुर्दशी अ० अष्टमी को स० अमावास्या पु० पूर्णिमा को प० प्रतिपूर्ण पो० पोपध स०
सेसे अण्डे ॥ ऊसियफलिहा अवंगुयदुवारा चियत्तेतरं परधरप्यवेसा, बहूहि

सीलव्यय गुण वेरमण पञ्चखण पोसहांवासेहि चाउदसट्टमुद्धिपुणमासिणीसु
पडिपुणं पोसहं सम्ममणुपालेमाणा समणे निगंथे फासुएसणिज्जेणं असणपाण

पृष्ठकर निर्णय किया था, निर्णय वाले अर्थ को सम्यक् प्रकार से धार रखा था, निर्ग्रथ प्रवचन में उन की
हृष्टी व हृष्टी की भिजियों प्रेमानुराग से रक्त बनी हुई थी। जब किसी साथ वार्तालाप करने का प्रसंग
आता तब ऐसा ही कहते कि अहो आयुष्यभन्तो ! यह निर्ग्रथ के प्रवचन मोक्ष साधन का मार्ग है। वही
अर्थ रूप है, परमार्थ रूप है, परमादरणीय है। इन सिवाय अन्य धन, पुत्रादि जैसे ही कुत्रचनादि अनर्थ
हैं, मोक्ष के बाधक हैं। उन श्रावकों के हृदय स्फटिक रत्न की समान निर्मल थे, उन के गृह के द्वार दान
करने के लिये सदैव खुले रहते थे, प्रीति करनेवाले अंतःपुर व परगृह में प्रवेश करते अप्रतीति के पात्र नहीं

यथा आ० अनुक्रम से च० विचरते गा० ग्रामानुयाम दु० जाते सु० सुखसे वि० विचरते जे० जहाँ तुं०
 तुंगियानगरी जे० जहाँ पु० पुण्यवती चे० उद्यान ते० तहाँ उ० आकर अ० यथाप्रतिरूप उ० अजग्रह
 ओ० ग्रहण कर सं० संयम से त० तप से अ० आत्मा को भा० भावतेहुँवे वि० विचरते हैं ॥ १३ ॥ त० तत्र तुं०
 तुंगिया न० नगरी में सि० सिंघाडे जैसे ति० तीनरस्ता च० चार रस्ता च० बहुत म० राजमार्ग में जा०
 यावत् ए० एकादिशा तरफ णि० जति है ॥ १४ ॥ त० तत्र ते० वे स० श्रमणोपासक इ० इम क० कथा
 ल० प्राप्त होते ह० हृष्ट तुं० तुष्ट जा० यावत् स० बोलाकर ए० ऐसे व० बोले दे० देवानुप्रिय पा०
 चेइए, तेणेव उवागच्छंति उवागच्छत्ता अहापडिरुवं उगहं ओगिण्हिचा संजमेणं
 तत्रसा अप्पणं भवेमाणा विहरंति ॥ १३ ॥ तएणं तुंगियाए नयरीए सिंघाडग-
 तिगउक्कचच्चरव उम्मुहमहाएहहेनु जाव एगदिसाभिमुहा णिज्जायंति, ॥ १४ ॥
 तएणं ते समणोवासया इमीसे कहाए लद्धट्टा समाणा हट्ट तुट्टा जाव सदावंति
 यथाक्रम से ग्रामानुग्राम सुखपूर्वक विचरते तुंगिया नगरी के पुण्यवती उद्यान में आये, वहाँ आकर यथा-
 योग्य अवग्रह याचकर संयम व तप से आत्मा को भावते हुँवे विचरते थे ॥ १३ ॥ तत्र सिंघाडे के आका-
 खाले रस्ते में, तीन रस्ता मिले जैसे स्थान में, चौक, बहुत रस्ते मिले जैसे स्थान व राजमार्ग में उन
 स्थितिर भगवन्त के दर्शन कोलिये एक ही दिशा में बहुत लोक जा रहे थे ॥ १४ ॥ तत्र वे श्रमणोपासक ऐसा

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

णाः ज्ञानवन्त दे० दर्शनवन्त च० चारित्रवन्त ल० लज्जा ला० लाघववन्त ओ० शरीर प्रभा युक्त
ते० तेजस्वी व० वर्चस्वी ज० यशस्वी जि० जिता है क्रोध जि० जिता है मान मा० माया लो० लोभ
नि० निद्रा ई० इन्द्रिय प० परिपह जी० जीवित आ० बाँछा म० मरण भ० भय सो० शोकसे वि०
रहित व० बहु श्रुत व० बहुत परिचार वाले पं० पाँच अ० अनगार स० शत स० साथ सं० रहेहुवे अ०

दंसणसंपण्णा, चरित्तसंपण्णा, लज्जा लाघव संपण्णा, ओयंसी तेयंसी, वच्चंसी जसंसी;

जियकोहा, जियमाणा, जियमाया, जियलोभा, जियनिदा, जियइंदिया, जियपरी-

सहा, जीवियासा मरण भय सोक विप्पमुक्का, बहुसुया, बहुपरिवारा,

पंचहिं अणगारसएहिं सद्धि संपरिवुडा अहाणुयुंवि चरमाणा, गामाणुगामं

दुइजमाणा, सुहं सुहेणं विहरमाणा. जेणव तुंगियानयरी जेणव पुप्फवईए

विनय सम्भन्न, मतिज्ञानादि ज्ञान सहित, सम्यक्त्त्व सहित, सामायिकादि चारित्र सहित, लौकिक लोकोत्तर
लज्जा महित, द्रव्य से उपधि व भाव से सर्व था लज्जुतावाले, ओजस्वी, तेजस्वी, वचन की विशिष्टता युक्त
सो वर्चस्वी, यशस्वी, क्रोध, मान, माया व लोभ को जीतनेवाले, निद्रा, इन्द्रिय, परिपह को जीतनेवाले,
जीवित, मरण, भय व शोक से मुक्त, बहुत श्रुत के धारक और चारों तीर्थरूप बहुत
परिचारवाले श्री पार्श्वनाथ स्वामी के शिष्यानुशिष्य स्थविर भगवंत पांचसो साधु के परिचार सहित

यथा आ० अनुक्रम से च० विचरते गा० ग्रामानुग्राम दु० जाते सु० सुखमे वि० विचरते जे० जहाँ तुं०
 तुंगियानगरी जे० जहाँ पु० पुष्पवती चे० उद्यान ते० तहाँ उ० आकर अ० यथाप्रतिरूप उ० अन्नग्रह
 ओ० ग्रहण कर सं० संयम से त० तप से अ० आत्मा को० भा० भावितेहुँवे वि० विचरते हैं ॥१३॥ त० तव तुं०
 तुंगिया न० नगरी में सि० सिंघाडे जैमे ति० तीनरस्ता च० चार रस्ता च० बहुत प० राजमार्ग में जा०
 यावत् ए० एकदिशा तरफ णि० जाते हैं ॥ १४ ॥ न० तव ते० वे स० श्रमणोपासक इ० इम क० कथा
 ल० प्राप्त होते ह० हृष्ट तुं० एष्ट जा० यावत् स० बोलाकर ए० ऐगे व० बोले दे० देवानुप्रिय पा०
 चेइए, तेणेव उवागच्छंति उवागच्छइत्ता अहापडिरूवं उगहं ओगिण्हित्ता संजमेणं
 तवसा अप्पाणं भवेमाणा विहरंति ॥ १३ ॥ तएणं तुंगियाए नयरीए सिंघाडग-
 तिगचउक्कचचरच उम्मुहमहापहेनु जाव एगदिसाभिमुहा णिज्जायंति, ॥ १४ ॥
 ताएणं ते समणोवासया इमीसे कहाए लद्धट्टा समाणा हट्ट तुट्टा जाव सदावंति
 यथाक्रम से ग्रामानुग्राम सुखपूर्वक विचरते तुंगिया नगरी के पुष्पवती उद्यान में आये. वहाँ आकर यथा-
 योग्य अवग्रह याचकर संयम व तप से आत्मा को भावते हुंवे विचरते थे ॥ १३ ॥ तव सिंघाडे के आका-
 रवाले रस्ते में, तीन रस्ता मिले जैसे स्थान में, चौक, बहुत रस्ते मिले जैसे स्थान व राजमार्ग में उन
 स्थविर भगवन्त के दर्शन केलिये एक ही दिशा में बहुत लोक जा रहे थे ॥ १४ ॥ तव वे श्रमणोपासक ऐसा

पार्श्वनाथ के संतानिये थे० स्थविर भं० भगवन्त जा० जातिवन्त जा० यावत् अ० यथाप्रतिरूप उ० अनुज्ञा ओ० लेकर सं० संयम से त० तप से अ० आत्मा को भा० भावते हुवे वि० विचरते हैं म० महाफल दे० देवानुप्रिय त० तथारूप थे० स्थविर भ० भगवन्त के ना० नाम गो० गोत्र को स० सुनने से कि० क्या अ० अभिगमन वं० वंदन ण० नमस्कार प० पूछना प० पूजते जा० यावत् ग० ग्रहण करते तं० सदाव्रिता एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्यिया । पासावेच्चेजा थेरा भगवंतो जाति संपणा जाव अहापडिरुवं उरगहं ओगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा- विहरंति. तं महाफले खलु देवाणुप्यिया तहारुवाणं थेराणं भगवंताणं नामगोयस्स विसवणयाए किमंगपुण अभिगमण वंदण. नमंसण पडिपुच्छण पज्जुवास- चार्तालाप सुनकर बहुत आनंदित हुए. और परस्पर ऐसा बोलनेलगे कि अहो देवानुप्रिय ! जातिसेपच यावत् यथाप्रतिरूप श्री पार्श्वनाथ स्वामी के शिष्यानुशिष्य श्री स्थविर भगवन्त पुष्पावती उद्यान में आज्ञा मांगकर संयम व तपसे आत्माको भावते हुवे विचर रहे हैं. ऐसे तथारूप स्थविर भगवन्त का नाम गोत्र सुनने से ही महा फल होता है तो फीर अभिगमन, वंदन, नमस्कार, प्रतिपृच्छा, पर्युपासना यावत् अर्थादिक का ग्रहण करने का तो कहना ही क्या? इसलिये अहो देवानुप्रिय! अपन वहां जावे और स्थविर भगवन्तको वंदना नम- स्कार यावत् पर्युपासना करे. यही इस भव व परभव में अनुगामीक होगा. ऐसा परस्पर चार्तालाप

उनकी पास ग० जावे दे० देवानुप्रिय थे० स्थविर भ० भगवन्त को वं० वंदनकरे ण० नप्रस्कारकरे जा०
यावत् प० पूने इ० यह भव में प० परभव में जा० यावत् आ० आनुगामिक भ० होगा ति० ऐसा
करके अ० अन्योन्यकी अ०पा० ए०यः अर्थ प० सुनकर जे० जहाँ स० अपने गे० गृह ते० तहाँ उ०
आकर ण्हा० स्नानकीया क०पीठी लगायी क०कोगले किये पा०तिलक कीया सु०शुद्ध पी०प्रवेश करनेयोग्य
मं०मांगलीक व०स्त्र प०पहिनकर अ०अल्प म०मूल्यवंत आ० आभरण अ० पहिनकर स०अपने गे०गृह से

गयाए जाव गहणयाए तं गच्छामोणं देवाणुपिया थेरे भगवंते वंदामो णमं

सामो जात्र पज्जुवासामो । एयणे इहभवे परभवे जात्र आणुगामियत्ताए भविस्सइ

तिकट्टु ॥ अणमणस्स अतिए एयमट्ठं पडिसुणंति पडिसुणित्ता जेणव सयाइं

गेहाइं तेणेव उवागच्छंति उवागच्छइत्ता ण्हाया कयचलिकम्मा कयकोउयमंगल

पायच्छित्ता सुद्धपावेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पत्रपरिहिया अप्पमहग्घाभरणालंक्रिय सर्रीरा

मुना. सुनकर अपने गृह गये. वहाँ जाकर स्नान किया, पीठी मुख का विलेपन किया, अंजली
भरकर पानी के कोगले किये, तिलक मसादिक किये, और राजसभा में प्रवेश करने योग्य शुद्ध वस्त्र
पहिने. फिर अल्प भार व बहुत मूल्यवाले आभरणों से अलंकृत बनकर अपने २ गृह से निकले, और
पांच से चलते हुवे तुंगिया नगरी के मध्य बजार से होकर जहाँ पुष्पवती नामक उद्यान था वहाँ आये.

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

प० नीकलकर ए० इक्के पि० मिले पा० पाँच से चलकर तुं० तुंगिया न० नगरी की म० मध्य से नि० नीकलकर जे० जहाँ पु० पुष्पवती चे० उद्यान हो० था ते० तहाँ उ० आकर थे० स्थविर भ० भगवन्त को प० पाँच प्रकार के अ० अभिगम से अ० जाते हैं ते० वह ज० जैसे म० सचित्त द० द्रव्य वि० त्यजकर अ० अचित्त द० द्रव्य अ० रखकर ए० एक पटका उ० उत्तरासन क० करके च० चक्षुदर्शन से

सएहिं सएहिं गेहेहिं तो पडिनिक्खमइत्ता एगयओ मेलायति, पायविहार-
चारेणं तुंगियाए नयरीए मझमंझेणं निगच्छंति निगच्छइत्ता, जेणं पुप्फवईए
नामं चेइए होत्था तंणेव उवागच्छंति, उवागच्छइत्ता थेरे भगवंते पंचविहेणं अभि-
गमेणं अभिगच्छंति तंजहा सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए, अचित्ताणं दव्वाणं
अविउसरणयाए, एगसाडिएणं उत्तरासंगकरणेणं, चक्खुप्फासे अंजलिपगहेणं,

स्थविर भगवंत की समीप आते ही१ तांबूलादि सचित्त द्रव्य को अलग करना, २ वस्त्रादि अचित्त द्रव्य को अलग नहीं करना, ३ बीच में नहीं सीला हुआ ऐसा एक वस्त्र का उत्तरासन करना ४ चक्षु दृष्टि में आते ही दोनों हस्त की अंजली करना, और ५ अन्य सब छोड़कर मन से साधु स्थविर भगवन्त की तरफ एकत्रता करना ऐसे पाँच अभिगम किया। फौर उन स्थविर भगवन्त को तीन आदान प्रदक्षिणा करके तीन प्रकारसे

अं० अंजलि प० जोडकर म० मन से ए० स्थिर करके जे० जहाँ धे० स्थविर भ० भगवन्त० ते तहाँ उ० आकर ति०
तीनचार अ० आदान प० प्रदक्षिणा क० करे जा० यावत् ति० त्रिविध प० सेवना से प० सेवे ॥ १५ ॥ त० तत्र ते० वे ये०
स्थविर भ० भगवन्त स० श्रमणोपासक को ती० उस म० बड़ी प० परिपदा में चा० चार या० याम ध० धर्म
कहे ज० जैसे के० केशीस्थामी जा० यावत् स० श्रावकपना आ० आज्ञा आ० आराहित भ० होवे जा०
यावत् ध० धर्म क० कहा ॥ १६ ॥ त० तत्र ते० वे स० श्रमणोपासक थे० स्थविर भ० भगवन्त की
मणसा एगत्ती करणेणं, जेणेवथरे भगवंतो तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छइत्ता
तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणंवा करेति जाव ति विहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासंति ॥
॥ १५ ॥ तएणं ते थरा भगवंतो तेसिं समणोवासयाणं तीसेय महइ महालियाए
परिसाए चाउज्जामं धम्मं परिकहेति जहा केसिसामिस्स आव समणोवासइत्ताए,
आणाए आराहए भवइ जाव धम्मो कहिओ ॥ १६ ॥ तएणं ते समणोवासया
सेवा भक्ति की ॥ १५ ॥ तत्र उन स्थविर भगवन्तने श्रावकों को उन महती परिपदा में चार याम
वाला धर्म कहा. जैसे रायप्रसेणी सूत्र में केशी अनगारने प्रदेशी राजा को धर्मोदेश कहा था वैसे याव-
त् धर्म की सम्यक् प्रकार से आराधना करनेवाला श्रमणोपासक आराधक होता है वगैरह धर्मोपदेश
कहा ॥ १६ ॥ तत्र उन स्थविर भगवन्त की पास धर्म सुत्कर श्रमणोपासक हट तुष्ट चिचत्वाले

सूत्र

भावार्थ

शब्दार्थ

पद्यमन विचारेण (सूत्रार्थ)

शब्दार्थ

प० नीकलकर ए० इकठे मि० मिले पा० पांव से चलकर तुं० तुंगिया न० नगरी की म० मध्य से नि० नीकलकर जे० जहां पु० पुष्पवती चे० उद्यान हो० था ते० तहां उ० आकर थे० स्थविर भ० भगवन्त को प० पांच प्रकार के अ० अभिगम से अ० जाते हैं तं० वह ज० जैसे स० सचित्त द० द्रव्य वि० त्यजकर अ० अचित्त द० द्रव्य अ० रखकर ए० एक पटका उ० उत्तरासन क० करके च० चक्षुदर्शन से

सएहिं सएहिं गेहेहिंतो पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमइत्ता एगयओ मेलायंति, पायविहार-
चारणं तुंगियाए नयरीए मञ्जमञ्जेणं निगच्छंति निगच्छइत्ता, जेणत्र पुप्फवइए
नामं चेइए होत्था तंणत्र उवागच्छंति, उवागच्छइत्ता थरे भगवंते पंचविहेणं अभि-
गमेणं अभिगच्छंति तंजहा सचित्ताणं दब्बाणं विउसरणयाए, अचित्ताणं दब्बाणं
अविउसरणयाए, एगसाडिण्णं उत्तरासंगकरणं, चक्खुप्फासे अंजलिपगहेणं,

स्थविर भगवंत की समीप आते ही१ तांबूलादि सचित्त द्रव्य को अलग करना, २ बत्तीदि अचित्त द्रव्य को अलग नहीं करना, ३ बीच में नहीं सीला हुवा ऐसा एक बत्त का उत्तरासन करना ४ चक्षु दृष्टि में आते ही दोनों हस्त की अंजली करना, और ५ अन्य सब छोडकर मन से माधु स्थविर भगवन्त की तरफ एकत्रता करना ऐसे पांच अभिगम किया. फीर उन स्थविर भगवन्त को तीन आदान प्रदक्षिणा करके तीन प्रकारसे

अं० अंजलि प० जोडकर म० मन से ए० स्थिर करके जे० जहाँ थे० स्थविर भ० भगवन्त० ते तहाँ उ० आकर ति० तीनवार अ० आदान प० प्रदक्षिणा क० करे जा० यावत् ति० त्रिविध प० सेवना से प० सेवे ॥ १५ ॥ त० तव ते० वे थे० स्थविर भ० भगवन्त स० श्रमणोपासक को ती० उस म० वडी प० परिपदा में चा० चार या० याम ध० धर्म कहे ज० जैसे के० केशीस्वामी जा० यावत् स० श्रावकपना आ० आज्ञा आ० आराहित भ० होंवे जा० यावत् ध० धर्म क० कहा ॥ १६ ॥ त० तव ते० वे स० श्रमणोपासक थे० स्थविर भ० भगवन्त की

मणसा एगत्ती करणेणं, जेणेवधेरे भगवंतो तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छइत्ता

तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणंवा करंति जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवांसंति ॥

॥ १५ ॥ तएणं ते थेरा भगवंतो तेसिं समणोवासयाणं तीसिय महइ महालियाए

परिसाए चाउज्जामं धम्मं परिकहंति जहा केसिसामिस्स जाव समणोवासइत्ताए,

आणाए आराहए भवइ जाव धम्मो कहिओ ॥ १६ ॥ तएणं ते समणोवासया

सेवा भक्ति की ॥ १५ ॥ तव उन स्थविर भगवन्तने श्रावकों को उस महती परिपदा में चार याम वाला धर्म कहा. जैसे रायप्रसेणी सूत्र में केशी अनगारने प्रदेशी राजा को धर्मोद्देश कहा था वैसे यावत् धर्म की सम्यक् प्रकार से आराधना करनेवाला श्रमणोपासक आराधक होता है वगैरह धर्मोद्देश कहा ॥ १६ ॥ तव उन स्थविर भगवन्त की पास धर्म सुतकर श्रमणोपासक हए तुष्ट चित्तवाले

का फल त० तव ते० वे स० श्रमणोपासक थे० स्थविर भ० भगवन्त को ए० ऐसा न० बोले ज० यदि भ० भगवन् स० संयम से अ० अनाश्रवफल त० तप से वो० कर्म छेदना फल कि० क्या प० मत्स्येक अ० आर्य दे० देव दे० देवलोक उ० उत्पन्न होवे त० तहां का० कालिक पुत्र अ० अन्गार थे० स्थविर ते० उन स० श्रमणोपासक को ए० ऐसा व० बोले पु० पूर्व तप से अ० आर्य दे० देव दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे त० तहां म० महिला थे० स्थविर स० श्रमणोपासक को ए० ऐसा व० बोले पु० पूर्व ते समणोवासया थेर भगवन्ते एवं वयासी जइणं भंते ! संजमे अण्हयफले तंवे वो- दाणफले किंपत्तियं भंते देवा देवलोएसु उव्वजंति ? तत्थणं कालिय पुत्तेनामं अनंगारे थेरे समणोवासए एवं वयासी पुव्वंतवेणं अज्जो देवा देवलोएसु उव्वजंति ॥ तत्थणं महिलेनामं थेरे ते समणोवासए एवं वयासी पुव्वसंजमेणं अज्जो देवा देव- लोएसु उव्वजंति ॥ तत्थणं आणंदरक्खिए नामं थेरे ते समणोवासए एवं वयासी अलग २ दिया. उन में से कालिक पुत्र नामक अन्गारने कहा कि अहो श्रमणोपासको ! * पूर्व तप से देवता में देवपते उत्पन्न होते हैं २ मेहल नामक स्थविर बोले की पूर्व संयम-सराग संयम से

* यहाँ पूर्व शब्द वीतराग अवस्था की अपेक्षा से लिया है. अर्थात् पूर्व तप सो सरागभाव से तप करना. क्यों कि वीतराग अवस्था से सराग अवस्था पूर्व होती है इससे उसमें कराया हुआ तप सो पूर्वतप-

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

संयम से आ० आनंद रक्षित थे० स्थविर व० बोले क० कर्म से का० काप्यप थे० स्थविर व० बोले सं० संगत से दे० देवलोक में उ० उपजते हैं पु० पूर्वतप से पु० पूर्वसंयम से क० कर्म से सं० संगत से अ० आर्य दे० देव दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होते स० सत्य ए० यह अर्थ आ० आत्मभाव व० वक्तव्यता त० तब स० श्रमणोपासक थे० स्थविर भ० भगवन्त से ए० ऐसा वा० प्रश्नोत्तर वा० कहते ह० हृष्ट

कम्मियाए अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति ॥ तत्थणं कासवे नामं थेरे एवं

वयासी संगियाए अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति ॥ पुब्ब तवेणं, पुब्बसंजमेणं,

कम्मियाए, संगियाए, अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति. संचेणं एसअट्ठे नो चेवणं

आयभाव वत्तव्वयाए ॥ तएणं ते समणोवासया थेरेहिं भगवंतेहिं इमाइं एयारूवाइं

देवलोक में देवताओ होते हैं. ३ आनंदरक्षित नामक स्थविर बोले कि कर्म के विकार से देवलोक में उत्पन्न होते हैं क्योंकि समस्त कर्म का क्षय नहीं किया है परंतु थोड़े बहुत दोष रहेहुवे हैं. काश्यप नामक स्थविर बोले कि संगति से देवलोक में देव होते हैं अर्थात् मनुष्यादि की संगति से सराग भाव रहने से या द्रव्यादि में सराग भाव रहने से तप संयम के आराधक देवलोक में देवता होते हैं. इस तरह पूर्व तप, पूर्व संयम, कर्म विकार व संगति से देवलोक में संयम व तप करनेवाले देव होते हैं ऐसा जो कहा है वह सत्य है. हमने हमारा अहंभाव से नहीं कहा है. तब स्थविर

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

तुं तुष्ट ६० स्थविर भं० भगवन्त को वं० वंदनाकर ण० नमस्कार कर प० प्रश्न पु० पूछे अ० अर्थ उ० ग्रहण करे उ० स्थान से उ० उठकर थे० स्थविर भ० भगवन्त को ति०तीन वार जा०यावत् वं० वंदना करं न० नमस्कार कर थे० स्थविर भ० भगवन्त की अं० पास से पु० पुष्पवती चे० उद्यान से प० नीकलकर जा० जिसदिशि से पा० आये ता० उसदिशा में प० पीछे गये ॥ १६ ॥ त० तव ते० वे थे० स्थविर भ० भगवन्त अ० कोई वक्त तुं० तुंगीआ न० नगरी के पु० पुष्पवती चे० उद्यान से प० नीकलकर व०

वागरणाइं वागरिथा समाणा हट्टतुट्टा थेरे भगवंते वंदंति णमंसंति वंदइत्ता नमंसइत्ता पसिणाइं पुच्छंति अट्टाइं उवाहियंति, उट्टाए उट्टेति थेरे भगवंते तिवखुत्तो जात्र वंदंति णमंसंति वंदित्ता नमंसइत्ता थेराणं भगवंताणं अंतियाओ पुष्फवईयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमइत्ता जामेवादिसं पाउब्भया तामेवदिसं पडिगया ॥ १६ ॥ तएणं ते थेरा भगवंतो अणयाकयाइं तुंगियाओ नयरीओ पुष्फवईयाओ

भगवन्त से पूछेहुवे प्रश्नोंका उत्तर सुनकर हष्ट, तुष्ट हुवे और स्थविर भगवंत को अन्य भी प्रश्न पूछे, उन के अर्थ की धारणा की. फीर उठकर तिन वार आदान प्रदक्षिणा करके पुष्पवती उद्यान में से नीकलकर जिसदिशा में से आये थे उसी दिशा में अग्ने २ स्थान पीछे गये. ॥ १६ ॥ स्थविर भग-

पारणा में प० प्रथम पो० पोरसी में म० स्वाध्याय क० करे वी० दूसरी पो० पोरसी में झा० ध्यान करे त० तीसरी पो० पोरसी में अ० धीमे स अ० अचपल अ० असंभ्रांत मु० मुखवस्त्रिका प० देखकर भा० भाजन व० वस्त्र प० देखकर भा० भाजन को प० पुंजकर भा० भाजन उ० ग्रहणकर जे० जहां स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर ते० तहां उ० आकर स० श्रमण भ० भगवन्त को वं० वंदनकर ण० नमस्कार करे व० बोले इ० इच्छता हूं भं० भगवन् तु० तुमारी आ० आज्ञा होवेतो छ० छठ भक्त पा० पारणा में रा० क्लमणपारणयंसि पढमाए पोरिसीए सज्जायं करेइ, बीयाए पोरिसीए ज्ञाणं झियाए, तइयाए पोरिसीए अतुरिय मचत्रलमसंभंते, मुहपोत्तियं पडिलेहेइ पडिलेहेइत्ता, भायणाइं वत्थाइं पडिलेहेइ पडिलेहेइत्ता भायणाइं पमज्जइत्ता, भायणाइं उग्गाहेइ उग्गाहेइत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छइत्ता समणं भगवं महावीरं वं- दइ णमंसइ वंदइत्ता णमंसइत्ता एवं वयासी इच्छामिणं भंते ! तुज्जेहिं अब्भणुणाए समणे पारणे के दिन प्रथम प्रहर में भगवन्त गौतमने स्वाध्याय की, दूसरे प्रहर में ध्यान किया और तीसरे प्रहर में धैर्यता सहित व चपलता रहित मुख वस्त्रिका का प्रतिलेखन किया, भाजन तस्त्रकी प्रतिलेखना की फीर भाजन को गोच्छेसे पुंजकर ग्रहण किये और श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी की पास आये. महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार कर ऐता बोले अहो भगवन् ! आपकी आज्ञा हेवे तो इश्वादि

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

इदार्थं सूत्रं भावार्थं

सूत्र

भावार्थ

बाहिर ज० अन्यदेश में व० विचरने लगे ॥ १.५ ॥ ते० उस काल ते० उससमय में रा० राजगृह न० नगर जा० यावत् प० परिपदा प० पीछीगइ ते० उसकाल ते० उससमय में स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर का जे० ज्येष्ठ अं० अंतेवासी इ० इन्द्रभूति अ० अनगर जा० यावत् स० संक्षिप्त वि० विपुल ते० तेजोलेख्या छ० छठ से अ० अंतर रहित त० तपकर्म से सं० संयम से त० तप से अ० आत्मा को भा० भावतेहुवे वि० विचरते थे ॥ १.८ ॥ त० तत्र भ० भगवान् गो० गौतम छ० छठ भक्त का पा०

चेइयाओ पडिनिगच्छति पडिनिगच्छइत्ता बहिया जणवय विहारं विहरंति

॥ १.७ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नयरे जाव परिसा पडिगया ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदमूइणामं

अणगारे जाव संखिच्चिउलतेउल्लेस्स छट्ठं छट्ठेणं. अनिक्खित्तेणं तवो कम्मणेणं

संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ १.८ ॥ तएणं से भगवं गोयमे छट्ठ-

वन्त भी तुंगिया नगरी के पुष्यवती उद्यान में से नीकलकर अन्य देशमें विहार करने लगे ॥ १.७ ॥ उस

काल उस समय में राजगृह नामक नगर था.. वहाँ श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी आये. परिपदा

को भगवन्त ने धर्मोपदेश कहा. धर्मोपदेश सुनकर परिपदा पीछी गई. उस काल उस समय में श्री

महावीर स्वामी के ज्येष्ठ अंतेवासी विपुल तेजोलेख्याको संक्षिप्त करने वाले इन्द्रभूति नामक अनगर निरंतर

छठ छठ (बेले बेंले) का तप करते संयम व तप में मग्न होते विचरते थे ॥ १.८ ॥ उस समय में छठ के

जाकर रा० राजगृह न० नगर में उ० ऊंच नी० नीच म० मध्यम कु० कुल के घ० गृह स० समुदायकी भि० भिक्षा के लिये अ० विचरते हैं ॥२०॥ त० तत्र भ० भगवान् गो० गौतम रा० राजगृह न० नगर में जा० यात्रा अ० विचरते व० बहुत ज० मनुष्यों के स० शब्द नि० सुने ए० ऐंसे श्व० निश्चय दे० देवानुप्रिय तु० तुंगिया न० नगरी की व० बाहिर पु० पुष्पवती चे० उद्यान में पा० पार्श्वनाथ के संतानिये थे० स्थविर भ० भगवन्त स० श्रमणोपासक इ० इसरूप से वा० प्रश्न पु० पूछे सं० संयम से भ० भगवन् कि० क्या

रायगिहे नयरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छइत्ता, रायगिहे नयरे उच्चनीयमस्सिमाइ

कुलाइ परवरसमुदाणरस भिक्खायरियं अडइ ॥ २० ॥ तएणं से भगवं गोयमे

रायगिहे नयरे जात्र अडमाणे बहुजणसहं निसामेइ एवं खलु देवाणुप्पिया ! तुंगि-

याए नयरीए बहिया पुष्पवईयाए चेइयाए पासावच्चिजा थेरा भगवंतो समणोवास-

एहि इमाइ एयारूवाइं वागरणाइं पुच्छिया संजमेणं भंते ! किं फले, तत्रे किं फले ?

नगरी में गये. और वहां ऊंच नीच व मध्यम कुल के घरों में भिक्षाचरी की ॥ २० ॥ उस समय में राजगृह नगर में गोवरी करते भगवन्त गौतम स्वामीने बहुत मनुष्यों से ऐसा सुना कि तुंगिया नगरी के बाहिर पुष्पवती नामक उद्यान में श्री पार्श्वनाथ भगवन्त के शिष्यानुशिष्य स्थविर भगवन्त को श्रमणोपासक (श्रावकों) ने ऐसा प्रश्न पूछा कि संयम का क्या फल व तप का क्या फल ? तत्र स्थविर भग-

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

फ० फल त० तप से किं० क्या फल त० तव ते० वे थे० स्थविर भ० भगवन्त स० श्रमणोपासक को
 ए० ऐसा व० बोले सं० संयम से अ० आर्य अ० अनाश्रवफल त० तप से त्रि० कर्म छेदन फल तं० तैसे
 जा० यावन् पु० पूर्वतप से पु० पूर्व संयम से क० कर्म से सं० संग से अ० आर्य दे० देव दे० देवलोक
 में उ० उत्पन्न होवे स० सत्य ए० यह अर्थ णो० नहीं आ० आत्मभाव व० वक्तव्यता से० वह
 क० कैसे ए० यह म० मानाजाये ए० ऐसे ॥ २१ ॥ त० तव भ० भगवान् गो० गौतम इ० इस क०

तएणं ते श्रेया भगवंतो समणोवासए एवं वयासी संजमेणं अज्जो अणण्हय फले, तवे
 वोदाणफले, तं चेव जाव पुव्वतवेणं, पुव्वसंजमेणं, कम्मियाए, संगियाए अज्जो ! देवा
 देवलोएसु उव्वज्जाति सच्चेणं एसमट्ठे णो चेवणं आयभाववचव्वयाए. से कहमेयं
 मन्ने एवं ? ॥ २१ ॥ तएणं भगवं गोयमे इमासे कहाए लद्धट्टेसमाणे जायसट्ठे

वन्तने उत्तर दिया कि संयम का आश्रव निराश्रव व तप का पूर्व कृतकर्मों के क्षय का फल है. जब ऐसा
 है तो तपस्वी व संयमी देव क्यों होते हैं ! पूर्व सो सराग तप से, पूर्व संयम से, कर्म विकार से व संगति से
 देवलोक में देव होते हैं यह सत्य है. यह अहंभावबुद्धि से नहीं कहते हैं परंतु परमार्थ से कहते हैं. ऐसा
 स्थविर का वचन कैसे माननीय होवे ? ॥ २१ ॥ इस तरह नगर में वार्ता सुनकर श्रद्धा व कौतुक उत्पन्न

विचरता व० बहुत म० मनुष्यों का स० शब्द नि० मुने दे० देवानुग्रिय तुं० तुंगिया न० नगरी की व०
वाहिर पु० पुष्पवती चे० उद्यान में पा० पार्श्वनाथ के भंत्तानिये थे० स्थविर भ० भगवन्त स० श्रमणो-
पासक ए० ऐसे वा० प्रश्न पु० पूछे सं० संयम से किं० क्या फ० फल त० तप से किं० क्या फ० फल
तं० तैसे जा० यावत् स० सत्य ए० यह अर्थ णो० नहीं आ० आत्मभाव व० वक्तव्यता प०

तेसिं समणोवासयाणं इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागरेत्तए उदाहु असमिया ? आउजि-
याणं भंते ! ते थेरा भगवंतो तेसिं समणोवासयाणं इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागरित्तए
उदाहु अणाउजिया ? पल्लिउजियाणं भंते ! ते थेरा भगवंतो तेसिं समणोवासयाणं इमाइं
एयारूवाइं वागरणाइं वागरेत्तए उदाहु अपल्लिउजिया ? पुव्वत्तेणं अज्जो ! देवा देवलोएसु
उव्वज्जंति, पुव्वसंजमेणं, कम्मियाए, संगियाए अज्जो ! देवा देवलोएसु उव्वज्जंति.

भगवन् ! उन श्रावकोंने पूछे हुवे प्रश्नों का शास्त्र विधि से उत्तर देने को क्या वे समर्थ हैं या असमर्थ
हैं ? अथवा वे स्थविर भगवन्त उन श्रावकों के प्रश्नों का उत्तर देने में सम्यक् प्रकार से अभ्यासवाले हैं
या अभ्यासवाले नहीं हैं ? अथवा उन श्रावकों के प्रश्नों कहेने को वे स्थविर भगवन्त क्या ज्ञानवन्त हैं या
ज्ञानवन्त नहीं हैं ? अथवा उन के प्रश्नों के उत्तर देने में वे स्थविर भगवन्त क्या परिज्ञानवाले हैं या परिज्ञान-

विचरता व० बहुत म० मनुष्यों का स० शब्द नि० सुने दे० देवानुप्रिय तु० तुंगिया न० नगरी की य०
वाहिर पु० पुष्पवती चे० उद्यान में पा० पार्श्वनाथ के भंतानिये थे० स्थविर भ० भगवन्त स० श्रमणो-
पासक ए० ऐसे वा० प्रश्न पु० पूछे सं० संयम से कि० क्या फ० फल त० तप ते कि० क्या फ० फल
तं० तैसे जा० यावत् स० सत्य ए० यह अर्थ णो० नहीं आ० आत्मभाव व० वक्तव्यता प०

तेसिं समणोवासयाणं इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागरेत्तए उदाहु असमिया ? आउज्जि-
याणं भंते ! ते थेरा भगवंतो तेसिं समणोवासयाणं इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागरित्तए
उदाहु अणाउज्जिया ? पलिउज्जियाणं भंते ! ते थेरा भगवंतो तेसिं समणोवासयाणं इमाइं
एयारूवाइं वागरणाइं वागरेत्तए उदाहु अपलिउज्जिया ? पुव्वत्तेवेणं अज्जो ! देवा देवलोएसु
उव्वजंति, पुव्वसंजमेणं, कम्मियाए, संगियाए अज्जो ! देवा देवलोएसु उव्वजंति.

भगवन् ! उन श्रावकोंने पूछे हुवे प्रश्नों का शास्त्र विधि से उत्तर देने को क्या वे समर्थ हैं या असमर्थ
हैं ? अथवा वे स्थविर भगवन्त उन श्रावकों के प्रश्नों का उत्तर देने में सम्यक् प्रकार से अभ्यासवाले हैं
या अभ्यासवाले नहीं है ? अथवा उन श्रावकों के प्रश्नों कहने को वे स्थविर भगवन्त क्या ज्ञानवन्त हैं या
ज्ञानवन्त नहीं हैं ? अथवा उन के प्रश्नों के उत्तर देने में वे स्थविर भगवन्त क्या परिज्ञानवाले हैं या परिज्ञान-

त० तपसे अ० असमर्थ त० तैसे ने० जानना अ० अवशेष जा० यावत् प० समर्थ स० सम्यक् अ० अभ्यास वाले जा० यावत् स० सत्य ए० यह अर्थ णो० नहीं आ० आत्मभाव व० वक्तव्यता ॥ २३ ॥ अ० भौं गो० गौतम ए० ऐसा आ० कहता हूँ भा० बोलता हूँ प० विशेष कहता हूँ पु० पूर्ण त० तप से पु० पूर्ण संयम से दे० देव दे० देवलोकमें उ० उत्पन्न होवे क० कर्म मे सं० संगे दे० देव दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होते हैं स० सत्य ए० यह अर्थ णो० नहीं आ० आत्मभाव व० वक्तव्यता ॥ २४ ॥ त० तथारूप

सच्चैण एसमष्टे, णो चैवण आयभाव वत्तव्वयाए ॥ २३ ॥ अहंणिणं गोयमा !

एव माइक्खामि, भासेमि, पन्नवेमि, परूवेमि पुव्वतवेणं देवा देवलोएसु उव्वज्जंति,
पुव्वसंजमेणं देवा देवलोएसु उव्वज्जंति, काम्मियाए देवा देवलोएसु उव्वज्जंति, संगि-
याए देवा देवलोएसु उव्वज्जंति. पुव्वतवेणं, पुव्वसंजमेणं काम्मियाए, संगियाए
अज्जो देवा देवलोएसु उव्वज्जंति. सच्चैणं एसमष्टे णो चैवणं आयभाव वत्तव्वयाए

यह अर्थ सत्य है आत्म कल्पित नहीं है ॥ २४ ॥ यह छुनकर गौतम स्वामी साधु की सेवा से क्या फल होता है ऐसा प्रश्न पृच्छते हैं. अहो भगवन् ! तथारूप श्रमण की सेवा करने वाले को क्याफल होवे ? अहो गौतम ! तथारूप श्रमण की सेवा करने से शास्त्र श्रवण का फल होवे. अहो भगवन् ! शास्त्र श्रवण से क्या फल होवे ? अहो गौतम ! शास्त्र श्रवण से श्रुतज्ञान की प्राप्ति होती है. अहो भगवन् ! ज्ञान से

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालामसादजी. *

राम्य भं० भगवन् ते० वे थे० स्थविर भ० भगवन्त ते० उन स० श्रमणोपासक के ए० ऐसे वा० प्रश्न वा० कहने को अ० नहीं समर्थ स० अभ्यास वाले उ० अथवा अ० अभ्यास रहित आ० ज्ञानवंत अ० ज्ञानरहित प० विज्ञानवंत अ० विज्ञानरहित पु० पूर्वतपसे अ० आर्य दे० देव दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे पु० पूर्व संयम भे क० कर्म से सं० संगसे दे० देव दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे स० सत्य ए० यह अर्थ णो० नहीं आ० आत्म भाव व० वक्तव्यता ॥ २२ ॥ प० ममर्थ गो० गौतम ते० वे थे० स्थविर भ० भगवन्त ते० उन स० श्रमणोपासक को ए० ऐसे वा० प्रश्न को वा० कहने को णो० नहीं

सच्चैणं एसमट्ठे णोच्चवणं आयभाववत्तव्वयाए ॥ २२ ॥ पभूणं गोयमा !
ते थेरा भगवंतो तेसिं समणेवांसयाणं इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागोरत्तए
णो अप्पभू तहचेव नेयब्बं, अवसेसियं जाव पभू समियं आउजिय पलिउजिय जाव

चाले नहीं हैं ? ॥ २२ ॥ अहो गौतम ! उन श्रावकों के प्रश्नों का उत्तर देने को वे स्थविर भगवन्त ममर्थ, अभ्यासवाले, ज्ञानवन्त व परिज्ञानवन्त हैं परंतु असमर्थ, अनभ्यासवाले, अज्ञानवन्त व अपरिज्ञानवन्त नहीं हैं ॥ २३ ॥ अहो गौतम ! मैं भी ऐसा कहता हूँ यावत् प्रकृतता हूँ कि पूर्व-सराग-तप से देवता देवलोक में उत्पन्न होते हैं वैसे ही पूर्व संयम, कर्म-विकार व संगति से देवता देवलोक में उत्पन्न होते हैं.

शब्दार्थ सूत्र नार्थ

त० तपसे अ० असमर्थ त० तसे ने० जानना अ० अवशेष जा० यावत् प० समर्थ स० सम्यक् अ० अभ्यास वाले जा० यावत् स० सत्य ए० यह अर्थ णो० नहीं आ० आत्मभाव व० वक्तव्यता ॥ २३ ॥ अ० मैं गो० गौतम ए० ऐसा आ० कहता हूँ भा० बोलता हूँ प० विशेष कहता हूँ पु० पूर्व त० तप से पु० पूर्व संयम से दे० देव दे० देवलोकमें उ० उत्पन्न होवे क० कर्म मे सं० संगे दे० देव दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होते हैं स० सत्य ए० यह अर्थ णो० नहीं आ० आत्मभाव व० वक्तव्यता ॥ २४ ॥ त० तथारूप

सच्चेणं एसमट्टे, णो चेवणं आयभाव वत्तव्वयाए ॥ २३ ॥ अहंणिणं गोयमा !

एव माइक्खामि, भासेमि, पन्नवेमि, परूवेमि पुव्वतवेणं देवा देवलोएसु उव्वजंति,
पुव्वसंजमेणं देवा देवलोएसु उव्वजंति, काम्मियाए देवा देवलोएसु उव्वजंति, संगि-
याए देवा देवलोएसु उव्वजंति. पुव्वतवेणं, पुव्वसंजमेणं काम्मियाए, संगियाए
अजो देवा देवलोएसु उव्वजंति. सच्चेणं एसमट्टे णो चेवणं आयभाव वत्तव्वयाए

य० अर्थ सत्य है आत्म कल्पित नहीं है ॥ २४ ॥ यह सुनकर गौतम स्वामी साधु की सेवा से क्या फल होता है ऐता मश्र पूछते हैं. अहो भगवन् ! तथारूप श्रमण की सेवा करने वाले को क्या फल होवे ? अहो गौतम ! तथारूप श्रमण की सेवा करने से शास्त्र श्रवण का फल होवे. अहो भगवन् ! शास्त्र श्रवण से क्या फल होवे ? अहो गौतम ! शास्त्र श्रवण से श्रुतज्ञान की प्राप्ति होती है. अहो भगवन् ! ज्ञान से

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

राम्य भ० भगवन् ते० वे थे० स्थविर भ० भगवन्त ते० उन स० श्रमणोपासक के ए० ऐसे वा० प्रश्न वा० कहने को अ० नहीं समर्थ स० अभ्यास वाले उ० अथवा अ० अभ्यास रहित आ० ज्ञानवन्त अ० ज्ञानरहित प० विज्ञानवन्त अ० विज्ञानरहित पु० पूर्वतपसे अ० आर्थ दे० देव दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे पु० पूर्व संयम से क० कर्म से सं० संगते दे० देव दे० देवलोक में उ० उत्पन्न होवे स० सत्य ए० यह अर्थ णो० नहीं आ० आत्म भाव व० वक्तव्यता ॥ २२ ॥ प० समर्थ गो० गौतम ते० वे थे० स्थविर भ० भगवन्त ते० उन स० श्रमणोपासक को ए० ऐसे वा० प्रश्न को वा० कहने को णो० नहीं

सचेगं एतमट्टे णोचिवगं आयभावत्तच्चव्याए ॥ २२ ॥ पमूणं गोयमा !
ते थेरा भगवतो तेसिं समणेवांसयाणं इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागेरत्तए
णो अप्पभू तहचेव नेयव्वं, अवसेसियं जाव पमू समियं आउजिय पलिउजिय जाव

चाने नहीं हैं ? ॥ २२ ॥ अहो गौतम ! उन श्रावकों के प्रश्नों का उच्चार देने को वे स्थविर भगवन्त समर्थ, अभ्यासवाले, ज्ञानवन्त व परिज्ञानवन्त हैं परंतु असमर्थ, अनभ्यासवाले, अज्ञानवन्त व अपरिज्ञानवन्त नहीं हैं ॥ २३ ॥ अहो गौतम ! मैं भी ऐसा कहता हूँ यावत् प्रकृपता हूँ कि पूर्व-सराग-तप से देवता देवलोक में उत्पन्न होते हैं वैसे ही पूर्व संयम, कर्म विकार व संगति से देवता देवलोक में उत्पन्न होते हैं.

शब्दार्थो सुत्रार्थो

शब्दार्थो सुत्रार्थो

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

बो० कर्म छेदनफल वो० कर्म छेदनसे अ० आक्रिया फल भं० भगवन् अ० आक्रिया से कि० क्याफलमि० सिद्धि पर्यवसान फल प० प्ररूपा ॥ २५ ॥ अ० अन्यतीर्थिक भं० भगवन् ए० एंसे आ० कहते हैं प० प्ररूपते हैं रा० राजगृह न० नगरकी व० बाहिर वे० वेभार प० पर्वत की अ० नीचे ए० तहां म० बडा ए० एकद्वार अ० पानीका अं० अनेक जो० योजन का आ० लम्बा त्रि० चौडा ना० नानाप्रकार

सिद्धिपञ्चवसाण फला पण्णत्ता गोयसा ! ॥ गाथा ॥ सत्रणे णाणेय त्रिण्णणे, पच्च-
क्खाणेय संजमे ॥ अण्हए तवे चेत्त, वोदाणे अक्किरिया सिद्धी ॥ १ ॥ २५ ॥
अण्णउत्थियाणं भंते ! एत्त माइक्खंति भासंति पण्णवति परूवति एवं खलु रायागिहस्स
नयरस्स बाहिया वेभारस्स पच्चयस्स अहे एत्थणं महं एगे हरए अप्पे पण्णत्ते अणेगाइ

कर्मों का क्षय होने से आक्रिया का फल होवे अर्थात् योग निरन्धन रूप फल होवे. आक्रिया से क्या फल? अहो गौतम ! आक्रिया से समस्त फल में सर्वोत्कृष्ट कर्मक्षयरूप मोक्षफल होवे. यों अनुक्रम से श्रवण, ज्ञान, विज्ञान, प्रत्याख्यान, संयम, आश्रवानिरोध तप, निर्जरा, आक्रिया, व मुक्ति का फल होता है. ॥ २५ ॥ अब साधु सेवा नहीं करने से विपरीत भाषी होते हैं सो वताते हैं ? अहो भगवन् ! अन्य तीर्थिक ऐसा कहते हैं यावत् प्ररूपते हैं कि राजगृह नगर की बाहिर वेभार नामक पर्वत है उस की नीचे एक महान हते अनेक योजन की लम्बाई व चौड़ाई व चौडाई वाला है. विविध प्रकार के वृक्ष, व वनखंड

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्षेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

भ० भगवन् स० श्रमण की प० पर्युपासना करते कि० क्या फ० फल पु० पर्युपासना का गो० गौतम स० श्रवण फल स० श्रवण से पा० ज्ञानफल जा० ज्ञानसे कि० क्याफल वि० विज्ञानफल वि० विज्ञानसे कि० क्याफल प० प्रत्याख्यान फल प० प्रत्याख्यानसे सं० संयमफल सं० संयम से अ० अनाश्रवफल अ० अनाश्रवसे त० तपफल

॥ २४ ॥ तहारूत्रेणं भंते ! समणं वा पज्जुवासमाणस्स किं फला पज्जुवासणा ?

गोयमा ! सवणफल । से णं भंते ! सवणे किं फले ? गोयमा ! णाणफले ।

सेणं भंते ! णाणे. किं फले ? गोयमा ! विण्णाणफले । से णं भंते ! विण्णाणे

किं फले ? गोयमा ! पच्चक्खाण फले । सेणं भंते ! पच्चक्खाणे किं फले ? संजम

फले । सेणं भंते ! संजमे किं फले ? अणण्हय फले । एवं अणण्हए तव फले ।

तवे वोदाण फले । वोदाणे अकिरिया फले । से णं भंते ! अकिरिया किं फले ?

क्या फल ! अहो गौतम ! ज्ञान से हेय ज्ञेय उपादेय जानने रूप विज्ञान फल होवे. अहो भगवन् ! विज्ञान से

क्या फल ! अहो गौतम ! विज्ञान से पापकर्म के प्रत्याख्यान का फल होवे ? अहो भगवन् ! प्रत्याख्यान

से क्या फल ? अहो गौतम ! पाप का प्रत्याख्यान करने से संयम का फल होता है. अहो भगवन् ! संयम

से क्या फल होवे ? अहो गौतम ! संयम से नविन कर्मों के आश्रव द्वारों का रुंधन करने का फल होवे

और इस तरह लघु कर्म होने से तपस्यावन्त होवे. तप ने पूर्वकृत कर्मों का क्षय होवे. और पूर्वकृत

ॐ क्लृप्ति क्लृप्ति क्लृप्ति क्लृप्ति क्लृप्ति क्लृप्ति क्लृप्ति क्लृप्ति क्लृप्ति क्लृप्ति ॐ

शब्दार्थ

मन्

वार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

अ० नजदीक ए० तहाँ म० महातपोपतीरप्रभव पा० झरण प० प्ररूपा पं० पांच सो धनुष्य आ० लंबा वि० चौडा ना० नाना प्रकार दु० वृक्षवन खंड से मं० मंडित दे० प्रदेश स० शोभायमान पा० प्रसन्न चिच करने वाला द० देखने योग्य अ० अभिरूपं प० प्रतिरूप त० तहाँ व० बहुत उ० ऊर्ण जो० योनिवाले जी० जीव पो० पुद्गल उ० पानीपने व० उत्पन्न होते हैं वि० विणसते हैं च० चवते हैं उ० पुष्ट होते हैं त० भरा

णयरस बहियाबेभारपव्वयसस अदूरसामंते एत्थणं महातत्रोवतीरप्पभवे नामं पासवणे पणत्ते पंच धणुसयाइं आयाम विक्खंभेणं नाणा दुमखंडमंडिउद्देसे, सस्सरिए पासादीए दरिसणिजे, अभिरूवे पडिरूवे । तत्थणं बह्वे उस्सिणजोणिया जीवाय पोग्गलाय उदग्गत्ताए वक्कमंति त्रिउक्कमंति, चयंति उवचयंति । तव्वतिरिच्चियणं सयासमियं उस्सिणं उस्सिणं आउआए अभिनिस्सवइ, एसणं गोयमा ! महातत्रोवतीरप्पभवे पासवणे, एसणं

मिथ्या है. मैं ऐसा कहता हूँ यावत् प्ररूपता हूँ कि राजगृह नगर की बाहिर बेभार पर्वत की पास अति ऊर्ण क्षेत्र है. उस की सपीप एक महातपोपतीरप्रभव नामक ऊर्ण पानी का झरणा है. पांचसो धनुष्य का लम्बा व चौडा है. विविध प्रकार के वृक्ष, वनखंड से सुशोभित, प्रासादीक, दर्शनीय, अभिरूप यावत् प्रतिरूप है. उस में बहुत ऊर्ण योनिवाले जीव पानीपने उत्पन्न होते हैं. चवते हैं. उसमें पानी भराये पीछे जो अधिक होता है वह ऊर्ण अप्कायपने झरता है. अहो गौतम ! यह महातपोपतीर

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी

दु० दृक्षकेवत्खंडसे मं० शोभित दे० प्रदेश स० शोभायमान जा० यावत् प० प्रतिरूप त० तहां व० बहुत उ० विस्तीर्ण व० वादल सं० सन्मुख हेति हैं उ० उपजते हैं वा० वर्पते हैं तं० भरां हुवा म० सदैव उ० ऊर्ण आ० पानी अ० झरता है से० वह क० कैसे भं० भगवन् गो० गौतम ज० जो अ० अन्य तीर्थिक ए० ऐसा आ० कहते हैं जा० यावत् ते० वे ए० ऐसा आ० कहते हैं मि० मिथ्या ते० वे आ० कहते हैं अ० मैं पु० फीर ए० ऐसा आ० कहता हूं रा० राजगृह न० नगर की व० वाहिर वे० वेभार प० पर्वत की

जोयणाइं आयाम विक्खंभेणं नाणादुम खंडमंडिउदेसे.सस्सिरीए जाव पडिरूत्ते,तत्थणंभवहेव उदारा बलाहया संसेयंति संमुच्छियंति वासंति तव्वतिरित्तिवियणं सयासमिउं उ-सिणे आउकाए अभिनिस्सवइ, से कहमंयं भंते एवं ? गोयमा ! जणंते अण-उत्थिया एवमाइक्खंति जाव जंते एव माइक्खंति मिच्छंते एवमाइक्खंति ॥ अहं पुंण गोयमा ! एवमाइक्खामि, भासामि, पणवेमि, परूवेमि एवं खलु रायगिहरस

बगरह से सुशोभित यावत् प्रतिरूप है. इस द्रह में बहुत बड़ल उत्पन्न सन्मुख होते हैं, उत्पन्न होते हैं और वर्पते हैं. वह द्रह भरजाने से जो अधिक पानी नीकलता है वह पानी सदैव ऊर्ण योनिवाला रहता अर्थात् जो पानी द्रह से वाहिर नीकलता है वह सदैव ऊर्ण रहता है. अहो भगवन् ! यह किस तरह से है ! अहो गौतम ! जो अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं वे मिथ्या ऐसा कहते हैं

शब्दार्थ सुत्र चार्थ

शब्दार्थ

सुत्र

चार्थ

क० कितने भ० भगवन् दे० देव प० प्ररूपे गो० गौतम च० चार प्रकार के दे० देव प० प्ररूपे भ० भुवनपति वा० वाणव्यंतर जो० ज्योतिषी वे० वैमानिक क० कहां भ० भगवन् भ० भुवनपति दे० देव के ठा० स्थान प० कहे गो० गौतम इ० इस र० रत्नप्रभा पु० पृथ्वी की ज० जैसे ठा० स्थान पद में कइविहाणं भंते ! देवा पणत्ता ? गोयमा ! चउव्विहा देवा पणत्ता तंजहा—भवणवद्द, वाणमंतर, जोइस, वेमाणिया, । कहिणं भंते ! भवनवासीणं देवाणं ठाणा पणत्ता ? गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुटवीए जहा ठाणपदे देवाणं वत्तव्वया ।

विशुद्ध भाषा बोलने से देव होवे इसलिये देवता का अधिकार कहते हैं. अहो भगवन् ! देवता के कितने भेद कहे हैं ? देवताओं के चार भेद कहे हैं. १ भुवनपति २ वाणव्यंतर ३ ज्योतिषी और ४ वैमानिक. अहो भगवन् ! भुवनपति देवों के स्थान कहां कहे हैं ? अहो गौतम ! पन्नवणा के दूसरे स्थान पद में इस रत्नप्रभा नामक पृथ्वी का एक लाख अस्सी हजार योजन का पृथ्वी पिंड कहा है. उसमें एक २ हजार उपर वनीचे छोड़ने से एक लाख अठ्तर हजार योजन की पोलार है. उसमें चारह आंतरे व तेरह पाथडे हैं. इस के आंतरे में भवनपति देवता के सात क्रोड वहांत्तर लाख भुवन कहे हैं. भवनपति देवलोक के असंख्यातवे भाग में उत्पन्न होते हैं. मारणान्तिक समुद्रयातवर्ती लोक के असंख्यातवे भाग में भवनपति वर्तते हैं. स्वस्थान आश्री सात क्रोड वहांत्तर लाख भवन कहे हैं. वे भी लोक के असंख्यातवे

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

हुवा स० सदा उ० उ० आ० अणुकायपने अ० झरता है गो० गौतम म० महातपोपतीर प्रभव पा०
झरण का अ० अर्थ प० प्ररूपा से० ऐसा भ० भगवन् भ० भगवान् गो० गौतम स० श्रमण भगवान्
म० महावीर को वं० वंदना करते हैं न० नमस्कार करते हैं ॥ २ ॥ ५ ॥ *

से० वद भ० भगवन् म० मानता हूँ ओ० अवधारणी भापा भा० भापापद भा० कहना ॥ २ ॥ ६ ॥

गोयमा ! महातवोवतीरिप्पभवस्स अट्टे पणत्ते ॥ सेवं भंते भंतेत्ति, भगवं
गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ ॥ विइय सए वंचसो उइसो

सम्मत्तो ॥ २ ॥ ५ ॥ *

सेणुणं भंते ! गणामीति ओहारणी भासा भासापदं भाणियव्वं ॥ विइयसए छट्ठो

उइसो सम्मत्तो ॥ २ ॥ ६ ॥ *

प्रभव नामक झरणा व उस का अर्थ कहा. अहो भगवन् ! आपका वचन सत्य है. ऐसा कहकर भगवन्त
गौतमने श्रमण भगवन्त को वंदना नमस्कार किया. यह दूसरा शतकका पांचवा उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ २ ॥ ५ ॥

गत उद्देशे में पिथ्याभापी कहे इसलिये भापा का स्वरूप कहते हैं. अहो भगवन् ! मैं ऐसा मानता
हूँ कि अवधारणी भापा इस सूत्रानुक्रम में श्री पंचवणा सूत्रका अग्यारहवा भापापदं कहना. भापा को
द्रव्य, सत्र, काल व भाव ऐसे अनेक भेदों से विचारना. यह दूसरा शतकका छटा उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ २ ॥ ६ ॥

वे० वैमानिक उ० उद्देशा भा० कहना ॥ २ ॥ ७ ॥ *
 क० कहां भं० भगवन् अ० अमुरेन्द्र अ० असुर कुमार राजा की स० सुधर्मा सभा गो० गौतम जं०
 जंबूद्वीप के मं० मेरु की दा० दक्षिण में ति० तिच्छी अ० असंख्यात दी० द्वीप समुद्र वि० उलंघ कर
 अ० अरुणवर द्वीप की वा० वाहिर की वे० वेदिका से अं० अरुणोदय स० समुद्र में वा० वीयालीस
 जो० योजन सहस्र ओ० अवगाह कर च० चमर का अ० अमुरेन्द्र अ० असुर राजा का ति० तिगिच्छकूट

उद्देशो सम्मत्तो ॥ २ ॥ ७ ॥ *

कहिणं भंते ! चमरस्स असुरिस्स असुरकुमार रणो सभा सुहम्मा पणत्ता ?
 गोयमा ! जंबूद्वीविद्वीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं तिरियमसंखेज दीव समुद्धं
 विद्वइत्ता अरुणवर दीवस्स बाहिरित्ताओ वेइयंत्ताओ अरुणोदयं समुद्धं

उद्देशे से जानना. यह दूसरा शतक का सातवा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ २ ॥ ७ ॥ *

सातवें उद्देशे में देवता का अधिकार कहा. इमलिये-प्रथम भवनपति देवता संबंधी प्रश्न करते हैं
 अहो भगवन् ! असुरकुमार के राजा चमर नामक अमुरेन्द्र की सुधर्मा सभा कहां है ? अहो गौतम !
 जंबूद्वीप के मेरुपर्वत से दक्षिण दिशा में तिच्छी असंख्याते द्वीप समुद्र उलंघ कर जावे तो वहां अरुण
 वर द्वीप आता है. उस की वाहिर की वेदिकासे वेतालीस हजार योजन अवगाह कर अरुणोदय समुद्र

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी अालाप्रसादजी *

दे० देव की व० वक्तव्यता सा० वह भा० कहना न० विशेष भ० भवन प० प्ररूपे उ० उद्यपात से लो०
लोक का अ० असंख्यात का भाग ए० ऐसे स० सर्व भा० कहना जा० यावत् सि० सिद्धि स्थान स०
संपूर्ण क० कल्प प० प्रतिस्थान वा० जाडपना उ० ऊंचा सं० संस्थान जी० जीवाभिगम में जा० यावत्

सा भाणियव्वा. नवरं भवणा पणत्ता, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइ भागे, एवं
सत्वं भाणियव्वं, जाव सिद्धगंडिया सम्मत्ता ॥ कप्पाण पइट्ठणं, वाहल्लुच्चत्तमेव
संठाणं जीवाभिगमे जाव वेमाणि उद्देशो भाणियव्वो ॥ विईयसए सत्तमो

भाग में वर्तते हैं, उत्तर दक्षिण में रहनेवाले सब भुवनपति, वाणव्यंतर ज्योतिषी, वैमानिकके स्थानक का
वर्णन यावत् सिद्ध स्थान प्रतिपादक प्रकरणतक का सब वर्णन जीवाभिगम सूत्र से जानना. उस का
किंचित् विस्तार यह है. १. कल्प में विमानों का आधार. सौधर्म ईशान देवलोक में विमानों घनोदधि
ईशान देवलोक में पांचसो योजन के ऊंचे विमान कहे हैं ४ संस्थान-सौधर्म ईशान देवलोक में आवालिक्का
प्रतिष्ट श्रंप, चउरंस व वरुलाकार विमानों हैं, और आवालिक्का बाहिर विविध प्रकार के संस्थान वाले
ह. इम सिवाय और भी विमानका आवालिक्का परिमाण, वर्ण, प्रभा, गंधादि जीवाभिगम सूत्रके वैमानिक

* वे० वैमानिक उ० उद्देशा भा० कहना ॥ २ ॥ ७ ॥
 * क० कहां भं० भगवन् अ० असुरेन्द्र अ० असुर कुमार राजा की स० सुधर्मा सभा गो० गौतम जं०
 जंबूद्वीप के यं० मेरु की दा० दक्षिण में ति० तिच्छी अ० असंख्यात दी० द्वीप समुद्र वि० उलंघ कर
 अ० अरुणवर द्वीप की वा० वाहिर की वे० वेदिका से अं० अरुणोदय स० समुद्र में वा० वीयालीस
 जो० योजन सहस्र ओ० अवगाह कर च० चमर का अ० असुरेन्द्र अ० असुर राजा का ति० तिगिच्छकूट-

* उद्देशो राममत्तो ॥ २ ॥ ७ ॥ *
 * कहिणं भंते ! चमरस्स असुरदिस्स असुरकुमार रणो सभा सुहम्मा पणत्ता ?
 गोयमा ! जंबूद्वीवेद्वीवे मंदररस पव्वयस्स दाहिणेणं तिरियमसंखेज्ज दीवि समुद्धं
 विद्वेवत्ता अरुणवर दीवस्स बाहिरिह्वाओ वेड्ढयंतताओ अरुणोदयं समुद्धं

+ उद्देशे से जानना. यह दूसरा शतक का सातवा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ २ ॥ ७ ॥ *
 * सातवे उद्देशे में देवता का अधिकार कहा. इमलिये-प्रथम भवनपति देवता संवधी प्रश्न करते हैं
 अहो भगवन् ! असुरकुमार के राजा चमर नामक असुरेन्द्र की सुधर्मा सभा कहां है ? अहो गौतम !
 जंबूद्वीप के मेरुपर्वत से दक्षिण दिशा में तिच्छी असंख्याते द्वीप समुद्र उलंघ कर जावे तो वहां अरुण
 वर द्वीप आता है. उस की वाहिर की वेदिकासे वेतालीस हजार योजन अवगाह कर अरुणोदय समुद्र

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी अालाप्रसादजी *

दे० देव की व० वक्तव्यता सा०वह भा० कहना न० विशेष भ० भवन प० प्ररूपे उ० उपपात से लो०
लोक का अ० असंख्यात का भाग ए० ऐसे स० सर्व भा० कहना जा० यावत् सि० सिद्धि स्थान स०
संपूर्ण क० कल्प प० प्रतिस्थान वा० जाडपना उ० ऊंचा सं० संस्थान जी० जीवाभिगम में जा० यावत्

सा भाणियव्वा. नवरं भवणा पणत्ता, उववाएणं लोयस्स असंखज्जइ भागे, एवं
सव्वं भाणियव्वं, जाव सिद्धगंडिया सम्मत्ता ॥ कप्पण पइट्टाणं, वाहल्लुच्चत्तमं व
संठाणं जीवाभिगमे जाव वेमाणि उहेसो भाणियव्वो ॥ विइयसए सत्तमो

भाग में वर्तते हैं, उत्तर दक्षिण में रहनेवाले सब भुवनपति, वाणव्यंतर ज्योतिषी, वैमानिकके स्थानक का
वर्णन यावत् सिद्ध स्थान प्रतिपादक प्रकरणतक का सब वर्णन जीवाभिगम सूत्र से जानना. उस का
किंचित् विस्तार यह है. १. कल्प में विमानों का आधार. सौधर्म ईशान देवलोक में विमानों धनोदधि
प्रतिष्ठित हैं २ विमान का पिंड-सौधर्म ईशान देवलोक में २७०० योजन का पिण्ड है ३ ऊंचाइ-सौधर्म
ईशान देवलोक में पांचसो योजन के ऊंचे विमान कहे हैं ४ संस्थान-सौधर्म ईशान देवलोक में आवलिका
प्रतिष्ठ व्यंम, चउरंस व वरुलाकार विमानों हैं, और आवलिका बाहिर विविध प्रकार के संस्थान वाले
हैं. इम सिवाय और भी विमानका आवलिका परिमाण, वर्ण, प्रभा, मंत्रादि जीवाभिगम सूत्रके वैमानिक

तीन जो० योजन स० सहस्र दो० छ० छत्तीस जो० योजनशत किं० किंचित् वि० विशेषक्रम प०
 परिधि म० मध्य में ए० एक जो० योजन स० सहस्र ति० तीन इ० इकतालीस जो० योजनशत किं०
 किंचित् वि० विशेषक्रम प० परिधि उ० उपर दो०दो जो० योजन स० सहस्र दो० दो छ० छियासी जो०
 योजन शत किं० किंचित् वि० विशेषाधिक प० परिधि जा० यावत् मू० मूल में वि० विस्तार म० मध्य
 में सं० संक्षिप्त उ० उपर वि० विशाल म० मध्य में व० प्रधान व० वज्र वि० आकार व० बडा य० मृदंग

कखंभेणं, मञ्जे चत्तारि चउड्वीसे ज्योणसए त्रिकखंभेणं, उव्वरिं सत्तत्तेवीसे जो-
 यणसए त्रिकखंभेणं, मूले तिण्णि ज्योण सहस्साइं दोणिय छत्तीसुत्तरे ज्योणसए
 किंचिविसेसूणे परिकखेव्णेणं, मञ्जे एगं ज्योणसहस्सं तिण्णियइएयांलं ज्योणसए
 किंचिविसेसूणे परिकखेव्णेणं, उव्वरिं दोणिय ज्योण सहस्साइं दोणिय छलसीए
 ज्योणसए किंचिविसेसाहिए परिकखेव्णेणं जावमूले त्रित्थेड मञ्जे संक्खित्ते

ज्ञानना. उस की परिधि मूलमें ३२३६ योजन से कुछ कम, मध्य में १,३४१ योजन से कुछ कम, और
 उपर २,२८६ योजन से किंचित् विशेष विस्तार वाला. मूलमें विस्तार वाला. मध्य में संकुचित और उपर
 फीरं विस्तार वाला है. बीचमें श्रेष्ठवज्रके आकार वाला है. महामुकुट. डमरु के आकार वाला सब
 रत्नमय शोभनिक यावत् प्रतिरूप है. उस परित को एक एक पद्मत्रयेदिका और एक वनखंड है. वह

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

ना० नाम का उ० उत्पात प० पर्वत प० प्ररूपा स० सत्तरह ए० इक्कीस जो० योजन शत उ० ऊंचा उ० ऊंचपने च० चार ती० तीस जो० योजन शत की० कोश उ० ऊंडे गो० गौस्थूभ आवास पर्वत का प० प्रमाण से ने० जानना न० विशेष उ० उपरं प० प्रमाण म० मध्य में भा० कहना मू० मूल में द० दश वा० बावीस जो० योजन स० शत वि० चौडा म० मध्य में च० चार० च० चौवीस जो० योजन शत वि० चौडा उ० उपर स० सात ते० तेवीस जो० योजन शत वि० चौडा मू० मूल में ति०

बायालीसं जोयण सहरसाइं ओगाहिता एत्थणं चमरस्स अमुरिदस्स असुररणो तिगिच्छिक्खुडे नामं उप्याव पव्वए पणत्तं सत्तरस एक्कवीसे जोयणसए उहुं उच्चत्ते- णं, चत्तारितीसे जोयणसए कोसंच उव्वेहेणं, गोथूमस आवासपव्वयस्स पमाणेणं जेयच्चं, नवरं उवरिख्खं पमाणं मज्झे भाणियच्चं, मूले दस बावीसं जोयणसए वि-

में जावे तो वहां चमर नामक अमुरेन्द्र का तिगिच्छ कूट नामका उत्पात पर्वत कहा है. वह सत्तरह सो इक्कीस (१.७२?) योजन का ऊंचा है और ४३० योजन और एक कोशका ऊंडा जमीन में है. जैसे लवण रामुद्र में नागराजा का गौस्थूभ नामक आवास पर्वत है वैसे ही यहां जानना. विशेष इतना कि गौस्थूभ नीचे १.०२२ योजन का, मध्यमें ७२३ योजन व उपर ४२४ योजन का चौडा कहा है परंतु तिगिच्छकूट पर्वत नीचे १.०२२ योजन, मध्यमें ४२४ और उपर ७२३ योजन का चौडा है ऐसा

जो० योजन स० शत वि० चौडा पा० देखने योग्य व० वर्णन युक्त उ० उपर की भू० भूमि व० वर्णन युक्त अ० आठ जो० योजन की म० मणिपिठिका च० चमर का सी० सिंहासन स० परिवार सहित भा० कहना ॥ २ ॥ त० उस ति० तिगिच्छकूट की दा० दक्षिण में छ० छोसो क्रोड प० पंचावन क्रोड प० पैंतीस लक्ष प० पचास सहस्र जो० योजन अ० अरुणोदय स० समुद्र में ति० तिच्छी वी० अतिक्रम से अ० अथो र० रत्नप्रभा पु० पृथ्वी में च० चालीस जो० योजन स० सहस्र आ० अवगाहकर कर

पणत्ते, अड्डाइजाइं जोयण सयाइं उड्डुच्चत्तेणं, पणत्रीसं जोयण सयाइं विक्खंभेणं पासायन्नओ उल्लोय भूमिवन्नओ; अट्टजोयणाणि मणिपिठिया चमरसस सीहासनं सपरिवारं भाणियव्वं ॥ २ ॥ तस्सणं तिगिच्छि कूडरस दाहिणेणं छक्कोडिसए पणवण्णंच कोडीओ पणतीसंच सयसहरसाइं पण्णासंच सहसाइं जोयणाइं अरुणोदए समुद्धे तिरियं वीतिवइत्ता. अहे रयणप्पभाए पुढवीए चत्तालीसं जोयणं

में सब प्रासादों में श्रेष्ठ ऐसा एक प्रासाद है. वह २५० योजन का ऊंचा है १२५ योजन का चौड़ा है, और बहुत ऊंचा है. उस प्रासाद के मध्य में आठ योजन की मणिपिठिका है. उसमें चमरेन्द्र का सिंहासन व अन्य देव देवियों के सिंहासन रहे हुये हैं ॥ २ ॥ उस तिगिच्छ कूट से दक्षिण दिशा में छोसो पंचावन क्रोड पैंतीस लाख पचास हजार (६५५,३५,५०,०००) योजन अरुणोदय समुद्र में तिच्छी जाते चालिस हजार

वदार्थ

सूत्र

भावार्थ

पुंमं तत्राह पणत्ते (सत्त्वत्)

(सत्त्वत्)

पुंमं तत्राह पणत्ते (सत्त्वत्)

अर्धयोजन उ० उंचे उ० उंचपने ए० परस्पर वा० वाजु पं० पांच दा० द्वार स० शत अ० अढाइसो
 जो० योजन उ० उंचे उ० उंचपने ए० एक प० पञ्चहत्त जो० योजन वि० चौडे उ० उपर त० तलमें
 सो० सोलह जो० योजन स० सहस्र आ० लंबा वि० चौडा प० पञ्चास जो० योजन स० सहस्र पं० पांच
 स० सत्तानव जो० योजन शत किं० किंचित् वि० विशेष ऊन प० परिधि स० सर्व प्रमाण वे० वैमानिक का
 प० प्रमाण का अ० अर्ध ने० जानना ॥ २ ॥ ८ ॥

एगं पणहत्तरी जोयणाइं त्रिक्खंभेणं, उव्रियतलेणं सोलस जोयण सहस्साइं आयाम
 त्रिक्खंभेणं, पन्नासं जोयण सहस्साइं पंचसत्ताणउय जोयणसए किंचित्तिसेसुणे
 परिक्खेवेणं सब्बप्पमाणं वेमाणियरस पमाणस्स अट्ठं नेयव्वं ॥ इइ विइयसए
 अट्टमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ २ ॥ ८ ॥

के चौड कहे हैं. घरके पीठ सोलह हजार योजन के चौडे कहे हैं. उसकी परिधि ०.५९७ योजन में कुछ कम
 की जानना. सब प्रमाण सौधर्मादि वैमानिक से आधा जानना. यह दूसरे शतक का आठवा उद्देश
 समाप्त हुवा ॥ २ ॥ ८ ॥

गत उद्देशे में देवता का अधिकार कहा अत्र मनुष्य का अधिकार कहे हैं. अहो भगवन् ! समय-
 क्षेत्र क्यों कहता है ? अहो गौतम ! अढाइ द्वाप व दो समुद्र को समय क्षेत्र कहते हैं. समय का अर्थ काल

* भकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेव सहायजी जालामसादजी *

किं क्या इ० इसे भं० भगवन् स० समय क्षेत्र प० कहना गो० गौतम अ० अढाई दी० द्वीप दो० दो
समुद्र प० उपलक्षित स० समय क्षेत्र प० कहा है त० तहां अ० यह जं० जंबूद्वीप स० सर्व दी० द्वीप
स० समुद्र की स० मध्य में ए० ऐसे जी० जीवाभिगम व० वक्तव्यता ने० जानना जा० यावत् अ० आभ्यंतर
पु० पुष्करार्थ जो० ज्योतिषी वि० छोड़कर ॥ २ ॥ ९ ॥ =

किमिदं भंते ! समयक्खेत्तेति पवुच्चइ ? गोयमा ! अड्डाइजा दीवा दोय समुहा एसणं
पवइए समयक्खेत्तेत्ति पवुच्चइ, तत्थणं अयं जंबूदीवें दीवे सव्वहीव समुद्धानं स-
व्वभिंतेरे, एवं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा, जाव आब्भितर पुक्खरुद्धं जोइस
वित्तूणं ॥ इइ विईयसए नवमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ २ ॥ ९ ॥ *

होता है-अर्थात् जिस क्षेत्र में दिन, पक्ष, मास, वर्ष वगैरह काल उपलक्षित होवे-सूर्य की गति से जाना
जावे उसे समय क्षेत्र कहा है. अढाई द्वीप की बाहिर मूर्यादि ज्योतिषी के विमानोंका हलन चलन नहीं
होता है. अढाई द्वीप में सब द्वीप समुद्रों में छोटा प्रथम जम्बूद्वीप नामक द्वीप है वगैरह अढाड द्वीप की
वक्तव्यता जैसी जीवाभिगम में कही है वैसी यहां पर कहना. मात्र ज्योतिषी की वक्तव्यता नहीं
कहना. यह दूसरे शतकका नववा उद्देशा समाप्त हुवा ॥ २ ॥ ९ ॥ ✓

शब्दार्थ सत्र सार्थ

क० कितनी भ० भगवन् अ० अस्तिकाय गो० गौतम पं० पांच अ० अस्तिकाय ध० धर्मास्तिकाय अ० अधर्मास्तिकाय आ० आकाशास्तिकाय जी० जीवास्तिकाय पो० पुद्गलास्तिकाय ॥ ? ॥ ध० धर्मा-

कडणं भंते ! अस्तिकाया पणत्ता ? गोयमा ! पंच अस्तिकाया पणत्ता तंजहा,
धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवात्थिकाए, पोगलत्थिकाए

गत उद्देशे में क्षेत्रका स्वरूप कहा है, उस में अस्तिकाय होने से अस्तिकाया का स्वरूप कहते हैं। अहो भगवन् ! अस्तिकाय कितनी कही ? अहो गौतम ! अस्तिकाय पांच कही। अस्तिकाय शब्द से प्रदेश ग्रहण करना और कायशब्द से राशि अर्थात् प्रदेशों की राशि-समुदाय सो अस्तिकाय। अथवा अस्तिकाय शब्द काल त्रय वाची अव्यय है इस से जो प्रदेश अतीत काल में थे, वर्तमान में हैं और आगामिक में होंगे सो अस्तिकाय। उस के नाम धर्मास्तिकाय * अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय

* धर्मास्तिकाय पद मांगलीक होने से प्रथम ग्रहण किया है, तत्पश्चात् धर्मास्तिकाय का विपरीत स्वभाव वाला अधर्मास्तिकाय, इन को आधार भूत आकाशास्तिकाय, अनन्त अमूर्तत्व का साधर्म्य स्वभाव होने से जीवास्तिकाय, और उस का उपटंभ करने वाला पुद्गल होने से पुद्गलास्तिकाय ऐसा क्रम रखवा गया है।

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालामसादजी *

किं० क्या इ० इसे भं० भगवन् स० समय क्षेत्र प० कहना गो० गौतम अ० अढाई दी० द्वीप दो० दो
समुद्र प० उपलक्षित स० समय क्षेत्र प० कहा है त० तहां अ० यह जं० जंबूद्वीप स० सर्व दी० द्वीप
स० समुद्र की स० मध्य में ए० ऐसे जी० जीवाभिगम व० वक्तव्यता ने० जानना जा० यावत् अ० आभ्यंतर
पु० पुष्करार्ध जो० ज्योतिषी वि० छोड़कर ॥ २ ॥ १ ॥ =

किमिदं भंते ! समयक्खेत्तेति पवुच्चइ ? गोयमा ! अड्डाइजा दीवा दोग्य समुहा एसणं
पवइए समयक्खेत्तेत्ति पवुच्चइ, तत्थणं अयं जंबूदीवं दीवे सब्वहीव समुद्दाणं स-
व्वाविंभतरे, एत्तं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा, जात्र अविंभतर पुग्गवरद्धं जोइस
विहूणं ॥ इइ विइयसए नवमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ २ ॥ १ ॥ *

होता है अर्थात् त्रिम क्षेत्र में दिन, पक्ष, मास, वर्ष वगैरह काल उपलक्षित होवे-सूर्य की गति से जाना
जावे उसे समय क्षेत्र कहा है. अढाई द्वीप की याहिर सूर्यादि ज्योतिषी के विमानोंका हलन चलन नहीं
होता है. अढाई द्वीप में सब द्वीप समुद्रों में छोटा प्रथम जम्बूद्वीप नामक द्वीप है वगैरह अढाह द्वीप की
वक्तव्यता जैसी जीवाभिगम में कही है वैसी यहां पर कहना. मात्र ज्योतिषी की वक्तव्यता नहीं
कहना. यह दूसरे शतकका नववा उद्देशा समाप्त हुवा ॥ २ ॥ १ ॥

शब्दार्थ

सुत्र

भावार्थ



धर्मरा श्रमक का दशम अध्याय



नहीं क० कदापि न० नहीं हैं जा० यावत् नि० नित्य भा० भाव से अ० अवर्ण अ० अर्गथ अ० अरम अ० अस्पर्श गु० गुण से ग० गमन गुण अ० अधर्मास्तिकाय ए० ऐसे न० विशेष गु० गुण से ठा० स्थानगुण आ० आकाशास्तिकाय ए० ऐसे न० विशेष स्वे० क्षेत्र से लो० लोकालोक प्रमाण अ० अनंत जा० यावत् गु० गुण से अ० अवगाहना गुण जी० जीवास्तिकाय में भं० भगवन् क० कितना व० वर्ण गं० गंध र० रस फा० स्पर्श गो० गौतम अ० अवर्ण जा० यावत् अ० अरूपी जी० जीव सा०

न आसि न कयाइ नरिथि जाव निच्चे, भावओ अवन्ने अर्गंधे, अरसे, अफासे, गुणओ गमणगुणे अहम्मरिथि काएवि एवं चेव नवरं गुणओ ठाणगुणे ॥ आगासत्थि काएवि एवं चेव, नवरं खेत्तओणं आगासत्थिकाए, लोयालोयध्पमाणमेत्ते अणंतेचेव, जाव गुणओ अवगाहगुणे ॥ जीवत्थिकाएणं भंते ! कइवण्णे, कइग्ंधे,

संपूर्ण लोक प्रमाण, काल से अतीत काल में नहीं था वैसा नहीं, वर्तमान में नहीं है वैसा नहीं, और अनागत में नहीं होगा वैसा नहीं परंतु अतीत काल में था, वर्तमान है और अनागत में होगा यावत् नित्य रहेगा. भाव से धर्मास्तिकाय में वर्ण, गंध, रस व स्पर्श नहीं होते हैं और गुण से धर्मास्तिकाया में गमन गुण जैसे मत्स्य को जल का आश्रय रहता है वैसे ही जीव पुद्गलको धर्मास्ति कायगति करता है. अधर्मास्ति कायका भी वैसे ही जानना मात्र स्थिर गुण ग्रहण करना. आकाशास्ति काय में भी धर्मास्ति

शब्दार्थ



(अर्गथ) (अरम) (अस्पर्श) (गमन) (गुण) (स्थान) (लोका) (लोक) (प्रमाण) (अवर्ण) (जीव) (सा)



सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी बालामसाराजी *

स्तिकाय भं० भगवन् क० कितना व० वर्ण गं० गंध र० रस फा० स्पर्श गो० गौतम अ० अवर्ण अ० अंग अ० अरस अ० अस्पर्श अ० अरूपी अ० अजीव सा० शाश्वत अ० अवस्थित लो० लोक द्रव्य स० संक्षेप से पं० पांच प्रकार की द० द्रव्य से खे० क्षेत्र से भा० काल से गु० गुण से द० द्रव्य से ए० एकद्रव्य खे० क्षेत्र से लो० लोक प्रमाण का० काल से न० नहीं क० कदापि न० नहीं आ० था न०

॥ १ ॥ धम्मत्थि काएणं भंते ! कतिवण्णे, कतिगंधे, कतिरसे, कतिफासे ? गोयमा !

अवण्णे, अंगंधे, अरसे, अफासे, अरूपी, अजीवे, सासए, अत्रट्टिए, लोगदव्वे । से

समासओ पंचविहे पणत्ते तंजहा दव्वओ, खत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ । दव्व-

ओणं धम्मत्थिकाए एगेदव्वे, खत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते, कालओ नकयाइ,

और पुट्टास्तिकाय ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाया में कितने वर्ण, गंध, रस व स्पर्श हैं ?

अहो गौतम ! धर्मास्तिकाया में पांच वर्ण में से एक भी वर्ण नहीं है, दोगंध में से एक भी गंध नहीं है,

पांच रस में से एक भी रस नहीं है, आठ स्पर्श में से एक भी स्पर्श नहीं है. अरूपी, अजीव, शाश्वत

अवस्थित व पंचास्तिकायिक लोक होने से उस का एक अंशभूत द्रव्य है. उस के द्रव्य से, क्षेत्र से, काल

से, भाव से व गुण से ऐसे पांच भेद किये हैं. द्रव्य से धर्मास्तिकाय एक द्रव्य, क्षेत्र से धर्मास्तिकाय

सुसुरा श्वक का दशम उद्देश

नहीं क० कदापि नः नहीं है जा० यावत् नि० नित्य भा० भाव से अ० अवर्ण अ० अर्गत्र अ० अरुन
अ० अस्पर्श गु० गुण से ग० गमन गुण अ० अधर्मास्तिकाय ए० ऐसे न० विशेष गु० गुण से ठा०
स्थानगुण आ० आकाशास्तिकाय ए० ऐसे न० विशेष खे० क्षेत्र से लो० लोकालोक प्रमाण अ०
अनंत जा० यावत् गु० गुण से अ० अवगाहना गुण जी० जीवास्तिकाय में भं० भगवन् क० कितना व०
वर्ण गं० गंध र० रस फा० स्पर्श गो० गौतम अ० अवर्ण जा० यावत् अ० अरूपी जी० जीव सा०

न आसि न कयाइ नत्थि जाव निच्चे, भावओ अवन्ने अगंधे, अरसे, अफासे, गुणओ
गमणगुणे अहम्मत्थि काएवि एवं चेव नवरं गुणओ ठाणगुणे ॥ आगासत्थि काएवि
एवं चेव, नवरं खेत्तओणं आगासत्थिकाए, लोयालोप्यमाणमेत्ते अणंतेचेव,
जाव गुणओ अवगाहगुणे ॥ जीवत्थिकाएणं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे,

संपूर्ण लोक प्रमाण, काल से अतीत काल में नहीं था वैसा नहीं, वर्तमान में नहीं हे वैसा नहीं, और
अनागत में नहीं होगा वैसा नहीं परंतु अतीत काल में था, वर्तमान है और अनागत में होगा यावत्
नित्य रहेगा. भाव से धर्मास्तिकाय में वर्ण, गंध, रस व स्पर्श नहीं होते हैं और गुण से धर्मास्तिकाया में
गमन गुण जैसे मत्स्य को जल का आश्रय रहता है वैसे ही जीव पुद्गलको धर्मास्ति कायगति कराता
है. अधर्मास्ति कायाका भी वैसे ही जानना मात्र स्थिर गुण ग्रहण करना. आकाशास्ति काय में भी धर्मास्ति

पदार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्देवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

शाश्वत अ० अवस्थित लो० लोक द्रव्य स० संक्षेप से पं० पांच प्रकार का द० द्रव्य से जा० यावत्
गु० गुण से द० द्रव्य से अ० अनंत जी० जीव द्रव्य खे० क्षेत्र से लो० लोक प्रमाण का० कालसे न० नही क०
कदापि न० नहीं आ० था जा० यावत् नि० नित्य भा० भाव से अ० अवर्ण अ० अंगय अ० अरस
अ० अस्पर्श गु० गुण से उ० उषयोग गुण पो० पुह्लास्तिकाय भं० भगवन् क० कितने वर्ण क० कितने
गंध र० रस फा० स्पर्श गो० गौतम पं० पांचवर्ण पं० पांचरस दु० दोगंध अ० आठ स्पर्श रू० रूपी अ० अजीव सा०

कइसे कइफासे ? गोयमा ! अन्नसे जाव अरूची, जीवे सासए, अत्राट्टिए,
लोगदब्बे, । सेसमासओ पंचविहे प० तं० दब्बओ जाव गुणओ. दब्बओणं जीव-
स्थिकाए अणंताइं जीवदब्बाइं; खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते, कालओ नकथाइ न आसि
जाव निच्चे. भावओ पुण अन्नसे, अगंधे, अरसे अफासि, गुणओ उवओग गुणे ।
पोगलत्थि काएणं भंते ! कइवण्णे, कइगंधरसफासे ? गोयमा ! पचवन्ने पंचरसे, दुगंधे,

काय जैसा परंतु क्षेत्र से आकाशास्ति काय लोकालोक प्रमाण अनंत, और गुण से अन्नगाहन-अवकाश
देने वाला-गुण है. अहो भगवन् ! जीवास्ति काय में कितने वर्ण, गंध, रस व स्पर्श हैं ? अहो गौतम ! जीवास्ति काय
में वर्ण, गंध, रस व स्पर्श नहीं है. वह अरूपी, जीव, शाश्वत, अवस्थित व लोक-द्रव्य है. उसके पांच भेद
किये गये हैं द्रव्य से यावत् गुण से. द्रव्य से जीव-द्रव्य अनंत, क्षेत्र से लोक-प्रमाण, काल से अतीत में

शाश्वत अ० अवस्थित लो० लोक द्रव्य स० संक्षेप से पं० पांच प्रकार का द० द्रव्य से अ० अनंत द्रव्य
 खे० क्षेत्र से लो० लोक प्रमाण मात्र का० काल से न० नहीं क० कदापि व० य आ० धा जा० यावत्
 नि० नित्य भा० भाव से व० वर्ण वाला गं० गंधवाला र० रसवाला फा० स्पर्श वाला गु० गुण से ग०

अट्टफासे, रूची, अजीवि, सासए, अवाट्टिए, लोगदव्वे. से समासओ पंचविहे पण्णत्ते
 तंजहा दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओदव्वओणंपोगलत्थिकाए अणंताइ
 दव्व्वाइ, खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते, कालओ नकयाइ न आसि जाव निच्चे भावओ वण्णमंते,

नहीं था वैसा नहीं, वर्तमान में नहीं है वैसा नहीं है और अनागत में नहीं होगा वैसा नहीं परंतु अतीत
 काल में था, वर्तमान में है, और अनागत में होगा यावत् नित्य है. भाव से वर्ण, गंध, रस, स्पर्श रहित अरूपी
 है. गुण से उपयोग लक्षण वाला है. अहो भगवन् ! पुद्गलास्ति काय में कितने वर्ण, गंध, रस व स्पर्श हैं?
 अहो गौतम ! पुद्गलास्ति कायमें पांचवर्ण, पांचरस, दो गंध, और आठ स्पर्श हैं. वह रूपी, अजीव, शाश्वत,
 अवस्थित यावत् लोक द्रव्य है. उस के द्रव्य से यावत् गुण से ऐसे पांच भेद किये हैं. द्रव्य से पुद्गला-
 स्तिकाय अनंत है, क्षेत्र से लोक प्रमाण है, काल से अतीत काल में नहीं था वैसा नहीं यावत् नित्य है
 भाव से वर्ण, गंध, रस स्पर्श सहित है, और गुण से ग्रहणगुण बांला है अर्थात् परस्पर मीलते परिण

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

शाश्वत अ० अवस्थित लो० लोक द्रव्य त० संक्षेप से पं० पांच प्रकार का द० द्रव्य से जा० यावत् गु० गुण से द० द्रव्य से अ० अनंत जी० जीव द्रव्य खे० क्षेत्र से लो० लोक प्रमाण का० कालसे न० नहीं क० कदापि न० नहीं आ० था जा० यावत् नि० नित्य भा० भाव से अ० अवर्ण अ० अंग्थ अ० अस अ० अस्पर्श गु० गुण से उ० उपयोग गुण पो० पुह्लास्तिकाय भं० भगवन् क० कितने वर्ण क० कितने गंध र० रस फा० स्पर्शगो० गौतमपं० पांचवर्ण पं० पांचरस दु० दोग्ध्र अ० आठ स्पर्श रू० रूपी अ० अजीव सा०

कइसे कइफासे ? गोयमा ! अवन्ने जाव अरूवी, जीवे सासए, अवाट्टिए, लोगदब्बे, । सेसमासओ पंचविहे प० तं० दब्बओ जाव गुणओ. दब्बओणं जीव-
थिकाए अणंताइ जीवदब्बाइ; खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते, कालओ नकथाइ न आसि
जाव निच्चे. भावओ पुण अवन्ने, अग्ंधे, अरसे अफासे, गुणओ एवओग गुणे ।
पोगलत्थि काएणं भंते ! कइवण्णे, कइग्ंधरसफासे ? गोयमा ! पचवन्ने पंचरसे, दुग्ंधे,

काय जैसा परंतु क्षेत्र से आकाशास्ति काय लोकालोक प्रमाण अनंत, और गुण से अवगाहन-अवकाश देने वाला-गुण है. अहो भगवन् ! जीवास्ति कायमें कितने वर्ण, गंध, रस व स्पर्श हैं ? अहो गौतम ! जीवास्ति काय में वर्ण, गंध, रस व स्पर्श नहीं है. वह अरूपी, जीव, शाश्वत, अवस्थित व लोक-द्रव्य है. उसके पांच भेद कितने गये हैं द्रव्य से यावत् गुण से. द्रव्य से जीव द्रव्य अनंत, क्षेत्र से लोक प्रमाण, काल से अतीत में

ऊणा को ध० धर्मास्तिकाय व० कहना णो० नहीं इ० यह अर्थ स०समर्थ से० यह के० कैसे ए० ऐसा बु० कहा जाता है ए० एक ध० धर्मास्तिकाया के प्रदेश को नो० नहीं ध० धर्मास्तिकाय व० कहना जा० यावत् ए० एक प्रदेश ऊणा ध० धर्मास्ति काया को .नो० नहीं ध० धर्मास्तिकाय व० कहना गो० गौतम खं० खंडित च० चक्र स० संपूर्ण च० चक्र भ० भगवन् नो० नहीं खं० खंडित चक्र भं० संपूर्ण चक्र ए०

वियणं धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया ? णो इणट्टे समट्टे. से केणट्टेणं भंते!
एवं बुच्चइ एगे धम्मत्थिकायप्पदेसे नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया जाव एगपदे-
सगेवियणं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया, ॥ सेणणं गोयमा !
खंडे चक्रे सगले चक्रे ? भगवं ! नो खंडे चक्रे सगले चक्रे । एवं छत्ते, चम्म, दंडे,

अहो भगवन् ! कित कारनसे धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को धर्मास्तिकाय नहीं कहना. ऐसे ही दो, तीन, चार, पाँच, छ, सात, आठ, नव, दश, संख्यात, अंतख्यात यावत् एक प्रदेश कम को धर्मास्ति काय नहीं कह सकते है ? अहो गौतम ! चक्र के टुकड़े को क्या चक्र कहना ? अहो भगवन् ! चक्र के टुकड़े को चक्र नहीं कहना परंतु पूर्ण चक्र को ही चक्र कहना और भी चमर के अमुक विभाग को क्या चमर कहना, छत्र के अमुक विभाग को क्या छत्र कहना, दंडके

ऊणा को ध० धर्मास्तिकाय व० कहना णो० नहीं इ० यह अर्थ स०समर्थ से० यह के० कैसे ए० ऐसा बु० कहा जाता है ए० एक ध० धर्मास्तिकाया के प्रदेश को नो० नहीं ध० धर्मास्तिकाय व० कहना जा० यावत् ए० एक प्रदेश ऊणा ध० धर्मास्ति काया को .नो० नहीं ध० धर्मास्तिकाय व० कहना गो० गौतम खं० खंडित च० चक्र स० संपूर्ण च० चक्र भ० भगवन् नो० नहीं खं० खंडित चक्र भं० संपूर्ण चक्र ए०

वियणं धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया ? णो इणट्टे समट्टे. से कंणट्टेणं भंते!
एवं बुच्चइ एगे धम्मत्थिकायप्पदेसे नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया जाव एगपदे-
सणे वियणं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया, ॥ सेणणं गोयमा !
खंडे चक्के सगले चक्के ? भगवं ! नो खंडे चक्के सगले चक्के । एवं छत्ते, चम्म, दंडे,

अहो भगवन् ! कित कारनसे धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को धर्मास्तिकाय नहीं कहना. ऐसे ही दो, तीन, चार, पांच, छ, सात, आठ, नव, दश, संख्यात, अंख्यात यावत् एक प्रदेश कम को धर्मास्ति काय नहीं कह सकते है ? अहो गौतम ! चक्र के टुकड़े को क्या चक्र कहना ? अहो भगवन् ! चक्र के टुकड़े को चक्र नहीं कहना परंतु पूर्ण चक्र को ही चक्र कहना और भी चमर के अमुक विभाग को क्या चमर कहना, छत्र के अमुक विभाग को क्या छत्र कहना, दंडके

* मकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी व्यासप्रसादजी *

एसे छ० छत्र च० चमर दं० दंड दू० वस्त्र आ० आयुध मो० मोदक मे० वह ते० इसलिये गो० गौतम
ए० ऐसा बु० कहा जाता है ए० एक ध० धर्मास्तिकाय प्रदेश नो० नहीं ध० धर्मास्तिकाय व०
कहना जा० यात्रत् ए० एक प्रदेश ऊणा ध० धर्मास्तिकाय को णो० नहीं ध० धर्मास्तिकाय व० कहना
से० वह कि० क्या खा० ख्याति केलिये भं० भगवन् ध० धर्मास्तिकाय व० कहना गो० गौतम अ० असंख्यात
ध० धर्मास्तिकाय के प० प्रदेश ते० वे स० सर्व क० कृत्स्न प० प्रतिपूर्गे नि० निरावेक्ष्य ए० एक ग० ग्रहण

दूसे, आउंहे, मोयए, सेतेणट्टेणं गोयमा ! एवं बुच्चइ एगे धम्मत्थिकायव्वेसे णो धम्म-
त्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया जावएगपदेसूणवियणं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं
सिया। से किं खाइएणं भंते ! धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वंसिमा ? गोयथा ! असंखेजा धम्म-
त्थिकायपंपसा ते सब्बे कसिणा, पडिपुणा, निरवसेसा. एक्कगहण गहिया एसणं

दुकुंडे को दंड कहना, वस्त्र के टुकड़े को वस्त्र कहना; आयुध के टुकड़े को आयुध कहना, या लड्डुके
दुकुंडे को क्या लड्डु कहना ? अहो भगवन् ! ऐसा नहीं कहा जाता है. इसी तरह अहो गौतम ! धर्मास्तिका
काय के एक प्रदेश यावत् एक प्रदेश कप को धर्मास्तिकाय नहीं कह सकते हैं * क्यों कि

* यह वचन निश्चय नयकी अपेक्षासे ग्रहण किया है क्योंकि व्यवहार नयसे खण्डित घडेको घडा कह-
ते हैं वैसेही धर्मास्तिकायके एक प्रदेश वगैरह को भी धर्मास्तिकाय कह सकत है.

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

गौतम जी० जीव स० उत्थान सहित जा० यावत् उ० देखाडे व० कहना से० वह के० कैसे जा० यावत् व० कहना गो० गौतम जी० जीव अनंत आ० मतिज्ञान प० पर्यव ए० ऐसे सु० श्रुतज्ञान पर्यव ओ० अधिज्ञान पर्यव म० मनःपर्यवज्ञान पर्यव के० केवलज्ञान के पर्यव म० मतिअज्ञान के पर्यव सु० श्रुतअज्ञान के पर्यव त्रि० विभंगज्ञान के पर्यव च० चक्षुदर्शन के पर्यव अ० अचक्षुदर्शन के पर्यव ओ० अदर्शन पर्यव के० केवलदर्शन के पर्यव उ० उपयोग कां ग० जावे उ० उपयोग लक्षण से से० वह ते०

जीवेणं सउट्टाणं जाव उवदंसेइति वत्तव्वं सिया । सेकेणट्टेणं जाव वत्तव्वं सिया ?
गोयमा! जीवेणं अनंता आभिणिवोहियणाणपज्जावाणं, एत्थं सुयानाणपज्जावाणं, ओहिनाण पज्जावाणं, मणपज्जावणाणपज्जावाणं केवलणाणपज्जावाणं, मइअन्नाणपज्जावाणं, सुयअन्नाण पज्जावाणं विभंगानाणपज्जावाणं, चक्खुदंसणपज्जावाणं, अचक्खुदंसणपज्जावाणं, ओहिदंसण

रीर्यं, व पुरुपात्कार पराक्रम सहित जीव आत्मपरिणाम मे से क्या चैतन्यपना वताता है ! अहो गौतम ? उत्थानादि सहित जीव आत्मभाव से चैतन्यपना वताता है. अहो भगवन् ! किस तरह से उत्थानादि सहित जीव चैतन्यपना वताता है ! अहो गौतम ! जीव अनंत मतिज्ञान, श्रुत ज्ञान, अधि ज्ञान, मनःपर्यव ज्ञान, केवल ज्ञान, मति ज्ञान; श्रुत ज्ञान, विभंग ज्ञान, चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अधि दर्शन व केवल दर्शन के पर्यायात्मक चैतना लक्षण को कहा जाता है अर्थात् आत्मभाव में वर्तता है

इसलिये ए० ऐसा बु० कहा जाता है गो० गौतम जी० जीव स० उत्थानसहित जा० यावत् व० कहना ॥ ४ ॥ क० कितना प्रकारका भं० भगवन् आ० आकाश गो० गौतम दु० दोप्रकार का आ० आकाश लो० लोक आकाश अ० अलोक आकाश लो० लोकाकाश में कि० क्या जी० जीव जी० जीवदेश जी० जीवमदेश अ० अजीव अ० अजीवदेश अ० अजीव प्रदेश गो० गौतम जी० जीव जी० जीवदेश जी० जीवमदेश अ० अजीव अ० अजीवदेश अ० अजीव प्रदेश जे० जो जी० जीव ते० वे नि० निश्चय ए० एकेन्द्रिय वे० वेइन्द्रिय

पञ्चाणं, केवलदंसण पञ्चाणं, उवओगं गच्छइ, “उवओग लक्खणेणं जीवे” सेतेणट्ठेणं एवं बुच्चइ, गोयमा ! जीवे सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया ॥ ४ ॥ कइविहिणं भंते ! आगसे पणत्ते ? गोयमा ! दुविहे आगसे प० तं० लोयागासेय, अलोयागासेय । लोयागासेणं भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा; अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा ? गोयमा ! जीवावि, जीवदेसावि, जीव पदेसावि; अजीवावि, अजीव-

उपयोग लक्षण वाला जीव कहाता है इससे अहो गौतम ! उत्थानादि सहित जीव आत्म-भान से चैतन्यपना वताता है ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! आकाश के कितने भेद कहे हैं ? अहो गौतम ! आकाश के दो भेद कहे हैं ? लोकाकाश और २ अलोकाकाश. अहो भगवन् ! लोकाकाश में क्या जीव, जीव के देश, जीव के प्रदेश, व अजीव, अजीव के देश या अजीव के प्रदेश हैं ? अहो गौतम !

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

गौतम जी० जीव स० उत्थान सहित जा० यावत् उ० देखाडे व० कहना से० वह के० कैसे जा० यावत् व० कहना गो० गौतम जी० जीव अनंत आ० मतिज्ञान प० पर्यव ए० ऐसे सु० श्रुतज्ञान पर्यव सु० ओ० अत्रिभिज्ञान पर्यव म० मनःपर्यवज्ञान पर्यव के० केवलज्ञान के पर्यव म० मतिअज्ञान के पर्यव सु० श्रुतअज्ञान के पर्यव वि० विभंगज्ञान के पर्यव च० चक्षुदर्शन के पर्यव अ० अचक्षुदर्शन के पर्यव ओ० अवदर्शन पर्यव के० केवलदर्शन के पर्यव उ० उपयोग कां ग० जात्रे उ० उपयोग लक्षण से से० वह ते०

जीविणं सउट्टाणे जाव उवदंसेइति वत्तव्वं सिया । सेकेणट्टेणं जाव वत्तव्वं सिया ?
गोयमा! जीविणं अनंता आभिणिबोहियिनाणपज्जावाणं, एवं सुयनाणपज्जावाणं, ओहिनाण पज्जावाणं, मणपज्जावनाणपज्जावाणं केवलणाणपज्जावाणं, मइअन्नाणपज्जावाणं, सुयअन्नाण पज्जावाणं विभंगनाणपज्जावाणं, चक्खुदंसणपज्जावाणं, अचक्खुदंसणपज्जावाणं, ओहिदंसण

धीर्य, व पुरुषात्कार पराक्रम सहित जीव आत्मपरिणाम मे से क्या चैतन्यपना बताता है ! अहो गौतम ? इत्यानादि सहित जीव आत्मभाव से चैतन्यपना बताता है. अहो भगवन् ! किस तरह से इत्यानादि सहित जीव चैतन्यपना बताता है ! अहो गौतम ! जीव अनंत मतिज्ञान, श्रुत ज्ञान, अविधि ज्ञान, मनःपर्यव ज्ञान, केवल ज्ञान, मति कज्ञान; श्रुत कज्ञान, विभंग ज्ञान, चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अविधि दर्शन व केवल दर्शन के पर्यायात्मक चैतना लक्षण को कहा जाता है अर्थात् आत्मभाव में वर्तता है

शब्दार्थ

मंत्र

भानार्थ

नहीं अ० अधर्मास्ति काय का देश अ० अधर्मास्ति काय का प्रदेश अ० काल ॥५॥ अ० अलोकाकाश में भ० भगवन् कि० क्या जी० जीव गो० गौतम नो० नहीं जीव जा० यावत् नो० नहीं अजीव प्रदेश ए० एक

पंचविहा पणंता तंजहा धम्मत्थिकाए, नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पदेसा
अधम्मत्थिकाए, नो अधम्मत्थिकायस्स देसे, अधम्मत्थिकायस्स पदेसा । अच्चासमए

॥ ५ ॥ अलोयाकासेणं भंते ! किं जीवा पुच्छा तहचेव, गोयमा ! नो जीवा जाव

और ५ काल. * ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! अलोकाकाश में क्या जीव, जीव के देश व प्रदेश वगैरह हैं ? अहो गौतम ! अलोकाकाश में जीव, जीव के देश व प्रदेश यावत् अजीव के प्रदेश नहीं हैं परंतु अगुरुलघुभूत

* अजीव अरूपिके सब मीलकर दश भेद किये हैं; उसमेंसे यहाँ पांचही ग्रहण किये हैं उसका सबव यह है कि यहाँ पर आकाश आश्रित पृच्छाहै इससे आकाशास्तिकायाका स्कंध, देश व प्रदेश यह तीन नहीं ग्रहण किये हैं मात्र धर्मास्तिकाया व अधर्मास्तिकायाके स्कंध व प्रदेश ग्रहण किये हैं. धर्मास्ति काय व अधर्मास्ति कायके देश नहीं ग्रहण करनेका सबव यह है कि जब संपूर्ण वस्तुकी विवक्षा की जाती है तब धर्मास्तिकाय ऐसाही कहाजायगा और उसके अंशकी विवक्षा करे तब उसके प्रदेश ही ग्रहण किये जायेंगे. क्योंकि ये दोनों अवस्थित हैं इनकी हानि वृद्धि नहीं होतीहै इससे स्कंध व प्रदेश ग्रहण किये गये हैं और देशका प्रतिषेध कियाहै.

* प्रकाशक-राजावहार लाला सुखदेवसहायजी बालाप्रसादजी *

अ० अजीव द० द्रव्य देश अ० अगुरुलघु अ० अनंत अ० अगुरुलघु गु० गुण से सं० युक्त सं० सर्व आकाश अ० अनंत भाग ऊणा ॥ ६ ॥ ध० धर्मास्तिकाय भं० भगवन् के० कितनी बड़ी गो० गौतम लो० लोक में लो० लोक मात्र लो० लोक प्रमाण लो० लोक को स्पर्शी लो० लोक को फु०स्पर्श कर चि० रही है ए० ऐसे अ० अधर्मास्ति काय लो० लोकाकाश जी० जीवास्ति काय पो० पुद्गलास्तिकाय पं०

नो अजीवपदसा; एगे अजीवद्वन्द्वसे अगुरुलघुए, अणतेहि, अगुरुय लहुयगुणेहि संजुचे, सव्वागासे अणतभागणे ॥ ६ ॥ धम्मत्थिकाएणं भंते ! के महालए पणत्ते ? गोयमा ! लोए, लोयमेत्ते, लोयफुडे, लोयंचेव फुसित्ताणं, चिट्ठइ ॥ एवं अहम्मत्थिकाए, लोयाकासे, जीवत्थिकाए, पोगलत्थिकाए पंचविक्काभिलावा ॥ ७ ॥

अजीव द्रव्य का एक देश है. क्यों कि संपूर्ण लोकालोक का आकाश मीलकर एक स्कंध होता है और अलोक में मात्र एक अलोकाकाश ही है. इसलिये एक अजीव द्रव्य का देश गिना गया है. वह अनंत स्वरूपरूप अगुरुलघु स्वभाव सहित है. लोकाकाश की अपेक्षा से अनंत भाग रूप है इस से सब आकाश के अनंतरे भाग कम बतलाया है ॥ ६ ॥ अब धर्मास्तिकायादि के प्रमाण का प्रश्न पूछते हैं. अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय कितनी बड़ी है ? अहो गौतम ! धर्मास्तिकाय पंचास्तिकायमय लोक जैसी है, लोक मात्र है, लोक प्रदेश प्रमाण है, सब लोक के प्रदेश को स्पर्श कर रही है. ऐसे ही अधर्मास्तिकाय

पाँव का एक अ० अभिलाष ॥ ७ ॥ अ० अथो लोक में थ० भगवन् थ० धर्मास्तिकाय कि० कितनी फु० स्पर्शी है सा०कुच्छ अधिक अ० अर्थ से फु० स्पर्शे ति० तिच्छीलोक में अ० असंख्यातेव भा० भाग को फु० स्पर्शे उ० ऊर्ध्व लोक में दे० देशजना अ० अर्थ फु० स्पर्शे ॥ ८ ॥ र० रत्नप्रभा पु० पृथ्वी थ० धर्मास्तिकाय कि० क्या सं० संख्यातेव भा० भाग फु० स्पर्शे अ० असंख्यातेव भाग फु० स्पर्शे सं०

अहो लोएणं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसइ ? गोयमा ! सातिरेगं अढं फुसइ ॥

तिरिय लोएणं भंते ! पुच्छा ? गोयमा ! असंखेज्जइ भागं फुसइ ॥ उड्डुलोएणं

भंते ! पुच्छा ? गोयमा ! देसूणं अढं फुसइ ॥ ८ ॥ इमाणं भंते ! रयणप्पमाणं

पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइ भागं फुसइ, असंखेज्जइ भागं फुसइ

संखेजे भागं फुसइ, असंखेजे भागं फुसइ सव्वं फुसइ ? गोयसा ! णो

व लोकाकाश का जान ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! अथोलोक में धर्मास्तिकाय कितनी स्पर्श कर रही है ?

अहो गौतम ! आने से कुछ अधिक धर्मास्तिकाय का विभाग स्पर्श कर रहा है. क्यों कि सब धीलकर

चौदह राजु का लोक है; उस में से अथोलोक सात राजु से कुछ अधिक है. अहो भगवन् ! तिच्छीलोक

में कितनी धर्मास्तिकाय स्पर्श कर रही है ? अहो गौतम ! तिच्छीलोक में धर्मास्तिकाय असंख्यातेव

भाग स्पर्श कर रही है क्यों कि १८०० योजन का तिच्छीलोक है. ऊर्ध्व लोक में धर्मास्तिकाय आधेसे

कुछ कम स्पर्श कर रही है क्यों कि सात राजु से कुछ कम ऊर्ध्व लोक है ॥ ८ ॥ अहो भगवन् !

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अ० अजीव द० द्रव्य देश अ० अगुरुलघु अ० अनंत अ० अगुरुलघु गु० गुण सं सं० युक्त सं० सर्व आकाश अ० अनंत भाग ऊणा ॥ ६ ॥ ध० धर्मास्तिकाय भं० भगवन् के० कितनी बड़ी गो० गौतम लो० लोक में लो० लोक मात्र लो० लोक प्रमाण लो० लोक को स्पर्शी लो० लोक को फु० स्पर्श कर चि० रही है ए० ऐसे अ० अधर्मास्तिकाय लो० लोकाकाश जी० जीवास्तिकाय पो० पुद्गलास्तिकाय पं०

नो अजीवपदेसा; एगे अजीवद्वन्द्वसे अगुरुलघुए, अणंतेहि, अगुरुय लहुयगुणेहि संजुत्ते, सब्वागासे अणंतभागणे ॥ ६ ॥ धर्मस्तिकाएणं भंते ! के महालए पणत्ते ? गोयमा ! लोए, लोयमेत्ते, लोयप्पमाणे, लोयफुडे, लोयंचेत्त फुसित्ताणं, चिट्ठइ ॥ एवं अहम्मत्थिकाए, लोयाकासे, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए पंचविष्काभिलावा ॥७॥

अजीव द्रव्य का एक देश है. क्यों कि संपूर्ण लोकालोक का आकाश मीलकर एक स्कंध होता है और अर्थक में मात्र एक अलोकाकाश ही है. इसलिये एक अजीव द्रव्य का देश गिना गया है. वह अनंत स्वरूपरूप अगुरुलघु स्वभाव सहित है. लोकाकाश की अपेक्षा से अनंत भाग रूप है इस से सब आकाश के अनंतत्र भाग कप्र व्रतलाया है ॥ ६ ॥ अत्र धर्मास्तिकायादि के प्रमाण का प्रश्न पूछते हैं. अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय कितनी बड़ी है ? अहो गौतम ! धर्मास्तिकाय पंचास्तिकायमय लोक जैसी है, लोक मात्र है, लोक प्रदेश प्रमाण है, सब लोक के प्रदेश को स्पर्श कर रही है. ऐसे ही अधर्मास्तिकाय

२० रत्नप्रभा त्वं तैसे घ० घनोदधि घ० घनवात त० तनुवात ॥ १० ॥ इ० इस र० रत्नप्रभा का उ० आकाशांतर घ० धर्मास्तिकाया को कि०क्या गो० गौतम सं० संख्यात वे भाग को फु० स्पर्श अ० असंख्यात भाग को फु० स्पर्श गो० गौतम सं० संख्यात वे भाग को फु० स्पर्श नो० नहीं अ० असंख्यात वे भाग को फु० स्पर्श नो० नहीं सं० संख्यात भाग को नो० नहीं अ० असंख्यात भाग को नो० नहीं सं० सर्व को उ० आकाशान्तर सं० सर्व ज० जैसे र० रत्नप्रभा पु० पृथ्वी की व० वक्तव्यता भ० कही ए० ऐसे जा०

तहा घणोदधिघणवायतनुवायधि ॥ १० ॥ इर्मसिणं भंते ! रयणप्पभाए पुट्ठीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइ भागं फुसइ, असंखेज्जइ भागं फुसइ ? पुच्छा गोयमा संखेज्जइ भागं फुसइ, णो असंखेज्जइ भागं फुसइ, णो संखेज्जे, नो असंखेज्जे, नो सब्बं फुसइ. ॥ उवासंतराइं सब्बाइं जहा रयणप्पभाए पुट्ठीए वत्तव्वया भणिया

मानना. इसी तरह घनवात व तनुवात का जानना ॥ १० ॥ अहो भगवन् ! रत्नप्रभा पृथ्वी के आकाशान्तरको धर्मास्तिकाया क्या संख्यातवे भाग से स्पर्श कर रही है यावत् सब स्पर्श कर रही है ? अहो गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी के आकाशान्तर को धर्मास्तिकाय संख्यातवे भाग से स्पर्श कर रही है. जैसे रत्नप्रभा पृथ्वी का आकाशान्तर कहा जैसे ही सातवी पृथ्वी तक के सब आकाशान्तर का जानना ॥ ११ ॥

शब्दार्थ (भावार्थ) (भावार्थ) (भावार्थ)

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

संख्यात भाग फु० स्पर्श अ० असंख्यात भाग फु० स्पर्श स० सर्व फु० स्पर्श गो० गौतम नो० नहीं सं० संख्यातवे
भाग फु० स्पर्श अ० असंख्यातवे भाग फु० स्पर्श गो० नहीं सं० संख्यात भाग फु० स्पर्श नो० नहीं
अ० असंख्यात भाग फु० स्पर्श नो० नहीं स० सर्व फु० स्पर्श ॥ ९ ॥ इ० इस र० रत्नप्रभा पृथ्वी का
घ० घनोदधि ध० धर्मास्ति काया को किं० क्या सं० संख्यातवे भाग फु० स्पर्श गो० गौतम ज० जैसे

संखेजइ भागं फुसइ, असंखेजइ भागं फुसइ, गो संखेजे भागं फुसइ, गो असंखे-
जे भागं फुसइ, नो सब्वं फुसइ, ॥ ९ ॥ इमीसेणं भतें ! रयणप्पभाए पुढवाए
घणोदही धम्मत्थिकायस्स किं संखेजइ भागं फुसइ ? गोयमा ! जहा रयणप्पभाए

रत्नप्रभा पृथ्वी को धर्मास्तिकाय क्या संख्यात वे भाग से स्पर्श कर रही है, असंख्यातवे- भाग से स्पर्श
कर रही है, संख्यात भाग में या असंख्यात भाग में स्पर्शकर रही है या सब स्पर्शकर रही है ? अहो
गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी को धर्मास्तिकाय संख्यातवे भाग से स्पर्शकर नहीं रही है परंतु असंख्यातवे भाग
से स्पर्शकर रही है. क्यों कि रत्नप्रभा का पृथ्वी पिंड एक लाख अस्सी हजार योजन का है. संख्यात व
असंख्यात भाग में अथवा सब स्पर्शकर नहीं रही है ॥९॥ अहो भगवन् ! रत्नप्रभा पृथ्वी का घनोदधि को
धर्मास्तिकाय क्या संख्यातवे भाग से स्पर्शकर रही है ? अहो गौतम ! जैसे रत्नप्रभा पृथ्वी का कहा वैसा ही

र० रत्नप्रभा त० तैसे घ० घनोदधि घ० घनवात त० तनुवात ॥ १० ॥ इ० इस र० रत्नप्रभा का उ० आकाशांतर ध० धर्मास्तिकाया को कि० क्या गो० गौतम सं० संख्यात वे भाग को फु० स्पर्शो अ० असंख्यात भाग को फु० स्पर्शो गो० गौतम सं० संख्यात वे भाग को फु० स्पर्शो नो० नहीं अ० असंख्यात वे भाग को फु० स्पर्शो नो० नहीं सं० संख्यात भाग को नो० नहीं अ० असंख्यात भाग को नो० नहीं सं० सर्व को उ० आकाशान्तर स० सर्व ज० जैसे र० रत्नप्रभा पु० पृथ्वी की व० वक्तव्यता थ० कही ए० ऐसे जा०

तहा घणोदहिघणवायतणवायावि ॥ १० ॥ इमीसेणं भंते ! स्यणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइ भागं फुसइ, असंखेज्जइ भागं फुसइ ? पुच्छा गोयमा संखेज्जइ भागं फुसइ, णो असंखेज्जइ भागं फुसइ, णो संखेज्जे, नो असंखेज्जे, नो सब्बं फुसइ. ॥ उवासंतराइं सव्वाइं जहा स्यणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया

जानना. इसी तरह घनवात व तनुवात का जानना ॥ १० ॥ अहो भगवन् ! रत्नप्रभा पृथ्वी के आकाशान्तरको धर्मास्तिकाया क्या संख्यातवे भाग से स्पर्श कर रही है यावत् सब स्पर्श कर रही है ? अहो गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी के आकाशान्तर को धर्मास्तिकाय संख्यातवे भाग से स्पर्श कर रही है. जैसे रत्नप्रभा पृथ्वी का आकाशान्तर कहा वैसे ही सातवी पृथ्वी तक के सब आकाशान्तर का जानना ॥ ११ ॥

सूत्र

भावार्थ

पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स (घनोदधि)

शब्दार्थ

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखेश्वरसहायजी व्यालाप्रसादजी *

अ० अथो स० सातमी नरक ॥ ११ ॥ जं० जंबूद्वीपादि दी० द्वीप ल० लवण समुद्रादि सं० समुद्र ए० ऐसे सो० सौधर्म देवलोक जा० यात्रत् इ० ईत्प्रागभार पु० पृथ्वी ते० वे अ० असंख्यातवे भा० भाग को फु०

एवं जात्र अहेसत्तमाए॥ ११ ॥ जंबूद्वीवाइया दीवा, लवणसमुद्राइया समुद्राएवं सोहम्मे-
कप्पे जात्र इसिपब्भाए पुठवीए तेसव्वेवि असंखेज्जइ भागं फुसइ । सेसा पडिसेहे-
यन्वा । एवं अधम्मात्थिकाए एवं लोयागासेवि ॥ गाथा ॥ पुठवीउदहिघणत्तण । क-

जम्बूद्वीप आदि सब द्वीप, लवण समुद्रादि सब समुद्र, सौधर्मादि देवलोक से लेकर चारह देवलोक, नव ग्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमान, और ईत्प्रागभार पृथ्वी इन सब को धर्मास्तिकाया का असंख्यातवा भाग स्पर्श कर रहा है परंतु संख्यातवा भाग व संख्यात व असंख्यात भाग में, वैसे ही सब धर्मास्तिकाय स्पर्श कर नहीं रही है. जैसे धर्मास्तिकाय की वक्तव्यता कही वैसे ही अधर्मास्तिकाया व लोकाकाश का जानना. सात पृथ्वी, सात घनोदधि, सात घनवात, सात तनुवात, चारह देवलोक, नव ग्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमान, सिद्धशिला इन सब में जो आकाशान्तर है उन को धर्मास्तिकायादि संख्यातवे भाग में स्पर्श कर रहे हैं. पृथ्वी, घनोदधि, घनवात, तनुवात व आकाश इन एकैक के सात २ सूत्र करने से ३१ हुए. चारह देवलोक के चारह, नव ग्रैवेयक के ३, पांच अनुत्तर विमान का १ और सिद्धशिलाका

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

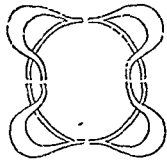
स्पर्शो से० शेष ५० प्रतिपेय ए० ऐसे अ० अधर्मास्तिकाय ए० ऐसे लो० लोकाकाश ॥२॥ १० ॥ २ ॥
 प्वागेवेजाणुत्तरासिद्धी संखज्जइ भागं अंतरंसु सेसा असंखेज्जा ॥ विईयसयस्स दसमो
 उद्देशो सम्मत्तो ॥ २ ॥ १० ॥ विईयं सययं सम्मत्तं ॥ २ ॥ *

एक पीलकर ५२ हुवे. इन सब के आकाशान्तरको धर्मास्तिकायादिक संख्यातवे भाग से स्पर्शती हे.
 शेष सब के आकाशान्तर को असंख्यातवे भाग से स्पर्शती हे. यह दूसरे शतकका दशवा उद्देशा पूर्ण
 हुवा ॥ २ ॥ १० ॥ २ ॥

x

x

हुवा ॥ २ ॥ १० ॥ २ ॥



* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी जालामसादजी *

अ० अथो स० सातमी नरक ॥ ११ ॥ जं० जंबूद्वीपादि दी० द्वीप ल० लवण समुद्रादि सं० समुद्र ए० ऐसे सो० सौधर्म देवलोक जा० यावत् इ० ईत्यागभार पु० पृथ्वी ते० वे अ० असंख्यातेव भा० भाग को फु०

एवं जात्र अहेसत्तमाए ॥ ११ ॥ जंबूद्वीवाइया दीवा, लवणसमुद्राइया समुद्राएवं सोहम्मे-
कल्पे जात्र इसिपवभाए पुढवीए तेसव्वेवि असंखज्जइ भागं फुसइ । सेसा पडिसेहे-
यव्वा । एवं अधम्मात्थिकाए एवं लोयागासेवि ॥ गाथा ॥ पुढवीउदहिघणतणू । क-

जम्बूद्वीप आदि सब द्वीप, लवण समुद्रादि सब समुद्र, सौधर्मादि देवलोक से लेकर बारह देवलोक, नव त्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमान, और ईपत्यागभार पृथ्वी इन सब को धर्मास्तिकाया का असंख्यातवा भाग स्पर्श कर रहा है परंतु संख्यातवा भाग व संख्यात व असंख्यात भाग में, वैसे ही सब धर्मास्तिकाय स्पर्श कर नहीं रही है. जैसे धर्मास्तिकाय की वक्तव्यता कही वैसे ही अर्थास्तिकाया व लोकाकाश का जानना. सात पृथ्वी, सात घनोदधि, सात घनवात, सात तनुवात, बारह देवलोक, नव त्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमान, सिद्धशिखा इन सब में जो आकाशान्तर है उन को धर्मास्तिकायादि संख्यातवे भाग में स्पर्श कर रहे हैं. पृथ्वी, घनोदधि, घनवात, तनुवात व आकाश इन एकैक के सात २ सूत्र करने से ३१ हुए. बारह देवलोक के बारह, नव त्रैवेयक के ३, पांच अनुत्तर विमान का १ और सिद्धशिखाका

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

में साः स्वामी स० समवसरण प० परिपदा नि० निर्गता प० परिपदा प० पीछीगई ॥ २ ॥ ते० उस काल ते० उस समय में स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर के दो० दूसरे अ० अंतवासी अ० अग्निभू- ति अ० अनगार गो० गौतम गो० गोत्र से स० सात हाथ ऊंचे जा० यावत् प० पूजते ए० ऐसा व० बोले च० चमर भं० भगवन् अ० असुरेन्द्र अ० असुरराजा के० कितना म० महर्द्धिक म० महाद्युतिवन्त म०

लेणं २ सामी समोसठे परिसा निगच्छइ, परिसा पडिगया ॥ २ ॥ तेषं कालेणं २

रामणस्स भगवओ महावीरस्स दोच्चे अंतवासी अग्निभूईणामं अणगारे,
गोयम गोत्तेणं सत्तुस्सेहे जात्र पज्जुवासमाणे एत्रं वयासी चमरणं भंते ! असुरिंदे

असुरराया के सहिड्डीए, केमहज्जुईए, केमहाबले, के महायसे केमहासोवखे, के महाणुभागे,

नाम की नगरी थी. उस का वर्णन उक्ताइ सूत्र में चंपा नाम की नगरी जैसे कहना. उस मोया नगरी की ईशान कौन में नंदन नामक उद्यान था. उस का वर्णन भी उक्ताइ जैसे जानना. उस समय में श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी ग्रामानुग्राम विचरते उस नंदन उद्यान में पधारे. परिपदा धर्मोपदेश सुनने को आइ और सुनकर पीछीगई ॥ १ ॥ उस काल उस समय में भगवंत के दूसरे शिष्य गौतम गोत्रीय सात हाथ की अत्रगाहनाबाले अग्निभूति नामक अनगार श्री भगवन्त को वंदना नमस्कार यावत् पर्युपासना करते छुनेलेगे कि अंशे भगवन् ! चमर नामक असुरका राजा असुरेन्द्र कितनी क्रुद्धिवाला है, कितनी द्युतिवाला है, कितना

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखेश्वरसहायजी जालामसादजी *

॥ तृतीय शतकम् ॥

के० कैसी वि० विकुर्वणा च० चमर कि० क्रिया जा० ग्रान तिथि० स्त्री न० नगर पा० लोकपाल अ० अधिपति इं० इन्द्रिय प० परिपदा त० तीसरा स० शतक में द० दशवंदशा ॥ १ ॥ ते० उस काल ते० उस समय में मो० मोया नामही न० नगरी हो० थी व० वर्णनयुक्त ती० उस मो० मोया नगरी की व०वाहिर उ०ईशान कोन में न०नंदन नाम का चे०उद्धान हो०था व०वर्णनयुक्त ते०उस काल ते०उस समय केरिस विउव्वणा, चमर, किरिय, जाणि, तिथि; नगर, पालाय॥ आहिवइ, इंदिय, परिसा; तइयंमि सए दसुदेसा॥ १ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं मोया नामं नयरी होत्था, वण्णओ, तीसेणं मोयानयरीए वाहिया उत्तर पुरच्छिमे दिसीभाए, नंदणे नामं चेइए होत्था, वण्णओ। तेणंका-

दुमरे शतकके अंतिम उद्देशे में अस्तिकायाका स्वरूप कहा. अब इस उद्देशे में जीवास्तिकायका विचार करते हैं. इस के दश उद्देशे बताते हैं. जिन के नाम १. वैक्रेय करने की शक्ति व चमरेन्द्र आदि इन्द्रों का अधिकार २. चमर उत्पत्ता अधिकार. ३. कायिकादि क्रिया का अधिकार ४. वैक्रेय समुद्र्यात से देवता यान विकुर्वे सो साधु जाने ५. साधु वाहिर के पुद्गल ग्रहण कर स्त्री आदि के रूप विकुर्वे ६. साधु वाणा-रसी में समुद्र्यात करके राजगृह का रूप देखे ७. सोम आदि लोकपाल ८. अमुरादि देव के कितने अधि-पति ९. इन्द्रिय का अधिकार १०. चमर की परिपदा का अधिकार ॥ १ ॥ उस काल उस समय में मोया

से उ० युक्त सि० होवे ए० ऐसे गो० गौतम च० चमर अ० अमुरेन्द्र अ० अमुराजा वे० वैक्रय स० समुद्र्यात स० पूरे स० पूरकर सं० संख्यात जो० योजन उ० ऊंचा दं० दंड को नि० निकाले तं० वह ज० जैसे र० रत्न जा० यावत् रि० रिष्ट अ० यथा वा० वादर पो० पुद्गल प० दूरकर अ० यथा सु० सूक्ष्म पो० पुद्गल प० ग्रहणकरे दो० दूनी वक्त वे० वैक्रय स० समुद्र्यात से स० पूरे प० समर्थ गो० गौतम च० चमर अ० अमुरेन्द्र अ० अमुराजा के० केवल कल्प ज० जंबूद्वीप य० बहुत अ० अमुरकुमार दे०

वानाभी अरगाउत्तासिया एवामेव गोयमा ! चमरे असुरिंदे असुरारायात्रे उव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ समोहणइत्ता संखजाणि जोयणाणि उडुंदंडं निसिरइ तंजहा रयणाणं जात्र रिट्ठाणं अहा वायरे पोगले परिसाडेइ परिसाडेइत्ता अहासुहुमे पोगले परियाइयइ, परियाइयइत्ता दोच्चंवित्रे उव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ, पभूणं गोयमा ! चमरे असुरिंदे असुराराया केवलकल्पं

चमर नामक अमुरेन्द्र वैक्रय समुद्र्यात करे. वैक्रय समुद्र्यात करके संख्यात करके ऊंचा दंड करे. बहुत दलवाला व शरीर जितना चौड़ा, जीव प्रदेश व कर्ष पुद्गलों का समुह बनावे. उस में कर्केतनादि विविध

१ यद्यपि कर्केतनादिक रत्नके पुद्गल औदारिक शरीरमय हैं और वक्रय समुद्र्यात वैक्रय पुद्गल ग्रहण करनेसे होती है. परंतु यद्वापर रत्नसार पदार्थ होनेसे कर्केतनादि जैसे पुद्गलों ऐसा अर्थ लेना. कितनेक ऐसामें कहते हैं कि उदारिक पत्ते ग्रहण किये पुद्गल वैक्रय पत्ते परिणमते हैं.

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखंदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी

मलवन्त म० महायशस्वी म० महानुभाग के० कितना प० समर्थ वि० विकुर्वणा करने को गो० गौतम च० चमर अ० अमुरराजा म० महर्दिक जा० यावत् म० महानुभाग से० उन को त० तहां चो० चोत्तीस भ० भुवन स० लक्ष च० चौसठं सा० सामानिक स० सहस्र ता० तेत्तीस ता० त्रायत्रिशक जा० यावत् वि० विचरते हैं ए० ऐसे म० महर्दिक जा० यावत् म० महानुभाग ॥ ३ ॥ प० समर्थ वि० विकुर्वणा करने को से० बह न० जैसे जु० युवति को जु० युवान ह० हाथ मे० ग्रहण करे च० चक्र की ना० नाभी अ० आरा

केवइयंचणं पभू विकुवित्तए ? गोयमा ! चमेरेणं असुरराया महिड्डीए, जाव महानु-
भागे सेणं तत्थ चोत्तीसाए भवणात्रास सय सहस्साणं चउसट्ठीए सामाणिय साहस्सीणं,
तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं जाव विहरइ एवं महिड्डीए जाव महानुभागे ॥ ३ ॥ एवइयं
चणं पभू विकुवित्तए । से जहा नामए जुवति जुवणे हत्थेणं हत्थं गेणहेजा, चक्करस-

यलवाला है, कितना सुखवाला है, कैसा महानुभागवाला है, और किस प्रकार कितने रूप करने को समर्थ है ? अहो गौतम ! चमर नामक अमुरेन्द्र महर्दिक यावत् महानुभागवाला है. उन को चौत्तीस लाख भुवन, चौसठ हजार सामानिक, और तेत्तीस त्रायत्रिशक ऐसी ऋद्धि है ॥ ३ ॥ अब इन की वैक्य करने की शक्ति बतातां हैं. जैसे कामसे पीडित कोई युवान पुरूप अपने हस्त से युवति का हस्त पकड़े, और जैसे चक्र की नाभि को आरे से पूरे अर्थात् चक्र की नाभि के छिद्र में आरा डाले ऐसे ही अश्वे गौतम !

से उ० युक्त सि० होवे ए० ऐसे गो० गौतम च० चमर अ० अमुरेन्द्र अ० असुरराजा वे० वैक्रय स० समुद्रघात स० पूरे स० पूरकर स० संख्यात जो० योजन उ० ऊंचा दं० दंड को नि० निकाले तं० वह ज० जैसे र० रत्न जा० यावत् रि० रिष्ट अ० यथा वा० वादर पो० पुद्गल प० दूरकर अ० यथा सु० सूक्ष्म पो० पुद्गल प० ग्रहणकरे दो० दूनी वक्त वे० वैक्रय स० समुद्रघात से स० पूरे प० समर्थ गो० गौतम च० चमर अ० अमुरेन्द्र अ० असुरराजा के० केवल कल्प जं० जंबूद्वीप च० बहुत अ० असुरकुमार दे०

वानाभी अरगाउत्तासिया एवामेव गोयमा ! चमरे असुरिंदे असुररायावेउव्वियसमुघाएणं

समोहणइ समोहणइत्ता संखजाणि जोजणाणि उडुंदंडं निसिरइ तंजहा रयणाणं जात्र रिट्ठणं

अहा बायरे पोणगले परिसाडेइ परिसाडेइत्ता अहामुहुमे पोणगले परियाइयइ, परियाइयइत्ता

दोच्चंविवेउव्वियसमुघाएणं समोहणइ, पभूणं गोयमा ! चमरे असुरिंदे असुरराया केवलकल्पं

चमर नामक अमुरेन्द्र वैक्रय समुद्रघात करे. वैक्रय समुद्रघात करके संख्यात करके ऊंचा दंड करे. बहुत दलवाला व शरीर जितना चौड़ा, जीव प्रदेश व कर्म पुद्गलों का समुह बनावे. उस में कर्केतनादि विविध

१ यद्यपि कर्केतनादिक रत्नके पुद्गल औदारिक शरीरमय हैं और वक्रय समुद्रघात वैक्रय पुद्गल ग्रहण करनेसे होती है. परंतु यद्वांपर रत्नसार पदार्थ होने से कर्केतनादि जैसे पुद्गलों ऐसा अर्थ लेना. कितनेक ऐसीभी कहते हैं कि उदारिक पने ग्रहण किये पुद्गल वैक्रय पने परिणमते हैं.

क० करे ए० यह गो० गौतम च० चमर अ० असुरेन्द्र अ० असुर राजा का ए० ऐसारूप नि० त्रिपय त्रि० विपय मात्र बु० कहा णो० नहीं सं० संपत्ति वि० विकुर्वणा की वि० विकुर्वणा करे त्रि० विकुर्वणा करेगा ॥ ४ ॥ ज० यदि भं० भगवन् च० चमर अ० असुरेन्द्र अ० असुरराजा ए० इतना म० महद्विक जा० यावत् ए० ऐसे प० त्रिकुर्वितुवां विकुर्वतिवा, विकुर्विस्संतिवा ॥ ४ ॥ जइणं भंते ! चमरे असुरिंदे असुरराया ए महिड्डीए जाव एवइयं चणं पभू विकुर्वित्तए चमररसणं भंते ! असुरिंदरस असुररणो सामाणियदेवा के महिड्डीया जाव केवइयं चणं पभू विकुर्वित्तए ? गोयमा ! चमरस्स असुररणो सामाणिय देवा महिड्डीया जाव महाणुभागा, तेणं तत्थ साणं साणं भवणाणं, साणं साणं सामाणियाणं, साणं साणं अगगमहिसीणं, जात्रं और भी अहो गौतम ! बहुत असुर के देव व देवियों से तिच्छे असंख्याते द्वीप समुद्र को आकीर्ण करने को यावत् परस्पर संश्लेषणा युक्त बनाने को चमर नामक असुरेन्द्र समर्थ है. परंतु इतना रूप बनाने की संपत्ति नहीं है. माघ चमर नामक असुरेन्द्र की इतना वैक्रेय रूप बनाने की शक्ति है. इतने रूप बनाने अतीत काल में नहीं किये हैं, वर्तमान में नहीं करते हैं और आगामिक में नहीं करेंगे ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! जब चमर नामक असुरेन्द्र की इतनी क्रुद्धि यावत् इतना वैक्रेय रूप करने की शक्ति है तो उनके सामानिक देवकी कितनी क्रुद्धि व कितनी शक्ति है अर्थात् वे कितने वैक्रेय रूप करने को शक्तिवंत हैं.

रातः के भ० भुवन सा० स्वतः के सा० सामानिकदेव सा० स्वतः की अ० अग्रमहिषी जा० यावत्
 द्वि० हीव्य भो० भोग भु० भोगवते वि० विचरते हैं ॥ ५ ॥ अ० असुरेन्द्र के ता० त्रार्यत्रिशक देव ज०
 केवलकल्पं जंबूद्विंदीविं बहूहि असुरकुमारहिं देवेहिं देवीहिय आइण्णं वित्तिकिण्णं
 उवत्थडं संथडं फुडं अरगाढावगाढं करेत्तए ॥ अदुत्तरं च णं गोयमा ! पभू चमरस्स
 असुरिदस्स असुररण्णो एगमेगे सामाणियदेवे तिरियमसंखजे दीव समुदे बहूहि असुर
 कुमारेहिं देवेहिं देवीहिय आइण्णे वित्तिकिण्णे उवत्थडे संथडे फुडे अरगाढावगाढे
 करेत्तए, एसणं गोयमा ! चमरस्स असुरिदस्स असुररण्णो एगमेगस्स सामाणिय देवस्स
 अयमेयारूवे तिसए तिसयमेत्ते बुइए, णोचवणं संपत्तीए, विकुच्चिसुवा, विकुच्चित्तिवा,
 विकुच्चिस्संत्तिवा ॥ ५ ॥ जइणं भंते ! चमरस्स असुरिदस्स असुररण्णो सामाणिय

संपूर्ण जम्बूद्वीप को व्याप्त, विशेष व्याप्त, आच्छादित, यावत् प्रगट करने को शक्तिवंत हैं जैसे ही तिच्छं
 असंख्यात द्वीप समुद्र को व्याप्त यावत् प्रगट करने को शक्तिवंत हैं. अहो गौतम ! चपरेन्द्रके सामानिक का
 मात्र यह विषय कहा परंतु उन को इतनी संपत्ति नहीं होने से उन्होंने अतीत कालमें इतने वैक्रेय किया नहीं
 वर्तमानमें करते नहीं हैं. और आगामिकमें करोंगे भी नहीं ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! चपरेन्द्रके सामानिक इतने महाद्विक

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुबदेवसहायजी जालापसादजी *

सन्तर्ध वि०त्रिकुर्वणा करने को च० चमरेन्द्र का अ० अमुरेन्द्र अ०अमुर राजा का सा० सामानिक दे० देव के० कितना म० महार्दिक जा० यावत् के० कितना प० समर्थ वि० त्रिकुर्वणा करने को गो० गौतम च० चमरं के अ० अमुर राजा के सा० सामानिक देव म० महार्दिक जा० यावत् म० महाजुभाग सा० दिव्वाइं भोगभोगाईं भुंजमाणा विहरंति, एवं महिड्डीया जाव एवइयंचणं पभू त्रिकु-
 चित्तए । से जहा नामए जुवइ जुवाणे हत्थेणं हत्थं गणहेजा, चक्कस्सवा नाभी
 अरया उत्तासिया एवामेव गोयमा ! चमरस्सवि असुरिंदस्स असुररणो एगमेगे
 सामाणिए देवे वेउव्विय समुग्घाएणं समोहणइ २ ता जाव देच्चंपि वेउव्विय समुग्घा
 एणं समोहणइ पभूणं गोयमा ! चमरस्स असुरिंदस्स असुररणो एगमेगे सामाणिए

अहो गौतम ! चमर नामक अमुरेन्द्र, असुरराजा के सामानिकदेव चमरेन्द्र जैसे महाशक्तिवंत यावत् महाजुभाग वाले हैं. वे अपने २ भवन, सामानिक अग्रनिधियो वंगरह के दीव्य सुख भोगवते हुये रहते हैं. और जिस प्रकार कामेपीडित युवान पुरुष अपने हस्तसे युवती का हस्त ग्रहण करता है, अथवा जैसे चक्रकी नाभी में आरा निविड रहता है, वैसे ही चमर नामक अमुरेन्द्र के सामानिक देव वैक्रय समुद्रवात करे. उस में से निस्तार चादर पुद्गलों को छोडकर सूक्ष्म पुद्गलों ग्रहण कर इच्छित रूप बनाने को दूसरा वैक्रय रूप बनाये. और अहो गौतम ! वे एक २ सामानिक देव असुर कुपार के बहुत देव देवियों के रूप बनाकर

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

देवी के० कितनीं म० महाद्विक ज० जैसे लो० लोकपाल अ० अवशेष स० वह ए० ए०से भं० भगवन् ॥ ७ ॥
 भ० भगवान् दो० दूसरा गो० गौतम स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर को वं० वंदना कर न०
 असुररणो भंते अगमहिंसीओ देवीओ के महिद्वीयाओ जाव केवइयंचणं पमू विउ-
 वित्तए? गोयमा ! चमरस्सणं असुरिंदस्स असुररणो अगमहिंसीओ देवीओ महिद्वीयाओ
 जाव महणुभागाओ, ताओणं तत्थ साणं साणं भवणणं, साणं साणं च सामाणिय
 साहस्सीणं, साणं साणं महत्तरियाणं, साणं साणं परिसाणं जाव महिद्वीयाओ अण्णं जहा लो-
 गपालाणं, अपरिसंसं ॥ सेवं भंते २ ! त्ति ॥ ७ ॥ भगवं दोच्चे गोयमे समणं भगवं महावीरं
 वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसइत्ता जेणेव तच्चे गोयमे वायुमूई अणगारे तेणेव उवाग-
 सकती है ? अहो गौतम ! चमरेन्द्र की अग्रमहिपियों महा ऋद्धिवाली यावत् गहानुभागवाली हैं. वे

अपने २ भुवन्, अपने २ सामानिक देव, अपनी २ महत्तरिक देवियों, अपनी २ परिषदा की ऋद्धि-
 वाली हैं वगैरह लोकपाल जैसे सब अधिकार कहना. इतना सुनकर गौतम गोत्रीय दूसरे गणधर श्री
 अभिभूति बोले कि अहो भगवन् ! जो आप कहते हैं वह सत्य है. जैसा आपका कथन है वैसा ही
 वस्तुस्वरूप है ॥ ७ ॥ इतना कहकर, श्री श्रमण भगवंतको वंदना नमस्कार करके अभिभूतिने तीसरे गणधर गौतम
 गोत्रीय श्री वायुभूति की पास आकर कहा कि अहो- गौतम ! चमर नामक असुरेन्द्र की ऋद्धि

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

जैसे सा० सामानिक त० तैसे ण० जानना लो० लोकपाल त० तैसे न० विशेष सं० संख्यात दी० द्वीप स० समुद्र मा० कहना व० वहुत अ० असुर कुमार से आ० आकीर्ण जा० यावत् वि० विकुर्वणा करेगें ॥ ६ ॥
 ज० यदि च० चमर के अ० असुरेन्द्र अ० असुर राजाके लो० लोकपालदेव म० महर्दिक अ० अग्रमहिषी देवाए महिड्वीया जात्र एवइयंचणं पभू विकुव्वित्तए । चमरस्सणं भंते ! असुरिंदस्स असुररण्णो तावत्तीसया देवा केमहिड्वीया, वत्तीसया जहा सामाणिया तथा णेयव्वा ॥
 लोयपाला तहेव, नवरं संखेजा दीवसमुदा भाणियव्वा, बहुहिं असुरकुमारेहिं २ आइण्णे जात्र विउव्विस्संतिवा ॥ ६ ॥ जइणं भंते ! चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो लोगपाला देवाए महिड्वीए जात्र एवइयंचणं पभू विकुव्वित्तए, चमरस्सणं असुरिंदस्स यावत् महासुभागवाले वैभे ही इतने वैक्रेय करने की शक्तिवाले हैं तब चमरेन्द्र के त्रायत्रिंशक कितने महर्दिक यावत् कितने वैक्रेय करनेवाले हैं. अहो गौतम ! जैसे सामानिक का कहा जैसे ही त्रायत्रिंशक का जानना. और इसीतरह लोकपाल का जानना. मात्र इतना विशेष है की इसमें संख्याते द्वीप समुद्र लेना. त्रायत्रिंशक व लोकपाल संख्याते द्वीप समुद्र को असुर कुमार के देव व देवियों में व्याप्त करने को समर्थ है ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! जब चमर नामक असुरेन्द्र के लोकपाल इतने महर्दिक यावत् इतने वैक्रेय करने को शक्तिवंत हैं तब चमरेन्द्र की अग्रमहिषियों कितनी ऋद्धिवाली हैं और कितने रूप वैक्रेय बना

देवी के० कितनीं प० महाद्विक ज० जैसे लो० लोकपाल अ० अवशेष स० वह ए०से भं० भगवन् ॥ ७ ॥
 प० भगवान् दो० दूसरा गो० गौतम स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर को वं० वंदना कर न०
 असुररणो भंते अगमहिंसीओ देवीओ के महिद्वीयाओ जाव केवइयंचणं पभू विउ-
 व्वित्तए? गोयमा ! चमरस्सणं असुरिदस्स असुररणो अगमहिंसीओ देवीओ महिद्वीयाओ
 जाव महाणुभागाओ, ताओणं तत्थ साणं साणं भवणार्णं, साणं साणं च सामाणिय
 साहस्सीणं, साणं साणं महत्तरियाणं, साणं साणं परिसाणं जाव महिद्वीयाओ अण्णं जहा लो-
 गपालाणं, अपरिसेसं ॥ सेवं भंते २ ! त्ति ॥ ७ ॥ भगवं दोच्चे गोयमे समणं भगवं महावीरं
 वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसइत्ता जेणव तच्च गोयमे वायुभूई अणगारे तेणव उवाग-
 सकती हैं ? अहो गौतम ! चमरेन्द्र की अग्रमहिपियों महा ऋद्धिवाली यावत् गहानुभागवाली हैं. वे
 अपने २ भुवन, अपने २ सामानिक देव, अपनी २ महत्तरिक देवियों, अपनी २ परिपदा की ऋद्धि-
 वाली हैं वगैरह लोकपाल जैसे सब अधिकार कहना. इतना सुनकर गौतम गोत्रीय दूसरे गणधर श्री
 अग्निभूति बोले कि अहो भगवन् ! जो आप कहते हैं वह सत्य है. जैसा आपका कथन है वैसा ही
 वस्तुस्वरूप है ॥ ७ ॥ इतना कहकर, श्री श्रमण भगवंतको वंदना नमस्कार करके अग्निभूतिने तीसरे गणधर गौतम
 गोत्रीय श्री वायुभूति की पास आकर कहा कि अहो गौतम ! चमर नामक असुरेन्द्र की ऋद्धि

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

नमस्कारकर जेः जहाँ तं तीसरा गो० गौतम वा० वायुभूति अ० अनगार ते० तहाँ उ० आकर तं तीसरा गो० गौतम वा० वायुभूति अ० अनगार को ए० एभा व० कहा ए० ऐसे ख० निश्चय गो० गौतम च० चमर अ० असुरेन्द्र अ० असुर राजा म० महाद्विक तं० उमको ए० ऐसे स० सर्व अ० विना पूछे या० कथन ने० जानना अ० संपूर्ण जा० यावत् अ० अग्रमहिषी व० वक्तव्यता स० संपूर्ण ॥ ८ ॥ तं० तव से०-वह तं० तीसरा गो० गौतम वा० वायुभूति अ० अनगार को दो० दूसरा गो० गौतम अ० अग्निभूति अ० अनगार ए० ऐसे आ० कहतेको भा० बोलते को प० विशेष कहतेको प० प्ररूपते को ए० यह अर्थ च्छइ र ता, तच्चं गोयमं वायुभूइ अणगारं एवं वयासी एवं खलु गोयमा ! चमरे

असुरिंदे असुरराया ए महिद्वीए तंचेव एवं सच्चं अपुठुं वागरणं नेयच्चं अपरिसेसं

जाव अगमहिंसीणं वत्तव्वया सम्मत्ता ॥८॥ तएणं से तच्चं गोयमे वायुभूइ अणगारं

दोच्चंसं गोथमरस अग्निभूंयस्स अणगारस्स एव माइवखमाणस्स भासमाणस्स पण-

वेमाणरस पस्सेमाणरस एयमठुं नो सदहइ नो पत्तियइ, नो रोयइ; एयमठुं असदह-

यावत् वैक्रय करनेकी इतनी शक्ति है. यावत् अग्रमहिषियोंतकका सब अधिकार ऐसा है. इस तरह जैसे भगवन्तने फरमाया था वैसा संपूर्ण अधिकार वायुभूति अनगारको कहा ॥ ८ ॥ इस तरह अग्निभूतिने जो कहा उस के अर्थ की श्रद्धा, प्रतीति व रुचि वायुभूति अनगार को हुई नहीं और श्रद्धा प्रतीति व रुचि नहीं होने से

नो० नहीं स० श्रद्धा नो० नहीं प० प्रतीत हुआ नो० नहीं रो० रुचा उ० स्थान से उ० उठकर ज०
 माणे, अपत्तियमाणे, अरोएमाणे उट्टाए उट्टेइ उट्टेइत्ता, जेणेव समणे भगवं महा-
 वीरे तेणेव जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी—एवं खलु भंते ! मम दोचे गोयमे अ-
 गिग्भूई अणगारे एवमाइक्खइ भासइ पणवइ परूवइ एरूइत्ता, एवं खलु गोयमा !
 चमरे असुरिंदि असुराया ए महिद्धीए जाव महाणुभागे. सेणं तत्थ चोत्तीसाए भवणा-
 वास सयसहस्साणं तंचेव सब्बं अपरिसेसं भाणियब्बं जाव अग्गमहिसीओ वत्तव्वया
 सम्मत्ता ॥ से कहमेयं भंते ! एवं ? गोयमादि समणे भगवं महावीरे तच्चं गोयमं
 थाउभूई अणगारं एवं वयासी—जणणं गोयमा ! तव दोचे गोयमे अग्गिभूई अणगारे
 अपने स्थान से उठकर श्रमण भगवंत महावीर स्वामी की पास गये. वहां जाकर वंदना नमस्कार यावत्
 पर्युपासनांतर ऐसा बोले अहां भगवन् ! मुझ दूसर गौतम गौत्रीय अग्निभूति नामक अनगर ऐसा कहे हैं.
 यावत् प्ररूते हैं कि चमर नामक असुनेन्द्र महद्धिक यावत् महानुभागवाले हैं. चौत्तीस लाख भुवन के
 मालिक हैं वेगरेह अग्रमहिपियों तक सब संपूर्ण अधिकार कहा और पूजा कि अहां भगवन् ! यह किम
 तरह है ? फीर श्रमण भगवंत महावीर स्वामीने वायुभूति अनगर को ऐसा कहा कि अहां गौतप ! तुम को
 दूसरे गौतम गौत्रीय अग्निभूति अनगरने ऐसा कहा कि चपरेन्द्र महद्धिक यावत् महानुभागवाले हैं यावत्

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

नमस्कारकर जेः जहां तं तीसरा गो० गौतम वा० वायुभूति अ० अनगार ते० तहां उ० आकर तं
तीसरा गो० गौतम वा० वायुभूति अ० अनगार को ए० ऐमा व० कहा ए० ऐसे ख० निश्चय गो०
गौतम च० चपर अ० असुरेन्द्र अ० असुर राजा म० महाद्विक तं० उमको ए० ऐसे स० सर्व अ० विना
पूछे वा० कथन ने० जानना अ० संपूर्ण जा० यावत् अ० अग्रमहिषी व० वक्तव्यता स० संपूर्ण ॥ ८ ॥
त० तत्र से० वह तं तीसरा गो० गौतम वा० वायुभूति अ० अनगार को दो० दूसरा गो० गौतम अ०
अग्निभूति अ० अनगार ए० ऐसे आ० कहतेको भा० चोलते को प० विशेष कहतेको प० प्ररूपते को ए० यह अर्थ
च्छइ र त्ता, तच्चं गौयसं वायुभूति अणगारं एवं त्रयासी एवं खलु गौयसा ! चमरे
असुरिदि असुराराया ए महिद्वीए तंचेव एवं सब्वं अपुट्टं वागरणं नेयव्वं अपरिसेसं
जाव अगमहिसीणं वच्चव्वया सम्मत्ता ॥८॥ तएणं से तच्चे गौयमे वायुभूति अणगारं
दोच्चस्स गोथमस्स अग्निभूयस्स अणगारस्स एव माइक्खमाणस्स भासमाणस्स पण-
वेमाणस्स परुवेमाणस्स एयमट्ठं नो सद्वहइ नो पत्तियइ, नो रोयइ; एयमट्ठं असद्वह-
यावत्तं क्रयं करनेकी इतनी शक्ति है. यावत् अग्रमहिषीयोंतक का सब अधिकार ऐसा है. इस तरह जैसे भगवन्तने
करपाया था वैसा संपूर्ण अधिकार वायुभूति अनगारको कहा ॥ ८ ॥ इस तरह अग्निभूतिने जो कहा उस के
अर्थ की श्रद्धा, प्रतीति व रुचि वायुभूति अनगार को हुई नहीं और श्रद्धा प्रतीति व रुचि नहीं होने से

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

अज्ञानक-वाचस्पत्योपाध्यायः

त० तव से० वह त० ती० रा गो० गौतम वा० वायुभूति अ० अनगर दो० दूसरा गो० गौतम अ०
 अग्निभूति अ० अनगर की स० साथ जे० जहां स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर जा० यावत् प०
 पूजते ए० ऐसे व० बोले ज० यदि भं० भगवन् च० चमर अ० असुरेन्द्र अ० असुर राजा म० महर्द्धिक
 ना० यावत् प० समर्थ वि० विकुर्षणा करने को व० वलेन्द्र भं० भगवन् व० वैरोचन व० वैरोचनराजा के० कितना
 म० महर्द्धिक ज० जैसे च० चमर का त० तैसे व० वलेन्द्र का ने० जानना ण० विशेष सा० अधिक के०
 से तच्चे गोयमे वायुभूती अणगारे दोच्चेणं गोयमेणं अग्निभूइणा अणगारेण सद्धिं
 जेणेव समणे भगवं महावीरे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी जइणं भंते चमरे
 असुरिंदे असुरराया ए महिड्डीए जाव एवइयं च णं पभू विकुव्वित्ताए । वलीणं भंते !
 वइरोयणिंदे वइरोयणराया केमहिड्डीए जाव केवइयंचणं पभू विकुव्वित्ताए ? गोयमा !
 बलीणं वइरोयणिंदे वइरोयणराया महिड्डीए जहा चमररस तहा बलिस्सत्ति णेयव्वं
 की पास गये और वंदना नमस्कार यावत् पर्युपासना कर ऐसा बोले. अहो भगवन् ! चमर नामक असु-
 रेन्द्र इतना महर्द्धिक यावत् इतने वैक्रियरूप करने को शक्तिंत है तो बलि नामक वैरोचनेन्द्र कितना महर्द्धिक
 यावत् कितने वैक्रिय करनेको शक्तिंत है ? अहो गौतम ! जैसा चमरेन्द्रका कहा वैसा ही बलि नामक वैरोचनेन्द्र
 का जानना. विशेष इतना कि यह देव देवियों से कुछ अधिक जम्बूद्वीप भरे, शेष सब पूर्वोक्त जैसे

शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ ()

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

जहां म० श्रमण म० भगवन्त म० महावीर ते० तहां जा० यावत् प० पूजते ए० ऐसा व० बोले ॥ ९ ॥

एवमाइक्खइ ४ । एवं खलु गोयमा ! चमरे असुरिदे असुररायामहिड्डुए सोचिव सव्वं जाव अगमाहिसीओ । सच्चेणं एसमट्ठे, अहंपिणं गोयमा ! एवमाइक्खामि भासामि पण्णवेमि पल्लवेमि एवं खलु गोयमा ! चमरे असुरिदे असुरराया महिड्डुए सो चैव त्रि-
तिओ गमो भाणियल्लो ! जाव अगमहिसीओ सच्चेणमेसअट्ठे, सेवं भंते भंते ! त्ति ।
तच्चै गोयमे वायुभूइ अणगारे समणं भगवं वंदइ वंदइत्ता जेणव दोच्चे गोयमे आग्गि-
भूती अणगारे तेणव; उवागच्छइ उवागच्छइत्ता दोच्चं गोयमं अग्गिभूइ अणगारं
वंदइ नमंसइ नमंसइत्ता, एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जा भुज्जा खामेइ ॥ ९ ॥ तएणं

अग्रमहिषियों तक का सब अधिकार ऐसा है. अहो गौतम ! यह अर्थ सत्य है. और मैं भी ऐसा ही कहता हूँ यावत् परूपता हूँ. और यह अर्थ भी सत्य है. अहो भगवन् ! आपका वचन सत्य है ऐसा कह-
कर वायुभूति अनगर भगवन्त श्री महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार कर अग्निभूति नामक दूसरे गणधर
की पास आये आकर दूसरे गणधर श्री अग्निभूति को वंदना नमस्कार कर कहने लगे कि मैंने आप के
वचन सुनकर श्रद्धे नहीं यावत् आप के वचन की प्रतीति की नहीं. इसलिये मैं आपकी पुनः पुनः क्षमा
याचना हूँ ॥ ९ ॥ फीर अग्निभूति अनगर की साथ वायुभूति अनगर श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी

त० तव से० वह त० ती० रा गो० गौतम वा० वायुभूति अ० अनगार दो० दूसरा गो० गौतम अ०
 अग्निभूति अ० अनगार की स० साथ जे० जहाँ स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर जा० यावत् प०
 पूजते ए० ऐसे व० बोले ज० यदि भं० भगवन् च० चमर अ० असुरेन्द्र अ० असुर राजा म० महर्द्धिक
 जा० यावत् प० समर्थ त्रि० विकुर्वणा करने को व० बलेन्द्र भं० भगवन् व० वैरोचन व० वैरोचनराजा के० कितना
 म० महर्द्धिक ज० जैसे च० चमर का त० तैसे व० बलेन्द्र का ने० जानना प० विशेष सा० अधिक के०
 से तच्चे गोयमे वायुभूती अणगारे दोच्चेणं गोयमेणं आग्निभूइणा अणगारेण साद्धिं
 जेणेव समणे भगवं महावीरे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी जइणं भंते चमरे
 असुरिंदे असुरराया ए महिड्डीए जाव एवइयं च णं पभू त्रिकुव्वित्तए । वलीणं भंते !
 वइरोयणिंदे वइरोयणराया केमहिड्डीए जाव केवइयंचणं पभू त्रिकुव्वित्तए ? गोयमा !
 वलीणं वइरोयणिंदे वइरोयणराया महिड्डीए जहा चमररस तहा बल्लिस्सति णेयव्वं
 की पास गये और वंदना नमस्कार यावत् पर्युपासना कर ऐसा बोले. अहो भगवन् ! चमर नामक असु-
 रेन्द्र इतना महर्द्धिक यावत् इतने वैक्रेयरूप करने को शक्तिंत है तो बलि नामक वैरोचेन्द्र कितना महर्द्धिक
 यावत् कितने वैक्रेय करनेको शक्तिंत है ? अहो गौतम ! जैसा चमरेन्द्रका कहा बैसा ही बलि नामक वैरोचेन्द्र
 का जानना. विशेष इतना कि यह देव देवियों से कुछ अधिक जम्बूद्वीप भरे, शेष सब पूर्वोक्त जैसे

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(सूत्रार्थ) (भावार्थ)

व० वैरोचनेन्द्र व० वैरोचन राजा म० महर्दिक प० समर्थ जा० यावत् वि० विकुर्वणा करने को ध० धरणेन्द्र ना० नागकुमारेन्द्र ना० नागकुमार राजा के० कितना म० महर्दिक जा० यावत् के० कितना प० समर्थ वि० विकुर्वणा करने को गां० गौतम म० महर्दिक जा० यावत् त० तहां चो० चौवालीस भ० भुवन स० लाख छ० छ सा० सामानिक स० सहस्र ता० तेचीस ता० त्रयात्रिंशक च० चार लो० लो-

यणराया ए महिड्डीए पभू जाव विउव्वित्तए धरणेणं भंते ! नागकुमारिंदे नाग-
 कुमारया केमहिड्डीए जाव केवइयं चणं पभू विउव्वित्तए ? गोयमा ! महिड्डीए जाव
 सेणं तत्थ चोयालीसाए भवणवाससयसहस्साणं छण्हं सामाणिय साहंस्सीणं,
 तावचीसाए तावचीसगाणं चउण्हं लोगपालाणं, छण्हं अग्गमहिसीणं सवरिवाराणं,
 तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं; चउवीसाए आयरक्ख-

करने को समर्थ है ? अहो गौतम ! धरण नामक नाग कुमारेन्द्र को ४४ लाख भुवन, छ हजार सामानिकदेव तेचीस त्रयात्रिंशक, चार लोकपाल, परिवार सहित छ अग्रमहिपियों, तीन परिपदा, सात अनिक, सात अनिक के अधिपति, चौवीस हजार आत्मरक्षक देव और अन्य भी अनेक प्रकार के देवों की ऋद्धि है. और जैसे काम पीडित पुरूप युवती का निरंतर हस्त ग्रहण कर रहता है या गाडे की नाभी में आंरा रहता है वैसे ही नाग कुमार रत्नादिक सार पुद्गलों को ग्रहण कर दैत्रेय बन्धे. उस में से बादर पुद्गलों

वदार्थ

सूत्र

भावार्थ

(संस्कृत) (संस्कृत) (संस्कृत) (संस्कृत) (संस्कृत)

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवनारायणजी ज्वालाप्रसादजी *

केवल कल्प जं० जंबूद्वीप भा० कहना से० शेष तं० तैसे णि० निर्विशेष णे० जानना णा० नाना प्रकार
जा० ज्ञानना भ० भवन सा० सामानिक से स० वह ए० ऐसे भं० भगवन् तं० तीसरे गो० गौतम वा०
वायुभूति अ० अनगार वि० विचरते हैं ॥ १० ॥ तं० तव दो० दूसरे गो० गौतम अ० अग्निभूति
अ० अनगार स० श्रमण भ० भगवन्त को वं० वंदना कर ए० ऐसा व० बोले ज० यदि व० बलि व०

णवरं साइरंगं केवलकल्पं जंबूद्वीपं भाणियन्वं, सेसंतंचत्र णिवसेसं णेयन्वं, णवरं
णाणत्तं जाणियन्वं, भवणेहिं, सामाणिण्हिं सेवं भंते ! चि, तच्चे गोयमे वायुभूती
अणगारे जाव विहरइ ॥ १० ॥ तएणं से दोच्चे गोयमे अग्निभूई अणगारं संसणं
भगवं महावरिं वंदइ वंदइत्ता एवं वयासी, जइणं भंते ! बली वइरोयण्हिं वइरो-

जानना. बलि नामक वैरोचन्द्र को तीस लाख भुवन व साठ सहस्र सामानिक देवता जानना. अहो
भगवन् ! जैसे आप कहते हैं, वैते ही हैं. इस तरह सुनकर वंदना नमस्कार करके श्री वायुभूति अनगार
विचरने लगे ॥ १० ॥ पुनः अग्निभूति नामक अनगारने श्रमण भगवंत महावीर को वंदना नमस्कार करके
ऐसा प्रश्न पूछा कि अहो भगवन् ! बलि नामक वैरोचन्द्र इतना महर्द्धिक यावत् इतने वैक्रेय रूप करने
को समर्थ है तव अहो भगवन् ! धरणेन्द्र नामक नाग कुमारेंद्र कितना महर्द्धिक यावत् कितने वैक्रेय रूप

दक्षिण का स० सर्व अ० अभिभूति पु० पूछे उ० उत्तर का स० सर्व वा० वायुभूति पु० पूछे ॥१२॥ मं० भगवन् ति० ऐसे भ० भगवन्त भो० गौतम दो० दूसरा अ० अभिभूति अ० अनगर स० श्रमण म० भगवन्त को वं० वंदना कर न० नमस्कारकर ए० ऐसे व० बोले ज० यदि मं० भगवन् जो० ज्योतिषी राजा म० महर्दिक जा० यावत् प० समर्थ वि० विकुर्वणा करने को स० शक्रेन्द्र मं० भगवन् दे० देवेन्द्र दे० देव राजा के० कितना म० महर्दिक जा० यावत् के० कितना प० समर्थ वि० विकुर्वणा करने को पुच्छइ, उत्तरिल्ले सब्बे वायुभूई पुच्छइ ॥१२॥ भंतोति भगवं गोयमे दोच्चे आग्निभूई अणगारे समणं भगवं वंदइ नमंसइ नमंसइत्ता, एवं वयासी जइ णं भंते ! जोइसिंदे जोइसराया ए महिड्डीए जाव एवइयंचणं पभू विउवित्तए सक्केणं भंते ! देविंदे देवराया के महिड्डीए जाव केवइयं चणं पभू विकुवित्तए ? गोयमा ! सक्केणं देविंदे देवराया माहिड्डीए जाव महाणुभागे सेणं वत्तीसाए विमाणवात्त संय सहस्साणं, चउरासीए अभिभूतिने पूछा है ॥ १२ ॥ पुनः अभिभूति नामक गणधर प्रश्न करते हैं कि अहो भगवन् ! जब ज्यो-तिषीका इन्द्र इतनी ऋद्धिवाला यावत् इतना वैक्रय कर सकता है तब शक्रेन्द्र कितनी ऋद्धिवाला यावत् कितना वैक्रय कर सके ? अहो गौतम ! शक्रेन्द्र को बत्तीस लाख विमान, चौरासी हजार सामानिक उस से चौगुने आत्मरक्षक, और अन्य भी परिवार कहा है. वैक्रय करने की शक्ति वगैरह चमरेन्द्र जैसे

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादेजी *

कपाल छ० छ अ० अग्रमहिषी स० परिवार सहित ति० तीन प० परिपदा स० सात अनिक स० सात अनिक के अधिपति च० चौबीस आ० आत्मरक्षक देव सा० सहस्र अ० अन्य जा० यावत् वि० विचरते है० ॥ ११ ॥ ए० ऐसे जा० यावत् थ० स्थानित कुमार वा० वाणव्यंतर जो० ज्योतिषी ण० विशेष दा०

देव सांहरसीणं, अक्षेसिच जाव विहरद, एवइयंचणं पभू विउव्वित्तए । से जहा नामए जुवइ जुवाणे जाव पभू केवलकप्पं जंबूदीवं दीवं जाव तिरियं संखजे दीव समुद्रे बहूहि नाग कुमारीहि जाव विउव्विसंतिवा । सामाणिय तावचीस लोगपाल, अगमहिसीओय तहेव जहा चमरस णवरं संखजे दीवसमुद्रे भाणियव्वं ॥ ११ ॥ एवं जाव थाणियकुमारा ॥ वाणसंतर जोइसियावि, णवरं दाहिणिल्ले सव्वे अंगिभूई

को छोड़कर दूसरी वक्त वैक्रय बनावे और एक लाख योजन का जम्बूद्वीप यावत् तिच्छे संख्याते द्वीप समुद्र को देव देवियों के नवनिरूप बनाकर भर देवे. इनके सामानिक, त्रायत्रिंशक, लोकपाल व अग्रमहिषियों का चमरेन्द्र जैसे जानना. इस में संख्याते द्वीप समुद्र पूरे उतने वैक्रय रूप बनाने की शक्ति है वैसा कहना ॥ ११ ॥ ऐसे ही शेष सब भुवनपति वाणव्यंतर व ज्योतिषि का जानना. इस में इतना अधिक जानना कि उच्चर दिशाके देवता संबंधी प्रश्न वायुभूतिये पूजा है और दक्षिण दिशा संबंधी सब प्रश्न

शब्दार्थ सूत्रार्थ

दक्षिण का सः सर्व अ० अग्निभूति पु० पूछे उ० उत्तर का सः सर्व वा० वायुभूति पु० पूछे ॥१२॥ भं० भगवन् ति० ऐसे भ० भगवन्त गो० गौतम दो० दूसरा अ० अग्निभूति अ० अनगार स० श्रमण भ० भगवन्त को वं० वंदना कर न० नमस्कारकर ए० ऐसे व० बोले ज० यदि भं० भगवन् जो० ज्योतिषी राजा म० महर्दिक जा० यावत् प० समर्थ वि० विकुर्वणा करने को स० शक्रेन्द्र भं० भगवन् दे० देवेन्द्र दे० देव राजा के० कितना म० महर्दिक जा० यावत् के० कितना प० समर्थ वि० विकुर्वणा करने को पूच्छइ, उत्तरिल्ले सव्ने वायुभूई पुच्छइ ॥१२॥ भंतैरि भगवं गोयमे दोच्चे अग्निभूई अणगारे समणं भगवं वंदइ नमंसइ नमंसइत्ता, एवं वयासी जइ णं भंते ! जोइसिंदे जोइसराया ए महिड्डीए जाव एवइयंचणं पभू विउवित्तए सक्केणं भंते ! देविंदे देवराया के महिड्डीए जाव केवइयं चणं पभू विकुवित्तए ? गोयमा ! सक्केणं देविंदे देवराया महिड्डीए जाव महाणुभागे सेणं बत्तीसाए विमाणवात्त संय सहस्साणं, चउरासीए अग्निभूतिने पूछा है ॥ १२ ॥ पुनः अग्निभूति नामक गणधर प्रश्न करते हैं कि अहो भगवन् ! जत्र ज्यो- तिषीका इन्द्र इतनी ऋद्धिवाला यावत् इतना वैक्रेय कर सकता है तत्र शक्रेन्द्र कितनी ऋद्धिवाला यावत् कितना वैक्रेय कर सके ? अहो गौतम ! शक्रेन्द्र को बत्तीस लाख विमान, चौरासी हजार सामानिक उससे चौगुने आत्मरक्षक, और अन्य भी परिवार कहा है. वैक्रेय करने की शक्ति वगैरह चमरेन्द्र जैसे

छठ भक्त से अ० अंतर रहित त० तप कर्म से अ० आत्मा को भा० भावने हुवे व० बहुत प० प्रतिपूर्ण अ० आठवर्ष सा० दीक्षा पर्याय पा० पालकर मा० मासकी सं० संलेखना से अ० आत्मा को शू० झूसकर स० साठ भक्त अ० अनशन छे० छेदकर आ० आलोच कर प० प्रतिक्रमणकर स० समाधि प्राप्त का० काल के अवसर० में; का० काल करके सो० सौधर्म देवलोक में स० अपने वि० विमान में उ० उपपात सक्के देविदे देवराया ए महिद्वीए जात्र एवइयं चणं पभृत्रिकुवित्तए एवं खलु देवा-
णुप्यियाणं अंतेवासी तीसएनामं अणगारे पगइमइए जात्र विणीए छट्टं छट्टेणं आणि-
विखत्तेणं तवो कस्सेणं अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुण्णाइं अट्ट संवच्छराइं साम-
णपरियागं पाउणित्ता, मासियाए संलेहणाए अग्गाणं झूसित्ता, सठिभत्ताइं अण-
सणाए छेदित्ताइं अणसणाए छेदित्ता, आलोइय पडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे का-
पूर्ण आठ वर्ष तक साधु की पर्याय पालकर, एक मास की संलेखना से आत्मा को झौंस कर, साठ भक्त अनशन करके, आलोचना प्रतिक्रमण करके समाधि प्राप्त हुए; और काल के अवसर में काल करके सौ-
धर्म देवलोक में तिष्यक नामक विमान में उपपात सभा की देवशैय्या में देव दृष्य वस्त्र नीचे अंगुल के असंख्यातत्रे भाग प्रमाण की अवगाहना से शक्रेन्द्र देवेन्द्र के सामानिक देवतापने उत्पन्न हुए; वहां उत्पन्न होकर आहार पर्याप्ति, शरीर पर्याप्ति, इन्द्रिय पर्याप्ति; श्वासोश्वास पर्याप्ति व भाषा मन पर्याप्ति ऐसी पांच

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

मनःपर्याप्ति तं तत्र ती० तिष्यकदेव को पं० पांच प्रकार की प०पर्याप्ति के प०पर्याप्तिके भाव को, ग०गये हुये सा० सामानिक प० परिपदा में उ० उत्पन्न हुये दे० देव क० कारतल प० जोडकर द० दशनख सि० शिर्षसे आ० आर्तन म० मस्तक से अं० अंजली करके ज० जय वि० विजय से व० वधाकर ए० एसा

दिव्वादेवजुत्ती, दिव्वे देवाणुभावे, लद्धे पत्ते अभिसमणणाए जारिसाणं देवाणुप्पि-
एहि दिव्वा देविट्ठी, देवजुत्ती, दिव्वे देवाणुभावे लद्धे पत्ते अभिसमणणाए, तारि-
सियाणं सक्केणं देविदेणं देवरणो दिव्वादेविट्ठी जाव अभिसमणणाया, जारिसिणं सक्केणं देवि-
देणं देवरणो दिव्वादेविट्ठी जाव अभिसमणणाया, तारिसियाणं देवाणुप्पिएहि दिव्वा-
देविट्ठी जाव अभिसमणणाया सेणं भंते तीसए देवे के महिट्ठीए जाव केवइयं चणं
पभू विक्कुच्चिए ? गोथमा ! महिट्ठीए जाव महाणुभागे, सेणं तत्थ सयस्स
त्रिमाणस्स चउण्हं सामाणिय साहस्सीणं चउण्हं अगमहिसीणं तिण्हं
परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं, सोलसण्हं आयरक्खेव
साहस्सीणं, अण्णेसिंच बहूणं वेमाणियाणं देवाणय जाव विहरइ, ए महि

वोरण है वैसे ही आप को है. अहो भगवन् ! ऐसा तीसक नामक देवता कितनी ऋद्धियाला याव
कितने रूप वैक्य करने को समर्थ है ? अहो गौतम ! वह अपने विमान चार हजार सामानिक
देवता, चार अग्रमहिषियों, तीन परिपदा, सात अनिक, सात अनिक के अधिपति, सोलह हजार आत्म-

सभा में दे० देवैश्या में दे० देवदृष्य के अंतर में अं० अंगुल के अ० असंख्यातवे भा० भाग मात्र ओ० अवगाहना स० शक्रेन्द्र के दे० देवेन्द्र दे० देवराजा के सा० सामानिक दे० देवपने उ० उत्पन्न हुवा त० तब ती० तिष्यकदेव अ० लुते का उ० उत्पन्न हुवा पं० पांच प्रकार की प० पर्याप्ति से प० पर्याप्ति भाव को ग० जावे आ० आहार पर्याप्ति स० शरीर इ० इन्द्रिय आ० श्वासांश्वास पर्याप्ति भा० भाषा

लंकिचा सोहस्मे कप्ये सयंसि त्रिमाणंसि उववायसभाए देवसयणिजंसि देवदूसंतरिए अंगुलरस असंखेज भागमेत्तीए ओगाहणाए, सक्रस्स देविंदरस देवरणो सामाणिय देवत्ताए उववण्णे । तएणं तीसए देवे अहुणोव वण्णमेत्ते समाणे पंचविहाए पज्जुत्तीए पज्जत्ति भावं गच्छइ तंजहा आहारपज्जत्ती सरीर इंदिय आणापाणपज्जत्तीए, भासामणपज्जत्तीए । तएणं तं तीसयं देवं पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तभावं गयं समाणं सामाणिय परिसोव वण्णया देवया करयल परिगार्हियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अजलिं कट्टु जएणं विजएणं बद्धावेइ बद्धावेइत्ता एवं वयासी अहेणं देवाणुप्पिएहि दिव्वं देविट्ठी,

पर्याप्ति से पर्याप्त बने. उन पर्याप्त बने हुवे देव को सामानिक परिषदावाले देवोंने हस्तद्वय जोडकर दश नख एकत्रित करके मस्तक को आवर्तन करके " जय-विजय " शब्दों से वधाये. वधाकर ऐसा बोले अहो ! आप देवानुप्रिय को दीव्य देव ऋद्धि, देवद्युति, व देवानुभाव प्राप्त हुवा है. जैसे आप को दीव्यदेव ऋद्धि, युति व महानुभाव है वैसे ही शक्रेन्द्र को है; और जैसे शक्रेन्द्र को दीव्य देव ऋद्धि कांति

मनःपर्याप्ति तं तत्र ती० तिल्यकदेव को पं० पांच प्रकार की प०पर्याप्ति के प०पर्याप्तिके भाव को, ग०गये हुवे सा० सामानिक प० परिपदा में उ० उत्पन्न हुवे दे० देव क० करतल प० जोडकर द० दशनख सि० शिर्षसे आ० आदर्तन म० मस्तक से अं० अंजली करके ज० जय वि० विजय से व० वधाकर ए० ऐसा

दिव्वादेवजुत्ती, दिव्वे देवाणुभावे, लद्धे पत्ते अभिसमणणाए जारिसाणं देवाणुप्पि-
एहिं दिव्वा देविट्ठी, देवजुत्ती, दिव्वे देवाणुभावे लद्धे पत्ते अभिसमणणाए, तारि-
सियाणं सक्केणं देविदेणं देवरणो दिव्वादेविट्ठी जाव अभिसमणणागया, जारिसिणं सक्केणं देवि-
देणं देवरणो दिव्वादेविट्ठी जाव अभिसमणणागया, तारिसियाणं देवाणुप्पिएहिं दिव्वा-
देविट्ठी जाव अभिसमणणागया सेणं भंते तसिए देवे के महिट्ठीए जाव केवइयं चणं
पभू विक्कुच्चिए ? गोयसा ! महिट्ठीए जाव महाणुभागे, सेणं तत्थ सयस्स
विमाणस्स चउण्हं सामाणिय साहस्सीणं चउण्हं अगमहिसीणं तिण्हं
परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं, सोलसण्हं आयरक्खेदेव
साहस्सीणं, अण्णेसिंच बहूणं वेमाणियाणं देवाणय जाव विहरइ, ए महि

वगैरह है वैभे ही आप को है, अहो भगवन् ! ऐसा तीसक नामक देवता कितनी ऋद्धिवाला यावत् कितने रूप वैक्रेय करने को समर्थ है ? अहो गौतम ! वह अपने विमान चार हजार सामानिक देवता, चार अग्रमहिषियों, तीन परिपदा, सात अनिक, सात अनिक के अधिपति, सोलह हजार आत्म-

समर्थ वि० विकुर्वणा करने को स० शक्र के अ० अशेष सा० सामानिक दे० देव के० कितने म० महद्विक त० तैसे स० सर्व जा० यावत् ए० यह गो० गौतम स० वह ए० ऐसे भं० भगवन् ति० ऐसे दो० दूसरे गो० गौतम जा० यावत् वि० विचरते हैं ॥ १५ ॥ भं० भगवान् स० तीसरा गो० गौतम वा० वायुभूति अ० सनगर स० श्रमण भ० भगवन्त जा० यावत् ए० ऐसा व० बोले ज० यदि भं० भगवन् स० शक्र दे० देवेन्द्र दे० देवराजा जा० यावत् प० समर्थ वि० विकुर्वणा करनेको ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे० विसए विसयमेत्ते बुइए णोचेवणं संपत्तीए विकुन्विसुवा ३ तावत्तीसया, लोगपाला, अगमहिंसीणं, जहेव चमरस्स णवरं दो केवलकण्णे जंबूद्वीत्रे दीत्रे अण्णं तंचेव ॥ सेवं भंते भंते स्ति दोच्चे गोयमे जात्र विहरइ ॥ १५ ॥ भंते त्ति भगवं तच्चे गोयमे वायुभूती अणगारे समणं भगवं जात्र एवं वयासी जइणं भंते ! सक्के देविंदे देवराया जात्र माहिंठीए एवइयं चणं पम् विकुन्वित्तए । ईसाणेणं भंते ! देविंद देव- शक्र, लोकपाल, अग्रमहिपी का अधिकार चमरन्द्र जैसे कहना. परंतु ये दो जम्बूद्वीप वैक्रय रूप से भरने को समर्थ हैं. अहो भगवन् ! आपके वचन वैसे ही हैं ऐसा कहकर अग्निभूति अनगर विचरने लगे ॥ १५ ॥ अब वायुभूति नामक अनगर श्रमण भगवंत महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार कर ऐसे बोले कि अहो भगवन् ! जब शक्रेन्द्र इतनी ऋद्धिवाले हैं यावत् इतने रूप वैक्रय कर सकते हैं तब ईशा-

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

व० बोले अ० अहो दे० देवानुमिय दि० दीव्य दे० देवकृद्धि दे० देवश्रुति दि० दीव्य देवानुभाव ल० लब्ध प०
प्राप्त अ० सन्मुख हुवे ॥ १४ ॥ ज० यदि भं० भगवन् ती० त्रिप्यकदेव म० महर्दिक जा० यावत् म०

होए जाव एवइयं चणं पभू विकुञ्चित्तए, से जहानामए जुवइ जुवाणे हत्थे गेण्हेजा,
जहेव सक्कस्स तहेव जाव एसणं गोयमा ! तीसयस्स देवस्स अयमेयारुत्वे
विसए विसयमेत्ते बुच्चइ, नो चेवणं संपत्तीए विकुञ्चित्तुवा ३ ॥ १४ ॥ जइणं
भंते तीसए देवे महिद्धीए जाव एवइयं चणं पभू विकुञ्चित्तए । सक्कस्सणं भंते !
देविदस्स देवरणो अत्रसेसा सामाणिया देवा के महिद्धीया तहेव सव्वं जाव एसणं
गोयमा ! सक्कस्स देविदस्स देवरणो एगमेगस्स सामाणियस्स देवस्स इमेयारुत्वे.

रक्षक देव, और बहुत अन्य देवता का स्वामी है और वैक्रीय करने की शक्ति शक्रेन्द्र जितनी है. यह
प्रात्र विषय परंतु इननी संपत्ति नहीं है ॥ १४ ॥ अहो भगवन् ! जब त्रिप्यक नामक देवता इतना मह-
र्दिक यावत् इतने वैक्रीय रूप करने को शक्तिवंत है तब अन्य सामानिक देव कितने महर्दिक यावत्
कितने वैक्रीय रूप करने को समर्थ हैं ? अहो गौतम ! शक्रेन्द्र के एक २ सामानिक देव त्रिप्यक देव
जितनी कृद्धिवाले हैं. और वैक्रीय का विषय त्रिप्यक देव जितना है परंतु इतनी संपत्ति नहीं है. इतने
रूप अतीत काल में किये नहीं, वर्तमान में करते नहीं हैं और आगामिक में करेंगे नहीं. उन के त्रायात्रि-

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ



ब्रह्मदेवलोक ण० विशेष अ० आठ ए० एभे लं० लंतक ण० विशेष सा० अधिक अ० आठ
के० संपूर्ण म० महाशुक सो० सोलह स० सहस्रार में ता० अधिक सो० सोलह ए० ऐसे पा०
सणकुमाराओ आरू उवरिह्वा, लोगपाला सव्वेवि असंखजे दीवसमुदे विकुव्वति
एवं माहिंदेवि, णवरं साइरेगे चत्तारि केवलकप्पे जंबूहीत्रि दीवे एवं बंभलोएवि,
णवरं अट्टकप्पे ॥ एवं लंतएवि, णवरं साइरेगे अट्ट केवलकप्पे महासुक्के सोलस

व अन्यदेव हैं + ऐसेही इनके सामानिक देव, त्रायत्रिंशक, लोकपाल व अग्रभहिवियों असंख्यात द्वीप समुद्र,
वैक्रोय रूप से भरने को समर्थ हैं। भाहेन्द्र चार जम्बूद्वीप से कुछ विशेष वैक्रोयरूप से भरने को समर्थ है,
ब्रह्मेन्द्र आठ जम्बूद्वीप भरने को समर्थ है, लांतक साधिक आठ जम्बूद्वीप भरने को समर्थ है, महाशुक
सोलह जम्बूद्वीप भरने को समर्थ है, सहस्रारेन्द्र साधिक सोलह जम्बूद्वीप भरने हैं। आणत प्राणत
वचीस जम्बूद्वीप और आरण अच्युत साधिक वचीस जम्बूद्वीप भरने को समर्थ है। अन्य सब अधिकार
पहिले जैता है परंतु मथक् २ ऋद्धि बताते हैं। सौधर्म देवलोक में वचीस लाख, ईशान देवलोक में अठा-

+ सनत्कुमार नामक तीसरे देवलोकसे आगे देविऑकि उत्पत्ति नहीं है। तथापि प्रथम देवलोककी अपरि
ग्रही देवी एकसमयधिक पल्योपम से दश पल्योपमकी स्थिति वाली वारह वे देवलोक के देवोंको
उपभोगमें आती है इससे यहां उसका प्रतिषेध नहीं किया है।

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

ता० त्रयोविंशक लो० लोकपाल अ० अग्रमहिषी जा० यावत् वि० विकुर्वणा की ॥ १८ ॥ ए० ऐसे स० सनत्कुमार
ण० विशेष च० चार के० संपूर्ण जं० जंबूद्वीप अ० अथवा ति० तिच्छा अ० असंख्यात ए० ऐसे
सा० सामानिक ता० त्रयोविंशक लो० लोकपाल अ० अग्रमहिषी अ० असंख्यात दी० द्वीप समुद्र स०
सर्व वि० विकुर्वे स० सनत्कुमार से उ० उपर के लो० लोकपाल स० सर्व अ० असंख्यात दी० द्वीप समुद्र वि०
विकुर्वे ए० ऐसे मा० माहेन्द्र ण० विशेष सा० अधिक च० चार के० संपूर्ण जं० जंबूद्वीप वं०
तंचेव ॥ १७ ॥ एवं सामाणिय तावत्तीसग लोगपाल अगमहिसीणं जाव एसणं
गोयमा ! ईसाणरस देविदस्स देवरण्णो, एगंमेगाए अगमहिसीए देवीए अयंमेयाख्वे
विसए विसयमेत्ते बुइए । णो चेवणं संपत्तीए विकुर्विचसुना ॥ १८ ॥ एवं सणं कुमारेवि
णवरं चत्तारि केवल कल्पे जंबूद्वीवे दीवे अदुत्तरं चणं, तिरिय मसंखेजे ॥ एवं सामा-
णिय, तावत्तीसग लोगपाल, अगमहिसीणं, असंखेजे दीवे समुहे सब्बे विकुर्वन्ति
त्रायविंशक, लोकपाल, व अग्रमहिविषीं का जानना. और वैक्रेय का विषय भी उतना ही जानना. परंतु
इतनी संपत्ति नहीं है ॥ १८ ॥ जैसे ईशानेन्द्र का कहा वैते ही सनत्कुमारेन्द्र का जानना. विशेष इतना
कि सनत्कुमार चार जंबूद्वीप मंमाण वैक्रेय रूप से भरने को समर्थ है. असंख्यात द्वीप समुद्र भरने की
शक्ति है परंतु मंप्यत्ति नहीं है. इस में बारह लाख विमान, चहत्तर हजार सामानिक, चौगुने आत्परसक,

ब्रह्मदेवलोक ण० विशेष अ० आठ ए० ऐसे लं० लंतक ण० विशेष सा० अधिक अ० आठ
के० संपूर्ण म० महाशुक्र सो० सोलह स० सहस्रार में सा० अधिक सो० सोलह ए० ऐसे पा०
सणकुमाराओ आरद्ध उवरिह्वा, लोगवाला सच्चिवि असंख्ये दीवसमुद्दे विकुव्वंति
एवं माहिदेवि, णवरं साइरेगे चत्तारि केवलकण्ये जंबूद्वीपे दीवि एवं वंभलोएवि,
णवरं अट्टकण्ये ॥ एवं लंतएवि, णवरं साइरेगे अट्ट केवलकण्ये महासुक्के सोलस

व अन्यदेव हैं. + ऐसेही इनके सामानिक देव, त्रायत्रिंशक, लोकपाल व अग्रमाहियिओं असंख्यात द्वीप समुद्र
वैक्रैय रूप से भरने को समर्थ हैं. माहेन्द्र चार जम्बूद्वीप से कुछ विशेष वैक्रैयरूप से भरने को समर्थ है,
ब्रह्मेन्द्र आठ जम्बूद्वीप भरने को समर्थ है, लांतक साधिक आठ जम्बूद्वीप भरने को समर्थ है, महाशुक्र
सोलह जम्बूद्वीप भरने को समर्थ है, सहस्रारेन्द्र साधिक सोलह जम्बूद्वीप भरने हैं. आणत माणत
वचीस जम्बूद्वीप और आरण अच्युत साधिक वचीस जम्बूद्वीप भरने को समर्थ है. अन्य सब अधिकार
पहिले जैसा है परंतु प्रथक् २ ऋद्धि बताते हैं. सौर्यम देवलोक में वचीस लाख, ईशान देवलोक में अठा-

+ सनत्कुमार नामक तीसरे देवलोकसे आगे देविऑकि उत्पत्ति नहीं है. तथापि प्रथम देवलोककी अपरि
ग्रही देवी एकसमयधिक पल्योपम से दश पल्योपमकी स्थिति वाली वारह वे देवलोक के देवोंको
उपभोगमें आती है इससे यहाँ उसका प्रतिषेध नहीं किया है.

विचरने लगे ॥ १९ ॥ त० तव स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर अ० कोई वक्त मो० मोया न० नगरी के न० नंदन चे० उद्यान से प० निकलकर व० वाहिर ज० अन्य देश में वि० विचरने लगे ॥ २० ॥ ते० उस काल ते० उस समय में रा० राजगृह न० नगर हो० था व० वर्णनवाला जा० यावत् प० परिपदा प० पूजते ते० उस काल ते० उस समय में ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे० देवराजा सू० सूल पा० हस्त में व० वृषभ वा० वाहन वाले उ० उत्तरार्ध लोक के अ० अधिपति अ० अठवीस वि० विमान स० लक्ष के

॥ १९ ॥ तएणं समणे भगवं महावीरे अणण्या कयाइं मोयाओ नगरीओ नंदणाओ

चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमइत्ता वहिया जणवय विहारं विहरइ ॥ २० ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नयरे होत्था वण्णओ जाव परिसा पज्जुवासइ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं ईसाणे देविंदे देवराया सूलपाणी, वसहवाहणे, उत्तरइ-

लो ॥ १९ ॥ एकदा श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी मोया नामक नगरी के नंदन नामक उद्यान में से विचरने लगे ॥ २० ॥ अब ईशानेन्द्र के पूर्व भव का तामली तापसका अधिकार कहते हैं. उस काल उस समय में राजगृह नामक नगर था. वहाँ श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामी पधारे. परिपदा बंदन करने को आई. उस काल उस समय में हस्त में सूलका आयुध धारन करनेवाले, घृषभ का वाहन वाले, उत्तर के ऊर्ध्व दिशा के स्वामी, अठाइस लाख विमान के अधिपति, रजरहित वस्त्र धारन करनेवाले,

भगवन्त म० महावीर को वं० वंदनाकर व० बोले अ० अहो भं० भगवन् ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे० देवराजा म० महर्द्धिक ई० ईशान की भं० भगवन् सा० वह दि० दीव्य दे० देवर्द्धिक क० कहां ग० गइ क० कहां अ० प्रवेश हुई गो० गौतम स० शरीर में ग० गइ से० यह के० कैसे भं० भगवन् ए० ऐसा दु० कहा जाता है स० शरीर में ग० गइ से० वह ज० जैसे कू० कूटागार सा० शाला सि० हेवे दु० यु० कहा लि० लिप्त गु० गुप्त गु० गुप्तद्वार णि० वायुविना की नि० वायुरहित गंभीर ती० उस कू० दोनो वायु लि० लिप्त गु० गुप्त गु० गुप्तद्वार णि० वायुविना की नि० वायुरहित गंभीर ती० उस कू०

ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ २ त्ता एवं वयासी अहोणं भंते !

ईसाणे देविंदे देवराया महिहूीए, ईसाणस्सणं भंते ! सा दिव्वा देविहूी कहिं गते कहिं अणुप्पविट्ठे ? गोयमा ! सररींगए ॥ सेकेणट्ठणं भंते ! एवं बुच्चइ सररींगए ? गोयमा !

से जहा नामए कूडागार साला सिया, दुहओ लिच्चा, गुत्ता, गुत्तदुच्चार णिच्चाया,

वंदना नमस्कार कर ऐसा पूछा कि अहो भगवन् ! ईशानेन्द्र देवताने जो ऐसी महा ऋद्धि बताई थी. वह ऋद्धि पीछी कहां गई ? अहो गौतम ! शरीर में गइ. अहो भगवन् ! किम तरह से यह ऋद्धि शरीरमें गई ? अहो भगवन् ! जैसे कोई कूटागारशाला होवे इस के दोनों पास लीपा हुआ होवे और उस के द्वार भी गुप्त होवे. वायु का संचार इस में नहीं हो सकता होवे. ऐसी कूटागार शाला की बाहिर बहुत जन-समुदाय एकत्रित हुआ होवे और मेघममुख होता देखकर सब मनुष्यों उस कूटाशाला में चले जाते से

* प्रकाशक-राजावहापुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अ० अधिपति अ० रजरहित व० श्रेष्ठ व० वस्त्र ध० पहीनने वाले आ० रहाँहुई मा० माला म० मुकुट
न० नवा हे० सुवर्ण चा० सुंदर चि० चित्ता चं० चंचल कुं० कुंडल वि० अंकित होंते गं० गंडस्थल जा०
यावत् द० दशदिशा में उ० उद्योत करते प० प्रकाश करते ई० ईशान देवलोक ई० ईशान व० वर्डिशक
वि० विमान च० जहां रायप्रसेणी में जा० यावत् दी० दिव्य दे० देव ऋद्धि जा० यावत् जा० जिस
दि० दिशिसे पा० आये ता० उसदिशि में प० गये ॥ २१ ॥ म० भगवान् गो० गौतम स० श्रमण म०

लोगाहिबई, अट्टाचीस विमाण वास समयसहस्साहिवई, अर्यंत्रवत्थरे, आलईय
माल मउडे नत्रहेम चारु चित्तचल चंचल कुंडल त्रिलिहिजमाणगंडे जात्र दसदिसाओ
उज्जोत्रेमाणे पभासेमाणे, ईसाणेकण्ये, ईसाणत्रडिसए विमाणे जहेत्र रायप्पसेणइजे
जात्र दिव्वं देविहिं जात्र जामेत्र दिसि पाउब्भए तामेत्रदिसि पडिगए॥ २१ ॥ भंते !

पथायोग्य स्थान पर माला, मुकुटवाले, नविन सुवर्ण के मनोहर व चित्त समान चंचलकुंडल की रेशायुक्त
गंडस्थल वालेयावत् दशदिशि में उद्योत करनेवाले ईशानेन्द्र ईशान देवलोकके ईशान वर्डिशक नामक विमा
न में रहते हूँ वगैरह सब अधिकार रायप्रसेणि सूत्र में जैसे सूर्याम देवता का कहा, वैसे ही यहां कहना.
ऐसी सब ऋद्धि सहित भगवंत को वंदना नमस्कार करने को आये. मनोज्ञ दीव्य देव ऋद्धि, कान्ति, प्रभाव
वगैरह गौतमादि साधुओं को वंताकर पीछे गये ॥ २१ ॥ उस समय में गौतम स्वामीने श्री भगवन्त को

पंचमाह विवाह पण्णाति (भगवतो) सूत्र

मा० माहण की अं० पास ए० एक आ० आर्य ध० धर्म का सु० सुवचन सो० सुनकर नि० अवधारकर
ज० जिससे ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे० देवराजा की सा० वह दि० दीव्य दे० देवऋद्धि जा० यावत् अ०
सन्मुख हुइ ॥ २३ ॥ गो० गौतम ते० उस समय में इ० इस जं० जंबूद्वीप में भा० भरत क्षेत्र में ता०
ताम्रलिप्ती न० नगरी हो० धी व० वर्षान युक्त त० तदां वा० ताम्रलिप्ती न० नगरी में ता० तामली ना०
नाम का मो० मौर्यपुत्र गा० गाथापति हो० था अ० ऋद्धिर्बंत दि० दिस जा० यावत् व० बहुत मनुष्यों

अतिए एगामवि आयरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा, निसम्म जणं ईसाणेणं
देविदेणं देवरणा सा दिव्वा देविद्धी जाव अभिसमण्णागया ? ॥ २३ ॥ एवं
खलु गोथमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूद्वीवे दीवे भारहे वासे तामलि-
त्तीनामं णयरी होत्था, वण्णओ । तत्थणं तामलित्तीए नयरीए तामलीनामं मोरिय-

लेखनादि समाचारी की, अथवा कौत्से तयात्थ्य श्रमण माहण की पास एकान्त आर्य धर्म श्रवण कर
अवधारकर ऐसी ईशानेन्द्र की दीव्य ऋद्धि द्युति वगैरह प्राप्त की ? ॥ २३ ॥ अहो गौतम ! उस काल
उस समय में जंबूद्वीप नामक द्वीप के भरत क्षेत्र में ताम्रलिप्ती नामक नगरी थी. उस नगरी में मौर्य पुत्र
तामली नामक गाथापति रहता था. वह गाथापति बहुत ऋद्धिर्बंत, दीप्त यावत् अन्य जनों से अपराभूत

श्री जमोलक ऋषिः श्री श्री अनुवादक-बालभद्राचार्यः

से अ० अपराजित हो० था० ॥ २४ ॥ त० तव त० उस मो० मौर्यपुत्र ता० तामलि गा० गाथापति अ० कोइ वक्तं पु० पुर्वसाधि अ० अपराधि का० वक्तं मे० कु० कुटुंब जा० चिंता जा० करते ए० इसरूप अ० आत्मचितवन जा० यावत् स० उत्पन्न हुआ अ० है पु० पूर्व के पी० पुराणा सु० सुचारितरूप सु० अच्छा पराक्रम रूप सु० शुभ क० कल्याणरूप क० किये क० कर्म के क० कल्याण कारी फ० फल वि० विशेष जे० जिग से अ० मैं हिं० चादी से सु० सुवर्ण से ध० धन से घ० धान्य से पु० पुत्र से प० पशु पुत्रे गाहावई होत्या, अहे वित्ते जाव बहुजणरस अपरिभूए यावि होत्या ॥ २४ ॥

तएणं तरस मोरियपुत्तस तामलिसस गाहावइरस अणया कयाइं पुव्वरत्तावरत्तकाल समयंसि, कुटुंबजागरियं जागरमाणरस इमेएयास्त्वे अब्भत्थिए जाव समुत्पण्णे, अत्थि तामि पुरा पौराणाणं सुत्तिण्णाणं सुत्परिक्रंताणं सुभाणं, कक्खाणाणं, कड्डाणं कम्मणं, कक्खाणफलवित्तिसेसो, जेणाहं हिरण्णेणं वड्डामि, सुवण्णेणं वड्डामि, धण्णेणं वड्डामि, धण्णेणं वड्डामि, पुत्तहिंच, पसूहिंच वड्डामि, विउल, धण, कणग था ॥ २४ ॥ एवदा तामली गाथापति को मध्यसाधि मे० कुटुम्ब जागरणा जागतै हुवे ऐसा अन्धवसाय हुआ कि मेने गतकाल मे० पूर्व जन्म मे० दानादि सुकृत किये है, तपश्चराणादि किये है, इस से ऐसे शुभ कल्याणकारी कर्म के अच्छे फल सुखे हो रहे हैं. और इस से मेरे हिरण्य, सुवर्ण, धन, धान्य बढ़ रहे हैं

* मकार्थक-सामान्यर अथवा सुविशेषवशात् यथा ज्योतिषमन्त्रो

पंचमांग-विवाह पण्णात्ते (भगवती)

से व० दृढिपाता हूं वि० विपुल ध० धन क० कनक र० रत्न प० मणि मो० मौक्तिक सं० शंख सि० शिला प० प्रवाल र० रक्त र० रत्न सं० विद्यमान सा० अच्छा सा० द्रव्य से अ० अतीव अ० दृढिपाता हूं जा० जहांग म० मुझे मि० मित्र ना० ज्ञाति नि० स्वजाति सं० संबंधि प० परिवार आ० आदर करते हैं प० अच्छा जाने-स० सत्कारकरे स० सन्मानदेवे क० कल्याण कारी मं० मांगलीक दे० देव वि० विनय से चे० ज्ञानवन्त प० पूजते हैं ता० वहांग म० मुझे से० श्रेय क० काल पा० प्रभात में र० रजनी रयण, मणि, मोत्तिय संख, सिलफवाल, रत्न, रयण, संतसारसायएजेणं, अर्देव अर्देव अभिवहुामि. तं किणं अहं पुरा पौराणाणं सुचिण्णाणं जाव कडाणं कम्माणं एणंत सेक्खयं उवेहमाणे विहरामि तं जाव अहं हिरण्णेणं वहुामि, जाव अर्देव २ अभिवहुामि, जावं चमे मित्तानाद्द नियग संबंधि परियणो आटाद्द परियाणाद्द, सक्कारेद्द सम्माणेद्द, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, त्रिणएणं, चेद्दयं पज्जुवासेद्द, ताव तामे सेयं कल्लं वैसे ही पुत्र पशु यौरह से भैं बहरहा हूं. और विपुल धन, कनक, रत्न, मणि, मौक्तिक, शंख, शिला, यौरह श्रेष्ठ द्रव्य मुझे बहुत २ बहरहा है. इस से भैं पूर्व के संबंधि किये हुवे शुभ कर्मो को एकान्त क्षय करता हुवा विचरता हूं. अब जहांगल मुझे मेरे मित्र, ज्ञाति, संबंधि परिजन आदर देते हैं, स्वामी तरीके मानते हैं, सत्कार करते हैं, सन्मान देते हैं, कल्याणकारी, मांगलीक, देवता समान पूजा करते हैं वहांगल

श्री अमोलक कापीजी मुनि श्री अमोलक-बालप्रसन्नचारी

से अ० अपरजित हो० था० ॥ २४ ॥ त० तव त० उस मो० मौर्यपुत्र ता० तामलि गा० गाथापाति अ० कोद वक्तं पु० पुर्वरात्रि अ० अपरात्रि का० वक्त में कु० कुटुंब जा० चिंता जा० करते ए० इसरूप अ० आत्मचिंतवन जा० यावत् स० उत्पन्न हुआ अ० है पु० पूर्व के पी० पुराणा सु० सुचारितरूप सु० अच्छा पराक्रम रूप सु० शुभ क० कल्याणरूप क० किये क० कर्म के क० कल्याण कारी फ० फल वि० विशेष जे० जिन से अ० मैं हि० चांदी से सु० सुवर्ण से ध० धन से य० धान्य से पु० पुत्र से प० पशु पुत्ते गाहावई होत्था, अई दिते जाव बहुजणसस अपरिभूए यावि होत्था ॥ २४ ॥

तएणं तरस मोरियपुत्तासस तामलिस्स गाहावइरस अणया कयाइं पुत्तरत्तावरत्तकाल समयंसि, कुटुंबजागरियं जागरमाणसस इमेएयारूवे अब्भत्थिए जाव समुत्पण्णे, आत्थि तामे पुरा पोरमाणं सुच्चिण्णाणं सुपरिकंताणं सुभाणं, कक्खाणाणं, कड्डाणं कम्भाणं, कक्खाणफलवित्तिवित्सेसो, जेणाहं हिरण्णेणं वड्डामि, सुवण्णेणं वड्डामि, धण्णेणं वड्डामि, धण्णेणं वड्डामि, पुत्तेहिंच, पसूहिंच वड्डामि, विट्ठल, धण, कणगा

या ॥ २४ ॥ एकदा तामली गाथापाति को मध्यरात्रि में कुटुम्ब जागरणा जागते हुवे ऐसा अध्यवसाय हुआ कि मैंने गतकाल में पूर्व जन्म में दानादि सुकृत किये हैं, तपश्चराणादि किये हैं, इस से ऐसे शुभ कल्याणकारी कर्म के अच्छे फल मुझे हो रहे हैं, और इस से मेरे हिरण्य, सुवर्ण, धन, धान्य बढ़ रहे हैं

* मकशक-रात्रि-वह-दर-जाला-मुख-वस-य-ज-बाल-मस-भ-भ *

पंचमांग विवाह पण्यति (भवगती)

पा० पण्यप पा० पर्वर्तमे प० पर्वर्तको पा० पर्वर्तबा हुआ ए० इसरूप, अ० अभिग्रह अ० ग्रहण कर्त्तृगा क० कल्पता है मे० मुझे जा० यावज्जीव छ० छट भक्त से अ० अंतर रहित त० तप कर्म से उ० ऊर्ध्व वा० बाहु प० करके म्० सूर्याभिमुख आ० आतापनाभूमि में आ० आतापनालेता त्रि० विचरने को छ० छट के पारणे में आ० आतापना भूमि से उ० नीकलकर स० स्वयं दा० काष्ठ के प० पात्र ग० ग्रहण कर ता० तान्त्रिलिप्ती न० नगरी में ऊंच नी० नीच म० मध्यम कु० कुल के प० गृह समुदाय में भि० भिक्षाचरी के आपुच्छिता सथमेव दारुमयं पडिगहं गहाय मुंडे भविता, पाणामाण पत्वज्जाए, पत्वइत्तए, पत्वइएवियणं समाणे इमं एयारुवं आभिगहं आभिगिण्हिस्सामि, कएइ मे जावज्जीवाए छट्टं छट्टेणं अनिक्रवत्तेणं तवो कस्सेणं, उहुं वाहाओ पणिउच्चिय पणिउच्चिय मुराभिमुहस्स आयावणभूमीए, आयावेमाणस्स विहरित्तए, छट्टस्सवियणं पारणयंसि आयावणभूमीओ पच्चोहहिता, सथमेव दारुमयं पडिगहं गहाय तामालि- त्तिए णयरीए उच्चणीयमउच्चिमाइ कुलाइं वरसमुदाणरस भिक्खवायरियाए अडेत्ता। मुझे श्रेय है. इस तरह प्रसर्ज्या अंगीकार क्रिये पीछे छट २ का निरंतर तप करके ऊंचे बाहु से आ- नापना भूमि में आतापना लेना मुझे श्रेय है. वैसे ही छट भक्त के पारणे के दिन उस आतापना भूमि से नीकलकर काष्ठमय पात्र लेकर तान्त्रिलिप्ती नगरीमें उच्च, नीच, मध्यम कुलमें बहुत बरोंके समुदाय में फिरकर

सूत्र (भगवती) पण्णात्ति विवाह

कर अ० अल्प म० मोंये अ० अलंकृतकर स० शरीर भो० भोजन वक्त में भो० भोजन का मंडप में सु० शुभासन पे ग० वैदे त० तव मि० मित्र णा० ज्ञाति नि० स्वजन सं० संबंधि प० परिवार स० ताथ क्रियसरिरे, भोयणनेलाए भोयणमंडवंसि सुहासणवरगाए. तएणं मित्तनाइ नियगा सयण संबंधि परियणेणं सद्धिं तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणे विसाएमाणे परिसाएमाणे परिभुंजेमाणे निहरइ ॥ जेमिय भुत्तरागाएवियणं सभाणे आयंते चोक्खे परमसुइभए तं मित्तं जाव परियणं विउलेणं वत्थगंधमक्खालंकरेणय सक्कारेइ, सक्कारेइत्ता तरसेवामित्तनाइ जाव परियणरस पुरओ जेट्टपुत्तं कुट्टेवे टावेइ र ता तं मित्तनाइ जाव परियणं जेट्टपुत्तं च आपुच्छइ रत्ता मुंडे भवित्ता, पाणासाए अल्पभार व बहुत मूल्यवाले आभूषणों से शरीर अलंकृत किया, भोजन तैयार होने पर स्वजन मित्रजन की साथ भोजन मंडप में प्रवेश कर शुभसिंहासनपे बैठकर मित्रादि सब की साथ विपुल निपजयि हुए अशनादि स्वयं आस्वादेते व अन्य को परुसते विचार रहे हैं. इस प्रकार जीमकर उपर जो कुछ भोगवना था उसे भोगवकर पानी के कुड़े कर शुद्ध वने. फिर बहुत वस्त्र गंध व मालाअलंकार से आये हुए स्वजनादि का सत्कार सम्मान किया और सब स्वजन मित्र ज्ञाति प्रमुख की सन्मुख ज्येष्ठ पुत्र को कुट्टम्भ में स्थापित किया. फिर ज्ञाति स्वजन व ज्येष्ठ पुत्र को पूँजकर मुंड वनकर प्रणाम नाम की प्रवर्ज्या अंगीकार कर

पंचमाह

शुभसिंहासनपे बैठकर मित्रादि सब की साथ विपुल निपजयि हुए अशनादि स्वयं आस्वादेते व अन्य को परुसते विचार रहे हैं. इस प्रकार जीमकर उपर जो कुछ भोगवना था उसे भोगवकर पानी के कुड़े कर शुद्ध वने. फिर बहुत वस्त्र गंध व मालाअलंकार से आये हुए स्वजनादि का सत्कार सम्मान किया और सब स्वजन मित्र ज्ञाति प्रमुख की सन्मुख ज्येष्ठ पुत्र को कुट्टम्भ में स्थापित किया. फिर ज्ञाति स्वजन व ज्येष्ठ पुत्र को पूँजकर मुंड वनकर प्रणाम नाम की प्रवर्ज्या अंगीकार कर

ॐ अनुवादक-वाल्मिल्यासी मुनि श्री अमोलक ऋषिणी ॐ

लिये अ० विचारां सु० शुद्ध ओदन ए० ग्रहणकर ति० तीन स० सात वक्त उ० पानी से प० धोकर त० पीछे आ० आहार करने को ति० ऐसा क० करके सं० विचार करे ॥ २५ ॥ सं० विचारकर क० काल प० प्रयात में जा० यावत् ज० सूर्य उदित होते भ० स्वयं दा० काष्ठ का प० पात्र का० करके वि० विपुल अ० अशन पा० पान खा० खादिम सा० स्वादिम उ० नीपजाकर त० पीछे पहा० स्नान किया क० पीठिलगाइ क० कोगले किये पा० तीलमसादि किये सु० शुद्ध भं० मांगलीक व० वस्त्र प० पहन सुदोदणं पडिगाहेत्ता, तं तिसत्तकवृत्तो उदणं पकवालेत्ता, तत्रोपच्छा आहारं आहारि-
रित्त्तए तिकट्टु, एत्रं संपेहइ ॥ २५ ॥ संपेहेइत्ता॥ कक्षं पाउष्पाभायाए जाव जलंते
सयमेव दासमयं पडिगाहयं कारेइ कारेइत्ता विउलं असणं पाणं स्वाइसं साइसं उव-
ववडावेइ, उवक्खवाडावेइत्ता, तत्रो पच्छा पहाए कयवालिक्कभमे, कयकोउयमंगाल-
पायाच्छित्ते, सुद्धपावेसाइं मंगलाइं वरथाइं पवर परिहिए, अत्पमहरवाभरणात्तं-
एत साकादि रहित शुद्ध ओदन ग्रहण करके फीर उते इक्कीस वक्त पानी से धोकर उस का आहार
करना मुझे श्रेय है ॥ २५ ॥ इस प्रकार का विचार करके सूर्योदय होते काष्ठमय पात्र वनवाया और
अशन, पान, खादिम व स्वादिम जैसे चारों आहार निपजाये. पीछे स्नान किया, पीठी प्रमुख का
विलेपन किया, पानी के कोगले किये, तिक्रमसादि शुभ चिन्ह किये और शुद्ध मांगलिक वस्त्र पहिने.

* मकोशक-राजशुद्धर खला सुवद्वेषमहायज्ञी खलाप्रसिद्धी *

पंचमाह विवाह पण्णात्त (भगवती) सूत्र

कर अ० अल्प म० मीये अ० अलंकृतकर स० शरीर भो० भोजन वक्त में भो० भोजन का मंडप में सु० शुभासन पे ग० वैद्ये त० तव मि० मित्र णा० ज्ञाति नि० स्वजन सं० संबंधि प० परिवार स० ताय क्रियसरिरे, भोयणत्तेलाए भोयणमंडवंसि सुहासणवरगए. तएणं मित्तनाइ नियगा सयण संबंधि परिणोणं सद्धि तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणे विसाएमाणे परिसाएमाणे परिभुंजेमाणे विहरइ ॥ जेमिय भुत्तरागएत्रियणं समाणे आपंते चोक्खे परमसुइभए तं मित्तं जाव परिणं विउलेणं वत्थगंधमल्लालंकरेणय सक्कारेइ, सक्कारेइत्ता तरसेवमित्तनाइ जाव परिणसस पुरओ जेट्टपुत्तं कुट्टवे ठावेइ र ता तं मित्तनाइ जाव परिणं जेट्टपुत्तं च आपुच्छइ रत्ता मुंडे भवित्ता, पाणामाए

अल्पभार व बहुत मूल्यवाले आभूषणों से शरीर अलंकृत किया, भोजन तैयार होने पर स्वजन मित्रजन की साथ भोजन मंडप में प्रवेश कर शुभसिंहासनपे बैठकर मित्रादि सब की साथ विपुल निपजाये हुए अश्नादि स्वयं आस्वादते व अन्य को परसते विचार रहे हैं. इस प्रकार जीमकर उपर जो कुछ भोगवना था उसे भोगवकर पानी के कुड्डे कर शुद्ध बने. फीर बहुत वस्त्र गंध व मालाअलंकार से आये हुए स्वजनादि का स्तरार सन्मान किया और सब स्वजन मित्र ज्ञाति प्रमुख की सन्मुख ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब में स्थापित किया. फीर ज्ञाति स्वजन व ज्येष्ठ पुत्र को पूछकर मुंड बनकर प्रणाम नाम की प्रवर्ज्या अंगीकार कर

वि० विपुल अ० असंनं गा० पानं खा० खादिम सा० स्वादिम आं० आस्वादते वी० भोगवने प० परसते
 प० जीमते वि० विचरतेहै जे० जीमकर सु० जीमे पीछे आ० आचमन किया चो० शुद्ध हुवे प० बहुत शुद्ध हुवे
 पव्वजाए पव्वइए वियणं समणे इमं एयारुवं अभिगहं अभिगिण्हइ, कप्पइ मे जाव-
 ज्जियाए छट्टं छट्टेणं जाव आहारित्तए त्तिकट्ट इमं एयारुवं अभिगहं अभिगिण्हइ,
 अभिगिण्हइत्ता, जावज्जियाए छट्टं छट्टेणं अनिक्खित्तेणं तवो कस्सेणं उड्डं वाहाओ
 पणिञ्जिय २ सुराभिमुहे आयावण भूमिए आयावेमाणे विहरइ ॥ २६ ॥ छट्टरस
 वियणं पारणयांसि, आयावण भूमिए पच्चोरहइ, पच्चोरहइत्ता, सयमेव दारुमयं पडिगाहयं
 गहाय, तामलित्तीए नयरीए उच्चनीय मञ्जिमाइं कुलाइं धरसमुयाणरस भिक्खापरियाए
 अडइ, अडइत्ता सुट्टेयणं पडिगाहेइ २ ता तिसत्तखुत्ता उदएणं पक्खालेइ,

एमा अभिग्रह किया कि मुझे निरंतर छट छट का तप करना कल्पता है. इसतरह अभिग्रह ग्रहण करके ऊंचे
 याहु रखकर सूर्याभिमुख आतापना भूमि में आतापना लेते हुवे विचरत है ॥ २६ ॥ छट के पारण के
 दिन आतापना भूमि से आकर स्वयमेव काष्ठ पात्र लेकर तामलिसी नगरी में उच्च नीच व मध्यम कुल के
 घर समुदाय में भिक्षाचरी के लिये परिश्रमण करते हैं और शुद्धोदन (पकेहुवे चावल) लेकर इक्कीस बार

पंचमंग विवाह पण्यति (भगवती) सूत्र

॥ २६ ॥ २७ ॥ से० वह क्र० कैसे भं० भगवन् ए० ऐसा बु० कहा जात है पा० प्रणाम प० प्रवर्ज्या गो० गौतम पा० प्रणाम प्रवर्ज्या से प० दीक्षित हुआ जं० जिसको ज० जहां पा० देखे तं० उनको इं० इन्द्र खं० कार्तिकेय रु० महादेव सि० न्यंतर वे० वैश्रमण अ० चंडिका को० कोटिक रा० राजा जा० यावत् स० सार्थवाह का० काक सा० भ्रान पा० चंडाल उ० ऊंच को पा० देखे उ० ऊंचको प० प्रणामकरे नी० नीच को पा० देखे नी० नीचको प० प्रणामकरे जं० जैसे पा० देखे उ० उसको त० पक्खालेइत्ता तओ पच्छा आहारं आहारैइ ॥ २७ ॥ से० कर्णट्टुणं भंते ! एवं बुच्चइ पाणामाए पव्वज्जा ? गोयमा ! पाणामाएणं पव्वज्जाए पव्वइए समाणे उं जत्थ पासइ तं इंदवा, खंदवा, रुइवा, सिवंबा, वेसमणंबा, अजंबा, कोटिकिरियंबा, रायंबा जाव सत्थवाहंबा; काकंबा, साणंबा, पाणंबा, उच्चं पासइ, उच्चं पणामं करेइ, नीयं पासइ नीयं पणामं करेइ, जं जहा पासइ तरस तहा पणामं करेइ. से० तेणट्टुणं जाव पानी से ओकर उस का आहार करते हैं ॥ २७ ॥ अहो भगवन् ! तामली तापसकी प्रणाम प्रवर्ज्या कैसे कही ? अहो गौतम ! प्रणाम प्रवर्ज्या अंगिकार करनेवाला इन्द्र, रकंध, रुद्र, शिव, वैश्रमण, चंडिका, कोटिकादि, राजा को, श्रेष्ठ को, सेनापति, सार्थवाह, काकपक्षी, भ्रान, चंडाल को, ऊंचको देखकर ऊंचको प्रणाम करे, नीचको देखकर नीचको प्रणाम करे जिसे जहां देखे उसे वहां प्रणाम करे. इस से अहो गौतम !

गौतम श्रवक श्री पाण्डित्य बन्धु

(भगवती) सूत्र

हिवत्रपणानि च

उ० उदात्त उ० उत्तम म० महानुभाग त० तपकर्म से सु० मुक्ता भु० भुला जा० यावत् थ० हड्डी नाडी जा० हुई अ० है जा० जितना मे० मेरा उ० उत्थान क० कर्म व० बल वी० वीर्य पु० पुरुषात्कार प० पराक्रम ता० तहां लग मे० मुझे से० श्रेय क० कल्याण जा० यावत् ज० सूर्य उदीर होते ता० ताम्र लिप्ती न० नगरी दि० देखकर भ० बोलाकर वा० परिचित नि० गृहस्थ पु० पूर्व संगति प० पीछे के संगति प० दीक्षाके संगति को अ० पुछकर ता० ताम्रलिप्ती न० नगरी की म० मध्य से नि० निकलकर प्रा० कर्मणं सुक्के भुक्त्वे जाय धमणिसत् ए जाए, तं आस्थि जामे उट्टाणे कर्ममे बले वीरिए पुरिसकारपरकमे ताव तामे सेयं कव्वं जाय जलंते तामलितीए णगरीए दिट्ठा भट्टेय पासंडत्थेय, गिहत्थेय, पुत्र्यसंगतिएय, पच्छासंगतिएय, परिधायसंगतिएय आपुच्छिता तामलितीए णयरीए मज्झमज्झेणंनिगाच्छित्ता पाओगकुंडियमादीयं उन्नगरणं दासमयंच मांस रहित नाइर्योवाला हुआ हूँ। अथ जहां लग मेरे में उत्थान कर्म, बल, वीर्य व पुरुषात्कार पराक्रम है वहां लग सूर्यादय होते ताम्रलिप्ती नगरी में रहनेवाले कि जिन को देखने का बहुत मन्ग पडा है, जो मेरे भक्त हैं, पाण्ड धर्म के आचरण करनेवाले हैं परंतु मेरे परिचय में आये ह्ये है, जो गृहस्थ हैं, जो दर्शनाभिलाषी हैं, दीक्षा लीये पाहिले जिन की संगति में रहा सो पूर्व संगतिवाले और दीक्षा लिये पीछे जिन की संगति में रहा सो पश्चात् संगतिवाले और अभ्य तापसादि कि जो मेरे परिचित हैं उन

वार्थ भवभक्तानां पश्येत्

* मकाराकारावस्थान्तरं लला मुनिवसवस्यो वाञ्छामुनिवस्यो *

तैसि प० प्रणामकरे से० वह ते० इसलिये जा० यावत् प० प्रवर्ज्या ॥ २८ शी त० तव से० वह ता० तामलि
 मो० पौर्यपुत्र ते० उस उ० उदार वि० विपुल प० अनुज्ञा प० ग्रहीहुई वा० अज्ञान त० तप कर्म से सु० सुका
 मु० भुला जा० यावत् ध० नादी दृष्टि जा० हुइ हो० था ॥ २९ ॥ त० तव त० उस ता० तामली वा०
 अज्ञान त० तपस्वी को अ० कोई वक्त पु० रात्रिको अ० अनित्य जा० जागरण जा० जागते को प० इसरूप अ०
 आत्मिक वि० चिंतवन जा० यावत् स० उत्पन्न हुआ अ० भ० इ० इस उ० उदार वि० विपुल जा० यावत्
 पव्वजा ॥ २८ ॥ तएणं से तामली मोरियपुत्ते तेणं उरालेणं विपुलेणं पयत्तेणं पग्गहिएणं
 बालतवो कम्मणं सुक्के भुक्खे जाव धमणिसंतए, जाएयावि होत्था ॥ २९ ॥
 तएणं तस्स तामलित्थस्स बाल तवस्सित्थस्स अण्णया कयाइं पुत्थरत्तावत्तकाल समयंसि
 सि अणिसव जागरियं जागरमाणस्स इमेयास्सुवे अज्झत्थिए चित्तिए जाव समुपपजित्था
 एयं खलु अहं इमेणं उरालेणं विपुलेणं जाव उदत्तेणं उत्तमेणं महाणुभागेणं तवो
 प्रणाम प्रवर्ज्या कधी हे ॥ २८ ॥ तव वह तामली पौर्य पुत्र उदार, विपुल, गुरुकी आशा से कराया हुआ,
 बहुत मान पूर्वक कराया हुआ बाल तप कर्म से शुष्क यावत् रक्त मांस रहित नसोवाला हुआ ॥ २९ ॥
 एरुदा मध्यरात्रि में उत तामली पौर्य पुत्र तपस्वी को अनित्य जागरण जागते हुवे ऐमा अथ्यवसाय
 चिन्तवन उत्पन्न हुआ कि ऐसे उदार, विपुल; उदात्त, उत्तम, व महानुभावा तप कर्म से शुष्क यावत् रक्त-

सूत्र

भावार्थ

रावर्षा

ॐ श्री अमोलक कृष्णाय नमः ॐ
 ॐ अनुवादक-बालप्रह्लादचारी मुनि

पंच ह्य हि वचपण्णात्ति (भगवती) सूत्र

उ० उदात्त उ० उत्तम म० मदानुभाग त० तपकर्म से सु० सुका भु० भुला जा० यावत् थ० हृद्दी
 नाही जा० हुई अ० है जा० जितना मे० मेरा उ० उत्थान क० कर्म व० बल वी० वीर्य पु० पुरुषात्कार
 प० पराक्रम ता० तदां लग म० मुझे से० श्रेय क० कल्याण जा० यावत् ज० सूर्य उदीर होते ता० ताम्
 लिप्सी न० नगरी दि० देवकर म० बोलाकर षा० परिचित नि० गृहस्थ पु० पूर्व संगति प० पीछे के संगति
 प० दीक्षाके संगति को आ० पुढकर ता० ताम्लिप्सी न० नगरी कौ म० मध्य से नि० निकलकर प्रा०
 कर्मणं सुक्रे भुक्त्वे जाव धमणिसंतए जाए, तं अत्थि जामे उट्टुणे कर्ममे वले वीरिए
 पुरिसक्कारपरक्कमे ताव तामे सेयं कळं जाव जलंते तामलिचीए णगरीए दिट्ठा भट्टेय
 पासंइत्थेय, गिहत्थेय, पुच्चसंगतिएय, पच्छासंगतिएय, परिणायसंगतिएय आपुच्छिता
 तामलिचीए णयरीए मज्झमज्झेणंनिगाच्छित्ता पाश्रोगकुंडियमादीयं उन्नगरणं दारुमयंच
 मांस रहित नाडियोवाला हुआ हूँ। अब जहां लग मेरे में उत्थान कर्म, बल, वीर्य व पुरुषात्कार पराक्रम है
 वहां लग सूर्यादय होते ताम्लिप्सी नगरी में रहनेवाले कि जिन को देखने का बहुत मनंग पडा है, जो
 मेरे भक्त है, पालण्ड धर्म के आचरण करनेवाले हैं परंतु मेरे परिचय में आये हुये है, जो गृहस्थ है,
 जो दर्शनाभिलाषी है, दीक्षा लीये पहिले जिन की संगति में रहा सो पूर्व संगतिवाले और दीक्षा लिये पीछे
 जिन की संगति में रहा सो पश्चात् संगतिवाले और अन्य तापसादि कि जो मेरे परिचित हैं उन

शब्दार्थ शतशका पाठ्य

श्री अमोलक कृष्णजी कृत-वाल्मीकि-श्री

पादुका कुं० कमंडल आ० वगैरह उ० उपकरणं दा० काष्ठ के प० पात्र ए० एकान्त में ए० रखकर ता० ताघ्रलिप्ती नगरी की उ० ईशान कौन में णि० प्रमाण मात्र भूमि आ० देवकर सं० संलेखना झू० झूसणा झू० झूसकर भ० भक्त पा० पानी प० प्रत्याख्याकर पा० पादोपगमन का० काल को अ० नदीं वांछता वि० विचरने को चि० ऐसा करके सं० संकल्पकर ॥ ३० ॥ क० काल जा० यावत् ज० सूर्य उदीत होते जा० यावत् आ० पूछकर ता० तामली ए० एकान्त में ए० रखे जा० यावत् भ० भक्त पडिगहयं एगंते एहेत्ता तामलिचीए पगरीए उत्तर पुरिच्छिमे दिसीभाए णियत्तणि- यमंडलं आलिहिचा संलेहणा झूसणा झूसियसस भत्तपाण पडियाइक्खियसस पाओवगयसस कालं अणवकंखमाणसस विहरित्तए, चिकट्टु एवं संपेहेइ संपेहेइ ता ॥ ३० ॥ कखं जाव जलंते जाव आपुच्छइ, आपुच्छइत्ता तामली एगंते एइइ, सब से मीलकर व उन को पूछकर ताघ्रलिप्ती नगरी की मध्य में से नीकलकर मेरी पादुका, कमंडल, काष्ठ-प्रय पात्र वगैरह सब को एकान्त में डालकर इस नगरी की ईशान कौन में पेरे शरीर प्रमाण क्षेत्र की मर्यादा करके शरीर दुर्बल होवे वैसी संलेखना झूसणा युक्त भक्त पानी का प्रत्याख्यान करके कालको नदीं वांछता हुआ विचरंगा ॥ ३० ॥ ऐसा विचार कर सूर्योदय होते सग को पूछकर व मंडोपकरण एका-

* भक्तोपकरण-पात्र, पादुका, कमंडल, काष्ठ, पात्र, भूमि, देवकर, संलेखना, झूसणा, झूसकर, भक्त, पा, पानी, प्रत्याख्याकर, पा, पादोपगमन, का, काल, जा, यावत्, ज, सूर्य, उदीत, होते, जा, यावत्, आ, पूछकर, ता, तामली, ए, एकान्त, में, ए, रखे, जा, यावत्, भ, भक्त, पडिगहयं, एगंते, एहेत्ता, तामलिचीए, पगरीए, उत्तर, पुरिच्छिमे, दिसीभाए, णियत्तणि-यमंडलं, आलिहिचा, संलेहणा, झूसणा, झूसियसस, भत्तपाण, पडियाइक्खियसस, पाओवगयसस, कालं, अणवकंखमाणसस, विहरित्तए, चिकट्टु, एवं, संपेहेइ, संपेहेइ, ता ॥ ३० ॥ कखं, जाव, जलंते, जाव, आपुच्छइ, आपुच्छइत्ता, तामली, एगंते, एइइ, सब, से, मीलकर, व, उन, को, पूछकर, ताघ्रलिप्ती, नगरी, की, मध्य, में, से, नीकलकर, मेरी, पादुका, कमंडल, काष्ठ, प्रय, पात्र, वगैरह, सब, को, एकान्त, में, डालकर, इस, नगरी, की, ईशान, कौन, में, पेरे, शरीर, प्रमाण, क्षेत्र, की, मर्यादा, करके, शरीर, दुर्बल, होवे, वैसी, संलेखना, झूसणा, युक्त, भक्त, पानी, का, प्रत्याख्यान, करके, कालको, नदीं, वांछता, हुआ, विचरंगा ॥ ३० ॥ ऐसा, विचार, कर, सूर्योदय, होते, सग, को, पूछकर, व, मंडोपकरण, एका-

व्याप्य

सूत्र

भावार्थ

सूत्र (भगवती) पञ्चमांग विवाह पण्णात्ति

रा० राज्यधानी में ठिं स्थिति प० संकल्प प० करानेको ॥ ३३ ॥ अ० अन्योन्य की अं० पास ए० यह अर्थ प० मनुकर व० बलिचंचा रा० राज्यधानी की म० मध्य से नि० निकले जे० जहां र० रुचकेन्द्र उ० उत्पानपर्वत ते० तहां उ० आये वे० वैक्रेय स० समुद्रयात स० नीकाले जा० यावत् उ० उत्तर वैक्रेय रू० रूप वि० विकुर्वणाकर ता० उस उ० उत्कृष्ट तु० त्वरासे चं० रौद्रगति से ज० अन्गगति से छे०

ठिइपकपं पकरावेत्तए तिकट्टु, ॥ ३३ ॥ अण्णमण्णस्स अंतिए एयमट्टं पडिसुणंति पडिसुणं-
त्तिता बलिचंचाए रायहाणीए मज्झं मज्झेणं निगच्छंति २ त्ता, जेणेव रुयइंदं उप्पायपव्वाए
तेणेव उवागच्छंति, वेउविचय समुग्वाएणं समोहणंति २ त्ता जाव उत्तर वेउविचयाइं रुवाइं
विकुव्वंति, विकुव्वंतिता ताए उक्किट्टाए तुरियाए, चवलाए, चंडाए, जयणाए, छेयाए,
सहाए, सिग्वाए, दिव्वाए, उट्टुयाए, देवगईए, तिरियं असंखेजाणं दीवसमुहाणं म-
ज्झं मज्झेणं जेणेव जंबूदीवे दीवे, जेणेव भारहेवासे, जेणेव ताभलिच्चीए णगरीए,

चणलतावाली, क्रोध में आकर चले ऐसी रौद्र, अन्य गति का जय करे वैसी, निरुणतावाली, शीघ्र-
तावाली, दीव्य, और ब्रह्मादिक के उद्धूतपने की देवगति से तिच्छा असंख्यात द्वीप समुद्र की मध्य में
होकर जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में ताम्रालिगी नामक नगरी में तामली मौर्य पुत्र की पास आये. वहां आकर
तामली तपस्वी की उपर, व दिशी विदिशी में खडे रहकर मनोह्र दीव्य देव ऋद्धि, मनोह्रकान्ति, दीव्य

सूत्र (भगवती) पञ्चमांग विवाह पण्णात्ति

पञ्चमोऽङ्गो विवाहः पण्डितैः (भगवती)

रा० राज्यधानी में टि० स्थिति प० संकल्प प० करानेको ॥ ३३ ॥ अ० अन्यान्य की अं० पास ए० यह अर्थ प० मूनकर व० बलिचंचा रा० राज्यधानी की म० मध्य से नि० निकले जे० जहां रु० रुचकेन्द्र उ० उत्पानपर्वत ते० तहां उ० आये वे० वैकेय स० समुद्रघात स० नीकाले जा० यावत् उ० उत्तर वैकेय रु० रूप वि० विकुर्वणाकर ता० उस उ० उत्कृष्ट तु० त्वरासे चं० रौद्रगति से ज० अन्यागति से छे०

टिइएकपं पकरानेत्सए त्तिकद्दु, ॥ ३३ ॥ अणमणसस अंतिए एयमट्टं पडिसुणंति पडिसुणं-
 तिचा बलिचंचाए राघहाणीए मज्झं मज्झेणं निगच्छंति २ स्ता, जेणेव रूपइंदं उप्पायपत्त्वए
 तेणेव उवागच्छंति, वेउत्विचय समुग्घाएणं समोहणंति २ स्ता जाय उत्तर वेउत्विचयाइं रूवाइं
 विकुच्चंति, विकुच्चंतिचा ताए उक्किट्टाए तुरियाए, चवलाए, चंडाए, जयणाए, छेयाए,
 सर्हाए, सिग्घाए, दिव्वाए, उड्डयाए, देवगईए, तिरियं असंखेज्जाणं दीवसमुद्घाणं म-
 ज्झं मज्झेणं जेणेव जंबूद्वीवे दीवे, जेणेव भारहेवासे, जेणेव तामलिचीए णगरीए,

चणलतावाली, क्रोध में आकर चले ऐसी रौद्र, अन्य गति का जय करे वैसी, निरुणतावाली, शीघ्र-
 तावाली, दीव्य, और वज्रादिक के उद्धूतपने की देवगति से तिच्छा असंख्यात द्वीप समुद्र की मध्य में
 होकर जम्बूद्वीप के भारत क्षेत्र में ताम्रलिप्ती नामक नगरी में तामली मौर्य पुत्र की पास आये. वहां आकर
 तामली तपस्वी की उपर, व दिशी विदिशी में खड़े रहकर मनोत्र दीव्य देव ऋद्धि, मनोत्रकान्ति, दीव्य

{ निपुनगति सी० सिंहगति सि० शीघ्रगति से दि० दीव्यगति से उ० उद्धृत दे० देवगति से ति० तिच्छा
 अ० असंख्यगत दी० द्वीप स० समुद्र म० मध्य में जे० जहां भा० भरत क्षेत्र जे० जहां
 ना० ताम्रलिप्ती न० नगरी जे० जहां ता० तामलि मो० मौर्यपुत्र ते० तहां उ० आकर ता० तामलि वा०
 बालतपस्वी की उ० उपर स० सवादिशा में स० प्रतिदिशा में ठि० रहकर दि० दीव्य दे० देवक्रोद्ध

सप्त

क्रि
 क्रि

जेणव तामली मौरियपुत्रे तंणेव उवागच्छंति, उवागच्छंतिता तामलिस्स बालतव-
 सिस्स उप्पि सपक्खि सपड्ढिदिस्सि ठिच्चा, दिव्वं देविद्धि, दिव्वं देवजुत्तिं. दिव्वं देवाणु-
 गव् दिव्वं वर्त्तीसइविहं नद्विविहिं उवदंसंति, उवदंसंतिचा, तामलि बालतवस्सि
 आयाहिणपयाहिणं करंति वंदंति नमंसंति, नमंसंतिचा, एवं वयासी एवं
 आपुप्पिया ? अम्हे बलिचंचारायहाणिबत्थव्वया, वहवे असुर कुमारा देवाय
 न देवाणुप्पिया ! वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो । अम्हाणं देवाणुप्पिया !

व और देवता के वर्त्तीस प्रकार के नाटक बतलाये. बतलाकर तामली तापस को तीन बार प्रद-
 रके वंदना नमस्कार किया. और ऐसा बोले कि अहो देवानुमिय ! हम बलिचंचा राज्यधानी में
 बाल देव व देवियों तुम को वंदते हैं यावत तुम्हारी पर्युपासना करते हैं. अहो देवानुमिय हमारी
 बलिचंचा राज्यधानी इन्द्र रहित न पुरोहित रहित है. और हम इन्द्राधीन, इन्द्राधिष्ठित, व इन्द्राधीन कार्य करने-

* मन्त्रान्तरं नान्यथा श्रुत्वा सुवर्णं सशयान् । अथ सुवर्णं सशयान् । अथ सुवर्णं सशयान् । अथ सुवर्णं सशयान् । *

पंचमांग विवाह पण्णात्ति (भगवती)

दे० देवशुति दे० देवानुभाव दि० दीव्य व० वत्सि स प्रकार के न० नाटकविधि उ० वत्ताकर ता० तामालि
 वा० बालतपस्वी को ति० तीनवार आदान प० प्रदक्षिणा क० करे अं० वांदि न० नमस्कार कर ए० ऐसा
 व० बाले दे० देवानुप्रिय अ० हम व० बलिचंचा रा० राज्यधानी व० रहने बाले व० बहुत अ० असुर
 कुमार दे० देव दे० देवी वं० वंदन करते हैं न० नमस्कार करते हैं व० पयुपासना करते हैं ॥ ३३ ॥
 त० तव से० वह ता० तामालि बालतपस्वी ते० उन व० बलिचंचा रा० राज्यधानी में व० रहने बाले व०
 बलिचंचा रायहाणी अणिदा अपुरोहिद्या, अम्हेणं देवाणुप्रिया ! इंद्राहिणा, इंद्राहि-
 ङ्गिया, इंद्राहिणकजा तं तुभेणं देवाणुप्रिया बलिचंचा रायहाणिं आढह, परिया-
 णह, सुमारह, अट्टंचंधह, निहाणं पकरेह; तिइत्थकपं पकरेह; तएणं तुज्जे कालमासे
 कालं किच्चा बलिचंचा रायहाणीए उववाज्जिस्सह, तएणं तुभे अम्हं इंदा भाविस्सइ
 तएण तुभे अम्हेहिं सद्धिं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरिस्सह ॥ ३३ ॥ तएणं से ता-
 बाले हैं. इसलिये अहो देवानुप्रिय ! तुम बलिचंचा राज्यधानी का आदर करो, अच्छी जानो, उस का
 मन में स्मरण करो, वहां उत्पन्न होने का निदान (नियाणा) करो और वहां रहने का संकल्प करो.
 इ व से तुम वहां से काल के अवसर में काल कर के बलिचंचा राज्यधानी में उत्पन्न होवोगे और हमारी
 साथ दीव्य भोगोपभोग भोगते हुये विचरोगे ॥ ३३ ॥ इस तरह बलिचंचा राज्यधानी के रहने बाले बहुत असुर

शतकमा पदशा. धर्या

* मन्मथनासंभवहृत्सु अथा सुवर्णसंशयम् चालिमसन्नेभ्यः *

शब्दार्थ

सूत्र

शब्दार्थ

श्री अमोलक ऋषिजी
अमोलक-बालप्रह्लादचारीमुनि

निपुनगति से० सिंहगति से दि० शीघ्रगति से दि० दीव्यगति से उ० उद्धृत दे० देवगति से ति० तिच्छा
अ० असंख्यात दी० द्वीप स० समुद्र म० मध्य में जे० जहां भा० भरत क्षेत्र जे० जहां
ता० साम्रलिसी न० नगरी जे० जहां ता० तामलि सो० मौर्यपुत्र ते० तहां उ० आकर ता० तामलि वा०
बालतपस्वी की उ० उपर स० सबादिशा में स० प्रतिदिशा में टि० रहकर दि० दीव्य दे० देवक्रीडि
जेणेव तामली सेरियपुत्रे तंणेव उत्रागच्छंति, उत्रागच्छंतिता तामलिरस बालतव-
सिसस उषि सपक्खि सपडिदिसिं ठिच्चा, दिव्वं देविद्धि, दिव्वं देवजुत्ति, दिव्वं देवाणु-
भायं, दिव्वं वत्तीसइविहं नट्टविहिं उवदंसंति, उवदंसंतिता, तामलि बालतवारिसिं
तिक्खुत्ता आयाहिणपयाहिणं करंति वंदंति नमंसंति, नमंसंतिता, एवं वयासी एवं
स्सलु देवाणुप्पिया ? अम्हे बलिचंचारायहाणिवत्थव्वया, वहवे असुर कुमारा देवाय
देवाओप देवाणुप्पिया ! वंदामो नमंरामो जाव पज्जुवासामो । अम्हाणं देवाणुप्पिया !
महानुभाव और देवता के वत्तीस प्रकार के नाटक बतलाये. बतलाकर तामली तापस को तीन बार प्रद-
क्षिणा करके वंदना नमस्कार किया. और ऐसा बोले कि अहो देवानुप्रिय ! हम बलिचंचा राज्यधानी में
रहनेवाल देव व देवियों तुम को वंदते हैं यावत् तुम्हारी पुर्णपासना करते हैं. अहो देवानुप्रिय हमारी
बलिचंचा राज्यधानी इन्द्र रहित व पुरोहितरहित है. और हम इन्द्रार्थिन, इन्द्राधिष्ठित, व इन्द्रार्थिन कार्य करते-

सूत्र (भगवतो) पञ्चमोऽपि विवाहः पञ्चमोऽपि विवाहः

या० बालतपस्वी से अ० अनादर करायें हुवे अ० अच्छा नहीं जाने हुवे जा० जिस दि० दिशिसे पा० आये ता० उसादिशि में प० पीछेगये ॥ ३६ ॥ ते० उस काल ते० उस समय में ई० ईशान देवलोक अ० इन्द्र रहित अ० पुराहित रहित हो० था ॥ ३७ ॥ त० तब से० वह ता० तामली वा० बालतपस्वी व० बहुत प० प्रतिपूर्ण स० साठ सहस्रवर्ष प० पर्याय पा० पालकर दो० दोमास की सं० संलेखना से अ० आत्मा को झू० झूसकर स० वीमसहित भ० भक्त शत अ० अनशन छे० छेदकर का० काल के अवसर में का० रायहाणि नरथव्यया वहये असुरकुमारा देवाय देवीश्रेय तामलिणा बालतवरिसणा अणाढाहज्जमाणा अपरियाहज्जमाणा जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेवदिसिं पडिगया ॥ ३६ ॥ तेषां कालेण तेषां समएण ईसाणे कपये अणिंदे अपुरेहिए यावि हंतथा; ॥ ३७ ॥ तएणं से तामली बालतवरसी बहुपडिपुणाइं सट्ठिं वास सहस्साइं परियागं पाउणित्ता दो गामसियाए संलेहणाए अत्ताणंझूसित्ता, सवीसं भत्तसयं अणसणाए छेदित्ता, कालमासे कालं किच्चा इम तरह बन्धिका राजयथानी भे रहते बाले देवता देवियों का कहना तामली तापस ने सुना नहीं वेसे ही अच्छा जाना नहीं इस से वे जहां से आये थे वहां पीछे गये ॥ ३६ ॥ उस काल उस समय में ईशान नामक देवलोक में इन्द्र चयने से वह भी इन्द्र रहित पुरोहित रहित हुवा ॥ ३७ ॥ तामली तापस साठ हजार वर्ष पर्यंत भवर्ष्या पालकर, दो मास की संलेखना से आत्मा को झूसकर, एकसौ वीस भक्त अनशन

सूत्र (भगवतो) पञ्चमोऽपि विवाहः पञ्चमोऽपि विवाहः

वहुत अ० असुर. कुमार के दे० देव देवी से ए० ऐसे हुए कहते हुये ए० इस अर्थ को नो० नहीं आ० आदरकरं नो० नहीं ए० अच्छा जाने तु० तुष्टिगत सं० रहे ॥ ३४ ॥ त० तव ते० वे व० बालिचंचा रा० राजपथानि मे० व० रहते व० बहुत अ० असुर कुमार दे० देव दे० देवी ता० तामलि मो० परिपुत्र को दो० दूसीवक्त त० तीसरी वक्त ति० तीनवक्त आ० आदान ए० प्रदक्षिणा क० करके ॥ ३५ ॥ ता० तामलि

मली बालतत्रसती तेहि बलिचंचारायराणि वरथव्येहि बहुहि असुरकुमारहि देवोहिय देवीहिय, एवं वृत्तेसमाणे, एयमदृं णो आडाइ, णो परियाणइ, तुसिणीए संचिहुइ ॥ ३४ ॥ तएणं ते बालिचंचारायहाणि वरथव्यया वहवे असुरकुमारा देवाय देवीओय तामलि मोरियपुत्तं दोब्धिपि तच्चपि तिक्वत्तो आयाहिण पयाहिणं करेइ करेइत्ता, जाव अमहं चणं देवाणुपिया ! बलिचंचारायहाणी आणिंदा जाव तिइप्यकप्यं पकरेह जाव दोब्धिपि तच्चपि एवं वृत्तेसमाणे जाव तुसिणीए संचिहुइ ॥ ३५ ॥ तएणं ते बालिचंचा-

कुमार देवत देवियोंते जो कहा उस का अज्ञान तपस्या करने बाला तामली तापस ने आदर नहीं किया अच्छा नहीं जाना परंतु मौन रहा ॥ ३४ ॥ पुनः वे असुर कुमार देवताओंते तीन वक्त प्रदक्षिणा कर दो तीन बार बैसा ही कहा कि अहो देवानुप्रेय हम इस बलिचंचा राजपथानी में रहने वाले देव देवात्तुम वहां उत्पन्न होने का नियाता करो परंतु तामली तापस मौन खडा रहा ॥ ३५ ॥

* प्रकथाकाराशयस्युत्तरं अत्रा सुवदवसहायनी अत्रामसहायनी

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय श्री अमोलक कृष्णपिण्डिकायामुनि शिष्याय महाशय्याय श्री

काल करके ई० ईशान क० देवलोक में ई० ईशान वहिंशक विमान में उ० उपपात सभा में दे० देवशौर्या में दे० देवदूष्य वस्त्र के अ० अस्तर में अ० अंगुलका अ० असंख्यातवा भाग ओ० अत्रगाहना ई० ईशान दे० देवेन्द्र वि० विरह काल में ई० ईशान देवेन्द्रपुने उ० उत्पन्न हुआ ॥ ३८ ॥ त० सव से० वह ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे० देवराजा अ० तूर्त का उत्पन्न पं० पांच प्रकार की प० पर्याप्ति से, पं० पर्याप्त भाव को ग० जाये तं० वह ज० जैसे आ० आहार पर्याप्ति जा० व्यावत् भा० भाषामर्मे पर्याप्ति ॥ ३९ ॥ तव व० वलित्वा रा० राज्यवानी ईसाणे कपे ईसाणवाहिसए विमाणे उत्रवाय सभाए देवसयणिजंसि देवदूसंतरियं अं- गुलस्य असंखेज्जइ भागमेत्तीए ओगाहणाए ईसाणे देविदे विरहिय कालसमयांसि ईसाण देविदत्ताए उत्रवण्णे ॥ ३८ ॥ तएणं से ईसाणे देविदे देवराया अहुणो ववण्णे पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जित्तिभावं गच्छइ तंजहा आहार पज्जत्तीए, जाव भासामन पज्जत्तीए ॥ ३९ ॥ तएणं वलित्वा रायहाणि वत्थत्तवया, वहवे असुरकुमारा देवाय करके काल के अवसर में काल कर ईशान देवलोक के ईशान यहिंशक नामक विमान की उपपात सभा में देवशौर्या में देवदूष्य वस्त्र की नीचे अंगुल के असंख्यात भाग की अत्रगाहना से ईशान देवेन्द्र के विरह काल में ईशानेन्द्रपुने उत्पन्न हुये ॥ ३८ ॥ वह नरकाल का उत्पन्न हुआ ईशानेन्द्र आहार पर्याप्ति आदि पांच प्रकार की पर्याप्ति से पर्याप्त हुआ ॥ ३९ ॥ उस समय में वलित्वा राज्यवानी में रहनेवाले बहुत

* मनुशुभ समावस्ये लला सुखसहयोगी ध्यायन्सुखी *

पंचमं विवाह पणालि (भगवती) मू

मं व० रहने वाले व० बहुत अ० असुर कुमार दे० देव दे० देवी ता० तामलि वा० बालतपस्वी को का० काल को प्राप्त जा० जानकर ई० ईशान देवलोक में दे० देवेन्द्रपते उ० उत्पन्न हुआ पा० देवकर आ० आसुररक्तकुः कुपित हुवे चं० रौद्ररूप वाले हुवे मि० देदीप्यमान होते व० बलिचंचा रा० राजपयानी के म० मध्य से नि० नीकलकर ता० उस उ० उत्कृष्टगति से जा० यावत जे० जहां भा० भरत क्षेत्र जे० जहां ता० तामलिमी न० नगरी जे० वहां ता० तामलि वा० बालतपस्वी का स० शरीर ते० वहां उ० आकर

देवीर्भोय तामलिं बालतपस्विं कालगयं जाणिता ईसाण्येय कर्पे देविंदचाए उववणं पासिन्ता, आसुरता कुविया चंडिक्रिया, भिसिमिसेमाणा बलिचंचाए रायहाणीए मञ्जं मञ्जेणं निगच्छंति, निगच्छंतिन्ता, ताए उक्किट्टाए जाव जणेव भारहेवासे जणेव ता- मलिन्ती णयरी, जेणेव तामलिस्स बाल तपस्सिस्स सरिणए तेणेव उवागच्छंति, उवाग-

देव देवियोंने तामली तपस्वी को काल प्राप्त हुआ जानकर व ईशान देवलोक में इन्द्र बना हुआ देव कर कोष में आसुररक्त हुए, कोष में धमधमायमान हुए, अत्यंत द्रुप भाव प्रपट हुआ, और मीसमिस दांत पीसने लगे. फीर बलिचंचा राजपयानी में से नीकलकर उत्कृष्ट चंडा, चपला, शीघ्र, दीव्य देवगति से तामलिमी नगरी के बाहिर तामली तापसका शरीर था वहां आयें, और उस का वायां पांच रस्मी से बांधकर तीन

शुभकाम पालि

पंचमांश विवाह पणति (भ्रमन्त) सु

अ० अग्रज्ञाकरे त० तर्जनाकरे ता० ताडनकरे प० कर्धर्नाकरे प० दुःखदे आ० इधर उधर क० करे हीं०
 हिलनाकर जा० यावत् आ० इधर उधर क० करके ए० एकान्त में ए० रखकर दा० निमादिशि से पा०
 आये ता० उर्मादिशि में प० पीछेगये ॥ ४० ॥ त० तव ई० ईशान देवलोक में रहने वाले वे० वैपान्तिक
 दे० देव दे० देवी व० बलीचंचा रा० राज्यधानी में व० रहने वाले व० बहुत अ० अमुर कुमार दे० देव
 दे० देवी से ता० तामलि वा० बालतपस्वी का स० शरीर को ही० हिलना करने नि० निर्दाकरते जा०
 यावत् आ० इधर उधर की० करते पा० देखकर आ० शीघ्र आसुरक जा० यावत् पि० दंटीप्यमान होते जे० जहां

खिसंति, गरहंति, अवमण्णति, तज्जिति, तालेंति, परिवहेंति, पव्वहंति, आकहु विकहिं
 करंति, हीलेत्ता जाव आकहु विकहिंकरेत्ता, एगंते पडंति र ता, जामेवदिसि पाउब्भया,
 तामेवादिसि पडिगया ॥ ४० ॥ तएणं ते ईसाण कप्पवाली वहवे वेमाणिया देवाय
 देवीओय वालिचंचा रायहाणि वत्थव्वएहिं, वहूहिं असुरकुमारोहिं, देवोहिय देवीहिय
 तामालिसस बालतवसिससस सरीरयं हील्लिजमाणं, निंदिजमाणं, खिसिजमाणं जाव

उत्पन्न हुआ सो कौन ? इस तरह तामली तापस के शरीर की हिलना, निर्दा तिरस्कार व गर्हा करनेलगे.
 अवागणना करने लगे, हस्तादि से ताडना करने लगे, और जात्यादिक की हिलना, विशेष हिलना करने
 लगे. ऐसा करके उस के शरीर को एकान्त में डालकर जहां से आये थे वहां पीछे चले गये ॥ ४० ॥ उस
 समय में ईशान देवलोक में रहनेवाले बहुत देव व देवियोंने बलिचंचा राज्यधानी में रहनेवाले देव देवी को

ॐ श्री अमोलक ऋषिर्वाचते ॥ १ ॥

वा० बाये पांच सु० रस्ती सं वं० बांधे वं० बांधकर तिन० तीनवार सु० सुख में उ० शुंके उ० शुंकर ता० ताम्रलिप्ती न० नगरी में सिं० सिंघाडे जैसे ति० तीन च० चार च० चच्चर च० चतुर्मुख म० बडा रस्तापर आ० इधर उधर क० करते म० मोटे मोटे स० शब्द से उ० उद्घोषणा करते ए० ऐसा व० बोलै स० यह के० कोन ता० तामली वा०वाल तपस्वी स०स्वयं ग०लीया हुआ पा०प्रणाम प्रवर्ज्यासि प०दीक्षित के० कोन से० वह ई० ईशान देवलोक में ई० ईशान देवेन्द्र दे० देवराजा ति० ऐसा करके ता० तामली वा० बालतपस्वी का स० शरीर की ही० धीलनाकरे नि० निंदाकरे खि० विशेष निंदाकरे ग० गर्हा करे दृढ़ता, बाधे पाए सुत्रेण वंधति बंधइत्ता, तिवस्तुतो मुहे उद्धृति २० ता तामालि-
 तौए णयरीए सिंघाडण तिय चउक्क चच्चर चउरमुह महापह पहेसु आकहुविकहिं
 करेमाणा महया महया सेदणं उरवोसेमाणा उरवोसेमाणा एवं वयासी सेकेणं भो
 तामलां बालतवस्सी सयं गहियलिंगे पाणामाए पव्वज्जाए पव्वइए, के सणं से ईसाणे
 कणं ईसाणे देविंदे देवरायातिकहु, तामालिरस बालतवस्सिरस सररीयं हीलति, निंदंति
 एक उस के सुंद में शुंके. शुंकर उस नगरी के सिंघाडे के आकारवाले यावत् बहुत रस्तेवाले चौक में
 रस्ती में उस के शरीर को घसीटते हुए लाये. और उद्घोषणा करने लगे कि अहो लोको ! स्वयं मनः
 कतिवत् प्रणाम प्रवर्ज्या अंगीकार करनेवाला ऐसा तामली ताम्र कोन ? ईशान देवलोक में देवतापने

* अमोलक-राज्यवर्धन अथ सुखप्रदायक अथ अमोलक-राज्यवर्धन * ॥ १ ॥

पंचमंग विवाह पण्णत्ति (भवगतौ) सूत्र

पा० आये ता० उसदिशि मं प० पीछेगये ॥ ४१ ॥ त० तव से० वह ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे० देवराजा ते० उन ई० ईशान देवलोक निवासी व० बहुत वे० वैयानिक दे० देव दे० देवी अं० पास प० यह अर्थ सो०मूनकर नि० अवधार कर आ० असुरक जा० यावत् पि० देदीप्यमान त० तहां स९ शैयापि गं० गये हुवे ति० त्रिवली पि० भृकुटी सा० चढाकर व० बलिचंचा रा० राज्यधानी अ० अधो स० दिशा म० विदिशा को स० देखे ॥ ४२ ॥ त० तव सा० वह व० बलिचंचा रा० राज्यधानी ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे० जाव एगंते एडंति एडंतित्ता जामेव दिसिं पाउब्भुए तामेवदिसिं पडिगए ॥ ४१ ॥ तएणंसे ईसाणे देविदे देवराया, तेसिं ईसाणकप्पवासीणं बहूणं वेमाणियाणं देवाणय देवी- णय अंतिए एयमट्टं सोच्चानिसम्म आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे तत्थेव सयणिज्जरगए तिवलीयं भिउडिं निडाले साहट्टु बलिचंचा रायहाणिं अहे सपक्खिस्व सपडिदिसिं संम- भिलोएइ॥ ४२ ॥ तएणं सा बलिचंचारायहाणी ईसाणंणं देविदेणं देवरण्णा अहे सपक्खिस्व लना, निंदा की. फीर आप के शरीर को एकान्त में डालकर अपने २ स्थान पीछे गये ॥ ४१ ॥ फीर ईशान देवलोक में रहनेवाले देव देवियों से ऐसा सुनतेसे ईशानेन्द्रने क्रोधित बनकर वहां ईशान देवलोक में शैय्या पर बैठे हुए ललाट में भृकुटि चढाकर बलिचंचा राज्यधानी की नीचे, उपर सब दिशा व विदि- शियों में अवलोकन किया ॥ ४२ ॥ इस तरह बलिचंचा राज्यधानी की ऊपर, नीचे, दिशी विदिशिओं में

पंचमंग विवाह पण्णात्ति (भवगती) सूत्र

पा० आये ता० उत्सदिशि मं प० पीछेगये ॥ ४१ ॥ त० तव से० वह ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे० देवराजा
 ते० उत्त ई० ईशान देवलोक निवासी व० बहुत वे० वैयानिक दे० देव दे० देवी अं० पास ए० यह अर्थ
 सो०सूनकर नि० अवधार कर आ० असुरक्त जा० यावत् पि० देदीप्यमान त० तहां स० शैयापे गं० गये
 हुवे ति० त्रिवली भि० भृकुटी सा० चढाकर व० बलिवंचा रा० राज्यधानी अ० अर्धो स० दिशा स०
 विदिशा को स० देखे ॥ ४२ ॥ त० तव सा० वह व० बलिवंचा रा० राज्यानी ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे०
 जाव एगंते एडंति एडंतिता जामेव दिसिं पाउब्भुए तामेवदिसिं पडिगए ॥ ४१ ॥
 तएणंसे ईसाणे देविदे देवराया, तेसिं ईसाणकप्पवासीणं बहूणं वेमाणियाणं देवाणय देवी-
 णय अंतिए एयमट्टं सोच्चानिसम्म आसुरत्ते जाव मिसिमिरेमाणे तत्थेव सयणिज्जरगए
 तिवलीयं भिउडिं निडाले साहट्टु बलिवंचा रायहाणिं अहे सपक्खि सपडिदिसिं भूम-
 भिलोएइ॥ ४२ ॥ तएणं सा बलिवंचा रायहाणी ईसाणंणं देविदेणं देवरण्णा अहे सपक्खि
 लना, तिदा की. फीर आप के शरीर को एकान्त में डालकर अपने २ स्थान पीछे गये ॥ ४१ ॥ फीर
 ईशान देवलोक में रहनेवाले देव देवियों से ऐसा सुननेसे ईशानेन्द्रने क्रोधित बनकर वहां ईशान देवलोक में
 शैया पर बैठे हुए ललाट में भृकुटी चढाकर बलिवंचा राज्यधानी की नीचे, उपर सब दिशा व विदि-
 शियों में अवलोकन किया ॥ ४२ ॥ इस तरह बलिवंचा राज्यधानी की ऊपर, नीचे, दिशी विदिशिओं में

की का० काय को स० पक्का करते चि० रहते हैं ॥ ४४ ॥ त० तव ते० वे व० बलिचंचा रा० राज्य
 धानी में व० रहने वाले व० बहुत अ० असुर कुमार दे० देव दे० देवी ई० ईशान दे० देवेन्द्र को प०
 कृपित हुवे जा० जानकर ई० ईशान दे० देवेन्द्र दि० दीव्य दे० देवकृदि दे० देवश्रुति दे० देवानुभाग
 ते० तेजोलेश्या अ० नहीं संहते हुवे स० सब स० मवादिशा में स० पतिदिशा में टि० रहकर क० करके तल
 द० दयानख सि० शिर्ष से आ० आवर्तन म० मस्तक से अं० अंजलि क० करके ज० जयतिजय से व०

॥ ४४ ॥ तएणं ते बलिचंचा रायहाणि वत्थव्वा वहवे असुरकुमारा देवाय देवीओय
 ईसाणं देविदं देवरायं परिकुवियं जाणित्ता ईसाणस्स देविंदरस देवरणो तंदिव्वं देविदि
 दिव्वदेवजुत्तिं, दिव्वं देवानुभागं, दिव्वं तेयलेस्सं असहमाणा सत्थे सपक्खि सपडि
 दित्तिं टित्त्वा करयल परिग्गहिं दससहं सिरसा वत्तां मत्थए अंजलिकट्टु जएणं विजणएणं

उस समय में बलिचंचा राज्यवाती में रहनेवाले असुर कुमार जाती के बहुत देव देवियोंने ईशानेन्द्र को
 कृपित जानकर उन की ऐसी दीव्य देवादि, देवश्रुति, देवमहानुभाग, और दीव्य तेजोलेश्या नहीं सहन
 करने से सब दिशी विदिशी में रहकर हस्तद्वय के दश नखों को एकत्रित कर मस्तक से
 आवर्तना करके जय विजय शब्द से वधाये और ऐसा बोलै-अहो देवानुपिय ! आपको प्राप्त

ॐ श्री अमोलक ऋषिः ॐ

देवराजा अ० अर्था स० दिशा स० प्रतिदिशा को स० देखते ते० उस दि० दिव्य प्रभाव से इ० अं-
 गार सारिया सु०सुर्भूत त०तसं वेलुकण त०तसं अग्निसारिणी जा०उत्पन्न हुई॥४३॥त०तव ते० वे व०बलि
 चेचा १।० राज्यधानी में व० रहने वाले व० बहुत अ० असुर कुमार दे० देव देवी तं० उस व० बलिचंचा
 रा० राज्यधानी को इ० अग्निभूत जा० यावत् स० समज्योति भूत पा० देखकर भी० डरेहुवे उ० कंपहुवे
 ता० चाहेहुवे उ० उद्वेग पायेहुवे सं० भयसे व्याप्त स० सवबाजु आ० दोडे प० विशेष दोडे अ० अन्योन्य
 सपडिदिसि समभिलोइया समाणातेणं दिव्यप्यभवेणं, इंगालभूया, सुसुरभूया छारिभूया, तत्-
 कवेह्यभूया, तत्तासमजोइभूया जाया याविहोत्था. ॥ ४३ ॥ तएणंते बलिचंचा राय-
 हाणिवत्थव्यंया वहवे असुरकुमारा देवाय देवीओय तं बलिचंचा रायहाणिं इंगालभूयं-
 जाय समजोइभूयं पासंति पासतिचा भिया उत्तथा तसिया उविग्गा संजायभया सव्वओ
 समंता आधावंति परिधावंति परिधावत्तिचा अणमणसकायं समतुरंगेमाणा चिट्ठंति
 देखने से उन के दीव्य प्रभाव से वह राज्यधानी अग्नि के अंगार समान, सुर्भूरे समान, राख समान,
 तसोती समान व अति ऊष्ण अग्नि समान हुई ॥ ४३ ॥ उस समय में बलिचंचा राज्यधानी में रहनेवाले
 देवों नगरी को अंगारे समान यावत् अग्नि समान देखकर भयपीत हुवे, कंपनेलगे, उद्वेग करने लगे-
 इस तरह भयपीत बने हुवे चारों तरफ दौड़ने लगे और एक २ की काया में मवेश्य करने लगे ॥ ४४ ॥

अं भुकोशक-राजावहनिरे ज्ञाया सुखद्वय महायमी ॥ अमोलक ऋषिः ॐ

पंचमोऽङ्कः विवाहः पण्डितः (भगवती)

कुमार दे० देव देवी के ए० इस अर्थ म० सम्यक् वि० विनय से भुं० चारंवार खा० खमाते तं० उस दिन० दीव्य दे० दंशकृद्धि जा० यावत् ते० तेजोलेश्या प० साहरण करो॥४६॥ त० उस दिन गो० गौतम ते० वे व० बलिचंचा रा० राज्यधानी में व० रहने वाले व० बहुत अ० असुर कुमार दे० देव देवी ई० ईशान दे० देवेन्द्र को आ० आदरकरे जा० यावत् प० पर्युपासना करे ई० ईशान दे० देवेन्द्र की आ० आज्ञा व० उपागत व० वचन ति० निर्देश में चि० रहे गो० गौतम ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे० देवराजा की सा०

असुरकुमारोहिं दंशेहिय देवीहिय एयमदुं समं विणएणं भुज्जो भुज्जो खामिएममाणे तं दिव्वं देविट्ठिं जाव तेयलेस्सं पडिसाहरइ ॥४६॥ तएयमिइच्चणं गोयमा ! ते बलिचंचारायहाणिवत्थव्वा वहनें असुरकुमारा देवाय देवीओय ईसाणं देविंदं देवराय अटंति जाव पज्जवासंति ईसाणरसयस्स देविंदरस्स देवरणो आणः उववाय वयण निदेसे चिट्ठंति ॥ एवंखलु गोयमा ईसाणेणं देविंदेणं देवरणो सा दिव्वा देविट्ठो जाव

ईशानेन्द्रने अपंती दीव्य देवर्द्धि यावत् तेजोलेश्या पीडी ले ली ॥ ४६ ॥ उस दिन से बलिचंचा राज्यधानी के असुर कुमार देव ईशानेन्द्रका आदर सत्कार करते हैं यावत् उन की पर्युपासना करते हैं और उन की आज्ञा, उपागत, वचन व निर्देश में रहते हैं, अर्हो गौतम ! ईशानेन्द्रने ऐसी दीव्य देवर्द्धि

श्री अमोलक कृपिनी
अनुवादक-बालगणेशचारीमुनि

यथाकर ए० ऐसा व० बोले अ० अहो दे० देवानुपिय दि० दीव्य दे० देवक्रुद्धि जा० यावत् अ०
 सन्मुख हुर दि० देखी दे० देवानुपिय की दि० दीव्य दे० देवक्रुद्धि जा० यावत् ल० लब्ध प० प्राप्त स०
 सन्मुखहुर खा० खपाते है दे० देवानुपिय ख० क्षमाकरां तु० तुम्हे ण० नदीं भु० वारंवार ए० ऐसा क०
 करने को ए० ऐसे स० सम्यक् वि० विनय से भुं० वारंवार खा० खपाते है ॥ ४५ ॥ त० तव से० बह
 ई० ईशान दे० देवेन्द्र वे० उन व० बलिचंचा रा० राज्ययानी में व० रहने वाले व० बहुत अ० असुर
 बद्धवति बद्धावतिस्ता एवं ययासी अहोणं देवाणुपियहिं दिव्या देविड्डी जाव आभि
 समण्णागया तं दिट्टुणं देवाणुपियाणं दिव्वा देविड्डी जावलद्धा पत्ता॥ अभिसमण्णागया,
 खामेमोणं देवाणुपिया ? खमं तुमं देवाणुपिया ! खमंतुमरिहतुणं देवाणुपिया !
 णाइभुज्जो भुज्जो एवं करणयाएत्तिकट्टु, एयमट्टं सममं विणएणं भुज्जो भुज्जो खामंति
 ॥ ४५ ॥ तएणं से ईसाणे देविदे देवराया तेहिं बलिचंचारायहाणि वत्थव्योहिं वहूहिं
 र्हे यावत् सन्मुख क्रुद्धि हमने देखी हुई है अहो देवानुपिय ! हम आपका अपराध खपाते है. तुम
 हमारा अपराध की क्षमा करो. अहो देवानुपिय ! तुम हमारा अपराध क्षमा करने योग्य हो. हम ऐसा
 कार्य वारंवार नहीं करेंगे. इस तरह समभावसे विनय नम्रता सहित क्षमा मांगने लगे ॥४५॥ जब बलिचंचा
 राज्ययानी में रहनेवाले देवों हम तरह बहुत विनय व नम्रता सहित समभाव से वारंवार खमानेलेगे तब

* मन्त्रायक-राज्ययानी भुज्जवत्सहयम् अथ भुज्जवत्सहयम् अथ भुज्जवत्सहयम्

पंचमांश विवाह पण्णाति (भगवती) सूत्र

कुमार दे० देव देवी के ए० इस अर्थ म० सम्यक् वि० विनय से भुं० चारंवार खा० स्वभाते तं० उस दि० दीव्य दे० दंशकृद्धि जा० यावत् ते० तेजोलेश्या प० साहरण को॥४६॥ त० उस दिन गो० गौतम ते० दे० व० बलिचंचा रा० राज्याथानी में व० रहने वाले व० बहुत अ० असुर कुमार दे० देव देवी ई० ईशान दे० देवेन्द्र को आ० आदरकरे जा० यावत् प० पर्युपासना करे ई० ईशान दे० देवेन्द्र की आ० आज्ञा त० उपागत व० वचन नि० निर्देश में चि० रहे गो० गौतम ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे० देवराजा की सा० असुरकुमारहिं देवोहिय देवीहिय एयमदुं समं विणएणं भुज्जो भुज्जो स्वामिएसमाणे तं दिव्वं देविडुं जाव तेयलेस्सं पडिसाहरइ ॥ ४६ ॥ तप्यभिद्वचणं गोयमा ! ते बलिचंचारायहाणिवत्थव्या वहवे असुरकुमारा देवाय देवीओय ईसाणं देविंद देवराय अटंति जाव पज्जुवासंति ईसाणरसयस्स देविंदस्स देवरणो आणा उववाय वयण निद्वेसे चिंदुंति ॥ एवंखलु गोयमा ईसाणेणं देविंदेणं देवरणणा सा दिव्वा देविडुं जाव ईशानेन्द्रने अपंती दीव्य देवोद्धि यावत् तेजोलेश्या पीछी ले ली ॥ ४६ ॥ उस दिन से बलिचंचा राज्याथानी के असुर कुमार देव ईशानेन्द्रका आदर सत्कार करते हैं यावत् उन की पर्युपासना करते हैं और उन की आज्ञा, उपागत, वचन व निर्देश में रहते हैं. अहो गौतम ! ईशानेन्द्रने ऐसी दीव्य देवोद्धि

वदथि

सूत्र

भावार्थ

(भगवतो) पंचमोऽङ्गो विवाहो पण्णाति

वि० विमान ई० थोडे उ० ऊंचे ई० थोडे उ० उन्नत ई० ईशान दे० देवेन्द्र के विमान से स० शक्र दे० देवेन्द्र के वि० विमान ई० थोडे नी० नीचे णि० न्यून हैं० हां गो० गौतम स० शक्र का स० सर्व ने० जानना से० वह के० कैसे गो० गौतम ज० जैसे क० हथेली सि० होवे दे० देश में उ० ऊंची उ० उन्नत णी० नीची नि० न्यून से० वह ते० इमलिये ॥ ५० ॥ ५० सपर्य भं० भगवन् स० शक्र दे० देवेन्द्र ई० ईशान दे०

देविदस्स देवरणो विमाणोहितो ईसाणस्स देविदस्स देवरणो विमाणा ईसि उच्चयरा
ईसि उणयराचेव ; ईसाणस्सवा देविदस्स देवरणो विमाणोहितो सक्कस्स देविदस्स
देवरणो विमाणा ईसि णिययराचेव, ईसि निणयराचेव ? हंता गोयमा ! सक्कस्स
तंचेव सव्वं नेयव्वं । सेक्केणट्टेणं ? गोयमा ! से जहा नामए करयत्ते सिया देसे
उच्चं, देसे उणए, देसे णिए, देसे णिणे से तेणट्टेणं ॥ ५० ॥ पभुणं भंते ! सक्के

उन्नत (गुण में अधिक) हैं ? अथवा ईशानेन्द्र के विमान से शक्रेन्द्र के विमान क्या नीचे या न्यून है ?
हां गौतम ! शक्रेन्द्र से ईशानेन्द्र के विमान ऊंचे व उन्नत हैं; अहो भगवन् ! यह किस तरह है ?
अहो गौतम ! जैसे हस्त का तन्ना क्वचित् देश से ऊंचा, क्वचित् देश से उन्नत, क्वचित् देश से नीचा
व क्वचित् देश से न्यून होता है वैसे ही अहो गौतम ! शक्रेन्द्र देवेन्द्र के विमान हैं ॥ ५० ॥ अहो

अथरा श्वनो श्री पण्डितोऽयम्

॥ ५० ॥

ॐ श्री अमोलक कृष्णनेत्र श्री अमोलक-बालमन्त्राचार्यमुनि

देवेन्द्र की अं० पास पा० आने को हं० हां प० समर्थ से० वह भं० भगवन् किं० क्या आ० बोलाया अ०
विना बोलाया गो० गौतम आ० बोलाया णो० नहीं अ० विना बोलाया ॥ ५१ ॥ प० समर्थ ई० ईशान
दे० देवेन्द्र स० शक्र दे० देवराजा की अं० पास पा० आने को हं० हां प० समर्थ से० वह भं० भगवन्

देविदे देवराया ईसाणस्स देविदस्स देवरणो अंतियं पाउब्भवित्तए ? हंता पभू । से
भंते किं आढामाणे पभू अणाढामाणे पभू ? गोयमा ! आढामाणे पभू, णो अणाढा
माणे पभू ॥ ५१ ॥ पभूणं भंते ईसाणे देविदे देवराया सक्कस्स देवरणो अंतियं
पाउब्भवित्तए ? हंता पभू । से भंते ! किं आढामाणे पभू, अणाढामाणे पभू ?

भगवन् ! शक्र देवेन्द्र ईशान देवेन्द्र की पास पागट होने को क्या समर्थ है ? हां गौतम ! शक्रेन्द्र ईशा-

नेन्द्र की पास आने को समर्थ है, तब अहो भगवन् ! क्या वह बोलाये हुवे या विना बोलाये हुए आने
को समर्थ है ? अहो गौतम ! ईशानेन्द्रकी पास शक्रेन्द्र बोलायेपर आने को समर्थ है परंतु विना बोलाये

आने को समर्थ नहीं है ॥ ५१ ॥ अहो भगवन् ! ईशानेन्द्र शक्रेन्द्र की पास आने को समर्थ है ? हां
गौतम ! ईशानेन्द्र शक्रेन्द्र की पास आने को समर्थ है, अहो भगवन् ! वह क्या बोलाये हुए आने को

समर्थ है या विना बोलाये हुए आने को समर्थ है ? अहो गौतम ! बोलाये हुए भी आने को

समर्थ है, अहो भगवन् ! ईशानेन्द्र शक्रेन्द्र की पास आने को समर्थ है ? हां गौतम ! ईशानेन्द्र शक्रेन्द्र की पास आने को समर्थ है, अहो भगवन् ! वह क्या बोलाये हुए आने को समर्थ है ? हां गौतम ! बोलाये हुए भी आने को समर्थ है

पंचमंग विवाह पण्णात्ति (भगवती) सूत्र

अ० है भ० भगवन् तेऽउन स०शक्र ईशान दे०देवेन्द्रकी वि०विवाद स० उत्पन्न होता है हं०हां अ०है भे०
 यह क० कथा इ० उत्सवक्त प० करे गो० गौतम स०शक्र ईशान दे०देवेन्द्र म० सनत्कुमार दे०देवेन्द्रको म०
 मनसे चिन्तवना क० करे त० तय से० वह स० सनत्कुमार ते० उन स० शक्र ईशान दे० देवेन्द्र से म०
 चिन्तवना क० कराये वि० शीघ्र स० शक्र ईशान दे० देवेन्द्र की अं० पास पा० जावे जं० जो से० वह
 व० को० त० उन को आ० आज्ञा उ० उपपात व० वचन नि० निर्देशमें वि० रहे ॥ ५६ ॥ स० सनत्कु
 आस्थिणं भंते ! तेसिं सक्कीसाणाणं देविदाणं देवराईणं विवादा समुपपज्जति ? हंता अस्थि । से
 कहभिदाणिं पकरेइ ? गोयमा ! ताहेचवणं सक्कीसाणा देविदा देवरायाणो सणंकुमारं
 देविदं देवरायं मणसी करेइ, । तएणं से सणंकुमारे देविदे देवराया तेहिं सक्कीसाणेहिं
 देविदेहिं देवराईहिं मणसी कएसमाणे खिप्यामेव सक्कीसाणाणं देविदाणं देवराईणं
 अंतियं पाउब्भवंति ! जंसेवयइ तरस आणाउववायवयणणिहेसे चिट्ठंति ॥ ५६ ॥ सणंकुमा-
 कथा विवाद उत्पन्न होता है ? हां गौतम ! उन को विवाद उत्पन्न होता है. अहो भगवन् ! विवाद
 के अवसर में वे कथा करे ? अहो गौतम ! वे दोनों सनत्कुमारेन्द्रकी मनसे चिन्तवना करे. इस तरह उनको
 चिन्तवना करते हुये जानकर सनत्कुमारेन्द्र शीघ्र शक्रेन्द्र ईशानेन्द्र की पास आवे और जो वह कहे वैसे उन
 की आज्ञा, उपपात, वचन व निर्देश में रहे ॥ ५६ ॥ अहो भगवन् ! सनत्कुमारेन्द्र कथा भवसिद्धि के है

श्री ७७ श्री अमलक ज्ञानेश्वर महाराज संस्कृत-भाष्य-संग्रह

५

पार भं० भगवन् किं० कया भ० भवसिद्धिक अ० अभवसिद्धिक स० सप्तदष्टि मि० मिथ्यादष्टि प० परत्त
 संसारी अ० अनंत संसारी सु० सुलभबोधि दु० दुर्लभ बोधि आ० आराधिक वि० विराधिक च० चरम
 अ० अचरम गो० गौतम स० सनत्कुमार दे० देवेन्द्र भ० भवसिद्धिक णो० नहीं अ० अभवसिद्धिक ए०
 ए० स० सप्तदष्टि प० परत सु० सुलभ बोधि आ० आराधिक च० चरम म० प्रयास्त ने० जाननां से० वद
 के० कैसं भं० भगवन् गो० गौतम स० सनत्कुमार दे० देवेन्द्र व० बहुत स० साधु स० साध्वी सा०
 रेणं भंते ! देविदे देवराया किं भवसिद्धि, अभवसिद्धि, सममदिष्टी, मिच्छदिष्टी.
 परिचसमारि, अणंतसंसारि, सुलहबोहि, दुल्लभबोहि, आराह, विराह, चरिमे
 अचरिमे ? गोयमा ! सणकुमारेणं देविदे देवराया भवसिद्धि णो अभवसिद्धि, एवं
 सममिच्छ, परिच अणंत, सुलहबोहि दुल्लभबोहि, आराहए विराहि चरिमे पसत्थं
 नेयत्वं ॥ से केणट्टेणं भंते ? गोयमा ! सणकुमारे देविदे देवराया वहूणं सम-
 या अभवसिद्धिक है. सम्यग् दष्टि है या मिथ्यादष्टि है, परत संसारी है या अनंत संसारी है, सुलभ
 बोधी है या दुर्लभ बोधी है, आराधक है या विराधक है और चरिम या अचरिम है ? अहो गौतम !
 सनत्कुमारेंद्र भव सिद्धिक, सम्यग् दष्टि, परत संसारी, सुलभ बोधी, आराधक व चरिम ज्ञानी है.
 अहो भगवन् ! यह किस तरह है ? अहो गौतम ! सनत्कुमारेंद्र बहुत साधु साध्वी, श्राधक, श्राधिकार के

* श्री अमलक ज्ञानेश्वर महाराज संस्कृत-भाष्य-संग्रह

सूत्र (भगवतो) पञ्चाय पण्णात्त

श्रावक सा० श्राविका का हि० हितका इच्छक सु० सुख का इच्छक प० पथ्य का इच्छक अ० अनुकंपा सहित नि० मोक्ष हि० हित सुख नि० मोक्ष का इच्छक ते० इसलिये गो० गौतम स० सनत्कुमार भ० भवसिद्धिक जा० यावत् नो० नहीं अ० अचरिम ॥ ५७ ॥ स० सनत्कुमार भं० भगवन् दे० देवेन्द्र की के० कितनी ठि० स्थिति प० प्रहृषी स० सात सा० सागरोपम की ठि० स्थिति ॥ ५८ ॥ से० वह भं० णाणं, बहूणं समणीणं, बहूणं सावयाणं, बहूणं सावियाणं हियकामए, सुहकामए, पथ्य-कामए, आणुकंपिए, निस्सेयासिए, हिय, सुह, निस्सेसकामए, से तेणट्टेणं गोयमा ! सणंकुमारिणं भवसिद्धिए जाव णो अचरिमे ॥ ५७ ॥ सणंकुमारस्स भंते ! देविदस्स देवरणा केवद्वयं कालं ठिई पणत्ता ? गोयमा ! सत्तसागरोवमाइं ठिई पणत्ता ॥ ५८ ॥ सेणं भंते ! ताओ देवत्तोगाओ आउक्खएणं जाव कहिं उववज्जिहिंति ? गोयमा !

हित के कामी, सुख के कारी, पथ्य के कामी, अनुकम्पावाले, मोक्षके वाञ्छक वैसे ही हित, सुख, व मोक्ष के कामी हैं; इसलिये अहो गौतम ! वे जमटाए यावत् चरिम शरीरी हैं ॥ ५७ ॥ अहो भगवन् सनत्कुमारिन्द्र की कितनी स्थिति कही ? अहो गौतम ! सनत्कुमारिन्द्र की स्थिति सात सागरोपम की कही ॥ ५८ ॥ अहो भगवन् ! वह सनत्कुमारिन्द्र आयुष्य का क्षय हुवे पीछे वहां से कहां उत्पन्न होवेंगे ? अहो गौतम ! पदादिदेह क्षय में उत्पन्न होवेंगे सिद्धेगे, बुद्धेगे यावत् सब दुःखों का अंत करेंगे अब इस उद्देशे में जो अधि-

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ श्री गणेशाय नमः ॥ श्री गणेशाय नमः ॥ श्री गणेशाय नमः ॥

भावन ता० उ स दे० देवलोक मे आ० आयुष्य क्षय से जा० यावत् क० कहां उ० उपजेगा गो० गौतम
 म० महाविदेह क्षय मे सि० सिद्धिगा जा० यावत् अं० अंतकरेगा स० यह ए० ऐसे भं० भगवत्
 सि० ऐसे ॥ ३ ॥ १ ॥ * * * * *

महाविदेह वासे सिद्धिहिह जाय अंतं करेहिह सेवं भंतं भंते सि ॥ गाहाओ
 छट्टममासोअहअह, मासो वासाइं अह, छममासा, तीसग कुरुदत्ताणं, तव भक्त
 परिच परियाओ ॥ १ ॥ उच्चत्त विमाणणं पाउब्भव पंच्छणाय संलंवि ॥ किच्चवि
 यादुष्यत्ती, सणकुमारय भवियत्तं ॥ २ ॥ मोया सम्मत्तो ॥ इति तइए सए पढमो उहेसो
 सम्मत्तो ॥ ३ ॥ १ ॥ * * * * *

कार कहा हे उस का संक्षेप से गाथा द्वारा बतलाते हैं. तिष्यक अनगारने. वेले २. पारणं किये, कुरुदत्त
 अनगारने वेले तेल पारने किये, तिष्यक अनगार का एक मासका संभारा और कुरुदत्त को १८ दिन का
 मंधारा तिष्यक अनगार को आठ वर्ष की दीक्षा और कुरुदत्त को छ मास की दीक्षा. विमानों की ऊंचाई
 इन्द्रों का पीडना, इन्द्रों का अवलोकन, इन्द्रों का संभाषण, इन्द्रों का कार्य, इन्द्रों का
 विशाद, सनत्कुमारिन्द्र द्वारा समाधान और यद्यप्य अभव्य का पक्ष कहा. यह मोया नामक नगरी का
 अधिकांश समाप्त हुआ. यह तीसरे द्यतकका प्रथम उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ ३ ॥ १ ॥

* * * * * श्री गणेशाय नमः ॥ श्री गणेशाय नमः ॥ श्री गणेशाय नमः ॥

(भगवती) पञ्चमोऽध्यायः

ते० उत काल ते० उत समय मे० रा० राजगृह न० नगर ही० या जा० यावत् प०परिपदा प० पयुषा
सना करते ॥ * ॥ ते० उत काल ते० उत समय मे० च० नवर अ० असुरेन्द्र च० चपर चंचा रा० राज्य
थानी स० सभा सु० सुधर्मा के च०चपर सी० निहासन च० चौसठ सा० सामानिक सा०सहस्र जा०यावत्
न० नाट्यविधि उ० वताकर जा० जिमदिशि से पा० आया ता० उसदिशि मे० प० पीछागया ॥ १. ॥

तेणं कालेणं, तेणं समएणं रायणिहे नयरे होत्था, जाव परिसा पज्जुवासइ, ॥ * ॥
तेणं कालेणं, तेणं समएणं चमरे असुरिदे असुरराया चमर चंचाए रायहाणीए सभाए
सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि चउसट्टीए सामाणिय साहरसोहिं जाव नट्टविहं उव-
दंसेत्ता जांमवदिसिं पाउब्भुए तांमवादांसिं पडिणए ॥ १ ॥ भंतिति भगवं गोयमे

प्रथम उद्देशे में देवता की विक्रिया का रहस्य कहा. अब दूसरे उद्देशे में देव की शक्ति का प्रश्न
पूछते हैं. उत काल उत समय में राजगृह नामक नगर था. उत के गुणशील नामक उद्यान में श्री
श्रमण भगवंत महाशिर स्वामी पधारे. परिपदा आकर सेवा भक्ति करने लगी. ॥*॥ उत काल उत समय में
चपर नामक असुरेन्द्र असुरदेव के राजा चपर चंचा राज्यधानि में सुधर्मा सभा के चपर नामक निहासन पर
चौसठ हजार सामानिक देव सहित बैठे हुए थे. श्री श्रमण भगवन्त को राजगृही नगरी के गुणशील
नामक उद्यान में बैठे हुए अवधि ज्ञान से देखकर सब परिचार सहित वंदन करने को आये, यावत्

सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि चउसट्टीए सामाणिय साहरसोहिं जाव नट्टविहं उव-

पञ्चमंग विवाह पणगालि (भगवते)

ॐ श्री गणेशाय नमः

ते० उस काल तं० उन समय में रा० राजगृह न० नगर हो० था जा० यावत् प० परिपदा प० पयुषा सना करते ॥ * ॥ ते० उस काल ते० उस समय में च० चमर अ० अमुरेन्द्र च० चमर चंचा रा० राज्य धारी स० सभा सु० सुधर्मा के च० चमर सी० तिहासन च० चौसठ सा० सामाजिक सा० सहस्र जा० यावत् न० नाट्याधिपि उ० वताकर जा० जिसदिशि से पा० आया ता० उसदिशि में प० पीछागया ॥ १. ॥

तेणं कालेणं, तेणं समएणं रायणिहे नयरे होत्था, जाव परिसा पज्जुवासइ, ॥ * ॥

तेणं कालेणं, तेणं समएणं चमरे अमुरिंदे असुरराया चमर चंचाए रायहाणिए सभाए सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि चउसठुए सामाणिय साहससोहिं जाव नट्टविहं उव-

दंसेत्ता जांवेदिसि पाउब्भूए तांमेवादांसि पडिगए ॥ १ ॥ भंतिसि भगवं गोयमे

प्रथम उद्देश में देवता की विकृष्टि का सरल कथा. अब दमरे उद्देश में देव की शक्ति का प्रश्न पूछते हैं. उन काल उस समय में राजगृह नामक नगर था. उस के गुणशील नामक उद्यान में श्री श्रमण भगवंत महासीर रक्षामी पथारे. परिपदा आकर सेना भक्ति करने लगी. ॥*॥ उस काल उस समय में चमर नामक अमुरेन्द्र अमुरदेव के राजा चमर चंचा राज्ययानि में सुधर्मा सभा के चमर नामक तिहासन पर चौसठ हजार सामाजिक देव सहित बैठे हुए थे. श्री श्रमण भगवन्त की राजगृही नगरी के गुणशील नामक उद्यान में बैठे हुए अधधि ज्ञान से दलकर सब परिवार सहित वंदन करने को आये, यावत्

ॐ श्री गणेशाय नमः

सूत्र (भगवती) पण्णात्ति विवाह पंचमाह

स्थान भं० भगवन् अ० असुर कुमार दे० देव प० रहते है गो० गौतम इ० इस र० रत्नप्रभा पु० पृथ्वी का अ० अरसी उ० उत्तर जो० योजन स० लाख वा० जाडपने ए० ऐसे अ० असुर कुमार देव व० वक्त व्यता ना० यावत् दि० दीव्य भो० भोग भुं० भोगते वि० विचरते है ॥ ३ ॥ अ० है भं० भगवन् अ० असुर कुमार दे० देव अ० अयोगति में वि० विषय हं० हां अ० है के० कितना भं० भगवन् अ० खाइणं भंते ! असुरकुमारा देवा परिवसंति ? गोयमा ! इमीसे रयणत्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्स, वाहल्लाए, एवं असुर देव वत्तव्याए, जाव दिव्वाइं भोग भोगाइं भुंजमाणा विहरंति ॥३॥ अत्थिणं भंते ! असुरकुमाराणं देवाणं अहे गति

भगवन् ! वे असुर कुमार कहां रहते हैं ? अहो गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का एक लाख अरसी हजार योजन का पृथ्वी पिंड है, इस में एक हजार उपर व एक हजार नीचे छोड़ कर एक लाख अठ हजार हजार योजन की पोखार है, जिस में प्रथम नरक के चारह आंतरे व तेरह पाण्डे हैं, जिस में उपर का एक व नीचे का एक ऐसे दो आंतरे छोड़कर शेष दश आंतरे में दश जातिके भुवन पति देव के सात क्रोड वहत्तर लाख विमान हैं, प्रथम अंतर में असुरकुमार जाति के देवता के ६४०००० भवन हैं, वहां असुरकुमार देवता दीव्य ऋद्धि व उत्तम भोग भोगवते हुए विचरते हैं ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! असुर कुमार जाति के देवों को नीचे जाने की क्या शक्ति है?

पंचमांग विवाह पण्णात्ति (भगवती)

भं० भगवन् अ० असुरकुमार दे० देवका ति० तिर्यक् गति में वि० विषय हं० हां अ० है कं० कितना
 भं० भगवन् अ० असुरकुमार देवोका ति० तिर्यक् गति में वि० विषय गो० गौतम जा० यावत् अ०
 असंख्यात दी० द्वीप स० समुद्र तं० नंदीश्वर द्वीप को ग० गये ग० जावेंगे किं० क्या प० कारन से भं०
 भगवन् अ० असुर कुमार दे० देव नं० नंदीश्वर द्वीप को ग० गये ग० जावेंगे जे० जो अ० अरिहंत भं०
 भगवन्त का ज० जन्म महात्सव नि० दीक्षा महात्सव णा० ज्ञान उत्थात महात्सव प० निर्वाण महात्सव में
 देवाणं तिरियगति विसए पणत्ते ! हंता आत्थि । केवइयाणं भंते असुरकुमाराणं देवाणं
 तिरियगइविसए पणत्ते ? गोयमा ! जाव असंखेज्जा दीव तमुदा नंदिस्सरत्वरं पुण
 दीवं गयाय गमिस्संतिय ॥ किं पत्तियणं भंते ! असुरकुमारा देवा नंदिस्सरत्वरं दीवं
 गयाय, गमिस्संतिय? गोयमा ! जे इमे अरहंता भगवंतो एएसिणं जंमणमहेसुवा,
 निक्खमण महेसुवा, णाणुत्थायमहिमासुवा, परिनिव्वाण महिमासुवा, एवंखत्तु असुर
 असुरकुमार देव तिच्छं जाते है. अहां भगवन् ! असुरकुमार देव तिच्छं कहांतक जाते है? अहां
 गौतम ! उन की जाने की शक्ति असंख्यात द्वीप समुद्र तक की है परंतु आठवा नंदीश्वर द्वीप तक
 गये है और जावेंगे. अहां भगवन् ! वे असुर कुमार देव किस कारनसे नंदीश्वर द्वीप में गये और
 जावेंगे ? अहं गौतम ! अरिहंत भगवंत के जन्म म्हात्सव, दीक्षा म्हात्सव, ज्ञान का उत्पन्न होने का

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

अ० असुर कुमार देव न० नदीश्वर द्वीप को ग० गये ग० जाँगे ॥ ६ ॥ अ० है भ० भगवन् अ०
 असुर कुमार दे० देवका उ० ऊर्ध्वगति विषय ग० गौतम जा० यावत् अ० अच्युत देवलोक सो० सौधर्म देवलोक
 कुमार देवका उ० ऊर्ध्वगति विषय ग० गौतम जा० यावत् अ० अच्युत देवलोक सो० सौधर्म देवलोक
 ग० गये ग० जाँगे किं किस प० प्रयोजन से भ० भगवन् अ० असुर कुमारदेव सो० सौधर्म देवलोक
 को ग० गये ग० जाँगे गो० गौतम ने० उन दे० देवों का भ० भवप्रत्यय का वे० वैरसे ते० वे दे० देव वि०
 कुमार देवा नदिस्सरवरं दीवं गयाय गमिस्सन्तिय ॥ ६ ॥ अस्थिणं भंते ! असुर
 कुमारणं देवाणं उडुगद्विसए ? हंता अस्थि । केवइयं चणं भंते ! असुरकुमारणं
 देवाणं उडुं गतिविसए ? गोयमा ! जाव अच्युएकए सोहम्मं पुणकए गयाय गमि-
 स्सन्तिय, । किं पत्तिपणं भंते ! असुरकुमारा देवा सोहम्मं कएयं गयाय गमिस्सन्तिय ?
 परात्सव और निर्वाण का महोरसव इन चार कारण से नदीश्वर द्वीप को असुर कुमार देवता गतकाल में
 गये और भविष्य में जाँगे ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! असुरकुमार देवों को उपर जाने की शक्ति का
 विषय है ? हाँ गौतम! असुर कुमार देवों को उपर जाने की शक्ति है, अहो भगवन् ! वे ऊर्ध्व लोकमें कहाँ
 एग जा सकते हैं ! अहो गौतम ! उन में अच्युत देवलोक तक जाने की शक्ति है किन्तु सौधर्म देव-
 लोक तक गये हैं और जाँगे, अहो भगवन् ! असुर कुमार देव किस कारण से सौधर्म देवलोक में

* भगवन् उवाच ॥ अत्रोक्तं किं च ॥ अत्रोक्तं किं च ॥ अत्रोक्तं किं च ॥

(भगवत्) सूत्र (पितृव्य पण्डित)

विकुर्वणा करते प० परिचारणा करते आ० आत्मरक्षकदेव की वि० प्राप्त उपजावे अ० यथा ल० लघु र० रत्न ग० ग्रहणकर आ० स्वतः ए० एकान्त में अ० जावे ॥ ७ ॥ अ० है भ० भगवन् ते० उन दे० देवको अ० यथा ल० लघु र० रत्न हं० हां अ० है से० वह क० कया इ० इनको प० करे त० पीछे का० काया कौं प० पीडा उपजावे ॥ ८ ॥ प० समर्थ भ० भगवन् अ० असुर कुपार देव त० तहां गोयमा ! तिसिणं देवाणं भवपञ्चद्वय वेराणुबंधे तेणं देवा विकुञ्चमाणा परियारंमाणावा, आपरक्खे देवे त्रिचासंति, अहा लहुसगाइं रयणाइं गहाय आयाए एमंतमंतं अव-कमंति ॥ ७ ॥ अस्थिणं भंते ! तिसिं देवाणं अहा लहुसगाइं रयणाइं ? हंता आस्थि । से कहसिदाणि पकरेइ, तओसे पच्छाकायं पव्वहंति ॥ ८ ॥ पभूणं भंते ! तिसिं अ-

गये और जावेंगे ? अहो गौतम ! भवपन्थायिक वैरसे वे देव विकुर्वणा करते हुए या अन्य देवी की साथ परिचाराणा करने की वाञ्छा करते हुए आत्म रक्षक देवको प्राप्त उत्पन्न करते हैं. अथवा बहुत छोट रत्नों ग्रहण करके एकान्त में चलेजाते हैं ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! उन वैमानिक देवों को कया यथा-योग्य छोटे रत्न है ? हां गौतम ! उन को छोटे रत्नों रहे हुने हैं. फीर उन रत्नों की चोरी करनेवाले को क्या करते हैं ? अहो गौतम ! उन लेनेवाले को रत्नका मालिक देवता महार करता है जिस से उन को महावेदना होती वह जगन्प्य अंतर्मुहूर्त उरुह्य छमास तक रहती है ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! असुर कुपार

पञ्चमोऽङ्गो विवाहः पण्डितैः (भगवतो)

कुमारदेव ता० उन अ० देवियों की सं० साथ दि० दीव्य भो० भोग भुं० भोगवते दि० विचरने को ए०
 ऐसे गो० गौतम अ० असुर कुमारदेव सो० सौधर्म देवलोक में ग० गये ग० जायेंगे ॥ ९ ॥ के० कितने
 काल में अ० असुर कुमार देव उ०ऊर्ध्व उ०ऊर्ध्व जा०यावत् सो०सौधर्म दे०देवलोक में ग० गये ग०जायेंगे
 गो० गौतम अ० अनंत ओ० उत्सर्पिणी अ० अवसर्पिणी म० समय कथीत हुये अ० है ए० ऐसे लो०

पशू ते असुरकुमारा देवा ताहि अच्छराहिं सद्धिं दिव्याइं भोगभोगाइं भुंजनाणा वि-
 हरितए ॥ एवं खलु गोयमा ! असुरकुमारा देवा सोहम्मं कण्ठं गयाय गामिरसंति
 ॥ ९ ॥ केवइयकालस्सणं भते ! असुरकुमारा देवा उट्ठं उप्ययंति जात्र सोहम्मं कण्ठं
 गयाय गामिरसंतिय ? गोयमा ! अणंताहिं ऊरसपिणीहिं अणंताहिं अवसपिणीहिं
 समइकंताहिं । अस्थिणं एस भवे लोपथेरयभए ससुप्पजइ, जणं असुरकुमारा देवा

समर्थ है परंतु यदि वे अप्सराओं उन को आदर करे नहीं या उन को स्वामीपने जाने नहीं तो उन की
 साथ भोग भोगने को वे समर्थ नहीं हैं। अहो गौतम ! हम कारन से असुर कुमार देव सौधर्म देवलोक में
 गये और जायेंगे ॥ ९ ॥ अहो भगवन् ! कितने काल में असुर कुमार देव उर्ध्व जावे यावत् सौधर्म
 देवलोक में गये या जायेंगे ? अहो गौतम ! अनंत अवसर्पिणी उत्सर्पिणी व्यतीत हुए पीछे ऐसा होगा।

श्री अमरक कापीटी मुने श्री अमरक-भाष्यप्रकाशने

ग० गये हुये ता० उन प्र० अन्तरा की स० साथ दि० दीव्य भा० भोगोपभोग भुं० भोगवते वि० विचरने को णो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ त० तहां से प० नीकलकर इ० पठां आ० आकर ज० जो अ० दीवियों आ० आकर करती हैं प० परिचारणा इच्छे प० समर्थ ते० वे अ० असुर कुमार दे० देव ता० उन अ० दीवियों की स० साथ दि० दिव्य भा० भोग भुं० भोगते वि० विचरने को अ० अथवा ता० वे अ० दीवियों नो० नहीं आ० आकर करं नो० नहीं प० परिचारणा इच्छे णो० नहीं प० समर्थ ते० वे अ० असुर सुकुमारा देवा तरथगया चंद्र समाणा ताहिं अच्छराहिं सद्धि दिव्याहं भोग भोगाहं भुंजमाणा विहारित्प ? णो इणंठुं समट्टे । तेषं तओ पडिनियत्तंति पडिनियत्त इत्ता इहमागाच्छइ इहमागाच्छइत्ता, जइणं ताओ अच्छराओ आढायंति परि-याणंति पभूण ते असुरकुमारा देवा ताहिं अच्छराहिं सद्धि दिव्याहं भोग भोगाहं भुंजमाणा विहारित्प ॥ अहणं ताओ अच्छराओ नो आढायंति नो परियाणंति णोणं देव वपानिक मे रही हुई अन्तराओं की साथ भोग भोगवते को क्या समर्थ है ? अहो गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है. अर्थात् वे वैपानिक देवलोक में वहां की अन्तराओं की साथ भोग भोगवन को समर्थ नहीं है. वे असुर कुमार देव वहां से अन्तराओं को लेकर पीछे अपने विमान में आते हैं, विमान में आये पीछे यदि वे अन्तराओं उन को आर्द्धगन करे या स्तापीपने जाने तो वे उन की साथ भोग भोगने को

अमरक-भाष्यप्रकाशने श्री अमरक-भाष्यप्रकाशने

(भगवतो विवाह पण्णात्)

कुमारदेव ता० उन अ० देवियों की स० साथ दि० दीव्य भो० भोग भुं० भोगवते वि० विचरने को ए०
 ऐसे गो० गौतम अ० असुर कुमारदेव सो० सौधर्म देवलोक में ग० गये ग० जावेंगे ॥ ९ ॥ के० कितने
 काल में अ० असुर कुमार देव उ० ऊर्ध्व उ० ऊर्ध्व जा० यावत् सो० सौधर्म दे० देवलोक में ग० गये ग० जावेंगे
 गो० गौतम अ० अनंत ओ० उत्सर्पिणी अ० अवसर्पिणी स० समय कथतीत हुये अ० है ए० ऐसे लो०

पुत्र ते असुरकुमारा देवा ताहि अच्छ्राहिं सद्धिं दिव्याइं भोगभोगाइं भुंजमाणा वि-
 हरित्तए ॥ एवं खलु गोयमा ! असुरकुमारा देवा सोहम्मं कथं गयाय गामिरसंतति
 ॥ ९ ॥ केवहयकालस्सणं भंते ! असुरकुमारा देवा उहुं उप्पयाति जाव सोहम्मं कथं
 गयाय गामिरसंतिय ? गोयमा ! अणंताहिं ऊसप्पिणीहिं अणंताहिं अवसप्पिणीहिं
 समइकंताहिं । अत्थिणं एस भवे लोयत्थेरयभुए समुप्पज्झइ, जण्णं अत्तरकुमारा देवा।

समर्थ है परंतु यदि वे अप्सराओं उन को आदर करे नहीं या उन को स्वामीपने जाने नहीं तो उन की
 साथ भोग भोगने को वे समर्थ नहीं हैं, अहो गौतम ! इमं कारन से असुर कुमार देव सौधर्म देवलोक में
 गये और जावेंगे ॥ ९ ॥ अहो भगवन् ! कितने काल में असुर कुमार देव ऊर्ध्व जावे यावत् सौधर्म
 देवलोक में गये या जावेंगे ? अहो गौतम ! अनंत अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कथतीत हुए पीछे चला जाता

पंचमा विवाह पण्णात्ति (भगवती) सूत्र

को आं खेदित करे एं ऐमे अं असुरकुमार देव अं अरिहंत अं उग्रस्य अरिहंत अं अनगार भां भवितात्मा की निं नेश्राय उं ऊर्ध्व जां यावत् सौधर्म देवलोक ॥ ११ ॥ स० सब अं असुर कुमार देव उं ऊर्ध्व उं ऊडे जां यावत् सोंसौधर्म देवलोक गोंगौतम नो० नदीं इ० यह अर्थ स० समर्थ प० महर्दिक अं असुर कुमार देव उं ऊर्ध्व उं ऊडे जां यावत् सोंसौधर्म देवलोक ॥ १२ ॥ ए० यह भं० भगवन् अं असुरेन्द्र अं

अरहंतचेइयाणिवा, अणगारि, भावियप्पणो निस्साए उहुं उप्पयंति जाव सोहम्मसे कप्पे ॥ ११ ॥ सत्वेवियणं भंते ! असुरकुमारा देवा उहुं उप्पयंति जाव सोहम्मसे कप्पे ! गोयमा ! णोइणट्टे समट्टे ! महिद्धियाणं, असुरकुमारा देवा उहुं उप्पयंति जाव सोहम्मसे कप्पे ॥ १२ ॥ एसवियणं भंते ! चमरं असुरिदे असुरराया उहुं उप्प-

स्थान व पर्वत के आश्रय से बहुत बडा अश्वत्थ, हस्ती बल, योग बल, और धनुष्य बल को पराजित कर सकते हैं; ऐसे ही असुर कुमार देव अरिहंत भगवन्त, अरिहंत चैत्य सो द्रव्य अरिहंत उग्रस्य, अनगार और भवितात्मा का आश्रय लेकर ऊंचे सौधर्म देवलोक तक जाते हैं ॥ ११ ॥ अहो भगवन् ! क्या सब असुर कुमार देव ऊंचे जाने की शक्तिवाले यावत् सौधर्म देवलोक में गये और जावेंगे ! अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. महर्दिक असुरकुमार देव मात्र सौधर्म देवलोक में गये और जावेंगे ॥ १२ ॥

सूत्र (भगवती) पण्डित विवाह

को आंखें दित करे ए० ए० अ० असुरकुमार देव अ० अरिहंत अ० उग्रस्य अरिहंत अ० अनगार भा० भवितात्मा की नि० नेश्राय उ० ऊर्ध्व जा० यावत् सौधर्म देवलोक ॥ ११ ॥ स० सव अ० असुर कुमार देव उ० ऊर्ध्व उ० ऊडे जा० यावत् सो० सौधर्म देवलोक गो० गौतम नो० नदीं इ० यह अर्थ स० सपर्य म० महर्दिक अ० असुर कुमार देव उ० ऊर्ध्व उ० ऊडे जा० यावत् सो० सौधर्म देवलोक ॥ १२ ॥ ए० यह भ० भगवन् अ० असुरेन्द्र अ०

अरहंतचेइयाणिवा, अणगारि, भावियप्पणो निस्ताए उहुं उप्पयंति जाव सोहस्मे कल्पे ॥ ११ ॥ सत्वेवियणं भंते ! असुरकुमारा देवा उहुं उप्पयंति जाव सोहस्मे कल्पे ! गोयमा ! णोइणट्टे समट्टे । महिद्धियाणं, असुरकुमारा देवा उहुं उप्पयंति जाव सोहस्मे कल्पे ॥ १२ ॥ एसवियणं भंते ! चमरं असुरिदे असुरराया उहुं उप्प-

स्थान व पर्वत के आश्रय से बहुत बड़ा अश्वत्थ, हस्ती बल, योग्य बल, और धनुष्य बल को पराजित कर सकते हैं; ऐसे ही असुर कुमार देव अरिहंत भगवन्त, अरिहंत चैतस सो द्रव्य अरिहंत उग्रस्य, अनगार और भवितात्मा का आश्रय लेकर ऊंचे सौधर्म देवलोक तक जाते हैं ॥ ११ ॥ अहो भगवन् ! क्या सब असुर कुमार देव ऊंचे जाने की शक्तिवाले यावत् सौधर्म देवलोक में गये और जावेंगे ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. महर्दिक असुरकुमार देव मात्र सौधर्म देवलोक में गये और जावेंगे ॥ १२ ॥

ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ १२ ॥ अ० अहो भं० भगवन् च० चमर-
राजा की प० महाशुद्धि मं० महाशुद्धि जा० यावत् क० कहां प० भवेत् हुइ कू० कूडागार शाला दि० दृष्टान्त
भा० कहां ॥ १४ ॥ च० चमर भं० भगवन् अ० असुरेन्द्र अ० असुर राजा की सा० वह दीव्य दे०
दे० शक्ति किं० किमते ल० लब्ध ए० ऐसे गो० गौतम ते० उस काल से० उस समय में इ० इस जं०
जं० शरीर में भ० भरत क्षेम में वि० विध्याचल पर्वत की प० नजदीक वे० वेभेल स० सविवेशा हो० या
इयं पुत्र्ये जाय सोहस्मे कथे ? हंता गोयमा ! एसत्रियणं चमरे असुरिदे असुरराया
उहुं लखइयं पुत्र्ये जाय सोहस्मे कथे ॥ १३ ॥ अहीणं भंते चमरे असुरिदे असुर-
राया महिद्वीए महजुत्तीए जाय कहिं पविट्टा ? कूडागारसाला दिट्ठतो भाणियव्वो ॥ १४ ॥
चमरेणं भंते ! असुरिदेणं असुरराणां सा दिव्या देवद्वी तंचेव किण्णालद्धा ३, एवं खलु

अहो भगवन् ! यह चमर नामक असुरेन्द्र पहिले कथा सौधर्म देवलोक में गया ? हां गौतम ! यह चमर
नामक असुरेन्द्र पहिले सौधर्म देवलोक में गया ॥ १३ ॥ अहो भगवन् ! इस चमर नामक असुरेन्द्र की
महाशुद्धि महाशुद्धि वगैरह कहां चली गई ? अहो गौतम ! कूडागार शाला जैसे पीछी शरीर में चली गई
॥ १४ ॥ अहो भगवन् ! चमर नामक असुरेन्द्र असुरराजाको ऐसी दीव्य देवद्वि कैसे प्राप्त हुई यावत्
सन्मुख हुई ? अहो गौतम ! उस काल उस समय में इस जन्मद्वीप के भरत क्षेम में विन्ध्याचल पर्वत

* महाशुद्धि-राजाशुद्धि-शाला-सुमुख-सहाय-गौतम-सन्मुख

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥

प० प्रथम पु० पुढ में प० दाले क० कल्पता ह मे० मुखे प० धर्मित प० पथिक को द० देनेको जं० जो दो० दूसरे पु० पुढ में प० दाले क० कल्पता है मे० मुखे का० काक सु० भवान को द० देना जं० जो गार्हपं गहाय वेभेल साणिवेसे उच्चनीयमद्भिमाई कुलाई धरसमुदाणरस भिक्त्वा-
 यरियाए अडेत्ता जंमे पढमे पुडए पडइ, कप्पइ मे तं पत्थिय पहियाणं दलइत्तए,
 जंमे दोच्चं पुडए पडइ, कप्पइ मे कागसुणयाणं दलयित्तए, जंमे तच्चं पुडए पडइ
 कप्पइ मे तं मच्छ कच्छभाणं दलइत्तए, जं मे चउत्थे पुडए पडइ कप्पइमे तं अ-
 प्पणा आहारं आहरेत्तए चिकट्टु, एवं संपेहेइ संपेहइत्ता कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए
 तं चैव निरवसेसं चउत्थे पुडए पडइ तं अप्पणा आहारं आहरेइ ॥ १५ ॥ तएणं

नापर मत्तर्था ग्रहण करना मुखं श्रेय है. दान मत्तर्था अंगीकार किये पीछे आतापना भूमि से पीछे
 भ्रकर स्वयं ही चार पुढवाल काएप्रथ पात्र लेकर वेभेल सन्निवेश में ऊंच, नीच व मध्यम कुल के
 गार्ह की भिक्षाचरी ग्रहण करेगा. और चार पुढवाल पात्र में से प्रथम पुढ में जो भिक्षा दालेंगे उसे
 पथिक जनों को देऊंगा, दूसरे पुढ में भिक्षा दालेंगे उसे मैं काण ममुख पक्षी व भवान ममुख को
 दालूंगा, तीसरे पुढ में जो भिक्षा दालेंगे उसे मत्स्य कच्छ वगैरह को दालूंगा और चौथे पुढ में जो
 भिक्षा दालेंगे उस का मैं आहार करूंगा. ऐसा विचार करके प्रयात होते सब क्रिया की यावत्

* मकीयक-राजावहभूरा शला सुवदेवसंशयश्च धनोपमसत्यश्च *

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला मुखर्जीदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

काल तेः उस्स समय मे अ० मे गो० गौतम छ० छद्मस्थ अवस्था मे ए० अग्यारह वर्षकी प० दीक्षा से छ० छठ भक्त अ० अंतर रहित त० तपकर्म से सं० संयम से त० तप से अ० आत्मा को भा० भावता पु० अनुक्रम से च० चलता गा० ग्रामानुग्राम दू० जाता जे० जहाँ सु० सुसुमार पुर न० नगर जे० जहाँ अ० शोक वनखंड उ० उद्यान जे० जहाँ अ० अशोक वृक्ष जे० जहाँ पु० पृथ्वी शिलापट उ० आकर अ० अशोक वृक्ष की डे० नीचे पु० पृथ्वी शिलापट पे अ० अठम भक्त प० ग्रहणकर दो० दोपैव सा० तेणं कालेणं, तेणं समएणं अहं गोयमा ! छउमत्थकालियाए एक्कारसवासपरियाए छट्टं

छट्टणं अनिक्खित्तेणं तवोक्कस्सेणं संजमेणं तवसा अप्पणं भवेमाणे, पुब्बाणुपुब्बि चरमाणे, गामाणुगामं दूइज्जमाणे, जेणेव सुंसुमार पुरे नगरे जेणेव असोयवणसंडे उज्जाणे जेणेव असोयवरपांयवे जेणव पुढविशिलापट्टए तेणेव उवागच्छामि उवाग-

र्ष की साथ की पर्याय पालता हवा, निरंतर छठ के पारणे का तप कर्म व संयम मे आत्मा को चिन्तवता हवा, पूर्वतुर्पर चलता हवा और ग्रामानुग्राम विचरता हवा मे सुसुमारपुर नगर के अशोक वनखंड नामक उद्यान मे अशोक वृक्ष की नीचे पृथ्वी शिलापट की पास आया. वहाँ आकर अशोक वृक्ष नीचे पृथ्वी शिला पटपर अठम भक्त (तेला) किया. दोनों पाँव भंहर कर (जिन मुद्रासे) लम्बी बाहु करके एक ही पुटल पर दृष्टिस्थापकर, अनिमेष-दृष्टि रखकर, थोडासा मस्तक नमाकर यथास्थित गात्रों को

शब्दार्थ
००
००

भा० चार्थ

इकठेकर उलंवा पाहस्त एं एक पुदल में निःस्थापन की दिःष्टि अं अनिमिपिनेत्र ईं थोडी पं नभीहू
 का० काया से अ० यथा प० स्थापित ग० गात्र स० सर्व इ० इन्द्रिय गु० गुप्त ए० एकरात्रि की म०
 महाप्रतिमा व० अंगीकार कर त्रि० विचरता हूँ ॥ १७ ॥ ते० उम काल ते० उस समय में च० चमर
 चंवा रा० राज्यधानी अ० इन्द्र रहित अ० पुरोहित रहित हो० थी ॥ १८ ॥ त० तव मे० वह पू०
 पूरण वा० बालतपस्वी व० बहुत प० प्रतिपूर्ण दु० चारह वा० वर्ष प० पर्याय पा० पालकर मा० मासकी सं०

च्छइत्ता असोयत्र पायवस्स हेहे पुढाविसिला पटयंसि अट्टमभत्तं पगिण्हामि दोत्रि

पाए साहदु वग्घारियपाणी, एगवोगल निविट्टुदिट्ठी, ईसि पवभार-
 गणं काएणं अहावणिहिण्हिं गत्तेहिं, तच्चिदिण्हिं गुत्तेहिं, एगराइयं महापडिमं उव-
 संपज्जित्ता विहरामि ॥ १७ ॥ तं कालेणं तेषं समएणं चमरचंचा रायहाणी अणि-
 दा अपुरोहिया यात्रि होत्था, ॥ १८ ॥ तएणं से पूरणे बालतवस्सी बहुपडिपुण्णाइं
 पुवालसवासाइं परियागं पाठणिच्चा मासियाए संलहणाए अत्ताणं झूसेत्ता सट्ठि भत्ताइं

स्थापकर सब इन्द्रियों को गोपकर एक रात्रि की महापडिमा अंगीकार करता हुआ विचरता था ॥ १७ ॥
 उस का उ उत समय में चमर चंचा राज्यधानी इन्द्र रहित पुरोहित रहित थी ॥ १८ ॥ उस समय में वह
 पूरण नामक बालतपस्वी चारह वर्ष पर्यंत दान प्रवर्ज्या पालकर एक मास की संलखना से आत्मा को

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

काल नेः उस समय में अ० में गा० गौतम छ० छद्मस्थ अवस्था में ए० अग्यारह वर्षकी प० दीक्षा से छ० छठ भक्त अ० अंतर रहित त० तपकर्म से सं० संयम से त० तप से अ० आत्मा को भा० भावता पु० अनुक्रम से च० चलता गा० ग्रामानुग्राम दू० जाता जे० जहाँ सु० सुसुमार पुर न० नगर जे० जहाँ अ० अशोक वनखंड उ० उद्यान जे० जहाँ अ० अशोक वृक्ष जे० जहाँ पु० पृथ्वी शिलापट उ० आकर अ० अशोक वृक्ष की हे० नीचे पु० पृथ्वी शिलापट पे अ० अठम भक्त प० ग्रहणकर दो० दोपौत्र सा० तेणं कालेणं, तेणं समणं अहं गोयमा ! छउमत्थकालियाए एक्कारसवासपरियाए छट्ठं छट्ठणं अनिक्खित्तेणं तवोक्कमेणं संजमेणं तवसा अप्पाणं भविमाणे, पुब्बाणुपुब्बि चरमाणे, गामाणुगामं दूइज्जमाणे, जेणेव सुसुमार पुरे नगरे जेणेव असोयवणंसंडे उज्जाणे जेणेव असोयवरयांयत्रे जेणं पुढविसिलापट्टे तेणेव उवागच्छामि उवाग-

वर्ष की साधु की पर्याय पालता हवा, निरंतर छठ के पारणे का तप कर्म व संयम में आत्मा को चिन्तवता हुआ, पूर्वनिर्णय चलता हुआ और ग्रामानुग्राम विचरता हुआ मैं सुसुमारपुर नगर के अशोक वनखंड नामक उद्यान में अशोक वृक्ष की नीचे पृथ्वी शिलापट की पास आया. वहाँ आकर अशोक वृक्ष नीचे पृथ्वी शिला पटपर अठम भक्त (तेला) किया. दोनों पाँव भँहर कर (जिन सुद्रासि) लम्बी बाहु करके एक ही पुद्गल पर दृष्टिस्थापकर, अनिमेष-दृष्टि रखकर, थोड़ासा मस्तक नमस्कर यथास्थित गाँवों को

शब्दार्थ

मंत्र

चाय

यावत् सो० सौधर्म देवलोक प० देखे ॥ २१ ॥ त० तहां स० शक्र दे० देवेन्द्र म० मध्व पा० पाक
शासन स० शतक्रतु स० सहस्रनेत्र वाला व० वत्त पा० हस्त में पु० पुरंदर जा० यावत् द० दशदिशा
में उ० उद्योत करते प० प्रकाश करते सो० सौधर्म देवलोक सो० सौधर्म व० वडिशक विमान सु० सुधर्मा
सभा में स० शक्रके सी० तिहासनपे जा० यावत् दि० दीव्य भो० भोग भुं० भोगते पा० देखे पा० देखकर ॥ २२ ॥
ए० इसरूप अ० आत्मिक चि० चिन्तन प० स्मरण रूप म० मनोगत सं० संकल्प स० उत्पन्न हुआ

गए समाणे उड्डुं वीससाए ओहिणा आभोइए जाव सोहम्ममे कप्पे पासइय ॥ २३ ॥

तत्थ सक्कं देविंदं देवरायं मधवं, पागसासणं, सयक्कउं, सहस्सक्खं, वज्जपाणिं, पुरंदरं,
जाव दसदिसाओ उज्जोत्रेमाणं, पभासेमाणं सोहम्ममेकप्पे सोहम्म वडिसए विमाणे
सभाए सुहम्माए सक्कंसि सीहासणंसि जाव दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणं पासइ,

देवलोक देखने लगा ॥ २१ ॥ वहां पर मेघमाली को वश में रखनेवाला, पाक नामक बलिष्ठ रिपु को
पराजित करनेवाला, कार्तिक श्रेष्ठ के भव में एक सो प्रतिमा का अभिग्रह करनेवाला, सहस्र नयनवाला,
हस्त में वज्र धारण करनेवाला, और अमुर कुमार देव का विदारन करनेवाला ऐसा शक्रेंद्र को उद्योत
क़ाता व प्रकाशता हुआ सौधर्म देवलोक में सौधर्म वडिसण नामक विमान की सुधर्मा सभा में तिहासन पर
दीव्य भोग भोगवता हुआ देखा ॥ २२ ॥ फीर ऐसा अध्यवसाय, चिन्तन, मनोगत संकल्प हुआ कि अप्राप्यंत की

विचरता है ॥ २३ ॥ तं नव मे० ये तां० सामानिक दे० देव च० चमर अ० असुरद्र को ए० ऐते बु०
 बोलाते हुये ह० हृष्ट तु० तुष्ट जा० यावत् ह० आनंद पा० क० करके तले प० जोडकर ट० दशनस्य सि०
 शिर्षि से आ० अर्चिर्तन प० भस्तीक से अं० अञ्जलि क० करके ज० जय वि० विजय से च० वधाकर
 ए० ऐने व० बोले ए० यह दे० देवानुपिय स० शक्र दे० देवेन्द्र जा० यावत् वि० विचरता है ॥ २४ ॥
 त० तव च० चमर अ० असुरद्र अ० असुर राजा ने० उन सा० सामानिक दे० देवों की अं० पास ए०
 एवं संपेहेइ २ चा सामानिय परिसोत्रवणए देवे सहात्रेइ २ चा एवं वयासी केसणं
 एस देवाणुपिया ! अप्पत्थिय पत्थए जात्र भुंजमाणे विहरइ ॥ २३ ॥ तएणसे सामाणिय
 परिसोत्रवणगा देवा चमरेणं असुरिदेणं असुररणो एवं वृत्तासमाणा हट्टुट्टु जात्र हय-
 हियया करयल परिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अञ्जलिकट्टु जएणं विजएणं
 वद्धावोति एवं वयासी एसणं देवाणुपिया ! सक्के देविंदे देवराया जात्र विहरइ ॥ २४ ॥
 तएणं से चमरे असुरिंदे असुरराया तसिं सामाणिय परिसोत्रवणगाणं देवाणं अंतिए
 यह कौन है ? ॥ २३ ॥ जब चमरेन्द्रने सामानिक परिपदा के देवों को ऐसा कहा तब वे बहुत हृष्ट
 तुष्ट हुये और हस्त द्वय जोडकर मस्तकों से आवर्तना देकर जय विजय शब्द से वधाये और कहा. अहो
 देवानुपिय ! यह शक्रेन्द्र ऐसा भोगवतां हुवा विचरता है ॥ २४ ॥ तव चमरेन्द्र उन सामानिक की

वदार्थ (पद्यमिं त्वज्ज ५ वीं) (भावार्थ)

सूत्र

भावार्थ

के० कोन ए० यह अ० अप्रार्थित की प० प्रार्थना करता है दु० दुष्ट अंतर्प० अमनोद्भूत ल० लक्षण वाला, हि० लज्जा मि० लक्ष्मी प० रहित ही० हीन पु० पुन्य चतुर्दशी को जन्मा जे० जितसे म० मेरा इ० यह ए० ऐसे दि० दीव्य दे० देवकृद्धि जा० यावत् दे० देवानुभाष ल० लब्ध प० प्राप्त अ० सन्मुख हुआ उ० उमर अ० मोडा उ० उल्लास दि० दीप्य भो० भोग भुं० भोगते त्रि० विचरता है ए० ऐना सं० विचार कर सा० सामाजिक प० परिपदा में उ० उत्पन्न दे० देवोंको स० बोलाकर ए० ऐना व० बोला के० कोन ए० यह दे० देवानुप्रिय अ० अप्रार्थित की प० प्रार्थना करता है जा० यावत् भुं० भोगवना वि०

॥ २२ ॥ पासहृत्ता इमेयारूत्रे अबमस्थिए चित्तिए, मणोगए संकल्पे समुष्प-

त्रित्या. केसणं एस अप्पत्थिय पत्थए दुरंतंपतलक्खणे हिरिसिरिपरित्रांजिए,
हीणपुण्णचाउदसे जेणं मम इमे एयारूत्राए दिव्वाए देवद्वीए जाव दिव्हे देवाणुभावे
लढ्ढे, पत्ते, आमिसमण्णागए उप्पि अप्पुस्सुए दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे त्रिहरइं

प्रार्थना करनेवाला [परण की वांच्छा करनेवाला] अमनोद्भूत लक्षणवाला, लज्जा, लक्ष्मी रहित, हीन पुण्य चतुर्दशी में उत्पन्न होनेवाला ऐना यह कोन है, मुझे जो ऐसी दीव्य देवकृद्धि यावत् दीव्य महातुभाग प्राप्त हुआ है उनकी उपर यह अल्प उल्लुप्त बनकर दीव्य भोग भोगवता हुआ विचरता है. ऐना विचार करके सामाजिक परिपदा के देवोंको बोलाये और पूजाकिक परण की वांच्छा करनेवाला यावत् भोग भोगवता हुआ जो विचरता है

शब्दार्थ

सू

वार्थ

विचरता है ॥ २३ ॥ तं नैव मे० वे सा० सामानिक दे० देव च० चमर अ० असुरद्र को ए० ऐने तु०
 बोलाते हुये ह० हृष्ट तु० तुष्ट जा० यावत् ह० आनंद पामे क० करके तले प० जोडकर द० दंशनेख सि०
 शिर्षि से ओ० अर्चिर्तन म० भस्तेक से अं० अञ्जलि क० करके ज० जय वि० विजय से व० वधाकर
 ए० ऐने व० बोले ए० यह दे० देवानुप्रिय स० शक्र दे० देवेन्द्र जा० यावत् वि० विचरता है ॥ २४ ॥
 त० तव च० चमर अ० असुरद्र अ० असुर राजा ने० उन सा० सामानिक दे० देवों की अं० पाम ए०
 एवं संपेहेइ २ चा सामाणिय परिसोववणए देवे सदावेइ २ चा एवं वयासी केसणं
 एस देवाणुपिया ! अप्पत्थिय पत्थए जाव भुंजमाणे विहरइ ॥ २३ ॥ तएणसे सामाणिय
 परिसोववणगा देवा चमरेण असुरिदेण असुररणो एवं वुत्तासमाणा हट्टुत्तुट्ट जाव हय-
 हियया करयल परिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अञ्जलिकट्टु जएणं विजएणं
 वद्धावैति एवं वयासी एसणं देवाणुपिया ! सक्के देविदे देवराया जाव विहरइ ॥ २४ ॥
 तएणं से चमरे असुरिदे असुरराया तेसिं सामाणिय परिसोववणगाणं देवाणं अंतिए
 यह कौन है ? ॥ २३ ॥ जव चमरेन्द्रेने सामानिक परिपदा के देवों को ऐसा कहा तव वे बहुत हृष्ट
 तुष्ट हुये और हस्त द्वय जोडकर मस्तकों से आवर्तना देकर जय विजय शब्द से वधाये और कहा. अहो
 देवानुप्रिय ! यह शक्रेन्द्र ऐसा भोग भोगेता हुवा विचरता है ॥ २४ ॥ तव चमरेन्द्र उन सामानिक की

॥ २५ ॥ तं तव से० वह च० चमर अ० अहुरेद्र ओ० अविधिज्ञान को प० प्रयुंजकर म० मुझे आ० देखकर ए० इसरूप अ० अयध्वनाय जा० यावत् स० उत्पन्न हुआ ए० ऐसे स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर ज० जंबूद्वीप में भ० भरत क्षेत्र में सु० सुंसुमार न० नगर में अ० अशोक वनखंड उ० उद्यान में अ० अशोक वृक्ष की अ० नीचे पु० पृथ्वी शिलापट्टे अ० अठम भक्त प० ग्रहणकर ए० एक रात्रिकी म० महाप्रतिमा उ० अंगीकार कर वि० विचरते हैं ॥ २६ ॥ तं वह० से० श्रय मे० मुझे स० श्रमण भ० तएणं से चमरे असुरिंदे असुरराया ओहिं पउंजइ, पउंजइत्ता ममं ओहिणा आभोएइ आभोएइत्ता इमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था, एवंपखलु समणे भगवं महावीरे जंबूद्वीवे दीवे भारहेवासे सुंसुमारपुरे नगरे असोगवणसंडे उज्जाणे, असोगवरपायवस्स अहे पुढवि सिला पट्टयंसि, अट्टमभत्तं पगिण्हित्ता, एगराइयं महापडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ॥ २६ ॥ तं सेयं खलु मे समणं भगवं महावीरं ऊण हुवा ॥ २५ ॥ उस समय में चमरेन्द्रने अविधि ज्ञान प्रयुंजा और मुझे देखा. मुझे देखकर ऐसा अध्वनाय यावत् चिन्तवन उत्पन्न हुआ कि श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में सुंसुमारपुर नामक नगर के अशोक वन खंड उद्यान में अशोक वृक्ष की नीचे पृथ्वीशीला पट्टपर अठम भक्त का मत्प्राख्यान कर एक रात्रि की महा प्रतिमा अंगीकार करते हुवे विचरते हैं ॥ २६ ॥ इस से

पद्यमते विश्वे पणानि (संज्ञाने) मय

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेशसहायजी ज्वालामनादजी *

भगवन्त म० महावीर की नी० नेश्राय से स० शक्र दे० देवेन्द्र की स० स्वयं अ० भ्रष्ट करने को त्ति०
 तेमा करके सं० विचारकर सं० शैत्या से अ० उठकर दे० देवदृष्य प० पंडितकरं जे० जहाँ स० सुंयमा
 मभा जे० जहाँ चो० चउफाले प० आयुधशाला ते० तहाँ उ० आकर फ० परित्र र० रत्न प० ग्रहणकर
 ए० एक अ० अद्वितीय फ० परित्र र० रत्नमय म० बडा अ० अमर्श व० धरता च० चमर चंचा० रा०
 राज्यधानी की म० मध्य से नि० नीकलंकर जे० जहाँ ति० तिगिच्छं कूट उ० उत्पात प० पर्वत ते० तहाँ
 नीसाए सकं देविंद देवरायं सयमेव अक्षासाइचाए त्तिकट्ट, एवं संपेहेइ, संपेहेइत्ता,
 मयणिजाओ अब्मुट्टेइ र ता, देवदूसं परिहेइ, परिहेइत्ता जेणव संभा सुहेम्मां, जे-
 णव चाप्याले पहरणकोसे तेणेव उनागच्छइ, उवागच्छइत्ता फलिहरयणं परामुसइ,
 परामुसइत्ता एगे अचीए फलिहरयणमयाए भहया अमरिसं वहमाणे चमरचंचाए
 रायहाणीए मञ्जं मञ्जणं निगंच्छइ, जेणव तिगिच्छंकूडे
 श्री श्रमण भगवंते महावीर की नेश्राय लंकर शक्र देवेन्द्र की आसातना करना मुझे श्रेय है ऐसा विचार
 कर अपने आसन से उठकर देव दृष्य वस्त्र पहिना और चउफाल नामक शस्त्र का भंडार था वहाँ आया।
 वहाँ आकर परित्र रत्न नामक आंयुध को हस्त में धारन किया: परित्र रत्न को धारन करके अन्य किसी
 को माप नहीं लेने हुवे अमर्षमात्र धारण करके चमर चंचा राज्यधानी की बीच में होकर तिगिच्छंकूट

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

शब्दार्थ सूत्र

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

जा० यावत् दो० दूसरी वक्त धे० वैक्रेय समुद्र्यात स० नीकालकर ए० एक म० वडा घो० घोर घो० घोरामध्य घोरकार भी० विक्राल भा० भयंकर भ० भयानीत गं० गंभीर उ० उद्रेग उपजावे का० कृष्ण मध्य रात्रि मा० उड्ड सं० सरिखा जो० योजन स० लाख प० वडा शरीर को वि० विकुर्बणा कर अ० पछांडे व० वृद्धकर ग० गर्जना कर ह० हयस्वर क० करके ह० हस्तिका शब्द क० करके र० रथका घन घन क० करके पा० पांच पछाड कर भू० गूमि को च० चपेदा द० देकर भी० तिहनाद न० करके उ० उछा

भागं अत्रक्मइ अवक्मइत्ता वेउव्विय समुघाएणं समोहणइ समोहणइत्ता जाव

दोच्चं पि वेउव्वियसमुघाएणं समोहणइ समोहणइत्ता, एगं महं घोरं, घोरगारं, भीमं,

भीमगारं, भासुरं, भयाणीयं, गंभीरं उत्तासणयं कालडूरत्तमासरासि संक्रासं जोंयण

सयसाहस्तीयं महावोदिं विउव्वइ, विउव्वइत्ता अप्फोडेइ, अप्फोडेइत्ता वग्गइ वग्ग-

इत्ता गज्जइ, गज्जइत्ता हयहेसियं करेइ, करेइत्ता हत्थिगुलगुलाइयं करेइ, करेइत्ता

वैक्रेय समुद्र्यात करके प्रदेश बाहिर नीकाले यावत् दूसरी वक्त वैक्रेय समुद्र्यात करके एक वडा, घोर,

घोर आकारवाला, भीम, भीम आकारवाला, देदीप्यमान, भयलानेवाला, गंभीर, उद्रेग उत्पन्न करनेवाला,

श्याम आधीरात्रि व उड्ड ममान एक लक्ष योजन का शरीर बनाया. शरीर बना करके दोनों हाथ की

दक्षिणों या दोनों भुजाओं को कारस्फोट करता, हाथ से कूटता हुआ, जोर से वगासी खाता हुआ, घन

शब्दार्थ

सूत्र

ार्थ

ला उ० उछलकर प० पछोडा पछोडकर ति० त्रिपद छि० छेदकर वा० वायाँ हाथ को ऊ० ऊंचाकर
 दा० दक्षिण हाथ को प० नीचाकर अं० अंगुठा के नख ति० तिच्छी मु० मुख वि० विटम्बनाकर म० बडे
 बडे स० शब्द से क० कल कल अवाज क० करके ए० एक अ० अद्वितीय फ० परिघ र० रत्नमय उ०
 ऊर्ध्व वि० आकाश में उ० उछालता खो० क्षोभ पमाडता अ० अधोलोक को क० कंपावता मे० पृथ्वी
 रहघण घणाइयं करेइ, करेइत्ता पायदरगं करेइ, करेइत्ता भूमिचवेडं दलयइ, दलय-
 इत्ता सीहनादं नदइ, नदइत्ता उच्छोलेइ, उच्छोलेइत्ता पच्छोलेइ, पच्छोलेइत्ता ति०
 वतिं छिदइ, त्रिवतिं छिदइत्ता वामं भुयं ऊसवेइ, ऊसवेइत्ता दाहिण हृथपएसिणीए
 अंगुट्टुनहेणय, त्रितिरिच्छं मुहं विडंबइ, विडंबइत्ता महया महया सद्दणं कलकलखं
 गर्जरख समान शब्द करता हुआ, घांटे के हेंमार समान हेंमार करता हुआ, हाथी की समान गुलगुलाट
 करता हुआ, रथ की समान घणघणट करता हुआ, भूमि पर पाँव आस्फालता हुआ, हाथों के चपेटे भूमि पर
 मारता हुआ, सिंहसमान नाद करता हुआ, मर्कट की तरह उछल उछल कर जाता हुआ, मल्ल की माफक
 रंगभूमि में त्रिपद छेद करता हुआ, वेंची भुजा को उपर ऊंची रखता हुआ, दक्षिण भुजा के पाँव की
 अंगुलीयों परोडता हुआ, मुच्छों को बल घालता हुआ, अत्यंत गोर से कल कलाट करता हुआ, मात्र
 परिघरत्न नामक आयुध को धारण करता हुआ, ऊर्ध्व आकाशमें उछाला खाता हुआ, क्षोभ उत्पन्न करता

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुबदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

आधाररक्षक देव सा० सहस्र क० कहां ता० उन की अ० अनेक अ० अप्सरा को० क्रीडी अ० आज ह०
हनुता इं० म० मन्यन करताईं व० वधकरताहूँ अ० आज म० मुझे अ० अवश अ० अप्सरा व० वशसे उ० नमस्कार
करो ति० ऐसा करके तं० उन को अ० अनिष्ट अ० अक्रान्त अ० अप्रिय अ० अशुभ अ० अमनोन्न अ०
अपनाम फ० कठोर मि० भाषा नि० कही ॥२८॥ त० तव स० शक्र दे० देवेन्द्र तं० उस अ० अनिष्ट जा० यावत

चउरासीई सामाणिय साहस्सीओ, जाव कहिणं ताओ चत्तारिचउरासीओ आयरक्ख-
देवसाहस्सीओ, कहिणं ताओ अणेगाओ अच्छराकोडीओ ? अज हणामि, अज महेमि,
अज्जवेहमि, अज्जममं अवसाओ अच्छराओ वसमुवणमंतु रिकट्टु, तं आणिट्ठं, अकं-
तं, आप्पियं, असुभं, अमणुणं, अमणामं, फरुसंगिरं निसिइ ॥ २८ ॥ तएणं

पारा और बड़े बड़े शब्द में बोलेने लगा अरे शक्र देवेन्द्र देवराजा कहां हैं? उसके चौरासी हजार सामानिक
यात्रू तीन लाख छत्तीस हजार आत्म रक्षक देव और अनेक क्रीड अप्सरा का परिवार कहां है ?
भ्राज मैं उन को मारूंगा, इन सब का मैं वध करूंगा; आज मैं दधि समान मन्थन करूंगा, आजदिन तक
तू मेरे वश में नहीं था अब देवियों सहित वश होकर मुझे नमस्कार करो ऐसा अनिष्ट, अक्रान्त, अप्रिय,
अशुभ, अमनोन्न, अमणाम यात्रू कठोर वचन निकालने लगा ॥ २८ ॥ उस समय मैं ऐसी अनिष्ट

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥

राव्यार्थ

सूत्र



अ० अमनाम अ० नहीं सुनी फ० कठोर गि० भाषा सो० सुनकर नि० अवधारकर आ० आसु
 रत्न जा० यावत् पि० देदीप्यमान ति० तीनरेखा रूप भिं० भृकुटी नि० कपाल में सा० चढाकर च०
 चमर अ० असुरेंद्र को ए० ऐसा व० बोले च० चमर अ० असुरेंद्र अ० अप्रार्थितका प० प्रार्थित जा० यावत्
 ही० हीन पु० पुन्य चतुर्दशी बाला अ० आज न० नहीं भ० है ना० नहीं ते० तुझे सु० सुख अ० है
 चि० ऐसा करके सी० सिंहासन पे ग० बैठे हुवे व० वज्र प० ग्रहणकर तं० उस को ज० जलता फु० फुट फुट शब्द
 से सके देविदे देवराया तं आणिट्टं जाव अमणामं अस्सुयपुब्बं फरुसं गिरं सोच्चा
 निसम्म आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे तिवालियं भिउडिं निलडि साहडु चमरं अ-
 सुरिदं असुरारायं एवं वयासी हं भो चमरा अमुरिदा असुराराया अप्पत्थियत्थिया
 जाव हीणपुण्णचाउद्धसा ! अज्ज न भवसि, नाहि ते सुहमत्थि चिकट्टु, तत्थेव सीहासन-
 वरगए वज्जं परामुसइ परामुसइत्ता, तं जलंतं, फुडंतं, तथतडंतं उक्कासहरसांइ
 यावत् अमनोज्ञ, पहिले कदापि नहीं सुनी वैसी कठोर भाषा सुनकर शक्रेन्द्र क्रोधित हुवा, और दांत
 पीसता हुवा भृकुटी चढाकर चमर नामक असुरेंद्र असुर राजा को ऐसा कहा अरे असुरेंद्र, असुर का
 राजा चमर ! तू अप्रार्थित की प्रार्थना करनेवाला यावत् हीन पुण्यचतुर्दशी में उत्पन्न होनेवाला है. आज
 तुझे सुख नहीं होगा. ऐसा कहकर सिंहासन पर बैठे हुवे शक्रेदेवेन्द्र देवराजाने वज्र उठाया उठाकर

* भकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालापसाइजी *

करता त० त्रट त्रट अवाज करता उ० उल्का सहस्र मु० मूकता हुवा जा० ज्वाला सहस्र मु० मूकता इ०
अंगारि म० शत सहस्र प० विखेता फु० अगि कण जा० ज्वाला मा० माल्य स० सहस्र च० चछु वि०
विसेप दृष्टि का प० प्रतिघात प० करता हु० अग्नि व० बहुत ते० तेज दि० देदीप्पमान वे० वेगवन्त फु०
फुला हुवा कि० किशुक समान म० महाभयंकर च० चमर अ० असुरेंद्र का व० वध केलिये व० वज्र
नि० नीकाला ॥ ५९ ॥ त० तव च० चमर अ० असुरेंद्र तं० उम-ज० जलता जा० यावत् भ० भयंकर

विधिं मुयमाणं २ जाला सहस्साइं मुयमाणं इंगाल सय सहस्साइं पविक्खिरमाणं;
पविक्खिरमाणं, फुलिंग जाला माला सहस्सेहिं त्रक्खु विक्खेवदिट्ठिपडिघायं वि पकरे
माणे हुयवहुयतिरगतेयदिप्यंतं, जइणवेगं, फुल्लिंकसुयसमाणं महवभयं भयंकरं
चमरस्स असुरिंदरस्स असुररणो वहाए वजं निसिरइ, ॥ २९ ॥ तएणं से चमरे

असुरिंद असुराराया तं जलंतं जात्र भयंकरं वजमभिमुहं आवयमाणं पासइ, पासइत्ता
आग्नि ममान जलता हुआ, फुट फुट शब्द करताहुवा, और घट घट करता हुवा सहस्र विद्युत समान
थलथलट करता हुआ, ज्वाला को छोडता हुआ, हजारों अंगार की वर्षा वर्षाता हुआ, बहुत प्रकाश करता
हुवा, आग्निने अधिक तेजवाला, किशुक समानफुलाहुवा, और महाभय उत्पन्न करता हुआ ऐसा भयं-
कर वज्र चमर असुरेंद्र के वध के लिये छोडा ॥ २९ ॥ फिर ऐसा जलता हुवा यावत् महाभय करने-

०० ॥ ५९ ॥ त० तव च० चमर अ० असुरेंद्र तं० उम-ज० जलता जा० यावत् भ० भयंकर

व० वजू अ० संयुक्त आ० आता पा० देखकर झि० चिन्तनकर पि० इच्छकर त० तैसे सं० भगा हुआ
म० मुकुट वि० विस्तार सा० आलंकरण सहित ह० हस्त आ० आभरण उ० उर्ध्व पात्र अ० नीचाशिर
क० कक्षा ग० रहा हुआ से० स्वेद मु० मूकता ता० उस उ० उत्कृष्ट जा० यावत् ति० तिच्छा अ० असं-
ख्यात दी० द्वीप समुद्र म० मध्य से वी० अतिक्रमता जे० जहां जं० जम्बूद्वीप जा० यावत् म० मेरी अं०

झियाइ, पिहाइ, झियाइत्ता पिहाइत्ता तहेव संभग मउड विडए, साल-
बहत्याभरणे उडुपाए अहो सिरि कक्खागयस्यपित्र विणि मुयमाणे मुयमाणे ताए उ-
क्किट्टाए जावतिरिय मसंखेजाणं दीवसमुद्धानं मज्झं मज्झेणं वीइत्रयमाणि २ जेणं व जं-
बूहीचे दीत्रे जाव जेणव असोगवर पायवे, जेणव ममअंतिए तेणव उवागच्छइ उवा-

वाला वजू को सामने आता हुआ देखकर वह चमरेन्द्र यह क्या होगा ऐसा चिन्तन करने लगा, यह मुझे
होवे ऐसी इच्छा करने लगा, अपने स्थान जाने को वांच्छने लगा, और वज्र का आताप नहीं सहन होने से
चक्षु बंध करंता हुआ व्याकुल होने लगा. इत तरह चिन्तन करके पीछा फीरा, सिर का मुकुट नीचे
पड़ने लगा, आभरणों हस्त से पकडे, अथो गगन होने से ऊंचे पांव नीचा सिर हुआ और जैसे मनुष्य के
शरीर में से स्वेद छूटता है वैसे ही चमरेन्द्र के शरीर में से स्वेद रूप पुद्रल टपकने लगा. फीर देव की दीव्य
गति से यावत् असंख्यात दीप समुद्र की मध्य में होकर जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में संभमार नगर के

महाशक-राजा बहादुर लाला सुन्दरदेवसहायजी जालामसादजी

शब्दाः
सूत्र

व० वज्र दो० दो से ज० जिम को व० वज्र दो० दो से ते० उसको च० चमर लि० तीन से स० सर्व से थोडा स० शक दे० देवेन्द्र का उ० ऊर्ध्व लोक कं० कंड अ० अधोलोक कं० कंड सं० संख्यात गुणां जा० जितना सि० क्षेत्र च० चमर अ० अधो उ० जात्रे ए० एक समय में तं० उस को स० शक दो० दो से व० वज्र ति० तीन से स० सर्वसे थोडा च० चमर अ० अमुंद्र का अ० अधोलोक कं० कंड उ० ऊर्ध्व लोक का कंड सं० तं वजे दोहिं, तं चमरे तिहिं ॥ सव्वत्थोत्रे सक्करस देविंदस्स देवरणो उड्डुलोपकंडए

अहेलोय कंडए संखेजगुणे जावइयंखेत्तं चमरे असुरिंदे असुराराया अहे उवयइ एक्केणं समएणं, तं सक्के दोहिं, तं वजे तिहिं, ॥ सव्वत्थोत्रे चंमरस्स असुरिंदस्स असुररणो अहेलोयकंडए, उड्डुलोयकंडए संखेजगुणे, एवं खलु गोयमां ! सक्केणं

अप में जाता है और चमरेन्द्र तीन समय में जाता है. शक देवेन्द्रको उपर जाने में सब में थोडा काल आता है उस से अधो लोक में जाने में संख्यात गुना (द्विगुना.) काल लगता है. * एक समय में चमरेन्द्र जितना नीचे उतरता है उतना शक्रेन्द्र दो समय में उतरता है और वज्र तीन समय में उतरता है

यहाँ पर द्विगुना काल लेनेका मतलब यह है कि शक्रेन्द्रको ऊंचा जानिका व चमरेन्द्र को नीचा आने में दोनों बराबर हैं. एक समय में चमरेन्द्र जितना नीचे जाता है उतनाही क्षेत्र नीचे आने में दो समय लगते हैं.

व० वज्र अ० सन्मुख आ० आता पा० देखकर द्वि० चिन्तनकर पि० इच्छकर त० तैसे सं० भगा हुवा
म० मुकुट वि० विस्तार सो० आलंबन सहित ह० हस्त आ० आभरण उ० उर्ध्व पात्र अ० नीचाशिर
क० कक्षा ग० रहा हुवा से० स्वेद मु० मूकता ता० उस उ० उत्कृष्ट जा० यात्र ति० तिच्छी अ० असं
ख्यात दी० द्वीप समुद्र म० मध्य से श्री० अतिक्रमता जे० जहाँ ज० जंबूद्वीप जा० यात्रत् म० मेरी अं०

शियाइ, पिहाइ, शियाइत्ता पिहाइत्ता तहेत्र संभगा मउड विडए, साल-
वंहत्थाभरणे उहुंपाए अहो सिरे कंक्वागयसेर्यपित्र त्रिणि मुयमाणे मुयमाणे ताए उ-
किट्टाए जात्र तिरिय मसंखेज्जाणं दीत्रसमुद्धानं मज्झं मज्झेणं वीईवयमाणे २ जेणंत्र जं-
बूहीचे दीत्रे जात्र जेणेत्र असोगवर पायवे, जेणेत्र ममअतिए तेणेत्र उवागच्छइ उवा-

वाला वज्र को सामने आता हुवा देखकर वह चमरेन्द्र यह क्या होगा ऐसा चिन्तन करने लगा, यह मुझे
हेवे ऐसी इच्छा करने लगा, अपने स्थान जाने को वांछने लगा, और वज्र का आताप नहीं सहन होने से
चक्षु बंद करता हुवा व्याकुल होने लगा. इस तरह चिन्तन करके पीछा फीरा, सिर का मुकुट नीचे
पड़ने लगा, आभरणों हस्त से पकड़े, अथो गमन होने से ऊंचे पांत्र नीचा सिर हुवा और जैसे मनुष्य के
शरीर में से स्वेद छूटता है वैसे ही चमरेन्द्र के शरीर में से स्वेद रूप पुद्गल टपकनेलगा. फीर देव की दीव्य
गति से यात्र असंख्यात दीप समुद्र की मध्य में होकर जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में सुंभमार नगर के

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

पात उ० आंकर भी० डरा हुवा भ० भय से ग० घर्घर स्वर भ० भगवन् स० सरण मे० मुझे ति० एसो वू० कहता
म० मेरे दो० दोनों पा० पांव के अं० अंतर मे० वे० त्वरासे स० पडा ॥ ३० ॥ त० तव त० उस स० शुक
दे० देवेन्द्र को ए० इसरूप अ० अध्यसाय जा० यावतू स० उत्पन्न हुवा णो० नहीं ख० निश्चय प० शक्ति
नंत च० चमर अ० असुरेंद्र णो० नहीं स० समर्थ च० चमर असुरेंद्र नो० नहीं वि० विषय च० चमर
अ० असुरेंद्र का आ० स्वत की णि० नेश्राय से उ० ऊर्ध्व उ० उडकर जा० यावतू सो० सौधर्म देव-

गच्छइत्ता, भीए भयगगरसरे भगवं सरणं मेत्ति बूयमाणे ममं दोण्हवि पायाणं अं-

तरंसि झत्तिवेगेणं समोवडिए ॥ ३० ॥ तएणं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरणो

इमेयारूत्वे अज्झत्थिए जाव समुप्पजित्था णो खलु पभू चमरे असुरिंदे असुरराया

णोखलु समत्थे चमरे असुरिंदे अमुरराया, णो खलु विसए चमरस्स असुरिंदस्स

असुररणो अप्पणो णिस्साए उहुं उप्पइत्ता जाव सोहम्मकेक्पे. णणत्थ अरिहंतेवा,

अशोक वनखण्ड के अशोक वृक्ष नीचे पृथ्वी शिला पट्टपर जहां मैं ध्यातस्य था वहां वह चमरेन्द्र आया।

आफूके डस्ता हुवा भय स्वर से अहो भगवन् ! आपका मुझे शरण हो ऐसे बोलता हुवा मेरे दोनों

पांवों की बीच में शीघ्र वेग से गिरपडा ॥ ३० ॥ फिर शक्रेन्द्र को ऐसा अध्यवसाय यावत चिन्तवन हुवा
कि स्वयं चमरेन्द्र यहां आने को समर्थ नहीं है वेसे ही अन्य किसी की नेश्राय विना ऊंचे सौधर्म देवलोक में

लोक ण० नहीं अ० अन्यथा अ० अरिहंत अ० छद्मस्थ अरिहंत अ० अनगर भा० भवितात्मा णि०नेश्राय
से उ० ऊर्ध्व उ० उडे जा० यावत् सो० सौधर्म देवलोक तं० वह म० महा दुःख त० तथा रूप अ० अरिहंत
म० भगवन्त अ० अनगरकी अ० आशातनाकरे ॥ ३ ॥ ति० ऐसा करके को० अग्रधिज्ञान को प० प्रयुंजकर
म० मुझे ओ० अग्रधि ज्ञान से आ० देखकर हा० हाहा अ० अहो ह० हणाया अ० मैं अ० हूँ ति० ऐसा करके ता०
उस उ० उत्कृष्ट जा० यावत् दि० दीव्य दे० देवगति से व० वज्र की वी० रस्ते अ० पीछे जाना ति० तिच्छी अ०

अरिहंतचेइबाणिवा, अणगारेवा भाविपपाणो णिस्साए उहुं उप्पइत्ता जाव सोहस्सेम
कप्पे तं महादुक्खं खलु तहारूवाणं अरहंताणं भ्भावताणं अणगाराणय अच्चासा-
यणयाए ॥ ३१ ॥ तिकहु, ओहिं पउंजइ, पउंजइत्ता ममं ओहिणा आभोएइ २ ता,
हाहा अहो हतो अहंमासि तिकहु ताए उक्किट्ठाए जाव दिव्वाए देव गईए वज्जस्स

आने का विषय नहीं है. अरिहंत, अरिहंत चैत्य सो छद्मस्थ, अनगर और भवितात्मा की नेश्राय विना
ऊंचे उड़ने को यावत् सौधर्म देवलोक में आने को समर्थ नहीं है. इस से अरिहंत भगवंत यावत् अनगर
को आसातना से महा दुःख होगा ॥ ३१ ॥ ऐसा करके अग्रधि ज्ञान प्रयुंजा. (लगाया) और अग्रधि
ज्ञान से मुझे देखकर हा हा अरे अरे ऐसा खेद करके उस उत्कृष्ट यावत् देव की दीव्य गति से वज्र के

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

पाप उ० आकर भी० डरा हुवा भ० भय से ग० घर्षर स्वर भ० भगवन् स० सरण मे० मुखे चि० एसे वू० कहता
 म० मेरे दो० दोनों पा० पांव के अ० अंतर मे० वे० त्वरासे स० पडा ॥ ३० ॥ त० तव त० उस स० शक्र
 दे० देवेन्द्र को ए० इसरूप अ० अध्यसाय जा० यावत् स० उत्पन्न हुवा णो० नहीं ख० निश्चय प० शक्ति
 वंत च० चमर अ० असुरेंद्र णो० नहीं स० समर्थ च० चमर असुरेंद्र नो० नहीं वि० विषय च० चमर
 अ० असुरेंद्र का आ० स्वत की णि० नेश्राय से उ० ऊर्ध्व उ० उडकर जा० यावत् सो० सौधर्म देव-
 गच्छइत्ता, भीए भयगगरसरे भगवं सरणं मेत्ति बूयमाणे समं दोण्हवि पायाणं अं-
 तरंसि इत्तिवेगणं समोवडिए ॥ ३० ॥ तएणं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरणो
 इमेयास्सवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था णो खलु पभू चमरे असुरिंदे असुरराया
 णो खलु समत्थे चमरे असुरिंदे अमुरराया, णो खलु विसए चमरस्स असुरिंदस्स
 असुररणो अप्पणो णिस्साए उट्ठं उप्पइत्ता जाव सोहम्मकप्पे. णणत्थ अरिहंतेवा,
 अगोक वनखण्ड के अशोक वृक्ष नीचे पृथ्वी शिला पट्टपर जहां में ध्यातस्य था वहां वह चमरेन्द्र आया.
 आकरके डरता हुवा भय स्वर से अहो भगवन् ! आपका मुझ शरण हो ऐसे बोलता हुवा मेरे दोनों
 पांवों की बीच में शीघ्र वेग से गिरपडा ॥ ३० ॥ फिर शक्रेन्द्र को ऐसा अध्यवसाय यावत् चिन्तवत हुवा
 कि स्वयं चमरेन्द्र यहां आने को समर्थ नहीं है वैसे ही अन्य किसी की नेश्राय विना ऊंचे सौधर्म देवलोक में

शब्दार्थ मूत्र तार्थ

तव कु० कुपित होते च० चमर अ० असुरेंद्र का व० वध केलिये व० वज्र नि० नीकाला त० तव म० मुझे ए० इसरूप अ० अध्यवसाय जा० यावत् स० उत्पन्न हुवा णो० नहीं प० समर्थ च० चमर अ० असुरेंद्र त० तैसे जा० यावत ओ० अवधि ज्ञान को प० प्रयुंजता हूँ दे० देवानुप्रिय को ओ० अवधिज्ञान से आ० देखे जा० यावत् जे० जहां दे० देवानुप्रिय ते० तहां उ० आया दे० देवानुप्रिय का० च० चार अंगुल अ० अमास व० वज्र प० ग्रहण करता हूँ व० वज्र को प० ग्रहण करने केलिये आ० आया इ० यहां

अहं तुभं नीसाए चमरेण असुरिंदेण असुररणो सयभेव अचासाइए, तएणं मए कुत्रिएणं समाणेणं चमरंस असुरिंदरस असुररणो वहाए वजे निसिद्धे, तएणं ममं इमेयारूचे अञ्जत्थिए जाव समुपपजेत्था, णो खलु पभू चमरे असुरिंदे असुराराया तहेव जाव ओहि पञ्जामि, देवाणुप्पिए ओहिणा आमोएमि, हाहा जाव जेणेव देवाणुप्पिए तेणेव उवागञ्छामि देवाणुप्पियाणं चउरंगुलमसंपत्तं वज्जं पडिसाहरणट्टयाएणं इह मागए,

का शरण लेकरके चमरेन्द्रने मेरी आमातना की इस से बहुत क्रोधित होकर मैंने असुरेंद्र का वध के लिये वज्र फेंका। फीर मुझे ऐसा अध्यवसाय यावत् चिन्तवन हुवा कि चमर असुरेंद्र ऊर्ध्व सौधर्म देवलोक में आने को समर्थ नहीं है, अरिहंत यावत् अनगर का शरण लिये विना नहीं आसकता है। इस से मैंने अवधि ज्ञान प्रयुंजा और अवधि ज्ञान से आप को देखे। फीर खेद करता हुवा आपकी समीप आया

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

असंख्यात दी० द्वीप समुद्र म० मध्य से जा० यावत् जे० जहाँ अशोक पा० वृक्ष म० मेरी अं० पास ते०
 तहाँ उ० आकर म० मुखे च० चार अंगुल अ० अप्राप्त च० वज्र प० सहरन करे मु० मुष्टिकेवात से के०
 केशाग्र वी० चलित हुवे ॥ ३२ ॥ त० तव से० वह स० शक्र दे० देवेन्द्र व० वज्र को प० सहरन कर
 म० मुखे ति० तीनवक्त आ० आदान प० प्रदक्षिणा क० करके न० नमस्कार कर ए० ऐसा व० बोले
 थं० भगवन् अ० मैं तु० तुमारी नी० नेश्राय से च० चमर अ० असुरेंद्र स० स्वयं अ० भ्रष्टकरने को त०
 वीहिं अणुगच्छमाणे तिरियं मसंखेजाणं दीवसमुद्धानं मज्झं मज्जेणं जाव जेणेव
 असोगवरपायवे जेणेव मम अंतिए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता, ममंचणं चउ-
 रंगुलमसंपत्तं वज्रं पडिसारइ अभियाइमे गोयमा ! मुट्टिवाएणं केसग्गे वीइत्था
 ॥ ३२ ॥ तएणं से सक्के देविंदे देवराया वज्रं पडिसाहरित्ता, ममं तिव्वुत्तो आया-
 हिणं पयाहिणं करेइ करेइत्ता वंदइ नमंसइ नमंसइत्ता एवं वयासी एवं खलुभंते !
 रसे को अनुसरता हुवा असंख्यात द्वीप समुद्र उल्लंघ कर जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में सुंसार नामक नगर
 के अशोक वनवण्ड के अशोक वृक्ष नीचे मेरी समीप आया. और मेरे से चार अंगुल दूर रहते वज्र
 पीछा धींच लिया. वज्र खींचने के लिये जो मुष्टिबंध की, उस के वायु से मेरे केशाग्र चले ॥ ३२ ॥
 वज्र धींचे पीछे मुखे तीन आदान प्रदक्षिणाकर वंदना नमस्कार कर ऐसा बोला अहो भगवन् ! आप

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

कहा मु० मुक्त अ० है भो० भो० च० चमर अ० असुरेंद्र स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर के प० प्रभाव से न० नहीं ते० तुझे इ० अब म० मुझ से भ० भय अ० है. त्ति० ऐसा करके ज० जिस दिशि से पा० आये ता० उसदिशा में प० पीछे गये ॥ ३३ ॥ भ० भगवान् गो० गौतम स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर को न० नमस्कार कर व० बोले दे० देव भं० भगवन्त म० महाऋद्धि म० महाद्युति जा० यावत् म० महानुभाग पु० पहिले पो० पुद्गल खि० फेंक कर प० समर्थ तं० उसको अ० पीछे जाकर गे०

असुरिंदं असुरारायं एवं वयासी-मुक्कोसि णं भो चमरा असुरिंदा असुराराया । समणरस

भगवओ महावीरस पभावेणं, नाहिं तेदाणि समाओ भयमत्थि त्तिकट्टु, जामेव दिसिं

पाठभूए तामेव दिसिं पडिगए ॥ ३३ ॥ भंतेत्ति ! भगवं गोयमे ससणं भगवं

महावीरं वंदइ नमंसइ नमंसइत्ता, एवं वयासी देवेणं भंते ? सहिहीए महज्जुईए

जाव महानुभागे पुब्बामेव पोगलं खिवित्ता पभू तमेव अणुपरियट्ठित्ताणं गेण्हित्तए

अरे असुरेंद्र असुरका राजा चमर ! श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी के प्रभाव मे मेरी तर्फ से

तुझे भय नहीं है ऐसा करके जहां से आया था वहां पीछा गया ॥ ३३ ॥ यहां पर प्रस्तरादि

[पत्थर] पुद्गल फेंके पीछे मनुष्य पीछा लेने को समर्थ नहीं होता है तो देव क्या समर्थ होवे. शक्रने

बज्र फेंका और पीछा बज्र ले लिया इसलिये उस का यहां पर प्रश्न करते हैं. श्री गौतम स्वामी महावीर

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

मं प्राप्त इ० यहाँ अ० आज उ० उपशम को प्राप्त होकर वि० विचरता हूँ खा० क्षमाता हूँ दे० देवानु-
प्रिय स्व० क्षमाकरो मे० मुझे स्व० क्षमाकरने अ० योग्य दे० देवानुप्रिय न० नहीं भु० वारंवार ए० ऐसा क० करने
को चि० ऐसा करके म० मुझे वं० वंदना कर न० नमस्कार कर उ० ईशान कोन में अ० अतिक्रम, वा०
वांया पा० पांव से ति० तिनवक्त भू० भूमि का दा० विदारं च० चमर अ० अमुरेंद्र को ए० ऐसा व०

इह समोसंढे, इह संपत्ते, इहेव अज्ज उवसंपज्जित्ताणं विहरामि ॥ तं
खामेमिणं देवाणुप्पिया ? खमं तुमं देवाणुप्पिया ? खंतुमरिहंतुणं देवाणुप्पिया ! नाइ
भुज्जो र एवं करणयाए त्तिकट्टु ममं वंदइ नमंसइ, नमंसइत्ता उत्तर पुरच्छिमं
दिस्सिभागं अवक्कमइ अवक्कमइत्ता, वामेणं पादेणं तिव्वुत्तो भूमिं दालेइ: चमर अ-

और आप से चार अंगुल ममाण वज्र दूर रहते मैंने पीछा खींच लीया. वज्र पीछा खींचने के लिये मैं
यहाँ पर आया हुआ हूँ. यहाँ समोसर्पो, व प्राप्त हुआ हूँ. यहाँ पर इस उद्यान में आज पाप को उपशमाता
हुआ विचरता हूँ. इस से अहो देवानुप्रिय ! मैं आप की क्षमा याचता हूँ. आप मुझे क्षमा करें. आप
क्षमा करने योग्य हो. अब मैं वारंवार ऐसा नहीं करूँगा ऐसा कहकर वंदना नमस्कार करके ईशान
कोन में गया. और वाँये पांव से भूमि को तीन वक्त विदार कर चमरेन्द्र को ऐसा कहने लगा कि

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

शब्दार्थ

सुत्र

भावार्थ

कहा मु० मुक्त अ० है भो० भो० च० चमर अ० असुरेंद्र स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर के प० प्रभाव से न० नहीं ते० तुझे इ० अब म० मुझ से भ० भय अ० है. ति० ऐसा करके ज० जिस दिशि से पा० आये ता० उसदिशा में प० पीछे गये ॥ ३३ ॥ भ० भगवान् गो० गौतम स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर को न० नमस्कार कर व० बोले दे० देव भं० भगवन्त म० महाक्लृदि म० महाद्युति जा० यावत् म० महाभुभाग पु० पहिले पो० पुद्गल सि० फेंक कर प० समर्थ तं० उसको अ० पीछे जाकर गे०

असुरेंद्र असुररायं एवं वयासी-मुक्कोसि णं भो चमरा असुरिंदा असुरराया । समणस्स भगवओ महावीरस्स पभावेणं, नाहिं तेदाणि ममाओ भयमत्थि त्तिकटु, जामेव दिसिं पाठब्भए तामेव दिसिं पडिगए ॥ ३३ ॥ भंतेत्ति ! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ नमंसइत्ता, एवं वयासी देवेणं भंते ? महिड्डीए महज्जुईए जाव महाणुभागे पुब्बामेव पोगलं खित्तिता पभू तमेव अणुपरियट्ठित्ताणं गेण्हित्तए

अरे असुरेन्द्र असुरका राजा चमर ! श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी के प्रभाव से मेरी तर्फ से तुझे भय नहीं है ऐसा करके जहाँ से आया था वहाँ पीछा गया ॥ ३३ ॥ यहाँ पर प्रस्तरादि [पत्थर] पुद्गल फेंके पीछे मनुष्य पीछा लेने को समर्थ नहीं होता है तो देव क्या समर्थ होंगे. शकने ब्रह्म फेंका और पीछा ब्रह्म ले लिया इसलिये उस का यहाँ पर प्रश्न करते हैं. श्री गौतम स्वामी महावीर

सं. प्राप्त इ० यहां अ० आज उ० उपशम को प्राप्त होकर वि० विचरता हूँ. खा० क्षमाता हूँ. दे० देवानु-
प्रिय स्व० क्षमाकरो मे० मुझे स्व० क्षमाकरने अ० योग्य दे० देवानुप्रिय न० नहीं भु० वारंवार ए० ऐसा क० करने
को त्ति०. ऐसा करके म० मुझे वं० वंदना कर न० नमस्कार कर उ० ईशान कोन में अ० अतिक्रम, वा०
बांया पा० पांव से ति० तीव्रतक भू० भूमि को दा० विदार च० चमर अ० अमुरेंद्र को ए० ऐसा वं०

इह समोस्टे, इह संपत्ते, इहेव अज्ज उवसंपज्जित्ताणं विहरामि ॥ तं
खाेमिणं देवानुप्पिया ? खमं तुमं देवानुप्पिया ? खंतुमरिहंतुणं देवानुप्पिया ! नाइ
भुज्जी २ एवं करणयाए शिकट्टु ममं वंदइ ममंसइ, नमंसइत्ता उत्तर पुरच्छिमं
दिसीभागं अत्रक्कमइ अत्रक्कमइत्ता, वामेणं पादेणं तिव्खुत्तो भूमिं दाळेइ: चमर अ-

और आप से चार अंगुल प्रमाण बज्र दूर रहते मैंने पीछा खींच लीया. बज्र पीछा खींचने के लिये मैं
यहां पर आया हुआ हूँ. यहां समोसर्था, व प्राप्त हुआ हूँ. यहां पर इस उद्यान में आज पाप को उपशमाता
हुवा विचरता हूँ. इस से अहो देवानुप्रिय ! मैं आप की क्षमा याचता हूँ, आप मुझे क्षमा करें. आप
क्षमा करने योग्य हो. अब मैं चारंवार ऐसा नहीं करूंगा ऐसा कहकर वंदना नमस्कार करके ईशान
कोन में गया. और बायें पांव से भूमि को तीन वक्त विदार कर चमरेन्द्र की ऐसा कहने लगा कि

संख्यात गुणा ए० ऐसे ॥ ३५ ॥ स० शक्र दे० देवेन्द्र का उ० ऊर्ध्व अ० अधो त्रि० तिर्च्छा ग० गति
विषय क० कितना क० किससे अ० अल्प व० बहुत तु० तुल्य वि० विशेषाधिक गो० गौतम स० सर्व से थोडा खे०
क्षेत्र स० शक्र दे० देवेन्द्र अ० अधो उ० जावे ए० एक समय में ति० तिर्च्छा भे० संख्यातवा भागमें ग०
देविदेणं देवरणो चमरे असुरिदे असुराया नो संचाएइ साहत्थि गेण्हत्तए ॥ ३५ ॥

सक्करसणं भंते ! देविंदरस देवरणो उहुं अहेतिरियंच गइविसययस्स कयरे कयरे-
हितो अप्पेवा बहुएवा तुल्लेवा विससाहिएवा ? गोयमा ! सब्वत्थोवे खेत्तं सक्के दे-
विदे देवराया अहे उवयइ, एक्केणं समएणं तिरियं संखेजेभागे गच्छइ, उहुं संखे-

चमर असुरेंद्र को नीचे आने में सब से थोडा काल लगता है उस से ऊर्ध्व जाने में संख्यात गुना काल
लगता है. इस से अहो गौतम ! शक्रेंद्र असुरेंद्र को हाथ से पकड़ने को समर्थ नहीं है ॥ ३५ ॥ अब
शक्रेंद्र, चमरेंद्र व वज्र इन की गति का अल्पावहृत्य करते हैं. अहो भगवन् ! शक्र देवेन्द्र का ऊर्ध्व,
अधो व तिर्यक् गति विषय में से कौन किस से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ? अहो गौतम !
सब से थोडा क्षेत्र शक्र देवेन्द्र नीचे उतरता है, इस से संख्यात भाग अधिक तिर्च्छा दिशा के क्षेत्रका आक्र-
मण करता है उस से ऊर्ध्व दिशा का क्षेत्र संख्यात भाग अधिक जाता है. जैसे शक्र नामक देवेन्द्र एक
समय में एक योद्धन नीचे आवे, उस के दो भाग करके उस में का एक भाग उक्त बोजन में मीलाने से

* मकाशक-राजाबहादुर लाला मुखर्जीदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

ब० ब्रह्म दो० दो से ज्ञ० जिस को ब० ब्रह्म दो० दो से ते० उसको च० चमर ति० तीन से स० सर्व से थोडा स० शक्त दे० देवेन्द्र का उ० ऊर्ध्व लोक क० कंड अ० अधोलोक क० कंड सं० संख्यात गुणा जा० जितना सि० क्षेत्र च० चमर अ० अधो उ० ज्ञे ए० एक समय में तं० उस को स० शक्त दो० दो से ब० ब्रह्म ति० तीन से स० सर्वसे थोडा च० चमर अ० असुरेंद्र का अ० अधोलोक क० कंड उ० ऊर्ध्व लोक का कंड सं० वं वजे दोहिं, तं चमरे तिहिं ॥ सव्वत्थोवे सक्कस्स देविंदस्स देवरणो उड्डुल्लोयकंडए अहेल्लोय कंडए संखेज्जगुणे जावइयंखेत्तं चमरे असुरिंदे असुरराया अहे उवयइ एकेणं समएणं, तं सक्के दोहिं, तं वजे तिहिं, ॥ सव्वत्थोवे चंमरस्स असुरिंदस्स असुररणो अहेल्लोयकंडए, उड्डुल्लोयकंडए संखेज्जगुणे, एवं खलु गोयमां ! सक्केणं दो समय में जाता है और चमरेन्द्र तीन समय में जाता है. शक्त देवेन्द्रको उपर जाने में सब से थोडा काल लगता है उस से अधो लोक में जाने में संख्यात गुता. (द्विगुना.) काल लगता है. * एक समय में भ्रष्ट जितना नीचे उतरता है उतना शर्केद्र दो समय में उतरता है और ब्रह्म तीन समय में उतरता है

* यहां पर द्विगुना काल लेनेका मतलब यह है कि शर्केद्रको ऊंचा जनिका व चमरेन्द्र को नीचा आने का काल में दोनों बराबर हैं. एक समय में चमरेन्द्र जितना नीचे जाता है उतनाही क्षेत्र नीचे आने में शर्केद्र को दो समय लगते हैं.

अथो ति० तिच्छा ग० गति विषय क० कितना क० किस से अ० अल्प व० बहुत तु० तुल्य वि० विशेषाधिक गो० गौतम स० सर्व से थोडा खे० क्षेत्र च० चमर अ० असुरेन्द्र उ० ऊर्ध्व उ० जात्रि ए० एक समय में ति० तिच्छा मं० संख्यातवा भाग में अ० अथो मं० संख्यातवा भाग में स० शक्र दे० देवेन्द्र

रिच गइविसयरस कयरे कयरेहितो अप्पेवा, बहुएवा तुल्लेवा, विसेसाहिएवा ?
 गोयसा ! सव्वत्थेयं खेत्तं चमरे असुरिंदे असुरराया उड्डे उप्पयइ एक्केणं समएणं,
 तिरियं संखेजेभागे गच्छइ, अहे संखेजेभागे गच्छइ । सक्के देविंदे देवराया उड्डे

भाग ऊना तीन गाउं, इस प्रकार एकैक गाउ के तीन भाग करने से एक योजन के बारह और दो योजन के चौबीस भाग होते हैं इस से यहां विचारते हैं तीन भाग कम तीन गाउ तब आठ भाग रहे इतना एक समय में ऊंचे जावे, उस से तिच्छा उक्त आठ भाग से दूगुने करे इतना क्षेत्र अधिक जावे इतना तिच्छा गति का विषय शीघ्र कहा है. उक्त दो विभाग कम छ गाऊ है उस में एक विभाग कम तीन गाऊ मीलने से अर्थात् दो योजन पूर्ण होवे उतना अधिक अथो लोक में जावे. अहो भगवन् ! वज्र का ऊर्ध्व, अथो व तिर्यक् गति में ज्यादा, कभी, बराबर किस प्रकार कहा है ? अहो गौतम ! जैसे शक्रेन्द्र का कहा वैसे ही वज्र का जानना. वज्र सब से थोडा अथो गति में जावे, क्यों कि अथो गति में जाने में उन की गति की मंदता है. तिच्छा विशेषाधिक जावे और ऊर्ध्व गति में विशेषाधिक जावे. यहां

दार्थ (संज्ञा) (संज्ञा) (संज्ञा) (संज्ञा) (संज्ञा)

दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

जावे उ० ऊर्ध्व सं० संख्यातवा भाग में ग० जावे ॥ ३६ ॥ च० चपर अ० अमुरेंद्र ठ० ऊर्ध्व अ०
जिभागे गच्छइ ॥ ३६ ॥ चमरस्सणं भंते ! असुरिंदस्स असुररणो उहुं अहे ति-

देव योजन होवे इसलिये तीन संख्यात भाग तिच्छी लोक में जावे. तिच्छी लोक में योजन का आधा विभाग रहा था वह आधा विभाग उक्त देव योजन में मीलाने से पूरे चार भाग संख्यात गुन होते हैं ३० ॥ ३६ ॥ अहो भगवन् ! चमर नामक अमुरेंद्र का ऊर्ध्व अथो व तिर्यक् गति का विषय में कौन किससे श्रव्य, वदुत, तुल्य या विशेषाधिक है ? अहो गौतम ! एक समय में चमर अमुरेंद्र सब से थोडा ऊर्ध्व लोक में जाता है इन सं तिच्छी लोक में संख्यात गुणा अधिक क्षेत्र जाता है और उस से अथो लोक में संख्यात भाग अधिक जाता है. एक समय ऊर्ध्व गति के विषय में उस के मंदपने की कल्पना से हीन

+ यहाँ कोई प्रश्न करे कि सूत्र में संख्यात भाग मात्र ही ग्रहण किया है और यह नियमित भाग कैसे बना सकते हैं ? नितना क्षेत्र चमरेंद्र नीची द्विशांम एक समय में जाता है उतना क्षेत्र जाने को शक्र देवेंद्र को दो समय लगता है वैसे ही शक्रेन्द्र का ऊर्ध्व गमन काल और चमरेंद्र का अथो गमन काल तुल्य है इस से निश्चय होता है कि दो समय में नितना क्षेत्र शक्रेन्द्र नीचे आता है उतना क्षेत्र उपर एक समय में जाता है. इस से अथो क्षेत्र दुगुना कहा, और बीच का तीच्छी क्षेत्र देव गुना कहा. वैसे ही नृपिकाकार भी कहते हैं कि एगे समपणं तिरियं दिवहं गच्छइ उहुं दो जोषणाणि सक्रोचि ॥

१० ॥ ३६ ॥ चमरस्सणं भंते ! असुरिंदस्स असुररणो उहुं अहे ति-

शब्दार्थ
सूत्र
भावार्थ

अधो ति० तिच्छा ग० गति विषय क० कितना क० किस से अ० अल्प व० बहुत तु० तुल्य वि० विशेषा-
धिक गो० गौतम स० सर्व से थोडा खे० क्षेत्र च० चमर अ० अमुरेंद्र उ० ऊर्ध्व उ० जवि ए० एक
समय में ति० तिच्छा मं० संख्यातवा भाग में अ० अधो मं० संख्यातवा भाग में स० शक्र दे० देवेन्द्र

रियंच गइविसयस कयरे कयरेहितो अप्पेवा, बहुएवा तुल्लेवा, त्रिससाहिएवा ?
गोयमा ! सब्बत्थोणं खेत्तं चमरे असुरिंदे असुराराया उट्टुं उण्यइ एक्केणं समएणं,
तिरियं संखेज्जेभागे गच्छइ, अहे संखेज्जेभागे गच्छइ ! सक्के देविंदे देवराया उट्टुं

भाग करना तीन गाड़, इस प्रकार एकैक गाड़ कं तीन भाग करने से एक योजन के चारह और दो योजन
के चौबीस भाग होते हैं इस से यहां विचारते हैं तीन भाग कम तीन गाड़ तब आठ भाग रहे इतना
एक समय में ऊंचे जावे, उस से तिच्छा उक्त आठ भाग से दूगुने करे इतना क्षेत्र अधिक जावे इतना
तिच्छा गति का विषय शीघ्र कहा है. उक्त दो विभाग कम छ गाऊ है उस में एक विभाग कम तीन
गाऊ मीलने से अर्थात् दो योजन पूर्ण होवे उतना अधिक अधो लोक में जावे. अहो भगवन् ! वज्र का
ऊर्ध्व, अधो व तिर्यक् गति में ज्यादा, कमी, बराबर किस प्रकार कहा है ? अहो गौतम ! जैसे शक्रेन्द्र
का कहा वैसे ही वज्र का जानना. वज्र सब से थोडा अधो गति में जावे, क्यों कि अधो गति में जाने
में उन की गति की मंदता है. तिच्छा विशेषाधिक जावे और ऊर्ध्व गति में विशेषाधिक जावे. यहां

द्वयार्थ

सूत्र

भावार्थ

(५०९)

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

उ० ऊर्ध्व उ० जावे ए० एक स० समय में तं० उस को व० वज्र दो० दो से च० चमर ति० तीन से न० विशेष वि० विशेषाधिक का कहना ॥ ३७ ॥ स० शक्र दे० देवेन्द्र का उ० नीचे आनेका उ० उपर जानेका का० काल क० कितना क० किससे अ० अल्प गो० गौतम स० सर्व थोडा स० शक्र दे० देवेन्द्र

उपप्यइ एकेणं समणुणं तं वजे दोहिं, तं चमरे तिहिं, वजं जहा सकस्स तहेव,
नवरं त्रिसेसाहियं कायव्वं ॥ ३७ ॥ सकस्सणं भंते ! देविदस्स देवरणो उवयण-
कालस्सय उपप्यणकालस्सय कयरे कयरोहितो अप्पेत्ता बहुएवा तुल्लेवा त्रिसेसाहिएवा ?

कल्पना से तीसरा भाग कम एक योजन अधोलोक में जावे. उक्त आठ भाग में से एक गाऊ का तीन भाग करे ऐसे दो भाग अधिक तिच्छीलोक में जाने से विशेषाधिक, ऊर्ध्व गति में एक योजन पूर्ण जावे इस से विशेषाधिक. यहां कोई प्रश्न करे कि सामान्य से विशेषाधिकयना कहा है तब उस के नियमित भाग कैसे हो सकते हैं ? एक समय में जितना क्षेत्र चमरेन्द्र अधो गति में उल्लंघता है उतना क्षेत्र शक्रेन्द्र दो समय में उल्लंघता है और वज्र तीन समय में उल्लंघता है. इस तरह शक्रेन्द्र की अधोगति की अपेक्षा से वज्र के तीन भाग कम अधोगति हुई. शक्र का नीचे जानेका काल और वज्र का ऊंचा जाने का काल बराबर है इस से जाना जाता है कि जितने समय में शक्रेन्द्र नीचे जाता है उतने समय में वज्र ऊंचे जाता है. ऊर्ध्व व अधोगति के बीच में तिच्छी गति है. इन दोनों के बीच में तिच्छीगति रही हुई है. इन दोनों के बीच में एक गाऊ के तीन भाग करे ऐसे दश भागवाला तिच्छीगति का प्रमाण कहा ॥३७॥

का उ० ऊर्ध्व उ० चडने का काल उ० उतरने का काल सं० संख्यात गुणा च० चमर का ज० जैमे
स० शक्र का ण० विशेष स० सर्व से थोडा उ० उतरने का काल उ० उपर जाने का सं० संख्यात
गुणा व० वज्र की पु० पृच्छा गो० गौतम स० सर्व से थोडा उ० उपर जाने का उ० नीचे आने का वि०
विशेषाधिक ॥ ३८ ॥ ए० इस व० वज्र का व० वज्र के अधिपति का च० चमर अ० असुरेंद्र का उ०

गोयमा ! सव्वत्थोत्रे सक्कस्स देविंदस्स देवरणो उड्डुं उप्पयण काले, उवयणकाले
संखज्जगुणे, ॥ चमरस्सवि जहा सक्कस्स णवरं सव्वत्थोत्रे उवयणकाले, उप्पयणकाले
संखज्जगुणे ॥ वज्जस्स पुच्छा गोयमा ! सव्वत्थोत्रे उप्पयणकाले, उवयणकाले विसे-
साहिए, ॥ ३८ ॥ एयस्सणं भंते ! वज्जस्स वज्जाहिवइस्स, चमरस्सय, असुरिंदस्स

अब काल की अल्पावबुत्व करते हैं. अद्दो भगवन् ! शक्रेन्द्र की नीचे उतरने
के काल में, उंचे चडने के काल में कोनमा अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषा-
धिक है ? अहो गौतम ! शक्रेन्द्र को ऊंचे जाने में सब से थोडा काल लगता
है, क्यों की शक्र की ऊर्ध्व गति शीघ्र है. इस से नीचे उतरने का काल
संख्यात गुना. चमरेंद्र को सब से थोडा नीचे उतरने का काल और उस से
उपर जाने का काल संख्यात गुना. वज्र को सब से थोडा काल ऊंचे जाने
में लगता है उस से नीचे आने में विशेषाधिक काल लगता है ॥ ३८ ॥ अब

स्वामी	शक्र	वज्र	चमर
ऊर्ध्व	२४	१२	८
तिच्छी	१८	१०	१६
अथो	१२	८	२४

शब्थार्थ

सूत्र

भाषार्थ

उ० ऊर्ध्व उ० जावे ए० एक स० समय में तं० उस को व० वज्र दो० दो से च० चमर ति० तीन से न० विशेष वि० विशेषाधिक का कहना ॥ ३७ ॥ स० शक्र दे० देवेंद्र का उ० नीचे आनेका उ० उपर आनेका का० काल क० कितना क० किससे अ० अल्प गो० गौतम स० सर्व थोडा स० शक्र दे० देवेंद्र

उपपयइ एक्केणं समणुणं तं वजे दोहिं, तं चमरे तिहिं, वजं जहा सक्कस्स तहेव,
नयरं विसेसाहियं कायव्वं ॥ ३७ ॥ सक्कस्सणं भंते ! देविंदस्स देवरणुणो उवयण-
कालस्सय उपपयणकालस्सय कयरे कयरेहितो अप्येवा बहुएवा तुल्लेवा विसेसाहिएवा ?

कल्पना से तीसरा भाग कम एक योजन अथोलोक में जावे. उक्त आठ भाग में से एक गाऊ का तीन भाग करे ऐसे दो भाग अधिक तिच्छीलोक में जाने से विशेषाधिक, ऊर्ध्व गति में एक योजन पूर्ण जावे इस से विशेषाधिक. यहां कोई प्रश्न करे कि सामान्य से विशेषाधिकपना कहा है तब उस के नियमित भाग कैसे हो सकते हैं ? एक समय में जितना क्षेत्र चमरेन्द्र अथो गति में उल्लंघता है उतना क्षेत्र शक्रेन्द्र दो समय में उल्लंघता है और वज्र तीन समय में उल्लंघता है. इस तरह शक्रेन्द्र की अथोगति की अपेक्षा से वज्र के तीन भाग कम अथोगति हुई. शक्र का नीचे जानेका काल और वज्र का ऊंचा जाने का काल बराबर है इन से जाना जाता है कि जितने समय में शक्रेन्द्र नीचे जाता है उतने समय में वज्र ऊंचे जाना है. ऊर्ध्व व अथोगति के बीच में तिच्छी गति है. इन दोनों के बीच में तिच्छीगति रही हुई है. इन दोनों के बीच में एक गाऊ के तीस भाग करे ऐसे दश भागवाला तिच्छीगति का प्रमाण कहा ॥३७॥

हणाया म० मनसंकल्प चि० चिंताशोक सा० सागर में सं० प्रविष्ट क० करतल में प० रहा हुआ मु०
 मुल अ० आर्तध्यान उ० ध्याते भू० भूमि में दि० दृष्टि क्षि० ध्यानकरे ॥४०॥ तं० तव तं० उन च० चमर
 अ० अमुरेंद्र को सा० सामानिक देव ओ० हणाया म० मनसंकल्प जा० यावत् क्षि० ध्यानकरते पा० देवकर क०
 करतल जा० यावत् व० बोलें कि० क्या दे० देवानुप्रिय उ० हणाया म० मनसंकल्प जा० यावत् क्षि०
 सुहृन्माए चमरंसि सीहासणंसि उवहयमणसंकल्पे चिंतासीयसागरसंपविष्टे करयल
 पल्हत्थमुहे अट्झाणोत्रगाए, भूमिगयदिट्ठीए श्रियाइ ॥ ४० ॥ तएणं तं चमरं अ-
 सुरिंदं असुरायं सामाणियपरिसोत्रवणया देवा ओहयमणसंकल्पं जात्र श्रियाइ-
 माणं पासइ पासइत्ता करयल जाव एवं वयासी किण्हं देवाणुप्पिया उवहयमणसं-
 कप्पा जात्र श्रियायह ॥ ४१ ॥ तएणं से चमरे असुरिंदे असुरराया ते सामाणिय-
 असुरेंद्र वज्र भयसे मुक्त-हुवा, और शकेंद्र देवेंद्र से अपमान कराया हुआ, चमर चंचा राजधानी में सुधर्मा
 सभा में चमर नामक निहासन पर बैठा हुआ व. मन का अभिमान हणाने से शोक सागर में डुबा हुआ
 गंदस्थलपर हथेली रखकर व भूमि पर दृष्टि रखकर आर्तध्यान करने लगा ॥४०॥ तव चमर असुरेंद्र
 की परिपदा के सामानिक देवोंने चपरेन्द्रको ऐसा आर्तध्यान करता हुआ देवकर पूछा कि अहो देवानुप्रिय!
 आप क्यों ऐसा आर्तध्यान करते हो ? ॥४१॥ उस समय में चमर नामक असुरेंद्रने उन सामानिक परिपदा के

नीचे आने का उ० उपर जाने का क० कितना क० किस से अ० अल्प ॥ ३९ ॥ त० तव च० चमर अ० अमुँद्र व० वज्र का म० भयं से वि० मुक्त स० शक्र दे० देवेद्र से व० बहुत अ० अपमान से अ० अपमानित हुआ च० चमर चंचा रा० रज्यथानी की स० मुधर्मा सभा में च० चमर सी० सिंहासनपे उ० असुररणो उवयणकालस्सय, उपपयणकालस्सय, कयरे कयंरहितो अप्पेवा ४, ? गो-

यमा ! सक्कस्सय उपपयणकाले चमरस्सय उवयणकाले एसणं दोण्हवि तुल्ले, सव्व-
त्थोत्रे सक्कस्सय उवयण काले, वज्जस्सय उपपयणकाले एसणं दोण्हवि तुल्ले संखेज्जगुणे,
चमरस्सय उपपयणकाले वज्जस्सय उवयणकाले एसणं दोण्हवि तुल्ले विसिंसाहिण्ण
॥ ३९ ॥ तएणं से चमरे असुरिंदि असुरराया वज्जभयविप्पमुक्के सक्केणं देविदिणं

देवरणो महया अवमाणेणं अवमाणिए समाणे चमरचंचाए रायहाणीए सभाए
नीनों की परस्पर अल्पावहुत्व करते हैं अहो भगवन् ! वज्र, वज्राधिपति जो शक्र और चमर इन् तीनों को
उपर, नीचे जाने का काल में अल्प, बहुत्व तुल्य या विशेषाधिक यह क्रिया प्रकार है ? अहो गौतम ! शक्र
को उपर जाने का काल और चमर को नीचे जाने का काल परस्पर तुल्य व सत्र से थोड़ा, इस से शक्र का
नीचे उतरने का और वज्र का उपर जाने का काल परस्पर तुल्य और संख्यात गुना इस से चमर का
उपर जाने का और वज्र का नीचे आने का काल परस्पर तुल्य और विशेषाधिक ॥ ३९ ॥ अब चमर

ममं तिवसुचो आयाहिणं पयाहिणं जाव नमंसित्ता एवं वयासी एवं खलु भंते ! मए तुब्भं नीसाए सक्के देव्हिदे हेवराया सयमेव अच्चासाइए जाव तं भहणं भवतु देवाणुप्पियाणं जस्संमि पभावेण आकिट्ठे जाव विहरामि. तं खामेमि णं देवाणुप्पिया जाव उत्तरपुरब्धिंमं दिसीभागं अवक्कमइ अवक्कमइत्ता जाव वत्तीसइवद्धं नट्टविहिं उवदंसेइ उवदंसेइत्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए एवं खलु गोयमा ! चमरेणं असुरिदेणं असुररणो सा दिव्वा देविद्धी लद्धा पत्ता अभिसमण्णागया, ठिई सागरावमं, महाविदेहे वासे सिञ्जिहिइ जाव अंतं काहिइ ॥ ४२ ॥ किं पत्तियणं भंते !

शोक वृत्त की नीचे पृथ्वी शीला पटपर मेरी पास आया और मुझे वंदना नमस्कार कर ऐसा कहा अहो भगवन् ! आपकी नेश्राय से मैं शक्र देवन्द्र की आमातना करने को गया यावत् आपका कल्याण हेम्यो कि आप के प्रभाव से मैं वाधा पीडा रहित फीरता हूँ. इस से अहो देवानुमिय ! आप की मैं क्षमा चाहता हूँ यावत् ईशान कौन में गया और वर्चस प्रकार के नाटक बताकर जिस दिशा से आया या उनी दिशा में गया. इस तरह अहो गौतम ! चमर असुरन्द्रको ऐसी दीव्य देवहि प्राप्त हुई है. स्थिति एक सागरोपम की है और महा विदेह क्षेत्र में उत्पन्न होवेगा यावत् सब दुःखों का अंत करेगा ॥ ४२ ॥

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जी सहायजी जालाप्रसादजी *

ध्याते हो ॥ ४१ ॥ पूर्ववत् ॥ ४२ ॥ किं० किस प० प्रयोजन से भं० भगवद् अ० असुर कुमार देव उ०
 परिसोत्रवर्णणए देवे एवं वधासी एवं खलु देवाणुष्विया मए समणं भगवं महावीरं
 नीसाए सब्बे देविदे देवरायाः सयमेव अच्चासाइए. तएणं तेंणं परिकुविएणं समाणेणं
 ममं वहाए वज्जे निसिट्ठे, तं भहणं भवतु देवाणुष्विया समणस्स भगवओ महावीरस्स
 जस्संमि पभावेण अकिट्ठे अब्बहिए अपरिताविए इह मागए, इह समोसठे, इह सं-
 पत्ते, इहेव अज्ज उवसंपज्जित्ताणं विहरामि तं गच्छामोणं देवाणुष्विया समणं भगवं
 महावीरं वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो तिक्कट्टु चउसट्ठीए सामाणिय साहस्सीहिं जाव
 सन्विट्ठीए जाव जेणेव असोगवर पायेवे जेणेव मम अंतिए तेजेव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता.

देवों को ऐसा कहा अहो देवानुप्रिय ! मैंने श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी की नेश्राय से शक्र देवेंद्र को
 भ्रष्ट करनेकी इच्छा की इससे उसने क्रोधित होकर मेरा वध करनेको वज्र छोडा. अहो देवानुप्रिय ! उन महा
 वीर स्वामी का कल्याण होवो कि जिनके प्रभाव से मैं क्लिष्टता, बाधा, परितापना रहित यहाँपर
 आया हूँ, यहाँपर समोमर्या हूँ यावत् यहाँ पर प्रशान्त बना हुआ विचरता हूँ. इससे अपन
 श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामीकी पास जावे और उन को वंदना नमस्कार करे यावत् उनकी पर्युपासना
 करे. इससे चौसठ हजार सामानिक यावत् सब ऋद्धि सहित सुसुमार नगर के अशोक वन खंड में अ

ममं तिवस्वुत्तो आयाहिणं पयाहिणं जात्र नमंसिच्चा एवं वयासी एवं खलु भंते ! मए तुबं नीसाए सक्के देविंदे देवराया सयमेव अच्चासाइए जात्र तं भद्रणं भवतु देवाणुप्पियाणं जस्समि पभावेण आकिट्टे जात्र विहरामि. तं खामेमि णं देवाणुप्पिया जात्र उत्तरपुरिच्छंमं दिसीभागं अवक्कमइ अवक्कमइच्चा जात्र वत्तीसइचढं नट्टविहिं उवदंसेइ उवदंसेइच्चा जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए एवं खलु गोयमा ! चमरेणं असुरेदिणं असुररणो सा दिव्वा देविट्ठी लद्धा पत्ता अभिसमणगाया, ठिइ सागरावमं, महाविदेहे वासे सिञ्जिहिइ जाव अंतं काहिइ ॥४२॥ किं पत्तियणं भंते !

शोक वृक्ष की नीचे पृथ्वी शीला पटपर मेरी पास आया और मुझे वंदना नमस्कार कर ऐसा कहा अहो भगवन् ! आपकी नेश्राय से मैं शक्र देवेन्द्र की आमतना करने को गया यावत् आपका कल्याण हेतु कि आप के प्रभाव से मैं बाधा पीडा रहित फीरता हूँ. इस से अहो देवानुप्रिय ! आप की मैं क्षमा चाहता हूँ यावत् ईशान कौन में गया और वत्तीस प्रकार के नाटक वताकर जिस दिशा से आया या उमी दिशा में गया. इस तरह अहो गौतम ! चमर असुरेन्द्रको ऐसी दीव्य देवदि प्राप्त हुई है. स्थिति एक सागरोपम की है और महा विदेह क्षेत्र में उत्पन्न होवेगा यावत् सब दु,खों का अंत करेगा ॥ ४२ ॥

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

भद्रिकुत्रा० यावत् ५० पर्युपासना करते हैं० ऐसे व० बोले क० कितनी भं० भगवन् कि० क्रिया ५०
 प्ररूपी मं० मंडितपुत्र ५० पांच क्रिया ५० प्ररूपी का० कायिकी अ० अधिकरण की पा० प्रद्वेषिकी पा०
 पारितापनिकी पा० प्राणातिपात क्रिया ॥ १ ॥ का० कायिकी भं० भगवन् कि० क्रिया क० कितने

पञ्जवासमाणे एवं वयासी कइणं भंते किरियाओ पणत्ताओ ? मंडियपुत्ता ! पंच
 किरियाओ पणत्ताओ तंजहा काइया, अहिगरणिया, पाओसिया, पारियात्रणिया,
 पाणाइवायकिरिया ॥ १ ॥ काइयाणं भंते ! किरिया कइविहा पणत्ता ? मंडियपुत्ता !

या. वरां श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी पधारै, परिपदा वंदन करने को आई, धर्मोपदेश सुनकर पीछी
 गई. उस समय में प्रकृति भद्रिक यावत् विनीत श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी का मंडितपुत्र नामक शिष्य पर्युपासना
 करते ऐसा बोले कि अहो भगवन् ! क्रियाओं कितनी कही हैं ? अहो मंडित पुत्र ! कर्म के हेतु रूप क्रिया के
 पांच भेद कहे हैं. १. शरीर से होवे सो कायिकी क्रिया २. त्वद्गुणत्वादि अधिकरण से होवे सो अ-
 धिकरणिकी ३. पत्सरभाव से होवे सो प्रद्वेषिकी ४. अन्य को परितापना (दुःख) देने से होवे सो परि-
 तापनिकी और ५. प्राणों की घात करने से होवे सो प्राणातिपातिकी क्रिया ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! का-
 यिकी क्रिया के कितने भेद कहे हैं ? कायिकी क्रिया के दो भेद ? अनुपरत कायिकी क्रिया प्रत्याख्यान करके

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

प्रकार की मं० मंडितपुत्र दु० दोषकार की अ० अनुवर्त कायक्रिया दु० दुप्रयुक्त कायक्रिया ॥ १ ॥
 अ० अधिकारिणीकी भं० भगवन्-कि० क्रिया क० कितने प्रकार की मं० मंडित पुत्र दु० दोषकार की
 सं० संयोजन अधिकरण क्रिया नि० निवर्तन अधिकरण क्रिया ॥ ३ ॥ पा० मद्रूपिकी भं० भगवन् कि०
 क्रिया क० कितने प्रकार की मं० मंडितपुत्र दु० दोषकार की जी० जीव मद्रूपिकी अ० अजीव मद्रूपिकी

दुविहा पणत्ता, तंजहा अणुत्रयकाय किरियाय, दुप्पउत्तकाय किरियाय ॥ २ ॥

अहिराणियाणं भंते ! किरिया कइविहा पणत्ता ? मंडियपुत्ता ! दुविहा पणत्ता,

तंजहा संजोषणाहिगरण किरियाय, निव्वत्तणाहिगरण किरियाय ॥ ३ ॥ पाओ-

सियाणं भंते ! किरिया कइविहा प० ? मंडियपुत्ता ! दुविहा प० तंजहा जीव पाओ-

सियाय अजीव पाओसियाय ॥ ४ ॥ पारियात्रणियाणं भंते ! किरिया कइ-

पाप से निवर्तना नहीं सो और दुप्रयुक्त सो दुष्ट प्रयोग के सद्भाव से ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! अ-

धिकारिणीकी क्रिया के कितने भेद कहे हैं ! अहो मंडित पुत्र ! हल घर वगैरह में जो कोई यंत्रादि न होने

उस का संयोग मीलने से जो क्रिया लगे सो संगोपणाधिकरण क्रिया और खड्गादि नविन उत्पन्न

करना सो निवर्तनाधिकरण क्रिया ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! मद्रूपिकी क्रिया के कितने भेद कहे हैं ?

अहो मंडितपुत्र ! जीव पर मत्सर भावस्त्रे सो जीव मद्रूपिकी और अजीव पर मत्सर भाव स्त्रे सो अजीव

किं क्रिया ॥ ७ ॥ अ० है भ० भगवन् स० श्रमण नि० निश्चय को किं क्रिया क० करे ह० हां अ०
 है क० कैसे भ० भगवन् स० श्रमण नि० निश्चय किं क्रिया क० करे मं० मण्डितपुत्र म० प्रमाद
 प्रत्ययिक जो० योग निमित्त ॥ ८ ॥ जी० जीव भ० भगवन् स० सदैव ए० कम्पे वे० विशेष कम्पे च०
 चले फं० थोडाकंपे ध० सबदिशा में चले खु० क्षोभपापें उ० उदीरे तं० उस उस भाव को प० परिण
 पुष्टि किरिया पच्छा वेयणा णो पुष्टि वेयणा पच्छाकिरिया ॥ ७ ॥ अतिथणं भंते समणाणं
 निगंथाणं किरिया कज्जइ ? हंता अत्थि. कहिणं भंते ! समणाणं निगंथाणं किरिया क-
 ज्जइ ? मंडियपुत्ता ! पमायपच्चया, जोगनिमित्तं च. एवं खलु समणाणं निगंथाणं किरिया
 कज्जइ ॥ ८ ॥ जीविणं भंते ! सयासमियं एयइ, वेयइ, चलइ, फंदइ, घटइ, खुब्भेइ, उदीरेइ, तंतं
 पीछे क्रिया होती है ? अहो मण्डितपुत्र ! पहिले कर्मबंध के कारण भूत क्रिया होती है फीर उन का
 उदय होने से वेदना होती है. इस से पहिले क्रिया और पीछे वेदना होती है; परंतु पहिले वेदना और
 पीछे क्रिया नहीं है ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! श्रमण निश्चय क्या क्रिया करते हैं ? हां मण्डित पुत्र !
 श्रमण निश्चय क्रिया करते हैं. अहो भगवन् ! श्रमण निश्चय कैसे क्रिया करते हैं ? अहो मण्डित पुत्र !
 प्रमाद प्रत्ययिक और योग निमित्त श्रमण निश्चय क्रिया करते हैं ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! सयोगी
 जीव सदैव पमाण युक्त क्या चले, विशेष चले, एक स्थान से अन्य स्थान जावे, स्वर्ग करे, सुख्य होवे

अर्थ (सुख्य) (स्वर्ग) (एक स्थान से अन्य स्थान जावे) (सुख्य होवे)

सूत्र

भावार्थ

* मकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

॥ ४ ॥ पा० परितापिनी की दु० दोषकार की स० अपने इस्त से प० दुसरें के हस्त से ॥ ५ ॥ पा० प्राणातिपातिका क्रिया दु० दोषकार की स० स्वहस्त प्राणातिपात क्रिया प० परहस्त प्राणातिपात क्रिया ॥ ६ ॥ पु० पहिली भं० भगवन् किं० क्रिया प० पीछे वे० वेदना पु० पहिली वे० वेदना प० पीछे किं० क्रिया मं० मंडित पुत्र पु० पहिली क्रिया प० पीछे मं० वेदना जो० नहीं पु० पहिली वेदना प० पीछे

विहा प० ? मंडियपुत्ता ! दुविहा प० तंजहा सहत्थ पारियात्रणियाय, परहत्थ पारियात्रणियाय, ॥ ५ ॥ पाणाइत्राय किरियाणं भंते ! पुच्छा मंडियपुत्ता ! दुविहा प० तंजहा सहत्थ पाणाइत्रायकिरिया परहत्थ पाणाइत्राय किरियाय ॥ ६ ॥ पुत्तिव भंते ! किरिया पच्छा वेयणा ; पुत्तिव वेयणा पच्छा किरिया ? मंडियपुत्ता !

मंदापिनी ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! परितापिनी क्रिया के कितने भेद ! अहो मण्डित पुत्र ! परितापिनी की क्रिया के दो भेद ? स्वहस्त मे स्नतः को तथा अन्य को परितापना उत्पन्न करे और २ पर हस्त से स्नतः को तथा अन्य को परितापना उत्पन्न करे ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! प्राणातिपातिका क्रिया के कितने भेद ! प्राणातिपातिका क्रिया के दो भेद ? स्वहस्त से स्नतः की तथा अन्य की घात करे सो और २ पर हस्त मे स्नतः की तथा अन्य की घात करे ॥ ६ ॥ क्रिया मे वेदना होती है इम से वेदना का प्रश्न पुठने है. अहो भगवन् ! पहिले क्रिया और पीछे वेदना होती है अथवा पहिले वेदना होती है और

कि० क्रिया ॥ ७ ॥ अ० हे भं० भगवन् स० श्रमण नि० निर्ग्रय को कि० क्रिया क० करे हं० हां अ०
 है क० कैसे भं० भगवन् स० श्रमण नि० निर्ग्रय कि० क्रिया क० करे मं० मंडितपुत्र म० प्रमाद
 प्रत्ययिक जो० योग निमित्त ॥ ८ ॥ जी० जीव भं० भगवन् स० सदैव ए० कम्पे वे० विशेष कम्पे च०
 चले फं० थोडाकंपे घ० सर्वदिशा में चले खु० क्षोभपापें उ० उदीरे तं० उस उस भाव को प० परिण
 पुढिं किरिया पच्छा वेयणा जो पुढिं वेयणा पच्छाकिरिया ॥७॥ अत्थिणं भंते समणाणं
 निगंथाणं किरिया कज्जइ ? हंता अत्थि. कहिणं भंते ! समणाणं निगंथाणं किरिया क-
 ज्जइ ? मंडियपुत्ता ! पमायपच्चया, जोगनिमित्तंच. एवं खलु समणाणं निगंथाणं किरिया
 कज्जइ ॥८॥ जीवेणं भंते ! सयासमियं एयइ, वेयइ, चलइ, फंदइ, घट्टइ, खुब्भइ, उदीरेइ, तंतं
 पीछे क्रिया होती है ? अहो मण्डितपुत्र ! पहिले कर्मबंध के कारण भूत क्रिया होती है फिर उन का
 उदय होने से वेदना होती है. इस से पहिले क्रिया और पीछे वेदना होती है; परंतु पहिले वेदना और
 पीछे क्रिया नहीं है ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! श्रमण निर्ग्रन्थ क्या क्रिया करते हैं ? हां मण्डित पुत्र !
 श्रमण निर्ग्रन्थ क्रिया करते हैं. अहो भगवन् ! श्रमण निर्ग्रन्थ कैसे क्रिया करते हैं ? अहो मण्डित पुत्र !
 प्रमाद प्रत्ययिक और योग निमित्त श्रमण निर्ग्रय क्रिया करते हैं ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! सयोगी
 जीव सदैव प्रमाण युक्त क्या चले, विशेष चले, एक स्थान से अन्य स्थान जावे, स्पर्श करे, धुब्ब होवे

शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ () शब्दार्थ ()

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायनी ज्वालाप्रसादजी *

में है० हां में० मंडितपुत्र जी० जीव स० सदैव ए० कंपे जा० यावत् प० परिणमे ॥ ९ ॥ जा० जितना
 में० भगवन् जी० जीव स० सदैव जा० यावत् प० परिणमता ता० उतना त० उस जीव की अं० अंत में अं०
 अक्रिया भ० हेवे णो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ से० वह के० कैसे में० भगवन् में० मंडितपुत्र
 जा० जितना से० वह जी० जीव स० सदैव जा० यावत् प० परिणमे ता० उतना से० वह जी० जीव
 आ० आरंभ करे सा० सारंभ करे स० समारंभ करे आ० आरंभ में व० वैसे सा० सारंभ में व० वैसे
 भावें परिणमइ ? हंता मंडियपुत्ता ! जीवेणं सयासमियं एयइ जाव तंतं भावं परि-
 णमइ ॥ ९ ॥ जावंचणं भंते ! से जीवे सयासमियं जाव परिणमइ तावंचणं तस्स
 जीवस्स अंते अंतकिरिया भवइ ? णोइणट्ठे समट्ठे ॥ से केणट्ठणं भंते ! एवं वुच्चइ,
 जावंचणं से जीवे सयासमियं जाव अंते अंतकिरिया न भवइ ? मंडियपुत्ता ! जावंच-
 चणं से जीवे सयासमियं जाव परिणमइ तावंचणं से जीवे आरंभइ, सारंभइ, समा-
 उदारे वीरह पूर्वोक्त भावों में परिणमे ? हां मण्हित पुत्र ! सयोगी जीव सदैव प्रमाण युक्त चलता है
 यावत् पूर्वोक्त भावों में परिणमता है ॥ ९ ॥ अहो भगवन् ! जहां लग सयोगी जीव सदैव प्रमाण युक्त
 चलता है यावत् पूर्वोक्त भावों में परिणमता है वहां लग क्या उन को अंत क्रिया होती है ! यह अर्थ
 योग्य नहीं है. किस कारन से यह अर्थ योग्य नहीं है ? अहो-मण्हित पुत्र ! जहां लग-सयोगी जीव

स० समारंभ में व० वर्ते आ० आरंभ करता सा० सारंभ करता स० समारंभ करता था० आरंभ में
 सा० सारंभ में स० समारंभ में व० वर्तता व० बहुत पा० प्राण भू० भूत जी० जीव म० सत्त्व के
 दुःख देने से सो० शोचकराने से जू० जूरणा कराने से ति० आक्रंद कराने से पि० मारने से प० परिता-
 पना उपजाने से व० वर्ते से० वह ते० इसलिये म० मंडित पुत्र ॥ १० ॥ से० वह ज० जैसे के० कोई
 रंभइ ; आरंभे वटइ, सारंभेवटइ, समारंभेवटइ; आरंभमाणे, सारंभमाणे, समारंभमाणे,
 आरंभेवटमाणे, सारंभेवटमाणे, सामारंभेवटमाणे, बहूणं पाणानं, भूयानं, जीवानं,
 सत्ताणं दुक्खावणताए, सोयावणताए, जूरवणताए, तिप्पावणताए, विट्ठावणताए,
 परियावणताए वटइसे तेणट्टेणं मंडियपुत्ता ! एवं बुच्चइ, जावंचणं से जीवे सयासमियं
 एयइ जाव परिणमइ, तावंचणं तस्स जीवस्स अंते अंतकिरिया न भवइ ॥ १० ॥

सदैव चलता है यावत् उन पूर्वोक्त भावों में परिणमता है वहां लग वह जीवों का आरंभ, सारंभ व
 समारंभ करता है, आरंभ, सारंभ व समारंभ में वर्तता है. इस तरह आरंभ, सारंभ व समारंभ करता हुआ
 यावत् उन में प्रवर्तता हुआ प्राण, भूत, जीव व सत्त्वोंको दुःख, शोक, झुरणा, वेदना, पिटना व परितापना
 करने में प्रवर्तता है. इस से अहो मण्डित पुत्र ! ऐसा कहा गया है कि सयोगी जीव जहां लग चलता है
 यावत् उन पूर्वोक्त भावों में परिणमता है वहांलग उन को अंत क्रिया नहीं होती है ॥ १० ॥ अहो

पुरुष सु० सुका तु० तृण कापूला जा० अग्नि में प० डाले में० वह में० मंडितपुत्र सु०० शुष्क त० तृणका
पुत्रा आ० अग्नि में प० डालते खि० शीघ्र म० जल जावे इं० हां म० जल जावे, ज० जैसे, के० कोई पुरुष
त० तप्त अ० लोहेके गोलेपे उ० पानी का बिन्दु प० डाले से० वह में० मंडितपुत्र उ० पानी का बिन्दु त०

जीविणं भंते ! सयासमियं णो एयइ जात्र णो तंतं भात्रं परिणमइ ? हंता मंडियपुत्ता !

जीविणं सयासमियं जात्र णो परिणमइ जावंचणं भंते ! से जीवे नो एयइ जात्र नो
तंतं भावं परिणमइ, तावंचणं तस्स जीवस्स अंते अंतकिरिया भवइ ? हंता जात्र
भवइ ॥ से केणट्टेणं जात्र भवइ ? मंडियपुत्ता ! जावंचणं च से जीवे सयासमियं

णोएयइ जात्र परिणमइ, तावंचणं से जीवे णो आरंभइ, णोसारंभइ, णोसमारंभइ,
णो आरंभवट्ठइ, णो सारंभेवट्ठइ णो सारंभेवट्ठइ, अणारंभमाणे, असारंभमाणे,

भावन् ! अयोगी जीव सदैव प्रमाण युक्त क्या नहीं चलते हैं यावत् उक्त भावों में नहीं परिणमते हैं ?
हां मण्डित पुत्र ! वे अयोगी जीव नहीं चलते हैं यावत् पूर्वोक्त भावों में नहीं परिणमते हैं. अहो
भाग्यन् ! जहाल्लग वे जीवों नहीं चलते हैं यावत् नहीं परिणमते हैं वहाल्लग उन को क्या अंत क्रिया
होती है ? हां मण्डित पुत्र ! उन को अंत क्रिया होती है. किस तरह उन को अंत क्रिया होती है ?
अहो मण्डित पुत्र ! जहाल्लग वे जीव चलते नहीं हैं यावत् नहीं परिणमते हैं वहाल्लग वे आरंभ, सारंभ

तस अ०लोहे के कडे पे प०डाला हुवा खि० शीघ्र वि० नाशपावे हं० हां वि०विनाश पावे ज० जैसे ह० द्रह
पु० पूर्ण पु० पूर्ण प्रमाण वो० उछलता वो० उछास पामता स० भरा हुवा चि० होवे अ० अव के०
कोई पुरुष तं० उस ह० द्रह में ए० एक बडा ना० नाव स० शतछिद्रवाली ओ० रखे मं० मंडितपुत्र सा०

असमारंभमाणे; आरंभे अत्रट्टमाणे, सारंभे अत्रट्टमाणे, समारंभे अत्रट्टमाणे बहूणं पाणा-

णं भूयाणं जीवाणं सत्ताणं अदुक्खावणत्ताए, जाव अपरियावणत्ताए वट्टइ, से जहा

नामए केइपुरिसे सुक्कतणहत्थयं जायतेयंसि पक्खिवेज्जा, सेणुणं मंडियपुत्ता! से सुक्के

तणहत्थए जायतेयंसि पक्खित्ते समणे खिप्पामेव मसमसा विज्जइ ? हंता मसमसा

विज्जइ ॥ सेजहा नामए केइपुरिसे तत्तंसि अयकवच्चंसि उदयविंदु पक्खिवेज्जा ?

सेनूणं मंडियपुत्ता ! से उदयविन्दु तत्तंसि अयकवच्चंसि पक्खित्ते समणे खिप्पामेव

व समारंभ नहीं करते हैं यावत् उन में नहीं परिणमते हैं. इस तरह आरंभ, सारंभ व समारंभ नहीं करने

वाला यावत् उस में नहीं प्रवर्तनेवाला प्राण, भूत, जीव व सत्तों को दुःख यावत् परितापना नहीं करता है.

पंतु योग निरुंधन रूप शुक्ल ध्यान से सकल कर्म ध्वंस रूप अंत क्रिया करता है. उस के उपर तीन दृष्टांत

कहते हैं. ? जैसे सूका हुआ घास आग्नि में डालने से क्या भस्म होता है ! हां भगवन् ! वह भस्म होता

है, अहो मण्डित पुत्र ! तस ओहे पर पानी का विन्दु पडने से क्या वह शीघ्र नष्ट होता है ? हां भग-

पुरुष सु० सुका तु० तृण कापूला जा० अग्नि में प० डाले न० वह म० मंडितपुत्र सु०० शुष्क त० तृणका
पुत्रा आ० अग्नि में प० डालते त्रि० शीघ्र म० जल जावे इं० हां म० जल जावे, ज० जैसे, के० कोई पुरुष
त० तसु अ० लोहके गोलेप उ० पानी का बिंदु प० डाले से० वह म० मंडितपुत्र उ० पानी का बिंदु त०

जीविणं भंते ! सयासमियं णो एयइ जाव णो तंतं भावं परिणमइ ? हंता मंडियपुत्ता !

जीविणं सयासमियं जाव णो परिणमइ जावंचणं भंते ! से जीवि नो एयइ जाव नो

तंतं भावं परिणमइ, तावंचणं तस्स जीवस्स अंते अंतकिरिया भवइ ? हंता जाव

भवइ ॥ से केणट्टेणं जाव भवइ ? मंडियपुत्ता ! जावंचणं च से जीवि सयासमियं

णोएयइ जाव परिणमइ, तावंचणं से जीवि णो आरंभइ, णोसारंभइ, णोसमारंभइ,

णो आरंभेवट्टइ, णो सारंभेवट्टइ, णो सारंभेवट्टइ, अणारंभमाणे, असारंभमाणे,

भवन् ! अयोगी जीव सदैव प्रमाण युक्त क्या नहीं चलते हैं यावत् वक्त भावों में नहीं परिणमते हैं ?

तां मण्डित पुत्र ! वे अयोगी जीव नहीं चलते हैं यावत् पूर्वोक्त भावों में नहीं परिणमते हैं, अहो

भवन् ! जहांग वे जीवों नहीं चलते हैं यावत् नहीं परिणमते हैं वहांग उन को क्या अंत क्रिया

देती है ? हां मण्डित पुत्र ! उन को अंत क्रिया होती है, किस तरह उन को अंत क्रिया होती है ?

अहो मण्डित पुत्र ! जहांग वे जीव चलते नहीं हैं यावत् नहीं परिणमते हैं वहांग वे आरंभ, सारंभ

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

वह नाव उ० उम आ० आश्रव द्वार से आ० भरी हुई पु० पूर्ण वो० उछलती वो० उछास पामती स०
भरी हुई चि० रहे हं० हां चि० रहे के० कोई पुरुष ता० उस नाव को स० सब वाजु आ० आश्रव द्वार
पि० दांक कर ना० नाव का उ० बरतन से उ० पानी उ० नीकाले सा० वह ना० नाव नं० उस उ०

विहंसमागच्छइ ? हंता विहंसमागच्छइ ॥ से जहा नामए हरएसिया पुण्णे पुण्णप्पमाणे
बोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभरघडत्ताए चिट्ठइ, अहंणं केइपरिसे तंसि हरयंसि एगंमहं
णाथं सयायंसयिच्छइ उग्गहेज्जा ? सेनूणं मंडियपुत्ता ! सा नावा तिहिं आसवद्वारेहिं
आपूरमाणी आपूरमाणी पुण्णा पुण्णप्पमाणा बोलट्टमाणा वोसट्टमाणा समभरघडत्ताए
चिट्ठइ ? हंता चिट्ठइ ॥ अहंणं केइपरिसे तीसे नावाए सब्बओ समंता आसवद्वाराइं
पिहेइ २ चा नावा उस्सिचणणं उदयं उस्सिचेज्जा ? सेणुणं मंडियपुत्ता ! सा नावा तंसि
उदयंसि उस्सिचंसि समाणंसि खिप्पामेव उट्ठं उदइ ? हंता उदइ, एवामेव मंडिय पुत्ता !

अन् ! वह विन्दु शीघ्र नष्ट होता है. और जैसे बहुत परिपूर्ण घट समान एक द्रव है. पानी
बाहिर निकल रहा है ऐसा वह भरा हुआ है. अब कोई पुरुष छिद्रवाली नावा इस पे डाले तो छिद्रसे नावा में
पानी आने २ क्या वह नावा पानी के तल में जाकर बैठती है ? हां वह नावा छिद्रों से पानी भर जाने
में तन्त्रपर जाकर बैठती है. यदि कोई पुरुष उस के छिद्रों बंधकर के उस में रहा हुआ पानी नीकालकर

पानी में उ० नीकालते खि० शीघ्र उ० उपर उ० आवे हं० हां उ० आवे ए० ऐसे मं० मंडितपुत्र
अ० आत्मा से संवृत अ० अनगार इ० ईर्या समिति वाले जा० यावत् वं० गुप्तब्रह्मचारी आ० उपयोग पूर्वक
ग० जाते चि० खडा रहते नि० बैठते तु० सोते व० वस्त्र प० पात्र कं० कंबल पा० रजोहरण मे०
ग्रहण करते नि० रखते जा० यावत् च० चक्षु पक्ष नि० निपात वे० वेमात्रा सु० मूक्षम इ० ईर्या पथिक
क्रिया क० करे सा० यह प० प्रथम समय मे व० वंधी पु० स्वर्शी वि० दूसरा समय मे वे० वेदी त०

अत्रचा संवुडस्स अणगारस्स इरियासमियस्स जाव बंभगुत्तयारिस्स आउत्तं गच्छ-
माणस्स, चिट्ठमाणस्स. निसियमाणस्स, तुयट्टमाणस्स, आउत्तं वत्थ पडिग्गह कंबल
पायपुंछणं गेण्हमाणस्स निक्खेत्तमाणस्स जाव चक्खुपग्गह निवायमन्नि वेमाया
सुहुमा इरियावहिया किरिया फज्जइ, सा पढमसमय बद्धा पुट्ठा, वितिय समय वेइया,
तइय समय निज्जरिया, सा बद्धा पुट्ठा उदीरिया वेदिया निज्जिण्णा सेयकाले अकम्मं-

साफ करो तो क्या वह नावा शीघ्र पानीपर आती है ? हां भगवत् ! खाली नावा पानीपर आती है. वैसही अहो
मंडित पुत्र ! आत्मा को संवरने वाले, ईर्यासमिति यावत् गुप्त ब्रह्मचर्य पालने वाले, यत्ना पूर्वक चलने
वाले, खड़े रहने वाले, बैठने वाले, सोने वाले, वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण ग्रहण करने वाले, रखने
वाले अनगार को उन्मेष निषेप मात्र ईर्या पथिक क्रिया लगती है. उसक्रिया का प्रथम समयमें बंध होता है

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुबदेवसहायजी जालामसारीजी *

शब्दार्थ

सूत्र

तीसरा समय नि० निर्जरी सा० वह व० वंशी पु० स्पर्शी उ० उदीरी वे० वेदी नि० निर्जरी से० आगा-
 मिक काल में अ० अकर्म भ० होंवे से० वह ते० इसलिये ॥ ११ ॥ प० प्रमत्त संयति भं० भगवन् प०
 प्रमत्त संयम में व० वर्तता स० सर्व प० प्रमत्त अ० काल से के० कितना हो० होवे भं० मंडितपुत्र ए० एक
 जीव प० आश्री ज० जघन्य ए० एक समय उ० उत्कृष्ट दे० देशउणा पु० पूर्वक्रोड णा० विविध जीव
 प० आश्री स० सर्व काल ॥ १२ ॥ अ० अप्रमत्त संयति भं० भगवन् अ० अप्रमत्त स० संयम में व०

चावि भवइ । से तेणट्टेणं मंडियपुत्ता ! एत्रं वुच्चइ जावं चणं से जीवि सयासामियं
 नो एयइ जाव अंते अंतिकिरिया ॥ ११ ॥ प्रमत्त संजयस्सणं भंते ! प्रमत्तसंजमे वट्टमा-
 णस्स सव्वावियणं प्रमत्तद्धाकालओ केवचिंरं हाइ ? मंडियां ! एगं जीवं पडुच्च जह-
 णेणं एक्कं समयं, उक्कोसणं देसूणा पुंत्वक्कोडी ॥ णाणाजीवि पडुच्च सव्वद्धा ॥ १२ ॥

दुमरे समय में वेदना होती है और तीसरे समय में निर्जरा होती है. इस तरह बंध, स्पर्श, उदीरणा, वेदना, व
 निर्जरा होने से अनागत काल में कर्म रहित जीव होता है. इससे अहो मंडित पुत्र? अयोगी जीव नहीं
 चरना है यावत् उन का अंतःक्रिया हांती है ऐसा कहा है ॥ ११ ॥ अहो भगवन् ! प्रमत्त भयत गुण
 स्थान में रहने वाला प्रमत्त संयतीकी सब काल आश्रित कितनी स्थिति है ? अहो मंडित पुत्र ? एक जीव
 आश्रित जगन्य एक समय उत्कृष्ट देशऊणी क्रोडपूर्व और बहुत जीव आश्री सदा काल रहते हैं. क्यों कि
 इस का निरह नहीं होता है ने महा विद्वह क्षेत्र में सदैव रहते हैं ॥ १२ ॥ अहो भगवन् ! अप्रमत्त संयम

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥

तीसरा शतक का तीसरा अध्याय

वर्तता अ० अग्रमत्त काल से के० कितना हो = होवे मं० मंडित ए० एक जीव प० आश्री ज० जघन्य अ० अंतर्मुहूर्त उ० उत्कृष्ट पु० पूर्वक्रोड दे० देशऊणां णा० विविध जीव प० आश्री स० सर्व काल ॥ १३ ॥ भ० भगवान् मं० मंडितपुत्र अ० अनगर सं० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर को न० नमस्कार कर सं० संयम त० तप से अ० आत्मा को भा० भावते हुवे वि० विचरते हैं ॥ १४ ॥ भं० भगवान् गो० गौतम स०

अप्पमत्त संजयस्सणं भंते ! अप्पमत्ता संजमे वट्टमाणस्स सव्वावियणं अप्पमत्तद्धाकालओ केवचिरं होइ ? मंडिया ! एगं जीवं पडुच्च जहण्णेणं अंतोमुहत्तं, उक्कोसेणं पुव्वकोडी- देसूणा णाणाजीवे पडुच्च सब्बं ॥ १३ ॥ सेवं भंते, भंतेत्ति भयवं मंडियपुत्ते अणगारे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, नमंसइत्ता संजमेणं तवसा अप्पणं भवेमाणे विहरइ ॥ १४ ॥ भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमं-

में रहनेवाला अप्रमत्त संयति सब काल आश्री कितने काल तक रहता है ? अहो मण्डितपुत्र ! एक जीव आश्री जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट देश ऊना पूर्व क्रोड; क्यों कि अप्रमत्त अवस्था में रहनेवाला जीव अंतर्मुहूर्त से पहिले काल नहीं करता है और आठ वर्ष कम क्रोड पूर्व सो केवल ज्ञान आश्री जानना बहुत जीव आश्री निरंतर सब काल जानना. क्योंकि अप्रमत्त संयति सदैव पाते हैं ॥ १३ ॥ अहो भगवान् ! आप के बचन तथ्य हैं ऐसा कहकर श्री श्रमण भगवन्त महावीर को वंदना नमस्कार कर मण्डित

पुत्र (सुत्र) भावार्थ

शब्दार्थ सुत्र भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी जालाममाजी *

शब्दार्थ

सूत्र

तीसरा समय नि० निर्जरी सा० वह व० वंशी पु० स्वर्शी उ० उदरी उ० उदरी से० आगा-
मिक काल में अ० अकर्म भ० हाँवे से० वह ते० इसलिये ॥ ११ ॥ प० प्रमत्त संयति भं० भगवन् प०
प्रमत्त संयम में व० वर्तता स० सर्व प० प्रमत्त अ० काल से के० कितना हो० हाँवे में० मंडितपुत्र ए० एक
जीव प० आश्री ज० जयन्य ए० एक समय उ० उत्कृष्ट दे० देशउणा पु० पूर्वकोड ना० विविध जीव
प० आश्री स० सर्व काल ॥ १२ ॥ अ० अप्रमत्त संयति भं० भगवन् अ० अप्रमत्त स० संयम में व०

यात्रि भवइ । से तेणट्टेणं मंडियुत्ता ! एवं बुच्चइ जावं चणं से जीवे सयासमियं
नो एयइ जात्र अंते अंतकिरिया ॥ ११ ॥ पमत्तं संजयस्सणं भंते ! पमत्तसंजमे वट्टमा-
णरस सव्वावियणं पमत्तद्धाकालओ केवचिरं होइ ? मंडियां ! एगं जीवं पडुच्च जह-
ण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं देसूणा पुव्वक्कोडी ॥ जाणाजीवे पडुच्च सव्वद्धा ॥ १२ ॥

दूरे समय में वेदना होती है और तीसरे समय में निर्जरा होती है. इस तरह भंघ, स्वर्शी, उदरिणा, वेदना, व
निर्जरा होने में अनागत काल में कर्म रहित जीव होता है. इस से अहो मंडित पुत्र ? अयोगी जीव नहीं
बनता है यात्रु उन को अंतक्रिया हांती है ऐसा कहा है ॥ ११ ॥ अहो भगवन् ! प्रमत्त संयत गुण
मान में रहने वाला प्रमत्त संयतीकी सब काल आश्रित कितनी स्थिति है ? अहो मंडित पुत्र ? एक जीव
आश्रित जयन्य एक समय उत्कृष्ट देशऊणी क्रोडपूर्व और बहुत जीव आश्री मदा काल रहते हैं. क्यों कि
इस का विरह नहीं होता है. वे महा विदेह क्षेत्र में सदैव रहते हैं. ॥ १२ ॥ अहो भगवन् ! अप्रमत्त संयम

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥

लोकस्थिति लो० लोकानुभाव ॥ ३ ॥ ३ ॥

अ० अनगर भं० भगवन् भ्रा० भावितात्मा दे० देव को वे० वैक्रेय स० समुद्रघात से स० नीकालता जा० यानरूप से जा० जाते को जा० जाने पा० देखे गो० गौतम अ० कितनेक दे० देवको पा० देखे नो० नहीं जा० यान को पा० देखे अ० कितनेक नो० नहीं दे० देवको नो० नहीं जा० यान को पा० देखे रिया सम्मत्ता ॥ तइयसयस्स तईओ उहेसो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ ३ ॥ * ॥

अणगारेणं भंते भावियप्पा देवं वेउव्विय समुघाएणं समोहय जाणरूधेणं जाय-
माणं जाणइ पासइ ? गोयमा ! अत्थेगइए देवं पासइ नो जाणं पासइ, अत्थेगइएणं
जाणं पासइ नो देवं पासइ, अत्थेगइए देवंपि जाणंपि पासइ, अत्थे-
जानना. अहो भगवन् ! आप जो कहते हैं वह सत्य है ऐसा कहकर गौतम स्वामी विचरने लगे. यह
क्रिया का अधिकार संपूर्ण हुवा यह तीसरे शतकका तीसरा उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ ३ ॥ ३ ॥

तीसरे उद्देशे में क्रिया का अधिकार कहा. वह ज्ञानवंत को प्रत्यक्ष होती है सो बताते हैं. श्री गौतम
स्वामी प्रश्न करते हैं कि अहो भगवन् ! वैक्रेय समुद्रघात से उत्तर वैक्रेय करके विमानादि रूप बना कर
जाते हुवे देव को भावितात्मा अनगर क्या ज्ञान से जानते हैं और दर्शन से देखते हैं ? यहां पर
अधिज्ञान की विचित्रता से चौभंगी जानना. १. कितनेक देव को देखते हैं परंतु विमान को नहीं
देखते हैं. २. कितनेक विमान को देखते हैं परंतु देव को नहीं देखते हैं ३. कितनेक देव व विमान दोनों

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुबदेवसहायजी जालामसाराजी *

श्रमण भगवंत म० महावीर को न० नमस्कार कर ए० ऐसा व० बोले क० कैसे भ० भगवान् ल०
लवण समुद्र चा० चतुर्दशी उ० अमावास्या पु० पूर्णिमा को अ० अपेक्षा से व० वृद्धिपामे हा० हानिपा
मे ज० जैसे जी० जीवां भिगम में ल० लवण समुद्र की व० वक्तव्यता ने० जानना जा० यात्र लो०

सइ, नमंसइत्ता एवं वयासी-कम्हाणं भंते ! लवणसमुद्रे चाउदसट्टमुदिट्ठ पुण्णमा-
सिणीसु अइरेगं वड्डइवा हायइवा ? जहा जीवाभिगमे लवण समुद्र वत्तव्या नय-
व्या ॥ जाव लोयट्ठिइ । लोयाणुभावे ॥ १४ ॥ सेवं भंते भंतेत्ति जाव विहरइ ॥ कि-

पुत्र संयमं व तप से आत्मा को भावते, हुवे विचरने लगे ॥ १४ ॥ भगवान् गौतम श्री श्रमण भगवन्त
महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार कर पूछने लगे कि अहो भगवान् ! अन्य तिथी की अपेक्षामें चतुर्दशी
अमावास्या व पूर्णिमाको लवण समुद्र में पानी क्यों अधिक बढ़ता है व क्षीण होता है ? अहो गौतम !
लवण समुद्र की चारों दिशी में चार महा पाताल कलश एक-एक लक्ष योजन के ऊँडे कहे हैं. उनको तीन-
साइ है उन चारों कलश की बीच में एक-एक हजार योजन के छोटे कलश की ९ लड़ों कही है. उन को
भी तीन-एक काण्ड हैं. उन के नीचे के काण्ड में वायु है, बीच के काण्ड में वायु और हवा है व उपर के
काण्ड में पानी है. नीचे के काण्ड का वायु गुंजायमान होने से सोलह हजार योजन की दगमाले पर दो
कोश पानी चढ़ता है. इस से इन तिथियों में पानी भरता है वगैरह अधिकार जीवाभिगम सूत्र से

लोकस्थिति लो० लोकानुभाव ॥ ३ ॥ ३ ॥

अ० अनगर भं० भगवन् मा० भावितात्मा दे० देव को वे० वैक्रेय स० समुद्रघात से स० नीकालता जा० यानरूप से जा० जाते को जा० जाने पा० देखे गो० गौतम अ० कितनेक दे० देवको पा० देखे नो० नहीं जा० यान को पा० देखे अ० कितनेक नो० नहीं दे० देवको नो० नहीं जा० यान को पा० देखे रिया सम्मत्ता ॥ तइयसयस्स तईओ उहेसो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ ३ ॥ * ॥

अणगारेणं भंते भावियप्पा देवं वेउव्विय समुघाएणं समोहय जाणरूधेणं जाय-
माणं जाणइ पासइ ? गोयमा ! अत्थेगइए देवं पासइ नो जाणं पासइ, अत्थेगइएणं
जाणं पासइ नो देवं पासइ, अत्थेगइए देवंपि जाणंपि पासइ, अत्थे-
जानना. अहो भगवन् ! आप जो कहते हैं वह सत्य है ऐसा कहकर गौतम स्वामी विचरने लगे. यह
क्रिया का अधिकार संपूर्ण हुवा यह तीसरे शतकका तीसरा उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ ३ ॥ ३ ॥

तीसरे उद्देशे में क्रिया का अधिकार कहा. वह ज्ञानवंत को प्रत्यक्ष होती है सो बताते हैं. श्री गौतम
स्वामी प्रश्न करते हैं कि अहो भगवन् ! वैक्रेय समुद्रघात से उत्तर वैक्रेय करके विमानादि रूप बना कर
जाते हुवे देव को भावितात्मा अनगर क्या ज्ञान से जानते हैं और दर्शन से देखते हैं ? यहां पर
अवधिज्ञान की विचित्रता से चौभंगी जानना. ? कितनेक देव को देखते हैं परंतु विमान को नहीं
देखते हैं. २ कितनेक विमान को देखते हैं परंतु देव को नहीं देखते हैं ३ कितनेक देव व विमान दोनों

सूत्र

भावार्थ

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

॥ १ ॥ अ० अनगार भ० भगवन् भ० भावितारता दे० देवी को वि० वैक्रेय स० समुद्रघात से स० क्रिया हुवा यानरूप से जा० जाती जा० देखे गो० गौतम ए० ऐसे ही ॥ २ ॥ पूर्ववत् ॥ ३ ॥ देखे अ० अनगार भ० भगवन् भ० भावितारता रु० वृक्ष की अं० अंतर पा० देखे वा० बाहिर पा० देखे गइए नो देव पासइ नो जाण पासइ ॥ १ ॥ अणगारेणं भंते ! भावियप्पा देवि

विउव्विय समुग्घाएणं समोहिय जाणरूवेण जायमाणि जाणइ पासइ ? गोयमा ! एवं चेव ॥ २ ॥ अणगारेणं भंते ! भावियप्पा देव संदेवीयं विउव्विय समुग्घाएणं समोहिय जाणरूवेणं जायमाणं जाणइ पासइ ? गोयमा ! अत्थेगइए देव संदेवीयं पासइ, नो जाणं पासइ, एएणं अभिलवेणं चत्तारिभंगा ॥ ३ ॥ अणगारेणं भंते !

भावियप्पा रुक्खरस किं अंतो पासइ वाहिं पासइ चउभंगो, ॥ एवं किं मूलं पासइ, हो देखते है और ४. कितनेक देव व विमान दोनों को नहीं देखते हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! वैक्रेय समुद्रघात मे उचर वैक्रेय करके यानरूप जाती हुई देवी को क्या भावितात्मा अनगार ज्ञान से जानते हैं व दर्शन मे देखते हैं ? अहो गौतम ! देव जैसे यहां पर चौभंगी जानना ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! वैक्रेय समुद्रघात मे उचर वैक्रेय करके यान रूप से देवी सहित जति हुवे देव को भावितात्मा अनगार क्या ज्ञान मे जानना दे व दर्शन मे देखना है ? अहो गौतम ! देव जैसे इस के भी चार भंगे जानना ॥ ३ ॥

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

च० चारभांगे ए० ऐसे कि० क्या मू० मूल को पा० देखे कं० कंदको पा० देखे च० चारभांगे मू० मूल को पा० देखे खं० स्कन्ध को पा० देखे च० चारभांगे ए० ऐसे मू० मूल से वी० बीज को सं० जोडना कं० कंद से स० सम्यक् सं० जोडना जा० यावत् वी० बीज को ए० ऐसे पु० पुष्प से वी० बीज को सं०

कंद पासइ चउभंगो, मूल पासइ खंध पासइ चउभंगो, एवं मूलेण बीज संजोए-
यत्वं एवं कंदेणवि समं संजोएयत्वं जाव वीयं! एवं जाव पुष्फेण समं वीयं संजोएयत्वं

अहो भगवन् ! भावितात्मा अनगर अवधिज्ञानादि लब्धि ने क्या वृक्षको अंदरसे देखे या बाहिरसे ? अहो गौतम ! अवधि ज्ञान की विचित्रता से इसके चार भांगे होते हैं ? कितनेक वृक्ष को अंदर से देखते हैं और बाहिर से नहीं देखते हैं ? कितनेक बाहिर से देखे परंतु अंदर से नहीं देखे ? कितनेक अंदर से व बाहिर से देखे और ४ कितनेक अंदर से व बाहिर से नहीं देखे, ऐसे ही मूल और कंद के चार भांगे, मूल और स्कंध के चार भांगे, मूल और बीज के चार भांगे जानना, ऐसे ही कंद और खं०, कंद और बीज, ऐसे ही पुष्प और बीज का जानना ॥ ४ ॥ ? मूल २ कन्द ३ स्कन्ध ४ त्वचा ५ शाखा ६ पत्राल ७ पत्र ८ पुष्प ९ फल और १० बीज, यह दश प्रकार की वनस्पति कही है, इन की द्विभंगी ४५ चौभंगी होती हैं ? मूल और कंद २ मूल स्कंध ३ मूल त्वचा ४ मूल शाखा ५ मूल पत्राल ६ मूल पत्र ७ मूल पुष्प ८ मूल फल और ९ मूल बीज ये नव भांगे मूल के साथ जैसे ही कंद के

शब्दार्थ (मूल) (कंद) (स्कंध) (त्वचा) (शाखा) (पत्राल) (पत्र) (पुष्प) (फल) (बीज)

सूत्र

भावार्थ

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुबदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

गोडना ॥ ४ ॥ पूर्ववत् ॥ ५ ॥ प० समर्थ भ० भगवन् वा० वायुकाय ए० एक प० वडा इ० स्त्रीरूप पु० पुरुपरूप ह० हस्तीरूप जा० यानरूप जु० थूसरा गि० अवाडी पि० जंटकी पि० लि० का सी० शि० थिका सं० रथरूप वि० विकुर्वणा करने को गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ सं० समर्थ वा० वायुकाय वि० विकुर्वणा करते ए० एक

॥ ४ ॥ अणगारेणं भंते भावियप्पा स्वस्वरस किं फलं पासइ बीयं पासइ चउभंगो

॥ ५ ॥ * ॥ पभूणं भंते ! वाउकाएणं एगं महं इत्थिरूवंवा, पुरिसरूवंवा, हत्थिरूवंवा जाणरूवंवा, एवं जुग गिद्धिथिस्सिसीयसंदमाणियरूवंवा विउच्चिच्चए !

८ भागे, स्कंध के ७, त्वा के ६, शास्त्राके ५, मवालेके ४, पत्रके ३, पुष्पके २ और फलका १ यों सब मील कर ४५ चौभंगी होती हैं इस में से फल की ४५ वी चौभंगी बताते हैं. अहां भगवन् ! भावितत्मा अनगर यथा अवधि ज्ञान से फल को देखे या बीज को देखे ? अहो गौतम ! कितनेक फल को देखे परंतु बीज को देखे नहीं २ कितनेक बीज को देखे परंतु फल को देखे नहीं ३ कितनेक फल और बीज दोनों को देखे और ४ कितनेक फल और बीज दोनों को देखे नहीं ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! क्या वायुकाय वैक्रेय समुद्र्यात करके स्त्री का, पुरुषका, हस्ती का, विमान का, धुंसरे का, हस्ती की अवाडीका जंटकी पि० लि० का, शि० थिका का, बैलगाडी इत्यादिकका रूप बनाने को समर्थ है ? अहो गौतम ! यह अर्थ

शब्दार्थ

सुत्र

भावार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

म० बडा प० पताका का सं० संस्थानरूप वि० विकुर्वणां करे ॥ ६ ॥ प० समर्थ भं० भगवन् वा० वायु काय ए० एक म० बडा प० पताका रूप की वि० विकुर्वणा कर अ० अनेक जो० योजन ग० जाने को हं० हां प० समर्थ से० वह किं० क्या आ० आत्म ऋद्धि से ग० जावे प० दूसरे की ऋद्धि से ग० जावे गो० गौतम आ० आत्म ऋद्धि से गो० नहीं प० दूसरे की ऋद्धि से ग० जावे ज० जैसे आ० आत्म ऋद्धि से

गोयमा ! जो इण्टे समेटे । बाउकाएणं विकुव्वमाणा एगं महं पडागा संत्थियंरुव्वं वि-
कुव्वइ ॥ ६ ॥ पमूणं भंते ! बाउकाए एगं महं पडागारंत्थियं रुव्वं विउव्वित्ता अपे-
गाइं जोयणाइं गमित्ताए ? हंता पभू । से भंते ! किं आयड्डीए गच्छइ परिड्डीए ग-
च्छइ ? गोयमा ! आयड्डीए गच्छइ जो परिड्डीए गच्छइ । जहा आयड्डीए एवं चैव

योग्य नहीं है. वायुकाय वैक्रेय समुद्र्यातं से मात्र पताका का संस्थानवाला रूप बनाती है ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! वायुकाय वैक्रेय समुद्र्यात से पताका रूप संठण का वैक्रेय बना करके क्या अनेक योजन तक जासकती है ? हां गौतम ! वायुकाय पताका का रूप बनाकर अनेक योजन तक जासकती है. अहो भगवन् ! वह क्या स्वतः की ऋद्धि से जाती है या अन्य की ऋद्धि से जाती है ? अहो गौतम ! स्वतः की ऋद्धि से जा सकती है परंतु अन्य की ऋद्धि से नहीं जासकती है. ऐसे ही स्वतः के कर्म से जाती है परंतु अन्य के कर्म से नहीं जाती है, स्वतः के प्रयोग से जा सकती है परंतु अन्य के प्रयोग से नहीं

(५५५५)

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

जोड़ना ॥ ४ ॥ पूर्ववत् ॥ ५ ॥ प० समर्थ भ० भगवन् वा० वायुकाय ए० एक प० वडा इ० स्त्रीरूप पु०
पु० पुरुपरूप ह० हस्तीरूप जा० यानरूप जु० धूसरा गि० अवाडी थि० ऊंटकी पिष्टिका सी० शिविका सं० रथरूप
वि० विकुर्वणा करने को गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ सं० समर्थ वा० वायुकाय वि० विकुर्वणा करते ए० एक

॥ ४ ॥ अणगारेण भंते भावियप्पा रुक्खरस किं फलं पासइ वीयं पासइ चउभंगो

॥ ५ ॥ * ॥ पभूणं भंते ! वाउकाएणं एगं महं इत्थिरूवंवा, पुरिसरूवंवा, हत्थि

रूवंवा जाणरूवंवा, एवं जुग गिक्खिथिक्खिसीयसंदमाणियरूवंवा विउब्बित्तए ?

८ भागे, स्कंध के ७, त्वचा के ६, शाखाके ५, पत्रके ४, पुष्पके ३ और फलका १ यों सब मील
कर ४५ चौभंगी होती हैं इस में से फल की ४५ वी चौभंगी बताते हैं. अहां भगवन् ! भावितात्मा
अनगार क्या अवधि ज्ञान से फल को देखे या बीज को देखे ? अहो गौतम ! कितनेक फल को देखे
परंतु बीज को देखे नहीं २ कितनेक बीज को देखे परंतु फल को देखे नहीं ३ कितनेक फल और
बीज दोनों को देखे और ४ कितनेक फल और बीज दोनों को देखे नहीं ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! क्या
वायुकाय वैक्रेय समुद्र्यात करके स्त्री का, पुरुषका, हस्ती का, विमान का, धूसरे का, हस्ती की अवाडीका
ऊंट की पिष्टिका का, शिविका का, वैल्गाडी इत्यादिकका रूप बनाने को समर्थ है ? अहो गौतम ! यह अर्थ

शब्दार्थ

सुत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामपादजी *

जाइना ॥ ४ ॥ पूर्ववत् ॥ ५ ॥ प० समर्थ भ० भगवन् वा० वायुकाय ए० एक प० वडा इ० स्त्रीरूप पु०
पु० पुरुषरूप ह० हस्तीरूप जा० व्यानरूप जु० धूम्ररा गि० अवाडी थि० जंङ्गकी पिष्टिका सी० शिविका सं० रथरूप
वि० विकुर्वणा करने को गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ सं० समर्थ वा० वायुकाय वि० विकुर्वणा करते ए० एक

॥ ४ ॥ अणगारेण भंते भावियप्पा ख्वरस किं फलं पासइ वीयं पासइ चउभंगो
॥ ५ ॥ * ॥ पभूणं भंते ! वाउकाएणं एगं महं इत्थिरूवंवा, पुरिसरूवंवा, हत्थि
रूवंवा जाणरूवंवा, एवं जुग गिह्मिथिह्मिसीयसंदमाणियरूवंवा विउच्चए ?

८ भागे, स्कंध के ७, त्वचा के ६, शाखाके ५, प्रवालके ४, पत्रके ३, पुष्पके २ और फलका १ यों सब मील
कर ४५ चौभंगी होती हैं इस में से फल की ४५ वीं चौभंगी बताते हैं. अहां भगवन् ! भावितात्मा
अनगार क्या अवधि ज्ञान से फल को देखे या बीज को देखे ? अहो गौतम ! कितनेक फल को देखे
परंतु बीज को देखे नहीं २ कितनेक बीज को देखे परंतु फल को देखे नहीं ३ कितनेक फल और
बीज दोनों को देखे और ४ कितनेक फल और बीज दोनों को देखे नहीं ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! क्या
वायुकाय वक्रैय समुद्यत करके स्त्री का, पुरुषका, हस्ती का, विमान का, धूमरे का, हस्ती की अवाडीका
जंङ्ग की पिष्टिका का, शिविका का, वैलगाडी इत्यादिकका रूप बनाने को समर्थ है ? अहो गौतम ! यह अर्थ

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

१०

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाममादजी *

जाइना ॥ ४ ॥ पूर्ववत् ॥ ५ ॥ प० समर्थ भ० भगवन् वा० वायुकाय ए० एक म० वडा इ० स्त्रीरूप पु०
पु० पुरुपरूप ह० हस्तीरूप जा० यानरूप जु० धूसरा गि० अवाडी थि० डंढकी पिष्टिका सी० शिविका सं० रथरूप
वि० विकुर्वणा करने को गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ सं० समर्थ वा० वायुकाय वि० विकुर्वणा करते ए० एक

॥ ४ ॥ अणगारेण भंते भावियप्या रुक्खस्स किं फलं पासइ वीयं पासइ चउभंगो

॥ ५ ॥ * ॥ पभुणं भंते ! वाउकाएणं एगं महं इत्थिरूववा, पुरिसरूववा, हत्थि

रूववा जाणरूववा, एवं जुगग गिक्खिथिक्खिसीयसंदमाणियरूववा त्रिउच्चिए ?

८ भांगे, स्कंध के ७, त्वचा के ६, शाखाके ५, पत्रके ४, पुष्पके ३ और फलका १ यों सब मील कर ४५ चौभंगी होती हैं इस में से फल की ४५ वीं चौभंगी बताते हैं. अहां भगवन् ! भावितात्मा अनगार क्या अवधि ज्ञान से फल को देखे या बीज को देखे ? अहो गौतम ! कितनेक फल को देखे परंतु बीज को देखे नहीं २ कितनेक बीज को देखे परंतु फल को देखे नहीं ३ कितनेक फल और बीज दोनों को देखे और ४ कितनेक फल और बीज दोनों को देखे नहीं ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! क्या वायुकाय वैक्रेय समुद्र्यात करके स्त्री का, पुरुषका, हस्ती का, विमान का, धूसरे का, हस्ती की अवाडीका डंढ की पिष्टिका का, शिविका का, वैलगाडी इत्यादिकका रूप बनाने को समर्थ है ? अहो गौतम ! यह अर्थ

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

१०१ १०२ १०३ १०४ १०५ १०६ १०७ १०८ १०९ ११० १११ ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ ११८ ११९ १२० १२१ १२२ १२३ १२४ १२५ १२६ १२७ १२८ १२९ १३० १३१ १३२ १३३ १३४ १३५ १३६ १३७ १३८ १३९ १४० १४१ १४२ १४३ १४४ १४५ १४६ १४७ १४८ १४९ १५० १५१ १५२ १५३ १५४ १५५ १५६ १५७ १५८ १५९ १६० १६१ १६२ १६३ १६४ १६५ १६६ १६७ १६८ १६९ १७० १७१ १७२ १७३ १७४ १७५ १७६ १७७ १७८ १७९ १८० १८१ १८२ १८३ १८४ १८५ १८६ १८७ १८८ १८९ १९० १९१ १९२ १९३ १९४ १९५ १९६ १९७ १९८ १९९ २००

म० बडा प० पताका का सं० संस्थानरूप त्रि० विकुर्वणा करे ॥ ६ ॥ प० समर्थ भ० भगवन् वा० वायु
 काय ए० एक म० बडा प० पताका रूप की वि० विकुर्वणा कर अ० अनेक जो० योजन ग० जाने को द्र०
 हां प० समर्थ से० वह कि० क्या आ० आत्म ऋद्धि से ग० जात्रे प० दूसरे की ऋद्धि से ग० जात्रे गो०
 गौतम आ० आत्म ऋद्धि से गो० नहीं प० दूसरे की ऋद्धि से ग० जात्रे ज० जैसे आ० आत्म ऋद्धि से

गोयमा ! जो इण्टे समेटे । वाउकाएणं विकुव्वमाणा एगं महं पडागा संटियंरूवं त्रि-
 कुव्वइ ॥ ६ ॥ पमूणं भंते ! वाउकाए एगं महं पडागारंटियं रूवं त्रिउव्वित्ता अणे-
 गाइं जोयणाइं गमित्तए ? हंता पमू । से भंते ! किं आयट्ठीए गच्छइ परिट्ठीए ग-
 च्छइ ? गोयमा ! आयट्ठीए गच्छइ णो परिट्ठीए गच्छइ । जहा आयट्ठीए एवं चेव

योग्य नहीं है. वायुकाय वैक्रेय समुद्र्यात से मात्र पताका का संस्थानवाला रूप बनाती है ॥ ६ ॥ अहो
 भगवन् ! वायुकाय वैक्रेय समुद्र्यात से पताका रूप संठाण का वैक्रेय बना करके क्या अनेक योजन
 तक जासकती है ? हां गौतम ! वायुकाय पताका का रूप बनाकर अनेक योजन तक जासकती है. अहो
 भगवन् ! वह क्या स्वतः की ऋद्धि से जाती है या अन्य की ऋद्धि से जाती है ? अहो गौतम ! स्वतः
 की ऋद्धि से जा सकती है परंतु अन्य की ऋद्धि से नहीं जासकनी है. ऐसे ही स्वतः के कर्म से जाती
 है परंतु अन्य के कर्म से नहीं जाती है, स्वतः के प्रयोग से जा सकती है परंतु अन्य के प्रयोग से नहीं

* प्रकाशक-राजावहानुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामुखी *

जोड़ना ॥ ४ ॥ पूर्ववत् ॥ ५ ॥ प० समर्थ भ० भगवन् वा० वायुकाय ए० एक म० वडा इ० स्त्रीरूप पु०
पु० पुरुपरूप ह० हस्तीरूप जा० यानरूप जु० धूसरा गि० अवाडी थि० कंटकी पिष्टिका सी० शिबिका सं० रथरूप
वि० विकुर्वणा करने को गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ सं० समर्थ वा० वायुकाय वि० विकुर्वणा करते ए० एक

॥ ४ ॥ अणगारेणं भंते भावियप्पा रुक्खरस किं फलं पासइ वीयं पासइ चउभंगो
॥ ५ ॥ * ॥ पभूणं भंते ! वाउकाएणं एगं महं इत्थिरूवंवा, पुरिसरूवंवा, हत्थि
रूवंवा जाणरूवंवा, एवं जुगग गिळ्ळिथिळ्ळिसीयसंदमाणियरूवंवा विउच्चित्तए ?

८ भांगे, स्तंभ के ७, त्वचा के ६, शालाके ५, प्रवालके ४, पत्रके ३, पुष्पके २ और फलका १ यों सब मील
कर ४५ चौभंगी होती हैं इस में से फल की ४५ वी चौभंगी बताते हैं. अहो भगवन् ! भावितत्मा
अणगार क्या अवधि ज्ञान से फल को देखे या बीज को देखे ? अहो गौतम ! कितनेक फल को देखे
परंतु बीज को देखे नहीं २ कितनेक बीज को देखे परंतु फल को देखे नहीं ३ कितनेक फल और
बीज दोनों को देखे और ४ कितनेक फल और बीज दोनों को देखे नहीं ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! क्या
वायुकाय वैक्रीय समुद्र्यात करके स्त्री का, पुरुषका, हस्ती का, विमान का, धूसरे का, हस्ती की अवाडीका
कंटकी पिष्टिका का, शिबिका का, वैलागाडी इत्यादिकका रूप बनाने को समर्थ है ? अहो गौतम ! यह अर्थ

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

वा० वायुकाय प० पताका गो० गौतम वा० वायुकाय से० वह नो० नहो सा० वह प० पताका ॥ ८ ॥
 पं० समर्थ व० मेघ ए० एक म० बडा इ० स्त्रीरूप जा० यावत् सं० रथरूप प० परिणमाने को
 से नो खलु सा पडागा ॥ ८ ॥ पभूणं भंते ! बलाहगे एगंमहं इत्थिरूवंवा जाव संद-
 माणियरूवंवा परिणमेत्तए ? हंता पभू ॥ १३ ॥ पभूणं भंते ! बलाहए एगं महं
 इत्थिरूवं परिणमेत्ता अणेगाइं जोयणाइं गमित्तए ? हता पभू । से भंते ! किं आ-
 यड्डीए गच्छइ परिड्डीए गच्छइ ? णो आयड्डीए गच्छइ, परिड्डीए गच्छइ. एवं णो
 आयकम्मणा, परकम्मणानो आयप्पओगेणं, परप्पओगेणं, ऊसितोदयंवा गच्छइ, पयोदयंवा
 गच्छइ, । से भंते किंबलाहए इत्थी ? गोयमा ! बलाहएणं से णो खलु सा इत्थी । एवं
 उसे वायुकाया कहना परंतु पताका नहीं कहना. ॥ ८ ॥ अहो गौतम ! क्या मेघ एक बडा स्त्री का
 रूप यावत् शिविका का रूप परिणमाने में समर्थ है ? अथवा अनेक योजन तक जाने को समर्थ है ?
 हां भगवन् ! वह स्त्री यावत् शिविकाकारूप बनाने का समर्थ है. वह क्या स्वतः की क्रुद्धि से या अन्य
 का क्रुद्धि से जासकते हैं ? अहो गौतम ! वह मेघ अजीव होने से स्वतः की शक्ति से नहीं जासकते ह
 परंतु अन्य की शक्ति से जासकते हैं. वैसे ही स्वतः के कर्म से नहीं जासकते है परंतु अन्य के कर्मों से
 जा सकते हैं, स्वतः के प्रयोग से नहीं जासकते हैं परंतु अन्य के प्रयोग से जाते हैं. अहो भगवन् !

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला मुखर्जीसहायजी ज्वालामसादजी *

ए० एमें आ० आत्म कम से आ० आत्म प्रयोग से भा० कहना ॥ ७ ॥ स० वह कि० क्या उ० ऊर्ध्व पताका जैसे ग० जबे प० नीचीपताका जैसे ग० नीचीपताका जैसे ग० जावे गे० गौतम उ० ऊर्ध्व पताका जैसे ग० जावे जैसे ग० जावे से० वह भं० भगवन् कि० क्या ए० एक दिशा में प० पताका जैसे ग० जावे दु० दोनों दिशा में प० पताका जैसे ग० जावे ए० एकदिशा में प० पताका जैसे ग० जावे नो० नहीं दु० दोनों दिशा में प० पताका जैसे ग० जावे से० वह भं० भगवन् कि० क्या आयकम्पुणावि, आयप्रयोगेवि भाणियव्वं ॥ ७ ॥ से भंते ! किं ऊसिओदयं गच्छइ, पतोदयं गच्छइ ? गोयमा ! ऊसिओदयंपि गच्छइ पयोदयंपि गच्छइ, ॥ से भंते ! किं एगओ पडागं गच्छइ, दुहओ पडागं गच्छइ ? गोयमा ! एगओ पडागं गच्छइ, नो दुहओ पडागं गच्छइ, ॥ से भंते ! किंवाउकाए पडागा ? गोयमा ! वाउकाएणं नासक्ती हे, ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! क्या वह वायुकाय ऊंची पताका के आकार से जाती है या नीची पताका के आकार से जाती है ? अहो गौतम ! ऊंची पताका के आकार से भी जाती है और नीची पताका के आकार से भी जाती है, अहो भगवन् ! क्या यह एक पताका या दो पताका से जाती है ? अहो गौतम ! एक पताका का रूप बनाकर जाती है परंतु दो पताका का रूप बनाकर नहीं जाती है, अहो भगवन् ! उसे क्या वायुकाय कहना या पताका कहना ? अहो गौतम !

वा० वायुहाय प० पताका गो० गौतम वा० वायुकाय से० वह नो० नहो सा० वह प० पताका ॥ ८ ॥
 प० समर्थ व० मेघ ए० एक म० बडा इ० स्त्रीरूप जा० यावत् सं० स्त्रीरूप प० स्त्रीरूप प० परिणमने को
 से नो खलु सा पडागा ॥ ८ ॥ पभूणं भंते ! बलाहगे एगंमहं इत्थिरूवंत्रा जात्र संद-
 माणियरूवंत्रा परिणामेत्तए ? हंता पभू ॥ १३ ॥ पभूणं भंते ! बलाहए एगं महं
 इत्थिरूवंत्रं परिणामेत्ता अणेगाइं जोयणाइं गमिच्चए ? हता पभू । से भंते ! किं आ-
 यड्डीए गच्छइ परिड्डीए गच्छइ ? णो आयड्डीए गच्छइ, परिड्डीए गच्छइ. एवं णो
 आयकम्मणा, परकम्मणानो आयप्पओगेणं, परप्पओगेणं, ऊसितोदयंत्वा गच्छइ, पयोदयंत्वा
 गच्छइ, । से भंते किंबलाहए इत्थी ? गोयमा ! बलाहएणं से णो खलु सा इत्थी । एवं
 उसे वायुकाया कहना परंतु पताका नहीं कहना ॥ ८ ॥ अहो गौतम ! क्या मेघ एक बडा स्त्री का
 रूप यावत् शिविका का रूप परिणमने में समर्थ है ? अथवा अनेक योजन तक जाने को समर्थ है ?
 हां भगवन् ! वह स्त्री यावत् शिविकाकारूप बनाने को समर्थ है. वह क्या स्वतः की ऋद्धि से या अन्य
 का ऋद्धि से जासक्ते हैं ? अहो गौतम ! वह मेघ अजीव होने से स्वतः की शक्ति से नहीं जासक्ते हैं
 परंतु अन्य की शक्ति में जासक्ते हैं. वैसे ही स्वतः के कर्म से नहीं जासक्ते है परंतु अन्य के कर्मों से
 जा सक्ते हैं, स्वतः के प्रयोग से नहीं जासक्ते हैं परंतु अन्य के प्रयोग से जाते हैं. अहो भगवन् !

शब्दार्थ
 सन्
 चामार्थ

हं. हां प० समर्थ ॥ ९ ॥ जी० जीव भं० भगवन् जे० जो ने० नरक में उ० उत्पन्न होवे से०
वह भं० भगवन् कि० किम ले० लेश्या से उ० उत्पन्न होवे गो० गौतम जं० जिस ले० लेश्या

पुरिसे, आसे, हत्थी । पभूणं भंते बलाहए एगं महं जाणरूवं परिणामेत्ता अणेगाइं
जोयणाइं गमित्तए, जहा इत्थिरूवं तथा भाणियव्वं । नवरं एगओ चक्खवालं पि,
दुहओ चक्खवालं पि भाणियव्वं ॥ जुगगिह्विथिसियासंदमाणियाणंतहेव ॥ ९ ॥
जीविणं भंते जेमत्रिए नेरइएसु उववजित्तए, सेणं भंते ! किं लेस्सेसु उववज्जइ ? गो-

नव मेष स्त्री आदि का रूप बना सकता है तब क्या उसे स्त्री वगैरह कहना. अहो गौतम ! उसे मेषही
कहना पंतु स्त्री पुरुष वगैरह नहीं कहना. अहो भगवन् ! वे बदल विमान का रूप बनाकर अनेक
योजन तक क्या जा सकते हैं ? हां गौतम ! वे जा सकते हैं वगैरह जैसा स्त्री का अधिकार कहा वैसे ही
यहां कहना. विशेष उपर जो यान का रूप बनाकर विमान की गति का कथन किया सो एक चक्र से भी
नामकते हैं, और दो चक्र से भी जासकते हैं. इसी प्रकार शूभरा, अंबाडी, थिछी शिविका, व संदमनी
वगैरह का कथन जानना. ॥ ९ ॥ गमन के अधिकार से गति गमनका प्रश्न करते हैं. अहो भगवन् ! जो
जीव नारकी में उत्पन्न होनेवाला है वह कृष्ण लेश्यादि छ लेश्या में से कौनसी लेश्या सहित उत्पन्न

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

के द० द्रव्य को प० ग्रहणकर का० काल करे त० उस लक्ष्या में उ० उत्पन्न होवे त० वह ज० जैसे क० कृष्ण लक्ष्या नी० नीललक्ष्या का० कापोत लक्ष्या ए० ए० जैसे ज० जिसको जा० जो लक्ष्या सा० वह भा० कहना जा० यावत् जी० जीव भ० भगवन् ज० जो भ० ज्योतिषी में उ० उत्पन्न होने की यमा ! जं लेसाइं दब्बाइं परियाइत्ता कालं करेइ, तल्लेसेसु उववज्जइ. तंजहा कण्हलेसे-

सुवा, नील्लेसेसुवा, काउलेसेसुवा, एवं जस्स जा लेसा सा तरस्स भाणियब्बा, जाव जीविणं भंते ! जे भविए जोइसिएसु उववज्जित्तए पुच्छा ? गोयमा ! जल्लेसाइं दब्बाइं परियाइत्ता कालं करेइ तल्लेसंसु उववज्जइ, तंजहा तेउलेसेसु । जीविणं भंते ! जे भविए वेमाणिएसु उववज्जित्तए सेणं भंते ! किं लेस्सेसु उववज्जइ ? गोयमा ! जल्ले-

होता है ? अहो गौतम ! जिस लक्ष्या के द्रव्य एकत्रित कर काल करता है उसी लक्ष्या में उत्पन्न होता है. नरक में तीन लक्ष्या सहित जीव जाता है. कृष्ण लक्ष्या, नील लक्ष्या और कापोत लक्ष्या. कृष्ण, नील, कापोत और तेजोलक्ष्यावाले दश प्रकार के भवनपति में उत्पन्न होते हैं. इनही चार लक्ष्यावाले पृथ्वी, पानी व वनस्पति में उत्पन्न होते हैं. कृष्ण, नील और काणुतवाले तेज वायु और विकलेन्द्रिय में उत्पन्न होते हैं. कृष्ण, नील, कापोत, तेजोऽपम, और शुक्ल लक्ष्यावाले मनुष्य तीर्थच में उत्पन्न होते हैं. पहिली चार लक्ष्यावाले वाणव्यंतर में, मात्र एक बेजो लक्ष्यावाले ज्योतिषी और प्रथम द्वितीय देवलोका में

म० भव्य पु० पूंछा गो० गौतम ज० जिस लेश्या द० द्रव्य भाव से प० ग्रहणकर का० काल करे त० उस ले० लेश्या में उ० उत्पन्न होवे ते० तेजो लेश्या ॥ १० ॥ पूर्ववत् ॥ ११ ॥ अ० अनगार भ० भगवन् भा० भावितात्मा वा० बाह्य पो० पुद्गल अ० विना ग्रहण करे प० समर्थ वे० वेभार प० पर्वत को

साइं दंवाइं परियाइत्ता कालं करेइ तल्लेसेसु उव्वज्जइ, तंजहा तेउ लंसंसुवा, पम्ह-
लेसेसुवा, सुक्कलेसंसुवा ॥ १०—११ ॥ अणगारेणं भंते ! भावियप्पा बाहिरए पो-
गले अपरियाइत्ता पभू वेभार पव्वयं उल्लंघेत्तएवा, पल्लंघेत्तएवा ? गोयमा ! णो
इण्ठे समट्ठे । अणगारेणं भंते ! भावियप्पा बाहिरए पोगगले परियाइत्ता पभू वेभारपव्वयं

वत्स्य होते हैं: पद्म लेश्यावाले तीसरे, चौथे, पांचवें देवलोक में; शुक लेश्यावाले छठे देवलोक से सर्वार्थ विद्ध तक में उत्पन्न होते हैं. अर्थात् वैमानिक देवों में तेजो, पद्म और शुक लेश्याही है ॥ १०—११ ॥ शुभ लेश्यावाले साधु लब्धिर्वन्त होते हैं इस से लब्धि आश्री प्रश्न पुछते हैं. अहो भगवन् ! भावितात्मा अनगार बाहिर के वैक्रय शरीर के पुद्गल ग्रहण किये विना राजगृही नगरी की पास का वेभार पर्वत क्या उल्लंघने को समर्थ होते हैं ! अहो गौतम वे बाहिर के वैक्रय पुद्गल ग्रहण किये विना वेभार पर्वत उल्लंघने को समर्थ नहीं होसकते हैं. अहो भगवन् ! भावितात्मा अनगार बाहिर के वैक्रय पुद्गल ग्रहण

उ० उल्लंघन करने को प० विशेष उल्लंघन करने को गो० गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ म० समर्थ ॥१२॥
 अ० अनगर भं० भगवन् भा० भावितात्सा वा० कथा पो० पुद्गल अ० विना ग्रहण कर ना० यावत् इ०
 इतने रा० राजगृह न० नगर में रू० रूप वि० विकुर्वणा कर थे० वेभार पर्वत की अं० अंदर अ० प्रवेश
 कर प० समर्थ स० सम को वि० विपम क० करने को वि० विपम को स० स्म क० करने को गो०
 गौतम नो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ ए० ऐसे वि० दूसरा आ० आलापक ण० विशेष प० ग्रहणकर
 उल्लंघेत्तएवा पल्लंघेत्तएवा ? हंता पमू ॥ १२ ॥ अणगारेणं भंते ! भावियप्पा चाहि-
 रएपोगले अपरियाइत्ता जाव इयाइं रायगिहे नये रुवाइं एवइयाइं विउवित्ता
 वेभारं पव्वयं अंतो अणुप्पत्तिसित्ता पमू समंत्वा विसमंत्वा करेत्तए विसमंत्वा समं करे-
 त्तए ? गोयमा ! नो इणट्टे समट्टे ॥ एवं चेव वितीओवि आलावगो णवरं परियाइ-

कर क्या वेभार पर्वत उल्लंघन सकते हैं ? हां गौतम ! वे भावितात्मा अनगर बाहिर के पुद्गलग्रहण कर वेभार पर्वत
 का उल्लंघन कर सकते हैं ॥ १२ ॥ अशो भगवन् ! भावितत्मा लब्धिवंत साधु बाहिर के वैक्रेय पुद्गल
 ग्रहण किये विना राजगृही नगरी में जितने मनुष्य पशु हैं उतने रूप बनाकर वेभार पर्वत में प्रवेश कर
 सम को विपम व विपम को सम करने क्या समर्थ है ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है अर्थात्
 लब्धिवंत साधु बाहिर के वैक्रेय पुद्गल ग्रहण किये विना उक्त कार्य करने को समर्थ नहीं होते हैं परंतु

शब्दार्थ (१) (२) (३) (४) (५) (६) (७) (८) (९) (१०) (११) (१२) (१३) (१४) (१५) (१६) (१७) (१८) (१९) (२०) (२१) (२२) (२३) (२४) (२५) (२६) (२७) (२८) (२९) (३०) (३१) (३२) (३३) (३४) (३५) (३६) (३७) (३८) (३९) (४०) (४१) (४२) (४३) (४४) (४५) (४६) (४७) (४८) (४९) (५०) (५१) (५२) (५३) (५४) (५५) (५६) (५७) (५८) (५९) (६०) (६१) (६२) (६३) (६४) (६५) (६६) (६७) (६८) (६९) (७०) (७१) (७२) (७३) (७४) (७५) (७६) (७७) (७८) (७९) (८०) (८१) (८२) (८३) (८४) (८५) (८६) (८७) (८८) (८९) (९०) (९१) (९२) (९३) (९४) (९५) (९६) (९७) (९८) (९९) (१००)

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

प० सपथ ॥ १३ ॥ से० बह भ० भगवन् कि० ब्रह्मा मा० मायी वि० विकुर्वणा करे अ० अमायी वि० विकुर्वणा करे गो० मायी वि० विकुर्वणा करे नो० नहीं अ० अमायी वि० विकुर्वणा करे से० बह के० कैसे गो० गौतम मा० मायी प० स्निग्ध पा० पानी भो० भोजन भो० भोगवकर वा० यमनकरे त० उन को ते० उस प० स्निग्ध पा० पानी भो० भोजन से अ० अस्थि अ० अस्थिमिज व० पुष्ट

पा० पम् ॥ १३ ॥ से० भंते ! किं माई विकुव्वइ अमाई विकुव्वइ ? गोयमा !

माई विकुव्वइ, णो अमाई विकुव्वइ । से केणट्टेणं भंते ! एवं बुच्चइ जाय नो अमाई विकुव्वइ ? गोयमा ! माईणं पणीयं पाणभोयणं भोच्चा भोच्चा वामेइ, तस्सणं तेणं पणीएणं पाण भोयणेणं अ० अट्टिमिजा बहुली भवति, पयणुए मंससोणिए

भवइ, जेवियसे अहावायरा पोग्गला तेवियसे परिणमंति ॥ सोइंदियत्ताए जाय फा-
वाडिर के वैक्रेय पुट्टल ग्रहण कर राजगृही में रहहुने मनुष्य व पथु जितने रूप बनाकर बेभार पर्वत में प्रवेश
करके सम की विपम भूमि और विपम की पम भूमि कर संकते हैं ॥ १३ ॥ अब वैक्रेय रूप कौन बनाते
हैं मो कहते हैं. अहो भगवन् ! उक्त प्रकार के रूप क्या मायावी बनाते हैं या अमायी-माया कपट
रहित पुरूप बनाते हैं ? अहो गौतम ! उक्त प्रकार के रूप मायी प्रमादी साधु करते हैं परंतु अमायी
नहीं करते हैं. अहो भगवन् ! किस कारण से मायी विकुर्वणा करता है और अमायी नहीं करता है ?

भ० होवे प० पतला मं० मांस सो० रुधिर भ० होवे जे० जो अ० यथा वा० वादरः पो० पुद्रलं ते० वे
 प० परिण मे सो० श्रोतेन्द्रियपने जा० यावत् फा० स्पेशेन्द्रियपने अ० अस्थि अ० अस्थिभिज के०
 केश मं० दाढी रो० रोम न० नखपने सु० शुक्रपने सो० रुधिरपने अ० अमायी लू० रूक्ष पा० पानी
 सिद्धियत्ताए, अट्टिअट्टिमिजकेसमसुरोमनहत्ताए सुक्कत्ताए सोणियत्ताए। अमाईणं लूहं पाण-
 भोयणं भोच्चा भोच्चाणो वामइ, तरसणं तेणं लूहेणं पाण भोयणेणं अट्टिअट्टिमिजा पयणु
 भवन्ति, वहले मंस सोणिए जेवियसे अहाबादरा पोगलातेवियसे परिणमंति, तंजहा-
 उच्चारत्ताए, जाव सोणियत्ताए से तेणट्टेणं जाव नो अमाई विकुब्बइ ॥ माईणं तरस टाणरस

अहो गौतम ! जो मायावी साधु होते हैं वे लिग्ध सरस आहार पानी का भोजन करते हैं. वलवृद्धि के
 लिये वमन विरेचनादिक क्रियाओं करते हैं. ऐसे लिग्ध पान भोजन से उन की हड्डीव हड्डीकी भिजी बढती
 है मांस शोणित पतले होते हैं यथावादर पुद्रल श्रोतेन्द्रिय यावत् स्पेशेन्द्रिय, अस्थी, अस्थि की
 भिजी, केश, इमश्रु, रोम, नख, शुक्र व रुधिरपने परिणमते हैं और इस से वैक्रेय रूप बना सकते हैं. जो
 अमायी होते हैं वे रूक्ष निरस आहार करते हैं और वमन विरेचनादि क्रियाओं नहीं करते हैं. उन को
 रूक्ष आहार से हड्डी और हड्डी की भिजी पतली होती है. मांस व लोही संघन होता है. उन को पानी व
 आहार रूप से ग्रहण किये हुवे पुद्रल बडीनीत, लघुनीत, श्लेष्म, खेकार, वमन, पित्त, यावत् रुधिरपने

प० सपथ ॥ १३ ॥ से० यह भ० भगवन् कि० ह्यु मा० मायी वि० विकुर्वणा करे अ० अमायी वि० विकुर्वणा करे गो० गौतम मा० मायी वि० विकुर्वणा करे नो० नहीं अ० अमायी वि० विकुर्वणा करे भे० यह के० कैसे गो० गौतम मा० मायी प० स्निग्ध पा० पानी भो० भोजन भो० भोगवकर वा० यमनकरे त० उन को ते० उत प० स्निग्ध पा० पानी भो० भोजन से अ० अस्थि अ० अस्थिभिज व० पुष्ट

वा पम ॥ १३ ॥ से भंते ! किं माई विकुव्वइ अमाई विकुव्वइ ? गोयमा !

माई विकुव्वइ, णो अमाई विकुव्वइ । से केणट्टेणं भंते ! एवं बुच्चइ जाय नो

अमाई विकुव्वइ ? गोयमा ! माईणं पणीयं पाणभोयणं भोच्चा भोच्चा वामेइ, तरसणं

तेणं पणीएणं पाण भोयणेणं अट्टिभिज्जा बहुली भवति, पयणए मंससोणिए

भवइ, जेवियसे अहावायरा पोग्गला तेवियसे परिणमंति ॥ सोइंदियत्ताए जाय फा-

म भूमि और विपम की पम भूमि कर सकते हैं ॥ १३ ॥ अब वैकेय रूप कौन बनाने

अहो भगवन् ! उक्त प्रकार के रूप क्या मायावी बनाते हैं या अमायी-माया कपट

बनाते हैं ? अहो गौतम ! उक्त प्रकार के रूप मायी प्रमादी साधु करते हैं परंतु अमायी

नहीं करते हैं. अहो भगवन् ! किस कारण से मायी विकुर्वणा करता है और अमायी नहीं करता है ?

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

भो० भोजन भो० भोगत्र कर णो० नहीं वा० धमनकरे त० उन को ते० उस रु० रुक्ष पा० पानी
*
भो० भोजन से० अस्थिमिज प० प्रतली भ० होती है ॥ ३ ॥ ५ ॥

अ० अनगार भं० भगवन् भा० भावितात्मा वा० बाह्य पो० पुद्गल अ० विना ग्रहण किये प० समर्थ ए०
अणालोक्ष्य पडिक्ते कालं करेइ, नस्थितस्स आराहणा अमार्इणं तस्स ठाणस्स आलं.इय
पडिक्ते कालं करेइ अस्थि तस्स आराहणा ॥ सेवं भंते भंतेति तर्इयसए
चउत्थो उदेसो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ ४ ॥ × × +

अणगारेणं भंते ! भावियअप्पा बाहिरए पोग्गले अपरियाइसा षभू एगं महं इत्थिरू-

परिणमते है इस तरह शक्ति कम होने से अमायी वैक्रेयादि लब्धि नहीं करते हैं. अब मायी और अमायी
को फल बताते हैं. मायावी प्रमादी वैक्रेय करनेमें लब्धि फोडने से अथवा सरस आहारादि के दोष लगने से
यादि उम की आलोचना प्रतिक्रमण करे नहीं तो वह जिनाज्ञा का आराधक नहीं होसकता है. और जो
अमायी अममादी होते हैं वे निर्दोष आहार भोगवने से व वैक्रेयादि नहीं करने से अल्प दोषी होते हैं. जो
कुच्छ उग्रस्थपना मे दोष लगता है उस की गुरु की समक्ष आलोचना करने से जिनाज्ञा का आराधक
होता है. अहो भगवन् ! आपके वचन तथ्य हैं. आप जैसे कहते हैं वैसे ही हैं. यह तीसरा शतकका
चौथा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ ३ ॥ ५ ॥

एक म० बडा इ० स्त्रीरूप जा० यावत् सं० पालखी रूप वि० विकुर्वणा करने को गो० गौतम नो० नहीं
इ० यह अर्थ स० समर्थ ॥ १ ॥ अ० अनगार भं० भगवन् भं० भावितात्मा के० कितना प० समर्थ वि०
विकुर्वणा करने को गो० गौतम ज० जैसे जु० यवतीको जु० युवान ह० हस्त से ह० हस्त में गे० ग्रहण करे च० चक्र

बंवा जात्र संदामणियरूवं वा विकुव्वित्तए ? गोयमा ! णो इणट्टे समट्टे । अणगारेणं
भंते ! भात्रियप्पा वाहिएए पेमगले परियाइत्ता पभू एगं भहं इत्थिरूवं वा जात्र सं-
दामणियरूवं वा विकुव्वित्तए ? हंता पभू ॥ १ ॥ अणगारेणं भंते ! भात्रियप्पा केव-
इयाइं पभू इत्थिरूवाइं विउव्वित्तए ? गोयमा ! से जहानामए जुवइं जुवाणे हत्थेणं

अहो भगवन् ! भावितात्मा अनगार वाहिरके वैक्रेय पुद्गल ग्रहण किये विना क्या एक महा स्त्री का रूप
यावत् पालखी का रूप बनाने को समर्थ है ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है अर्थात् वे वैसा
वैक्रेय रूप नहीं बनासकते हैं. तब अहो भगवन् ! क्या वह वाहिरके वैक्रेय पुद्गल ग्रहण कर एक महा स्त्रीका
रूप यावत् पालखीका रूप बनाने को समर्थ है ? हां गौतम ! वह महा स्त्रीका रूप यावत् पालखी बनाने को
समर्थ है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! भावितात्मा साधु स्त्री के कितने रूप बनासकते हैं ? अहो गौतम ! जैसे
काम पीडित पुरुष अपने हस्त से स्त्री का हस्त मजबुत पकडता है अथवा जैसे गाडी के चक्र की नाभी

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

भो० भोजन भो० भोगत्र कर णी० नहीं वा० धमनकरे त० उन को ते० उस हू० रूत पा० पानी
 भो० भोजन से० अस्थि अ० अस्थिमिज प० प्रतली भ० होती है ॥ ३ ॥ ४ ॥ *

अ० अनगार भं० भगवन् भा० भावितात्मा वा० बाह्य पो० पुद्गल अ० विना ग्रहण किये प० समर्थ ए०
 अणालोश्य पडिकंते कालं करेइ, नत्थितरस आराहणा अमाईणं तरस ठाणस्स आल्लेइय
 पडिकंते कालं करेइ अत्थि तरस आराहणा ॥ सेवं भंते भंतेत्ति तईयसए
 वउत्थो उहेसो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ ४ ॥ ×

अणगारेणं भंते ! भाविअप्या बाहिरए पोगल्ले अपरियाइसा षभू एगं महं इत्थिरू-

परिणमते है इम तरह शक्ति कम होने से अमायी वैक्रेयादि लब्धि नहीं करते हैं. अब मायी और अमायी
 को फल बताते हैं. मायावी प्रमादी वैक्रेय करनेमें लब्धि फोडने से अथवा सरस आहारादि के दोष लगने से
 यदि उम की आलोचना प्रतिक्रमण करे नहीं तो वह जिनाज्ञा का आराधक नहीं होसकता है. और जो
 प्रमायी अपमादी होते हैं वे निर्दोष आहार भोगवने से व वैक्रेयादि नहीं करने से अल्प दोषी होते हैं. जो
 कुछ उपस्थपना से दोष लगता है उस की गुरु की समक्ष आलोचना करने से जिनाज्ञा का आराधक
 होता है. अहो भगवन् ! आपके वचन तथ्य हैं. आप जैसे कहते हैं वैसे ही हैं. यह तीसरा शतकका
 चौथा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ ३ ॥ ४ ॥ =

जैसे के० कोई पुरुष अ० खड्ग च० चर्मका पा० पात्र ग० ग्रहण कर ग० जावे ए० ऐसे अ० अन्तगार भा० भावितात्मा अ० म्यान पा० पात्र ह० हस्त में लेकर अ० आत्मा से उ० ऊर्ध्व दे० आकाश में उ० जावे ह० हां उ० जावे ॥ ३ ॥ अ० अन्तगार भ० भगवन् भा० भावितात्मा ए० एकदिशि में प०

रिसे असिचम्मपायं गहाय गच्छेज्जा एवामेव अणगारेत्रि भात्रियप्पा असिचम्मपायं
हृत्थकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढुं वेहासं उप्पएज्जा ? हंता उप्पइज्जा । अणगारेणं
भंते ! भात्रियप्पा केवइयाइं पभुं असिचम्महृत्थकिच्चगयाइं रूवाइं विउव्वित्तए ?
गोयमा ! से जहा नामए जुवइं जुवाणे हृत्थेण हृत्थे गेण्हेज्जा तं चेव जात्र विउव्वि-
सुवा ३ ॥३॥ से जहा नामए केइपरिसे एगओ पडागं काउं गच्छेज्जा एवामेव अ-

खड्ग का म्यान हस्त में लेकर कोई पुरुष जावे जैसे ही क्या गणनापिनी विद्या से भावितात्मा माधु खड्ग चर्म पत्र [म्यान] हस्त में लेकर आकाश में जावे ? हां गौतम ! जैसे आकाश में जावे, अहो भगवन् ! हस्त में म्यान होवे जैसे कितने रूप वह भावितात्मा अन्तगार वनावे ? अहो गौतम ! जैसे काम पीडित युवान पुरुष युवती को अपने हस्त से पकड़ता है यावत् एक लक्ष योजन का जम्बूद्वीप भरे, यह गात्र वैक्य का विषय है परंतु इतना रूप किसीने किया नहीं, करते नहीं, और करेंगे नहीं ॥३॥ अहो भगवन् !

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला भुवनेश्वरसाहयजी अन्नालापसाहयजी *

की ना० नाभी अ० आरसे उ० युक्त सि० होवे ए० ऐसे अ० अनगार भा० भावितात्मा वि० वैक्रेय
 न० समुद्र्यात स० नीकाले जा० यावत् प० समर्थ गो० गौतन अ० अनगार भा० भावितात्मा के० संपूर्ण
 नं० जम्बूद्वीप को व० बहुत इ० स्त्रीरूप से आ० आकीर्ण वि० विकीर्ण जा० यावत् ए० यह गो० गौतम
 अ० अनगार भा० भावितात्मा का अ० यह ए० ऐसा वि० विषय वि० विषय मात्र बु० कहा नो० नहीं सं०
 गंपचि वि० विकुर्वणा की ए० ऐसे प० परिपाटी ने० जानना जा० यावत् सं० पालखीरूप ॥ २ ॥ ज०
 हत्थसि गेण्डेजा, चक्ररसवा नामी अरगोटता सिया एवामेव अणगारेवि भावियप्या
 विउव्विय समुघाएणं समोहणइ जाव पमूणं ? गोयमा ! अणगारेणं भावियप्या के-
 वलकपं जंबूद्वीवं दीवं बहूहि इत्थिरूवेहि आयन्नं वित्तिकिण्णं जाव एसणं गोयमा !
 अणगारस्स भावियप्यणो अयमेवारूवे विसए विसयमेत्ते बुइए नोचिवणं संपत्तीए, वि-
 कुव्विसुवा ३, एवं परिवाडीए नेयव्वं जाव संदसाणिया ॥ २ ॥ सेजहा नामए केइपु-
 में आरे को भीदते हैं वैसे ही लब्धिवंत साधु वैक्रेय समुद्र्यात करके एक लक्ष योजनका जम्बूद्वीप स्त्रीके
 रूप में भरने को समर्थ है. अहो गौतम ! भावितात्मा अनगार को वैक्रेय करने का यह विषय कहा है
 प्रांतु इत्तमे रूप किस्तीने गत काल में किये नहीं है, वर्तमान में नहीं करते हैं, और आगाधिक में करोगे
 नहीं. जैसे स्त्री रूप का कहा वैसे ही पुरुष वगैरह का अनुक्रम से पालखी तक का कहना ॥ २ ॥ जैसे

शब्दार्थ

सूत्र

अर्थ

ऊँडे ॥ ४ ॥ से० वह ज० जैसे के० कोई पुरूप ए० एकदिशा में प० पलाठी का० करके चि० खडारहे
॥ ५ ॥ अ० अन्गार भं० भगवन् वा० बाह्य पा० पुद्गल अ० विना ग्रहण किये प० समर्थ ए० एक म०

॥ ४ ॥ से जहा नामए केइपुरिसे एगओ पल्हत्थियं काठं चिट्टिजा, एवामेव अणगारे
भावियप्पा तं चेव जाव विकुव्विसुवा ३ । एवं दुहओ पल्हत्थियंपि । से जहा नाम-
ए केइ पुरिसे एगओ पल्लियंकां काठं चिट्टिजा तं चेव विकुव्विसुवा ३ । एवं दुहओ
पल्लियंकांपि ॥ ५ ॥ अणगारेणं भंते ! भाविअप्पा वाहिएए पोगले अपरियाइत्ता पभू

एगं महं आसरुवंत्वा, हत्थिरुवंत्वा, सीहरुवंत्वा वा वग्घ-वग्ग-दीविय-अच्छ-तरच्छ-परासर-
कार कहा जैसे ही यहां जानना ऐसे ही दो उपवित्तों का जानना ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! जैसे कोई पुरूप
एक तरफ पल्हाठी से खडा रहता है, ऐसे ही क्या भावितात्पा अनगार आकाश में गमन कर सकते हैं ?
हां गौतम ! वे आकाश में गमन कर सकते हैं यात्रत् एक लक्ष योजन जम्बूद्वीप भर सकते हैं. ऐसे
दो पल्हाठी से भी आकाश में जा सकते हैं. ऐसे ही एक पर्यकासन और दो तरफ पर्यकासन में आकाश
में जा सकते हैं यात्रत् एक लक्ष योजन का जम्बूद्वीप भर सकते हैं. परंतु इतना किसीने किया नहीं, करते
नहीं व करेंगे नहीं. ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! लब्धिवंत भावितात्पा अनगार वाहिर के पुद्गल ग्रहण
किंचे विना क्या अथ का रूप, हस्ती का रूप, सिंह का रूप, व्याघ्र का रूप, चित्ता का

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालामसादनी *

पताका जैसे ह० हस्त में लेकर अ० स्तः से उ० ऊर्ध्व वे० आकाश में उ० ऊटे अ० अनगार भा०
भावितात्मा ए० एकदिशा में ज० यज्ञोपवित कि० लेकर अ० स्तः से उ० ऊर्ध्व वे० आकाश में उ०

णगारे भाविअप्पा एगओ पडागाहत्थकिच्चगएणं अप्पाणेणं उडुंवेहासं उप्पएज्जा ?
हंता गोयमा ! अणगारेणं मंते ! भावियप्पा केवइयाइं पभू एगओ पडागा
हत्थकिच्चगयाइं रूवाइं विउव्वित्तए, एवं जाव विकुट्ठिसुवा ३ । एवं दुहओ पडा-
गं। से जहानामए केइपुरिसे एगओ जणोवइ तंकाउं गच्छेज्जा, एवामेव अणगा-
रोवि भावियप्पा एगओ जणोवइयं किच्चगएणं अप्पाणेणं उडुं वेहासं उप्पाएज्जा ? हंता
उप्पाएज्जा । अणगारेणं मंते ! भाविअप्पा केवइयाइं पभू एगओ जणोवइयं किच्च-
गयाइं रूवाइं विउव्वित्तए तं चेव जाव विकुट्ठिसुवा ३, । एवं दुहओ जणोवइयंपि

जैसे कोई पुरुष एकदिशी में पताका करके जावे जैसे ही कोई भावितात्मा अनगार वैक्रीय रूप से एकदिशा
की पताका हस्त में रखकर क्या जाने को समर्थ है ? हां गौतम ! वह जासकते हैं यौगरह सत्र पहिले जैसे
कहना. ऐसे ही दो पताका का अधिकार जानना. अहो भगवन् ! जैसे कोई एक तरफ यज्ञोपवित धारन
कर जावे जैसे ही क्या भावितात्मा साधु एकदिशा की उपवित का रूप धारन कर आकाश में जावे ? हां
गौतम ! जासकते है अहो भगवन् ! ऐसे कितने रूप बना सकते हैं ? अहो गौतम ! जैसे म्यान का अधि

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः

* प्रकाशक-राजावधानुर लाला मुखर्जीसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

बड़ा आ० अश्वरूप है० हस्ति सी० सिंहरूप व० व्याघ्र व० चित्ता दी० दीपडा अ० रीछ त० तरस्य प०
 अष्टापद अ० त्रैकैय करने को णो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ ॥ ६ ॥ अ० अनगार भ० भगवन् भा०
 भावितात्मा ए० एक म० बड़ा आ० अश्वरूप अ० वैकैयकर अ० अनेक जा० योजन ग० जाने को ह०
 रूयंवा अभिजुंजित्तए ? णो इणहे समहे ॥ अणगारेणं एवं वाहिएए वोगले परिआ-
 इत्ता पम् ॥ ६ ॥ अणगारेणं भंते ! भाविअप्पा एगं महं आसरूयंवा अभिजुंजित्ता
 अणेगाइं जोयणाइं गमित्तए ? हंता पम् । से भंते ! किं आयहुंए गच्छइ परिहुंए
 गच्छइ ? गोयमा ! आयहुंए गच्छइ णो परिहुंए एवं आयकम्मुणा परकम्मणा,
 आयप्पयोगेणं परप्पयोगेण, उस्सिओदयंवा गच्छइ, प्रयोदयंवा गच्छइ । सेणं भंते !
 किं अणगारे आसे ? गोयमा ! अणगारेणंसे नो खलु से आसे एवं जाव परासरूयं वा से भंते
 किं माई विकुव्वइ, अमाई विकुव्वइ ? गोयमा ! मायी विकुव्वइ, नो अमायीविकुव्वइ ।
 इयदीवडीका रूप, रीछका रूप, तरसका रूप, अष्टापदका रूप और अन्य भी ऐसे रूप क्या बना सकते हैं ?
 अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है, अर्थात् वाहिर के पुद्गल ग्रहण किये बिना जैसे रूप नहीं बना सकते हैं,
 परंतु वाहिर के पुद्गल ग्रहण कर ऐसे रूप बनासकते हैं ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! भावितात्मा
 अणगार एक बड़ा अश्वका रूप बनाकर अनेक योजन तक जाने को क्या समर्थ है ? हां गौतम !
 अश्वका रूप बनाकर अनेक योजन तक जाने को समर्थ है, अहो भगवन् ! क्या यह आत्म कृद्धि से जाता

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

तीसरा शतक का पांचवां अध्याय

हां प० समर्थ से० वह भ० भगवन् कि० क्या आ० आत्म ऋद्धि से प० दुनरे की ऋद्धि से ग० जावे
माईणं भंते ! तस्स ठाणस्स अणालोइय पडिक्कंते कालं करेइ कहिं उववज्जइ ?

गोयमा ! अण्णयरेसु अभियोगेसु देवलोगेसु देवत्ताए उववज्जइ अमाईणं तस्स ठाण-
स्स आलोइय पडिक्कंते कालं करेइ कहिं उववज्जइ गोयमा ! अण्णयरेसु अणाभियो-
गिएसु देवलोएसु देवत्ताए उववज्जइ सेवभंते भंतेत्ति ॥ गाहा-इत्थी, असी,

है या अन्य की ऋद्धि से जाता है ? अहो गौतम ! आत्म ऋद्धि से जाता है परंतु अन्य की ऋद्धि से नहीं
जाता है. आत्म कर्म से जाता है परंतु अन्य के कर्म से नहीं जाता है, आत्म प्रयोग से जाता है परंतु अन्य के
प्रयोग से नहीं जाता है, ऊर्ध्व पताका के आकार से जाता है परंतु अधो पताका के आकार से नहीं जाता है.
अहो भगवन् ! क्या वह अनगर अश्व कहाता है ? अहो गौतम ! अनगर अश्व नहीं कहाता है परंतु
अगर कहता है. ऐं ही अष्टापद तक जानना. अहो भगवन् ! उक्त प्रकार के रूप क्या मायावी बनते हैं या
अमायावी-अप्रमादी बनते हैं ? अहो गौतम ! ये नरूप मायावी साधु बनते हैं परंतु अमायावी नहीं बनते हैं वगैरह सब
चौथे उद्वेग जैसे जानना. अहो भगवन् ! मयावी उसकी आलोचना प्रतिक्रमण वगैरह किये विना बंधांपर कोष्ठ कर
जाव तो कहां जावे ? अहो गौतम ! वैसे प्रथम देवलोक से वारहवे देवलोक तक मे इन्द्रादि देवों के
भोक्तृपने उत्पन्न होते हैं अहो भगवन् ! अमायावी आलोचना प्रतिक्रमण वगैरह करके कहां उत्पन्न होवे ?
अहो गौतम ! ये संवकपने नहीं उत्पन्न होते हैं परंतु सामानिक देव व अहो भद्र देवपने सर्वार्थ सिद्ध विमान तक

अर्थार्थ (सुत्र) भावार्थ (सुत्र) पदार्थ (सुत्र) पदार्थ (सुत्र)

x
 गो० गौतम आ० आत्म ऋद्धि नो० नहीं प० दूसरे की ऋद्धि से पूर्ववत् ॥ ३ ॥ ५ ॥
 अ० अनगर भं० भगवन् मा० मायी मि० मिथ्या दृष्टि वी० वीर्य लब्धि से वि० विभंग ज्ञान लब्धि
 से वा० वाणारसी न० नगरी में स० विकुर्वणा कर रा० राजगृह न० नगर में रू० रूप जा० जाने पा०

पढागा, जणोवइएय होइ बोधव्वे । पल्लत्थिय पलियंके, अभियोगविकुव्वणा मायी
 तइयसए पंचमो उद्वेसो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ ५ ॥ * ॥ ÷ ÷

अणगारंणं भंते भाविष्ण्वा मायी मिच्छदिट्ठी वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए विभंग-
 उत्पन्न होते हैं. अहो भगवन्! आपने कहा सो सत्य है. अब इस में उद्देशा का स्वरूप गाथा द्वाग संक्षेप
 से कहते हैं. स्त्रीरूप का, खड्ग म्यान का, पताका का, उपवित का, पलहांठी का, पर्यकासन का, और
 मायी आभियोगिक देव-सर्वकपने उत्पन्न होते हैं वैसा कहा. यह तीसरा शतक का पांचवा उद्देशा
 संपूर्ण हुआ ॥ ३ ॥ ५ ॥

+

अब इस छोटे उद्देशे में भी वैक्रीय संबंधी प्रश्न करते हैं. अहो भगवन्! मायी मिथ्यादृष्टि भावितात्मा
 अनगर-वीर्य लब्धि व विभंग ज्ञान लब्धि से वाणारसी नगरी की विकुर्वणा करके क्या राजगृही नगरी
 में मनुष्य पथ बौरठ के रूप जाने देखे! हां गौतम! विभंग ज्ञान से जाने और अवधि दर्शन से देखे.
 अहो भगवन्! क्या वे यथातथ्य भाव जाने, देखे या अन्यथा भाव जाने देखे? अहो गौतम! यथा

देखे हं हां जा० जाने पा० देखे से० वह किं० क्या० त० तथा भाव जा० जाने पा० देखे अ० अन्यथा भा० भाव को जा० जाने पा० देखे गो० गौतम णो० नहीं त० तथाभाव को जा० जाने पा० देखे अ० तथा भाव को जा० जाने पा० देखे अ० अन्यथा भाव को जा० जाने पा० देखे से० वह के० कैसे ए० एसा बु० कहा जाता है णो० नहीं त० तथा भाव को जा० जाने पा० देखे अ० अन्यथा भाव को जा० जाने पा० देखे गो० गौतम त० उसको ए० एसा भ० होवे अ० मैं रा० राजगृहनगर की स० विकुर्वणा कर वा० वाणारसी न० नगरी में रू०

नाणलद्धीए वाणारसिं नगरिं समोहए समोहणित्ता रायगिहि नयरे रूवाइं जाणइ

पासइ ? हंता जाणइ पासइ ॥ से भंते ! किं तथाभावं जाणइ पासइ, अण्णहा भावं

जाणइ पासइ ? गोयमा ! णो तथाभावं जाणइ पासइ अण्णहा भावं जाणइ पासइ ॥

से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ णो तथाभावं जाणइ पासइ अण्णहा भावं जाणइ

पासइ ? गोयमा ! तस्सणं एवं भन्इ एवं खलु अहं रायगिहि नयरे समोहए समोह-

तथ्य जाने नहीं व देखे नहीं परंतु अन्यथा भाव जाने व देखे. अहो भावन् ! किस तरह वह यथातथ्य भाव जाने, देखे नहीं; परंतु अन्यथा भाव जाने, देखे ? अहो गौतम ! उन को ऐसा होवे कि अहो मैंने राजगृह नगरी का वैक्रेय किया और वाणारसी नगरी में रहे हुवे मनुष्य पशु वगैरह के रूप देखा हूं. इस तरह उन अन्य दर्शनियों को दृष्टि की विपरीतता से मति की विपरीतता होती है.

* प्रकाशक राजावहादुर लाला मुखर्देवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

गो० गौतम आ० आत्म ऋद्धि नो० नहीं प० दूसरे की ऋद्धि से पूर्ववत् ॥ ३ ॥ ५ ॥ ×

अ० अश्वगर्भं० भगवन् मा० मायी मि० मिथ्या दृष्टि वी० वीर्य लब्धि से वि० विभंग ज्ञान लब्धि मे वा० वाणारसी न० नगरी मे स० विकुर्वणा कर रा० राजगृह न० नगर मे रू० रूप जा० जाने पा०

पढागा, जणोवइएय होइ बोधव्हे । पल्हत्थिय पलियंके, अभियोगविकुव्वणा मायी

तइयसए पंचमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ ५ ॥ * ॥ ÷ ÷ ÷

अणगोरणं भंते भावियप्या मायी मिच्छदिट्ठी वीरियलब्धीए वेउब्बियलब्धीए विभंग-

उत्पन्न होते हैं. अहो भगवन्! आपने कहा सो सत्य है. अब इस में उद्देश का स्वरूप गाथा द्वाग संक्षेप से कहते हैं. स्त्रीरूप का, लह्न म्यान का, पताका का, उपवित का, पल्हांठी का, पर्यकासन का, और मायी आभियोगिक देव-सेवकपने उत्पन्न होते हैं वंसा कहा. यह तीसरा शतक का पांचवा उद्देशा संपूर्ण हुआ ॥ ३ ॥ ५ ॥

+

अब इस छठे उद्देश में भी वैक्रीय संबंधी प्रश्न करते हैं. अहो भगवन्! मायी मिथ्यादृष्टि भावितात्मा अनगर वीर्य लब्धि व विभंग ज्ञान लब्धि से वाणारसी नगरी की विकुर्वणा करके क्या राजगृही नगरी में मनुष्य पशु वीरगठ के रूप जाने देखे! हां गौतम! विभंग ज्ञान से जाने और अबधि दर्शन से देखे. अहो भगवन्! क्या वे यथातथ्य भाव जाने, देखे या अन्यथा भाव जाने देखे? अहो गौतम! यथा

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥ ५ ॥ * ॥ ÷ ÷ ÷

देखे हं० हां जा० जाने पा० देखें से० वह किं० क्या त० तथा भाव जा० जाने पा० देखे अ० अन्यथा भा० भाव को जा० जाने पा० देखे गो० गौतम णो० नहीं त० तथाभाव को जा० जाने पा० देखे अ० अन्यथा भाव को जा० जाने पा० देखे से० वह के० कैसे ए० एसा बु० कहा जाता है णो० नहीं त० तथा भाव को जा० जाने पा० देखे अ० अन्यथा भाव को जा० जाने पा० देखें गो० गौतम त० उसको ए० ऐसा भ० होवे अ० मैं रा० राजगृहनगर की स० विकुर्वणा कर वा० वाणारसी न० नगरी में रू०

नाणलद्धीए वाणारसिं नगरिं समोहए समोहणित्ता रायगिहे नयरे रूवाइं जाणइ पासइ ? हंता जाणइ पासइ ॥ से भंते ! किं तहाभावं जाणइ पासइ, अण्णहा भावं जाणइ पासइ ? गोयमा ! णो तहाभावं जाणइ पासइ अण्णहा भावं जाणइ पासइ ॥ से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ णो तहाभावं जाणइ पासइ अण्णहा भावं जाणइ पासइ ? गोयमा ! तस्सणं एवं भच्चइ एवं खलु अहं रायगिहे नयरे समोहए समोह-

तथ्य जाने नहीं व देखे नहीं परंतु अन्यथा भाव जाने व देखे. अहो भगवन् ! किस तरह वह यथातथ्य भाव जाने, देखे नहीं; परंतु अन्यथा भाव जाने, देखे ? अहो गौतम ! उन को ऐसा होवे कि अहो मैंने राजगृह नगरी का वैक्रेय किया और वाणारसी नगरी में रहे हुवे मनुष्य पशु वगैरह के रूप देखे रहा हूं. इस तरह उन अन्य दर्शनियों को दृष्टि की विपरीतता से मति की विपरीतता होती है. जैसे

पुष्पान् विपुल पण्णान् (सुवत्तं) (सुवत्तं) (सुवत्तं)

सूत्र

भावार्थ

×
 गो० गौतम आं० आत्म ऋद्धि नो० नहीं प० दूसरे की ऋद्धि से पूर्ववत् ॥ ३ ॥ ५ ॥
 अ० अन्नगार भं० भगवन् मा० मायी मि० मिथ्या दृष्टि वी० वीर्य लब्धि से वि० विभंग ज्ञान लब्धि
 से वा० वाणारसी न० नगरी में स० विकुर्वणा कर रा० राजगृह न० नगर में रू० रूप ना० जाने पा०

पढागा, जणोवइएय होइ बोधव्हे । पल्लहिय्य पलियंके, अभियोगविकुव्वणा मायी
 तइयसए पंचमो उहेसो समत्तो ॥ ३ ॥ ५ ॥ * ॥ ÷ ÷

अणगारंणं भंते भाविष्यपा मायी मिच्छदिट्ठी वीरियलद्धीए वेउवियलद्धीए विभंग-
 उत्पन्न होते हैं. अहो भगवन्! आपने कहा सो सत्य है. अब इस में उद्देशा का स्वरूप गाथा द्वाग संक्षेप
 से कहते हैं. स्त्रीरूप का, खड्ग म्यान का, पताका का, उपवित का, पल्लहंठी का, पर्यकासन का, और
 मायी आभियोगिक देव-संवकपने उत्पन्न होते हैं वैसा कहा. यह तीसरा शतक का पांचवा उद्देशा
 संपूर्ण हुआ ॥ ३ ॥ ५ ॥ ÷

अत्र इस छोटे उद्देशे में भी वैक्रेय संबंधी प्रश्न करते हैं. अहो भगवन्! मायी मिथ्यादृष्टि भावितात्मा
 अन्नगर वीर्य लब्धि व विभंग ज्ञान लब्धि से वाणारसी नगरी की विकुर्वणा करके क्या राजगृही नगरी
 में मनुष्य पशु वीररठ के रूप जाने देखे! हां गौतम! विभंग ज्ञान से जाने और अवाधि दर्शन से देखे.
 अहो भगवन्! क्या वे यथातथ्य भाव जाने, देखे या अन्यथा भाव जाने देखे? अहो गौतम! यथा

देखे हं० हां जा० जाने पा० देखें से० वह किं० क्या त० तथा भाव जा० जाने पा० देखे अ० अन्यथा
 भा० भाव को जा० जाने पा० देखे गो० गौतम णो० नही त० तथाभाव को जा० जाने पा० देखे अ०
 अन्यथा भाव को जा० जाने पा० देखे से० वह के० कैसे ए० एसा बु० कहा जाता है णो० नही त०
 तथा भाव को जा० जाने पा० देखे अ० अन्यथा भाव को जा० जाने पा० देखे गो० गौतम त० उसको
 ए० एसा भ० होवे अ० मैं रा० राजगृहनगर की स० विकुर्वणा कर वा० वाणारसी न० नगरी में रू०

नाणलद्धीए वाणारसिं नगरिं समोहए समोहणित्ता रायगिहे नयरे रूचाइं जाणइ
 पासइ ? हंता जाणइ पासइ ॥ से भंते ! किं तहाभावं जाणइ पासइ, अण्णहा भावं
 जाणइ पासइ ? गोयसा ! णो तहाभावं जाणइ पासइ अण्णहा भावं जाणइ पासइ ॥
 से केणट्ठणं भंते ! एवं बुच्चइ णो तहाभावं जाणइ पासइ अण्णहा भावं जाणइ
 पासइ ? गोयसा ! तस्सणं एवं भच्चइ एवं खलु अहं रायगिहे नयरे समोहए समोह-

तथ्य जाने नहीं व देखे नहीं पंतु अन्यथा भाव जाने व देखे. अहो भगवन्न ! किस तरह वह यथातथ्य भाव
 जाने, देखे नहीं; पंतु अन्यथा भाव जाने, देखे ? अहो गौतम ! उन को ऐसा होने कि अहो
 भंते राजगृह नगरी का वैक्रेय किया और वाणारसी नगरी में रहे हुवे मनुष्य पशु वीरह के रूप देखे जैसे
 रहा हं. इस तरह उन अन्य दर्शनियों को दृष्टि की विपरीतता से मति की विपरीतता होती है.

दार्थ (पद्यमंग लक्षण पव्वात्) (सत्तात्)

सूत्र

भावार्थ

रूप जा० जानता हूँ पा० देखता हूँ से० उस से० उस द० दर्शन में वि० विपरीतता भ० होवे ते० इस लिये जा० यावत् पा० देखे ॥ १ ॥ पूर्ववत् ॥ २ ॥ अ० अणगर भ० भगवन् मा० मायी मि० मिथ्यादृष्टि वि० णित्ता वाणारसीए नयरीए रूवाइं जाणामि पासामि, से से दंसणे विवचासे भवइ, से तेणट्टेणं जाव पासइ ॥ १ ॥ अणगारेणं भंते ! आवियप्पा मायी मिच्छदिट्ठी जाव रायगिहे नयेरे समोहए समोहएत्ता वाणारसीए नयरीए रूवाइं जाणइ पासइ ? हंता जाणइ पासइ । तंवेव जाव तस्सणं एवं भवइ एवं खलु अहं वाणारसीए नयरीए समोहए समोहणित्ता रायगिहे नयेरे रूवाइं जाणामि पासामि । से से दंसणे विवचासे भवइ से तेणट्टेणं जाव अण्णहाभावं जाणइ पासइ ॥ २ ॥ अणगारेणं भंते ! आवियप्पा मायी किमी दिशी मूढ पुरुष पूर्वादि दिशा नहीं जानसकता है; वैसे ही वह भी नहीं जान सकता है. इसलिये भदो गौतम ! वैसा अनगर यथातथ्य भाव नहीं जानसकता है परंतु अन्यथा भाव जान सकता है ॥ १ ॥ ॥ अदो भगवन् ! मायी मिथ्या दृष्टि भावितात्मा अनगर वीर्यलब्धि, वैक्रेय लब्धि व विभंग ज्ञान लब्धि से राजगृह नगर का वैक्रेय करके क्या वाणारसी में मनुष्यादि के रूप जान व देख सकना है ! हां गौतम ! वह राजगृहीकी विकुर्षणा करके वाणारसीमें मनुष्यादिक के रूप जान व देख सकता है गौरव सत्र अधिकार पहिले जैते कहना. और उसे भी ऐसा विचार हेवे कि भंते वाणारसी का रूप

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

प्राप्त अ० सन्मुख हूँवे से० उस से० उस दं० दर्शन की वि० विपरीतता भ० होवे से० वह ते० इसलिये जा० यावत्
पा० देखे ॥ ३ ॥ अ० अनगर भं० भगवन् अ० असाथी स० सम्यक् दृष्टि की० वीर्य लब्धि से वे० वैक्रय

भिसमपणागए से से दंसणे विवच्चा से भवइ से तेणट्टेणं जाव पासइ ॥ ३ ॥ अ-

णगोरणं भंते ! भात्रियण्णा असाथी सम्मादिट्ठी वीरियलद्धीए, वेउच्चिय लद्धीए, ओहि
नाणलद्धीए रायगिहे नयरे समोहए समोहणिच्चा वाणारसीए नयरीए रुवाइं जाणइ
पासइ ? हंता जाणइ पासइ । से भंते ! किं तथाभात्रं जाणइ पासइ अण्णहाभात्रं
जाणइ पासइ ? गोयमा ! तथा भावं जाणइ पासइ, णो अण्णहाभात्रं जाणइ पासइ
से केणट्टेणं भंते एवं युच्चइ ? गोयमा ! तरस्सणं एवं भवइ एवं खलु अहं रायगिहे

सम्यग् दृष्टि अनगर वीर्य लब्धि, वैक्रय लब्धि व अविधि ज्ञान की लब्धि से राजगृह नगर की विकुर्वणा
कर वाणारसी नगरी में रहे हूँवे मनुष्य पशु वगैरह को क्या जान व देख सके ? हाँ गौतम ! वे जान व
देख सके. अहो गौतम ! वे यथातथ्य भाव जाने व देखे या अन्यथा भाव जाने व देखे ? अहो
गौतम ! वे यथातथ्य भाव जाने देखे परंतु अन्यथा भाव जाने देखे नहीं. अहो भगवन् ! किस कारण से वे
यथातथ्य भाव जाने देखे परंतु अन्यथा भाव जाने देखे नहीं ? अहो गौतम ! उन को ऐसा विचार
होवे कि मैं राजगृही नगरी की विकुर्वणा करके वाणारसी नगरी में मनुष्यादिक के रूप देखता हूँ इस

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

उस को ए० ऐसा भ० होवे ए० यह वा० वाणारसी न० नगरी ए० यह रा० राजगृह न० नगर ए० यह अ० बीच में ज० देश नो० नहीं ए० यह मु० मुझे वी० वीर्य लब्धि वे० वैक्रेय लब्धि वि० विभंग ज्ञान लब्धि इ० ऋद्धि जु० द्युति ज० यश व० बल वी० वीर्य पु० पुरुषात्कार पराक्रम ल० लब्ध प० जाणइ पासइ, अण्णहाभावं जाणइ पासइ ॥ से केणट्टेणं भंते जाव पासइ ? गो-यमा ! तरस खलु एवं भवइ एस खलु वाणारसीए नयरीए एस खलु रायगिहे नयरे, एस खलु अंतरा एगं महं जणवयवगं, नो खलु एस महं वीरियलब्धी वेउब्बिय-लब्धी, विभंगनाणलब्धी, इट्ठी, जुत्ती, जसे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे लद्धे पत्ते अं-

भोग भगवन् ! वह किस कारन से तथा भाव जाने व देखे अन्यथा भाव जाने नहीं देखे नहीं ? अहो गौतम ! उसे ऐसा विचार होवे कि यह वाणारसी नगरी है, यह राजगृही नगरी है. यह इन दोनों की बीच का प्रदेश है. परंतु वह ऐसा नहीं जान सकता है कि यह मुझे वीर्य लब्धि, वैक्रेय लब्धि, ज्ञान लब्धि, ऋद्धि, द्युति, कान्ति, यश, बल, वीर्य, पुरुषात्कार व पराक्रम से मीला है, प्राप्त हुआ है यावत् सन्मुख हुआ है. इस तरह उसे दर्शन की विपरीतता से मति की विपरीतता होती है अर्थात् ये भरे बनाये हुवे नहीं है परंतु स्वाभाविक है. यों विभंग ज्ञान से विपरीत मानता है. इसलिये अहो गौतम ! ऐसा कहा है कि यथार्थ भाव नहीं जान व देख सकता है परंतु अन्यथा भाव जान व देख सकता है ॥ ३ ॥ अमायी

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

मास अ० सन्मुख हुवे से० उस से० उस दं० दर्शन की वि० विपरीतता भ० होवे से० वह ते० इतलिये जा० यावत्
पा० देखे ॥ ३ ॥ अ० अनगार भं० भगवन् अ० अमाथी स० सम्यक् दृष्टि वी० वीर्य लब्धि से वे० वैक्रय
भिसमण्णागए से से दंसणे विवच्चा से भवइ से तेणट्टुणं जाव पासइ ॥ ३ ॥ अ-

णगोरणं भंते ! भावियप्पा अमाथी सम्मादिट्ठी वीरियलब्धीए, वेउब्बिय लब्धीए, ओहि
नाणलब्धीए रायगिहे नयरे समाहए समोहणित्ता वाणारसीए नयरीए रूवाइं जाणइ
पासइ ? हंता जाणइ पासइ । से भंते ! किं तथाभावं जाणइ पासइ अण्णहाभावं
जाणइ पासइ ? गोयमा ! तथा भावं जाणइ पासइ, णो अण्णहाभावं जाणइ पासइ
से केणट्टुणं भंते एवं वुच्चइ ? गोयमा ! तस्सणं एवं भवइ एवं खलु अहं रायगिहे

सम्यग् दृष्टि अनगार वीर्य लब्धि, वैक्रय लब्धि व अवधि ज्ञान की लब्धि से राजगृह नगर की विकुर्वणा
कर वाणारसी नगरी में रहे हुवे मनुष्य पशु व गैरह को क्या जान व देख सके ? हां गौतम ! वे जान व
देख सके. अहो गौतम ! वे यथातथ्य भाव जाने व देखे या अन्यथा भाव जाने व देखे ? अहो
गौतम ! वे यथातथ्य भाव जाने देखे परंतु अन्यथा भाव जाने देखे नहीं. अहो भगवन् ! किस कारण से वे
यथातथ्य भाव जाने देखे परंतु अन्यथा भाव जाने देखे नहीं ? अहो गौतम ! उन को ऐसा विचार
होवे कि मैं राजगृही नगरी की विकुर्वणा करके वाणारसी नगरी में मनुष्यादिक के रूप देखता हूँ इस

* प्रकाशक-राजात्रहादुर लाला मुखद्वेव सहायजी ज्वालामसादजी *

ल० लब्धि से ओ० अवधि ज्ञान लब्धि से रा० राजगृह नगर में स० विकुर्वणा कर वा० वाणारसी न० नगर समोहए समोहणित्ता वाणारसीए नगरीए रूवाइं जाणामि पासामि, से से दंसणे अवित्रचा से भवइ से तेणट्टुणं गोयमा ! एवं वुच्चइ ॥ बीओवि आलावगो एवं चैव, णवरं वाणारसीए नयरीए समोहणा वेयव्वो ॥ रायगिहे नयरे रूवाइं जाणइ पासइ ॥ ४ ॥ अणगारणं भंते भाविपपा अमायी सम्मदिट्ठी वीरिय लद्धीए वेउव्विय लद्धीए ओहिनाणलद्धीए रायगिहं वाणारसिं नगरिं च अंतरा एगं महं जणवयवगं समोहए समोहएत्ता रायगिहं नगरं वाणारसिं च नगरिं तं च अंतरा एगं महं जणवयवगं जाणइ पासइ ? हंता जाणइ पासइ ॥ से भंते ! किं तहाभावं जाणइ पासइ

तरह उन को दर्शन के सम्पने से मति की विपरीतता नहीं होती है इसलिये अहो गौतम ! वे यथातथ्य भाव जाने देखे परंतु अन्यथा भाव जाने व देखे नहीं। इसी तरह दुमरा आलापक जानना: परंतु इस में राजगृही का वैक्रेय करके वाणारसी में मनुष्यादिके रूप देखनेके स्थान वाणारसी का वैक्रेय करके राजगृही में मनुष्यादिके रूप देखे ॥ ४ ॥ अमायी सम्यग् दृष्टि भावितात्मा अनगर वीर्य लब्धि, वैक्रेय लब्धि, व अविधि ज्ञान की लब्धि से राजगृह नगर व वाणारसी के मध्य का एक बडा जनपद देश की विकुर्वणा करके उन दोनों की बीच का जनपद को क्या जाने व देखे ? हां गौतम ! वे जाने देखे. अहो भगवन् !

शब्दार्थ

सुत्र

भावार्थ

नगरी में रू० रूप जा० जाने पा० देखे ह० हां जा० जाने पा० देखे ॥ ४ ॥ पूर्ववत् ॥ ५ ॥ अ० अण-
 अण्णहाभावं जाणइ पासइ ? गोयमा ! तहाभावं जाणइ पासइ, नो अण्णहा भावं
 जाणइ पासइ । सेकेणट्टेणं ? गोयमा ! तस्सणं एवं भवइ नो खलु एस रायगिहि, णो
 खलु एस वाणारसी नगरी णो खलु एस अंतरा एगे जणवयवगे, एस खलु ममं
 वीरिय लद्धी वेउव्विय लद्धी, ओहिनाण लद्धी, इट्ठी, जुत्ती, जसे बलं वीरिए पुरि-
 सक्कारपरक्कमे लद्धे पत्ते अभिसमण्णागए, सेसे दंसणे अविच्च्वासं भवइ, से तेणट्टेणं गोयमा !
 एवं वुच्चइ, तहा भावं जाणइ पासइ, नो अण्णहाभावं जाणइ पासइ ॥ ५ ॥ अण-

क्या वे यथातथ्य भाव जाने देखे या अन्यथा भाव जाने देखे ? अहो गौतम ! वे यथा
 तथ्य भाव जाने देखे परंतु अन्यथा भाव जाने व देखे नहीं. अहो भगवन् ! किस कारन से
 वे यथातथ्य भाव जाने देखे परंतु अन्यथा भाव जाने देखे नहीं ? अहो गौतम ! उन को ऐसा विचार
 होवे कि यह राजगृह नगर नहीं है, यह वाणारसी नगरी नहीं है यह उन के बीचका जनपद नहीं है,
 परंतु यह वीर्य लब्धि, वैक्रय लब्धि, अवाधि ज्ञान की लब्धि, ऋद्धि, द्युति, यश, बल, वीर्य, पुरुषात्कार
 पराक्रम मुझे प्राप्त हुआ है. इस तरह दर्शन के समपरिणाम से मति सम होती है. इसलिये अहो गौतम !
 ऐसा कहा गया है कि वे यथातथ्य भाव जाने व देखे परंतु अन्यथा भाव जाने देखे नहीं ॥ ५ ॥ अहो

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

गार भं० भगवन् भा० भवितात्मा वा० बाह्य पो० पुद्गल अ० विना ग्रहणकिये प० समर्थ ह० एक म०
 वडा गा० ग्रामरूप न० नगर रूप जा० यावत् स० सन्निवेश वि० विकुर्वणा करने को गो० गौतम पो०
 नहीं ३० यह अर्थ स० समर्थ ए० ऐसे वि० दूसरा आ० आलापक न० विशेष वा० बाह्य पो० पुद्गल
 प० ग्रहण कर प० समर्थ ॥ ६ ॥ पूर्ववत् ॥ ७ ॥ च० चमर भं० भगवन् अ० अमुरेन्द्र को क० कितने
 गारेणं भंते ! भात्रियप्पा बाहिरए पोगले अपरियाइत्ता पम् एगं महं गामरूवंवा,
 नगररूवंवा, जाव सण्णिवेसरूवंवा विकुव्वित्तए ? गोयमा ! पोइणंटुसमट्टे, एवं विती
 ओवि आलावओ । नवरं बाहिरए पोगले परियाइत्ता, पम् ॥ ६ ॥ अणगारेणं भंते !
 केइवयाइं पम् गामरूवाइं, विकुव्वित्तए ? गोयमा ! से जहा नामए जुवइं जुवाणे
 हत्थेण हत्थे गेण्हजा, तं चेव जाव विकुव्वित्तिवा ३, ॥ एवं जाव सण्णिवेसरूवंवा
 भगवन् ! भावितात्मा अनगार बाहिर के वैक्रेय पुद्गल ग्रहण किये विना क्या ग्राम, नगर यावत् सन्निवेश के
 रूप बनासकते हैं ? अहो गौतम ! वे बाहिर के पुद्गल ग्रहण किये विना ऐसे रूप नहीं बना सकते हैं.
 परंतु बाहिर के पुद्गल ग्रहण कर ऐसे रूप बना सकते हैं ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! वे भावितात्मा अनगार
 कितने वैक्रेय रूप बना सकते हैं ? अहो गौतम ! जैसे काम पीडित तरुण पुरुष तरुणी स्त्री को अपने
 हस्त से पकडता है ऐसे ही वे अनगार एक लक्ष योजन का जम्बूद्वीप को ग्राम नगर यावत् सन्निवेश

ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ १ ॥ ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ १ ॥ ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ १ ॥ ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ १ ॥ ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

सूत्र

भात्रार्थ

आ० आत्मरक्षक देव सा० सहस्र गो० गौतम च० चार च० चौसठ आ० आत्मरक्षक देव सा० सहस्र
 ए० इस आ० आत्म रक्षक का व० वर्णन स० सर्व ई० इन्द्रका ज० जिस को ज० जितने आ० अत्परक्षक
 ते० उतने भा० कहना ॥ ३ ॥ ६ ॥

रा० राजगृह न० नगर में जा० यावत् प० पर्युपासना करते ए० ऐसा व० बोले स० शक दे० इवेन्द्रे
 ॥ ७ ॥ चमरस्सनं भंते ! असुरिंदरस अमुररणो कइ आयरक्खेदवसाहस्सीओ ?

गोयमा : चत्तारि चउसट्टीओ आयरक्खेदव साहस्सीओ पणत्ताओ ॥ एणुणं आय-
 रक्खवणओ ॥ एवं सव्वेसिं इद्धानं जस्स जत्तिया आयरक्खा ते भाणियव्वा ॥ सेव
 भंते भंतेत्ति जाव विहरइ ॥ तईय सए छट्ठो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ ६ ॥ *

रायगिहे नयरे जाव पज्जुवासमाणे । एवं वयासी सक्कस्सनं भंते ! देविंदस्स देवरणो
 के रूप से भर देवे. यह मात्र विषय है. इतने रूप किसीने किये नहीं, करते नहीं व करेंगे नहीं ॥ ७ ॥
 अहो भगवन् ! चभर नामक असुरेन्द्र को कितने हजार आत्मरक्षक देव कहे हैं ? अहो गौतम ! चम-
 रेंद्र को दो लाख छप्पन्न हजार आत्म रक्षक देव कहे हैं. ऐसे ही सब भुवनपति यावत् अच्युतेन्द्र तक के
 भिन्न २ आत्म रक्षक देव जानना. अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य हैं ऐसा कहकर तप व मंयम से
 आत्मा को भावते हुवे श्री गौतम स्वामी विचरने लगे. यह तीसरा शतकका छट्टा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥३॥६॥

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

को क० कितने लो० लोकपाल गो० गौतम च० चार लोकपाल प० प्रह्लो सो० सोम ज० यम व० वरुण
वे० वैश्रमण ॥ १ ॥ ए० इन भं० भगवन् च० चार लो० लोकपाल के क० कितने विमान प० प्रह्लो
गो० गौतम च० चार वि० विमान प० प्रह्लो सं० संध्यप्रभ व० वरशिष्ट स० स्वयंजल व० बल्लु ॥ २ ॥

कइलोगपाल पणत्ता ? गोयमा ! चत्तारि लोगपाला पणत्ता तंजहा-सोमे, जने,
वरुणे, वेसमणे ॥ १ ॥ एएसिणं भंते ! चउण्हं लोगपालाणं कइविमाणा पणत्ता ?
गोयमा ! चत्तारि विमाणा प० तंजहा-संझप्पभे, वरसिद्धे, सयंजले, वग्गु ॥ २ ॥

छेउ उदेशे के अंत में आत्मरसक देव का वर्णन कहा. आगे उदेशे में लोकपालोंका वर्णन करते हैं.
राजगृही नगरी के गुणशील नामक उद्यान में भगवंत पथारें परिषदा बंदन करने को आइ और धर्मोप
देश मुनकर पीछी गई. उस समय में श्री गौतम स्वामी श्रमण भगवंत को बंदना नमस्कार कर ऐसा प्रश्न
करनेलगे कि अहो भगवन् ! शक्र देवेंद्र को कितने लोकपाल कहे हैं ? अहो गौतम ! शक्रदेवेंद्र को चार लोक
पाल कहे हैं. उन के नाम सोम, यम, वरुण और वैश्रमण. ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! उन चार लोकपालों
के कितने विमान कहे हैं अहो गौतम ! उन के चार विमान कहे हैं ? सोम का संध्यप्रभ २ यम का वरशि
ष्ट ३ वरुण का स्वयंजल और ४ वैश्रमण का बल्लु ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! शक्रदेवेंद्र देवराजा

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

क० कहां भं० भगवन् स० शक्र दे० देवेन्द्र के सो० सोम म० महाराजा का सं० संध्यप्रभ म० महाविमान गो० गौतम जं० जंबूद्वीप के मं० मेरु पर्वत की दा० दक्षिण में ई० इस र० रत्नप्रभा पु० पृथ्वी के व० बहुत स० समरमणीय भूमिभाग से उ० ऊर्ध्व चं० चंद्र सू० सूर्य ग० ग्रह ग० समुह न० नक्षत्र ता० तारे व० बहुत जो० योजन जा० यावत् पं० पांच अ० अवतंसक अ० अशोक अवतंसक स० सप्तपर्ण अवतंसक चं० चंपक अवतंसक चू० च्युत अवतंसक म० मध्य में सो० सौधर्म अवतंसक त० उस सो० सौधर्म अव-
कहिणं भंते ! सक्करस देविदस्स देवरणो सोमस्स महारणो संक्षप्पभे णासं महावि-
माणे प० ? गोयमा ! जंबूहीवेदीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्पभाए
पुढवीए बहुसमरमणिजाओ भूमिभागाओ उट्ठं चंदिमसूरिमगहगणनक्खत्तारा -
रूत्राणं बहूइं जोयणाइं जाव पंच वडंसया प० तंजहा-असोयवडंसए, सत्तिवणं वडं-
सए, चंपयवडंसए, चूयवडंसए, मज्झे सोहम्म वडंसए ॥ तस्सणं सोहम्मवडंसयस्स
का सोम नामक लोकपाल का संध्यप्रभ नामक विमान किस स्थान पर है ? अहो गौतम ! जम्बूद्वीप के
मेरु पर्वत की दक्षिण दिशा में रत्नप्रभा पृथ्वी के बहुत मध्य भाग से बहुत योजन ऊंचे चंद्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र
व तारे रहे हुवे हैं. वहां से सो, हजार, क्रोड व क्रोड क्रोड योजनं उपर ऊंचे सौधर्म देवलोक रहा हुवा है.
षट् पूर्व पश्चिम लम्बा व उत्तर दक्षिण चौडा, अर्धचंद्रमां के आकार वाला महातेजवाला देदीप्यमान असंख्यत

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी आलाप्रसादजी *

तंसक म० महाविमान की पु० पूर्व में सो० सौधर्म देवलोक में अ० असंख्यात योजन वी० अतिक्रमकर
 ए० तहां स० शक्र दे० देवेन्द्र का सो० सोम म० महाराजा का म० संध्यमभ म० महाविमान अ० अर्ध
 ते० तेरह जो० योजन स० लाख आ० लंबा वि० चौडा उ० गुनचालीस जो० योजन ल० लाख वा०
 धवन स० सहस्र अ० आठ अ० उडतालीस जो० योजन स० शत किं० किंचित् वि० विशेषाधिक
 महाविमाणस्स पुरच्छिमणं सोहम्मकप्पे असंखेज्जाइं जोयणाइं वीइवइत्ता एत्थणं
 सक्कस्स देविदस्स देवरणो सोमस्स महारणो संज्झप्पभेनामं महाविमाणे प० अद्धते-
 रस जोयण सय सहस्साइं आयाम विक्खेभेणं उयालीसं जोयणसयसहस्साइं वाव-
 णचसहस्साइं अट्ट अडयाले जोयणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेव्वेणं पण्णत्ते ॥
 योजन का लम्बा चौडा व असंख्यात योजन की परिधि वाला है. उस में बत्तीस लाख विमान हैं वे सब
 रत्नमय निर्मल यावत् दर्शनीय हैं. उस के बहुत मध्य भाग में सब विमानों में मुकुट समान श्रेष्ठ पांच महा
 विमान हैं. जिन के नाम. १. अशोकावतंसक २. सप्तपर्णावतंसक ३. चम्पकावतंसक ४. चूतावतंसक
 और ५. मध्य में सौधर्मवतंसक विमान हैं. उस सौधर्मवतंसक विमान से पूर्व में असंख्यात योजन जावे तो
 वहां शक्र देवेन्द्र का सोम नामक लोकपाल का स्वयंभु नामक विमान कहा है. वह साठेबारह लाख योजन
 का लम्बा चौडा है. उस की परिधि ३९५२८४८ योजन से कुछ अधिक की है. इस का सब वर्णन

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

प० परिधि ज० जैते मू० सूर्याभ वि० विमान की व० वक्तव्यता सा० वह अ० निविशप भा० कहना जा० यावत् अ० अभियेक न० विशेष सो० सोमदेव ॥ ३ ॥ सं० संध्यप्रभ म० महामविमान की अ० नीचे स० दिशा स० विदिशा में अ० असंख्यात जो० योजन स० लाख ओ० अवगाहकर स० शक्र दे० देवेन्द्र का सो० सोम म० महाराजा की सो० सोमा रा० राज्यधानी ए० एक जो० योजन स० लाख आ० लक्षी वि० बीडी ज० जंबूद्वीप प्रमाण वे० वैमानिक के प० प्रमाण से अ० अर्ध ने० जानना जा०

जहेव सूर्याभ विमाणस्स वस्तव्यया सा अपरिसेसा भाणियज्वाजात्र अभिसेयो । नवरं सोमे धेवे ॥ ३ ॥ संज्ञाप्यभरसनं महात्रिमाणस्स अहे सपक्खि सपडिदिसि असंखेज्जाइ जोषण सय सहस्साइ उगाहिच्चा एत्थणं सक्खस्स देवस्स देवरणो सोमस्समहारणो सोमानामं रायहाणी पणत्ता, एगं जोषणसयसहस्सं आथामविख्वेभणं जंबूद्वीव

सूर्याभ देवता के विमान का अधिकार में जैसा कहा है वैसे ही कहना मात्र यहां सोम देव कहना ॥ ३ ॥ इस संध्यप्रभ विमान से असंख्यात योजन नीचे अवगाहकर चारों विदिशि में जावे तो वहां शक्र देवेन्द्र के सोम महाराजा की सोमा नामक राज्यधानी कही है। एक लक्ष योजन की लम्बी व चौड़ी है। इस में प्रासाद द्वारादिक के सब प्रमाण सौधर्म देवलों के प्रासादिक से आथा है। अर्थात् १५० योजन का कोट है, २५० योजन का प्रासाद ऊंचा है, चारों तरफ चार प्रासाद १२५ योजन के हैं, इस के परिवारवाले १८

पुनर्वि (संज्ञाप्यभरसनं) महात्रिमाणस्स अहे सपक्खि सपडिदिसि असंखेज्जाइ जोषण सय सहस्साइ उगाहिच्चा एत्थणं सक्खस्स देवस्स देवरणो सोमस्समहारणो सोमानामं रायहाणी पणत्ता, एगं जोषणसयसहस्सं आथामविख्वेभणं जंबूद्वीव

सुन

भावार्थ

महाशक्त रामायणद्वारा लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामुखी

यावत् उ० चौकी पीठ सो० सोलह जो० योजन स० सहस्र भा० संवे वि० चैटि प०
पचास स०सहस्र योजन प० पांच स० सत्तानव जो० योजन स० शत कि० किंशित् वि० विशिष्टरूप
प० परिधि पा० प्रासाद की च० चार प० परिपटी ने० जानना छे० शेष न० नहीं है ॥४॥ स० शक्र
दे० देवेन्द्र के सो० सोप म० महाराजा के इ० ये दे० देव आ० आज्ञा उ० उपपात व० वचन नि०निदेश
में वि० रहे सो० सोमनिकाय सो० सोमदेव निकाय वि० विद्युत्कुमार अ० अग्निकुमार

प्यमाणा वैमाणियाणं पमाणस्स अहं नेयव्वं जाव उवगारियलेणं सोलस जोयण सह-
रसाइं आयाम त्रिक्खंभेणं पण्णासं जोयणः सहस्साइं पंचय सताणउए जोयणसए किं
चिन्निसेसुणे परिक्खेत्वेणंप०। प्रासायाणंचत्तारि परिव्वाडीओनेयव्वाओसेसानत्थि।।सक्करसणं
देव्विदस्स देवरणो सोमस्स महारणो इमे देवा आणा उवत्राय वयण निदेसे चिट्ठुत्ति तंजहा

सोमकाइशाइवा, सोमदेवयकाइयाइवा, विज्जुकुमारा, विज्जुकुमारीओ, अग्गिकुमारा,
विमान ६२॥ योजन के हैं और परिवाराइले ६४ विमान ३१। योजन के हैं. यावत् वे सोलह हजार
योजन के लम्बे चौड़े कहे हैं ५०५२७ योजन से कुछ अधिक की परिधि कही है. इस में सोयर्म सभा,
उत्पत्ति स्थान, व्यवसाय सभा वगैरह नहीं है ॥ ४ ॥ शक्र देवेन्द्र के सोप महाराजा की आज्ञा, उपपात
व निदेश में सोम महाराजा की जाति के देव, सोप देव की जाति के देव, विद्युत् कुमार, अग्नि कुमार व

शब्दार्थ

विद्युत् कुमार अग्नि कुमार अग्नि कुमारी अग्नि कुमारी अग्नि कुमारी अग्नि कुमारी अग्नि कुमारी

मूत्र

भाषार्थ

तीसरा शतक का सातवा उद्देशा

अ० अग्निकुमारी वा० वायुकुमार वा० वायुकुमारी चं० चंद्र सू० सूर्य ग० ब्रह्म न० नक्षत्र ता० तारा जे० जो अ० अन्य त० तथा प्रकार स० सर्व ते० वे उ० उन के सेवक त० उन के साहायक त० उन की भार्या जैसे म० शक्र दे० देवेन्द्र के सो० सोम म० महाराजा के आ० आज्ञा उ० उपपात व० वचन नि० निर्देश में वि० रहे ॥ ५ ॥ अ० जम्बूद्वीप में मं० मेरु की दा० दक्षिण में जा० जो इ० ये स० उत्पन्न होते हैं तं० वह ज० जैसे ग० ग्रहदंड ग० ग्रहयुगल ग० ग्रह गर्भना ग० ग्रहयुद्ध ग० ब्रह्मशृंगा-

अग्निकुमारीओ, वायुकुमारा, वायुकुमारीओ, चंदा, सूर्या, गहा, नक्षत्रा, ताराख्या,
ज्यावणो-तहस्पगारा सब्दे ते तब्भत्तिया तप्यक्खिया तब्भारिया. ॥ सक्कस्स देविंदरस्स
देवरण्णो सोमस्स महारण्णो आणा उववाय वयणनिद्वेसे चिट्ठति ॥ ५ ॥ जंबूद्वीपे
दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणें जाइ इमाइं समुप्पज्जति तं० गहदंडाइवा, महमुस-

वायुकुमार जाति के देव देवियों और चंद्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र तारे व ऐसे अन्य भी देव रहते हैं. वे सोम महाराजा की भक्ति करते हैं, उन के पक्ष में रहते हैं, उन से बताया हुआ कार्य पूर्ण करते हैं. इस तरह वे उन की आज्ञा में प्रवर्तते हैं ॥ ५ ॥ जम्बूद्वीप के मेरु से दक्षिण में जब दंड की तरह तीच्छे श्रेणी वन्य भंगलादि तीन चार ब्रह्म का दंडाकार होते, मूलज जैसे उपर नीचे श्रेणींय ब्रह्म होते,

सूत्र (सप्तम)

* मकानक राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ब्रालाप्रसादजी *

यावत् उ० चौकी पीठ सो० सोलह जो० थो०न स० सहस्र आ० लंबे वि० चौडे प०
 पचास स०सहस्र योजन पं० पांच स० सत्तानव जो० योजन स० शत कि० किश्चित् वि० विशिषकम
 प० परिधि पा० प्रासाद की च० चार प० परिपाटी ने० जानना से० शेष न० नहीं है ॥४॥ स० शक्र
 दे० देवेन्द्र के सो० सोम म० महाराजा के इ० ये दे० देव आ० आज्ञा उ० उपात व० वचन नि०निर्देश
 में वि० रहे सो० सोमनिकाय सो० सोमदेव निकाय वि० विश्वकुमार पि० विश्वकुमारी अ० अश्रिकुमार
 प्यमाणा वेसाणियाणं पमाणस्स अहं नेयव्वं जाव उवगारियलेणं सोलस जोयण सह-
 रसाइं आयाम विक्खंभेणं पणासं जोयण सहस्साइं पंचय सताणउए जोयणसए किं
 चित्रिसंसुणे परिव्खेव्वेणंप० पासायाणंचत्तारि परिव्वाडीओ नेयव्वआओ सेसानत्थि ॥४॥ सक्करस्सणं
 देविदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो इमे देवा आणा उववायवयण निद्वेसे चिट्ठंति तंजहा
 सोमकाइबाइवा, सोमदेवयकाइयाइवा, विज्जुकुमारा, विज्जुकुमारीओ, अग्गिकुमारा,
 विमान ६२॥ योजन के हैं और परिवारवाल ६४ विमान ३१। योजन के हैं यावत् वे सोलह हजार
 योजन के लम्बे चौडे कहे हैं ५०५२७ योजन से कुछ अधिक की परिधि कही है। इस में सोम सभा,
 उत्पत्ति स्थान, व्यवसाय सभा वगैरह नहीं है ॥ ४ ॥ शक्र देवेन्द्र के सोम महाराजा की आज्ञा, उपात
 व निर्देश में सोम महाराजा की जाति के देव, सोम देव की जाति के देव, विश्व कुमार, अश्रिकुमार व

अ० अमोघ पा० पूर्वका वायु प० पश्चिम का वायु ज्ञा० यावत् स० सर्वतक वायु गा० ग्राम मे दा० अग्नि
जा० यावत् स० सन्निवेश में दा० अग्नि पा० प्राणक्षय ज० जनक्षय ध० धनक्षय कु० कुलक्षय व० व्यसन
भूत अ० अनार्य जे० जो अ० अन्य त० तथा प्रकार स० शक्र दे० देवेन्द्र का सो० सोम म० महाराजा का

जात्र संबट्टयवाइवा, गामदाहाइवा, जात्र सन्निवसदाहाइवा, पाणक्खया, जणक्खिया,
धणक्खया, कुलक्खया, वसणब्भया. अणारिया जेयात्रण्णे तहप्पगारा ण ते सक्कस्स
देविदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो अष्णाया, अद्धिट्ठा, असुया, अमुया, अवि-

श्वेत वर्ण से धुंअर पडे. दिशा का रजस्वलपना होवे, चंद्र ग्रहण होवे, सूर्य ग्रहण होवे, चंद्र की चारों बाजु
में कुंडाला, सूर्य की चारों बाजु में कुंडाला, दो चंद्र देखने में आवे, दो सूर्य देखने में आवे, इन्द्र धनुष्य
होवे, इन्द्र धनुष्य के खंड होवे, बहल रहित आकाश में कपिहसन समान विद्युत् होवे, सूर्य के उदय व
अस्त समय में किरणों के विकार से रक्त कृष्णवर्ण वाले गाडे की घूरीके आकारवाला वंड होवे, पूर्व, पश्चिम,
उत्तर, दक्षिण की वायु सर्वतक होवे, ग्राम दाह यावत् सन्निवेश दाह वगैरह लक्षण होवे तब
प्राणियों का, बल का, मनुष्य का, धन का, कुल का क्षय होवे, आपत्ति में पडे, अनार्य लोगों का आग-
मन होवे वगैरह अनेक प्रकार के उपद्रव होवे. उक्त बातों शक्र देवेन्द्र के सोम महाराजा से अज्ञान-
पत्रे से नहीं हैं, विना देखी, विना सुनी, स्मरण बिना की, या अग्नि ज्ञान से नहीं देखी वैसी नहीं हैं.

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

पुनर्गन्तुं ननु पण्डितान् (पुनर्गन्तुं ननु पण्डितान्) (पुनर्गन्तुं ननु पण्डितान्)

ॐ ॐ ॐ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

टक ग० ग्रहा का अ० बदल होवे अ० बदल के वृक्ष होवे सं० संध्या होवे गं० गंधर्व नगर होवे उ० उल्का
 पात होवे दि० दिशा में दाह होवे ग० गर्जना वि० विजली होवे पं० धूलकी बु० वर्षा होवे जु० चंद्र ज०
 अंतर से अग्नि ध० धूम्र म० मटिका र० दिशाका रजस्वल्पना चं० चंद्रका ग्रहण सू० सूर्य का उ० उपराम
 चं० चंद्र परिवेप सू० सूर्यपरिवेप पं० प्रतिचंद्र पं० प्रतिमूर्य इं० इंद्र धनुष्य उ० बहुत इंद्रधनुष्य के खण्ड क० कपिहसन
 लाइवा, गहगजियाइवा, एवं गहजुद्धाइवा, गहसिंघाडुगाइवा, गहावसस्वाइवा, अब्म-
 दखलाइवा, अब्भाइवा, संझाइवा, गंधल्यनगराइवा, उक्कापायाइवा, विसावाहाइवा,
 गजियाइवा, त्रिजुयाइवा, पंसुधुटीइवा, जुवजखलालिसय, धमियमहियरउग्घाय,
 खंवेतरागाइवा, सूरवेतरागाइवा, खंद परिवेसाइवा, सूरपरिवेसाइवा, पडिखंवाइवा, प-
 डिसूराइवा, इंधणइवा, उडगमच्छकइहसियअमोह - पाईणवायाइवा, पडीणं
 ग्रह चलने से पंच समान गर्जना होवे, एक नक्षत्र में दक्षिण उत्तर श्रेणि के ग्रह का रहना सो ग्रह सुद होवे,
 मृगादक के आकार से ग्रह होवे, ग्रह पीछे जावे, बदल होवे, वृक्षाकार बदल होवे, संध्या फूले, आकाश
 में शंखर के बनये हुवे नगर होवे, उद्योत साहित ताराओं का पडना ऐसा उल्कापात होवे, दिशाओं में रक्त-
 पीत समान रंगवाला दाह संवे, मेषादिक की गर्जना होवे विद्युवका उद्योत होवे, रजोवृष्टि होवे, प्रतिपदा, द्वितीया,
 तृतीयाके दिन भी चंद्र रहे वहां लग संध्या फूली हुई रहे, व्यंतरेने किया हुवा अग्नि आकाशमें रहे, शंखर पडे,

सो० सोम महाराजा ॥ ७ ॥ क० कहां ज० जप म० महाराजा का वृ० वरशिष्ट म० महाविमान प० प्ररूपा गो० गौतम सो० सौधर्म अत्रतंसक म० महाविमान की दा० दक्षिण में सो० सौधर्म देवलोक की अ० असंख्यात जो० योजन बी० व्यतिक्रान्त हुवे ए० तहां स० शक्र के ज० यमका व० वरशिष्ट वि० विमान प० प्ररूपा अ० अर्ध ते० ब्रह्म जो० योजन स० लाख ज० जैसे सो० सोम का वि० विमान त० तेसे

एगं पलिओवमांठिई पणत्ता. ए महिड्डीए जाव ए महाणुभागे सोमे महाराया ॥ ७ ॥
 कहिणं भंते सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो जमस्स महारण्णो वरसिद्धेणामं महाविमाणे
 पणत्ते ? गोयमा ! सोहम्मवडंसयस्स महाविमाणस्स दाहिणेणं सोहम्भे कप्पे अ-
 संखेज्जाइ जौयण सहरसाइं वीइवइत्ता एत्थणं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो जमस्स
 महारण्णो वरसिद्धेणामं विमाणे पणत्ते. अद्धतेरस्स जौयण सयसहरसाइं जहा सोमस्स

पूर्व दिशा के लोकपाल सोमकी यह ऋद्धि और यह विवक्षा की है ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! शक्र देवेन्द्र के यम महाराजा का वरशिष्ट नामक महा विमान कहां कहा है ? अहो गौतम ! सौधर्म देवलोक में सौधर्मावतंसक नामक महा विमान से दक्षिण में असंख्यात योजन जावे तव वहां यम महाराजा का वरशिष्ट नामक विमान कहा है. वह साठे बारह योजन का लम्बा चौड़ा वगैरह सोम महाराजा का

शब्दार्थ (पवमं विमानं पणत्तं) अथ (मत्तवसा) अथ

सूत्र

भावार्थ

मकाशक-राजावंशदुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी

अ० अज्ञान अ० अदृष्ट अ० नहीं सूना अ० नहीं स्मरा अ० नहीं जाना ॥ ६ ॥ ते० उन सो० सोम
निकाय स० शक्र दे० देवेन्द्र के सो० सोम म० महाराजा को इ० यह अ० अपत्यदेव अ० जानहुवे हो० थै
इ० अंगारक वि० बैताल लो० लोहिताक्ष स० शनैश्वर चं० चन्द्र स० सूर्य सु० शुक्र बु० बुध व० बृहस्पति
रा० राहु स० शक्र दे० देवेन्द्र के सो० सोम म० महाराज की स० तीनभाग प० पत्योपम की ठि०
स्थिति अ० अपत्यदेव की ए० एक प० पत्योपम की ठि० स्थिति म० महर्दिक जा० यावत् म० महानुभाग

पणाय ॥ ६ ॥ तैसिंवा सोमकाइयाणं सक्कस्स देविंदस्स देवरणो सोमस्स महा-

रणो इमे अहावच्चादेवा अभिणायया होत्था तंजहा-इंगालए, वियालए, लोहियक्खे,
सणिचरे, चंदे, सुरे, सुक्के, बुहे, वहस्सई, राहु ॥ सक्कस्सणं देविंदस्स देवरणो

सोमस्स महारणो सहभागं पलिओवमं ठिई पणत्ता ॥ अहावच्चाभिणाययाणं देवाणं

अर्थात् सोम महाराजा उक्त सब बातों को जानते हैं यावत् देखते हैं ॥ ६ ॥ उन शक्र देवेन्द्र के सोम
महाराजा को पुत्रवत् आज्ञा पालनेवाले मंगल, केतु, लोहिताक्ष, शनैश्वर, चंद्र, सूर्य, शुक्र ब्रहस्पति, बराह
नामक देव हैं. उन की स्थिति एक पत्योपम व एक पत्योपम के तीन भाग में का एक भाग अधिक की
कही. और उन के अपत्य स्थान जो देव हैं उन की एक पत्योपम की स्थिति कही. ÷ अहो गौतम !

÷ यद्यपि चंद्र की एक लक्ष वर्ष अधिक व सूर्य की एक सहस्र वर्ष अधिक की स्थिति कही है. परंतु
यहां पर अधिकता की विवक्षा नहीं की गई है.

इ० इसे स० उत्पन्न करते हैं हि० विघ्नहोवे ड० राजकुमार कृत उपद्रव क० कलह वो० महाभयनि होवे
खा० मत्सर होवे म० महायुद्ध होवे म० महासंग्राम होवे म० बडे नि०पडे ए०एसे म० महान् पुरुषका नि०
पडे म० बहुतरुधिर नि० पडे दु० दूर्भूत कु० कुलरोग होवे गा० ग्रामरोग होवे म० मंडलरोग न० मगर
रोग सी० शीर्षि अ० अक्षि क० कर्ण न० नख दं० दांत वे०वेदना इ० इंद्रग्रह खं० स्कन्धग्रह कु० कुमारग्रह
ज० यक्षग्रह भू० भूतग्रह ए० ज्वरविशेष वे०दो दिनांतर ते० तीन दिनांतर चा० चार दिनांतर उ० उद्दंग

इमां समुष्पजंति, तंज्हा-डिब्वाइवा, डमराइवा, कलहाइवा, बोलाइवा, खाराइवा,

महाजुद्धाइवा, महासंगामाइवा, महासत्य निवडणाइवा, एवं महापुरिस निवणइवा,

महारुहिर निवडणाइवा, दुब्भुयाइवा, कुलरोगाइवा, गामरोगाइवा, मंडलरोगाइवा,

नगररोगा-सीस-अच्छि-कण-नह-दंत-वेयणा, इंदगहा, खंदगहाइवा, कुमारग्रह, ज-

क्खगह, भुयगह, एगाहियाइवा; वेहिय, तेहिय चाउत्थयाइवा; उब्बेगाइवा, का-

लेश वृद्धि करनेवाले शब्दोच्चार, परस्पर कुसंप, महायुद्ध, महा संग्राम, महा शल्लका निपात, महा पुरुष का काल
होना, महा रुधिर का पटना, सर्प वृश्चिकादिक की उत्पत्ति, कुल में क्षय रूप रोग, ग्राम में क्षय रूप रोग,
बहुत ग्राम के मनुष्यों में क्षय रूप रोग, नगर जन में क्षय रूप रोग, मस्तक, आंख, कर्ण, नख व दांत की
वेदना, इंद्र ग्रहादिके उपद्रव, स्कंध देवादि के उपद्रव, कुमार ग्रह, यक्ष ग्रह, भूतग्रह के उपद्रव, एकान्तर

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुक्तेश्वरसहायजी उवालाप्रसादजी *

जा० यावत् अ० अभिषेक रा० राज्यधानी त० तैसे जा० यावत् षा० प्रासादपंक्ति ॥ ८ ॥ स० शक्र के ज० यम के ई० ये दे० देव आ० आशा उ० उपपात जा० यावत् चि० रहे ज० यम के परिवार ज० यम के सामानिक के परिवार अ० असुर कुमार अ० असुर कुमारी कं० कंदर्प नि० नरक रसक अ० अभियोग जे० जो अ० अन्य त० तथा प्रकार स० सर्व ते० वे ॥ ९ ॥ जं० जंबूद्वीप के मं० मेरु की दा० दक्षिण में

त्रिमाणं तहा जाव अभिसेओ रायहाणी तहेव जाव पासायपंतीओ ॥ ८ ॥

सक्कस्सणं देविंदस्स देवरणो जमस्स महारणो इमे देवा आणा उववाय

जाव चिट्ठति, तंजहा-जमकाइयाइवा, जमदवयकाइयाइवा, पेयकभइयाइवा,

पेयदेवकाइयाइवा, असुरकुमारा, असुरकुमारीओ, कंदप्या निरयपाला, अभियोगा,

जेयावणो तहप्पगारा, सब्बे ते तब्भत्तिया, तप्पक्खिया, तब्भारिया, सक्कस्स देविंदस्स

देवरणो जमस्स महारणो, ॥ ९ ॥ जंबूद्वीपेदीपे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं जाइ

विमान जैसे कहना ॥ ८ ॥ यम कायिक, यमदेव कायिक, प्रेत कायिक, प्रेतदेव कायिक, असुर कुमार,

असुर कुमार की देवियों, कंदर्प, नरकपाल, अभियोगिक-सेवक और भी ऐसे अन्य देव यम महाराजा की

आशा, निर्देश व उपपात में रहते हैं, वैसे ही वे उन का पक्ष धारण करते हैं, और उन की भार्या की

ममान सेवा करते हैं ॥ ९ ॥ जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत की दक्षिण में विघ्न, एक राजकुमारादिकृत उषद्रव,

अनार्य ॥ १० ॥ इ० ये दे० देव अ० यथा अपत्य अ० जाने हो० थे अं० अंब अंबरिप सा० श्याम
स० सबल रु० रुद्र वै० वैरुद्र का० काल म० महाकाल अ० असिपत्र ध० धनुष्य कुं० कुंभ वा० वालुक
वे० वैतरणी ख० खर स्वर म० महाधोप प० पन्नरह आ० करे ज० यम म० महाराजा की स० तीन भाग
प० पर्योपम की ठि० स्थिति अ० यथाअप्य की ए० एक प० पर्योपम की म० महद्विक ना० यावत्
ण्णे तहृष्यगारा न ते सक्कस्स देविंस्स देवरणो जमस्स महारणो अपणाया ॥ १० ॥

तेसिंवा जमकाइयाणं देवाणं सक्कस्स जमस्स इमेदेवा अहावच्चा अभिण्णाया होत्था,
तंजहा-अंबे, अंबरिसे चेत्र; सामे, सबलत्तियावरे; रुदे, वरुदे, कालेय; महाकाले
त्तियावरे (१) असिपत्ते, धणकुंभे वालुया; वेयरणीतिय; खरस्सरे, महाधोसे, एमेपण्णर
साहिवा। सक्कस्सणं देविंस्स देवरणो जमस्स महारणो सति भागं पलिओवमं ठिई
पन्नत्ता ॥ अहावच्चाभिण्णायाणं देवाणं एगं पलिओवमं ठिई पन्नत्ता। ए माहिड्डीए जाध

गुप्त नहीं होती है इन को जानते हैं, देखते हैं, व स्पर्ण करते हैं ॥ १० ॥ अम्ब, अम्बरिष, साम, सबल,
रुद्र, वैरुद्र, काल, महाकाल, असिपत्र, धनुष्य, कुंभ, वालुक, वैतरणी, खरस्वर और महाधोप ये पंद्रह
परमार्थी यम महाराजा को अपत्स्वत्त् विनयवन्त रहते हैं। यम महाराजा की एक पर्योपम और एक
पर्योपम के तीसरे भाग अधिक की स्थिति कही है। उन के पुत्र स्थान कार्य करनेवाले देव की एक

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेव सहायजी ज्वालामुखी *

का० काम खा० खासी सा० श्वास ज० ज्वर दा० दाह क० कच्छ को० कोड अ० अर्जीर्ण पं० पांडुरोग
अ० हरसरोग भ० भगंदर हि० हृदयशूल म० मस्तकशूल जो० योनिशूल पा० पतली शूल कु० कुक्षिशूल
गा० ग्रामपरकी न० नगर खे० खेड क० कर्कट दो० द्रोणमुख म० मंडप प० पाटन आ० आश्रम सं०
संवाह स० सन्निवेश मरकी पा० पाणक्षय ध० धनक्षय ज० जनक्षय कु० कुलक्षय व० वसनभूष अ०

साइवा, खासाइवा, जराइवा, दाहाइवा, कच्छ कोहाइवा, अजीरया, पंडुरोगा ;
अरसाइवा, भगंदलाइवा, हियय सूलाइवा मरथय सूलाइवा, जोणिसूल, पारुसुल, कु-
च्छिसूल, गाममारीइवा, नगर खेड-कवड-द्रोणमुह-मंडप-पट्टण-आसमसंवाह-सणिवे-
स मारीइवा, पाणकखय, धणकखय-जणकखय-कुलकखय-त्रसणभूमणारिया जेयाव-

ज्वर, दो दिनांतर ज्वर, तीन दिनांतर ज्वर, चार दिनांतर ज्वर, इष्ट के वियोग से उद्वेग, श्वास, खांसी,
ज्वर, दाह, कच्छ, कोड, अर्जीर्ण, पांडुरोग, हरस (मसा) भगंदर, हृदय शूल, मस्तक शूल, योनि शूल,
पमली शूल, कुसिं शूल, ग्राम की मारी, नगर, खेड, कवड, द्रोण मुख, मंडप, पट्टण, आश्रम, संवाह व
सन्निवेश में मरकी, पाणियों का क्षय, धन का क्षय, मनुष्यों का क्षय, गृहों का क्षय, वस्त्राभूषणों का क्षय,
व भ्रमार्थ म्हेच्छ लोगों का आगमन होवे जैसे, ही अन्य भी ऐसे उपद्रव होवे. उक्त बातों यम महाराजों से

अनर्थ ॥ १० ॥ इ० ये दे० देव अ० यथा अपत्य अ० जाने हो० थे अं० अंत्र अंत्रपरिप सा० श्याम
स० सबल रु० रुद्र वै० वैश्व का० काल म० महाकाल अ० असिपत्र ध० धनुष्य कुं० कुंभ वा० बालुक
वे० वैवर्णी ख० खर स्वर म० महाधोप प० पत्नरह आ० कहे ज० यम म० महाराजा की स० तीन भाग
प० पर्योपम की ठि० स्थिति अ० यथाअप्य की ए० एक प० पर्योपम की म० महर्दिक ना० यावत्
ण्णे तहृष्यगारा न ते सक्कस्स देविंस्स देवरण्णो जमस्स महारण्णो अण्णायया ॥ १० ॥

तेसिंवा जमकाइयाणं देवाणं सक्कस्स जमस्स इमेदंथा अहावच्चा अभिण्णायया होत्था,
तंजहा-अन्ने, अंत्ररिसे चेत्र; सामे, संवलंत्तियावरे; रुद्रे, वरुद्रे, कालेय; महाकाले
त्तियावरे (१) असिपत्ते, धणकुंभे बालुया; वैयरणीत्तिय; खरस्सरे, महाधोसे, एमेपण्णर
साहिंथा। सक्कस्सणं देविंस्स देवरण्णो जम्मस्स महारण्णो सति भागं पलिओत्रमं ठिई
पन्नत्ता ॥ अहावच्चाभिण्णाययाणं देवाणं एगं पलिओत्रमं ठिई पन्नत्ता। ए माहिंडीए जाध

गुप्त नहीं होती है इन को जानते हैं, देखते हैं, व स्मरण करते हैं ॥ १० ॥ अम्ब, अम्बरिश, साम, सबल,
रुद्र, वैरुद्र, काल, महाकाल, असिपत्र, धनुष्य, कुंभ, बालुक, वैतरणी, खरस्वर और महाधोप ये पंद्रह
परमार्थी यम महाराजा को अपत्त्वत्त् विनयवंत रहते हैं। यम महाराजा की एक पर्योपम और एक
पर्योपम के तीसरे भाग अधिक की स्थिति कही है। उन के पुत्र स्थान कार्य करनेवाले देव की एक

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जी सहायजी ज्वालामसादजी *

का० काम खा० खासी सा० श्वास ज० ज्वर दा० दाह क० कच्छ कौ० कोह अ० अजीर्ण पं० पांडुरोग
अ० हरसुरोग भ० भंगंदर हि० हृदयशूल म० मस्तकशूल नो० योनिशूल पा० पसली शूल कु० कुक्षिशूल
गा० ग्रामपरकी न० नगर खे० खेड क० कर्कट दो० द्रोणमुख म० मंडप प० पाटन आ० आश्रम सं०
मंत्राह स० सन्निवेश मरकी पा० प्राणक्षय घ० धनक्षय ज० जनक्षय कु० कुलक्षय व० वसनभूष अ०

साइवा, खासाइवा, जराइवा, दाहाइवा, कच्छ कोहाइवा, अजीरया, पंडुरोगा ;
अरसाइवा, भंगंदलाइवा, हियय सूलाइवा मत्थय सूलाइवा, जोणिसूल, पारुसूल, कु-
च्छिसूल, गाममारीइवा, नगर खेड-कवड-द्रोणमुह-मंडव-पट्टण-आसमंसवाह-सणिवे-
स मारीइवा, पाणक्खय, धणक्खय-जणक्खय-कुलक्खय-वसणब्भुयमणारिया जयाव-

ज्वर, दो दिनांतर ज्वर, तीन दिनांतर ज्वर, चार दिनांतर ज्वर, इष्ट के वियोग से उद्वेग, श्वास, खासी,
ज्वर, दाह, कच्छ, क्रोड, अजीर्ण, पांडुरोग, हरस (मसा) भंगंदर, हृदय शूल, मस्तक शूल, योनि शूल,
पसली शूल, कुक्षि शूल, ग्राम की मारी, नगर, खेड, कवड, द्रोण मुख, मंडप, पट्टण, आश्रम, संवाह व
सन्निवेश में मरकी, प्राणियों का क्षय, धन का क्षय, मनुष्यों का क्षय, गृहों का क्षय, वस्त्राभूषणों का क्षय,
व अनापि म्नेच्छ लोगों का जागमने होवे जैसे, ही अन्य भी ऐसे उपद्रव होवे. उक्त बातों यम महाराजों से

कुमार ना० नाग कुमारी उ० उदधिकुमार उ० उदधिकुमारी थ० स्थानित कुमार थ० स्थानित कुमारी जे० जो अ० अन्य त० तथारूप स० सर्व ते० ने उ० उन के नेवक जा० यावत् चि० रहते हैं ॥ १३ ॥ जं० जंबूद्वीप के मं० मेरु की दा०दक्षिण में आ० जो इ० ये स० उत्पन्न होवे अ० अतिवृष्टि मं० मंदवृष्टि सु० सुवृष्टि दु० खराब वृष्टि उ० पानीका उद्भेद उ० तलावादि भरावे उ० थोडा पानी वहे उ० बहुत पानी वहे १० प्रयाहचले गा० ग्राम में पानीचले जा० यावत् स० सन्निवेश में पानी चले पा० प्राणक्षय जा०

नागकुमारा, नागकुमारीओ, उदहिकुमारा, उदहिकुमारीओ, थणियकुमारा, थणियकुमारीओ, जेयावण्णे तहप्पगारा सव्वे ते तब्भत्तिया. जाव चिट्ठति ॥ १३ ॥

जंबुदीवदीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं जाइ इमाइं समुप्पजंति, तंजहा-अइवासा-इवा, मंदवासाइवा, सुवुट्ठीइवा, दुवुट्ठीइवा, उदुब्भेयाइवा, उदण्णीलाइवा, उदवाहा-इवा, पवाहाइवा, गामवाहाइवा, जाव सन्निवेशवाहाइवा, पाणक्खया जाव तेसिं वा,

कुमार, उदधि कुमारियो, स्थानित कुमार व स्थानित कुमारियो यावत् उनका भार्यासमान कार्य करते हैं ॥ १३ ॥ जम्बूद्वीपके मेरुकी दक्षिणमें अतिवृष्टि, मंदवृष्टि, सुवृष्टि, दुवृष्टि, पर्यतकेतट व नदियोंमें पानीका चलना, तलावादि क भर कर पानी का चलना, थोडा पानी चलना, बहुत पानी चलना, ग्राम यावत् सन्निवेश वह जावे इतना पानी चलना वगैरह होवे. इस से प्राणियों का क्षय यावत् धन वगैरह का क्षय होवे. यह सब वरुण

प्रकाशक-राजावहादुर, लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामुखी

ज० यम प० महाराजा ॥ ११ ॥ क० कही भं० भगवन् व० वरुण प० महाराजा का स० स्वयं जल म०
 महाविमान भो० गौतम त० उस सो० सौधर्म अत्रतंसक म० महाविमान की प० पश्चिम में सो० सौधर्म
 देवलोक में अ० असेख्यात जा० यावत् ज० जैसे सो० सोम का त० तैसे वि० विमान राज्यधानी भा०
 कहना जा० यावत् पा० प्रामाद अत्रतंसक ण० विशेष ना० नाम ना० नाना प्रकार ॥ १२ ॥ व० वरुण
 के जा० यावत् वि० रहते हैं व० वरुण का परिवार व० वरुण के० सामानिक का परिवार ना० नाग
 जमे महाराया महाराया ॥ ११ ॥ कहिणं भंते ! सक्स्स देविदस्स देवरणो वरुण-
 स्स महारत्तो, सयंजले नामं महाविमाणे पञ्चते ? गोयसा ! तस्सणं सोहम्मवुडं
 सयस्स महाविमाणस्स पच्चत्थिमणं सोहम्मकण्ये असंख्वाइं, जहा सोमस्स तेहा
 विमाण रायहाणीओ भाणियव्वा जात्र पासाय वडंसया. णवरं नामं नाणत्तं ॥ १२ ॥
 सक्करस्सणं वरुणस्सणं जात्र चिट्ठति तंजहा-वरुणकाइयाइवा, वरुणदेवकाइयाइवा,
 पल्लोपम की स्थिति कही है. इस तरह अहां गौतम ! यह महर्द्धिक यावत् महाराजा है. ॥ ११ ॥ अहो भगवन् !
 युक्त देवेन्द्र के वरुण नामक महाराजा का सतंजला नामक महाविमान कहाँ है ? अहो गौतम ! सौधर्मवतं
 मत्त विमान की पश्चिम में असेख्यात योजन जावे वहां वरुण महाराजा की सतंजला नामक राज्यधानी कही
 वमका वर्णन सोममहाराजा जैसे करना ॥ १२ ॥ वरुण का बिक्र, वरुणदेव कायिक, नामक राजा का नाम है.

शब्दार्थ सुत्र

शब्दार्थ सुत्र

प्रकाशक-राजाबहादुर लाल सुखदेवसहायजी जालाप्रसादजी

ज० यम म० महाराजा ॥ ११ ॥ क० कहाँ भं० भगवन् व० वरुण म० महाराजा का स० स्वयं जल म०
पद्मविमान गो० गौतम त० उस सो० सौधर्म अवतंसक म० महाविमान की प० पश्चिम में सो० सौधर्म
देवलोक में अ० असंख्यात जा० यावत् ज० जैसे सो० सोम का त० तैसे वि० विमान राज्यधानी भा०
कहना जा० यावत् पा० प्रासाद अवतंसक ण० विशेष ना० नाम ना० नाना प्रकार ॥ १२ ॥ व० वरुण
के जा० यावत् वि० रहते हैं व० वरुण का परिवार व० वरुण के० सामानिक का परिवार ना० नाग

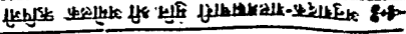
जमे महाराया महाराया ॥ ११ ॥ कहिणं भंते ! सक्कस्स देविदस्स देवरणो वरुण-
स्स महारत्तो, सयंजले नामं महाविमाणे पंचते ? गोयमा ! तत्सणं सोहम्मवडं
सयस्स महाविमाणस्स पच्चत्थिमंणं सोहम्मकण्ये असंखेज्जाइं, जहा सोमस्स तेहा
विमाण रायहाणीओ भाणियव्वा जाव पासाय वडंसया. णवरं नामं नाणत्तं ॥ १२ ॥
सक्कस्सणं वरुणरत्तणं जाव चिट्ठति तंजहा वरुणकाइयाइवा, वरुणदेवकाइयाइवा,

पल्योपम की स्थिति कही है. इस तरह अहो गौतम ! यह महर्द्धिक यावत् महाराजा है. ॥ ११ ॥ अहो भगवन् !
शुक्र देवेन्द्र के वरुण नामक महाराजा का सतंजल नामक महाविमान कहाँ है ? अहो गौतम ! सौधर्मावतं
पक विमान की पश्चिम में असंख्यात योजन जावे वहाँ वरुण महाराजा की सतंजला नामक राज्यधानी कही
रामका रणन सोममहाराजा जैसे करना ॥ १२ ॥ वरुण का किक, वरुणदेव का पिक, नामकुमार, नागकुमारिये, उदीध

शब्दार्थ

सुत्र

र्थ



के० बल्यु ना० नाम का म० महाविमान गो० गौतम त० उस सो० सौधमवतंसक म० महाविमान की उ० उत्तर में ज० जैसे सो० सोम वि० विमान की रा० राज्यधानी की व० वक्तव्यतां ने० जानना जा० यात्रत वा० प्रासादावतंसक ॥ १५ ॥ स० शक्र के वे० वैश्रमण को इ० ये दे० देव आ० आज्ञा उ० उपपात व० वचन नि० निर्देश में चि० रहते हैं वे० वैश्रमण कायिक वे० वैश्रमण देव कायिक सु० सुवर्ण कुमार सु० सुवर्ण कुमारीका दी० द्वीपकुमार दी० द्वीप कुमारी का दि० दिशाकुमार दि० दिशा कुमारी का वा०

महाविमाने पं० ? गोयमा ! तस्सणं सोहम्मवडंसयस्स महाविमाणस्स उत्तरेणं जहा सोमस्स विमाणस्स रायहाणियवत्तव्वया तथा नेयव्वा जाव पासायवडंसया ॥ १५ ॥ सक्कस्सणं वेसमणस्स इमे देवा आणाउववायवयणनिद्देसे चिट्ठति, तंजहा-वेसमण काइयाइवा, वेसमणदेवकाइयाइवा, सुवण्णकुमारा, सुवण्णकुमारीओ, दीवकुमारा,

मण महाराजा का बल्यु नामक महा विमान कहां है ? अहो गौतम ! सौधर्म देवलोक में सौधमवतंसक महाविमान की उत्तर में असंब्यतात योजन जवै वहां बल्यु नाम का महा विमान आता है. उस का सब वर्णन सोम महाराजा की राज्यधानी जैसे कहना ॥ १५ ॥ वैश्रमण कायिक, वैश्रमण देवकायिक, सुवर्ण कुमार, द्वीप कुमार व वाणव्यंतर देव व उन की देवियों वैश्रमण महाराजा की

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेव सहायजी ज्वालामसादजी *

यावत् ते० उन व० वरुण के० जा० यावत् अ० यथा अपत्य क० कर्कोटक क० कर्दम अं० अंजन सं०
शंखमाल पुं० पुंड्र प० पलाश मो० मोन ज० जय द० दधिमुल अ० अयंपुल का० कातरिक व० वरुण
की दे० देशरुणे दो० दोपल्योपम की ठि० स्थिति अ० अपत्य देव की ए० एक पल्योपम की म०
महार्द्रिक प० कहे व० वरुण म० महाराजा ॥ १४ ॥ क० कहां भं० भगवन् स० शक्र के वे० वैश्रमण

वरुणकाइयाणं देवाणं सक्कस्सणं वरुणस्स जाव अहावच्चाभिण्णयाया होत्था, तंजहा-
कक्कोडए, कदमए, अंजणे, संखवालए, पुंडे, पलासे, मोये, जये, दहिमुहे, अयंपुले,
कायरिए ॥ सक्कस्सणं वरुणस्स देसूणाइं दो पलिओवमाइं ठिई पणत्ता, अहावच्चा
भिण्णयाणं देवाणं एंगंपलिओवमं ठिई पणत्ता, ए महिड्डीए जाव वरुणे महाराया
॥ १४ ॥ कहिणं भंते ! सक्कस्स देविदस्स देवरणो वेसमणस्स महारणो वग्गुनामं

महाराजा जानते हैं यावत् याद करते हैं. वरुण महाराजा को कर्कोटक, कर्दमक, अंजन, शंखपाल,
पुंड्र, पलाश, मोय, जय, दधिमुल, अयंपुल कातरिक नामक देवों पुत्रवत् विनयवाले आदिशमें प्रवर्तनेवाले होते
हैं. इन की देशरुणे दो पल्योपम की स्थिति कही है, और अपत्य समान देवकी एक पल्योपम की स्थिति
कही. अहो गौतम ! वरुण र.जा की ऐसी ऋद्धि कही है ॥ १४ ॥ अहो भगवन् ! शक्र देवेन्द्र का वैश्र-

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

के० वल्यु ना० नाम का म० महाविमान गो० गौतम त० उस सो० सौधर्मावतंसक म० महाविमान की उ० उत्तर में ज० जैसे सो० सोम वि० विमान की रा०राज्यधानी की व० वक्तव्यतां ने० जानना जा० यात्रत वा० प्रासादावतंसक ॥ १५ ॥ स० शक्र के वे० वैश्रमण को इ० ये दे० देव आ० आज्ञा उ० उपपन्न व० वचन नि० निर्देश में चि० रहते हैं वे० वैश्रमण कायिक वे० वैश्रमण देव कायिक सु० सुवर्ण कुमार सु० सुवर्ण कुमारिका दी० द्वीपकुमार दी० द्वीप कुमारी का दि० दिशाकुमार दि० दिशा कुमारी का वा०

महाविमाने पं० ? गोयमा ! तस्सणं सोहम्मवडंसयस्स महाविमाणस्स उत्तरेणं जहा सोमस्स विमाणस्स रायहाणियवत्तव्वया तथा नेयव्वा जाव पासायवडंसया ॥ १५ ॥ सक्कस्सणं वेसमणस्स इमे देवा आणाउववायवयणानिद्देसे चिट्ठत्ति, तंजहा-वेसमण काइयाइवा, वेसमणदेवकाइयाइवा, सुवण्णकुमारा, सुवण्णकुमारीओ, दीवकुमारा,

मण महाराजा का वल्यु नामक महा विमान कहां है? अहो गौतम ! सौधर्म देवलोक में सौधर्मावतंसक महाविमान की उत्तर में असंख्यात योजन जावे वहां वल्यु नाम का महा विमान आता है. उस का सब वर्णन सोम महाराजा की राज्यधानी जैसे कहना ॥ १५ ॥ वैश्रमण कायिक, वैश्रमण देवकायिक, सुवर्ण कुमार, द्वीप कुमार, दिशा कुमार व वाणव्यंतर देव व उन की देवियों वैश्रमण महाराजा की

* प्रकाशक-रानाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

वाणव्यंतर वा० वाण व्यंतरी जे० जो अ० अन्य त० तैसे स० सब ए० ये त० उस की भक्तिवलि जा०
यावत् वि० रहते हैं ॥ १६ ॥ जं० जम्बूद्वीप के मं० मेरु की दा० दक्षिण में जा० जो इ० ये स० उत्पन्न
होते हैं तं० वह न० जैसे अ० लोहे की खान तं० चांदीकी खान तं० तांबेकी खान ए० ऐसे सी० सीसे
की खान दि० चांदीकी खान सु० सुवर्ण की खान र० रत्नकी खान व० वज्र रत्न की खान व० द्रव्य
वृष्टि हि० चांदी सु० सुवर्ण की वर्षा र० रत्न व० वज्र आ० आभरण प० पत्र पु० पुष्प फ० फल धी०
धीज प० माला व० वर्ण जु० चूर्ण गं० गंध व० वस्त्र की वा० वर्षा हि० हिरण्य की बु० वृष्टि सु० सुवर्ण

दीवकुमारीओ ; दिसाकुमारा, दिसाकुमारीओ, वाणमंतरा, वाणमंतरीओ, जेयावणणे
तहप्पगारा सब्बेते तब्भत्तिया जाव चिट्ठति ॥ १६ ॥ जंबुद्वीविदीत्रे मंदरस्स पव्वयस्स

दाहिणेण जाइं इमाइं समुप्पज्जंति. तंजहा-अयागराइवा, तउयागराइवा, तंवागराइवा,
एवं सीसागराइवा, हिरण सुवण रयण वइरागराइवा, वसुहाराइवा, हिरणवासाइवा,
सुवणवासाइवा, रयण-वइर-आभरण-पस-पुष्प-फल-बीय-मल्ल-वण्ण-चुण्ण-गंध-वत्थ-

आश, निर्देश व उपपात में रहते हैं उन की सेवा भक्ति करते हैं यावत् उनका भार्या समान कार्य करते हैं
॥ १६ ॥ जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत की दक्षिण में लोहे की खान, तांबे की खान, सीसे की खान, हिरण्य
[चांदी] की खान, सुवर्ण की खान, रत्न, वज्र, आभरण, पत्र, पुष्प, फल, बीज, माल्य, वर्ण, चूर्ण,

शब्दार्थ

(शब्दार्थ) (शब्दार्थ)

सूत्र

भावार्थ

की र० रत्न व० वज्र आ० आभरण प० पत्र पु० पुष्प फ० फल धी० धीज म० माल्य व० वर्ण गं० गंग्य
 व० वस्त्र भा० भाजन की बु० वृष्टि स्त्री० क्षीर कौ० बु० वृष्टि सु० सुकाल दु० दुष्काल अ० अल्पद्वय म०
 महर्ष्य सु० सुभिक्ष दु० दुर्भिक्ष क० क्रय वि० विक्रय स० सन्निधि सं० संचय नि० निधि नि० निधान
 चि० बहुत काल के पो० जीर्ण प० रहित सा० स्वामीवाले प० सेवक रहित प० मार्ग रहित ग० गोत्रा

वासाइवा, हिरण्यवृष्टीइवा, सुवर्ण-रयण-वइर-आभरण-पत्त-पुष्प-फल-वीय-मह्ल-

वर्ण-गंध-वत्थ भायण-वृष्टीइवा, खीरवृष्टीइवा-सुयालाइवा, दुष्कालाइवा, अप्पुग्घाइवा,

महग्घाइवा, सुभिक्षवाइवा दुर्भिक्षवाइवा, कयत्रिक्याइवा, सन्निहीइवा, सान्निचयाइवा,

निहीइवा; निहाणाइवा, चिरपोराणां, पहीणसामियाइवा, पहीणसेउयाइवा, पहीण-

मग्गाणिवा, पहीण गोत्तागाराइवा, उच्छिण सामियाइवा, उच्छिणसेउयाइवा,

उच्छिन्नगोत्तागाराइवा, सिंघाडग-तिग - चउक्क-चच्चर-चउम्महु-महापह-पहेसु, नगर-

गंध व वस्त्र की वर्षा, हिरण्य, सुवर्ण, रत्न, वज्र, आभरण, यावत् वस्त्र भाजन की वृष्टि, क्षीर की वृष्टि,

सुकाल, दुष्काल, अल्प मूल्य, बहु मूल्य, सुभिक्ष, दुर्भिक्ष, क्रयविक्रय, संचय, संग्रह, निधि, निधान,

बहुत काल का संचित कियाहुवा द्रव्य, स्वामी रहित बना हुवा द्रव्य, सेवक रहित बना हुवा द्रव्य, नष्ट

मार्ग, नष्ट गोत्राकार, विच्छिन्न स्वामी, विच्छिन्न सेवक, विच्छिन्न गोत्राकार जैसे ही श्रृंगारक के आकार में

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

गार रहित उ० विछिन्न स्वाभी वाले सि० शृंगाटक ति० तीत च० चौक च० चचर च० चउमुख म०
महापथ प० प्रथ में न० नगर की मोरी में सु० इमशान में गि० पर्वत क० गुफा सं० शान्ति स्थान से०
शैलोपस्थान भ० भवन गृहमें स० रखा हुवा चि० रहता है ण० नहीं ता० उसे स० शक्र दे० देवेन्द्र दे०
देवराजा का वे० वैश्रमण म० महाराजा अ० अज्ञात अ० अश्रुत अ० अजान अ० अविज्ञात ॥ १७ ॥
ते० उन वे० वैश्रमण कायिक दे० देवों को स० शक्र दे० देवेन्द्र दे० देवराजा वे० वैश्रमण को इ० ये

निद्धमणेसुवा, सुसाण गिरि कंदर संति सेलोवट्टाण भवणगिहेसु सण्णिविखत्ताइं
चिट्ठति, ण ताइं सक्कस्स देविंदस्स देवरणो वेसमणस्स महारणो अण्णाया अदिट्ठा,
अस्सुया, अम्मुया, अत्रिण्णाया, ॥ १७ ॥ तेसिंवा वेसमणकाइयाणं देवाणं
सक्कस्स देविंदस्स देवरणो वेसमणस्स इमे देवा अहावच्चा अभिण्णाया होत्था,

तीन रस्ते मिले वहां, चौक, चचर, चउमुख, महापथ, राजमार्ग, नगर की नालियों में, इमशान, गिरि,
गुफा, शान्तिगृह, शैलोपस्थान, व भवनगृहमें रखाहुवा द्रव्य वगैरह होते हैं वे शक्र देवेन्द्रके वैश्रमण-महा-
राजा से अज्ञात, अदृष्ट, अश्रुत, अविज्ञात नहीं हैं. वे सब बातों जानते हैं ॥ १७ ॥ पूर्णभद्र, माणभद्र,
नालिभद्र, सुवर्णभद्र, शक्ररत्न, पूर्णरत्न, सर्वाण, सर्वयश, सर्वे कार्ये सविद्ध, अर्षोध अशान्त वगैरह

शब्दार्थ सूत्र वाच्य

शब्दार्थ

सूत्र

वाच्य

दे० देव अ० यथाअपत्य अ० अभिज्ञात हो० हैं पु० पूर्णभद्र मा० माणिभद्र सा० शालिभद्र सु० सुमन भद्र च० चक्र
रत्न पु० पूर्णरत्न स० सर्वाण स० सर्व यश स० सर्व कामसिद्ध अ० अशान्त स० शक्र दे० देवेन्द्र
दे० देवराजा की वे० वैश्रमण म० महाराजा की दो० दोपत्योपम की ठि० स्थिति प० प्ररूपी अ० यथा
अपत्य अ० अभिज्ञात दे० देवों की ए० एक प० पत्योपम की ठि० स्थिति प० प्ररूपी ए० यह म० महाद्विक
जा० यावत् वे० वैश्रमण म० महाराजा से० ऐसे ही भ० भगवन् ॥ ३ ॥ ७ ॥ =

तंजहा-पुण्णभद्रे, माणिभद्रे, शालिभद्रे, सुमणभद्रे, चक्ररक्खे, पुण्णरक्खे, सव्वाणे,
सव्वजसे, सव्वकाम सामिद्धे, अमोहे, असंते, ॥ सक्कस्सणं देविंदस्स देवरण्णो वे-
समणस्स महारण्णो दो पलिओवमाइं ठिई प० ॥ अहावच्चाभिण्णायणं देवाणं एणं
पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ए महिड्डीए जाव वेसमणे महाराया. सेवं भंते भंतेत्ति ॥
तइयसए सत्तमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ ७ ॥ *

वैश्रमण महाराजा को अपत्यवत् विनय करनेवाले देवों हैं. उन की दो पत्योपम की स्थिति कही है और
अपत्य देवों की एक पत्योपम की स्थिति कही है. अहो गौतम ! यह वैश्रमण की ऋद्धि यावत् महानु-
भाग का वर्णन कहा ॥ १८ ॥ अहो भगवन् ! आप जैसे फरमाते हो वैसे ही हैं. यह तीसरा शतकका
सातवा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ ३ ॥ ७ ॥ =

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

रा० राजगृह न० नगर जा० यावत् प० पर्युपासना करते ए० ऐशे व० बोले अ० असुर कुमार भं० भगवन् दे० देव को क० कितने दे० देव आ० आधिपत्य जा० यावत् चि० रहते हैं गो० गौतम द० दश दे० देव आ० आधिपत्य जा० यावत् वि० विचरते हैं तं० वह ज० यथा च० चमर अ० असुरेन्द्र सो० सोम ज० यम व० वरुण वे० वैश्रमण व० बलि व० वैरोचनेन्द्र व० वैरोचन राजा ॥ १ ॥ ना० नाग रायगिहे नगरे जाव पञ्जुवासमाणे एवं वयासी-असुरकुमाराणं भंते देवाणं कइ- देवा आह्वेवचं जाव चिट्ठंति ? गोयमा ! दसदेवा आह्वेवचं जाव विहरंति, तंजहा- चमरे असुरिंदे असुरराया सोमे, जमे, वरुणे, वेसमणे ॥ बली वइरोयणिंदे वइरोयण- राया, सोमे, जमे वरुणे, वेसमणे ॥ १ ॥ नागकुमाराणं भंते ! पुच्छा । गोयमा !

सातवे उद्देशे में लोकपालों की वक्तव्यता कही। अब इस उद्देशे में देवताओं के स्वामी का कथन करते हैं। राजगृही नगरी में श्री श्रमणः भगवन्तं महावीर स्वामी पधारं। परिपदा वंदन करने को आई, धर्मोपदेश मुनकर पीछी गई। उस समयमें श्री श्रमण भगवंतं महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार कर श्री गौतम स्वामी ऐसा प्रश्न पूछने लगे किं अहो भगवन् ! असुरकुमार जाति के देवों को कितने देव स्वामीपने रहते हैं ? अहो गौतम ! असुर कुमार जाति के देवों को दश देव स्वामीपने रहते हैं। दक्षिण दिशा के चमर नामक अमुर का राजा असुरेन्द्र और सोम, यम, वरुण व वैश्रमण यह चार उन के लोकपाल। उत्तर दिशा के

कुमार की पु० पृच्छा गो० गौतम द० दश दे० देव आ० अधिपत्य जा० यावत् वि० विचरते हैं ध० धरण ना० नागकुमारेन्द्र ना० नाग कुमार राजा का० कालवाल को० कोलवाल सं० संखवाल से० शेलवाल भू० भूतानेन्द्र ज० जैसे ना० नागकुमारेन्द्र की ए० इस व० वक्तव्यता से ए० यह ए० ऐसे इ० इनका ने० जानना ॥ २ ॥ सु० सुवर्ण कुमार का वे० वेणुदेव वे० वेणुदाल चि० चित्र वि० विचित्र

दसदेवा आहेवच्चं जाव विहरंति तंजहा-धरणे, नागकुमाराराया, काल-
वाले, कोलवाले, सेलवाले, संखवाले ॥ भूयणिंदे नागकुमारिंदे नागकुमाराराया
कालवाले, कोलवाले, संखवाले, सेलवाले ॥ जहा नागकुमारिंदाणं एयाए वत्तव्वयाए,
एतं एवं इमाणं नेयव्वं ॥ २ ॥ सुवण्णकुमारणं वेणुदेवे, वेणुदाली, चित्ते, विचित्ते ।

बलि नामक वैरोचनेन्द्र और उन के सोम, यम, वरुण व वैश्रमण नामक लोकपाल यह दश हुए ॥ १ ॥
अहो भगवन् ! नाग कुमार देव के कितने अधिपति देव कहे हैं ? अहो गौतम ! दश अधिपति देव
कहे हैं. दक्षिण दिशा के धरण नामक नाग कुमारेन्द्र और उन के कालवाल, कोलवाल, संखवाल व से-
लवाल यह चार लोकपाल; और उत्तर दिशा के भूतानेन्द्र व उन के कालवालादि चार लोकपाल मीलकर
दश हुए ॥ २ ॥ सुवर्ण कुमार को दश देव अधिपतिपना करनेवाले हैं. वेणुदेव और वेणुदाल ये दोनों

शब्दार्थ (संस्कृत) पद्यार्थ (संस्कृत) पद्यार्थ (संस्कृत) पद्यार्थ (संस्कृत) पद्यार्थ (संस्कृत)

रूप ज० जलकान्त ज० जलप्रभ ॥ ७ ॥ दि० दिशांकुमार को अ० अमितगति अ० अमितवाहन तु० त्वरितगति खि० क्षिप्रगति भी० सिंहगति भी० सिंह विक्रमगति ॥ ८ ॥ वा० वायुकुमार को वे० वेलंब प० प्रभंजन का० काल म० महाकाल अ० अंजन रिं० रिष्ट ॥ ९ ॥ य० स्थानित कुमार को धो० धोप म० महाधोप आ० आवर्त वि० व्यावर्त नं० नान्दियावर्त म० महान्दियावर्त ऐ० ऐसे भा० कहना ज० जैसे अ० असुरकुमार को ॥ १० ॥ पि० पिशाच की पु० पृच्छा गो० गौतम दो० दो दे० देव आ० आधि

जलप्यशा ॥ ७ ॥ दिसाकुमाराणं अमियगई, अमियवाहणे, तुरियगई, खिप्पगई, सीहगई, सीहत्रिक्कमगई ॥ ८ ॥ वाउकुमाराणं वेलंब, पभंजण, काल, महाकाल, अंजण, रिष्टा, ॥ ९ ॥ थणियकुमाराणं घोस, महाघोस, आवच, त्रियावच, नान्दियावच, महान्दियावत्ता एवं भाणियव्वं ॥ १० ॥ सोमिय.

जलप्रभ ऐसे चार २ लोकपाल कहे हैं ॥७॥ दिशा कुमार को अमितगति अमितवाहन ऐसे दो इन्द्र उन के तरित गति, क्षिप्रगति, सिंहगति व सिंह विक्रमगति ऐसे चार २ लोकपाल हैं ॥८॥ वायुकुमार को वेलंब व प्रभंजन ऐसे दो इन्द्र और उन के काल, महाकाल, अंजन व रिष्ट ऐसे चार २ लोकपाल ॥९॥ स्थानित कुमार क धोप व महाधोप ऐसे दो इन्द्र और आवर्त, वियावर्त, नान्दियावर्त व महान्दियावर्त ऐसे चार २ लोकपाल इन तरह भुवनपति के २० इन्द्र व ८० लोकपाल मिलकर १०० हुए ॥१०॥ सोम नामक लोकपाल का नाम कहेते

जो ज्योतिषियों के दो० दो दे० देव च० चंद्र सूर्य ॥ १३ ॥ सो० सौधर्म ई० ईशान में क० कितने दे० देव आ० आधिपत्य वि० विचरते हैं गो० गौतम द० दशदेव वि० विचरते हैं स० शक्र दे० देवेन्द्र दे० देवराजा सो० सोम ज० यम व० वरुण घे० वैश्रमण ई० ईशान ए० यह व० वक्तव्यता स०

वाणं दो देवा आहेवच्चं जाव विहरंति. तंजहा चंदे, सुरेय ॥ १३ ॥ सोहम्मीसाणे-

सुणं भंते ! कप्पेसु कइदेवा आहेवच्चं जाव विहरंति ? गोयमा ! दसदेवा जाव

विहरंति, तंजहा-सक्के देविदे देवराया, सोमे, जमे, वरुणे वेसमणे ; इसाणे देविदे

देवराया सोमे, जमे, वरुणे, वेसमणे ॥ १४ ॥ एसा वच्चव्या सव्वंसुत्ति कप्पेसु एएचेत्त

जाति के देव कहते हैं: आणपत्ती, पाणपत्ती, इसीवाय, भुइवाय, कुन्दिय, महाकन्दिय, कोहंग व पयंग देव. इन आठों को दो २ देव अधिपतिपना करते हैं. उन के नाम सन्निहित, सामानिक, घाई, वघाई, इसी, इसीवाल, ईश्वर, महेश्वर, सुवत्थ, विशाल, हास, हासरति, सेय, महासेय, पयग, पयगवति. यों सोलह वाणव्यंतर के ३२ देव होते हैं ॥ १२ ॥ ज्योतिषी देव को दो देव अधिपतिपना करते हैं. चन्द्र व सूर्य ॥ १३ ॥ सौधर्म ईशान देवलोक में दश देव अधिपतिपना करते हैं. शक्र देवेन्द्र, ईशान देवेन्द्र और उन के सोम, यम, वरुण व वैश्रमण नामक चार २ लोकपाल ॥ १४ ॥ तीसरे चौथे देवलोक में दश देव अधिपति हैं. सत्कुमारेंद्र व माहेन्द्र और उन के सोमादि चार २ लोकपाल. ऐसे ही पांचवे छठे

जो ज्योतिषियों के दो दो देव चंद्र सूर्य ॥ १३ ॥ सो सौधर्म ईशान में क
 कितने देव आ आधिपत्य वि विचरते हैं गो गौतम द दशदेव वि विचरते हैं स शक्र दे
 देवेन्द्र दे देवराजा सो सोम ज जम व वरुण वे वैश्रमण ई ईशान ए ए यह व वक्तव्यता स
 वाण दो देवा आहेवच्चं जात्र विहरंति तंजहा चंदे, सुरेय ॥ १३ ॥ सोहम्मीसाणे-
 सुणं भंते ! कप्पेसु कइदेवा आहेवच्चं जात्र विहरंति ? गोयमा ! बसेदेवा जात्र
 विहरंति, तंजहा-सक्के देविदे देवराया, सोमे, जमे, वरुणे वेसमणे ; ईसाणे देविदे
 देवराया सोमे, जमे, वरुणे, वेसमणे ॥ १४ ॥ एसा वत्तव्वया सव्वेसुत्ति कप्पेसु एएचेत्त
 जाति के देव कहते हैं. आणपर्ची, पाणपर्ची, इसीवाय, मुइवाय, कुन्दिय, महाकन्दिय, कोहंग व प्यंग
 देव. इन आठों को दो २ देव अधिपतिपना करते हैं. उन के नाम सचिहित, सामानिक, घाई, वघाई,
 इसी, इसीवाल, ईश्वर, महेश्वर, सुवत्थ, विशाल, हास, हासरति, सेय, महासेय, पयग, पयगवति. यों
 सोलह वाणन्यंतर के ३२ देव होते हैं ॥ १२ ॥ ज्योतिषी देव को दो देव अधिपतिपना करते हैं.
 चन्द्र व सूर्य ॥ १३ ॥ सौधर्म ईशान देवलोक में दश देव अधिपतिपना करते हैं. शक्र देवेन्द्र, ईशान देवेन्द्र
 और उन के सोम, यम, वरुण व वैश्रमण नामक चार २ लोकपाल ॥ १४ ॥ तीसरे चौथे देवलोक में दश
 देव अधिपति हैं. सप्तकुमारेंद्र व माहेन्द्र और उन के सोमादि चार २ लोकपाल. ऐसे ही पांचवे छठे

शब्दार्थ () सूत्र भावार्थ

सर्व में कं० देवलोक में ए० यही भा० कहना जे० जो ई० इन्द्र ते० वे भा० कहना ॥ ३ ॥ ८ ॥

रा० राजगृह जा० यावत् ए० ऐसा व० बोले क० कितने भ० भगवन् ई० इन्द्रिय विषय प० कहे गो० गौतम प० पांच प्रकार के ई० इन्द्रिय विषय प० कहे तं० वह ज० जैसे सो० श्रोतेन्द्रिय विषय जी० भाणियव्वा ॥ जे य इंदा ते भाणियव्वा ॥ सेवं भंते भंतेत्ति ॥ तईयसए

* * *
अट्टमोद्देशो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ ८ ॥

रायगिहे जाव एव वयासी कइविहेणं भंते ! इंदिय विसए पणत्ते ? गोयसा ! पंच-
विहे इंदियविषए पणत्ते, तंजहा-सोइंदिय विसए, जीवाभिगमे जोइसियउद्देशसओ

सालेप आउने, नचवे दशवे, अग्यारहवे, बारहवे तक का जानना. अहो भगवन् ! आप के वचन तथ्य है. यह तीसरा शतकका आठवा उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ ३ ॥ ८ ॥

राजगृह नगर के गुणशील नामक उद्यान में भगवंत पधारं. परिपदा बंदने को आई धर्मोपदेश सुनकर पीठी गई. उस समय में श्री श्रमण भगवंत नगरी को भगवंत गौतम स्वामीने प्रश्न किया कि अहो भगवन् ! इन्द्रिय के विषय कितने प्रकार के हैं ? अहो गौतम ! इन्द्रिय के विषय पांच प्रकार के हैं. श्रोतेन्द्रिय का विषय, चक्षुइन्द्रिय का विषय, घ्राणेन्द्रिय का विषय, रसनेन्द्रिय का विषय, व स्पर्शेन्द्रिय का विषय. अहो भगवन् ! श्रोतेन्द्रिय का विषय कितने प्रकार का कहा है. अहो गौतम ! श्रोतेन्द्रिय

जीवाभिगम में जो० ज्योतिषि का उ० उद्देशा ने० जानना अ० अपरिशेष ॥ ३ ॥ ९ ॥ *
 रा० राजगृह जा० यावत् ए० ऐसे व० बोलें च० चमर का भ० भगवन् अ० असुरेन्द्र अ० असुर

नेयव्वो अपरिसेसो । सेवं भंते भंतोत्ति ॥ तईयसए नवमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ ९ ॥
 रायगिहे जाव एवं वयासी-चमरस्सणं भंते ! असुरिंदस्स असुररणो कइ परिसाओ
 पणत्ताओ ? गोयमा ! तओ परिसाओ पणत्ताओ, तंजहा-समिया, चंडा, जाया.

का विषय दो प्रकल्प का कहा है. सुशब्द व दुशब्द, ऐसे ही पांचो इन्द्रियों के विषय जानना. इस का
 विस्तार पूर्वक कथन बीषाभिगम सूत्र के ज्योतिषी उद्देशे में से जानना. अहो भगवन् ! आप के वचन
 यथातथ्य हैं. यह तीसरा शतकका नववा उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ ३ ॥ ९ ॥ +

राजगृही नगरी के गुणशील नामक उद्यान में श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी पधारि, परिपदा बंदने
 को आई धर्मोपदेश सुनकर पीछी गई. उस समय में गौतम स्वामीने बंदना नमस्कार कर ऐसा प्रश्न पूछा
 कि अहो भगवन् ! चमर नामक असुरेन्द्र को कितनी परिपदा कही है ? अहो गौतम ! उन को समि-
 या, चंडा व जाया ऐसी तीन परिपदा कही हैं. समिया आभ्यंतर परिपदा है, इन के देव बोलाये आते हैं.
 विना बोलाये नहीं आते हैं. चंडा वीचकी परिपदा है, इन के देव बोलाये आते हैं. जाया बाहिरकी परि-

* भकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेशसहायजी बालामसादजी *

राजा की क० कितनी प० परिपदा प० कही गो० गौतम त० तीन प० परिपदा प० कही तं० वह ज०
जैसे स० समिता चं० चंडा जा० आया प० ऐसे ज० जैसे अ० अनुक्रम से जा० यावत् अ० अच्युत
कर ॥ ३ ॥ १० ॥ ३ ॥

+

x

एवं जहाणुपुर्वीए जात्र अच्युओ कप्पो । सेधं भंते भंतेत्ति ॥ तईय सए दसमो

उद्देशो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ १० ॥ तईयं सयं सम्मत्तं ॥ ३ ॥

पदा है. इन के देव बिना बोलाये कार्य करने के अक्सर पर हाजर रहते हैं. समिया के चौबीस हजार,
चंडा के भठवीस हजार व आया के ३२ हजार देव कहे हैं. ऐसे ही तीन प्रकार की देवी की परिपदा
कही है. उस में समिया की ३५० चंडा की ३०० और जाया की २५० देवियों कही हैं.
आभ्यंवर परिपदा की देवियों का अढ़ाई पत्योपम का, मध्य परिपदा की देवियों का दो पत्योपम का
और बाह्य परिपदा की देवियों का १॥ पत्योपम का आयुष्य जानना. जैसे असुरेन्द्र की तीन परिपदा
कही वेमे ही बलेन्द्र की तीन परिपदा जानना. ऐसे ही अच्युतेन्द्रक के चौसठ इन्द्र की तीन २ परिपदा-
ओं का अधिकार जानना. उन का आयुष्य वगैरह सब अधिकार जीवाभिगम सूत्र से जानना. अहो
भागन्! आपके बचन सत्य हैं: ऐसा कहकर तप व संयम से आत्मा को भावते हुए विचरने लगे. यह
तीसरा शतकका इयत्रा बहेशा पूर्ण हुवा ॥ ३ ॥ १० ॥ तीसरा शतकका भावार्थ संपूर्ण हुवा ॥ ३ ॥

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* चतुर्थ शतकम्. *

च० चमर वि० विमान से च० चार हो० होते हैं रा० राज्यधानी भे ने० नारकी ले० लेख्या से द० दश उ० उदेशा च० चौथे शतक में ॥ १ ॥ रा० राजगृह न० नगर में जा० यात्रा प० ऐसा व० बोलि ई० ईशान दे० देवेन्द्र दे० देवराजा को क० कितने लो० लोकपाल गो० गौतम च० चार लो० लोकपाल तं० तह ज० जैसे सो० मोप ज० यम व० वरुण वे० वैश्रमण ए० इन भं० भगवत् लो० लोकपालोंका क० चत्तारि० विमाणेहि, चत्तारिय हौति रायहाणीहि । नेरइए लेस्साहिय, दस उद्देशा चउत्थसए ॥ १ ॥ रायगिहे णगरे जात्र एवं वयासी- ईसाणरसणं भंते ! देविंदस्स देवरणो कइलोगपाला पणत्ता ? गोयमा ! चत्तारि लोगपाला पणत्ता, तंजहा-

तीसरे शतक में देवता का अधिकार कहा है. इस में भी देवता का अधिकार कहते हैं. इस शतक के दश उदेशे कहे हैं. पहिले चार उदेशे में ईशानेन्द्र के चार लोकपालों के चार विमानोंका कथन है. पांचवे, छठे, सातवे व आठवे में उन की चार राज्यधानियों का कथन है. नववे में नरक के जीवों का और दशवे में लेख्या का वर्णन है. ॥ १ ॥ राजगृह नगरी के गुणशील नामक उद्यान में श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी पधार, परिपदा वंदन करेन को आई धर्मोपदेश सुनकर पीछी गई. उस समय में श्री श्रमण भगवंत

वलंसक फ० स्फटिकावतंसक र० रत्नावतंसक जा० जातिरूपावतंसक म० मध्य में ई० ईशानावतंसक म० महा-
 विमान पु० पूर्व में ति० तीच्छे अ० असंख्यात जो० योजन धी० व्यतिक्रान्त होते ए० यहाँ ई० ईशान दे०
 देवेन्द्र दे० देवराजा का सो० सोम म० महाराजा का सु० सुमन म० महाविमान अ० अर्ध त्रेह जो०
 योजन ज० जैसे स० शक्र की व० वक्तव्यता त० तीसरे स० शतक में त० तैगे ई० ईशान की भी जा०
 कवडंसए, फलिह वडंसए, रथण वडंसए, जाइरून वडंसए, मझै तत्य ईसाण
 वडंसए ॥ तत्थणं ईसाणं वडंसयस्स महाविमाणस्स पुरच्छिमेणं तिरिय मसंखेजाइं
 जोयणाइं वीइवइत्ता एत्थणं ईसाणस्स देविंदस्स देवरणो सोमस्स महारणो सुमणे
 नामं महाविमाणे पणत्ते अद्धत्तेरस जोयण जहा सक्करस वत्तव्वया, तईयसए, तथा
 हुवे हैं. उन से क्रोडा क्रोड योजन ऊंचे ईशान नामक दूमरा महा विमान रहा हुवा है. उस में पाँच अव-
 तंसक (सुकुट समान) विमान हैं. १ अंकावतंसक, २ स्फटिकावतंसक ३ रत्नावतंसक ४ जातिरूपावतंसक
 और मध्य में ईशानावतंसक. उन ईशानावतंसक से पूर्व में असंख्यात योजन तीच्छी जावे वहाँ ईशानेन्द्र
 के सोम महाराजा का सुमन नामक महा विमान कहा है. वह साढ़े चारह योजन का लम्बा चौडा यावत्
 सब वक्तव्यता शक्रेन्द्र के सोम महाराजा जैसे कहना. जैसे ईशानेन्द्र के सोम महाराजा की वक्तव्यता कही
 जैसे ही यम का स्फटिकावतंसक, वरुण का रत्नावतंसक, व वैश्रमण का जातरूपावतंसक का जानना.

सुमनं (सुमन) (सुमन) (सुमन) (सुमन) (सुमन) (सुमन) (सुमन) (सुमन) (सुमन) (सुमन)

:दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुबद्रैवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

कितने वि० विमान प० प्ररूपे गो० गौतम च० चार वि० विमान प० प्ररूपे सु० सुमन स० सर्वतोभद्र
 व० वल्लु सु० सुबल्लु ॥ २ ॥ क० कहां ई० ईशान के सो० सोम म० महाराजा का सु० सुमन म० महा-
 विमान प० प्ररूपा गो० गौतम जं० जम्बूद्वीप में मं० मेरु प० पर्वत की उ० उच्चर से इ० इस र० रत्न
 मभा पु० पृथ्वी से जा० यावत् ई० ईशान क० देवलोक में त० वहां पं० पांच व० अवतंसक अं० अंका-
 सोमे, जमे, वरुणे, वेसमणे ॥ एणसिणं भंते ! लोगपालाणं कइ विमाणा पणत्ता ?
 गोयमा ! चत्तारि विमाणां पणत्ता तंजहां-सुमणे, सब्बओभहे, वग्गं, सुवग्गू ॥ २ ॥

कहिणं भंते ! ईसाणस्स देविदस्से देवरंणो सोमस्स महारणो सुमणेनामं महावि-
 माणे णग्गत्ते ? गोयमा ! जंबुद्वीविदीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं इम्मिसे रयणप्पभाए
 पुढवीए जाव ईसाणे नामं कप्पे पणत्ते ? तत्थणं जाव पंचवडंस्या प० तं० अं-

पदावीर स्वामी को श्री गौतम स्वामी ने प्रश्न पुछा कि अहो भगवन् ! ईशानिन्द्र को कितने लोकपाल कहे
 हैं ? अहो गौतम ! सोम, यम, वरुण व वैश्रमण ऐसे चार लोकपाल कहे हैं। अहो भगवन् ! उन के
 विमान कितने कहे हैं ? अहो गौतम ! उन के चार विमान कहे हैं। सुमन, सर्वतोभद्र, वल्लु और सुबल्लु
 ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! ईशान देवेन्द्र का सोम नामक महा विमान कहां है ? अहो गौतम ! जम्बूद्वीप के
 पंक पर्वत की उत्तर में इस रत्नप्रभा पृथ्वी से अनेक सो योजन उपर चंद्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र व तारे रहे

रा० राज्यधानी में च० चार उ० उद्देशा भा० कहना जा० यावत् व० वरुण म० महाराजा ॥४॥८॥
ने० नारकी ने० नारकी में उ० उत्पन्न होते हैं अ० नारकी से, अन्य प० पन्नवणा में ले० लेख्या पद

अट्टमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ४ ॥ ८ ॥ × ×

नेरइएणं भंते ! नेरइएसु उववज्जइ, अनेरइएणं भंते ! नेरइएसु उववज्जइ ? पण-
वणाएवि लेस्सापए तईओ उद्देसओ भाणियव्वो जाव नाणाइं चउत्थसए नवमो

स्वाभी पूछने लगे कि अहो भगवन् ! ईशानेन्द्र के सोम महाराजा की सोमा नामक राज्यधानी कहाँ है ?
अहो गौतम ! सुमन नामक महा विमान की नीचे वगैरह सब दर्शन शक्रेन्द्र के सोम महाराजा जैसे जान-
ना. यों चारों राज्यधानी अपने २ विमान नीचे तीच्छे लोक में रही हुई हैं. यों चारों राज्यधानी के
चार उद्देशे भिन्न२ कहना. यह चौथा शतकका पांचवा, छठा, सातवा, व आठवाँ ऐसे चार उद्देशे पूर्ण हुए ॥४॥८॥

उक्त उद्देशे में देवता का अधिकार कहा. देव वैक्रीय शरीर करनेवाले होते हैं. वैसे ही नरक के जीव
भी वैक्रीय शरीर करनेवाले होते हैं. इसलिये आगे नरक का अधिकार कहते हैं. अहो भगवन् ! नरक के
आयुष्यका बंध करनेवाले नरक में उत्पन्न होते हैं या अन्य जीव नरक में उत्पन्न होते हैं ? अहो गौतम !
जिनोंने नरक के आयुष्य का बंध किया है वही नरक में उत्पन्न होते हैं; परंतु अन्य जीव नरक में नहीं
उत्पन्न होते हैं. जो नरक में उत्पन्न हुवे हैं उनको आयुष्य बंध से छोड़ाने को कोई भी समर्थ नहीं है

वदार्थ (५२७)

सूत्र

स्वार्थ

रा० राज्यधानी में च० चार उ० उद्देशा भा० कहना जा० यावत् व० वरुण म० महाराजा ॥४॥८॥
 ने० नारकी ने० नारकी में उ० उत्पन्न होते हैं अ० नारकी से, अन्य प० पद्मवणा में ले० लेख्या पद
 अट्टमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ४ ॥ ८ ॥ ×

नेरइएसु उववज्जइ, अनेरइएणं भंते ! नेरइएसु उववज्जइ ? पण्ण-
 वणाएवि लेरसापए तईओ उद्देशओ भाणियव्वो जाव नाणाइं चउत्थसए नवमो

स्वाधी पूछने लग कि अहो भगवन् ! ईशानेन्द्र के सोम महाराजा की सोमा नामक राज्यधानी कहाँ है ?
 अहो गौतम ! सुमन नामक महा विमान की नीचे वीरह सब दर्शन शक्रेन्द्र के सोम महाराजा जैसे जान-
 ना. यों चारों राज्यधानी अपने २ विमान नीचे तीच्छे लोक में रही हुई हैं. यों चारों राज्यधानी के
 चार उद्देशे भिन्न२ कहना. यह चौथा शतकका पांचवा, छठा, सातवा, व आठवाँ ऐसे चार उद्देशे पूर्ण हुए ॥४॥८॥

उक्त उद्देशे में देवता का अधिकार कहा. देव वैक्रेय शरीर करनेवाले होते हैं. वैसे ही नरक के जीव
 भी वैक्रेय शरीर करनेवाले होते हैं. इसलिये आगे नरक का अधिकार कहते हैं. अहो भगवन् ! नरक के
 आयुष्यका बंध करनेवाले नरक में उत्पन्न होते हैं या अन्य जीव नरक में उत्पन्न होते हैं ? अहो गौतम !
 जिनोंने नरक के आयुष्य का बंध किया है वही नरक में उत्पन्न होते हैं; परंतु अन्य जीव नरक में नहीं
 उत्पन्न होते हैं. जो नरक में उत्पन्न हुये हैं उन को आयुष्य बंध से छोड़ाने को कोई भी समर्थ नहीं है

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

(४ ॥ ८ ॥)

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालामसादजी *

का त० तीमरा उ० उद्देशा भा० कहना जा० यावत् ना० ज्ञान ॥४४२॥

से० अथ क० कृष्ण लक्ष्या वाला नी० नील लक्ष्या को प० प्राप्त कर के त० तद्रूप ता० तद्वर्णपने

उद्देशो सम्मत्तो ॥ ४ ॥ ९ ॥ * * *

से नूनं भंत ! कण्ठलेस्ता नीललेस्तं पप्य तारुवत्ताए तावण्णत्ताए एवं चउत्थो

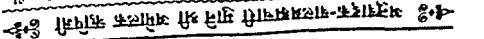
यास्त् कृष्ण लक्ष्यावाले जीव नीची दो नरक में उत्पन्न होते हैं वगैरह सब अधिकार पन्नवणा सूत्र जैसे कहना. यह चौथा शतक का नववा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ ४ ॥ ९ ॥ * * *

इम उद्देशे में लक्ष्याका अधिकार कहते हैं. अहां भगवन् ! कृष्ण लक्ष्यावाला नील लक्ष्या के द्रव्य ब्रह्मण कर यदि काल करतो क्या वह नील लक्ष्या में उत्पन्न होता है ? हां गौतम ! जिस लक्ष्या के पुद्गल परिणमा कर काल करता है उसी लक्ष्या में उत्पन्न होता है. अहां भगवन् ! कृष्ण लक्ष्यावाला नील लक्ष्या पने चारवार परिणमता है तो किस प्रकार वह परिणमता है ? अहां गौतम ! जैसे दूध तकर (छाछ) रूप परिणमता है, अथवा शुद्ध श्वेत वस्त्र को जैसे रंग चढ़ावे वैसे रूपपने परिणमता है इसी प्रकार कृष्ण लक्ष्या वाला नीललक्ष्या पने परिणमता है, नील कापोत पने, कापोत तेजोपने, तेजो पद्मपने, य पद्म शुक्र लक्ष्या पने परिणमे. अहां भगवन् ! कृष्ण लक्ष्या का वर्ण कैसा है ? अहां गौतम ! कृष्ण लक्ष्या का वर्ण मेघ की पय समान द्याप, नील लक्ष्या का तोते के रंग समान, कापोत लक्ष्या का कबुतर जैसा,

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ



ऐसे च० चौथा उ० उद्देश प० पञ्चवणा में ले० लेख्या पद में ने० नानना जा० यावत् परिणाम व० वर्ण
र० रस गं० गंध सु० शुद्ध अ० अमशस्त सं० संक्षिप्त उ० ऊष्ण ग० गतिपरिणाम प० प्रदेश ओ० अव-

उद्देशओ पणवणाए चैव लेस्सापदे नेयव्यो । जाव परिणाम वण्ण रसगंध सुद्ध

अपसत्थ संकित्तिडुण्हा, गइ परिणाम पएसोगाहण वगणाट्टाण मप्पवहुं । सेवं भंते

तेजो लेख्या का उदित होता सूर्य जैसा, पत्र लेख्या का हलदी जैसा व शुक्र लेख्या का चन्द्र जैसा श्वेत वर्ण है।
अव छ लेख्या के रस कहते हैं। कृष्ण लेख्या का निम्ब वृक्ष जैसा कटु, नील लेख्या का नागर जैसा कटु,
कापोत लेख्या का कच्चे बोर जैसा कपायला तेजो लेख्या का आम्र फल जैसा खटमिठ पत्र लेख्या का खार
क जैसा मधुर और शुक्र लेख्या का खांड सक्कर जैसा मिष्ट। अव गंध कहते हैं। कृष्ण, नील व कापोत
लेख्या के पुद्गलों की मृत्तक देहकी गंध समान गंध, और तेजो, पत्र व शुक्र की कुसुम समान। पहिली तीन
लेख्या अशुभ है और पीछे की तीन लेख्या शुभ है। पहिले की तीन लेख्या संक्षिप्त हैं और पीछे की
तीन लेख्या संक्षिप्त नहीं हैं। पहिले की तीन लेख्या शीत व रूक्ष हैं, और पीछे की तीन लेख्या ऊष्ण व
स्निग्ध हैं। पहिली तीन लेख्या दुर्गति में लेजनिवाली हैं, और पीछे की तीन लेख्या सुगति में लेजनि
वाली हैं। जयन्य, उत्कृष्ट व मध्यम तथा उत्पातादि भेद से परिणाम विचारना। सब लेख्या के अनंत प्रदेश
४. प्रत्येक प्रदेश असंख्यात प्रदेशावगाढ है। कृष्ण लेख्या योग्य पुद्गल वर्णना अनंत हैं वह उद्धारिक

शब्दार्थ सूत्र भावार्थ

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

गांढना वं० वर्गणा ठां० स्थान अ० अर्थां वस्तुत्वं ॥ ४ ॥ १० ॥ ४ ॥

भंतेति ॥ चउत्थसए दसमो उद्देशो ॥ ४ ॥ १० ॥ चउत्थं सयं सम्मत्तं ॥ ४ ॥ १० ॥

त्रैसे जानना. तारतम्यता की विचित्रता से अध्यवसाय; निबन्ध कृष्णादि द्रव्य समुह असंख्यात हैं. इस लिये अध्यवसाय स्थानक असंख्यात हैं. अरुपावहुत्व सत्र; से थोडा जघन्य कापोत लेश्या के द्रव्यार्थ स्थान, उससे जघन्य नील लेश्या के द्रव्यार्थ स्थान असंख्यात गुने, उस से जघन्य कृष्ण लेश्या के द्रव्यार्थ स्थान असंख्यात गुने, उस से जघन्य तेजो लेश्या के द्रव्यार्थ स्थान; असंख्यात गुने उस से जघन्य वज्र लेश्या के द्रव्यार्थ स्थान असंख्यात गुने उस से शुक्ल लेश्या के जघन्य द्रव्यार्थ स्थान, असंख्यात गुने. अहो भगवन्! आपके वचन सत्य हैं यह चौथा शतक का दशवा उद्देशा पूर्ण हुआ, यह चौथा शतक समाप्त हुआ ॥ ४ ॥ १० ॥ ४ ॥



शब्दार्थ

सूत्र

मानार्थ

शब्दार्थ सूत्र मानार्थ

॥ पंचम शतकम् ॥

चं चंपा रं सूर्य अं वायु गं ग्रन्थि स० शब्द छ० छत्रस्थ आ० आयुष्य ए० कंपनी
नि० निर्ग्रन्थ रा० राजगृह चं० चंपा चं० चंद्र द० दश पं० पांचवे स० शतक में ॥ १ ॥ ते० उस का०
काल ते० उस स० समय में चं० चंपा ना० नाम की न० नगरी हा० थी व० वर्णन योग्य ती० उस चं०
चंपाए, रवि, अनिल, गंठिय सदे, छउ, माउ, एयण, णियंटे ॥ रायगिहं चंपा
चंदिमाय दस पंचमस्मि सए ॥१॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपानामं नयरी होत्था,
वण्णओ ॥ तीसेणं चंपाए नयरीए पुण्णभदे नामं चेइए होत्था, वण्णओ सामीस-

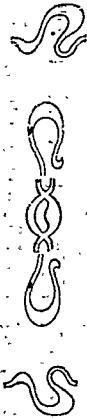
चौथे शतक के अंत में लेख्या कही. वह लेख्या लेख्यान्त पुरूपों को आयुष्य का बंध करती है.
आयुष्य का बंध को क्षय करनेवाला काल है इसलिये पांचवे शतक में काल की वक्तव्यता करेंगे. इस
पांचवे शतक के दश उद्देश्ये कहे हैं. प्रथम उद्देश्ये में चंपा नगरी में सूर्य संबंधि प्रश्न पूछे हैं, दूसरे में
वायु संबंधी प्रश्न पूछे हैं, तीसरे में जालग्रन्थिका निर्णय किया है, चौथे में शब्द का निर्णय, पांचवे में
छत्रस्थ की वक्तव्यता, छठे में आयुष्य के बंध का अधिकार, सातवे में पुद्गल चक्रने का अधिकार, आठवे में
निग्रन्थ पुत्र के प्रश्नोत्तर, नववे में राजगृह नगर का अधिकार व दशवे में चंपा में चंद्रपा संबंधि प्रश्न ॥१॥
उस काल उस समय में चंपा नामकी नगरी थी. उस का वर्णन उक्ताइ सूत्र से जानना. उस चंपा नगरी

दाय () सूत्र भावार्थ

गांधना वं० वर्गणा वां० स्थानं अ० अल्पा बहुत्व ॥ ४ ॥ १० ॥ ४ ॥

भंतेति ॥ चउत्थसए दसमो उद्देशो ॥ ४ ॥ १० ॥ चउत्थं सयं समसत्त्वं ॥ ४ ॥ १० ॥

नेसे जानना. तारतम्यता की विचित्रता से अध्यवसाय; निबन्ध कृष्णादि द्रव्य समुह असंख्यात हैं. इसा लिये अध्यवसाय स्थानक असंख्यात हैं. अस्पावहुत्व सत्र से थोडा जघन्य कापीत लेश्या के द्रव्यार्थ स्थान, उससे जघन्य नील लेश्या के द्रव्यार्थ स्थान असंख्यात गुने, उस से जघन्य कृष्ण लेश्या के द्रव्यार्थ स्थान असंख्यात गुने, उस से जघन्य तेजो लेश्या के द्रव्यार्थ स्थान; असंख्यात गुने उस से जघन्य वज्र लेश्या के द्रव्यार्थ स्थान असंख्यात गुने उस से शुक्ल लेश्या के जघन्य द्रव्यार्थ स्थान, असंख्यात गुने. अहो भगवन्! आपके वचन सत्य हैं यह चौथा शतक का दशवा उद्देशा पूर्ण हुआ, यह चौथा शतक समाप्त हुआ ॥ ४ ॥ १० ॥ ४ ॥



उदित होकर प० वायव्य कौन में आ० जाता है प० वायव्य कौन में उ० उदित होकर उ० ईशान कौन में आ० जाता है ह० हां गो० गौतम जं० जम्बूद्वीप में सूर्य उ० ईशान कौन में उ० उदित होकर ना० यावत् उ० ईशान कौन में आ० जाता है ॥ ३ ॥ ज० जय भं० भगवन् जं० जम्बूद्वीप में

पाईणदाहिण मुग्गच्छ दाहिणपडीण मागच्छंति, दाहिण पडीण मुग्गच्छ पडीण-

उदीण मागच्छंति, पडीणउदीण मुग्गच्छ उदीचिपाईण मागच्छंति ? हंता गोयसा !

जंबुद्वीपेणं दीवे सूरिया उदीचिपाईण मुग्गच्छ जाव उदीचि पाईण मागच्छंति ॥ ३ ॥

जयाणं भंते ! जंबुद्वीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणहुं दिवसे भवइ, तयाणं

वायव्य कौन में अस्त होता है ? और वायव्य कौन में उदित होकर क्या ईशान कौन में अस्त होता है ? हां गौतम ! जम्बूद्वीप में सूर्य ईशान कौन में उदित होकर अग्नि कौन में अस्त होता है. यावत् वायव्य कौन में उदित होकर ईशान कौन में अस्त होता है * ॥ ३ ॥ यद्यपि सूर्य का सत्र दिशि में गमन है तथापि प्रकाशके भेद से रात्रि दिन के विभाग किये हैं. अहो भगवन् ! जव जम्बूद्वीप के मेरु से दक्षिण

* यहां पर सूर्य का उदय व अस्त देखनेवाले लोकों की विवक्षा से लिया है. अदृश्य सूर्य देखने में आये जव उदय कहा जाता है, और दृश्य सूर्य अदृश्य होवे तब अस्त कहा जाता है. परंतु वास्तविक रीति से सूर्य का उदय अस्त नहीं है.

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

चंपा न० नगरी से पू० पूर्णभद्र चे० उद्यान हो० था सा० स्वाभी सु० पधारे जा० यावत् प० परिपदा प० पीछीगइ ॥ २ ॥ ते० उस काल ते० उस समय में स० श्रमण भगवन्त म० महावीर के जे० ज्येष्ठ अं० शिष्य इंद्रभूति अ० अनगार गो० गौतम गो० गौत्र से जा० यावत् ए० ऐसे व० बोले जं० जम्बूद्वीप में भं० भगवन् दी० द्वीप में सू० सूर्य उ० ईशान कौन में उ० उदित होकर पा० अग्नि कौन में आ० जाता हे पा० अग्नि कौन में उ० उदित होकर दा० नैऋत्य कौन में आ० जाता है दा० नैऋत्य कौन में उ०

मोसंढे, जाव परिसा पडिगया ॥ २ ॥ तेणं कालेणं, तेणं समएणं समणस्स भगव-

ओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदुभूइणामे अणगारे गोयम गोत्तेणं जाव एवंवयासी-
जंबुद्वीपेणं मंते ! दीव्हे सूरिया उईणपाईण मुग्गच्छ पाईणदाहिण मागच्छंति ।

की ईशान कौन में पूर्णभद्र यस का उद्यान था, उस का वर्णन उक्ताइ सूत्र से जानना. वहां पर तप भयम से आत्मा को भावते हुवे श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी पधारे. परिपदा वंदन करने को आई. पर्वोपदंश सुनकर पीछी गई ॥ २ ॥ उस काल उस समय में श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी के ज्येष्ठ अंतवापी गौतम गोत्रीय इन्द्रभूति अन्गारने ऐसा प्रश्न किया कि अहो भगवन् ! जम्बूद्वीप में सूर्य उत्तर पूर्व-ईशान-कौन में उदित होकर पूर्वदक्षिण-अग्नि कौन में क्या अस्त होता है ? अग्नि कौन में उदित होकर दक्षिणपश्चिम-नैऋत्य कौन में क्या अस्त होता है ? नैऋत्य कौन में उदित होकर पश्चिमउत्तर

शब्दार्थ
सूत्र
शब्दार्थ

पु० पूर्व में प० पश्चिम रा० रात्रि भ० होती है हं० हां० गो० गौतम ज० जव जं० जम्बूद्वीप में दा० दक्षिणार्ध में दि० दिन भ० होता है जा० यावत् रा० रात्रि भ० होती है ॥ ४ ॥ ज० जव भं० भगवन् जं० जम्बूद्वीप में दा० दक्षिणार्ध में उ० उत्कृष्ट अ० अठारह मु० मुहूर्त का दि० दिन भ० होता है त० तव उ० उत्तर में उ० उत्कृष्ट अ० अठारह मु० मुहूर्त का दि० दिन भ० होता है ज० जव

भवइ, तयाणं जंबुद्वीवेदीत्रे मंदरस्स उत्तरदाहिणंणं राई भवइ ? हंता गोयमा !
 जयाणं जंबुमंदरस्स पुरच्छिमेणं दिवसे जाव राई भवइ ॥ ४ ॥ जयाणं भंते !
 जंबुद्वीवेदीत्रे दाहिणंहुं उक्कोसए अट्टारससुहुत्ते दिवसे भवइ, तयाणं उत्तर जाव उक्कोसए अट्टारससुहुत्ते दिवसे भवइ ॥ जयाणं उत्तरहुं उक्कोसए अट्टारस सुहुत्ते

व दश भाग में का छ भाग रात्रि क्षेत्र होंगे. यह दिन के ताप क्षेत्र व रात्रि क्षेत्र की स्थापना कही. जब दिन छोटा होवे तब रात्रिक्षेत्र जितना तापक्षेत्र व तापक्षेत्र जितना रात्रिक्षेत्र जानना. जब जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत की पूर्व में दिन होता है तब पश्चिम में भी दिन होता है और जब पूर्व पश्चिम में दिन होता है, तब क्या जम्बूद्वीप के उत्तर व दक्षिण में रात्रि होती है ? हां गौतम ! जब जम्बूद्वीप के पूर्व पश्चिम में दिन होता है तब उत्तर दक्षिण में रात्रि होती है ॥४॥ अहो भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिण विभाग में अठारह मुहूर्तका दिन होता है तब उत्तर विभाग में भी अठारह मुहूर्तका दिन होता है

अन्वयार्थ

(अन्वयार्थ) (अन्वयार्थ)

सूत्र

भावार्थ

अन्वयार्थ

पु० पूर्व में प० पश्चिम रा० रात्रि भ० हांती है हं० हां० गो० गौतम ज० जव जं० जम्बूद्वीप में दा० दक्षिणार्ध में दि० दिन भ० होता है जा० यावत् रा० रात्रि भ० होती है ॥ ४ ॥ ज० जव भं० भगवन् जं० जम्बूद्वीप में दा० दक्षिणार्ध में उ० उत्कृष्ट अ० अठारह मु० मुहूर्त का दि० दिन भ० होता है त० तव उ० उत्तर में उ० उत्कृष्ट अ० अठारह मु० मुहूर्त का दि० दिन भ० होता है ज० जव भवइ, तयाणं जंबूद्वीपदित्रे मंदरस्स उत्तरदाहिणंणं राई भवइ ? हंता गोयमा !

जयाणं जंबूमंदरस्स पुरच्छिमेणं दिवसे जाव राई भवइ ॥ ४ ॥ जयाणं भंते ! जंबूद्वीपदित्रे दाहिणंण्डु उक्कोसए अट्टारसमुहुत्ते दिवसे भवइ, तयाणं उत्तर जाव उक्कोसए अट्टारसमुहुत्ते दिवसे भवइ ॥ जयाणं उत्तरहे उक्कोसए अट्टारस मुहुत्ते

व दश भाग में का छ भाग रात्रि क्षेत्र हंवे. यह दिन के ताप क्षेत्र व रात्रि क्षेत्र की स्थापना कही. जब दिन छोटा होवे तब रात्रिक्षेत्र जितना तापक्षेत्र व तापक्षेत्र जितना रात्रिक्षेत्र जानना. जब जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत की पूर्व में दिन होता है तब पश्चिम में भी दिन होता है और जब पूर्व पश्चिम में दिन होता है, तब क्या जम्बूद्वीप के उत्तर व दक्षिण में रात्रि होती है ? हां गौतम ! जब जम्बूद्वीप के पूर्व पश्चिम में दिन होता है तब उत्तर दक्षिण में रात्रि होती है ॥४॥ अहो भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिण विभाग में अठारह मुहूर्तका दिन होता है तब उत्तर विभाग में भी अठारह मुहूर्तका दिन होता है

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुब्रह्मचर्य सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

हों गों गौतम ज० जब ज० जम्बूद्वीप जा० जात्र रा० रात्रि भ० होती है ॥ ७ ॥ पूर्ववत् ॥ ८ ॥ ए०
 ऐसे ३० इस क० क्रम से उ० कहना स० सत्तरह मु० मुहूर्त का दि० दिन ते० तेरह मु० मुहूर्त की रा०
 रात्रि भ० होती है स० सत्तरह मु० मुहूर्तान्तर दि० दिवस सा०अधिक ते० तेरह मु० मुहूर्त की रा०
 राई भवइ ? हंता गोयमा ! जयाणं जंबू जाव राई भवइ ॥ ७ ॥ जयाणं भंते !
 जंबू मंदरस्य पुरच्छिमेणं अट्टारस मुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ तयाणं पच्चच्छिमेणं अट्टारस
 मुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ, जयाणं पच्चच्छिमेणं अट्टारस मुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ तयाणं
 जंबूमंदरउत्तरदाहिणेणं साइरेगा दुवालस मुहुत्ता राई भवइ ? हंता गोयमा ! जाव भवइ
 ॥ ८ ॥ एवं एणुणं कमेणं उच्चरियव्वं सत्तरस मुहुत्ते दिवसे, तेरस मुहुत्ता राई भवइ ।
 सत्तरस मुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ, साइरंगतेरसमुहुत्ता राई । सोलसमुहुत्ते दिवसे
 चौदस मुहुत्ता राई. सोलस मुहुत्ताणंतरे दिवसे, साइरंग चौदस मुहुत्ताराई ॥ पण्ण-
 में जब अठारह मुहूर्त से कम का दिन होता है तब पूर्व पश्चिम में बारह मुहूर्त से अधिक रात्रि होती है.
 ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! जब जम्बू मंदर की पूर्व पश्चिम में अठारह मुहूर्त के अंतर का दिन होता है तब
 क्या उत्तर दक्षिण में बारह मुहूर्त से अधिक रात्रि होती है ? हां गौतम ! जब जम्बू मंदर के पूर्व पश्चिम में
 अठारह मुहूर्त के अंतर का दिन होता है तब बारह मुहूर्त से अधिक की रात्रि होती है. ॥ ८ ॥ ऐसे ही
 अनुक्रम से सत्तरह मुहूर्त का दिन तेरह मुहूर्त की रात्रि, सत्तरह मुहूर्त से कुछ कम दिन व तेरह मुहूर्त

व्याथ
 सूत्र
 पाठ्य

रात्रि स० सोलह मु० मुहूर्त का दि० दिन चो० चौदह मुहूर्त की रा० रात्रि सो० सोलह मु० मुहूर्तान्तर
 रसमुहुत्ते दिवसे, पणरस मुहुत्ताराई पणरस मुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेग पणरस मुहुत्ता
 राई चौदसमुहुत्ते दिवसे सोलस मुहुत्ताराई। चौदसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगा सोलस मुहु-
 त्ता राई ॥ तेरस मुहुत्ते दिवसे सत्तरस मुहुत्ता राई। तेरस मुहुत्ताणंतरे दिवसे, साइरेगा सत्त-
 रस मुहुत्ता राई ॥ जयाणं जंबूदाहिण्डु जहणए दुवालस मुहुत्ते दिवसे भवइ तयाणं उत्तर
 ह्वेवि। जयाणं उत्तरह्वे तयाणं जंबूदीवेदीवे मंदरसस पुरच्छिमं उक्कोसिया अ-
 ट्ठारस मुहुत्ता राई ? हंता गोयमा ! एवं धेव उच्चारेयब्बं जाय राई भवइ ॥ ९ ॥

जयाणं भंते ! जंबू मंदर पुरच्छिमेणं जहणए दुवालस मुहुत्ते दिवसे भवति तयाणं
 मे अधिक रात्रि, सोलह मुहूर्त का दिन चौदह मुहूर्त की रात्रि; सोलह मुहूर्त मे कुछ कम दिन; चौदह
 मुहूर्त मे अधिक रात्रि; पन्नरह मुहूर्त का दिन, पन्नरह मुहूर्तकी रात्रि, पन्नरह मुहूर्तमें कुछ कम दिन व पन्नरह
 मुहूर्त मे अधिक रात्रि; चौदह मुहूर्त का दिन सोलह मुहूर्त की रात्रि, चौदह मुहूर्त मे कम दिन सोलह
 मुहूर्त से अधिक रात्रि तेरह मुहूर्तका दिन सत्तरह मुहूर्तकी रात्रि, तेरह मुहूर्त से कम दिन व सत्तरह मुहूर्त से अधिक
 रात्रि और बारह मुहूर्त का दिन व अठारह मुहूर्तकी रात्रि जानना. ॥ ९ ॥ अहो भगवन् ! ज व जम्बू मंदर
 की पूर्वे में जयन्य बारह मुहूर्त का दिन है तव क्या उत्तर दक्षिण में उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त की रात्रि होती

हां गो० गौतम ज० जब ज० जम्बूद्वीप जा० जावत् रा० रात्रि भ० होती है ॥ ७ ॥ पूर्ववत् ॥ ८ ॥ ए०
 ऐसे ३० इस क० क्रम से ७० कहना स० सत्तरह मु० मुहूर्त का दि० दिन ते० तेरह मु० मुहूर्त की रा०
 रात्रि भ० होती है स० सत्तरह मु० मुहूर्तान्तर दि० दिवस सा० अधिक ते० तेरह मु० मुहूर्त की रा०
 राई भवइ ? हंता गोयमा ! जयाणं जंबू जाव राई भवइ ॥ ७ ॥ जयाणं भंते !
 जंबू मंदरस पुरिच्छिमेणं अट्टारस मुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ तयाणं पच्चिच्छिमेणं अट्टारस
 मुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ, जयाणं पच्चिच्छिमेणं अट्टारस मुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ तयाणं
 जंबूमंदरउत्तरदाहिणेणं साइरेगा दुवालस मुहुत्ता राई भवइ ? हंता गोयमा ! जाव भवइ
 ॥ ८ ॥ एवं एएणं कमेणं उच्चारेयव्वं सत्तरस मुहुत्ते दिवसे, तेरस मुहुत्ता राई भवइ ।
 सत्तरस मुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ, साइरंगतेरसमुहुत्ता राई । सोलसमुहुत्ते दिवसे
 चौदस मुहुत्ता राई. सोलस मुहुत्ताणंतरे दिवसे, साइरंग चौदस मुहुत्ताराई ॥ पण्ण-
 में जब अठारह मुहूर्त से कम का दिन होता है तब पूर्व पश्चिम में बारह मुहूर्त से अधिक रात्रि होती है.
 ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! जब जम्बू मंदर की पूर्व पश्चिम में अठारह मुहूर्त के अंतर का दिन होता है तब
 वया उत्तर दक्षिण में बारह मुहूर्त से अधिक रात्रि होती है ? हां गौतम ! जब जम्बू मंदर के पूर्व पश्चिम में
 अठारह मुहूर्त के अंतर का दिन होता है तब बारह मुहूर्त से अधिक की रात्रि होती है. ॥ ८ ॥ ऐसे ही
 अनुक्रम से सत्तरह मुहूर्त का दिन तेरह मुहूर्त की रात्रि, सत्तरह मुहूर्त से कुछ कम दिन व तेरह मुहूर्त

ज० जम्बूद्वीप के दा० दक्षिण में वा० वर्षा का प० प्रथम स० समय प० होता है त० तैसे ही जा० यावत् प० होता है ॥ ११ ॥ ज० जब भ० भगवन् ज० जम्बूद्वीप के म० मेरु की पु० पूर्वे में वा० वर्षा का प० प्रथम स० समय प० होता है त० तव प० पश्चिम में वा० वर्षा का प० प्रथम स० समय में प० होता है ॥ ज० जब प० पश्चिम में वा० वर्षा का प० प्रथम स० होता है त० तव जा० यावत् म० मेरु पर्वत की उ० उत्तर दा० दक्षिण में अ० अन्तर प० पश्चात् कृत स० समय में

पुरक्खकडं समयंसि वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ ? हंता गोयमा ! जयाणं जंबू दाहिण्हे वासाणं पढमसमए पडिवज्जइ, तहचेव जाव पडिवज्जइ ॥ ११ ॥ जयाणं भंते ! जंबूद्वीवेदीवे मंदरस्स पुरच्छिमेणं वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ, तयाणं पच्चच्छिमेणं वि वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ, जयाणं पच्चच्छिमेणं वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ, तयाणं जाव मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं अणंतर पच्छाकड

कृतु का प्रथम समय होता है तव पूर्व पश्चिम में अन्तर आगापिक वर्षाकृतु का प्रथम समय होता है ॥ ११ ॥ जब जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत की पूर्वे व पश्चिम दिशा में वर्षा का प्रथम समय होता है तव क्या उत्तर व दक्षिण दिशा में अन्तर अतीत काल में वर्षा का प्रथम समय होता है ? हाँ गौतम ! जब पूर्व पश्चिम में वर्षा का प्रथम समय होता है तव उत्तर व दक्षिण में

* मकाशक-राजाबहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामग्रादजी *

दिवस सा० कुछ अधिक चो० चौदह मुहूर्त रा० रात्रि ष० पन्नरह शेष पूर्ववत् ॥ १ ॥ १० ॥ ज० जय
ज० जम्बूद्वीप के दा० दक्षिणार्ध में वा० वर्षा का प० प्रथम स० समय प० होता है त० तत्र उ० उत्त-
रार्ध में भी वा० वर्षा का प० प्रथम समय प० होता है ज० जय उ० उत्तरार्ध में वा० वर्षा का प० प्रथम स०
समय प० होता है त० तत्र ज० जम्बूद्वीप में मं० मेरु की पु० पूर्व में प० पश्चिम में अ० अन्तर पु०
आगापिक स० समय में वा० वर्षा का प० प्रथम स० समय प० होता है इ० हां गो० गौतम ज० जय

पच्चत्थिमेण वि जयाणं पच्चत्थिमेण वि तयाणं जंबू मंदर उत्तरदाहिणेणं उक्को-

सिया अट्टारस मुहुत्ता राई ? हंता गोयमा ! जाव राई भवइ ॥ १० ॥
जयाणं भंते ! जंबूद्वीविदीवे दाहिणद्धे वासाणं पढमे समए पडिवजइ, तयाणं
उत्तरद्धेवि वासाणं पढमे समए पडिवजइ, जयाणं उत्तरद्धे वासाणं पढमे
समये पडिवजइ तयाणं जंबूद्वीविदीवे मंदर पुरच्छिमे पच्चच्छिमेणं अणंतर

हे ? हां गौतम ! जय जम्बू मंदर की पूर्व पश्चिम में बारह मुहूर्त का दिन होता है तत्र दक्षिण में अठारह
मुहूर्त की रात्रि होती है ॥ १० ॥ अहां भगवन् ! जय जम्बूद्वीप के मेरु की दक्षिण में वर्षा ऋतु का
प्रथम समय होता है तत्र उत्तर में वर्षा ऋतु का प्रथम समय होता है जय उत्तर में
वर्षा ऋतु का प्रथम समय होता है तत्र क्या जम्बू मंदर की पूर्व पश्चिम में अन्तर आ-
गापिक काल का वर्षा ऋतु का प्रथम समय होता है ? हां गौतम ! जय उत्तर दक्षिण में वर्षा

शब्दार्थ

सूत्र

ार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

प० होता है ज० जैसे वा० वर्षा का अ० अभिलाष त० तैस हे० हेमंत का गि० ग्रीष्म का भी भा०
 कहना जा० यावत् उ० ऋतु ए० ऐसे ए०उत्त ति० तीन प० पद की साथ ती०तिसि आ० आलापक भा०
 कहता ॥१३॥ ज०जव दा० दक्षिण में प०गयम अ०अयन प० होती है त०तत्र उ०उत्तरार्ध में प०प्रथम अ०
 अयन प० होती है ज० जैते स० समय का अ० अभिलाष त० तैस अ० अयन से भा० कहना जा०

हेमंताणं पढमे समए पडिवज्जइ, जहेव वासाणं अभिलावो तहेव हेमंताणवि गि-
 म्हाणवि भाणियव्वो जाव उऊ ॥ एवं एए तिण्णिवि पएसिं तीसं आलावगा भा-
 णियव्वा ॥ १३ ॥ जयाणं भंते ! जंबू दाहिण्डु पढमे अयणे पडिवज्जइ, तयाणं
 उत्तरइंवि पढमे अयणे पडिवज्जइ, जहा समएणं अभिलावो तहेव अयणेणवि

मेरु पर्वत की उत्तर, दक्षिण में हेमन्त ऋतु का प्रथम समय होता है तब क्या पूर्व पश्चिम में अनंतर अ-
 नागत काल में हेमन्त का प्रथम समय होता है ? अहो गौतम ! जैसे वर्षा ऋतु का कहा, वैले ही हेमन्त
 ऋतु का जानना. और ऐसे ही ग्रीष्म ऋतु का जानना. इस तरह तीन ऋतु की साथ समयादिक के
 तीस आलापक हुए ॥ १३ ॥ अहो भगवन् ! जब दक्षिण व उत्तर विभाग में अयन होती है तब क्या
 पूर्व पश्चिम में अनंतर आंगामिक अयन होती है ? हां गौतम ! इस का सब कथन समय जैसे करना

* प्रकाशक-राजाचन्द्र आश सुखदेवमहायजी ज्वालामपादजी *

वा० वर्षा का प० प्रथम स० समय प० हुवा भ० होता है। हे० हां गो० गौतम ज० त्रयं जं० जंम्बू मं० मेरु पु० पूर्ण में ए० ऐसे उ० कहना जा० यावत् प० हुवा भ० होवे ए० ऐसे जं० जैसे स० समय से अ० अभिलाष भा० कदा व० वर्षा का त० तैसे आ० आवलिका से भा० कहना आ० श्वासोश्वास थो० थोत्र ल० लव मु० मुहूर्त अ० अहोरात्रि प० पक्ष भा० मास उ० क्रतु से ए० इन स० सत्र से ज० जेने स० समय का अ० अभिलाष त० तैने भा० कहना ॥ १२ ॥ ज० जब हे० हेमंत का प० प्रथम स० समय

समयसि वासाणं पढमे समए पडिवणणे भवइ ? हंता गोयमा ! जयाणं जंबूमंदरं पुरच्छिमेणं एवं चैव उच्चारेयव्वं जात्र पडिवणणे भवइ, एवं जहा समएणं अभिलावा भाणिओ वासाणं तथा आवलियाएव्वि भाणियव्वो, आणा पाणूणवि, थोवेणवि, लवेणवि, मुहुत्तेणवि, अहोरत्तेणवि, पक्खेणवि, मासेणवि, उऊणावि । एएसि सव्वेसि जहा समयस्स अभिलावो तथा भाणियव्वो ॥ १२ ॥ जयाणं भंते ! जंबूदीविदीवि

अंतर अनीत काल में वर्षा का प्रथम समय होता है। अर्थात् प्रथम दक्षिण उत्तर विभाग में वर्षा काल होता है फिर पूर्व पश्चिम में होता है। ऐसे ही जैसे समय का कहा वैसे ही आवलिका, श्वासोश्वास, स्त्रीक, लव, मुहूर्त, अहोरात्रि, पक्ष, मास व क्रतुका जानना ॥ १२ ॥ अहो भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के

द्वीप के दा० दक्षिण में प० प्रथम ओ० अवसर्पिणी प० है त० तत्र उ० उत्तर में भी प० प्रथम ओ० अवसर्पिणी प० होती है ज० जब उ० उच्चार में प० प्रथम ओ० अवसर्पिणी ज० जम्बूद्वीप के म० मेरु पर्वत की पु० पूर्व में प० पश्चिम में भी ने० नहीं अ० है ओ० अवसर्पिणी उ० उत्सर्पिणी अ० अवस्थित त० वहां का० काल प० प्ररूपा स० श्रमण आ० आयुष्मन् हे० हां गो० गौतम तं० वैसे ही उ० कहना जा० यावत् स० श्रमण आ० आयुष्मन् ज० जैसे ओ० अवसर्पिणी आ० आलापक भा० कहना ए० ऐसे

पढमा ओसर्पिणी पडिवज्जइ, तयाणं उत्तरहेवि पढमा ओसर्पिणी पडियज्जइ; जयाणं भंते ! उत्तरहे पडिवज्जइ तयाणं जंबूद्वीविदीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरच्छिमेणं पच्चच्छिमेणवि नेवत्थि ओसर्पिणी उत्सर्पिणी अवट्टिएणं तत्थकाले पण्णत्ते समणा-उसो ? हंता गोयमा ? तंचेव उच्चारेयव्वं जाय समणाउसो जहा ओसर्पिणीए

दक्षिण विभाग में अवसर्पिणी होती है तत्र उत्तरविभाग में भी अवसर्पिणी होती है और जत्र उत्तर विभाग में अवसर्पिणी है तत्र क्या पूर्व पश्चिम विभाग में अवसर्पिणी उत्सर्पिणी नहीं है ? क्या वहां अवस्थित काल होता है ? हां गौतम ! जत्र उत्तर दक्षिण विभाग में अवसर्पिणी होती है तत्र पूर्व पश्चिम विभाग में अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कुछ नहीं होती है परंतु वहां पर अवस्थित काल होता है. ऐसे उत्सर्पिणी का

यावत् अ० अनंतर प० पश्चात् क० कृत स० समय में प० प्रथम अ० अयन प० प्रतिपन्न भ० होती है.
 ज० नीसा अ० अयन का अ० अभिलाप त० तैसे सं० संवत्सर से भा० कहना जु० युग वा० शतवर्ष
 वा० सहस्र वर्ष से वा० वर्ष लक्ष पु० पूर्वांग से पु० पूर्व से तु० द्रुष्टिांग तु० तुष्टित प० ऐभे पु० पूर्व तु०
 तुष्टित अ० अड्ड अ० अवव हू० हूहूय उ० उप्पल प० पन्न न० नलिन अ० अत्थिनिर अ० अउय न० नउय प०
 पउय चू० चूलिका सी० शीर्षप्रहेलिका प० पत्योपम सा० सागरोपम भा० कहना ॥ १४ ॥ ज० जत्र जं० जम्बू-

भाणियन्वो, जाव अणंतरपच्छाकडसमयंसि पढमे अयणे पडिवन्ने भवइ. ॥

जहा अयणेणं अभिलावा तहा संवच्छेरेणवि भाणियन्वो ॥ जुएणवि, वाससएणवि,

वाससहस्सेणवि, वाससयसहस्सेणवि, पुव्वंगेणवि, पुव्वेणवि, तुडियंगेणवि, तुडि-

एणवि, एवं पुव्वे, २ तुडिए २, अडडे २, अववे २, हूहूय २ उप्पले २, पउमे २,

नल्लिणे २, अत्थिणेउरे २, अउए २, णउए २, पउए २, चूलिए २, सीसपहेलिया पलि-

ओवमेणवि, सागरेणवि, भाणियन्वो ॥ १४ ॥ जयाणं मंते ! जंबूद्वीवेदिवे दाहिणद्धे

जेमे अपनका कहा वेसे ही दो अयन का संवत्सर, पांचसंवत्सर का युग, सो वर्ष, सहस्र वर्ष, लक्षवर्ष, चौरासी
 लक्ष वर्ष का एक पूर्वांग, चौरासी पूर्वांग का पूर्व, बं० ही हूहूय २ उप्पल ३ पन्न २ नल्लिण २ अत्थिणेउर २
 अउय २ नउय २ पउय २ चूलिए, शीर्षप्रहेलिका, पत्योपम व सागरोपम का जानना ॥ १४ ॥ जत्र जम्बूद्वीप के

द्वीप के दा० दक्षिण में प० प्रथम ओ० अवसर्पिणी प० है त० तव उ० उत्तर में भी प० प्रथम ओ० अवसर्पिणी प० होती है ज० जब उ० उत्तर में प० प्रथम ओ० अवसर्पिणी ज० जम्बूद्वीप के मं० मेरु पर्वत की पु० पूर्व में प० पश्चिम में भी ने० नहीं अ० है ओ० अवसर्पिणी उ० उत्सर्पिणी अ० अवस्थित त० वहाँ का० काल प० प्ररूपा स० श्रमण आ० आयुष्मन् हं० हां गो० गौतम तं० वैसे ही उ० कहना जा० यात्रत् स० श्रमण आ० आयुष्मन् ज० जैसे ओ० अवसर्पिणी आ० आलापक भा० कहना ए० ऐसे

पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ, तयाणं उत्तरहेत्वि पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ; ज्याणं भंते ! उत्तरहे पडिवज्जइ तयाणं जंबूद्वीवेदीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरच्छिमेणं पच्चच्छिमेणवि नेवत्थि ओसप्पिणी उत्सप्पिणी अवट्टिएणं तत्थकाले पणत्ते समणाउसो ? हंता गोयमा ? तंचेव उच्चारयेव्वं जाव समणाउसो जहा ओसप्पिणीए

दक्षिण विभाग में अवसर्पिणी होती है तव उत्तरविभाग में भी अवसर्पिणी होती है और जब उत्तर विभाग में अवसर्पिणी है तव क्या पूर्व पश्चिम विभाग में अवसर्पिणी उत्सर्पिणी नहीं है ? क्या वहाँ अवस्थित काल होता है ? हां गौतम ! जब उत्तर दक्षिण विभाग में अवसर्पिणी होती है तव पूर्व पश्चिम विभाग में अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कुछ नहीं होती है परंतु वहाँ पर अवस्थित काल होता है. ऐसे उत्सर्पिणी का

(पढमा ओसप्पिणी) (उत्तरहेत्वि) (पढमा ओसप्पिणी) (पच्चच्छिमेणवि) (नेवत्थि) (ओसप्पिणी) (उत्सप्पिणी) (अवट्टिएणं) (तत्थकाले) (पणत्ते) (समणाउसो) (गोयमा) (तंचेव) (उच्चारयेव्वं) (जाव) (समणाउसो) (जहा) (ओसप्पिणीए)

भावार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

उ० उत्तरीणी भा० कहना ॥ १५ ॥ ल० लवण स० समुद्र में सूर्य उ० ईशान कौन में उ० उदित होकर ज० जैसी ज० जम्बूद्वीप की व० वक्तव्यता भ० कही स० वैसी ही स० सत्र अ० विशेषता रहित ल० लवण समुद्र की भा० कहना न० विशेष अ० अभिलाष इ० यह जा० जानना ज० जत्र ल० लवण समुद्र में दा० दक्षिण में दि० दिन भ० होता है त० वैसे ही जा० यावत् त० तत्र ल० लवण समुद्र की पु० पूर्व पश्चिम में रा० रात्रि भ० होती है ए० इस अ० अभिलाष भे ने० जानना जा० यावत् ज० जत्र भ० भगवन् ल० लवण समुद्र में दा० दक्षिण में प० प्रथम ओ० अवसरिणी प० होती है त०

आलावओ भाणियव्वो । एवं उस्सप्पिणीएवि भाणियव्वो ॥ १५ ॥ लवणेणं भंते ।

समुद्दे सूरिया उदीचिपाइण सुग्गच्छ जच्चेव जंबूद्वीवस्स वत्तव्वया भाणिया, सच्चेव सब्वा अपरिसेसिया लवणसमुद्दस्सवि भाणियव्वा, णवरं अभिलावो इमो ज्जणियव्वो जयाणं भंते ? लवणसमुद्दे दाहिणद्धे दिवसे भवइ तंचेव जाव तयाणं लवण समुद्दे पुराच्छिम पच्चिमेणं राई भवइ ॥ एणं अभिलविणं नेयव्वं जाव जयाणं भंते ?

जानना ॥ १५ ॥ अहो भगवन् ! लवण समुद्र में सूर्य ईशान कौन में उदित होकर अग्नि कौन में क्या भ्रम होता है ? हां गौतम ! इन का सत्र वर्णन जम्बूद्वीप जैसे जानना यावत् लवण समुद्र में दक्षिण भाग में दिन होता है तत्र पूर्व पश्चिम में रात्रि होती है यावत् लवण समुद्र के दक्षिण भाग में प्रथम अ-

शब्दार्थः ॥ १५ ॥ लवण समुद्र में सूर्य उदित होकर जैसी जम्बूद्वीप की वक्तव्यता कही स वैसी ही सत्र अ विशेषता रहित ल लवण समुद्र की भा कहना न विशेष अ अभिलाष इ यह जा जानना ज जत्र ल लवण समुद्र में दा दक्षिण में दि दिन भ होता है त वैसे ही जा यावत् त तत्र ल लवण समुद्र की पु पूर्व पश्चिम में रा रात्रि भ होती है ए इस अ अभिलाष भे ने जानना जा यावत् ज जत्र भ भगवन् ल लवण समुद्र में दा दक्षिण में प प्रथम ओ अवसरिणी प होती है त

एवमन्तं त्रैलोक्यं पञ्चमं (संज्ञा) ॥

तव उ० उत्तरार्ध में प० प्रथम ओ० अवसर्पिणी ज० जत्र उ० उत्तरार्ध में ओ० अवसर्पिणी प० हे त० तव ल० लवण समुद्र में पु० पूर्व प० पश्चिम में ने० नहीं है ओ० अवसर्पिणी उ० उत्सर्पिणी स० श्रमण आ० आयुष्यन् ह० हां गो० गौतम जा० यावत् स० श्रमण आ० आयुष्यन् ॥ १६ ॥ धा० धातकी खंड में भं० भगवन् दी० द्वीप में सू० सूर्य उ० ईशान कौन में उ० उदित होकर ज० जैसे जं० जम्बू द्वीप की य० वक्तव्यता स० मत्र धा० धातकी खंडकी भा० कहना ण० विशेष इ० इस आ० अभिलाप भे स० सब आ० आलापक भा० कहना ॥ १७ ॥ ज० जत्र भं० भगवन् धा० धातकी खंड दी० द्वीप लवण समुद्रे दाहिणद्वे पठमा ओसर्पिणी पडिवज्जइ, तयाणं उत्तरद्वे पठमा ओस-

र्पिणी पडिवज्जइ, जयाणं उत्तरद्वे पठमा ओसर्पिणी पडिवज्जइ, तयाणं लवण समुद्रे पुरच्छि-
म पच्चाच्छिमेणं नेवत्थि ओसर्पिणी उत्सर्पिणी समणाउत्तो ? हंता गोयमा ! जाव समणा-
उत्तो ॥ १६ ॥ धायइखंडेणं भंते ! दीवे सुरिया उदीधिर्पाइण मुग्गच्छ जहेव जंबूद्वीवस्स
वत्तव्वया, सव्वेव धायइखंडस्सत्थि भाणियव्वा, णवरं इमेणं अभिलावेणं सव्वे आलावग्गा
भाणियव्वा ॥ १७ ॥ जयाणं भंते ! धायइखंडेदीवे दाहिणद्वे दिवसे भवइ, तयाणं उत्तरद्वे वि-

वसर्पिणी हे तव पूर्व पश्चिम में अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कुच्छ नहीं है, वगैरह अधिकार जाननां ॥ १६ ॥
अहो भगवन् ! धातकीखंड में सूर्य ईशान कौन में उदित होकर अग्नि कौन में क्या अस्त होता है ?
हां गौतम ! इस का सब अधिकार जम्बूद्वीप जैसे कहना ॥ १७ ॥ जत्र धातकी खंड के दक्षिण विभाग

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

में दा० दक्षिण में दि० दिन भ० होता है त० तत्र उ० उत्तर में भी दि० दिन भ० होता है ज० जब उ० उत्तर में भी त० तत्र धा० धातकी खंड दी० द्वीपमें भ० मेरु प० पर्वतोंकी पु० पूर्व प० पश्चिम में रा० रात्रि भ० होती है हं० हां गो० गौतम जा० यावत् रा० रात्रि भ० होती है ॥ १८ ॥ पूर्ववत् ॥ १९ ॥ ऐ०

जयाणं उत्तरद्वेवि तयाणं धायइखंडे दीवे मंदराणं पव्वयाणं पुरच्छिम पव्वच्छिमेणं राई भवइ ? हंता गोयमा ! जाव राई भवइ ॥ १८ ॥ जयाणं भंते ! धायइ खंडे दीवे मंदराणं पव्वयाणं पुरच्छिमेणं दिवसे भवइ, तयाणं पव्वच्छिमेणवि, जयाणं पव्वच्छिमेणवि तयाणं धायइ खंडे मंदराणं पव्वयाणं उत्तर दाहिणेणं राई भवइ ? हंता गोयमा ! जाव भवइ ॥ १९ ॥ एवं एणं अभिलावेणं नेयव्वं जाव जयाणं भंते ! दाहिणद्वे पढमा ओसस्पिणी तयाणं उत्तरद्वे, जयाणं उत्तरद्वे तयाणं धायइ

में दिन होता है तत्र उत्तर विभाग में दिन होता है और जब उत्तर विभाग में दिन होता है तत्र पूर्व पश्चिम विभाग में रात्रि होती है ॥ १८ ॥ जब पूर्व पश्चिम विभाग में दिन होता है तत्र उत्तर दक्षिण विभाग में रात्रि होती है ॥ १९ ॥ इसी तरह अवसर्पिणी उत्सर्पिणी तक जानना. जब धातकी खंड के उत्तर दक्षिण विभाग में अवसर्पिणी होती है तत्र पूर्व पश्चिम विभाग में अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कुच्छ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥

शब्दाथ सूत्र ध

पाँववा शतक का पाहेआ ल्पेसा

इम अ० अभिलाप से ने० जानना. शेष पूर्ववत् ॥ २० ॥ ज० जैसे ल० लवण समुद्र की व० वक्तव्यता त० तैसे का० कालोदधि की भा० कहना न० विशेष का० कालोदधि ना० नाम भा० कहना. ॥ २१ ॥ अ० आभ्यंतर पु० पुष्करार्ध में भं० भगवन् सू० सूर्य उ० ईशान कौन में उ० उदित होकर ज० जैसे धा० धातकी खंड की व० वक्तव्यता त० तैसे अ० आभ्यंतर पु० पुष्करार्ध की भा० कहना ण० विशेष अ० अभिलाप जा० जानना जा० यावत् त० तत्र अ० आभ्यंतर पु० पुष्करार्ध पं० मेरु की पु० पूर्व में प० पश्चिम से णे० नहीं है ओ० अवसर्पिणी णे० नहीं है उ० उत्सर्पिणी, अ० अवस्थित त० वहाँ का० मंदराणं पवत्रयाणं पुरच्छिम पच्चच्छिमेणं नेत्रस्थि ओसाप्पिणी जात्र समणाउसो ?

हंता गोयमा ! जात्र समणाउसो ॥ २० ॥ जहा लवणसमुद्र वत्तव्वया तथा कालोदहिस्सवि भाणियव्वा, णवरं कालोदहिस्स नामं भाणियव्वं ॥ २१ ॥ अर्द्धिभ- तर पुक्खरड्डेणं भंते ! सूरिया उदीचि पाईण मुग्गच्छ जहेव धायइ खंडस्स वत्तव्वया तहेव अर्द्धिभतर पुक्खरड्डस्सवि भाणियव्वा । णवरं अभिलावो जाणियव्वो, जात्र तया- णं अर्द्धिभतर पुक्खरड्डे मंदराणं पुरच्छिमपच्चच्छिमेणं, नेत्रस्थि ओसाप्पिणी, णेव- नहीं होते हैं ॥ २० ॥ जैसे लवण समुद्र की वक्तव्यता कही जैसे ही कालोदधि समुद्र की वक्तव्यता जानना. इस में कालोदधि नाम कहना ॥ २१ ॥ आभ्यंतर पुष्करार्ध द्वीप का धात की खंड जैसे सब

शब्दार्थ (पवत्रयाणं पुरच्छिम पच्चच्छिमेणं) (नेत्रस्थि) (ओसाप्पिणी) (जात्र) (समणाउसो)

सूत्र

भावार्थ

काल ५० कहा स० श्रमणं आ० आंयुष्मन् से० वैसे ही भं० भगवन् पं० पांचवा स० शतक का प०
मथम उ० उद्देशा सं० संपूर्ण ॥ ५ ॥ १ ॥

रा० राजगृह जा० यावत् ए० ऐसा व० बोले अ० हे भे० भगवन् ई० अल्प पु० सन्नेह वा०
वायु प० पथ्य वायु मं० मंदवायु म० महावायु वा० चलता है हं० हां अ० हे ॥ १ ॥ अ० हे
स्थि उस्सपिणी, अवाट्टिएणं तत्थकाले पणत्ते समणाउसो ! सेवं भंते भंतोत्ति ॥

पंचमसयस्स पढमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ५ ॥ १ ॥

रायगिहे णगरे जाव एवं त्रयासी-अत्थिणं भंते ! इसिं पुरेवाया, पंथावाया, मंदावाया
महावाया वायंति ? हंता अत्थि ॥ १ ॥ अत्थिणं भंते ! पुरिच्छिमेणं इसिं पुरेवाया

आव्यपक कहना. यावत् पुंफ्करार्थ द्वीप में पूर्व पश्चिम विभाग में अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कुछ नहीं है. परंतु
अवस्थित काल रहा हुआ है. अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य हैं. यह पांचवा शतकका पहिला
उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ ५ ॥ १ ॥

प्रथम उद्देशे में दिशि में दिवसादिक के विभाग कहे. अब इस में वायु के भेद कहे हैं. राजगृही
नगरी में श्री श्रमण भगवन् महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार कर श्री गौतम स्वामी ऐसा पूछते लगे
कि अहो भगवन् ! अल्प स्नेह सहित वायु, वनस्पत्यादिकको पथ्यकारी वायु, मंद वायु व महा वायु

भं० भगवन् पु० पूर्व में ए० ऐसे प० पश्चिम में दा० दक्षिण में उ० उत्तर में उ० ईशान में
 दा० अग्नि दा० नैऋत्य उ० वायव्य ॥ २ ॥ ज० जत्र भं० भगवन् पु० पूर्व में ई० थोडा पु० सस्नेह वायु
 प० पथ्य वायु मं० मंदवायु म० महावायु वा० चलता है त० तत्र प० पश्चिम में हं० हां गो० गौतम ऐ०
 पत्थावाया, मंदावाया, महावाया वायंति ? हंता अत्थि ॥ एवं पच्चच्छिमेणं, दाहिणेणं
 उत्तरेणं, उत्तरपुरच्छिमेणं, दाहिणपुरच्छिमेणं, दाहिपच्चच्छिमेणं, उत्तरपच्चच्छिमेणं ॥ २ ॥
 जयाणं भंते ! पुरच्छिमेणं ईसिं पुरेवाया, पत्थावाया, मंदावाया, महावाया वायंति; तयाणं
 पच्चच्छिमेणं वि. ईसिं पुरेवाया, जयाणं पच्चच्छिमेणं ईसिं पुरेवाया, तयाणं पुरच्छिमे-
 णवि ? हंता गोयमा ! जयाणं पुरच्छिमेणं तयाणं पच्चच्छिमेणवि ईसिं । जयाणं पच्च-
 क्या चलते हैं ? हां गौतम ! उक्त प्रकार के वायु चलते हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! क्या पूर्व दिशा में
 अल्प स्नेहवाला वायु, पथ्यकारी वायु, मंद वायु व महा वायु चलते हैं ? हां गौतम ! पूर्व दिशा में उक्त
 प्रकार के वायु चलते हैं. ऐमे ही पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ईशान, अग्नि, नैऋत्य व वायव्य कोन में भी
 ऐसे चार प्रकार के वायु चलते हैं ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! जब पूर्व दिशि में स्नेहमय, पथ्य, मंद व
 महा वायु चलते हैं तत्र पश्चिम दिशा में क्या स्नेहमयादि वायु चलते हैं ? हां गौतम ! जब पूर्व में
 उक्त प्रकार के वायु चलते हैं तत्र पश्चिम में भी वैसे वायु चलते हैं. और जब पश्चिम में वैसे वायु चलते

शब्दार्थ (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ)

सूत्र
 स्वात्रार्थ

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

काल पं० कहा स० श्रमण आ० आणुपमन् से० वैसे ही भं० भगवन् पं० पांचवा स० शतक का पं०
प्रथम उ० उद्देशा स० संपूर्ण ॥ ५ ॥ १ ॥

रा० राजगृह जा० यावत् ए० ऐसा व० बोले अ० हे भं० भगवन् ई० अल्प पु० सन्नेह वा०
वायु प० पथ्य वायु मं० मंदवायु म० महावायु वा० चलता है हं० हां अ० हे ॥ १ ॥ अ० हे
त्वि उस्सपिणी, अत्रट्टिएणं तत्थकाले पणत्ते समणाउसो ! सेवं भंते भंतेत्ति ॥

पंचमसयस्स पढमो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ५ ॥ १ ॥

रायगिहे णरं जव एवं त्रयासी-अत्थिणं भंते ! इसिं पुरेवाया, पंथावाया, मंदावाया
महावाया वायंति ? हंता अत्थि ॥ १ ॥ अत्थिणं भंते ! पुरिच्छिमेणं इसिं पुरेवाया

आलापक कहनां. यावत् पुंज्कार्ध द्वीप में पूर्व पश्चिम विभाग में अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कुछ नहीं है. परंतु
अवस्थित काल रहा हुआ है. अहो भगवन् ! आपु के वचन सत्य हैं. यह पांचवा शतकका पहिला
उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ ५ ॥ १ ॥

मथम उद्देशे में दिशि में दिवसादिक के विभाग कहे. अब इस में वायु के भेद कहे हैं. राजगृही
नगरी में श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वाभी को वंदना नमस्कार कर श्री गौतम स्वाभी ऐसा. पूछने लगे
कि अहो भगवन् ! अल्प स्नेह सहित वायु, वनस्पत्यादिकको पथ्यकारी वायु, मंद वायु व महा वायु

इ० यह अ० अर्थ स० योग्य से० अब के० कैसे भं० भगवन् ए० ऐसे तु० कहा जाता है गो० गौतम
 ते० उन वा० वायु को अ० परस्पर वि० विपरीतता से० उस से ल० लवण समुद्र में वे० शिखा ना० उल्लंघने
 नहीं से० अब ते० इसलिये जा० यावत् वा० वायु वा० वाते हैं ॥ ४ ॥ अ० हे भं० भगवन् ई० अल्प
 पु० स्नेहयम वायु प० पथ्य वायु भं० मंदावायु म० महावायु वा० चलता है हं० हां अ० हे क० कव
 मट्टे । से केणट्टेणं भंते ! एवंवुच्चइ, जयाणं दीविच्चया ईसिं णो णंतया सामुद्धिया ईसिं
 जयाणं सामुद्धिया ईसिं णो णंतया दीविच्चया ईसिं ? गोयमा ! तेसिणं वायाणं
 अणमण विवचासेणं लवणसमुद्धेवलं नाइक्कमइ, से तेणट्टेणं जाव वाया वायंति
 ॥ ४ ॥ अत्थिणं भंते ! ईसिं पुरेवाया पच्छावाया, मंदावाया, महावाया, वायंति ? हंता
 अत्थि । कयाणं भंते ईसिं जाव वाया वायंति ? गोयमा ! जयाणं वाउयाए अहारियं
 हजार योजन की पानी की बेल रही हुई है, उसे लोक के स्वभाव से वायु नहीं उल्लंघन सकता है. इस से
 अहो गौतम ! जब द्वीप के वायु चलते हैं तब लवण समुद्र के वायु नहीं चलते हैं और जब लवण समुद्र
 के वायु चलते हैं तब द्वीप के वायु नहीं चलते हैं ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! स्नेहयम वायु, पथ्य वायु, भंदा
 वायु व महावायु चलते हैं ? हां गौतम ! चलते हैं. अहो भगवन् ! वे वायु कब चलते हैं ? अहो
 गौतम ! जब यथारीति भे वह वायुकाय जावे या उसका गमन होवे तब वायुकाय चले. अहो भगवन् ! क्या

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

ऐसे दि० दिशि वि० विदिशि में ॥ ३ ॥ अ० है भं० भगवन् दी० द्वीप प्रत्ययिक ई० अल्प हं० हां अ०
हे अ० है भं० भगवन् सा० समुद्र संबंधी ई० अल्प हं० हां अ० है जं० जव भं० भगवन् दि० द्वीप
प्रत्ययिक ई० अल्प पु० स्नेहमय वायु त० तव सा० समुद्र का ई० अल्प पु० स्नेहमय वा० वायु णो० नहीं

च्छिमेणत्रि ईसिं तयाणं पुरच्छिमेणत्रि ईसिं ॥ एवं दिससु, त्रिदिससु, ॥ ३ ॥

अत्थिणं भंते दीवच्चया ईसिं ? हंता अत्थि ॥ अत्थिणं भंते सामुद्धिया ईसिं ? हंता

अत्थि ॥ जयाणं भंते ! दिवच्चया ईसिं पुरेवाया, तयाणं सामुद्धिया

त्रि ईसिं पुरेवाया, जयाणं सामुद्धियाईसिं तयाणं दीवच्चया ईसिं ? णोइणट्टे स-

हं तव पूर्व में भी चैभे ही वायु चलते हैं, यों चारों दिशि विदिशि का जानना ॥ ३ ॥ अहो भगवन् !
द्वीप संबंधी स्नेहमय वायु क्या होता है ? हां गौतम ! द्वीपसंबंधी स्नेहमय वायु होता है, वैसे ही
समुद्र संबंधी भी स्नेहमय वायु होता है, अहो भगवन् ! जब द्वीपसंबंधी स्नेहमय, पथ्य वायु, मंद वायु,
व भहा वायु चलते हैं: तब क्या लवण समुद्र संबंधी उक्त प्रकार के वायु चलते हैं ? अथवा जब समुद्रके
वायु चलते हैं तब क्या द्वीप के वायु चलते हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है, अहो भगवन् !
यह अर्थ किस कारण से योग्य नहीं है ? अहो गौतम ! उक्त द्वीप व समुद्र ऐसे दोनों प्रकार के वायु में
परस्पर विपरीतपना है अर्थात् ऐसा उन वायुओं का स्वभाव ही रहा हुआ है, अथवा लवण समुद्र में सोलह

का आ० ऊंचाश्वासलेना पा० नीचाश्वासलेना ज० जैसे खं० स्कंदक० त० तैसे च० चार आ० आलापक
 ने० जानना अ० अनेक ग० लक्ष पु० स्पर्श्याहुआ उ० यातकरं स० शरीर सहितं नि० नीकले ॥ ७ ॥
 उ० चांचल कु० कुलथ सु० मदिग ए० ये किं० कौन से स० शरीर वाले व० कहना गो० गौतम उ०
 चांचल कु० कुलथ सु० मदिग जे० जो घ० घन द० द्रव्य ए० ये पु० पाहिले के भा० भाव प० कहा
 हुवा प० आश्रित व० वनस्पति जी० जीव स० शरीर त० उत प० पश्चात् स० शंख से अ० अतिक्रमे

भंते ! वाउयं चैव आपणमंतिवा, पाणमंतिवा, जहा खंदए तथा चत्तारि आलावगा
 नेयव्वा अणेगलथसहसपुट्ठे उदाय ससरीरी निखमइ ॥ ७ ॥ अह भंते !
 उदण्णे, कुम्मासे, सुरा, एणं किं सररीरति वत्तवं सिया ? गोयमा ! उदण्णे,
 कुम्मासे, सुरा य जे घणे दव्वे, एणं पुव्वभाव पणवणं पडुच्च वणस्सइजीव सररीरा

चरती है ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! वायुकाय वायुकाय का क्या श्वासोश्वास लेती है? अहो गौतम ! स्कन्दक के
 अधिकारमें वायुकाय वायुकायाका श्वासोश्वास लेती है. अनेक लक्षवारमंकर वायुकायके जीव वायुकायमें उत्पन्न
 होते हैं. वायुकाय शस्त्रादिक के स्पर्श से मरती है, वैक्रीय व उदारिक शरीर की अपेक्षा से वायुकाय के जीव
 शरीर छोड़कर जाते हैं, तेजस कार्माण की अपेक्षा से शरीर सहित जाते हैं ऐसे चार आलापक जानना ॥ ७ ॥
 अब अहो भगवन् ! ओदन, (चांचल) कुलथ व सुरा इन तीनों को कोन्सा शरीर कहा है? अहो

पुत्रमंत्तं त्रुवणं पणवणं (अणमंतिवा) (पाणमंतिवा)

सूत्र भावार्थ

* मन्मथक-राजावहादुर लाला मुखर्जी-महायजी जालाप्रसादजी *

भं० भगवन् ई० अल्प जा० यावत् वा० वायु वा० वाता है गो० गौतम ज० जब वा० वायु अ० यथच्छ रि० जाता है त० तव ई० अल्प जा० यावत् वा० चलता है ॥ ५ ॥ वा० वायु काय उ० उत्तर वैश्रव वा० वायु कुमार वा० वायु कुमारी अ० स्वतः के प० अन्य के उ० दोनों के अ० लिये वा० वायु काया की उ० उद्दीर्णना करे त० तव ई० अल्प पु० स्नेहवाला वायु ॥ ६ ॥ वा० वायु काय वा० वायु

रियंति तयाणं ईसिं जाव वायंति ॥ अस्थिणं भंते ईसिं ? हंता अस्थि ! कयाणं भंते !

ईसिं जाव वायंति ? गोयमा ! जयाणं वाउयाए उचरकिरियं रियइ, तयाणं ईसिं

॥ ५ ॥ अस्थिण भंते ! ईसिं ? हंता अस्थि । कयाणं भंते ! ईसिं पुरेवाया पुच्छा ?

गोयमा ! जयाणं वाउकुमारा, वाउकुमारीओ वा, अप्पणो परस्स वा तदुभयरस

वा अट्टाए वाउकायं उदीरंति, तयाणं ईसिं पुरेवाया ॥ ६ ॥ वाउयाएणं

स्नेहपयादि वायु चलते हैं ? हां गौतम ! स्नेहपयादि वायु चलते हैं. अहो भगवन् ! वे वायु कत्र

चलते हैं ? अहो गौतम ! वायुकाय का शरीर उदारिक है, उत्तरवैश्रव करके शरीराश्रितक्रियासे उनका

जब गमन होवे तब वे चले ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! क्या स्नेहपयादि चार प्रकार के वायु हैं ?

हां गौतम ! अहो भगवन् ! वे स्नेहपयादि वायु कत्र चलते हैं ? अहो गौतम ! जब वायुकुमार

देव स्वतः के लिये, अन्य के लिये अथवा दोनों के लिये वायुकाय नीकालते हैं तब वायुकाय

का आ० ऊंचाश्वासलेना पा० नीचाश्वासलेना ज० जैसे खं० स्कंदक त० तेसे च० चार आ० आलापक
ने० जानना अ० अनेक म० लक्ष पु० स्पश्याहुआ उ० घातकरं स० शरीर सहित नि० नीकले ॥ ७ ॥
उ० चांचल कु० कुलथ सु० मदिरा ए० ये किं० कौन से स० शरीर वाले व० कहनां गो० गौतम उ०
चांचल कु० कुलथ सु० मदिरा जे० जो घ० घन द० द्रव्य ए० ये पु० पहिले के भा० मात्र प० कहा
हुवा प० आश्रित व० वनस्पति जी० जीव स० शरीर त० उत प० पश्चात् स० शस्त्र से अ० अतिक्रमे

भंते ! वाउयं चैव आणमंतिवा, पाणमंतिवा, जहा खंदए तथा चत्तपि आलावगा

नेयव्वा अणेगसयसहसपुट्ठे उद्वाय ससरीरी निक्खमइ ॥ ७ ॥ अह भंते !

उदण्णे, कुम्मासे, सुरा, एएणं किं सरीराति वत्तवं सिया ? गोयमा ! उदण्णे,
कुम्मासे, सुरा य जे घणे दब्बे, एएणं पुब्बमात्र पणवणं पडुच वणस्सइजीव सरीरा

चरती है ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! वायुकाय वायुकाय का क्या श्वासोश्वास लेती है? अहो गौतम ! स्कन्दक के
अधिकारमें वायुकाय वायुकायाका श्वासोश्वास लेती है. अनेक लक्षवार मंरकर वायुकायके जीव वायुकायमें उत्पन्न
होते हैं. वायुकाय शब्दादिक के स्पर्श से मरती है, वैक्रिय व उदारिक शरीर की अपेक्षा से वायुकाय के नीच
शरीर छोड़कर जाते हैं, तेजस कार्माण की अपेक्षा से शरीर सहित जाते हैं ऐसे चार आलापक जानना ॥ ७ ॥
अब अहो भगवन् ! ओदन, (चांचल) कुलथ व सुरा इन तीनों को कोरसा शरीर कहा है? अहो

* प्रकाशक-राजावट्टादुर लाला सुबदेव (सहायजी) ज्वालाप्रसादजी *

भं० भगवन् ई० अल्प जा० यावत् वा० वायु वा० वाता है गो० गौतम ज० जब वा० वायु अ०
ग्यच्छ रि० जाता है त० तव ई० अल्प जा० यावत् वा० चलता है ॥ ५ ॥ वा० वायु काय उ० उत्त
वैश्रव वा० वायु कुमार वा० वायु कुमारी अ० स्वतः के प० अन्य के उ० दोनों के अ० लिये वा० वायु
काया की उ० उदीरणा करे त० तव ई० अल्प पु० स्नेहवाला वायु ॥ ६ ॥ वा० वायु काय वा० वायु

रिथंति तयाणं ईसिं जाव वायंति ॥ अत्थिणं भंते ईसिं ? हंता अत्थि ! कयाणं भंते !

ईसिं जाव वायंति ? गोयमा ! जयाणं वाउयाए उत्तरकिरियं रिथइ, तयाणं ईसिं

॥ ५ ॥ अत्थिण भंते ! ईसिं ? हंता अत्थि । कयाणं भंते ! ईसिं पुरेवाया पुच्छा ?

गोयमा ! जयाणं वाउकुमारा, वाउकुमारीओ वा, अप्पणो परस्स वा तदुभयस्स

वा अट्टाए वाउकायं उदीरंति, तयाणं ईसिं पुरेवाया ॥ ६ ॥ वाउयाएणं

त्थेपयादि वायु चलते हैं ? हां गौतम ! स्नेहपयादि वायु चलते हैं. अहो भगवन् ! वे वायु कव

चलते हैं ? अहो गौतम ! वायुकाय का शरीर उदारिक है, उत्तरवैश्रव करके शरीरश्रितक्रिया से उनका

जब गमन होवे तब वे चले ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! क्या स्नेहपयादि चार प्रकार के वायु हैं ?

हां गौतम ! अहो भगवन् ! वे स्नेहपयादि वायु कव चलते हैं ? अहो गौतम ! जब वायुकुमार

देव स्वतः के लिये, अन्य के लिये अथवा दोनों के लिये वायुकाय नीकांलते हैं तब वायुकाय

का आ० ऊँचाश्वासलेना पा० नीचाश्वासलेना ज० जैसे खं० स्कंदक त० तैसे च० चार आ० आलापक
 ने० जानना अ० अनेक ग० लक्ष पु० स्पश्याहुआ उ० घातकरं स० शरीर सहित नि० नीकले ॥ ७ ॥
 उ० चाँवल कु० कुलथ सु० मदिगा ए० ये कि० कौन से स० शरीर वाले व० कहना गो० गौतम उ०
 चावल कु० कुलथ सु० मदिगा जे० जो घ० घन द० द्रव्य ए० ये पु० पहिले के भा० भाव प० कहा
 हुवा प० आश्रित व० वनस्पति जी० जीव स० शरीर त० उत प० पश्चात् स० शस्त्र से अ० अतिक्रमे
 भंते ! वाउयं चैत्र आणमंतिवा, पाणमंतिवा, जहा खंदए तथा चत्तपि आलावगा
 नेयव्वा अणेगसयसहरसपुट्टे उदाय ससरीरी निखमइ ॥ ७ ॥ अह भंते !
 उदण्णे, कुम्मासे, सुरा, एएणं किं सरीराति वत्तवं सिया ? गोयमा ! उदण्णे,
 कुम्मासे, सुरा य जे घणे दव्वे, एएणं पुव्वमात्र पणवणं पडुच्च वणस्सइजीव सरीरा
 चरती है ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! वायुकाय वायुकाय का क्या श्वासोश्वास लेती है ? अहो गौतम ! स्कन्दक के
 अधिकारमें वायुकाय वायुकायाका श्वासोश्वास लेती है. अनेक लक्षवार मंरकर वायुकायके जीव वायुकायमें उत्पन्न
 होते हैं. वायुकाय शब्दादिक के स्पर्श से मरती है, वैक्रेय व उदारिक शरीर की अपेक्षा से वायुकाय के जीव
 शरीर छोड़कर जाते हैं, तेजस कार्माण की अपेक्षा से शरीर सहित जाते हैं ऐसे चार आलापक जानना ॥ ७ ॥
 अब अहो भगवन् ! ओदन, (चाँवल) कुलथ व सुरा इन तीनों को कोन्सा शरीर कहा है ? अहो

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्देवसहायजी ज्वालामसादजी *

हुवे श० शस्त्र से प० परिणमहुवे अ० अग्नि से ज्ञा० जले हुवे अ० अग्नि से ज्ञु० शोपन हुवे अ० अ
 अग्नि से प० परिणमित अ० अग्नि जी० जीव स० शरीर व० वक्तव्यता सि० होवे सु० मदिरा ए० यह
 जे० जो द० प्रवाही ए० वह पु० पूर्वभाव प० आश्रित प० कदा हुवा आ० अप्काय जी० जीव
 स० शरीर तः उस की प० पीछे स० शस्त्र अ० अतिक्रमे जा० यावत् अ० अग्नि जी०
 जीव स० शरीर ॥ ८ ॥ अ० अथ भं० भगवन् अ० लोहा तं० ताम्बा तं० तरुआ सा० सीसा उ० पत्थर क०

तओ पच्छा सत्थातीया, सत्य परिणामिया, अगणिज्झामिया, अगणिज्झासिया अगणि.

सेविया अगणिपरिणामिया, अगणिजिविसरीरातिवा वत्तव्वंसिया । सुरा एय जे देव्ये

एणं पुव्वभाव पणवणं पडुच्च आउजीविसरीरा, तओ पच्छा - सत्थातीया जाव

अगणिजीविसरीरातिवत्तवं सिया ॥ ८ ॥ अहणं भंते ! अये तंबे तउए ससिए उवले.

गौतम ! द्रव्य के दो भेद घनद्रव्य व द्रव (प्रवाही) द्रव्य. जो ओदन व कुलथ घनद्रव्य हैं वे पूर्व पर्याय
 आश्री वनस्पतिकायिक हैं; फीर शस्त्र भे अतिक्रमाये हुवे, शस्त्र से परिणमाये हुवे, अग्नि से धमित, अग्नि
 धमित, व अग्नि से परिणमित उक्त पदार्थों अग्नि के शरीरवाले कहते हैं. और सुरा (शरात्र) प्रवाही
 द्रव्य होने से पूर्व पर्याय आश्री अप्कायिक कहाता है. फीर शस्त्र यावत् अग्नि परिणमने पर अग्नि का-
 यिक कहाता है ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! लोहा, ताम्बा, तरुआ, सीसा, पाषाण, दग्ध कसोटा बौरेह कौन

शब्दार्थ, सूत्र

कसोटा ए० ये किं० कौन से स० शरीर वाले गो० गौतम पु० पृथ्वी स० शरीर वाले त० उस प० पीछे अ० अग्नि जी० जीव स० शरीर वाले ॥ ९ ॥ अ० अथ भं० भगवन् अ० अस्थी अ० जली हुई अस्थी च० चर्म च० जला हुआ चर्म रो० रोम रो० जला हुआ रोम सि० शृंग सि० जला हुआ शृंग सु० खुर सु० जला हुआ खुर न० नख न० जला हुआ नख ए० ये किं० कौन से श० शरीर वाले व० वक्तव्यता सि० है गो० गौतम अ० अस्थी च० चर्म रो० रोम सि० शृंग, सु० खुर न० नख ए० ये त० त्रस प्राण जी० जीव श० शरीर वाले अ० जली हुई हड्डी च० जला चर्म रो० जला रोम सि० जला शृंग सु० जला कसट्टिया एएणं किं सरिराइ वत्तव्वंसिया ? गोयमा! अये, तंवे, तउए, सीसए, उव-ले कसट्टिया एएणं, पुव्वभावणवणं पडुच्च पुढवी जीव सरिरा, तओ पच्छा सत्थाईया जाव अगाणि जीव सरिराइ वत्तव्वंसिया ॥ ९ ॥ अह भंते ! अट्टी, अट्टिज्जामे चम्मे, चम्मज्जामे, रोमे, रोमज्जामे सिंगे, सिंगज्जामे, खुरे, खुरज्जामे, नहे, नहज्जामे एएणं किं सरिराइ वत्तव्वं सिया ? गोयमा ! अट्टी चम्मे रोमे सिंगे से शरीरवान्हे हैं ? अहो गौतम ! पूर्वं पर्याय आश्रित पृथ्वी शरीरवाले हैं और शस्त्र यावत् अग्नि परिणमने से अग्नि शरीरी है ॥ ९ ॥ अहो भगवन् ! हड्डी, जली हुई हड्डी, चर्म, जला हुआ चर्म, ऐसे ही विना जला हुआ व जला हुआ रोम, शृंग, खुर, व नख को कौनसा शरीर कहा है ? अहो गौतम ! अस्थी,

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ब्यालाप्रसादजी *

खुर १० जलाहुवा नख ए० ये पु० पाहिले के भाव प० कहा हुवा प० आश्रित त० त्रस पा० प्राण जीव
स० शरीर त० उन प० पीछे स० शस्त्र से अ० अतिक्रमे जा० जावत् अ० अग्नि जीव व० वक्तव्यता
मि० होवे ॥ १० ॥ अ० अथ भ० भगवन् इ० अंगारे छा० भस्म बु० भूसा गो० छाने ए० ये कि०
कोन ने स० शरीर वाले व० वक्तव्यता मि० होवे गो० गौतम इ० अंगारे छा० भस्म बु० भूसा गो०
छाने पु० पूर्व भाव प० कहा हुवा ए० ये ए० एकेन्द्रिय जीव स० शरीर प० प्रयोग परिणामित जा०
यावत् प० पंचेन्द्रिय स० शरीर प० प्रयोग प० परिणामित त० उम प० पीछे स० शस्त्र अ० अतिक्रमे

खुरे नहे एणुं तसपणजीवसरीरा । अट्टिज्जामे, चम्मज्जामे, रोमज्जामे, सिंगखुर
णहज्जामे एणुं पुव्वभाव पणवणं पडुच्च तस पाण जीव सरीरा
तओ पच्छा सत्थाइया जाव अगणिजीवति वत्तव्वं सिया ॥ १० ॥ अह भंते !
इंगाले, छारिए, बुसे, गोमए एणुं किं सरीराइ वत्तव्वं सिया ? गोयमा ! इंगाले,
छारिए, बुसे, गोमए एणुं पुव्वभाव पणवणं एए एणिंदियजीवसरीरप्पयोग
परिणामियावि जाव पंचिंदिय जीव सरीरप्पयोग परिणामियावि, तओ पच्छा सत्थाइया

चर्म, रोम, शृंग, खुर द नख त्रस प्राणी जीव के शरीर कहाते हैं और जली हुई अस्थी, चर्म, रोम
गौदह पूर्व भव आश्री त्रस प्राणी जीव के शरीर कहाते हैं। फिर शस्त्र यावत् अग्नि परिणमने पर अग्नि
जीव शरीर कहाते हैं ॥ १० ॥ अहो भगवन् ! अंगारे, राख, भूसा व गौवर को कोनसा शरीर कहा ?

जा० यावत् अ० अग्नि जी० जीव स० शरीर व० वक्तव्यता सि० होवे ॥ ११ ॥ ल० लवण भ० भगवन् स० समुद्र में के० कितना च० चक्रवाल वि० विष्कंभपना प० प्ररूपा ए० ऐसे ने० जानना. जा० यावत् लो० लोकस्थिति लो० लोकानुभाव ॥ १२ ॥ से० ऐसे ही भ० भगवन् भ० भगवान जा० यावत् वि० विचरते हैं पं० पांचवे स० शतरु में वी० दूसरा उ० उद्देशा स० समाप्त ॥ ५ ॥ २ ॥

जाव अगणि जीव सररीाइ वत्तव्वंसिया ॥ ११ ॥ लवणेणं भंते ! समुद्दे केव-
इयं चक्रवाल विक्खंभेणं पणत्ते एवं नेयव्वं जाव लोगट्टिई, लोयाणुभावे ॥ १२ ॥
सेवं भंते भंतेत्ति भगवं जाव विहरइ ॥ पंचमसए वीईओ उद्देशो सम्मत्तो ॥ ५ ॥ २ ॥

अहो गौतम ! पूर्ण पर्याय आश्रित एकेंद्रिय यावत् पंचेन्द्रिय का शरीर कहा है. फिर शस्त्र यावत् अग्नि परिणम ने से अग्नि जीव शरीर कहते हैं ॥ ११ ॥ अहो भगवन् ! लवण समुद्र की परिधि कितनी कही ? अहो गौतम ! लवण समुद्र दो लाख योजन का लम्बा चौड़ा है और १५८११३२ योजन से कुछ अधिक की उमकी परिधि कही है वगैरह जीवाधिगम सूत्र से अनुभावतक कहना. अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य हैं ऐसा कहकर तप संयम से आत्मा को भावते हुए श्री गौतम स्वामी विचरने लगे. यह पाँचवा शतकका दूसरा उद्देशा पूर्ण हवा ॥ ५ ॥ २ ॥

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्देवसहायजी ज्वालामुखादजी *

खुरण० जलाहुवा नख ए० ये पु० पाहिले के भाव प० कहा हुवा प० आश्रित त० बस पा० प्राण जीव
स० शरीर त० उम प० पीछे म० शस्त्र से अ० अतिक्रमे जा० जावत् अ० अग्नि जीव व० वक्तव्यता
मि० होवे ॥ १० ॥ अ० अथ भ० भगवन् इ० अंगार छा० भस्म बु० भूना गो० छाने ए० ये कि०
कोन मे स० शरीर बाले व० वक्तव्यता सि० होवे गो० गौतम इ० अंगार छा० भस्म बु० भूसा गो०
छाने पु० पूर्व भाव प० कहा हुवा ए० ये ए० ए० केन्द्रिय जीव म० शरीर प० प्रयोग परिणामित जा०
यावत् प० पंचेन्द्रिय स० शरीर प० प्रयोग प० परिणामित त० उम प० पीछे स० शस्त्र अ० अतिक्रमे

खुरे नहे एणं तसपाणजीवसरीरा । अट्टिज्झामे, चम्मज्झामे, रोमज्झामे, सिंगखुर
णहज्झामे एणं पुव्वभाव पणवणं पडुच्च तस पाण जीव सरीरा
तओ पच्छा संथाइया जाव अगणिजावत्ति वत्तवं सिया ॥ १० ॥ अह भंते !
इंगाले, छारिए, बुसे, गोमए एणं किं सरीराइ वत्तवं सिया ? गोयमा ! इंगाले,
छारिए, बुसे, गोमए एणं पुव्वभाव पणवणं एए एणिंदियजिवसरीरप्पयोग
परिणामियावि जाव पंचिंदिय जीव सरीरप्पयोग परिणामियावि, तओ पच्छा संथाइया

चर्म, रोम, शृंग, खुर इ नख व्रत प्राणी जीव के शरीर कहाते हैं और जली हुई अस्थी, चर्म, रोम
योग्य पूर्व भव आश्री व्रत प्राणी जीव के शरीर कहाते हैं. फीर शस्त्र यावत् अग्नि परिणमने पर अग्नि
जीव शरीर कहाते हैं ॥ १० ॥ अहो भगवन् ! अंगार, राख, भूसा व गोबर को कोनसा शरीर कहा ?

इत्थं च तस पाण जीवसरीरा । अट्टिज्झामे, चम्मज्झामे, रोमज्झामे, सिंगखुर
णहज्झामे एणं पुव्वभाव पणवणं पडुच्च तस पाण जीव सरीरा
तओ पच्छा संथाइया जाव अगणिजावत्ति वत्तवं सिया ॥ १० ॥ अह भंते !
इंगाले, छारिए, बुसे, गोमए एणं किं सरीराइ वत्तवं सिया ? गोयमा ! इंगाले,
छारिए, बुसे, गोमए एणं पुव्वभाव पणवणं एए एणिंदियजिवसरीरप्पयोग
परिणामियावि जाव पंचिंदिय जीव सरीरप्पयोग परिणामियावि, तओ पच्छा संथाइया

युष्य स० सहस्र आ० अनुक्रम से ग० गुंथा हुआ जा० यावत् चि० है ए० एक ही जी० जीव ए० एक स० समय में दो० आ० आयुष्य प० वेदते हैं तं० वह ज० यथा इ० इस भवका प० परभवका जं० जिस स० समय में इ० इस भवका प० वेदता है तं० उस स० समय में प० परभव का प० वेदता है तंजहा इह भवियाउयं च, परभवियाउयं च, जंसमयं इह भवियाउयं पडिसंवेदेइ तं समयं परभवियाउयं पडिसंवेदेइ, जाव से कहमयं भंते ! एवं ? गोयमा ! जणं ते अणउत्थिया तं चैव जाव परभवियाउयं च जे ते एव माहंसु तंमिच्छा. अहं पुण गोयमा ! एवं माइक्खामि जाव अणमण्ण घडत्ताए चिट्ठंति, एवामेव एगमेगरस्स जीवस्स बहूहिं आजाइसहस्सेहिं. बहूहिं आउयसहस्साइं आणुपुट्ठिगंठि- हजारों आयुष्य अनुक्रम से गुन्थे हुवे, बांधे हुवे, यावत् परस्पर वीस्तीर्ण वं धीरवाले रहते हैं. और इस से एक जीव एक समय में इस भव संबंधी व परभव संबंधी ऐसे दो आयुष्य वेदता है. जिस समय में इस भव संबंधी आयुष्य वेदता है उस समय में वह जीव परभव संबंधी आयुष्य वेदता है. और जिस समय में परभव संबंधी आयुष्य वेदता है उस समय में इस भव संबंधी आयुष्य वेदता है. अहां भगवन् ! यह किस तरह है ? अहां गौतम ! अन्य तीर्थिक यावत् परभव भवंधी आयुष्य वेदते हैं वहांतक का

१ यहां कर्म पुद्गल की अपेक्षा से मारपना ग्रहण किया गया है.

शब्दार्थ (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ) (शब्दार्थ)

सूत्र

भावार्थ

अ० अन्यतीर्थिक भ० भगवन् ए० ऐसा आ० कहते हैं प० प्ररूपते हैं से० अब ज० जैसे जा० जाल
 ग्रंथिका आ० अनुक्रम से ग० गुंथीहुई प० परंपरा से ग० गुंथीहुई अ० परस्पर गं० गुंथीहुई अ० परस्पर
 गु० विस्तार युक्त अ० परस्पर भा० वजनदार अ० परस्पर गु० विस्तीर्ण सं० वजनदार अ० परस्पर य०
 रचीहुई वि० हैं ए० ऐसे ही व० बहुत जी० जीवों के व० बहुत आ० आज्ञाति स० सहस्र व० बहुत आ० आ-
 अणउत्थियाणं भंते ! एव माइक्खंति भासेति पणवेति, एवं परूवेति, से जहा नामए जाल
 गंठियाइवा आणपुव्विगंठिया अणंतरगंठिया, परंपरगंठिया, अणमणगंठिया, अणमण
 गुरुयत्ताए, अणमणभारियत्ताए, अणमणगुरुसंभारियत्ताए, अणमणघडत्ताए चिट्ठति
 एवामेव बहूणं जीवाणं बहूसु आज्ञाइसहस्सेसु, बहूइं आउयसहस्साइं आणपुव्वि
 गंठियाइं जाव चिट्ठति । एगे वियणं जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पडिसंवेदेइ-
 दूमेरे उददेशे में समुद्रादिक का सत्यज्ञान ज्ञानियोंने कहा, अब आगे मिथ्यात्वीयोंका असत्यज्ञान कहते हैं.
 श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी को गौतम स्वामी वंदना नमस्कार कर ऐसा प्रश्न पुछने लगे कि अहो
 भगवन् ! अन्य तीर्थिक ऐसा कहते हैं यावत् प्ररूपते हैं कि जैसे मत्स्यं पकडने की जाली अनुक्रम से
 गुंथी हुई, परंपरा (एक ग्रन्थी अनंतर दूसरी ग्रन्थी) से गुन्थी हुई, परस्पर गुन्थो हुई, परस्पर विस्तीर्ण
 परस्पर वजनवाली और विस्तीर्ण व वजनवाली होती है. वैसे ही बहुत देवतादि जन्म में अनेक जीवों के

शब्दार्थ सूत्र

शब्दार्थ सूत्र

चि० हैं ए० ऐसे ही ए० एक ही जी० जीव का व० वदुत आ० आजाति स० सहस्र व० बहुत आ० आयुष्य स० सहस्र आ० अनुक्रम से ग० ग्रथित चि० है शेष पूर्ववत् ॥ १ ॥ जी० जीव भ० भगवन् भ० योग्य ने० नारकी में उ० उपजने को से० वह कि० क्या सा० आयुष्य सहित सं० जाता है। नि० आयुष्य रहित भ० जाता है। गो० गौतम सा० आयुष्य सहित सं० जाता है नो० नहीं नि० आयुष्य रहित सं० जाता है। भे० उसने भ० भगवन् आ० आयुष्य क० कहा क० किया स० संचित किया गो० गौतम पु० पहिले भ० भव में क० किया पु० पहिले भव में सं० संचित किया ए० ऐसे जा०

खलु एगे जंवि एगेणं समएणं एगं आउयं पडिसंवेदेइ, तं जहा इहभविआउयंवा,
पर भविआउयंवा ॥ १ ॥ जीवेणं भंते ! जे भविए नेरइएसु उव्वज्जिच्चए
सेणं भंते किं साउए संकमइ निराउए संकमइ ? गोयसा साउए संकमइ नो निरा-
उए संकमइ ॥ सेणं भंते ! आउए कहिं कडे कहिं समाइण्णे ? गोयसा ! पुरिमे

समय में इस भव के आयुष्य की वेदना नहीं होती है। इसलिये जीव एक समयमें इस भव का अथवा परभव का ऐसा एक ही आयुष्य वेदता है ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! जो जीव यहाँ भे नरक में जाता है वह यहाँपर नरक के आयुष्य का बंध करके जाता है या विना बंध किये हुए जाता है ? अहो गौतम ! नारकी में उत्पन्न होनेवाला नेरया यहाँपर नरक का आयुष्य बांधकर जाता है विना बांधे नहीं जा

जा० यावत् से० वह क० कैसे भं० भगवन् ए० ऐसे गो० गौतम ज० जो ते० वे अ० अन्यतीर्थिक तं०
 वैभे ही जा० यावत् प० परभव का आ० आयुष्य जे० जो ते० वे ए० ऐमा आ० कहते हैं तं० वह मि०
 मिथ्या अ० भै पु० फीर गो० गौतम ए० ऐसा आ० कहता हूँ जा० यावत् अ० परस्पर घ० वननि को
 याई जाव चिह्नति ॥ एगे वियणं जीवे एगणं समएणं एगं आउयं पडिसंवेदेइ तं

जहा इह भवियाउयंवा, परभवियाउयंवा. जं समयं इह भवियाउयं पडिसंवेदेइ नो
 तंसमयं परभवियाउयं पडिसंवेदेइ, जं समयं परभवियाउयं पडिसंवेदेइ णो तं समयं
 इहभवियाउयं पडिसंवेदेइ, इह भवियाउस्स पडिसंवेदणयाए णो परभवियाउयस्स

पडिसंवेदणा, परभवियाउयस्स पडिसंवेदणयाए णो इहभवियाउयस्स पडिसंवेदणा एवं

जो कथन करते हैं वह सब मिथ्या है. परंतु मैं ऐसा कहता हूँ कि ग्रन्थिजाल समान बहुत देवादिक
 जन्म में एक जीव के बहुत हजार आयुष्य अनुक्रम से गुन्याये हुवे रहते हैं और एक जीव एक समय में
 इस भव भवंधी अथवा परभव भवंधी ऐसा एक ही आयुष्य वेद सकता है. अर्थात् जिस समय में इस भव
 भवंधी आयुष्य वेदता है उस समय में परभव भवंधी आयुष्य नहीं वेदता है और जिस समय में परभव
 भवंधी आयुष्य वेदता है उस समय में इस भव भवंधी आयुष्य नहीं वेदता है. क्योंकि इस भव के आयु-
 ष्य की वेदना होते परभव के आयुष्य की वेदना नहीं होती है, और परभव के आयुष्य की वेदना के

प० करते स० सात प्रकार का प० करता है तं वह ज० जैसे र० रत्नप्रभा पु० पृथ्वी के ने० नारकी का आ० आयुष्य जा० यावत् अ० अधो स० सातवी पु० पृथ्वी के ने० नारकी का आ० आयुष्य ति० तिर्यच जो० योनिका आ० आयुष्य प० करते पं० पांच प्रकार का प० करते हैं तं वह ज० जैसे ए० एकेन्द्रिय ति० तिर्यच योनिका आ० आयुष्य भे० भेद स० सब भा० कहना म० मनुष्य का आ० आयुष्य दु० दो प्रकार का दे० देवका आ० आयुष्य च० चार प्रकार का प० करते हैं. ५ ! ३ ॥

रयणप्पभापुठवी नेरइयाउयंवा जाव अहे सत्तमा पुठवी नेरइयाउयंवा, ॥ ति-
रिक्ख जोणियाउयं पकरेमाणे पंचविहं पकरेइ तंजहा एगिंदिय तिरिक्ख जोणियाउ-
यंवा भेदो सब्बो भाणियव्वो । मणुस्साउयं दुविहं पकरेइ देवाउयं चउव्विहं पकरेइ॥
सेवं भंते भंतेत्ति ॥ पंचमसए तईओ उहेसो सम्मत्तो ॥ ५ ॥ ३ ॥ *

सात प्रकार के आयुष्य का बंध करता है, रत्नप्रभा पृथ्वी के नारकी का आयुष्य यावत् सातवी तमत्तमा पृथ्वी के नारकी का आयुष्य. तिर्यच योनि के आयुष्य का बंध करनेवाला एकेन्द्रिय यावत् पंचेन्द्रिय तिर्यच योनि ऐसे पांच प्रकारके आयुष्यका बंध करताहै. कर्मभूमि व अकर्मभूमि ऐसे दो प्रकार के आयुष्य का बंध मनुष्य करता है. और भुवनवति, वाणव्यंतर ज्योतिषी व वैमानिक ऐसे चार प्रकार के आयुष्य का बंध देवों करते हैं. अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य हैं. यह पांचवा शतकका तीसरा अध्याय पूर्ण हुआ ॥ ५ ॥ ३ ॥

* प्रकाशक-राजावहार लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

यावत् वे० वैमानिक का दं० दंडक ॥ २ ॥ से० अब णू० शंकादर्शी भं० भगवत् जे० जो जं० जिस भं० योग्य जो० योनि उ० उत्पन्न होने को से० वह त० उस आ० आयुष्य प० करता है तं० वह ज० जैसे ने० नारकी का आ० आयुष्य जा० यावत् दे० देवताका आ० आयुष्य हं० हां गो० गौतम जे० जो जं० जिस भं० योग्य जो० योनि उ० उत्पन्न होने को से० वह त० उस आ० आयुष्य प० करता है तं० वह ज० जैसे ने० नारकी का आ० आयुष्य दे० देवता का आ० आयुष्य ना० नारकी का आ० आयुष्य भवे कडे, पुरिमे भवे समाइण्णे । एवं जाव वेमाणियाणं दंडओ ॥ २ ॥ से णू० भंते!

जे जं भविए जोणिं उववज्जिच्चए से तमाउयं पकरेइ तंजहा नेरइयाउयंवा, जाव देवाउयंवा ? हंता गोयमा ! जे जं भविए जोणिं उववज्जिच्चए से तमाउयं पकरेइ, तंजहा नेरइयाउयंवा जाव देवाउयंवा । ने इयाउयं पकरेमाणे सत्तविहं पकरेइ तंजहा मरुतां है. अहो भगवन् ! उस जीवने ऐसा आयुष्य कहाँ उपाजित किया ? अहो गौतम ! जीवने ऐसा आयुष्य पूर्वभव में उपाजित किया. जैसे नारकीका कहा वैसे ही वैमानिकतक के चौविसही दंडक का जानना ॥ २ ॥ अहो भगवन् ! नरक यावत् देवयोनि में से जीव जिम योनि में उत्पन्न होने योग्य होता है उनी योनि के आयुष्य का बंध क्या वढ करता है ? हां गौतम ! जिस योनि में उत्पन्न होने योग्य होता है उनी योनि के आयुष्य का बंध करता है. नारकी के आयुष्य का बंध करनेवाला

भं० भगवन् किं० क्या पु० स्पर्शो हुवे सु० सुनते है अ० नहीं स्पर्शो हुवे सु० सुनते है गो० गौतम पु० स्पर्शो हुए सु० सुनते है णो० नहीं अ० नहीं स्पर्शो हुवे सु० सुनते है जा० यावत् निं० निश्चय ही छ० छद्दिशी सु० सुनते है त० तेते भं० भगवन् छ० छद्दिस्थ म० मनुष्य किं० क्या आ० इन्द्रिय विषयिक स० शब्द सु० सुनते है पा० इन्द्रिय विषय से दूर के स० शब्द सु० सुनते है गो० गौतम आ० इन्द्रिय

तंजहा-संखसद्गणिवा जाव झूसिराणिवा ॥ ताइं भंते ! किं पुट्टाईं सुणेइ, अपुट्टाईं सुणेइ ? गोयमा ! पुट्टाईं सुणेइ, णो अपुट्टाईं सुणेइ ; जाव नियमा छदिसिं सुणेइ ॥ तहाणं भंते ! छउमत्थे मणूसे किं आरगयाइं सद्दाइं सुणेइ, पारगयाइं सद्दाइं

प्रमुख का छुपिर शब्द सुन सकते है ? हां गौतम ! छद्दिस्थ मनुष्य हस्त मुख दंडादि से संयोजित शंख के शब्द, यावत् छुपिर के शब्द सुन सकते है. अहो भगवन् ! कान को स्पर्शयि हुवं शब्दों सुने जाते है या बिना स्पर्शयि हुए शब्दों सुने जाते है ? अहो गौतम ! स्पर्शयि हुवे शब्दों सुन सकते है परंतु नहीं स्पर्शयि हुए शब्दों नहीं सुन सकते है यावत् प्रथम शतक में जैसे आहार का अधिकार कहा जैसे ही यावत् छ द्दिशी के शब्दों सुन सकते है वहांतक कहना. अहो भगवन् ! छद्दिस्थ मनुष्य क्या श्रोत्रेन्द्रिय के विषय में आयि हुए शब्दों सुन सकते है या श्रोत्रेन्द्रिय के विषय में नहीं आयि हुए शब्दों सुन सकते है ? अहो गौतम ! छद्दिस्थ मनुष्य श्रोत्रेन्द्रिय के विषय में आयि हुवे शब्दों सुन सकते है परंतु विषय के बाहिर

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

छ० छत्रस्थ मं० भगवन् म० मनुष्य आ० संयोग वाले सै० शब्द सु० सुनते हैं स० शंख का शब्द भि० नृगका शब्द सं० छोट्टे शंख का शब्द ख० खरमुली पो० बड़े वाँके प० पीपी का सं० शब्द प० छोटा होल प० बडा होल मं० वांकीया हो० होरंभक स० शब्द भे० मेरी झ० झालर हुं० हुंदुभीका सं० शब्द त० तत पि० वितत घं० घन झू० झसिर हं० हां गो० गौतम छ० छत्रस्थ म० मनुष्य आ० भंबंध वाले स० शब्द सु० सुनते है तं० वह स० जैसे मं० शंख शब्द जा० यावत् झू० झूपिर शब्द ता० उनको

छउमत्थेणं भंते ! मणूसे आउडिजमाणाइं सदाइं सुणेइ, तंजहा संख सदाणिवा,
सिंगसदाणिवा; संखिय खरमुहिय, पोया, परिपिरिया सदाणिवा पणंव, पडह, भंभा,
होरंभ-सदाणिवा, भेरि- झलुरि- हुंदभि-सदाणिवा, तयाणि वितयाणिवा, घणाणिवा,
झूसिराणिवा ? हंता गोयमा ! छउमत्थेणं मणूसे आउडिजमाणाइं सदाइं सुणेइं

तीमरे उदेशे में छत्रस्थ अन्यतीर्थीकी वक्तव्यता कही. चौथे उदेशे में छत्रस्थ केवली की वक्तव्यता करने ०. अहो भगवन् ! छत्रस्थ मनुष्य क्या हस्त मुख दुंदादि से संयोजित शंख का शब्द, शृंगका शब्द, छोट्टे शंख का शब्द, खरमुली (वाँके) का शब्द, बड़े वाँके का शब्द, पीपी का शब्द, छोट्टे पडह का शब्द, होल का शब्द, ठक्का का शब्द, होरंभ का शब्द, भेरी का शब्द, झालर का शब्द, हुंदुभी का शब्द, विणादि तत का शब्द, सतारादि वितत का शब्द, कांस्य तालादिक घन का शब्द, और चांसली

भं० भगवन् किं० क्यां पु० स्पर्शो हुवे सु० सुनते हैं अ० नहीं स्पर्शो हुवे सु० सुनते हैं गो० गौतम पु० स्पर्शो हुवे सु० सुनते हैं णो० नहीं अ० नहीं स्पर्शो हुवे सु० सुनते हैं जा० यात्र नि० निश्चय ही छ० छदिशी सु० सुनते हैं त० तेरे भं० भगवन् छ० छद्मस्थ प० मनुष्य किं० क्या आ० इन्द्रिय विषयिक स० शब्द सु० सुनते हैं पा० इन्द्रिय विषय से दूर के स० शब्द सु० सुनते हैं गो० गौतम आ० इन्द्रिय

तंजहा-संखसहाणिवा जाव झूसिराणिवा ॥ ताइ भंते ! किं पुट्टाईं सुणेइ, अपुट्टाईं सुणेइ ? गोयमा ! पुट्टाईं सुणेइ, णो अपुट्टाईं सुणेइ ; जाव नियमा छदिसिं सुणेइ ॥ तहाणं भंते ! छउमत्थे मणूसे किं आरगयाइं सदाइं सुणेइ, पारगयाइं सदाइं

प्रमुख का छुपिर शब्द सुन सकते हैं ? हां गौतम ! छद्मस्थ मनुष्य हस्त मुख दंडादि से संयोजित शंख के शब्द, यावत् सुपिर के शब्द सुन सकते हैं. अहो भगवन् ! कान को स्पर्शिये हुवे शब्दों सुने जाते हैं परंतु या विना स्पर्शिये हुए शब्दों सुने जाते हैं ? अहो गौतम ! स्पर्शिये हुवे शब्दों सुन सकते हैं परंतु नहीं स्पर्शिये हुए शब्दों नहीं सुन सकते हैं यात्र प्रथम शतक में जैसे आहार का अधिकार कहा जैसे ही यात्र छ दिशी के शब्दों सुन सकते हैं वहांतक कहना. अहो भगवन् ! छद्मस्थ मनुष्य क्या श्रोत्रेन्द्रिय के विषय में आयि हुए शब्दों सुन सकते हैं या श्रोत्रेन्द्रिय के विषय में नहीं आयि हुए शब्दों सुन सकते हैं ? अहो गौतम ! छद्मस्थ मनुष्य श्रोत्रेन्द्रिय के विषय में आयि हुवे शब्दों सुन सकते हैं परंतु विषय के बाहिर

शब्दार्थ (५५५५५) शब्दार्थ (५५५५५) शब्दार्थ (५५५५५) शब्दार्थ (५५५५५) शब्दार्थ (५५५५५)

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्देव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

विपयिक स० शब्द सु० सुतते हैं गो० नहीं पा० इन्द्रिय विषय से दूरके स० शब्द सु० सुनते हैं ॥ १ ॥
 न० जैसे भ० भगवन् छ० छद्मस्थ म० मनुष्य त० तैसे के० केवली गो० गौतम आ० इन्द्रिय विपयिक
 पा० इन्द्रिय विषय से दूरके स० सब दू० दूर मू० पास अ० पासनहि ऐसे स० शब्द जा० जानते हैं
 पा० देखते हैं ते० अथ के० कैसे त० जैसे के० केवली आ० इन्द्रिय विपयिक पा० इन्द्रिय विषय से
 बाहिर के जा० यावत् पा० देखते हैं गो० गौतम के० केवली पु० पूर्ण में पि० मर्यादा जा० जानते
 सुणेइ ? गोयमा ! आरगयाइं सदाइं सुणेइ, जो पारगयाइं सदाइं सुणेइ ॥ १ ॥
 जहाणं भंते ! छउमत्थे मणूसे आरगयाइं सदाइं सुणेइ जो पारगयाइं सदाइं सुणेइ
 तथाणं केवली किं आरगयाइं सदाइं सुणेइ पारगयाइं सदाइं सुणेइ ? गोयमा ! केवलीणं
 आरगयंवा पारगयंवा सब्दूरमूलमणंतियं सहं जाणइ पासइ, ॥ से केणट्टेणं
 तंचिव केवलीणं आरगयंवा पारगयंवा जाव पासइ ? गोयमा ! केवली पुरच्छिमेणं
 के शब्दा नही सुन सकते हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! जब छद्मस्थ विषय के अंदर के शब्दों सुन सकते हैं
 पंतु विषय की बाहिर के शब्दों नहीं सुन सकते हैं तब क्या केवली श्रोत्रिन्द्रिय के विषय में रहे
 हुए शब्दों सुन सकते हैं या विषय से बाहिर के शब्दों सुन सकते हैं ? अहो गौतम ! केवली श्रोत्रिन्द्रिय
 के विषय के अंदर के व बाहिर के सर्वथा दूर के, पास के, व बीच के ऐसे सब शब्द जानते व देखते हैं.

शब्दाधि सुत्र

हैं अ० अमर्यादा जा० जानते हैं ऐ० ऐसे दा० दक्षिण में प० पश्चिम में उ० उत्तर में उ० ऊर्ध्व अ० नीचे मि० मर्यादित जा० जानते हैं अ० अमर्यादित जा० जानते हैं स० सब जा० जानते हैं के० केवली स० सब पा० देखते हैं के० केवली स० सर्वथा स० सब काल स० सब भाव अ० अनंत पा० ज्ञान के० केवली को अ० अनंत दं० दर्शन नि० प्रगट ज्ञा० ज्ञान ते० इसलिये ज्ञा० यावत् पा० देखते हैं ॥२॥

मियंपि जाणइ, अमियंपि जाणइ, एवं दाहिणेणं, पच्चच्छिमेणं, उत्तरेणं, उट्ठं, अहे मियंपि जाणइ, अमियंपि जाणइ, सब्वं जाणइ केवली, सब्वं पासइ केवली, सब्व- श्री सब्वकालं, सब्वभावे, अणंते णाणे केवलिस्स, अणंते दंसणे केवलिस्स, नि- व्वुडे नाणे केवलिस्स, निव्वुडे दंसणे केवलिस्स, सेतेणट्ठेणं जात्र पासइ ॥ २ ॥

अहो भगवन् ! किस तरह केवली दूरके व नजीक, विषयवाले व निषय विनाके सब शब्दों जान व देखसकते हैं ? अहो गौतम ! केवली पूर्व, दक्षिण, पश्चिम व उत्तर दिशा में प्रमाण सहित गर्भज मनुष्य जीवादि वस्तु जानते हैं और प्रमाण रहित अनंत अमंख्यात वनस्पति जीव तथा पृथ्वीजीवादि वस्तु जानते हैं. इस तरह केवली सब जानते हैं व देखते हैं, केवली अतीत, अनागतादि सब काल, उदय उपशमादि सब भाव व उत्पाद व्यय प्रौढ्यादि सब भाव को केवल ज्ञान से जानते हैं व केवल दर्शन से देखते हैं. क्योंकि केवल ज्ञानी को निरावरण शुद्ध निर्मल अनंत केवल ज्ञान व अनंत केवल दर्शन है. इसलिये केवली

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

प्रकाशक-राजावहादुर लाला भुवदेव सहायजी ज्वालामसादजी

विषयिक स० शब्द सु० सुनते हैं णो० नहीं पा० इन्द्रिय विषय से दूरके स० शब्द सु० सुनते हैं १ ॥
 न० जैसे भं० भगवन् छ० छद्मस्थ म० मनुष्य त० तैसे के० केवली गो० गौतम आ० इन्द्रिय विषयिक
 पा० इन्द्रिय विषय से दूरके स० सब दू० दूर मू० पात अ० पासनहि ऐसे स० शब्द जा० जानते हैं
 पा० देखते हैं से० अथ के० कैसे त० वैसे के० केवली आ० इन्द्रिय विषयिक पा० इन्द्रिय विषय से
 बाहिर के जा० यावत् पा० देखते हैं गो० गौतम के० केवली पु० पूर्ण में पि० मर्यादा जा० जानते
 सुणेइ ? गोयमा ! आरगयाइं सदाइं सुणेइ, णो पारगयाइं सदाइं सुणेइ ॥ १ ॥
 जहाणं भंते ! छउमत्थे मणूसे आरगयाइं सदाइं सुणेइ णो पारगयाइं सदाइं सुणेइ
 तथाणं केवली किं आरगयाइं सदाइं सुणेइ पारगयाइं सदाइं सुणेइ ? गोयमा ! केवलीणं
 आरगयंवा पारगयंवा सब्बदूरमूलमणंतियं सदां जाणइ पासइ, ॥ से केणट्टेणं
 तंचिव केवलीणं आरगयंवा पारगयंवा जाव पासइ ? गोयमा ! केवली पुरच्छिमेणं
 के शब्दा नहीं सुन सकते हैं १ ॥ अहो भगवन् ! जब छद्मस्थ विषय के अंदर के शब्दों सुन सकते हैं
 पंतु विषय की बाहिर के शब्दों नहीं सुन सकते हैं तब क्या केवली श्रोत्रिन्द्रिय के विषय में रहे
 हुए शब्दों सुन सकते हैं या विषय से बाहिर के शब्दों सुन सकते हैं ? अहो गौतम ! केवली श्रोत्रिन्द्रिय
 के विषय के अंदर के व बाहिर के संस्था दूर के, पास के, व बीच के ऐसे सब शब्द जानते व देखते हैं.

शब्दाधि सुत्र

ह० हसे उ० उत्सुक होवे ॥ ३ ॥ जी० जीव भ० भगवन् ह० हसते हुवे उ० उत्सुक होते हुवे क० कितनी
क० कर्म प्रकृतियों वं० बांधे गो० गौतम स० सात प्रकार का वं० वंघ अ० आठ प्रकार का वं० वंघ
॥ ४ ॥ णे० नारकी भ० भगवन् ह० हसते हुए उ० उत्सुक होते हुवे क० कितनी क० कर्म प्रकृतियों वं०

हसेज्जाउस्सुया एज्जावा ॥ ३ ॥ जीवेणं भंते ! हसमाणेवा उस्सुयमाणेवा कइकम्मप्पगडीओ
बंधइ ? गोयमा सत्तविहबंधएवा, अट्टविह बंधएवा. ॥ ४ ॥ णेरइएणं भंते !
हसमाणे उस्सुयमाणे कतिकम्म पगडीओ बंधति ? गोयमा ! सत्तविहबंधएवा,
अट्टविह बंधएवा. एवं जाव वेमाणिए ॥ ५ ॥ जीवाणं भंते ! हसमाणेवा, उस्सु-
यमाणेवा कति कम्मप्पगडीओ बंधति ? गोयमा ! सत्तविहबंधगावा, अट्टविह

इमल्लिये केवली हसते नहीं है व उत्सुक नहीं होते हैं ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! जीव हसताहुवा व उत्सुक
होता हुवा कितने कर्म बांधे ? अहो गौतम ! जिन को आयुष्य कर्म का वंघ नहीं होवे उस को सात
कर्म प्रकृतियों और जिस को आयुष्य कर्म का वंघ होवे उस को आठ कर्म प्रकृतियों का वंघ होता है
॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! नारकी इस तरह हसता हुवा व उत्सुक होता हुवा कितनी कर्म प्रकृतियों का वंघ करे ?
अहो गौतम ! सात कर्म प्रकृतियों का अथवा आठ कर्म प्रकृतियों का वंघ करे. ऐसे ही वैमानिकतक के

* प्रकाशक राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

छ० छद्मस्थ म० मनुष्य ह० हसे उ० उत्सुक होवे ह० हां ह० हसे उ० उत्सुक होवे ज० जैसे छ० छद्मस्थ म० मनुष्य त० तेसे के० केवली णो० नहीं इ० यह अर्थ स० योग्य से० वह के० किसलिये गो० गौतम ज० किसलिये जी० जीव च० चारित्र्य सो० मोक्षनीय क० कर्म के उ० उदय मे ह० हसते हैं उ० उत्सुक होतें हैं से० वह के० केवली को न० नहीं हे ते० इसलिये जा० यावत् नो० नहीं त० तेसे के० केवली

छउमत्थेणं भंते! मणसे हसेज्जवा, उस्सुयाएज्जवा? हंता हसेज्जवा उस्सुयाएज्जवा जहाणं

भंते! छउमत्थे मणूसे हसेज्जवा, उस्सुआएज्जवा, तथाणं केवलीवि हसेज्जवा, उस्सुयाएज्जवा? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे। से केणट्ठेणं, जाव नोणं, तथा केवली

हसेज्जवा उस्सुआएज्जवा? गोयमा! जणं जीवा चरित्तमोहणिज्जकम्मस्स उदएणं हसंतिवा उस्सुयायंतिवा, सेणं केवल्लिस्स नत्थि, से तेणट्ठेणं जाव नोणं तथा केवली

दूर के, नजीक के सब शब्दों जान व देख सकते हैं ॥ २ ॥ अहो भगवन्! छद्मस्थ मनुष्य क्या हसते हैं व उत्सुक होते हैं? हां गौतम! छद्मस्थ मनुष्य हसते हैं व उत्सुक होते हैं, अहो भगवन्! जैसे छद्मस्थ मनुष्य हसते हैं व उत्सुक होते हैं वैनेही क्या केवली हसते हैं व उत्सुक होते हैं? अहो गौतम! यह अर्थ योग्य नहीं है, अहो भगवन्! किस कारण से केवली नहीं हसते हैं यावत् उत्सुक नहीं होते हैं? अहो गौतम! चारित्र्य मोक्षनीय कर्म के उदय से जीव हनते हैं व उत्सुक होवे हैं वह केवली को नहीं है

ह० हमे उ० उत्सुक होते हैं ३ ॥ जी० जीव भ० भगवन् ह० हसते हुये उ० उत्सुक होते हुये क० कितनी क० कर्म प्रकृतियों व० बांधे गो० गौतम स० सात प्रकार का व० धंध अ० आठ प्रकार का ध० धंध व० ॥ ४ ॥ ने० नारकी भ० भगवन् ह० हसते हुए उ० उत्सुक होते हुये क० कितनी क० कर्म प्रकृतियों व०

हसेज्जथाउत्सुया एज्जावा ॥ ३ ॥ जीवेणं भंते ! हसमाणेवा उत्सुयमाणेवा कइकम्मप्पगडीओ
बंधइ ? गोयमा सत्तविहबंधएवा, अट्टविह बंधएवा. ॥ ४ ॥ णेरइएणं भंते !
हसमाणे उत्सुयमाणे कतिकम्म पगडीओ बंधति ? गोयमा ! सत्तविहबंधएवा,
अट्टविह बंधएवा. एवं जाव वेमाणिए ॥ ५ ॥ जीवाणं भंते ! हसमाणेवा, उत्सु-
यमाणेवा कति कम्मप्पगडीओ बंधति ? गोयमा ! सत्तविहबंधेगावा, अट्टविह

इमलिये केवली हसते नहीं हैं व उत्सुक नहीं होते हैं ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! जीव हसताहुवा व उत्सुक होता हुवा कितने कर्म बांधे ? अहो गौतम ! जिन को आयुष्य कर्म का धंध नहीं हैवे उस को सात कर्म प्रकृतियों और जिन को आयुष्य कर्म का धंध हैवे उस को आठ कर्म प्रकृतियों का धंध होता है ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! नारकी इस तरह हसता हुवा व उत्सुक होता हुवा कितनी कर्म प्रकृतियों का धंध करे ? अहो गौतम ! सात कर्म प्रकृतियों का अथवा आठ कर्म प्रकृतियों का धंध करे. ऐस ही वैमानिकतक के

* प्रकाशक-राजायदादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

वांधते हैं गो० गौतम स० सात प्रकार से आ० आठ प्रकार से वं० वांधते हैं ए० ऐसे जा० यावत् त्रे०
 वैमानिके ॥ ५ ॥ जी० जीव भं० भगवन् ह० हसते हुंवे पूर्ववत् ॥ ६ ॥ छ० छद्मस्थ भं० भगवन् नि०

बंधगात्रा, ॥ पेरइयाणं भंते ! हसमाणा उस्सुयमाणा कतिकम्मप्पगडीओ वंधंति ?
 गोयमा ! सत्वेवि ताव होज्ज सत्तविह बंधगा, अहवा सत्तविह बंधगावि, अट्टविह
 बंधगावि, अहवा सत्तविह बंधगाय अट्टविह बंधगाय, एवं पोहत्तिएहिं, जीविगिंदिय
 वज्जो तियभंगो, ॥ ६ ॥ छउमत्थेणं भंते ! मणूसे निहाएज्जवा, पयलाएज्जवा ? हंता

चौत्रिस दंडक का जानना ॥ ५ ॥ अब बहुत जीव आश्रित पृच्छा करते हैं. अहो भगवन् ! बहुत जीव
 हसते व उत्सुक होते कितनी प्रकृतियों का बंध करे ? अहो गौतम ! आयुष्य रहित सात का बंध करे व
 आयुष्य सहित आठ का बंध करे. अहो भगवन् ! बहुत नारकी हसते उत्सुक होते कितनी कर्म प्रकृति-
 यों का बंध करे ? अहो गौतम ! सब जीव आयुष्य विना सात का भी बंध करने हैं और आयुष्य
 सहित आठ का बंध करते हैं. वैसे ही यहां कहना ? सब सात का बंध करनेवाले होते हैं २ सात का
 बंध करनेवाले अथवा आठ का बंध करनेवाले ३ सात और आठ का बंध करनेवाले. ऐसे तीन भांगे एकेन्द्रिय
 के पाँच दंडक छोड़कर शेष ? २ दंडक में पाते हैं ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! छद्मस्थ जीव सुख से शयन

निद्रालेवे प० प्रचलालेवे हं० हां नि० निद्राश्रेवे प० प्रचलालेवे ज० जैसे ह० हसे त० तैसे ण० विशेष द० दर्शनावरणीय क० कर्म का उ० उदय से नि० निद्रालेवे प० प्रचलालेवे से० वह के० केवली को म० नहीं हे अ० अनंत ॥ ७ ॥ जी० जीव भ० भगवन् नि० निद्रालेते प० प्रचलालेते क० कितनी क० कर्म प्रकृतियों वं० बांधता है गो० गौतम स० सात प्रकार का अ० आठ प्रकार का वं० बंध ऐ० ऐसे जा० यावत् वे०

निद्राएज्जवा पयलाएज्जवा, जहा हसेज्जा तथा. णवरं दरिसणावरणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं, निद्दायइवा, पयलाइवा ॥ सणं केवलस्स नस्थि अणंतं चेव ॥ ७ ॥ जीवेणं भंते ! निद्दायमाणेवा पयलायमाणेवा कतिकमप्पगडीओ बंधइ ? गोयमा ! सत्तविह बंधएवा अट्टविहबंधएवा, एवं जाव वेमाणिए ॥ पोहत्तिएसु जीवेणिदि-

किया जावे वैसी निद्रा या चलते, बैठते जो निद्रा आवे वैसी निद्रा यया लेते हैं ? हां गौतम ! छद्मस्थ उक्त प्रकार की निद्रा लेते हैं वगैरह सब धर्षण छद्मस्थ जीव को हसने का आलापक कहा वैसे ही जानना परंतु यहाँ पर दर्शनावरणीय कर्म के उदयसे निद्रा आती है वह कर्म केवली को नहीं हेने से केवली निद्रा नहीं लेते हैं ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! जीव निद्रा, व प्रचला करते कितनी प्रकृतियों का बंध करते हैं ? अहो गौतम ! जीव निद्रा व प्रचला करते सात अथवा आठ कर्म प्रकृतियों का बंध करता है. ऐसे ही चौबिसही

दार्थी

द्वयमांश्च ज्ञानां पणानां (मनवत्)

सूत्र

भावाथे

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीसहायजी बालाप्रसादजी *

वैमानिक में पो० बहुत जी० जीव ए० एकेन्द्रियवर्जित नि० तीन भं० भंगि ॥ ८ ॥ ह० इन्द्रका भं० भगवत् ह० हरिणगमपी स० शक्र का दू० दूत इ० स्त्री का ग० गर्भ सा० साहस्ते हुवे कि० क्या ग० गर्भ से ग० गर्भ में सा० लेजाता है ग० गर्भ से जो० योनिमें सा० लेजाता है जो० योनिसे ग० गर्भ में सा० लेजाता है जो० योनिसे जो० योनि में सा० लेजाता है गो० गौतम नो० नहीं ग० गर्भ से ग०

यत्रजो तिय संगो ॥ ८ ॥ हरीणं भते ! हरिणगमपी सक्कदूए इत्थीगव्भं साहर-
माणे किं गव्भाओ गव्भं साहरइ, गव्भाओ जोणिं साहरइ, जोणीओ गव्भं साहरइ,
जोणीओ जोणिं साहरइ ? गोषमा ! नो गव्भाओ गव्भं साहरइ, नो गव्भाओ जोणिं

दंडक का जानना. बहुत जीव आश्रित एकेन्द्रिय छोडकर शेष के तीन भंगि जानना ॥ ८ ॥ अवस्था-
पिनी निद्रा में गर्भ का साहरण होता है, इसलिये गर्भ साहरण का अधिकार कहते हैं. अहो भगवन् !
शक्रदेवन्द्रका दूत [पादात्पानिकका अधिपति] हरिणगमपी स्त्रीगर्भका साहरण करते क्या जीव सहित पुद्गल
भिड स्त्री गर्भ को ? एक गर्भाशय से दूसरे गर्भ में रखता है ? २ गर्भाशय से योनि में रखता है ?
३ योनि से लेकर गर्भ में रखता है ? अथवा ४ योनि से लेकर योनि में रखता है ? अहो गौतम ! शक्र
देवन्द्र का दूत हरिणगमपी गर्भ को ? गर्भाशय से नीकालकर गर्भाशय में नहीं रखता है, २ गर्भाशय से
लेकर योनिद्वार में नहीं रखता है, और ३ योनि से लेकर योनि में नहीं रखता है परंतु ४ योनि से नीका-

शब्दार्थ

मूत्र

भाष्य

गर्भ में सा० लेजाता है नो० नहीं ग० गर्भ से जो० योनि में सा० लेजाता है नो० नहीं जो० योनि में जो० योनि में सा० लेजाता है प० स्पर्श कर अ० सुख पूर्वक जो० योनि से ग० गर्भ में सा० लेजाता है ॥२॥ प० समर्थ भं० भगवन् ह० हरिणगमेपी स० शक्र का दू० दूत इ० स्त्री का ग० गर्भ न० नखाग्र से रो० रोमकूप ले सा० रखने को नी० नीकालने को हं० हां प० समर्थ नो० नहीं त० उसको ग० गर्भ की किं० कुछ भी आ० आवाथा धि० दुःख उ० उत्पात छ० चर्मछेद पु० पुनः क० करे ए० यह सु० मूक्ष्म

साहरइ, नो जोणीओ जोणिं साहरइ, परामुसिय २ अट्वावाहिणं अट्वावाहं जोणी-
ओ गब्भं साहरइ ॥ ९ ॥ पमूणं भंते ! हरिणगेमसी सक्कस्सणं दूए इत्थीए गब्भं
नहसिरंसिवा रोमकुवंसिवा, साहरित्तएवा, नीहरित्तएवा ? हंवा पमू । णो चेवणं
तस्स गब्भस्स किंचि आवाहंवा, त्रिवाहंवा, उप्पाएज्ज, छविच्छेदं पुण करेज्जा, ए सु-

लेकर गर्भाशय में रखता है. और गर्भ साहरण करते गर्भ को किसी प्रकार की वाधा पीडा नहीं होती है ॥ ९ ॥ अहां भगवन् ! शक्र देवेंद्र का दूत हरिणगमेपी नखाग्र से या रोम कूप से स्त्री का गर्भ रखने को अथवा बाहिर नीकालने को क्या समर्थ है ? हां गौतम ! वह हरिणगमेपी देवता गर्भ को नखाग्र से रखने को व नीकालने को समर्थ है ताहंपि उस गर्भ को किसी प्रकारकी वाधा, पीडा उत्पात व चर्म का छेद नहीं होता है. गर्भ साहरण करने का इतना सूक्ष्मपना रहा हुआ है. देव शक्ति से गर्भ नीकालते व रखते

दार्थ (१) (२) (३) (४) (५) (६) (७) (८) (९) (१०) (११) (१२) (१३) (१४) (१५) (१६) (१७) (१८) (१९) (२०)

सूत्र

भावार्थ

सा० रत्नानी० नीकालना ॥ १० ॥ ते० उस का० काल ते० उस स० समय में स० श्रमण भ० भगवंत
 म० महावीर का अ० शिष्य अ० अतिमुक्त ना० नान के कु० छोटे स० साधु प० प्रकृति भद्रिक जा०
 पावत् वि० विनीत त० तव से० बह अ० अतिमुक्त कु० कुमार स० श्रमण अ० एकदा म० बहुत बु०
 त्रुष्टि में नि० पडती हुई क० कक्षा में प० पात्र र० रजोहरण आ० लेकर व० बाहिर सं० नीकला वि०
 स्पंडिककेलिये त० तत्र से० उस उ० अतिमुक्त कु० कुमार श्रमणने वा० प्रवाह को प० बहता हुआ

हुमं च णं साहरिज्जिवा, नीहरिज्जिवा, ॥ १० ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स

भगवओ महावीरस्स अंतेवासी अइमुत्तेनामं कुमारसमणे पगइभइए जाव विणीए
 तएणं से अइमुत्ते णामं कुमारसमणे अण्णयाकयाइं महावुट्टिकायंसि निवयमाणंसि
 कक्खपडिगगहरयहरण मायाए वहिया संपट्टिए विहाराए तएणसे अइमुत्ते कुमार
 समणे वाहयं वहयमाणं पासइ २ ता, मट्टियपालि बंधइ २ णात्रियामे २ नात्रिओत्रि

जाना नहीं जाता है ॥ १० ॥ उस काल उस समय में श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी के भद्रिक यावत्
 विनीत प्रकृतिवान् अतिमुक्त (अर्पते) कुमार श्रमण एकदा महावृष्टि हुए बंढे रजोहरण व पात्र लेकर

१ आठ वर्ष पहिले दीक्षा ग्रहण नहीं करते हैं, परंतु अतिमुक्त कुमारेने छ वर्ष में ही दीक्षा ग्रहण की थी जिससे
 कुमार श्रमण नाम रखा था.

श्रमण भ० भगवंत म० महावीर से ए० ऐसा बु० कहाये हुवे स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर को
 वं० वंदना करते हैं अ० अतिमुक्त कु० कुमार श्रमण को अ० ग्लानिरहित सं० अंगीकार करते हैं जा०
 यावत् वे० वैयावृत्य क० करते हैं ॥ ११ ॥ ते० उस का०काल ते० उस स० समय में म० महाशुक्र क०
 देवलोक से म० महास्वर्ग वि० विमान से दो० दे० दे० दे० म० महर्द्धिक जा० यावत् म०

सारीरिएचेव, ॥ तएणं ते थेरा भगवंतो समणेणं भगवया महावीरेणं एवं बुत्तासमाणा
 समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति अइमुत्तं कुमारसमणं अगिलाए संगिण्हंति
 जाव वेयावडियं करंति ॥ ११ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं महासुक्काओ कप्पाओ
 महासग्गाओ विमाणाओ दो देवा महिड्डिया जाव महाणुभागा समणस्स भगवओ

अंत करेंगे. इसलिये अहो आर्यो ! तुम उन की हीलना, निंदा, खिसना, गर्हा व तिरस्कार मत करो
 परंतु अग्लानपने उन को अंगीकार करो, उपष्टभ करो और भक्त, पान व विनय से उन की वैयावृत्य
 करो. क्योंकि अतिमुक्त कुमारश्रमण अंत करनेवाले चरिम शरीरी हैं. जब श्री श्रमण भगवंत महावीर
 स्वामीने ऐसा कहा तब वे स्थविर भगवंत श्रमण भगवंत को वंदना नमस्कार कर अतिमुक्त कुमार श्रमण
 को अग्लानपने अंगीकार करनेलगे यावत् भक्त पान व विनय से उन की वैयावृत्य करनेलगे ॥ ११ ॥
 उस काल उस समयमें महाशुक्र देवलोकमेंसे महर्द्धिक यावत् महानुभागवाले दो देव श्रीश्रमण भगवंत महावीर

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामुखी *

अ० अतिमुक्त कु० कुमारश्रमणं प० प्रकृति भद्रिक जा० यावत् वि० विनित से० वह अ० अतिमुक्त
 कु० कुमार स० श्रमण ए० इत भ० भव मेँ सि० सिद्धिगे जा० यावत् अं० अंतं करेगे ते० इसलिये मा०
 मत तु० तुम अ० अतिमुक्त कु० कुमार श्रमण की ही० हीलना को नि० निंदाकरो खि० खिसना करो
 ग० गर्हाकरो अ० निरस्कार करो तु० तुम अ० अतिमुक्त कु० कुमार श्रमण को अ० ग्लानि रहित सं०
 अंगीकार करो उ० ग्रहण करो भ० यक्त पा० पान वि० विनय से वे० वैद्यावृत्य क० करो अ० अति-
 मुक्त कु० कुमार श्रमण अं० अंतं करने वाले अं० अंतिम शरीरी त० तव थे० स्यविर भ० भगवंत स०

सेपं अइमुत्ते कुमारसमणे एमेणंचेव भवग्गहणेणं, सिद्धिहिइ जाव अंतं करेहिइ ॥
 तंमाणं अज्जा ! तुब्भेअइमुत्तं कुमारसमणं हीलह, निंदह, खिसह, गरहह अवमण्ह, तुब्भेणं
 देवाणुप्पिया अइमुत्तं कुमारसमणं अगिलाए संगिण्हह, अगिलाए उवगिण्हह अगिलाए
 भंत्तेणं, पाणेणं विणएणं, वेयावडियं करेह, अइमुत्तेणं कुमारसमणे अंतकरे चेव, अंतिम-

पानी में बहना हुआ रखकर खेड़ने लगे. इस तरह करते हुवे अतिमुक्त कुमार को स्यविरने देखे और
 श्रमण भगवंत महावीर स्वामी की पास आकर ऐसे बोले कि अहो भगवन् ! आपका अतिमुक्त नामक
 शिष्य कितने भव में सिद्धिगे बुझे यावत् सब दुःखों का अंत करेगे. श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी
 बोले कि अहो धार्यो मेरा शिष्य अतिमुक्त नामक कुमार साधु इत्थी भव में सिद्धिगे यावत् सब दुःखों का

शब्दार्थ

सूत्र

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

श्रमण भ० भगवंत म० महावीर से ए० ऐसा बु० कहाये हुवे स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर को
 वं० धंदना करते हैं अ० अतिमुक्त कु० कुमार श्रमण को अ० ग्लानिरहित भं० अंगीकार करते हैं जा०
 यावत् वे० वैयावृत्य क० करते हैं ॥ ११ ॥ ते० उस का०काल ते० उस स० समय में म० महाशुक्र क०
 देवलोक से म० महास्वर्ग वि० विमान से दो० दो दे० देव म० महर्द्धिक जा० यावत् म०

सारीरिए चव, ॥ तएणं ते थेरा भगवंतो समणेणं भगवया महावीरेणं एवं बुचासमाणा
 समणं भगवंं महावीरं वंदंति नमंसंति अइमुत्तं कुमारसमणं अगिलाए संगिहंति
 जाव वेयावडियं करंति ॥ ११ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं महासुक्खाओ कप्पाओ
 महासग्गाओ विमाणाओ दो देवा महिड्डिया जाव महाणुभागा समणस्स भगवओ

अंत करेंगे. इसलिये अहो आर्यो ! तुम उन की हीलना, निंदा, खिसना, गर्हो व तिरस्कार मत करो
 परंतु अग्लानपने उन को अंगीकार करो, उपपुंभ करो और भक्त, पान व विनय से उन की वैयावृत्य
 करो. क्योंकि अतिमुक्त कुमारश्रमण अंत करनेवाले चरिम शरीरी हैं. जब श्री श्रमण भगवंत महावीर
 स्वामीने ऐसा कहा तब वे स्वविर भगवंत श्रमण भगवंत को धंदना नमस्कार कर अतिमुक्त कुमार श्रमण
 को अग्लानपने अंगीकार करनेलगे यावत् भक्त पान व विनय से उन की वैयावृत्य करनेलगे ॥ ११ ॥
 उस काल उस समयमें महाशुक्र देवलोकमेंसे महर्द्धिक यावत् महानुभावाले दो देव श्रीश्रमण भगवंत महावीर

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी जालाप्रसादजी *

अ० अतिमुक्त कु० कुमारश्रमण प० प्रकृति भद्रिक जा० यावत् वि० विनीत से० बह अ० अतिमुक्त
 कु० कुपार स० श्रमण ए० इस भ० भव में सि० सिद्धगे जा० यावत् अं० अंतं करेगे ते० इसलिये मा०
 पत तु० तुम अ० अतिमुक्त कु० कुमार श्रमण की ही० हीलना कगे भि० निंदाकरो वि० खिसना करो
 ग० गर्हाकरो अ० निरस्कार करो तु० तुम अ० अतिमुक्त कु० कुमार श्रमण को अ० ग्लानि रहित सं०
 अंगीकार करो उ० ग्रहण करो भ० भक्त पा० पान वि० विनय से वे० वैद्यावृत्य क० करो अ० अति-
 मुक्त कु० कुपार श्रमण अं० अंत करने वाले अं० अंतिम शरीरी त० तत्र थे० स्यत्रि भ० भगवंत स०
 सेणं अइमुत्ते कुमारसमणे एमेणंचैव भवग्गहणेणं, सिञ्झिहिइ जाव अंतं करेहिइ ॥
 तं माणं अजा ! तुब्भे अइमुत्तं कुमारसमणं हीलह, निंदह, खिसह, गरहह अवमण्ह, तुब्भेणं
 देवाणुपियया अइमुत्तं कुगारसमणं अगिलाए संगिण्हह, अगिलाए उवगिण्हह अगिलाए
 भत्तेणं, पाणेणं विणएणं, वेयावडियं करेह, अइमुत्तेणं कुमारसमणे अंतकरे चैव, अंतिम-
 पानी ये बहता हुआ रत्नकर खेळने लगे. इस तरह करते हुवे अतिमुक्त कुमार को स्यत्रिने देखे और
 श्रमण भगवंत महावीर स्वामी की पास आकर ऐसे बोले किं अहो भगवन् ! आपका अतिमुक्त नामक
 निप्य कितने भव में सिद्धगे बुझेगे यावत् सब दुःखों का अंत करेगे. श्री श्रमण भगवंत महावीर स्वामी
 बोले किं अहो-सायों मेरा शिष्य अतिमुक्त नामक कुमार साउ इसी भव में सिद्धगे यावत् सब दुःखों का

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

महानुभाग वाले स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर की अ० समीप पा० आये त० तब ते० वे दे० देव स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर को म० मन से वं० वंदना करते हैं न० नमस्कार करते हैं न० नमस्कार करके इ० यह ए० ऐसा वा० प्रश्न पु० पुछते हैं क० कितने दे० देवानुप्रिय के अ० शिष्य स० सो सि० सिद्धगे जा० यात्रत् अ० अंत क० करेंगे न० तब स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर ते० उन दे० देवों से म० मन से पु० पुछाये हुवे त० उन दे० देवोंको म० मनसे ही इ० यह ए० ऐसा म० मेरे स० सात अ० शिष्य स० सो० सि० सिद्धगे जा० यात्रत् अ० अंत करेंगे त० तब ते० वे दे० देवों स० श्रमण

महावीरस अंतियं पाउब्भूया ॥ तएणं ते देवा समणं भगवं महावीरं मणसाचेव

वंदंति नमंसंति नमंसंतिच्चा, मणसा चेव इमं एयारूवं वागरणं पुच्छंति-कइणं देवा-

णुप्पियाणं अंतेवासिसयाइं, सिद्धिंहिति जाव अंतं करेहिति ? ॥ तएणं समणे

भगवं महावीरे तेहिं देवेहिं मणसा पुट्टे, तेसिं देवाणं मणसाचेव इमं एयारूवं

वागरणं वागरेइ - एवं खलु देवाणुप्पिया ममं सत्त अंतेवासिसयाइं सिद्धिंहिति

स्वामीकी पास आये और उनोंने श्रमण भगवंत महावीर स्वामीको मन से ही वंदना नमस्कार कर ऐसा प्रश्न पूछा कि अहो देवानुप्रिय ! आप के कितने सो शिष्य सिद्धगे, बुद्धगे यात्रत् सब दुःखों का अंत करेंगे ? उन मन से पूछे हुवे प्रश्नोंका महावीर स्वामीने मन से ही उत्तर दिया कि मेरे सात सो शिष्य सिद्धगे, बुद्धगे

भगवंत म० महावीर से म० मन सँ पु० पुछा हुवा म० मन से ही इ० यह ए० ऐसा वा० प्रश्न वा० कहा हुवा
ह० हृष्ट जा० यावत् हि० हृदय स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर को थं० वंदना करते हैं न० नम-
स्कार करते हैं म० मन से ही सु० शुश्रुषा करते ण० नमस्कार करते अ० सन्मुख जा० यावत् प० पर्यु-
पासना करते हैं ॥ १२ ॥ ते० उस काल ते० उस समय में स० श्रमण भ० भगवंत का जे० ज्येष्ठ अं०
शिष्य इ० इन्द्रभूति अ० अनगर जा० यावत् अ० पास उ० ऊर्ध्व जा० जंघा जा० यावत् वि० विचरते

जाव अंतं करोहिंति ॥ तएणं ते देवा समणेणं भगवथा महावीरेणं मणसा पुट्टेण

मणसा चेव इमं एयारूवं वागरणं वागरियासमाणा, हट्टुट्टु जाव हियया

समणं भगवं महावीरं वंदंति णमंसंति, मणसा चेव सुस्सुसमाणा णमंसमाणा

अभिमुहा जाव पज्जुवांसंति ॥ १२ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं समणरस भगव-

ओ महावीरस जेट्ठे अंतेवासी, इंदमूईणामं अणगारे जाव अदूरसामंते उहुं जाणू

यावत् सब दुःखों का अंत करेगे. इस तरह मन सँ पूछे हुवे प्रश्नों का मन से ही उत्तर सुनकर उक्त देवों
हृष्ट हुए यावत् आनंदित हुवे, श्रमण भगवंत महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार किना और मन से ही
शुश्रुषा व नमस्कार करते हुवे सन्मुख यावत् पर्युपासना करने लगे ॥ १२ ॥ उस काल उस समयमें श्री श्रमण
भगवंत के ज्येष्ठ शिष्य इन्द्रभूति अनगर पास में ऊर्ध्व जानु व अधोशिर करके ध्यान करते हुवे विचरते

शब्दार्थ

ॐ

ॐ

ॐ

ॐ

ॐ

ॐ

ॐ

ॐ

ॐ

ॐ

ॐ

ॐ

ॐ

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अं ऐसा ए० यद ए० रहते हुवे इ० देव म० महर्दिक जा०
 अधवताय जा० यावत् स० उत्पन्न हुआ ए० ऐसे ख० निश्चय दो० दो दे० देव म० महर्दिक जा०
 यावत् प० महानुभाग वाले स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर की अं० पास पा० आये तं० इसलिये नो०
 नहीं अ० मैं ते० उन दे० देवोंको जा० जानता हूँ क० कितने क० देवलोक में से स० स्वर्ग में से वि०
 विमान में से क० किस अ० अर्थ केलिये इ० यहा ह० शीघ्र आ० आये तं० इसलिये ग० जाऊँ भ०

जात्र विहरइ तएणं तस्स भगवओ गोयमस्स ज्ञाणंतरियाए वट्टमाणस्स इमेया
 रूवं अब्भत्थिए जाव समुप्पजित्था एवं खलु दो देवा महिद्धिया जाव महाणुभागा
 समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं पाउब्भूया. तं नो खलु अहं ते देवा जाणामि
 कयराओ कप्पाओ वा सग्गाओवा विमाणाओवा कस्सवा अत्थस्स अट्टाए इहं हव्व-
 मागया तं गच्छामिणं समणं भगवं महावीरं जाव पज्जुवासामि. इमाइं चणं एयारूवाइं

थे. उस समय में भगवान् गौतम को ध्यान करते हुवे ऐसा अध्यवसाय उत्पन्न हुआ कि श्री श्रमण भग-
 वन्त महावीर स्वामी की पाम दो महर्दिक यावत् महानुभाग देव आये हुवे हैं. परंतु वे देवों कौन से देव
 लोक के विमान में से किमलिये आये हुवे हैं. सो मैं नहीं जानता हूँ; इसलिये मैं श्री श्रमण भगवन्त की
 पाम जाऊँ और पर्युपासना करके उक्त प्रश्नों पूछूँ. ऐसा विचार करके श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामीकी पास

शब्दार्थ मन्त्र पं

भगवन्त म० महावीर की जा० यावत् प० पर्युपामना करूँ इ० ये ए० ऐसे वा० प्रश्न पु० पूछू ति०
 ऐसा करके ए० ऐसा सं० विचार करके उ० उपस्थित होकर जे० जहाँ स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर
 जा० यावत् प० पर्युपामना करते हैं. गो० गौतम स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर ए० ऐंभ व० बोले से०
 अथ पू० शंकादर्शी त० तुझे गो० गौतम ज्ञा० ध्यान में व० रहते इ० यह ए० ऐसा अ० अध्यवसाय
 जा० यावत् ने० जहाँ म० मेरी अं० समीप ते० वहाँ ह० शीघ्र आ० आया से० अथ पू० शंकादर्शी अ०
 वागरणाइं पुच्छिस्सामि च्चिकट्टु। एवं संपेहेइ २ त्ता उट्टाए उट्टेइ २ त्ता जेणेव समणे भगवं
 महावीरे जाव पज्जुवासइ। गोयमादि समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं
 वयासी-सेणुणं तव गोयमा ! ज्ञाणंतरियाए वट्टमाणस्स इमेयारूथे अब्भत्थिए जाव
 जेणेव ममं अंतिए तेणेव हव्वमागए, से णुणं गोयमा ! अट्टे समट्ठे ? हंता अत्थि. तं
 गच्छाहिणं गोयमा ! एए खेव देवा इमाइं एयारूत्ताइं वागरणाइं वागेरहिंति, । तएणं
 गौतम स्वामी आये. श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामीने कहा कि अहो गौतम ! तुझे ध्यान करते हुवे ऐसा अध्यवसाय
 यावत् संकल्प हुवा कि ये महाद्विक देवों कहां से व किसलिये मेरी पास आये हुवे हैं ? और इसका नि-
 र्णय करने को तू मेरी पास आया हुवा है यह क्या सत्य है ? हां भगवन् ! यह सत्य है. तव हे
 गौतम ! तू इन देवों की पास जा और तू देखे ये देवों उक्त प्रश्नों का उत्तर देंगे. इस तरह भगवन्त की-

हुवे खि० शीघ्र प० सामने गये जे० जहाँ भ० भगवन्त गो० गौतम ते० वहाँ उ० आये जा० जायत् ण० नमस्कार कर ए० ऐसे व० बोले ए० ऐसा ख० निश्चय भं० भगवन् अं० हम म० महाशुक्र म० महास्वर्ग वि० विमान से दो० दो देव म० महर्द्धिक जा० यावत् पा० आये त० तव अ० हम स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर को वं० वांदि न० नमस्कार किया म० मन से ए० ऐसा वा० प्रश्न पु० पूछे क० कितने भं० भगवन् दे० देवानुप्रिय के अं० शिष्यसि० सिद्धगे जा० यावत् अं० अंतर्करेगे त० तव स० श्रमण भ० भगवन् इ०

डूँया जाव पाउब्भूया । तएणं अम्हे समणं भगवं महावीरं वंदासो णमंसामो २

मणसा चेव इसाइं एयारूवाइं वागरणाइं पुच्छामो-कइणं भंते ! देवाणुप्पियाणं अंते-

वासि सयाइं सिञ्झिहंति, जाव अंतं करेहंति ! तएणं समणे भगवं महावीरे अम्हेहि

मणसा पुट्ठे अम्हं मणसा चेव इमं एयारूवं वागरणं वागरेइ, एवं खलु देवाणुप्पिया !

मम सत्तअंतेवासिसयाइं जाव अंतं करेहंति, तएणं अम्हे समणेणं भगवया महा-

महर्द्धिक यावत् महानुभाग दो देव महाशुक्र देवलोक में महा स्वर्ग विमान से आये हुवे हैं. और हमने श्री श्रमण भगवंत महावीर को मन से ऐसा प्रश्न पूछा कि आप के कितने गो शिष्य सिद्धगे, बुद्धगे यावत् सब दुःखों का अंत करेगे. इस तरह मन से पूछाये हुवे प्रश्नों का श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामीने मन से ही ऐसा उत्तर दिया कि अहो देवानुप्रिय ! मेरे सातसो शिष्य सिद्धगे, बुद्धगे यावत्

द्वितीय अध्याय (सप्तमोऽध्यायः)

सूत्र

भाष्यार्थ

अ० अभ्याख्यान ए० यह दे० देवों को भं० भगवन् अ० असंयति व० वक्तव्यता मि० होवे गो० गौतम
 णो० नहीं इ० यह अ० अर्थ स० योग्य णि० निष्ठुर व० वचन ए० यह दे० देवोंको दे० देवोंको भं०
 भगवन् सं० संयतासंयति व० वक्तव्यता सि० होवे गो० गौतम णो० नहीं इ० यह अ० अर्थ स० योग्य
 अ० असदभूत ए० यह दे० देवोंको से० अब कि० क्या खा० कहावे दे० देव गो० गौतम दे० देव नो०
 नोसंयति व० वक्तव्यता सि० होवे ॥ १४ ॥ दे० देव भं० भगवन् क० कौनसी भा० भाषा से भा०

णो इण्टे समट्टे, अब्भक्खणमेयं देवाणं ॥ देवाणं भंते ! असंजयाइ वत्तव्वंसिया ?
 गोयमा ! णोइण्टे समट्टे, णिड्डस्वयण मेयं देवाणं ॥ देवाणं भंते ! संजयासंजयाइ
 वत्तव्वंसिया ? गोयमा ! णो इण्टे समट्टे असब्भूयेमयं देवाणं ॥ से किं खाइण्णं भंते !
 देवाइ वत्तव्वंसिया ? गोयमा ! देवाणं नो संजयाइ वत्तव्वंसिया ॥ १४ ॥ देवाणं

देवों को असंयति कहना ? यह अर्थ योग्य नहीं है क्यों कि ऐसा कहने से देवों को निष्ठुर (कठोर)
 वचन लगता है. क्या भगवन् ! देवों को संयतासंयति कहना ? यह अर्थ भी योग्य नहीं है क्यों कि
 देवों को यह असदभूत (अछता भाव) होवे. तब अहो भगवन् ! देवों को क्या कहना ? अहो गौतम !
 ' देव नोसंयति हैं ' ऐसा कहना ॥ १४ ॥ अहो भगवन् ! देव कितनी भाषा बोलते हैं और कौनसी भाषा

* प्रकाशक-राजाचहादुर लाला सुखदेव सहायजी जालामसादजी *

म० महावीर से पु० पुछाये हूवे अ० हम को म० मनसे ही इ० यह ए० ऐसा त्र० प्रश्न वा० कहा ऐ०
ऐसे दे० देवानुप्रिय शेष पूर्ववत् ति० ऐसा क० करके भ० भगवन्त गो० गौतम को वं० वंदना की ण०
नमस्कार किया जा० जिस दि० दिशी से पा० आये ता० उसी दि० दिशी में प० पीछे गये ॥१३॥
भं० भगवन् गो० गौतमने स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर को ए० ऐसा व० कहा दे० देव भं०
भगवन् सं० संयति ति० ऐसी व० वक्तव्यता सि० होवे. गो० गौतम गो० नहीं इ० यह अर्थ स० योग्य

त्रैरेणं मणसा पुट्टेणं मणसा चैव इमं एयारूवं वागरणं वागरियासमाणा समणं

भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो जात्र पज्जुवासामो चिकट्टु भगवं गोयमं वंदइ

नमंसइ जामेवदिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया ॥ १३ ॥ भंतंति भगवं गोयमे

समणं भगवं महावीरं एवं वथासी- देवाणं भंते ! संजयाइ वत्तव्वंसिया ? गोधमा !

मत्र दुःखों का अंत करेंगे. इस तरह मन से पूछे हुवे प्रश्नों का उत्तर मनद्वारा मिलने से हमने श्री श्रमण
भगवंत महावीर स्वाभी को वंदना नमस्कार किया. इतना कहकर वे देवों श्री गौतम स्वाभी को वंदना नमस्कार
करके जहाँ से आये थे वहाँ पीछे गये ॥ १३ ॥ भगवान् गौतम श्रमण भगवंत महावीर स्वाभी को ऐसे
बोले कि अहो भगवन् ! क्या 'देव संयति हैं' ऐसी वक्तव्यता होवे ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य
नहीं है. क्योंकि देवों को संयति कहने से अभ्याख्यान (असत्य आल) होता है. तब क्या भगवन् !

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

अ० अभ्याख्यान ए० यह दे० देवों को भं० भगवन् अ० असंयति व० वक्तव्यता सि० होवे गो० गौतम
 णो० नहीं इ० यह अ० अर्थ स० योग्य णि० निष्ठुर व० वचन ए० यह दे० देवोंको दे० देवोंको भं०
 भगवन् सं० संयतासंयति व० वक्तव्यता सि० होवे गो० गौतम णो० नहीं इ० यह अ० अर्थ स० योग्य
 अ० असद्भूत ए० यह दे० देवोंको भे० अव कि० क्या खा० कहावे दे० देव गो० गौतम दे० देव नो०
 नोसंयति व० वक्तव्यता सि० होवे ॥ १४ ॥ दे० देव भं० भगवन् क० कौनसी भा० भाषा से भा०

णो इण्टे समट्टे, अब्भवखाणमेयं देवाणं ॥ देवाणं भंते ! असंजयाइ वत्तव्वंसिया ?
 गोयमा ! णोइण्टे समट्टे, णिठ्ठरवयण मेयं देवाणं ॥ देवाणं भंते ! संजयासंजयाइ
 वत्तव्वं सिया ? गोयमा ! णो इण्टे समट्टे असब्भूमेयं देवाणं ॥ से किं खाइणं भंते !
 देवाइ वत्तव्वंसिया ? गोयमा ! देवाणं नो संजयाइ वत्तव्वंसिया ॥ १४ ॥ देवाणं

देवों को असंयति कहना ? यह अर्थ योग्य नहीं है क्यों कि ऐसा कहने से देवों को निष्ठुर (कठोर)
 वचन लगता है. क्या भगवन् ! देवों को संयतासंयति कहना ? यह अर्थ भी योग्य नहीं है क्यों कि
 देवों को यह असद्भूत (अछता भाव) होवे. तब अहो भगवन् ! देवों को क्या कहना ? अहो गौतम !
 'देव नोसंयति हैं' ऐसा कहना ॥ १४ ॥ अहो भगवन् ! देव कितनी भाषा बोलते हैं और कौनसी भाषा

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जी सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

बोले क० कौनसी भा० भाषा भा० बोलाती हुई वि० विशिष्ट होवे गो० गौतम दे० देव अ० अर्थ
 पागधी भा० भाषा भा० बोले स० वही अ० अर्थ मागधी भा० भाषा भा० बोलाती हुई वि० विशिष्ट होवे
 ॥ १५ ॥ के० केवली भं० भगवन् अ० अंतकरने वाले अ० अंतिम शरीर वाले को जा० जानते हैं पा०
 देखते हैं इ० हां गो० गौतम जा० जानते हैं पा० देखते हैं ज० जैसे भं० भगवन् के० केवली अं०

भंते ! कयराए भासाए भासंति, कयरा वा भासा भासिज्जमाणी विसिस्सइ ? गोयमा !

देवाणं अद्द मागहाए भासाए भासंति, सात्रियणं अद्दमागहा भासा भासिज्जमाणी
 विसिस्सइ । केवलीणं भंते ! अंतकरंवा अंतिमसारीरियंवा जाणइ पासइ, ? हुंता
 गोयमा ! जाणति पासति ॥ १५ ॥ जहाणं भंते केवली अंतकरंवा अंतिमसारीरियंवा

जाणइ पाणइ, तथाणं छउमत्थेवि अंतकरंवा अंतिमसारीरियंवा जाणइ पासइ ?
 बोलने से विशिष्टता पाते हैं ? अहां गौतम ! देवों अर्थमागधि भाषा बोलते हैं और अर्थमागधि भाषा
 बोलते हुंवे विशिष्टता पाते हैं ॥ १५ ॥ अहो भगवन् ! केवली अंतकरनेवाले अथवा अंतिम शरीरवाले
 को जाने देखे ? हां गौतम ! केवली अंतकरनेवाले व अंतिम शरीरवाले को जाने देखे. अहो भगवन् !
 जैसे केवली अंत करनेवाले व अंतिम शरीरी को जानते देखते हैं वैसे ही क्या छद्मस्थ
 जानते देखते हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है. छद्मस्थ सुनकरके व प्रमाण से जानते

अंत करने वाले अं० अंतिम शरीर वाले को जा० जानते हैं पा० देखते हैं त० तैसे छ० छब्रस्थ भी अं० अंत करने वाले अं० अंतिम शरीर वाले को जा० जानते हैं पा० देखते हैं गो० गौतम णो० नहीं इ० यह अं० अर्थ स० समर्थ सो० सुनकर प० प्रमाण से से० अथ किं० क्या तं० वह सो० सुनकर के० केवली के० केवली के श्रावक के० केवली सा० श्राविका का उ० सेवा करने वाला के० केवली की उ० सेवा करने वाली के त० स्वयं बुद्ध त० स्वयं बुद्ध के सा० श्रावक सा० श्राविका उ० सेवा करने वाला उ०

गोयमा ! णोइणट्टे समट्ठे सोच्चा जाणइ पासइ, पमाणओत्ता ॥ से कितं सोच्चा ?

सोच्चाणं ! केवल्लिस्सत्ता, केवल्लिसावयस्सत्ता, केवल्लिसावियाएत्ता, केवल्लिउत्तासग्गस्सत्ता, केवल्लिउत्तासियाएत्ता, तप्पक्खियस्सत्ता, तप्पक्खियसावयस्सत्ता, तप्पक्खियसावि-

याएत्ता, तप्पक्खियउत्तासग्गस्सत्ता, तप्पक्खिय उत्तासियाएत्ता, सेतं सोच्चा ॥ से कितं

देखते हैं. सुनने का क्या अर्थ है ? केवली, केवली के श्रावक, श्राविका, सेवा करनेवाले, सेवा करने-वाली, स्वयंबुद्ध, स्वयंबुद्ध के श्रावक, श्राविका, सेवा करनेवाले व सेवा करनेवालीयों के मुख से श्रवण करके छब्रस्थ मनुष्य अंत करनेवाले व अंतिम शरीरी को जानते व देखते हैं. अत्र प्रमाण का क्या अर्थ ? प्रमाण के चार भेद कहे हैं. १ चक्षु वगैरह इन्द्रियों से जाना जावे सो प्रत्यक्ष २ चिन्ह संबंध स्मरण से जो जाना जावे सो अनुमान; जैसे धूम्र से अग्नि का जानना. ३ उपमा से जाना जावे सो उपमा प्रमाण जैसे

* प्रकाशक-राजावहादुर लाल मुखर्जीदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

ओ० अनुमान अ० प्रत्यक्ष अ० प्रमाण च० चार प्रकार के प० प्रमाण च० अ० अनुमान ओ०
उपमा आ० आगम न० जैसे अ० अनुयोग द्वार में त० तैसे णे० जानना प० प्रमाण ते० उस से प०
प्राणं णो० नहीं अ० आत्मागम णो० नहीं अ० अनंतरागम प० परंपरागम ॥ १६ ॥ के० केवली भं०
भगवन च० छेछर कर्म च० चरिम निर्जरा जा० जाने पा० देखे हं० हां गो० गौतम जा० जाने पा० देखे

पमाणे ? पमाणे चउब्बिहे पणत्ते तंजहा-पच्चक्खे, अणुमाणे, ओत्रमे; आगमे,
जहा अणुओगदारे तहा णेयब्बं पमाणं जाव तेण परं णो अत्तागमे, णो अनंतरागमे,
परंपरागमे ॥ १६ ॥ केवलीणं भंते ! चरिमकम्मंवा, चरिमणिज्जरंवा जाणइ पासइ ?
हंता गोयमा ! जाणइ पासइ ॥ जहाणं भंते ! केवली चरिम कम्मवां चरिमणि-

गाय जैसा गवयं, ४ गुरु की परंपरा से प्राप्त वचनों को मुनकर जानना सो आगम प्रमाण. इस का विशेष
विवरण अनुयोगद्वार सूत्र में कहा है. आत्मागम अर्थ से वीतराग को आत्मागम, गणधरों को अनंतरागम
ओर शिष्योंको परंपरागम. सूत्र से गणधरों को आत्मागम, शिष्यों को अनंतरागम व प्रशिष्यों को
परंपरागम जानना ॥ १६ ॥ अहो भगवन् ! क्या केवली चरिम कर्म व चरिम निर्जरा को जानते हैं व

१ वन का पनु विशेष, इसे रोदा भी कहते हैं.

शब्दार्थ

सूत्र

सावार्थ

ज० जैसे भं० भगवन् के० केवली च० चरिम कर्म ज० जैसे अं० अंत करने वाले आ० आलापक त० तैसे च० चरिम कर्म से अ० अपरिशेष जे० जानना ॥ १७ ॥ के० केवली भं० भगवन् प० प्रकृष्ट म० मम व० वचन धा० धारण करे दं० हां धा० धारन करे ज० जो भं० भगवन् के० केवल ज्ञानी प० प्रकृष्ट म० मन व० वचन धा० धारण करे तं० उसे वे० वैमानिक देव जा० जानते हैं पा० देखते हैं गो० गौतम अ० जंत्रवा जाणइ पासइ ? हंता गोयसा ! जाणइ पासइ ! जहाणं भंते ! केवली चरिमकम्मंवा जहाणं अंतकरेणं आलावगो, तथा चरिम कम्मणवि अपरिसेसिओ णेयव्वो ॥ १७ ॥ केवलीणं भंते ! पणीयं मणंवा, वइवा धारेजा ? हंता धारेजा ॥ जणं भंते ! केवली पणीयं मणंवा वइवा धारेजा, तं णं वेमाणिया देवा जाणंति देखते हैं ? हां गौतम ! केवली चरिम कर्म व चरिम निर्जराको जानते व देखते हैं, जैसे केवली चरिम कर्म व निर्जरा को जानते हैं वैसे ही क्या छद्मस्थ जानते हैं व देखते हैं ? अहो गौतम ! इस का सब अधिकार उपर के अंतकरे आलापक जैसे कहना ॥ १७ ॥ अहो भगवन् ! क्या केवली श्रेष्ठ मन वचन धारे-उन का व्यापार करे ? हां गौतम ! केवली श्रेष्ठ मन वचन का व्यापार करे, अहो भगवन् ! जो मन वचन केवली धारण करते हैं उन को वैमानिक देव क्या जानते व देखते हैं ? अहो गौतम ! कितनेक वैमानिक देव जानते हैं व देखते हैं और कितनेक नहीं जानते हैं व नहीं देखते हैं, अहो भगवन् ! किस कारणसे

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवतहाषजी ज्वालामसाइजी *

सेवा करने वाली के से० अथ कि० क्या प० प्रमाण च० चार प्रकार के प० प्रत्यक्ष अ० अनुमान औ० उपमा आ० आगम ज० जैसे अ० अनुयोग द्वार में त० तैसे णे० जानना प० प्रमाण ते० उस से प० प्रागे णो० नहीं अ० आत्मागम णो० नहीं अ० अनंतरागम प० परंपरागम ॥ १६ ॥ के० केवली भे० भगवन च० छेछा कर्म च० चरिम निर्जरा जा० जाने पा० देखे हं० हां गो० गौतम जा० जाने पा० देखे

पमाणे ? पमाणे चउव्विहे पणत्ते तंजहा-पच्चक्खे, अणुमाणे, ओव्वमे; आगमे,
जहा अणुओगद्वारे तहा णेयव्वं पमाणं जाव तेण परं णो अत्तागमे, णो अनंतरागमे,
परंपरागमे ॥ १६ ॥ केवलीणं भंते ! चरिमकम्मंवा; चरिमणिज्जरंवा जाणइ पासइ ?
हंता गोयसा ! जाणइ पासइ ॥ जहाणं भंते ! केवली चरिमः कम्मवां चरिमणि-

गाय जैसा गवय, ४ गुरु की परंपरा से आप वचनों को मुनकर जानना सो आगम प्रमाण. इस का विशेष विवरण अनुयोगद्वार सूत्र में कहा है. आत्मागम अर्थ से वीतराग को आत्मागम, गणधरों को अनंतरागम और शिष्योंको परंपरागम. सूत्र से गणधरों को आत्मागम, शिष्यों को अनंतरागम व प्रशिष्यों को परंपरागम जानना ॥ १६ ॥ अहो भगवन् ! क्या केवली चरिम कर्म व चरिम निर्जरा को जानते हैं व

१. उन का पनु विरोध, इसे रोह भी कहते हैं.

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

००

प० परंपर प० पर्याप्त अ० अपर्याप्त उ० उपयोगयुक्त उ० उपयोग रहित त० उन में जे० जो उ० उपयोग वाले जा० जानते वा० देखते हैं से० अथ ते० इसलिये तं० वैसे ही ॥ १८ ॥ प० समर्थ भं० भगवत् अ० अनुत्तरोपपतिक दे० देव त० वहां रहे हुवे इ० यहां रहे हुवे के० केवली की स० साथ आ० अलाप सं० संलाप क० करने को हं० हां प० समर्थ के० कैसे जा० यावत् प० समर्थ अ० अनुत्तरोपपतिक

वर्णना ते न जाणंति न पासंति । एवं अणंतर, परंपर, पञ्चत्त, अपञ्चत्ताय, उवउत्ता अणुवउत्ता, ॥ तत्थणं जे ते उवउत्ता ते जाणंति पासंति, से तेणट्ठणं तंत्थेव ॥ १८ ॥ पभूणं भंते ! अणुत्तरोववाइया देवा तत्थगया चैव समाणा इहगएणं केवल्लिणा सद्धि आल्लवंवा संल्लवंवा करेत्तए ? हंता पभू । से कणट्ठणं जाव पभूणं अनुत्तरोववाइयादेवा जाव करेत्तए ? गोयमा ! जणं अणुत्तरोववाइया देवा तत्थगया

जान सकते हैं अर्थात् उपयोगवन्त अभायी सम्यग् दृष्टि परंपरा उत्पन्न होनेवाले पर्याप्त देव जान सकते हैं व देव सकते हैं इसलिये ऐसा कहा गया है ॥ १८ ॥ अहो भगवत् ! अनुत्तरोपपतिक देव वहां रहे हुवे ही यहां मनुष्यलोक में रहे हुवे केवली की साथ आलाप संलाप करने को क्या समर्थ हैं ? हां गौतम ! के देवों ! यहां पर केवली की साथ आलाप संलाप करने को समर्थ हैं अहो भगवत् ! किस कारण से वे समर्थ हैं ? अहो

प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुबदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी

कितनेक जा० जानते हैं पा० देखते हैं से० अथ के० कैसे जा० यावत् ण० नहीं जा० जानते हैं गो० गौतम वे० वैमानिक दे० देव दु० दोषकार के प० कहे मा० मायावी मि० मिथ्यादृष्टि उ० उत्पन्न हुवे अ० अमायावी स० सम्यग् दृष्टि उ० उत्पन्न हुए त० उन में जे० जो ते० वे मा० मायावी मि० मिथ्यादृष्टि उ० उत्पन्न होने वाले ते० वे न० नहीं जा० जानते हैं न० नहीं पा० देखते हैं ऐ० ऐसे अ० अनंतर

पासंति ? गोयमा ! अत्येगइया जाणंति पासंति, अत्येगइया णजाणंति णपासंति ॥

सेकेणटुणं जाव णं पासंति ? गोयमा ! वेमाणया देवा दुविहा प० तं० मायिमिच्छादिट्टिउ-
ववणगाय, अमायिसम्मदिट्टिउववणगाय । तत्थणं जे ते माइमिच्छदिट्टिउव-

कितनेक जानते, देखते हैं और कितनेक नहीं जानते हैं व नहीं देखते हैं ? अहो गौतम ! वैमानिक देव दोषकार के कहे हैं. १. मायी मिथ्यादृष्टि उत्पन्न हुवे और २. अमायी सम्यग् दृष्टि उत्पन्न हुवे. उन में से मायी मिथ्यादृष्टि नहीं जान सकते व नहीं देख सकते हैं परंतु अमायी सम्यग् दृष्टि जान व देख सकते हैं. अमायी सम्यग्दृष्टि के दो भेद अनंतर उत्पन्न होनेवाले और परंपरा उत्पन्न होनेवाले. उस में से अनंतर उत्पन्न होनेवाले नहीं जोईं सक्ते हैं परंतु परंपरा उत्पन्न होनेवाले जान सकते हैं. परंपरा उत्पन्न होनेवाले के दो भेद पर्याप्त व अपर्याप्त उस में अपर्याप्त नहीं जान सकते हैं परंतु पर्याप्त जान सकते हैं. पर्याप्त के दो भेद उपयोग युक्त व उपयोग रहित उस में उपयोगवाले जान सकते हैं परंतु उपयोग विना के नहीं

केवली जा० यावत् पा० देखते हैं ॥ १९ ॥ अ० अनुत्तरोपपातिक भं० भगवन् दे० देव किं० यया उ० उदित मोहवाले उ० उपशान्त मोहवाले स्त्री० क्षीणमोहवाले गो० गोनम नो० नहीं उ० उदितमोहवाले उ० उपशांत मोहवाले गो० नहीं स्त्री० क्षीणमोह वाले ॥ २० ॥ के० केवली भं० भगवन् आ० भवति, से तेजट्टेणं जणं इहगए केवली जाव पासइ ॥ १९ ॥ अणुत्तरोववाइयाणं भंते ! देवा किं उदिणमोहा, उवसंतमोहा, खीणमोहा ? गोयमा नो उदिणमोहा, उवसंतमोहा, णो खीणमोहा ॥ २० ॥ केवलीणं भंते ! आयाणेहि जाणइ पासइ ?-

अहो गौतम ! उन को अनंत मनोद्रव्य वर्गणा विशेषपनसे प्राप्त हुई है, सामान्यपना से प्राप्त हुई है, व सन्मुख हुई है. इसलिये अहो गौतम ! यहाँपर केवली जो अर्थ, हेतु कहते हैं उन को अनुत्तर कल्पवासी देव वहाँ रहे हुवे जान सकते हैं व देख सकते हैं * ॥ १९ ॥ अहो भगवन् ! अनुत्तर कल्पवासी देव क्या उदित [उदय हुआ] मोहवाले हैं, उपशान्त मोहवाले हैं, या क्षीण मोहवाले हैं ? अहो गौतम ! वे उदित मोहवाले नहीं हैं वैसे ही क्षीण मोहवाले नहीं है परंतु उपशांत मोहवाले हैं ॥ २० ॥ अहो

* अनुत्तर कल्पवासी देवों का अत्रधिज्ञान संभिल्लोकनाडिधिपयवाला है. जो अत्रधिज्ञान लोक नाडी ग्राहक होता है वह मन्नेद्रव्य वर्गणा का ग्राहक भी होता है. और भी मात्र लोक का संख्यात भागवाला अत्रधिज्ञान होता है वह भी मनोद्रव्यग्राही होता है, तो लोक नाडी विपयवाला अत्रधिज्ञान क्यों मनोद्रव्यग्राही न होवे ? अर्थात् मनोद्रव्य वर्गणा ग्राही होवे

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जीदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

दे० देव जा० यावत् क० करने को गो० गौतम ज० जो अ० अनुचरोपपातिक दे० देव त० वहां रहे हुवे अ० अर्थ हे० हेतु प० प्रश्न का० कारन वा० व्याकरण पु० पुछते हैं त० उसे इ० यहाँ रहे हुए के० केवली अ० अर्थ जा० यावत् वा० कहते हैं ते० इसलिये ज० यदि भं० भगवन् गो० गौतम ते० उन दे० देवों को अ० अनंत म० मनोद्रव्य व० वर्गणा ल० लब्ध प० प्राप्त अ० सन्मुखहुई ते० इसलिये के० केव समाणा अट्टवा, हेउंवा, पसिणंवा कारणंवा, वागरणंवा पुच्छंति, तण्णं इहगाए केवली अट्टवा जाव वागरणंवा वागरेइ से तेणट्टुणं । जइणं भंते ! इहगाए केवली अट्टवा जाव वागरेइ तण्णं अणुत्तरोववाइया देवा तत्थगया चेव समाणा जाणंति पासंति ? हंता गोयमा ! जाणंति, पासंति । से केणट्टुणं जाव पासंति ? गोयमा !

तेसिणं देवाणं अणंताओ मणंदव्व वग्गणाओ लद्धाओ पत्ताओ अमिसमण्णागयाओ गौतम ! * अनुत्तररूपवासी देव वहां रहे हुवे जो अर्थ, हेतु, प्रश्न, कारन, व्याकरण वगैरह पूछते हैं उन का उत्तर केवली यहाँ रहे हुवे देते हैं इसलिये वे देवता समर्थ हैं. अहो भगवन् ! यहाँ रहे हुवे केवली जो अर्थ, हेतु वगैरह कहते हैं उन को अनुत्तर कल्पवासी देव क्या वहां रहे हुवे जान व देख सकते हैं ? हां गौतम ! वे जान व देख सकते हैं. अहो भगवन् ! किस कारन से वे जान व देख सकते हैं ?

* बाह्य अत्युत्तर देवलोक से उपरके देवलोक के देवताओं का मनुष्य लोक में आगमन नहीं होता है.

काल में ए० इन ही अ० आकाश प्रदेश में ह० हस्त जा० यावत् उ० अत्रगाहकर चि० रहने को गो० गौतम णो० नहीं इ० यह अर्थ स० योग्य के० कैसे भ० भगवन् जा० यावत् के० केवली अ० इस स० समय में जे० जिन आ० आकाश प्रदेश में जा० यावत् चि० रहते हैं णो० नहीं ए० समर्थ के० केवली से० आगामिक काल में ए० इनही में ह० हस्त जा० यावत् चि० रहने को गो० गौतम के० केवली को वी० वीर्य के स० योग सहित स० विद्यमान द० द्रव्य च० अस्थिर उ० उपकरण (अंगोपांग) भ०

एसु केव आगासपएसेसु हत्थंवा जाव उग्गाहिचाणं चिट्ठित्तए ? गोयमा ! णोइणट्टे समट्टे । से केणट्टेणं भंते ! जाव केवलीणं अस्सि समयंसि जेसु आगासपएसेसु जाव चिट्ठइ, णो णं पभू केवली सेयकालंसिवि एसुचेव हत्थंवा चाव चिट्ठित्तए ?

गोयमा ! केवल्लिस्सणं वीरियस्स सजोगसद्दव्वयाए चलाइं उवगरणाइं भवंति, च-
लोत्रगरणट्टयाएणं केवली अस्सि समयंसि जेसु आगासपएसेसु हत्थंवा जाव
मत कालमें हस्त, पाँव, बाहु व जंघा अवगाह कर रहने को क्या समर्थ हैं ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है. अहो भगवन् ! किस कारन से केवली इस वर्तमान समय में जिन प्रदेशों में हस्तादि अवगाहकर रहे हुवे हैं उन प्रदेशों में ही आगामिक काल में नहीं रह सकते हैं ? अहो गौतम ! केवली को वीर्यत-
स्य के क्षय से मन वचन व काया का व्यापार सहित विद्यमान जीव द्रव्य के भाव से अस्थिर अंगोपांग

एवमिदं तदर्थं पणानं (सुत्रं) (सुत्रं)

सुत्र

भावार्थ

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी बालाप्रसादजी *

इन्द्रिय से जा०जाने पा० देखे णो० नहीं इ० यह अर्थ स० समर्थ के० किसलिये जा० यावत् शेष पूर्ववत् ॥ २? ॥ के० केवली भं० भगवन् अ० इस स० समय में जे० जिन आ० आकाश प० प्रदेश में ह० हस्त पा० पांच वा० बाहु उ० जंघा उ० अवगाह कर चि० रहते हैं प० समर्थ के० केवली से० आगागमिक

णो इण्टे समट्टे । से केणट्टेणं जाव केवलीणं आयणेहिं न जाणइ न पासइ ? गोयमा !
केवलीणं पुरच्छिमेणं भियंपि जाणइ, अमियंपि जाणइ, जाव निव्वुडे दंसणे केव-
ल्लिस से तेणट्टेणं ॥ २१ ॥ केवलीणं भंते ! अस्सि समयंसि जेसु आगासपए-
सेसु हरथंवा, पायंवां, वाहंवा, उरंवा उग्गाहिचाणं चिट्ठइ, पभूणं केवली सेयकालंसिनि

भगवन् ! क्या केवली आदान (ग्रहण करने योग्य सो इन्द्रियों) से जानते हैं देखते हैं ? अहो गौतम !
यह अर्थ योग्य नहीं है. किस कारन से केवली इन्द्रियों से नहीं जानते हैं, नहीं देखते हैं ? अहो गौतम !
केवली पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊर्ध्व, अधो वगैरह दिशा में मर्यादा सहित जानते हैं और मर्यादा
रहित भी जानते हैं, सब काल, सब भाव जानते देखते हैं. यावत् केवली को प्रगट ज्ञान दर्शन रहाहुवा
इमलिये वे केवली इन्द्रियों से नहीं जानतं व नहीं देखते हैं ॥ २१ ॥ अहो भगवन् ! इस समय में केवली जिन
प्राकाश प्रदेश में अपने हस्त, पांच, बाहु व जंघा अवगाहकर रहे हुवे हैं. उन ही प्राकाश प्रदेश में अना-

शब्दार्थ सूत्र मर्थ

३ उ० वताने की गो० गौतम चो० चौदहपूर्वी को अ० अनंत द्रव्य उ० उत्कारिका भे० भेद स
तोड़े हुवे ल० लब्ध प० प्राप्त अ० सन्मुख हुए म० होते हैं ते० इसलिये जा० यावत् उ० वताने
१० वैभे ही भे० भगवद् पं० पांचवा स० शतक का च० चौथा उ० उद्देशा स० समाप्त ॥ ५ ॥ ४ ॥

छ० छद्मस्य भं० भगवन् म० मनुष्य ती० अतीत अ० अनंत सा० शाश्वत स० समय के० संपूर्ण सं०
णताइं दब्वाइं उक्कारिया भेषणं भिज्जमाणाइं लद्धाइं पत्ताइं अभिसमण्णागयाइं भवंति,
से तेणट्टुणं जाय उवदंसित्तए ॥ २४ ॥ संवं भंते भंतेत्ति ॥ पंचम समयस चउत्थो उहेसो
सम्मत्तो ॥ ५ ॥ ४ ॥ * * *

छउमत्थेणं भंते ! मणूसे तीय मणंतं सासयं समयं केवल्लेणं संजमेणं जहा पढमसए

अहो भगवन् ! किस तरह चौदह पूर्वधारी एक घडे से सहस्र घडे यावत् एक दंड से सहस्र दंड
बनाकर वताने को समर्थ है ? अहो गौतम ! भेद पांच प्रकार के कहे हुवे हैं ? खंडादि भेद सो अनेक
दुकडे हुवे लोष्टादि ? प्रतर भेद सो पड नीकले अन्नपटल ३ चूर्ण भेद तिलादि चूर्णवत् ४ अमुत्तिका भेद
अवटनट का भेद समान और ५ उत्कारिका भेद एरण्ड क्षीज समान, जो चौदह पूर्वधारी केत हैं उन को
अनंत द्रव्य उत्कारिक भेद से भेदाये हुवे प्राप्त होते हैं; इस से वे अनेक रूप बनाकर बता सकते हैं.
अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य हैं यह पांचवा शतक का चौथा उद्देशा पूर्ण हुवा ॥ ५ ॥ ४ ॥

चतुर्थ उद्देशे में चौदह पूर्वधारी का महातुभाव कहा. उक्त से छद्मस्य जीव सीमे ऐसी किसी को शंका

पचमो लोष्टादि (भेद)

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

हाप ह प० आस्थर उ० उपकरण कालयं क० कंवली अ० इस स० समय में जे० जिन आ० आकाश
 प्रदेश में शेष पूर्ववत् ॥ २२ ॥ प० समर्थ भं० भगवन् चो० चौदहपूर्वी घ० घटसे घ० घटसहस्र प० वस्त्र० ने प०
 वस्त्र सहस्र क० कट (छादडी से) क० कट सहस्र र० रथ से र० रथ सहस्र छ० छत्र से छ० छत्र सहस्र
 दं० दंड से दं० दंड सहस्र अ० करके उ० वताने को हं० हां प० समर्थ के० कैसे चो० चौदह पूर्वी जा०
 चिट्टइ, णोणं पमू केवली सेयकालंसि त्रिएसुचेव, जात्र चिट्टितए से तेणट्टुणं जात्र
 बुच्चइ केवलीणं अस्सि समयंसि जात्र चिट्टितए ॥ २२ ॥ पमूणं भंते ! चौदस-
 पुव्वी घडाओ घडसहस्रं, पडाओ पडसहस्रं, कडाओ कडसहस्रं, रहाओ रहसहस्रं,
 छत्ताओ छत्तसहस्रं; दंडाओ दंडसहस्रं, अभिनिव्वट्ठा उवदंसेत्तए ? हंता पमू ।
 से केणट्टुणं पमू चौदसपुव्वी जात्र उवदंसेत्तए ? गोपभा ! चौदसपुव्विस्सणं अ-
 हाते हं. इस तरह आस्थिर अंगोपांग होने से केवली वर्तमान समय में जिन प्रदेशों में हस्तादि अवगाहकर
 रहते हैं उन प्रदेशों में अनागत काल में नहीं रहते हैं ॥ २२ ॥ अब श्रुत केवली आश्री पन्न पूछते हैं.
 अहो भगवन् ! चौदह पूर्ववारी श्रुत केवली क्या लडिध के पभाव से एक घंड की नेश्राय से सहस्र घंडे,
 एक पल से सहस्र वस्त्र, एक कट (छादडी) से सहस्र कट, एक रथ से सहस्र रथ, एक छत्र से सहस्र छत्र
 व एक दंड से सहस्र दंड बनाकर वताने को क्या समर्थ है ? हां गौतम ! चौदह पूर्ववारी समर्थ हैं.

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

यावत् उ० वताने को गो० गौतम चो० चौदहपूर्वी को अ० अनंत द्रव्य उ० उत्कारिका भे० भेद स
 भि० तोड़े हुबे ल० लब्ध प० प्राप्त अ० सन्मुख हुए भ० होते हैं ते० इसलिये जा० यावत् उ० वताने
 को से० वैले ही भे० भगवन् पं० पांचवा स० शतक का च० चौथा उ० उद्देशा स० समाप्त ॥ ५ ॥ ४ ॥
 छ० छद्मस्थ भं० भगवन् म० मनुष्य ती० अतीत अ० अनंत सा० शश्वत स० समय के० संपूर्ण सं०
 णंताइं दव्वाइं उक्कारिया भेषणं भिज्जमाणाइं लद्धाइं पत्ताइं अभिसमण्णागायाइं भवंति,
 से तेणट्टेणं जाय उवदंसित्तए ॥ २४ ॥ संवं भंते भंतेत्ति ॥ पंचम सयस्स चउत्थो उद्देशो
 सम्मत्तो ॥ ५ ॥ ४ ॥ * * * * *
 छउमत्थेणं भंते ! मणूसे तीय मणंतं सासयं समयं केवल्लेणं संजमेणं जहा पढमसए

अहो भगवन् ! किस तरह चौदह पूर्वधारी एक घडे से सहस्र घडे यावत् एक दंड से सहस्र दंड
 बनाकर वताने को समर्थ हैं ? अहो गौतम ! भेद पांच प्रकार के कहे हुबे हैं १ खंडादि भेद सो अनेक
 टुकड़े हुबे लोष्टादि २ पत्तर भेद सो पड नीकले अभ्रपटल ३ चूर्ण भेद तिलादि चूर्णवत् ४ अमुतटिका भेद
 अवटवट का भेद समान और ५ उत्कारिका भेद एरण्ड धीज समान. जो चौदह पूर्वधारी दंत हैं उन को
 अनंत द्रव्य उत्कारिक भेद से भेदाये हुबे प्राप्त होते हैं; इस से वे अनेक रूप बनाकर बता सकते हैं.
 अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य हैं यह पांचवा शतक का चौथा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ ५ ॥ ४ ॥

चतुर्थ उद्देशे में चौदह पूर्वधारी का महानभाव कहा. उस से छद्मस्थ जीव सीमे ऐसी किसी को शंका

संयम संजुं जस प० प्रथम श० शतक में च० चतुर्थ उ० उद्देशे में आ० आलापक त० तैसे ने० जानना जा० यावत् ॥ १ ॥ अ० अन्यतीर्थिक भं० भगवत् ए० ऐसा आ० कहते हैं जा० यावत् प० परूपते हैं स० सत्र पा० प्राणी स० सत्र भू० भूत स० सत्र जी० जीव स० सत्र स० सत्र प० ऐसी वे० वेदना

चउत्थ उद्देशे आलावगा तथा नेयव्वा जाव अलमत्थुत्ति वत्तव्वंसिया ॥ १ ॥ अ-
ण्णउत्थियाणं भंते ! एवमाइक्खंति जाव परूवैति सव्वे पाणा, सव्वे भूया, सव्वे
जीवा सव्वेसत्ता, एवंभूयं वेयणं वेदंति. से कहमेयं भंते ! एवं ? गोयमा ! जण्ण ते
अण्णउत्थिया एवमाइक्खंति जाव वेदंति, जे ते एव माहंसु मिच्छते एव माहंसु ॥ अहं
पुण गोयमा ! एव माइक्खामि जाव परूवमि, अत्थेगइया पाणा भूया जीवासत्ता एवं-
भूयं वेयणं वेदंति, अत्थेगइया पाणा भूया जीवा सत्ता अणेवभूयं वेयणं वेदंति ॥

शेरे इस की निवृत्ति के लिये पांचवाः उद्देशा कहते हैं. अहो भगवन् ! छद्मस्थ मनुष्य मात्र संयम से क्या सिद्धते हैं, बुझते हैं यावत् सत्र दुःखों का अंत करते हैं ? अहो गौतम ! प्रथम शतक के चतुर्थ उद्देशे में ऐसा कहा वैसीही यहां जानना. अर्थात् छद्मस्थ मनुष्य नहीं सिद्धते हैं यावत् सत्र दुःखों का अंत नहीं करते हैं परंतु ज्ञान दर्शन के धारक केवली ही सिद्धते हैं. क्यों कि उस से विशेष कुछ नहीं है. ॥ १ ॥ अहो

वेदते हैं से० अथ क० कैसा ए० यह भ० भगवन् ए० ऐसे गो० गौतम जे० जो ते० वे अ० अन्य तीर्थिक ए० ऐसा आ० कहते हैं जा० यावत् वे० वेदते हैं जे० जो ते० वे ए० ऐसा आ० कहते हैं मि० मिथ्या ते० वे ए० ऐसा आ० कहते हैं अ० मैं पु० पुनः गो० गौतम ए० ऐसा आ० कहता हूँ

से केणट्टुणं ! अत्थेगइया तंचेव उच्चरियव्वं ? गोयसा ! जेण पाणा भूया जीवा सत्ता जहा कडा कम्मा तथा वेयणं वेदंति तेणं पाणा भूया जीवा सत्ता एवंभूयं वेयणं वेदंति, जेणं पाणा भूया जीवा सत्ता जहा कडा कम्मा नो तथा वेयणं वेदंति, तेणं पाणा भूया जीवा सत्ता अणेवंभूयं वेयणं वेदंति से तेणट्टुणं तहेव ॥२॥ नेरइयाणं भंते ! किं एवंभूयं वेयणं वेदंति अणेवंभूयं वेयणं वेदंति ? गोयसा ! नेरइयाणं

भगवन् ! अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं यावत् प्ररूपते हैं कि सब प्राण भूत जीव व सत्व एवंभूते वेदना वेदते हैं तो यह किस तरह है ? अहो गौतम ! जो अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं वे मिथ्या हैं अर्थात् उन का कथन मिथ्या है, मैं ऐसा कहता हूँ यावत् प्ररूपबा हूँ कि कितनेक प्राण भूत सत्व व जीव एवंभूत वेदना वेदते हैं और कितनेक प्राण भूत जीव व सत्व अनेवंभूत वेदना वेदता हैं, अहो भगवन् !

१ जिसरीति से कर्म करना उसी रीति से उसको भोगना सो.

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालागसादजी *

जा० यावत् प० मरुपता हूँ जे० जो पा० प्राणी भू० भूत जी० जीव स० सत्व ज० जैसे क० किया हुआ क० कर्म त० तैसी वे० वेदना वे० वेदते हैं ते० वे पा० प्राण ए० एंवभूत वे० वेदना वे० वेदते हैं शेष भव पूर्ववत् में ॥ २ ॥ पूर्ववत् ॥ ३ ॥ जे० जम्बूद्वीप में भा० भरत क्षेत्र में इ० इस उ० अत्रसर्पिणी के स० अवसर एंवभूयंवि वेयणं वेदंति, अणेवंभूयंवि वेयणं वेदंति ॥ से केणट्टेणं तंचेव ? गोयमा ! जेणं नेरइयाणं जहा कडा कम्मा तथा वेयणं वेदंति तेणं नेरइया एंवभूयं वेयणं वेदंति जेणं नेरइया जहा कडा कम्मा णो तथा वेयणं वेदंति तेणं नेरइया अणेवंभूयं वेयणं वेदंति । से तेणट्टेणं जाव वेमाणिया, संसारसंडलं नेयव्वं ॥ ३ ॥

किस तरह ? अहो गौतम ! प्राण भूतादि जिसरिति से कर्मों किये वैसी वेदना वेदते हैं वे प्राण भूतादि एंवभूत वेदना वेदते हैं और जो प्राण भूत जिसरिति से कर्मों किये वैसी वेदना नहीं वेदते हैं अनेवंभूत वेदना वेदते हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! क्या नारकी एंवभूत वेदना वेदते हैं ? अहो गौतम ! नारकी एंवभूत अनेवंभूत ऐसी दोनोंप्रकार की वेदना वेदते हैं. अहो भगवन् ! यह किस तरह ? अहो गौतम ! जो नारकी जैसे कर्म किये वैसी वेदना वेदते हैं वे एंवभूत वेदता वेदते हैं और जो नारकी जैसे कर्म किये वैसी वेदना नहीं वेदते हैं वे अनेवंभूत वेदना वेदते हैं. इस तरह वैमानिक तक जानना. यह संसार-चक्र में परिभ्रमण करनेवाले जीवों की वक्तव्यता कर्ही. ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र

क० कितने कु० कुलकर हो० थे गो० गौतम स० सात ए० ऐसे तीर्थकर मा० माता पि० पिता प० प्रथम सि० शिष्या च० चक्रवर्ती मा० मता इ० स्त्री रत्न व० बलदेव वा० वासुदेव मा० माला पि० पिता ए० इन के प० प्रतिशत्रु ज० जैसे स० समवायांग में ना० नाम की प० परिपाटी ने० जानना ॥ ५ ॥ ५ ॥ क० कैसे भ० भगवन् जी० जीव अ० अल्प आ० आयुष्यपने का क० कर्म प० करते हैं गो०

जंबुद्वीवैणं भंते ! इह भारहेवासे इमीसे उसपिणीए समाए कइ कुलगरा होत्या ?
 गोयमा ! सत्त, एवं तिथ्यरा मायरो पियरो पढमा सिस्सिणीओ, चक्कवट्टी, मायरो,
 पियरो इत्थिरयणं, बलदेववासुदेवा, वासुदेव मायरो पियरो एएसिं पडिसत्तू जहा समवाए
 नाम परिवाडी तहा नेयव्वा ॥ सेवं भंते भंतेत्ति जाव विहरइ ॥ पंचम सयस्स पंचमो
 उद्देशो सम्मत्तो ॥ ५ ॥ ५ ॥ * * *

कहणं भंते ! जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरंति ? गोयमा ! पाणे अइवाइत्ता,
 में इस अवसरपिणी में कितने कुलकर होते हैं ? अहो गौतम ! सात कुलकर होते हैं. ऐसे ही तीर्थकर व
 उनके माता, पिता प्रथम शिष्य व शिष्या चक्रवर्ती, व उनके माता, पिता, स्त्री रत्न बलदेव वासुदेव व उन के
 माता, पिता व प्रतिशत्रु [प्रतिवासुदेव] का अधिकार जैसे समवायांग सूत्र में कहा है वैसे ही यहां
 जानना. अहो भगवन् ! आप के वचन सत्य हैं. यह पांचवा शतक का पांचवा उद्देशा पूर्ण हुआ ॥ ५ ॥ ५ ॥
 पांचवे उद्देशे के अंत में उचम पुरुषों के नामों के हैं. अब उचमता व अधमता किस तरह से प्राप्त

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालागसाहजी *

जा० यावत् प० प्ररूपता हूँ जे० जो पा० प्राणी भू० भूत जी० जीव स० सत्व ज० जैसे क० किया हुआ क० कर्म त० तैसी वे० वेदना वे० वेदते हैं ते० वे पा० प्राण ए० एवंभूत वे० वेदना वे० वेदते हैं शेष सब पूर्ववत् मे ॥ २ ॥ पूर्ववत् ॥ ३ ॥ जे० जम्बूद्वीप में भा० भरत क्षेत्र में इ० इस उ० अवसरपिणी के स० अवसर

एवंभूयन्नि वेयणं वेदंति, अणवंबूयन्नि वेयणं वेदंति ॥ से केणट्टेणं तंचेव ? गोयमा ! जेणं नेरइयाणं जहा कडा कम्मा तथा वेयणं वेदंति तेणं नेरइया एवंभूयं वेयणं वेदंति जेणं नेरइया जहा कडा कम्मा णो तथा वेयणं वेदंति तेणं नेरइया अणवंबूयं वेयणं वेदंति । से तेणट्टेणं जाव वेमाणिया, संसारमंडलं नेयव्वं ॥ ३ ॥

यह किस तरह ? अहो गौतम ! प्राण भूतादि जिसरीति से कर्मों किये वैसी वेदना वेदते हैं वे प्राण भूतादि एवंभूत वेदना वेदते हैं और जो प्राण भूत जिसरीति से कर्मों किये वैसी वेदना नहीं वेदते हैं वे अनेकभूत वेदना वेदते हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! क्या नारकी एवंभूत वेदना वेदते हैं ? अहो गौतम ! नारकी एवंभूत अनेकभूत ऐसी दोनोप्रकार की वेदना वेदते हैं, अहो भगवन् ! यह किस तरह ? अहो गौतम ! जो नारकी जैसे कर्म किये वैसी वेदना वेदते हैं वे एवंभूत वेदना वेदते हैं और जो नारकी जैसे कर्म किये वैसी वेदना नहीं वेदते हैं वे अनेकभूत वेदना वेदते हैं, इस तरह वैमानिक तक जानना, यह संसार-क्षेत्र में परिभ्रमण करनेवाले जीवों की वक्तव्यता कही, ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र

दी० दीर्घायुष्य का क० कर्म प० करते हैं ॥ २ ॥ क० केस भं० भगवन् जी० जीव अ० अशुभ दी० दीर्घायुष्य का क० कर्म प० करते हैं गो० गौतम पा० प्राणियों की अ० हिंसा करने से म० मृषा व० धोलने से त० तथारूप स० श्रमण मा० ब्राह्मण की ही० हीलना करने से नि० नींदने से खि० खिसना करने से ग० गर्हा करने से अ० तीरस्कार करने से अ० अन्यतर अ० अमनोज्ञ अ० अप्रीति का० कारन से अ० अशन पा० पान खा० खादिम सा० स्वादिम प० देकर ए० एसे ख० निश्चय जी० जीव जा० यावत् प० करते हैं ॥ ३ ॥ क० केस भं० भगवन् जी० जीव सु० शुभ दी० दीर्घ आयुष्य का क० कर्म

पडिलाभेत्ता एवं खलु जीवा दीहाउयत्ताए कम्मं पकरंति ॥ २ ॥ कहणं भंते !
जीवा असुभदीहाउयत्ताए कम्मं पकरंति ? गोयसा ! पाणे अइवाएत्ता, मुसं वइत्ता
तहारूवं समणंवा माहणंवा हीलित्ता, निदित्ता, खिसित्ता, गरहित्ता, अवमणित्ता,
अणयरेणं अमणुणेणं, अप्पीइ कारएणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभित्ता,
एवं खलु जीवा जाव पकरंति ॥ ३ ॥ कहणं भंते ! जीवा सुभ दीहाउयत्ताए कम्मं

श्रमण माहण को फ्रासुक एपणिक अशनादिक देने से जीव दीर्घ आयुष्य बांधते हैं ॥ २ ॥ अहो भगवन् !
जीव कैसे अशुभ दीर्घायुष्य बांधते हैं ? अहो गौतम ! प्राणियों का वध करने से, मृषा बोलने से, व
तथारूप श्रमण माहण की हीलना, निंदा, खिसना, गर्हा व तिरस्कार करने से, जैसे ही अन्य अमनोज्ञ
अप्रीति कारक अशनादि देने से जीव अशुभ दीर्घायुष्य बांधते हैं ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! जीव कैसे शुभ

वदार्थ (पञ्चमो विंशो पणान्) (शतमो)

सूत्र

भावार्थ

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जी सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

गौतम पा० प्राणियों का अ० अतिपात करके मु० मृपा व० बोल करके त० तथारूप स० श्रमण मा० माहण को अ० अफ्रासुक अ० अनेपणिक अ० अन्न पा० पानी खा० खादिम सा० स्वादिम से प० देकर ए० ऐसे जी० जीव अ० अल्प आ० आयुष्यपने का क० कर्म प० करते हैं ॥ १ ॥ क० कैसे भं० भगवन् जी० जीव दी० दीर्घ आ० आयुष्यपने का क० कर्म प० करते हैं गो० गौतम नो० नहीं पा० प्राणियों का अ० अतिपात करने से नो० नहीं मु० मृपा व० बोलने से त० तथारूप स० श्रमण मा० ब्राह्मण को फा० फ्रासुक ए० एपणिक अ० अन्न पा० पानी खा० खादिम सा० स्वादिम प० देने से ए० ऐसे ख० निश्चय जी० जीव

मुसं बइत्ता, तहारूवं समणंवा माहणंवा अफासुएणं अणेसणिज्जेणं असण पाण खाइम साइमेणं पडिलाभेत्ता एवं खलु जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरंति ॥ १ ॥ कहणं

भंते ! जीवा दीहाउयत्ताए कम्मं पकरंति ? गोयमा ! नो पाणे अइवाइत्ता, नो मुसं वइत्ता, तहारूवं समणंवा माहणंवा फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं

होती है सो वतते हैं. अहो भगवन् ! किम तरह से जीव अल्पायुष्य का कर्म करते हैं ? अहो गौतम ! प्राणियों का वध करने से, मृपा बोलने से, व तथारूप श्रमण माहण को अफ्रासुक अनेपणिक आहार, पानी, खादिम व स्वादिम देने से जीव अल्प आयुष्य बांधते हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! जीव कैसे दीर्घ आयुष्य बांधते हैं ? अच्छे गौतम ! प्राणियों का वध नहीं करने से, मृपा नहीं बोलने से व तथाभूत

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

दी० दीर्घायुष्य का क० कर्म प० करते हैं ॥ २ ॥ क० कैसे भ० भगवन् जी० जीव अ० अशुभ दी० दीर्घायुष्य का क० कर्म प० करते हैं गो० गौतम पा० प्राणियों की अ० हिंसा करने से म० मृषा व० बोलने से त० तथारूप स० श्रमण मा० ब्राह्मण की ही० हीलना करने से नि० नींदने से खि० खिसना करने से ग० गर्हा करने से अ० तीरस्कार करने से अ० अन्यतर अ० अमनोज्ञ अ० अप्रीति का० कारन से अ० अशन पा० पान खा० खादिम सा० स्वादिम प० देकर ए० ऐसे ख० निश्चय जी० जीव जा० यावत् प० करते हैं ॥ ३ ॥ क० कैसे भ० भगवन् जी० जीव सु० शुभ दी० दीर्घ आयुष्य का क० कर्म

पडिलाभेत्ता एवं खलु जीवा दीहाउयत्ताए कम्मं पकरंति ॥ २ ॥ कहणं भंते !
जीवा असुभदीहाउयत्ताए कम्मं पकरंति ? गोयमा ! पाणे अइवाएत्ता, मुसं वइत्ता
तहारूवं समणंवा माहणंवा हीलित्ता, निदित्ता, खिसित्ता, गराहित्ता, अवमणित्ता,
अणयरेणं अमणुण्णेणं, अप्पीइ कारणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभित्ता,
एवं खलु जीवा जाव पकरंति ॥ ३ ॥ कहणं भंते ! जीवा सुभ दीहाउयत्ताए कम्मं

श्रमण माहण को फ्रासुक एपणिक अशनादिक देने से जीव दीर्घ आयुष्य वांधते हैं ॥ २ ॥ अशो भगवन् !
जीव कैसे अशुभ दीर्घायुष्य वांधते हैं ? अहो गौतम ! प्राणियों का वध करने से, मृषा बोलने से, व
तथारूप श्रमण माहण की हीलना, निंदा, खिसना, गर्हा व तिरस्कार करने से, जैसे ही अन्य अमनोज्ञ
अप्रीति कारक अशनादि देने से जीव अशुभ दीर्घायुष्य वांधते हैं ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! जीव कैसे शुभ

सुत्र (अशुभ दीहाउयत्ताए कम्मं पकरंति)

सुत्र

सुत्रार्थ

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

गौतम पा० प्राणियों का अ० अतिपात करके मु० मृपा व० बोल करके त० तथारूप स० श्रमण मा० माहण को अ० अफ्रासुक अ० अनेषणिक अ० अन्न पा० पानी खा० खादिम सा० स्वादिम से प० देकर ए० ऐसे जी० जीव अ० अल्प आ० आयुष्यपने का क० कर्म प० करते हैं ॥ १ ॥ क० कैसे भ० भंगवन् जी० जीव दी० दीर्घ आ० आयुष्यपने का क० कर्म प० करते हैं गो० गौतम नो० नहीं पा० प्राणियोंका अ० अतिपात करने से नो० नहीं मु० मृपा व० बोलने से त० तथारूप स० श्रमण मा० ब्राह्मण को फा० फ्रासुक ए० एषणिक अ० अन्न पा० पानी खा० खादिम सा० स्वादिम प० देने से ए० ऐसे त्व० निश्चय जी० जीव मुसं वइत्ता, तहारूचं समणंवा माहणंवा अफ्रासुएणं अणेसणिज्जेणं असण पाण खाइम

साइमेणं पडिलाभेत्ता एवं खलु जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरंति ॥ १ ॥ कहणं

भंते ! जीवा दीहाउयत्ताए कम्मं पकरंति ? गोयमा ! नो पाणे अइवाइत्ता, नो मुसं

वइत्ता, तहारूचं समणंवा माहणंवा फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं

होती है सो वतते हैं. अहो भंगवन् ! किम तरह से जीव अल्पायुष्य का कर्म करते हैं ? अहो गौतम ! प्राणियों का वध करने से, मृपा बोलने से, व तथारूप श्रमण माहण को अफ्रासुक अनेषणिक आहार, पानी, खादिम व स्वादिम देने से जीव अल्प आयुष्य बांधते हैं ॥ १ ॥ अहो भंगवन् ! जीव कैसे दीर्घ आयुष्य बांधते हैं ? अहो गौतम ! प्राणियों का वध नहीं करने से, मृपा नहीं बोलने से व तथाभूत

शब्दार्थ

भावार्थ

अ० अमत्याख्यानं भि० मिथ्यादर्शनं कि० क्रियां सि० क्वचित् क० करे सि० क्वचित् नो० नहीं क० करे अ० अथ से० उन को भं० किरियाना अ० प्राप्तं होवे त० उस प० पीछे स० सब ता० वे प० पतली होती हैं ॥ ५ ॥ गा० गृहपतिका भं० किरियाना वि० वेचने वाला का क० माललेनेवाला मं० किरि-

दंसणवत्तिया ? गोयमा ! आरंभिया किरिया कज्जइ, परिग्गहिया, मायावत्तिया,
अप्पच्चक्खाणकिरिया कज्जइ, मिच्छादंसणकिरिया सिय कज्जइ सिय नो कज्जइ ॥

अह से भंडे अभिसमणणाए भवइ, तओसे पच्छा सब्वाओ ताओ पयणुइभवन्ति
॥ ५ ॥ गाहावइस्सणं भंते ! भंडं विकिण्णमाणस्स कइए भंडं साइजेजा, भंडेयसे

वाला गायपति को क्या आरंभिकी क्रिया लगती है, परिग्रहिकी क्रिया लगती है, मायाप्रत्ययिकी क्रिया लगती है, अपत्याख्यान प्रत्ययिकी क्रिया लगती है या मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी क्रिया लगती है ? अहो गौतम ! इस तरह किरियाने की गवेषणा करनेवाले गायपति को आरंभिकी, परिग्रहिकी, अमत्याख्यान प्रत्ययिकी व माया प्रत्ययिकी क्रिया लगती है; और मिथ्यादर्शन क्रिया क्वचित् लगती है व क्वचित् नहीं लगती है. और जब वह किरियाना गवेषणा करते हुवे प्राप्त हो जावे तो उक्त सब क्रियाओं पतली हो जाती हैं क्योंकि गवेषणा करनेमें वह उद्यमी बना हुआ था सो उद्यम हीन हो गया ॥ ५ ॥ किरियाने का व्यापार करनेवाले की पास से ग्राहक किरियाना अंगीकार करे परंतु उसने

* भकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

प० करते हैं पूर्ववत् ॥ ४ ॥ गा० गाथापति का भं० भगवन् भं० किरियाना वि० विक्रय करने वाला का के० कोई भं० किरियाना अ० लेजावे त० उस भं० भगवन् भं० किरियाना की अ० गवेषणा करने वाले को कि० क्या आ० आरंभिकी क्रिया क० करता है प० परिग्रहिकी मा० माया प्रत्ययिकी अ० प्रत्याख्यान मि० भिष्या दर्शन प्रत्ययिकी गो० गौतम आ० आरंभिकी कि० क्रिया प० परिग्रहिकी भा० माया प्रत्ययिकी पंकरंति ? गोयमा ! नो पाणे अइवाएत्ता, नो मुसं वइत्ता. तहारूवें समणंवा, माहं-
णंवा, वंदित्ता जाव पज्जुवासेत्ता, अणयरेणं मणुण्णं पीइकारएणं असणं पाणं
खाइमं साइमं पडिलाभित्ता. एवं खलु जीवा जाव पकरंति ॥ ४ ॥ गाहावइस्सणं
भंते ! भंडं विक्खिमाणस्स केइ भंडं अवहरेज्जा तस्सणं भंते ! भंडं अणुगवेसमाणस्स
किं आरंभिया किरिया कज्जइ, परिग्गहि्या, मायावत्तिया, अप्पच्चक्खवाणीया मिच्छा-
दीर्याणुप्य बांधते हैं ? अहो गौतम ! प्राणातिपात नहीं करने से, मृषा नहीं बोलने से, तथारूप श्रमण
माहण को बंदना नमस्कार करनेसे व अन्य मनोह प्रीति उत्पन्न करनेवाले अशनादि देनेसे जीव शुभ दीर्घा-
णुप्य बांधते हैं ॥ ४ ॥ शुभाशुभ कर्मों की उपार्जना क्रिया से होती है इसलिये क्रिया का अधिकार
करने हैं. अहो भगवन् ! किरियाने का व्यापार करनेवाला गाथापति के किरियाने की कोई चोरी करे.
भार चोरी में गया हुआ किरियाने की वह गाथापति गवेषणा करे. अब उस समय में उन गवेषणा करने

करते हैं सि० क्वचिन् नो० नहीं क० करते हैं क० मोल्लेनें वाले को ता० वे स० सब प० पतली होती है ॥ ६ ॥ गा० गाथापति भं० भगवन् भं० किरियाना वि० खरीदने वाले को जा० यावत् भं० किरियाना से० उस की पास उ० लाये क० खरीदने वाले को वेप पूर्ववत् मि० मिथ्या दर्शन कि० क्रिया की भं०

सिय कज्जइ, सिय नो कज्जइ कइयस्सणं ताओ सव्वाओ पयणुईभवति ॥ ६ ॥
गाहावइस्सणं भंते ! भंडं विक्किणमाणस्स जाव भंडे से उवणीए सिया, कइयस्सणं भंते ! ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया कज्जइ, गाहावइस्सवा ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया ? गोयमा ! कइयस्स ताओ भंडाओ हेट्टुल्लाओ चंचारि किरियाओ कज्जंति, मिच्छादंसणकिरिया भयणाए ॥ गाहावइस्सणं ताओ सव्वाओ

हक को उक्त सब क्रियाओं पतली होती हैं ॥ ६ ॥ किरियाना बेचनेवाला गाथापति की पास से ग्राहक ने किराना खरीदा और ग्रहण भी कर लीया तब अहो भगवन् ! उस ग्राहक को क्या आरंभिकी आदि क्रियाओं लगती हैं ! और गाथापति को भी क्या आरंभिकी आदि क्रियाओं लगती हैं ? अहो गौतम ! उस किराने से ग्राहक को आरंभिकी, परिग्रहिकी, मायाप्रत्ययिकी व अप्रत्याख्यान क्रियाओं लगती हैं. मिथ्या दर्शन क्रिया क्वचिन् लगती है व क्वचित् नहीं लगती है. और गाथापति को उक्त सब क्रियाओं पतली

* मकाशक-राजाबहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

याना सा० ग्रहण करे भं० किरियाना भी से० उस को अ० नहीं आया हुआ सि० होंगे गा० गाथापति का भं० भगवत् ता० उस भं० किरियाने से किं० क्या आ० आरंभिकी किं० क्रिया क० करता है जा० यावत् मि० मिथ्या दर्शन किं० क्रिया क० करता है क० मोललेने वाले को ता० उम भं० किरियाने से आ० आरंभिकी किं० क्रिया जा० यावत् मि० मिथ्या दर्शन किं० क्रिया गो० गौतम गा० गाथापति को ता० उस भं० किरियाने से आ० आरंभिकी किं० क्रिया क० करता है जा० यावत् अ० अपत्याख्यान किं० क्रिया क० करते हैं मि० मिथ्या दर्शनं सि० क्वचित् क० अणुवर्णीए सिया गाहावइस्सनं भंते! ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया कज्जइ जाव मिच्छांदंसणकिरिया कज्जइ ? कइयस्सवा ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया कज्जइ, जाव मिच्छांदंसण किरिया कज्जइ ? गोयमा ! गाहावइस्स ताओ भंडाओ आरंभिया किरिया कज्जइ जाव अप्पच्चक्खाण किरिया कज्जइ, मिच्छांदंसण किरिया किरियाना दीया नहीं है, तो अहो भगवन् ! उस गाथापति को उस किरियाने से क्या आरंभिकी यावत् मिथ्यादर्शन क्रिया लगे ? और ग्राहक को क्या उस किरियाने से आरंभिकी यावत् मिथ्यादर्शन क्रिया लगे ? अहो गौतम ! गाथापति को उस किरियाने से आरंभिकी यावत् अपत्याख्यान प्रत्ययिकी क्रिया लगती है और मिथ्यादर्शन क्रिया क्वचित् लगती है व क्वचित् नहीं लगती है. खरीदनेवाला ग्रा-

करते हैं सि० क्वचित् नो० नहीं क० करते हैं क० मोल्लने वाले को ता० वे स० संव प० पतली होती है ॥ ६ ॥ गा० गाथापति भं० भगवन् भं० किरियाना वि० खरीदने वाले को जा० यावत् भं० किरियाना सं० उस की पास उ० लये क० खरीदने वाले को शेष पूर्ववत् मि० मिथ्या दर्शन कि० क्रिया की भं०

सिय कज्जइ, सिय नो कज्जइ कइयस्सणं ताओ सव्वाओ पयणुईभवन्ति ॥ ६ ॥
गाहावइस्सणं भंते ! भंडं विक्रिणमाणस्स जाव भंडे से उवणीए सिया, कइयस्सणं भंते ! ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया कज्जइ, गाहावइस्सवा ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया ? गोयमा ! कइयस्स ताओ भंडाओ हेट्टिह्हाओ चंचारि किरियाओ कज्जंति, मिच्छांदसणकिरिया भयणाए ॥ गाहावइस्सणं ताओ सव्वाओ

हक को उक्त सब क्रियाओं पतली होती है ॥ ६ ॥ किरियाना बेचनेवाला गाथापति की पास से ग्राहक ने किराना खरीदा और ग्रहण भी कर लीया तब अहो भगवन् ! उस ग्राहक को क्या आरंभिकी आदि क्रियाओं लगती हैं ! और गाथापति को भी क्या आरंभिकी आदि क्रियाओं लगती हैं ? अहो गौतम ! उस किराने से ग्राहक को आरंभिकी, परिग्रहिकी, भायाप्रत्ययिकी व अपत्याख्यान क्रियाओं लगती हैं. मिथ्या दर्शन क्रिया क्वचित् लगती है व क्वचित् नहीं लगती है. और गाथापति को उक्त सब क्रियाओं पतली

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेव सहायजी आलाप्रसादजी *

भजना ॥ ७ ॥ गा० गाथापति को भं० भगवन् भं० किरियाणा जा० यावत् ध० धन अं० नहीं दीया सि० होवे ए० इस को ज० जैसे भं० किरियाना उ० दीया हुआ त० तैसे ने० जानना च० चतुर्थ आ० आलापक ध० धन से० उसकी पास उ० लाया हुआ सि० होवे ज० जैसे प० प्रथम आ० आलापक भं० किरियाना अं० नहीं लाया हुआ सि० होवे त० तैसे ने० जानना प० प्रथम च० चतुर्थ का ए० एक ग० गमा वि० द्वितीय त० तृतीय का ए० एक ॥ ८ ॥ अ० अग्रिको भं० भगवन् अ० तत्काल उ०

पयणुईभवन्ति ॥ ७ ॥ गंगावहस्सणं भन्ते ! भंडं जाव धणेय से अणुवणीए सिया, एयंपि जहा भंडे उवणीए तहाणयव्वं चउत्थो आलावगो, धणेयसे उवणीए सिया जहा पढमो आलावगो भंडेयसे अणुवणीए सिया तहा नेयव्वो पढमं चउत्थाणं एक्को-गमो, त्रितीय तईयाणं एक्को ॥ ८ ॥ अगणिकाएणं भन्ते ! अहुणोज्जलिए समणे

होती है ॥ ७ ॥ गाथापतिने किरियाना देचदिया परंतु ग्राहकने जहालग उस के पैसे (धन) नहीं दिया है, बहालग उस गाथापति को धन व किरियाना ऐसे दोनों की क्रिया कम लगती है और ग्राहक को विशेष क्रिया लगनी है, जब किरानेका धन उस गाथापति को ग्राहक दे देता है तब उस को धन की क्रिया विशेष लगती है और ग्राहक को धन की क्रिया पतली होती है, यों इस क्रिया अधिकार में प्रथम व चतुर्थ आलापक का सरिखा अर्थ होता है वैसे ही दूसरा व तीसरा आलापक का एक सरिखा अर्थ होता है ॥ ८ ॥ अब अग्रि को मज्जालेने के संबंध में प्रश्न पूछते हैं- अहो भगवन् ! कोई पुरुष

शब्दार्थ सुत्र अर्थ

शब्दार्थ

सुत्र

अर्थ

उज्ज्वलते म० महाकर्मवाले म० महाक्रिया वाले म० महा आश्रव वाले म० महावेदना वाले म० होवे
अ० नीचे स० समय २ में वो० विखरते हुवे वो० नष्ट करते च० छेले स० समय में इ० अप्रिभूत मु०
मुर्मुगा समान छा० भस्मीभूत त० उस पीछे अ० अल्पकर्म वाले कि० क्रिया आ० आश्रव अ० अल्प
वे० वेदना वाले भ० होता है हं० हां गो० गौतम अ० अग्निकाय अ० तत्काल का उ० उज्वल होती तं०

महाकम्मतराए चेव, महाकिरियतराए चेव, महस्सवतराए चेव, महवियणतराएचेव
भवइ । अहेणं समए २ वोक्कसिज्जमाणे वोच्छिज्जमाणे चरिमकालसमयांसि इंगालभूए
मुम्मुरभूए, छारियभूए, तओपच्छा अप्पकम्मतराएचेव किरिया आसव अप्पवेयणतरा-
ए चेव भवइ ? हंता गोयमा ! अगणिकाएणं अहुणोज्जलिए समाणे तं चेव ॥ ९ ॥

अग्नि को तत्काल प्रज्वलित करे तो क्या वह बहुत कर्मवाला, महा क्रियावाला, महा आश्रववाला व महा
वेदनावाला होवे ? और फीर नीचे समय २ में अग्नि को विखरदेते व बुझा देते अंगारे समान, मुर्मुरे
समान, व भस्म समान जब वह अग्नि होती है तब क्या वह अल्प कर्म, अल्प क्रिया, अल्प आश्रव व वेदनावाला
होवे ? हां गौतम ! तुर्न अग्नि प्रज्वलित करनेवाला महाकर्मि यात्रत महावेदनावाला होवे और
अग्नि विखरकर अंगारे यावत् भस्म समान करनेवाला अल्प कर्मवाला यात्रत् अल्प वेदनावाला होवे ॥९॥ अव

शब्दार्थ

सूत्र (अर्थ)

भावार्थ

कि० क्रिया गो० गौतम जा० जितने में से० वह पु० पुरुष ध० धनुष्य प० ग्रहण करता है जा० यावत् उ० वाण उ० छोड़ता है ता० उतने में से० उस पु० पुरुष को का० कायिकी जा० यावत् पा० प्राणातिपाति की कि० क्रिया पं० पांच कि० क्रिया से पु० स्पर्शया जे० जिन जी० जीवों के स० शरीर से ध० धनुष्य नि० बनाया ते० वेभी जी० जीव का० कायिकी जा० यावत् पं० पांच कि० क्रिया से पु० स्पर्शयि ए० ऐसे ध० धनुष्यपीठिका पं० पांच क्रियाओं से जी० जीव्हा पं० पांच प्हा० तांत पं० पांच से उ० वाण पं० से पुरिसे काइयाए जाव पाणाइत्रायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्टे ॥ जसिं पियणं जीवाणं सरीरेहिं धणुं निव्वत्तिए तेवियणं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्टे, एवं धणुपिट्टे पंचहिं किरियाहिं, जीवा पंचहिं, प्हारु पंचहिं, उसू पंचहिं सरे पत्ताणे फले प्हारु पंचहिं, अहेणं से उसू अण्णो गुरुयत्ताए, भारियत्ताए गुरुयसं उत्पन्न करे, एक स्थान से अन्य स्थान चलावे व जीवित से पृथक् करे. उस समयमें उस वाण छोड़नेवाले पुरुष को अद्दो भगवत्त ! कितनी क्रियाओं कही ? अद्दो गौतम ! जहाँलग उस पुरुषने धनुष्य उठाया यावत् वाण छोड़ा वहाँलग उस को पांच क्रियाओं होवें. कायिकी, अधिकरणकी, प्रद्वेषिकी, परितापनिकी, व प्राणातिपातिकी. और जिन जीवों के शरीर से धनुष्य बना हुआ है; उन जीवों को भी कायिकादि पांच क्रियाओं लगनी है. ऐसे ही जिन जीवों से धनुष्यपीठिका, जिन्हा, तांता, वाण, धाँसो: व आगे

* प्रकाशक-राजायहापुर लाया मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसाहजी *

वेसे ही ॥ ९ ॥ पु० पुरुष भ० भगवन् भ० ध्रुव्य प० ग्रहण करता है उ० वाण प० ग्रहण करता है उ० स्थान ठा० बैठे आ० खींचा हुआ क० कर्ण पर्यंत उ० वाण क० करे उ० ऊर्ध्व वे० आकाश में उ० छोडा हुआ जा० जी त० छोडे त० तव से० तव उ० वाण उ० ऊर्ध्व वे० आकाश में उ० छोडा हुआ जा० जी त० तहां पा० प्राण भू० भू० जी० जीव स० सत्व अ० हणवे व० वर्तुलाकार करे ले० मलि सं० परस्पर गात्रोंको एकत्रित करे सं० थोडा स्पर्श करे प० दुःखदेवे कि० किलामना उत्पन्न करे ठा० स्थान से सं० जावे जी० जीवित से व० पृथक् करे त० तव भ० भगवन् भे० उतस पु० पुरुष को क० कितनी पुरिसेणं भंते ! धणुं परामुसइ २ उंसुं परामुसइ २ ठाणं ठाइ २ आययकणाययं उंसुं करेइ २ उडुं वेहासं उंसुं उव्विहइ, तएणं से उंसू उडुं वेहासं उव्विहिएु समाणे जाइं तत्थ पाणाइं भूयहं जीवाइं सत्ताइं अभिहणइ वत्तेइ लेस्सेइ संघाएइ संघट्टेइ परितावेइ किलामेइ ठाणाओ ठाणं संकोमेइ जीवियाओ ववरोवेइ तएणं भंते ! सेपुरिसे कइ किरिए ? गोयमा ! जात्रं च णं से पुरिसे धणुं परामुसइ २ जाव उव्विहइ ताधं चणं धनुव्य आश्री क्रिया का प्रश्न करते हैं. अहो भगवन् ! कोई पुरुष धनुव्य पर वाण रखकर आश्रन सहित कर्ण पर्यंत प्रत्यंचा खींचकर ऊंचे आकाश में वाण छोडे, फीर आकाश में वाण छोडते हुए प्राण भूत, जीव व सत्वोंको हणे, वर्तुलाकार बनावे, स्पर्श करे, संघट्टनो करे, परिताप उत्पन्न करे, दुःख

क्रिया से पु० स्पर्शायि घ० धनुष्य पीठिको च० चार जी० जी० च० चार ण्हा० तांत च० चार उ० वाण
 पं० पांच स० शर प० पत्र फ० फल ण्हा० तांत जे० जो जी० जीव अ० नीचे प० आते हुवे उ० मार्ग में चि०
 रहते हैं ते० वे भी जी० जीव का० कायिकी जा० यावत् पं० पांच कि० क्रिया से पु० स्पर्शायि हुवे ॥१०॥
 अ० अन्यतीर्थिक भं० भगवन् ए० ऐसा आ० कहते हैं जा० यावत् प० प्ररूपते हैं से० अथ० ज० जैसे जु०
 युवति को जु० युवान ह० हस्त को गे० ग्रहण करते हैं च० चक्र की ना० नाभी अ० आरा से उ०

जीवा चउहिं, ण्हा० रूचउहिं उसू पंचहिं, सरे षत्ताणे फले ण्हा०रु पंचहिं जेवियसे जीवा अहे
 पञ्चोवयमाणस्स उवग्गहे चिद्धंति तेवियणं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं

पुट्ठा, ॥ १० ॥ अण्णउत्थियाणं भंते ! एवमाइक्खंति जाव परूवैति से जहा नामए

जुवइं जुत्राणे हत्थेणं हत्थं गेण्हेज्जा त्वक्कस्सवा नाभी अरगाउत्तासिया एवामेव

जी० ण्हा, व तांता बना हुवा है उन जीवों को चार क्रियाओं लगती हैं. और वाण, पांखो, भाला वगै-
 रह को पांच क्रियाओं लगती हैं. वाण को आते हुए मार्ग में जो नीवों रहे हुवे हैं उन को
 भी कायिकादि पांच क्रियाओं लगती हैं ॥ १० ॥ यह सम्यक् प्ररूपना कही अथ मिथ्याप्ररूपक वतति
 हैं. अहो भगवन् ! अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं यावत् प्ररूपते हैं कि जैसे युवान पुरुष युवति को हस्तसे
 हस्त में पकडता है, अथवा गाडी के चक्र की नाभि में आरा रुघन होता है तैसेही चारसो पांचसो

* भकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्ञानप्रसादजी *

पांच से स० शर प० पत्र फ० फल पं० तांत अ० सब से० वह उ० बाण अ० अपनी गु० गुरुतासे
 भा० वजनपने गु० गुरुतासे वजनपने अ० नीचे वी० स्वभाव से प० पीछा आता जा० जो त० वहां पा०
 माणी जा० यावत् जी० जीव से व० पृथक् करे ता० उतने में से० उस पु० पुरुष को क० कितनी कि०
 क्रिया गो० गौतम जा० जितने में से० वह उ० बाण अ० अपनी गु० गुरुतासे जा० यावत् व० पृथक्
 करता है ता० उतने में से० उस पु० पुरुष को का० कारिकी जा० यावत् च० चार कि० क्रिया से पु०
 स्थर्षाया जे० जिन जी० जीवों के स० शरीरं धु० धनुष्य नि० बना ते० वे जी० जीव चा० चार कि०

भारियत्ताए अहे वीतसाए पञ्चोत्रयमाणे जाइं तत्थपाणाइं जाव जीवियाओ ववरोवेइ,

तावं च णं से पुरिसे कइ किरिए ? गीयमा ! जावंचणं से उसू अप्पणो गुरुयत्ताए

जाव ववरोवेइ तावंचणं से पुरिसे काइयाए जाव चउहिं किरियाहिं पुट्टे, जेसिं

पिणं जीवाणं सरिरोहिं धणू निव्वत्तिए ते जीवा चउहिं किरियाहिं, धणुपिट्ठे चउहिं,

लगा हुआ छोड़े का भाला बना हुआ है उन सब को पांच क्रियाओं लगती हैं. अब अपने गुरुत्वपना
 से, वजनपना से, गुरुत्व व वजन पनासे स्वाभाविक वह बाण नीचे आता है. इस तरह नीचे आते हुए
 माण, भूतादि यदि हणवे तो उस बाण छोड़नेवाले पुरुष को अहो भगवन् ! कितनी क्रिया लगे ?
 अरे गौतम ! उस पुरुष को चार क्रिया लगे. और जिन जीवों के शरीर से वह धनुष्य, धनुष्य पीठिका

आकांक्षे न० नरक ने० नारकी भं० भगवन् किं०क्या ए० एक प० समर्थ वि०वैक्रेय करने को पु०अनेक ज० जैसे जी० जीवाभिगम में आ० आलापक त० तैसे ने० जानना. जा० यावत् दु० खराक्रीति से सहन करे ॥ ११ ॥ आ० आधार्कर्म अ० अनवद्य म० मन प० स्थापने वाला भ० होंवे से० उसको न० उस ग० स्थान की आ० आलोचना प० प्रतिक्रमण करते का० काल क० करे अ० है त० उसको आ० आराधना ए० इस ग० गम से ने० जानना की० मोललिया हुआ क० बनाया हुआ ठ० स्थापया हुआ र०

बहुसमाइण्णे नेरयलोए नेरइएहिं ॥ नेरइयणं भंते ! किं एगत्तं पभू विउव्वित्तए,

पुहत्तं पभू विउव्वित्तए, जहा जीवाभिगमे आलावगो तथा नेयव्वो, जाव दुरहियासे

॥ ११ ॥ आहाकम्मं अणवजेत्ति मणपहारेत्ता भवइ; सेणं तस्स ठाणस्स अणालोइय

अपडिक्कंते कालं करेइ, नत्थि तस्स आराहणा; सेणं तस्स ठाणस्स आलोइय पडि-

वैक्रेय नहीं करते हैं. ऐसे ही बहुत शरीर वैक्रेय करते हैं, महा उज्वल प्रज्वल वेदना वेदते हुए विचरते हैं.

इस का विस्तार पूर्वक विवेचन जीवाभिगम सूत्र से जानना ॥ ११ ॥ कोई साधु भिक्षा की गवेषणा में

रस्यवाला व रसगृद्धि बनकर आधाकर्मादि दोष युक्त आहार को निरवद्य मान कर भोगवे और

की आलोचना प्रतिक्रमण किये बिना यदि वह काल कर जावे तो वह आराधक नहीं होता है और

आलोचनादि करके काल करे तो आराधक होता है. ऐसे ही मोल लिया हुआ, बनाया हुआ, स्थापक

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामुखी

भरी हुई ए० ऐसे ही च० चार पं० पांच जो० योजनं स० सो व० बहुत स० आकीर्ण म० मनुष्य लोक म० मनुष्य से क० कैसे ए० यह भं० भगवत् गो० गौतम ज० जो ते० वे अ० अन्यतीर्थिक जा० यावत् म० मनुष्य से जे० जो ते० वे ए० ऐसा आ० कहते हैं मि० मिथ्या अ० मैं पु० पुनः गो० गौतम ए० ऐसा आ० कहता हूँ जा० यावत् ए० ऐसे ही च० चार पं० पांच जो० योजन स० सो व० बहुत स०

चत्वारि पंच जौयण सयाई, बहु समाइण्णे मणुयलोए मणुस्सेहिं, ॥ से कह मेयं भंते ! एवं ? गोयसा ! जणं ते अणउत्थिया जाव मणुस्सेहिं जे ते एव माहंसु मिच्छा । अहंपुण गोयसा ! एव माइक्खामि जाव एवामेव चत्तारिपंच जौयण सयाई

योजनका मनुष्यलोक मनुष्यों से भरदेते हैं तो यह किस तरह है ? अहो गौतम ! जो अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं यावत् प्ररूपते हैं वे मिथ्या वैसा कहते हैं यावत् प्ररूपते हैं मैं ऐसा कहता हूँ यावत् प्ररूपता हूँ कि जैसे काम पीडित युवान युवती को पकडता है. अथवा चक्र की नाभी में जैसे आरा सघन होता है वैसे ही नरक में किसी स्थान चार सो किसी स्थान पांच सो योजन तक नारकी भरे हुये रहते हैं. अहो भगवन् ! नारकी वैक्रेय करते हुये क्या एक रूप वैक्रेय करते हैं या अनेक रूप वैक्रेय करते हैं ? अहो गौतम ! एक रूप भी वैक्रेय करते हैं अनेक रूप भी वैक्रेय करते हैं. एक रूप अनेक रूप वैक्रेय करते हुए मारने का शस्त्र जो पुद्गल है उस रूप का भी वैक्रेय करते हैं. संख्यात रूप वैक्रेय करते हैं परंतु असंख्यात रूप

आकर्षि ने० नरक ने० नारकी भं० भगवन् किं०व्या ए० एक प० सपर्य वि०वैक्रेय करने को पु०अनेक ज० जैसे जी० जीवाभिगम में आ० आलापक त० तैसे णे० जानना. जा० यात्रु दु० खराक्रीति से सहन करे ॥ ११ ॥ आ० आधार्कर्म अ० अनवद्य म० मन प० स्यापने वाला भ० होवे से० उसको त० उस ठा० स्थान की आ० आलोचना प० प्रतिक्रमण करते का० काल क० करे अ० है त० उसको आ० आराधना ए० इस ग० गम से ने० जानना की० मोललिया हुआ क० वनाया हुआ ठ० स्थपाया हुआ र० बहुसमाइणे नेरयलोए नेरइएहि ॥ नेरइयाणं भंते ! किं एगत्तं पभू विउन्वित्तए, पुहत्तं पभू विउन्वित्तए, जहा जीवाभिगमे आलावगो तहा नेयन्वो, जाव दुरहियासे ॥ ११ ॥ आहाकम्मं अणवज्जेत्ति मणंपहारेत्ता भवइ; सेणं तस्स ठाणस्स अणालोइय अपडिक्कंते कालं करेइ, नत्थि तस्स आराहणा; सेणं तस्स ठाणस्स आलोइय पडि-
वैक्रेय नहीं करते हैं. ऐसे ही बहुत शरीर वैक्रेय करते हैं, महा उज्वल प्रज्वल वेदना घेदते हुए विचरते हैं. इस का विस्तार पूर्वक विवेचन जीवाभिगम सूत्र से जानना ॥ ११ ॥ कोई साधु भिक्षा की गवेषणा में आलस्यवाला व रसगृद्धि वनकर आधाकर्मादि दोष युक्त आहार को मिरबद्य मान कर भोगवे और उस की आलोचना प्रतिक्रमण किये बिना यदि वह काल कर जावे तो वह आराधक नहीं होता है और आलोचनादि करके काल करे तो आराधक होता है. ऐसे ही मोल लिया हुआ, वनाया हुआ, स्थापकर

अ० देकर भ० होवे त० उस को ए० यह त० तैले जा० यावत् रा० राजपिंड आ० आधाकर्म
 अ० अनवद्य व० वृहत ज० मनुष्य की म० वीच में प० कहेने वाला भ० होवे से० उस को
 त० उस की अ० है आ० आराधना जा० यावत् रा० राजपिंड ॥ १२ ॥ आ० आचार्य उ० उपाध्याय
 भ० भगवन् स० अपने ग० गण को अ० अग्लानपने सं० ग्रहण करते अ० अग्लानपने
 उ० उपग्रहण करते क० कितने भ० भव में सि० सीझे जा० यावत् अ० अंतकरे गो० गौतम अ० कित-
 अणवज्जैत्ति अणमणस्स अणुपदावेइत्ता भवइ, सेणं तरस्स एयं तहचेव जाव रायपिंडं,
 आहाकम्मं णं अणवज्जैत्ति, बहुजणमज्जे पभावइत्ता भवइ, सेणं तरस्स जाव अत्थि
 आराहणा जाव रायपिंडं ॥ १२ ॥ आयरिय उवज्जाएणं भंते ! सवि सयंसि गणं
 अगिलाए संगिण्हमाणे, अगिलाए उवगिण्हमाणे, कइहिं भवग्गहणेहिं सिज्झइ जाव
 अंतं करेइ ? गोयमा ! अत्थेगइए तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झइ, अत्थेगइए दोच्चेणं
 सभा में निरवद्य साहार है ऐसा कहे. इस तरह विपरित प्ररूपना से ज्ञानादिक की विरायना होती है.
 ऐसा करनेवाला यदि आलोचना प्रतिक्रमण करके काल करे तो आराधक होता है और आलोचना
 किये बिना काल करे तो विराधक होता है, ॥ १२ ॥ अहो भगवन् ! आचार्य उपाध्याय अपने
 गणको अग्लानपने अंगीकार करते, आदरदेते कितने भव में सीझे, बुझे यावत् सत्र दुःखों का अंत करे ?

इदार्थ (सूत्र) (सूत्र)

उस प० पीछे वे० वेदते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

प० परमाणु पो० पुद्गल ए० चलता है वे० विशेष चलता है जा० यात्रत् सं० उस २ भा० भाव में
प० परिणमता है गो० गौतम सि० क्वचित् ए० चलता है वे० विशेष चलता है सं० उस २ भा० भाव
से पच्छा वेदेइ सेवं भंते भंतोत्ति ॥ पंचमसयस्स छट्ठो उद्देशो सम्मत्तो ॥ ५ ॥ ६ ॥ +

परमाणुपोगलेणं भंते ! एयइ वेयइ जाव तंतं भावं परिणमइ ? गोयमा ! सिय
एयइ वेयइ जाव परिणमइ, सिय णो एयइ जाव णो परिणमइ, दुपदेसिएणं भंते !
खंधे एयइ जाव परिणमइ ? गोयमा ! सिय एयइ जाव परिणमइ सिय नो एयइ
जाव नो परिणमइ, सिय देसेएयइ देसे णोएयइ ! तिपएसिएणं भंते ! खंधे एयइ ?

उद्देशा संपूर्ण हुवा ॥ ५ ॥ ६ ॥

छठे उद्देशे के अंत में निर्जरा का कथन किया है. वह निर्जरा कर्मों को चलाती है इसलिये पुद्गलों
का प्रश्न पूछते हैं. अहो भगवन् ! पूरण गलन स्वभाव वाले निरवयव रूप परमाणु पुद्गल क्या चलते
हैं, विशेष चलते हैं यात्रत् उन २ भावों में परिणमते हैं ? अहो गौतम ! क्वचित् चलते हैं यात्रत्
क्वचित् उन २ भावों में परिणमते हैं और क्वचित् नहीं चलते हैं यात्रत् उन २ भावों में नहीं परिणमते हैं.
अहो भगवन् ! क्या द्वि प्रदेशात्मक स्कंध चलता है यात्रत् उन २ भावों में परिणमता है ? अहो गौतम ! द्वि

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

पञ्चमोऽनुवाकः (पञ्चमोऽनुवाकः) (पञ्चमोऽनुवाकः)

उस प० पीछे वे० वेदते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

प० परमाणु पो० पुद्गल ए० चलता है वे० विशेष चलता है जा० यावत् तं० उस २ भा० भाव में प० परिणमता है गो० गौतम सि० क्वचित् ए० चलता है वे० विशेष चलता है तं० उस २ भा० भाव से पच्छा वेदेइ सेवं भंते भंतेति ॥ पंचमसयसस छट्टो उद्देशो सम्मत्तो ॥५॥६॥ +

परमाणुपोगलेणं भंते ! एयइ वेयइ जाव तंतं भावं परिणमइ ? गोयमा ! सिय एयइ वेयइ जाव परिणमइ, सिय णो एयइ जाव णो परिणमइ, दुपदेसिएणं भंते ! खंधे एयइ जाव परिणमइ ? गोयमा ! सिय एयइ जाव परिणमइ सिय नो एयइ जाव नो परिणमइ, सिय देसेएयइ देसे णोएयइ ! तिपएसिएणं भंते ! खंधे एयइ ?

उद्देशा संपूर्ण हुवा ॥ ५ ॥ ६ ॥

छट्टे उद्देशे के अंत में निर्जरा का कथन किया है. वह निर्जरा कर्मों को चलाती है इसलिये पुद्गलों का प्रश्न पूछते हैं. अहो भगवन् ! पूरण गलन स्वभाव वाले निरवयव रूप परमाणु पुद्गल क्या चलते हैं, विशेष चलते हैं यावत् उन २ भावों में परिणमते हैं ? अहो गौतम ! क्वचित् चलते हैं यावत् क्वचित् उन २ भावों में परिणमते हैं और क्वचित् नहीं चलते हैं यावत् उन २ भावों में नहीं परिणमते हैं. अहो भगवन् ! क्या द्वि प्रदेशात्मक स्कंध चलता है यावत् उन २ भावों में परिणमता है ? अहो गौतम ! द्वि

* * *

* * *

स्कंध च० चार प्रदेशी स्कंध ज० जैसे च० चार प्रदेशीस्कंध त० जैसे पं० पाँच प्रदेशी जा० यावत् त० तैते अ० अनंत प्रदेशी ॥ १ ॥ प० परमाणु पो० पुद्गल भं० भगवच्च अ० असिधारा ख० धुर की धारा उ० अवगाहे हे० हां उ० अवगाहे से० अथ त० वहां छि० छेदावे भि० भेदावे भो० गौतम णो० नहीं इ० यह अ० अर्थ स० समर्थ नो० नहीं त० तहां स० शस्त्र क० जावे ए० ऐसे जा० यावत् अ० असंख्यात प्रदेशात्मक अ० अनंत प्रदेश वाला भं० भगवच्च खं० स्कंध अ० खड्ग की धारा खु० धुरकी धारा को उ० दंसा एयंति, ॥ जहा चउप्पदेसिओ तथा पंचप्पदेसिओ जाव तथा अणंत पएसिओ ॥ १ ॥ परमाणु पोग्गलेणं भंते ! असिधारंवा खुरधारंवा, उग्गाहेज्जा ? हंता उग्गाहेज्जा ॥ सेणं तत्थ छिज्जेज्जा भिज्जेज्जा ? गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे । नो खलु तत्थ सत्थं कमइ, एवं जाव असंखेज्जपएसिओ ॥ अणंत पएसिएणं भंते ! देश से चले व बहुत देश से चले नहीं. जैसे चार प्रदेशात्मक स्कंध का कहा जैसे ही पाँच, छ, सात, आठ नव, दश. संख्यात असंख्यात व अनंत प्रदेशात्मक स्कंध का जानना ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! क्या परमाणुपुद्गल खड्ग की धारा व धुर (उस्तरे) की धारा को अवगाहे अर्थात् उस को लगे ? हां गौतम ! परमाणु पुद्गल खड्ग की धारा व धुरकी धारा नीचे आसकते हैं. अहो भगवन् ! क्या वह परमाणु पुद्गल छेदाता भेदाता है ? अहो गौतम ! यह अर्थ योग्य नहीं है क्योंकि उसमें शस्त्र संक्रमण नहीं कर सकता है

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

को प० परिणमता है सि० क्वचित् णो० नहीं ए० चलता है जा० यावत् नो० नहीं तं० उस २ भा० भाव में प० परिणमता है सि० क्वचित् दे० देश से ए० चलता है जा० यावत् प० परिणमता है दु० द्विप्रदेशी गोयमा ! सिय एयइ, सिय नो एयइ, सिय देसे एयइ नो देसे एयइ, सिय देसे एयइ नो देसा एयति, सिय देसा एयति नो देसे एयइ, । चउप्पएसिणं भंते ! खंधे एयइ ? गोयमा ! सिय एयइ, सिय नो एयइ, सिय देसे एयइ णो देसे एयइ, सिय देसे एयइ णो देसा एयति. सिय देसा एयति नो देसे एयइ, सिय देसा एयति नो

प्रदेशी स्कंध क्वचित् चलता है, यावत् क्वचित् उन २ भावों में परिणमता है, वैसे ही क्वचित् नहीं चलता है यावत् उन २ भावों में नहीं परिणमता है, और क्वचित् देश से चलता है व देश से नहीं चलता है. प्रभो भगवन् ! तीन प्रदेशात्मक स्कंध क्या चलता है यावत् उन २ भावों में परिणमता है ? अहो गौतम ! तीन प्रदेशात्मक स्कंध में पांच विकल्प कहे हुए हैं ? क्वचित् चले २ क्वचित् नचले ३ क्वचित् देश से चले व नचले ४ क्वचित् देश से एक चले दो नहीं चले और ५ क्वचित् देश से दो चले एक नहीं चले. प्रभो भगवन् ! चार प्रदेशात्मक स्कंध क्या चले ? अहो गौतम ! चार प्रदेशात्मक स्कंध में छ विकल्प होते हैं. १ क्वचित् कंपे २ क्वचित् नहीं कंपे ३ क्वचित् देश में कंपे व कंपे नहीं ४ क्वचित् एक देश से चले बहुत देश से चले नहीं ५ क्वचित् बहुत देश से चले एक देश से चले नहीं और ६ क्वचित् बहुत

सहित पु० पूच्छा गो० गौतम सि० क्वचित् स० अर्थ सहित अ० मध्य रहित स० प्रदेश सहित सि० क्वचित् अ० अर्थ रहित स० मध्य सहित स० प्रदेश सहित ज० जैसे सं० संख्यात प्रदेशात्मक त० तैसि अ० असंख्यात प्रदेशात्मक अ० अनंत प्रदेशात्मक ॥ ३ ॥ प० परमाणु पो० पुद्गल भ० भगवन् प० परमाणु पुद्गल फु० स्पर्शो हुवे किं क्या दे० देश से दे० देश को फु० स्पर्शता है दे० देश से दे० खंधे किं सअट्टे पूच्छा ? गोयमा ! सिय सअट्टे अमज्जे, सपएसे, सिय अणट्ठे स-

मज्जे, सपएसे, जहा संखेज्जपएसिओ, तथा असंखेज्ज पएसिओवि, अणंत पएसिओवि ॥ ३ ॥ परमाणु पोगगलेणं भंते ! परमाणु पुग्गलं फुस-माणे किं देसेणं देसं फुसइ, देसेणं देसे फुसइ, देसेणं सव्वंफुसइ, देसेहि देसं

वगैरइ जो विषम राशि है उस का तीन प्रदेशी स्कंध जैसे जानना. अहो भगवन् ! संख्यात प्रदेशी स्कंध क्या अर्थ मध्य व प्रदेश सहित है ? अहो गौतम ! संख्यात प्रदेशी स्कंध क्वचित् अर्थ सहित मध्य रहित व प्रदेश सहित है और क्वचित् अर्थ रहित, मध्य सहित व प्रदेश सहित है; क्योंकि इस में सम विषम दोनों राशि होती हैं. संख्यात प्रदेशी स्कंध जैसे असंख्यात प्रदेशी स्कंध व अनंत प्रदेशी स्कंध का जानना ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल का स्पर्श करते क्या ? अपने एक देश से दूसरे के एक देश को स्पर्शें ? अपने एक देश से दूसरे के अनेक देशों को स्पर्शें ? अपने एक

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादजी *

स० प्रदेश सहित णो० नहीं अ० अर्थ रहित णो० नहीं स० मध्य सहित नो० नहीं अ० प्रदेश रहित
 ति० तीन प्रदेश की पु० पृच्छा खं० स्कंध गो० गौतम अ० अर्थ रहित स० मध्य सहित स० प्रदेश सहि
 नो० नहीं अ० अर्थ सहित नो० नहीं अ० मध्य रहित नो० नहीं अ० प्रदेश रहित जैसे दु० द्विप्रदेशी
 त० तैसे जे० जो स० सप ते० वे भा० कहना जे० जो वि० विषम ते० वे ज० जैसे ति० तीन प्रदेशा
 लक त० तैसे भा० कहना सं० संख्यातप्रदेशात्मक भं० स्कंध किं० क्या स० अर्थ
 अण्डे अमज्जे अपएसे ? गोयमा ! सअण्डे अमज्जे, सपएसे, नो अण्डे, नो समज्जे,
 नो अपएसिए । तिपएसिएणं भंते ! खंधे पुच्छा । गोयमा ! अण्डे समज्जे सप-
 एसे नो सअण्डे नो अमज्जे नो अपएसे जहा दुपएसिओ तथा जेसमा ते भाणियव्वा।
 जे विसमा ते जहा तिपएसिओ, तथा भणियव्वो ॥ * ॥ संखेजपएसिएणं भंते !
 प्रदेशी स्कंध क्या अर्थ, मध्य व प्रदेश सहित है या अर्थ मध्य व प्रदेश रहित है ? अहो गौतम ! द्वि
 प्रदेशी स्कंध दो परमाणु का बनाहुआ होने से अर्थ सहित है, मध्य रहित है, व प्रदेश सहित है, अहो
 भगवन् ! तीन प्रदेशी स्कंध क्या अर्थ मध्य व प्रदेश सहित है, अथवा अर्थ, मध्य व प्रदेश रहित है ?
 अहो गौतम ! तीन प्रदेशी स्कंध में तीन प्रदेश होने से अर्थ नहीं है परंतु, मध्य व प्रदेश रहे हुवे हैं, इसी
 तरह आगे २-४-६-८ वगैरह जो सम राशि है उसको द्वि प्रदेशी स्कंध जैसे कहना और ३-५-७-९

* भक्तशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

स० प्रदेश सहित णो० नहीं अ० अर्थ रहित णो० नहीं स० मध्य सहित नो० नहीं अ० प्रदेश रहित ति० तीन प्रदेश की पु० पुच्छा खं० स्कंध गो० गौतम अ० अर्थ रहित स० मध्य सहित स० प्रदेश सहि नो० नहीं अ० अर्थ सहित नो० नहीं अ० मध्य रहित नो० नहीं अ० प्रदेश रहित जैसे दु० द्विप्रदेशी त० तैसे जे० जो स० सप ते० वे भा० कहना जे० जो वि० विपम ते० वे ज० जैसे ति० तीन प्रदेशा त्यक्त न० तैसे भा० कहना सं० संख्यातप्रदेशात्यक्त भं० भगवत् खं० स्कंध किं० क्या स० अर्थ अण्डु अमज्झे अपएसे ? गोयमा ! सअण्डु अमज्झे, सपएसे, नो अण्डु, नो समज्झे, नो अपएसिए । तिपएसिएणं भंते ! खंधे पुच्छा । गोयमा ! अण्डु समज्झे सर- एसे ना सअण्डु ना अमज्झे ना अपएसे जहा दुपएसिओ तहा जेसमा ते भाणियव्वा । जे त्रिसमा ते जहा तिपएसिओ, तहा भाणियव्वो ॥ * ॥ संखेजपएसिएणं भंते ! प्रदेशी स्कंध क्या अर्थ, मध्य व प्रदेश सहित है या अर्थ मध्य व प्रदेश रहित है ? अहो गौतम ! द्वि प्रदेशी स्कंध दो परमाणु का बनाहुआ होने से अर्थ सहित है, मध्य रहित है, व प्रदेश सहित है. अहो भगवन् ! तीन प्रदेशी स्कंध क्या अर्थ मध्य व प्रदेश सहित है अथवा अर्थ, मध्य व प्रदेश रहित है ? अहो गौतम ! तीन प्रदेशी स्कंध में तीन प्रदेश होने से अर्थ नहीं हैं परंतु, मध्य व प्रदेश रहे हुवे हैं. इसी तरह भागे २-४-६-८ वंगरह जो सप राशि है उस को द्वि प्रदेशी स्कंध जैसे कहना और ३-५-७-९

शब्दार्थ

भावार्थ

सहित पु० पृच्छा गो० गौतम सि० क्वचित् स० अर्थ सहित अ० मध्य रहित स० प्रदेश सहित सि० क्वचित् अ० अर्थ रहित स० मध्य सहित स० प्रदेश सहित ज० जैसे सं० संख्यात प्रदेशात्मक त० तैसे अ० अंख्यात प्रदेशात्मक अ० अनंत प्रदेशात्मक ॥ ३ ॥ प० परमाणु पो० पुद्गल भं० भगवन् प० परमाणु पुद्गल कु० स्वर्शे हुवे कि० क्या दे० देश से दे० देश को फु० स्वर्शता है दे० देश से दे० खंधे किं सअट्टे पृच्छा ? गोयमा ! सिय सअट्टे अमज्जे, सपएसे, सिय अणट्ठे स-मज्जे, सपएसे, जहा संखेज्जपएसिओ, तथा असंखेज्ज पएसिओवि, अणंत पएसिओवि ॥ ३ ॥ परमाणु पोगलेणं भंते ! परमाणु पुग्गलं फुस-माणे किं देसेणं देसं फुसइ, देसेणं देसे फुसइ, देसेहिं देसं वगैरइ जो विपम राशि है उस का तीन प्रदेशी स्कंध जैसे जानना. अहो भगवन् ! संख्यात प्रदेशी स्कंध क्या अर्थ मध्य व प्रदेश सहित है ? अहो गौतम ! संख्यात प्रदेशी स्कंध क्वचित् अर्थ सहित मध्य रहित व प्रदेश सहित है और क्वचित् अर्थ रहित, मध्य सहित व प्रदेश सहित है; क्योंकि इस में सम विपम दोनों राशि होती हैं. संख्यात प्रदेशी स्कंध जैसे असंख्यात प्रदेशी स्कंध व अनंत प्रदेशी स्कंध का जानना ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल का स्वर्श करते क्या ? अपने एक देश से दूसरे के एक देश को स्वर्शे ? अपने एक देश से दूसरे के अनेक देशों को स्वर्शे ? अपने एक

* भकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

स० प्रदेश सहित णो० नहीं अ० अर्ध रहित णो० नहीं स० मध्य सहित नो० नहीं अ० प्रदेश रहित ति० तीन प्रदेश की पु० पृच्छा खं० स्कंध गो० गौतम अ० अर्ध रहित स० मध्य सहित स० प्रदेश सहित नो० नहीं अ० अर्ध सहित नो० नहीं अ० मध्य रहित नो० नहीं अ० प्रदेश रहित जैसे दु० द्विप्रदेशी त० तैसे जे० जो स० सप ते० वे भा० कहना जे० जो वि० विषम ते० वे ज० जैसे ति० तीन प्रदेशात्मक त० तैसे भा० कहना स० संख्यातप्रदेशात्मक भं० भगवन् खं० स्कंध किं० क्या स० अर्ध

अण्डे अमज्जे अपएसे ? गोयमा ! सअण्डे अमज्जे, सपएसे, नो अण्डे, नो समज्जे,

नो अपएसिए ! तिपएसिएणं भंते ! खंधे पुच्छा । गोयमा ! अण्डे समज्जे सप-

एसे नो सअण्डे नो अमज्जे नो अपएसे जहा दुपएसिओ तथा जेसमा ते भाणियब्बा.

जे विसमा ते जहा तिपएसिओ, तथा भाणियब्बो. ॥ * ॥ संखेज्जपएसिएणं भंते !

प्रदेशी स्कंध क्या अर्ध, मध्य व प्रदेश सहित है या अर्ध मध्य व प्रदेश रहित है ? अहो गौतम ! द्वि प्रदेशी स्कंध दो परमाणु का बना हुआ होने से अर्ध सहित है, मध्य रहित है, व प्रदेश सहित है. अहो भगवन् ! तीन प्रदेशी स्कंध क्या अर्ध मध्य व प्रदेश सहित है. अथवा अर्ध, मध्य व प्रदेश रहित है ? अहो गौतम ! तीन प्रदेशी स्कंध में तीन प्रदेश होने से अर्ध नहीं हैं. परंतु, मध्य व प्रदेश रहे हुवे हैं. इसी तरह आगे २-४-६-८ वगैरह जो सप राशि है उस को द्वि. प्रदेशी स्कंध जैसे कहना और ३-५-७-९

सहित पु० पृच्छा गो० गौतम सि० क्वचित् स० अर्थ सहित अ० मध्य रहित स० प्रदेश सहित सि० क्वचित् अ० अर्थ रहित स० मध्य सहित स० प्रदेश सहित ज० जैसे सं० संख्यात प्रदेशात्मक त० तैसि अ० अंख्यात प्रदेशात्मक अ० अनंत प्रदेशात्मक ॥ ३ ॥ प० परमाणु पो० पुद्गल भं० भगवन् प० परमाणु पुद्गल फु० स्वर्शे हुवे कि० क्या दे० देश से दे० देश को फु० स्वर्शता हे दे० देश से दे० खंधे किं सअट्टे पृच्छा ? गोयमा ! सिय सअट्टे अमज्जे, सपएसे, सिय अणट्टे स-

मज्जे, सपएसे, जहा संखेज्जपएसिओ, तथा असंखेज्ज पएसिओवि, अणंत पएसिओवि ॥ ३ ॥ परमाणु पोगलेणं भंते ! परमाणु पुग्गलं फुसमाणे किं देसेणं देसं फुसइ, देसेणं देसे फुसइ, देसेहि देसं

वगैरह जो विषम राशि हे उस का तीन प्रदेशी स्कंध जैसे जानना. अहो भगवन् ! संख्यात प्रदेशी स्कंध क्या अर्थ मध्य व प्रदेश सहित है ? अहो गौतम ! संख्यात प्रदेशी स्कंध क्वचित् अर्थ सहित मध्य रहित व प्रदेश सहित है और क्वचित् अर्थ रहित, मध्य सहित व प्रदेश सहित है; क्योंकि इस में सम विषम दोनों राशि होती हैं. संख्यात प्रदेशी स्कंध जैसे असंख्यात प्रदेशी स्कंध व अनंत प्रदेशी स्कंध का जानना ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल का स्वर्श करते क्या ? अपने एक देश से दूसरे के एक देश को स्वर्श ? अपने एक देश से दूसरे के अनेक देशों को स्वर्श ? अपने एक

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

स० प्रदेश सहित जो० नहीं अ० अर्थ रहित जो० नहीं स० मध्य सहित नो० नहीं अ० प्रदेश रहित ति० तीन प्रदेश की पु० पुच्छा खं० स्कंध गो० गौतम अ० अर्थ रहित स० मध्य सहित स० प्रदेश सहित नो० नहीं अ० अर्थ सहित नो० नहीं अ० मध्य रहित नो० नहीं अ० प्रदेश रहित जैसे दु० द्विप्रदेशी त० जैसे जे० जो स० सप ते० वे भा० कहना जे० जो वि० विषम ते० वे ज० जैसे ति० तीन प्रदेशात्मक न० तैरे भा० कहना स० संख्यातप्रदेशात्मक भं० भगवत् खं० स्कंध किं० क्या स० अर्थ

अण्डे अमज्जे अपएसे ? गोयमा ! सअण्डे अमज्जे, सपएसे, नो अण्डे, नो समज्जे, नो अपएसिए । तिपएसिएणं भंते ! खंधे पुच्छा । गोयमा ! अण्डे समज्जे सपएसे नो सअण्डे नो अमज्जे नो अपएसे जहा दुपएसिओ तथा जेसमा ते भाणियव्वा । जे तिसमा ते जहा तिपएसिओ, तथा भणियव्वो ॥ * ॥ संखेजपएसिएणं भंते !

प्रदेशी स्कंध क्या अर्थ, मध्य व प्रदेश सहित है या अर्थ मध्य व प्रदेश रहित है ? अहो गौतम ! द्वि प्रदेशी स्कंध दो परमाणु का बनाहुआ होने से अर्थ सहित है, मध्य रहित है, व प्रदेश सहित है । अहो भगवत् ! तीन प्रदेशी स्कंध क्या अर्थ मध्य व प्रदेश सहित है अथवा अर्थ, मध्य व प्रदेश रहित है ? अहो गौतम ! तीन प्रदेशी स्कंध में तीन प्रदेश होने से अर्थ नहीं हैं परंतु मध्य व प्रदेश रहे हुवे हैं । इसी तरह आगे २-४-६-८ वगैरह जो सप राशि है उस को द्वि प्रदेशी स्कंध जैसे कहना और ३-५-७-९

शब्दार्थ

सूत्र

३

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥ श्रीमद्भागवतस्य प्रथमस्कन्धस्य अष्टमोऽध्यायः ॥ १ ॥

स्पर्शावे जा० यावत् अ० अनंत प्रदेश दु० द्विप्रदेशात्मक भ० भगवत् खं० स्कंध प० परमाणु पुद्गल कु०
स्पर्शता हुआ पु० पृच्छा त० तीसरा न० नववा से कु० स्पर्शे दु० द्विप्रदेशात्मक दु० दो प्रदेशी को
कु० स्पर्शते प० प्रथम त० तीसरा स० सातवा न० नववे से कु० स्पर्शे दु० दो प्रदेशी ति० तीन प्रदेश को
कु० स्पर्शते आ० आदि के प० पीछे के ती० तीन से भ० मध्य के ती० तीन प० प्रतिषेध करना दु०

णिष्पच्छिमएहिं तिहिं फुसइ; जहा परमाणुपोगले तिपएसियं फुसाविओ एवं
फुसावेयवो, जाव अणंत पएसिओ । दुपएसिणं भंते ! खंधे परमाणु पोगलं
फुसमाणे पुच्छा तइय नवमेहिं फुसइ, दुपएसिओ दुपएसियं फुसमाणो पढमतइय
सत्तमनवमेहिं फुसइ, दुपएसिओ तिपएसियं फुसमाणो आदिहिएहिं य पच्छिमएहिं

पुद्गल द्वि प्रदेशी स्कंध को स्पर्शते सर्व से एक देश को व सर्व से सर्व को स्पर्शे ऐसे सातवे व नववे दो
भागे पाते हैं. परमाणु पुद्गल तीन प्रदेशी स्कंध को स्पर्शते पीछे के तीन भागे पाते हैं ? यदि वह तीन
प्रदेशात्मक स्कंध तीन प्रदेश में रहा हुआ होवे तो उस स्कंध के एक प्रदेश को वह परमाणु सर्वांग से
स्पर्शता है २ यदि उस त्रिप्रदेशी स्कंध के दो परमाणु एक प्रदेश पर रहा हुआ होवे तो सर्वांग से अनेक
देशों को स्पर्शे ३ यदि उक्त तीन प्रदेशी स्कंध परमाणु की सूक्ष्मता से एकही परमाणु पर रहे तब सर्वांग से
सर्वांग को स्पर्शे ऐसे अंत्यके तीन भागे पाते हैं. जैसे तीन प्रदेश को परमाणु पुद्गल स्पर्शता है वैसे ही चार

* प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुब्रह्मचर्यसहायजी आलामसादनी *

देशोंको फुं स्पर्थता है दे० देश से स० सब को फुं स्पर्थता है दे० देशोंसे स० सब से गो० गौत्रसु
 नो० नहीं दे० देश से दे० देशको फुं स्पर्थे प० परमाणु पो० पुद्गल दु० द्विप्रदेशी को फुं स्पर्थते स०
 सात न० नव मे फुं स्पर्थे प० परमाणु पो० पुद्गल ति० तीन प्रदेश को फुं स्पर्थते नि० अन्त्य २ ति०
 तीन से फुं स्पर्थे ज० जैसे प० परमाणु पो० पुद्गल ति० तीन प्रदेश को फुं स्पर्थी हुआ ए० ऐसे फुं
 फुसइ, देसेहिं देसे फुसइ, देसेहिं सव्वं फुसइ, सव्वेणं देसें फुसइ, सव्वेणं देसे फुसइ,
 सव्वेणं सव्वं फुसइ ? गोयमा ! नो देसेणं देसें फुसइ, णो देसेणं देसें फुसइ, णो
 देसेणं सव्वं फुसइ, नो देसेहिं देसें फुसइ, नो देसेहिं देसें फुसइ, नो देसेहिं सव्वं
 फुसइ, नो सव्वेणं देसें फुसइ, णो सव्वेणं देसें फुसइ, सव्वेणं सव्वं फुसइ । परमाणु
 योगले दुपएसियं फुसमाणे सत्त नवमेहिं फुसइ, परमाणुयोगले तिपएसियं फुसमाणे
 देश मे दूमेरे के सर्वांग को स्पर्थे ४ अपने अनेक देश से दूमेरे के एक देश को स्पर्थे ५ अपने अनेक
 देश से दूमेरे के अनेक देशों को स्पर्थे ६ अपने अनेक देश से दूमेरे के सर्वांग को स्पर्थे ७ अपने सर्वांग
 मे दूमेरे के एक देश को स्पर्थे ८ अपने सर्वांग से दूमेरे के अनेक देशों को स्पर्थे और ९ अपने सर्वांग से
 दूमेरे के बगै सर्वांग को स्पर्थे ? अशो गौतम ! इन भांग में से मात्र नवां सर्वांग से सर्वांग को स्पर्थे
 यही भांग यील सकता है. परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल को स्पर्थते में शेष आठ भांगे नहीं हैं. परमाणु

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः ॐ श्रीगणेशाय नमः

शब्दार्थ

सूत्र

ध

तीन प्रदेशात्मक ति० तीन प्रदेश को फु० स्पर्शते स० मत्र ठा० स्थान में फु० स्पर्शते ज० जैसे ति० तीन प्रदेशात्मक को फु० स्पर्शा हुआ ए० ऐसे ति० तीन प्रदेशात्मक जा० यावत् अ० अनंत प्रदेशात्मक की साथ सं० जोडना ज० जैसे ति० तीन प्रदेशात्मक ए० ऐसे जा० यावत् अ० अनंत प्रदेशात्मक भा० कहना ॥ ४ ॥ प० परमाणु पौ० पुद्गल भं० भगवन् का० काल से के० कितना हां० होता है गो० गौतम ज०

सियं फुसमाणो सव्वेसुवि ठाणेषु फुसइ । जहा तिपएसिओ तिपएसियं फुसविओ,

एवं तिपएसिओ जाव अणंतपएसिएणं संजोएयव्वो, जहा तिपएसिओ एवं जाव अणंतपएसिओ भाणियव्वो ॥ ४ ॥ परमाणु पोगलेणं भंते ! कालओ केवचिंरंहोइ?

गोयमा ! जहण्णेण एगं समयं, उक्कोसेण असंखेजं कालं, एवं जाव अणंत पएसि-

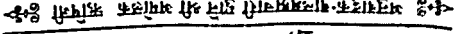
तीन प्रदेशी स्कंध परमाणु पुद्गल को स्पर्शने हुये तीसरा, छट्टा व नववां भागा को स्पर्शे. तीन प्रदेशी स्कंध द्वि प्रदेशी स्कंध को स्पर्शते हुए पहिला, तीसरा, चौथां, छट्टा, सातवां व नववां को स्पर्शे और तीन प्रदेशी तीन प्रदेशी को स्पर्शते हुये सच भागे को स्पर्शे. जेभे तीन प्रदेशी का कहा जैसे ही चार, पाँच यावत् संख्यात असंख्यात व अनंत प्रदेशी का जानना. और जैसे तीन प्रदेशी स्कंध मे परमाणु पुद्गल यावत् अनंत प्रदेशी के भागे कहे जैसे ही चार, पाँच यावत् अनंत प्रदेशी की साथ जानना ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गलपने कितने काल तक रहे ? अहो गौतम ! जयन्त्य एकं समय

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

द्विप्रदेशात्मक ज० जैसे ति० तीन प्रदेश फु० स्पर्शाया हुवा ए० ऐसे फु० स्पर्शना जा० यावत् अ० अनंत प्रदेशात्मक ति० तीन प्रदेशात्मक भं० भगवन् खं० स्कंध प० परमाणु पो० पुद्गल फु० स्पर्शते हुवे पु० पृच्छा त० तीसरा छ० छद्वा न० नववे से फु० स्पर्शता है ति० तीन प्रदेशात्मक दु० दो प्रदेश को फु० स्पर्शते प० प्रथम त० तीसरा च० चौथा छ० छद्वा स० सातवा न० नववे से फु० स्पर्शता है ति०

तिहिं फुसइ, मञ्जिमएहिं तिहिंवा पडिसेहेयव्वं. दुपएसिओ जहा तिपएसियं फुसात्रिओ.
एथं फुसात्रियव्वो जाव अणंतपएसियं तिपएसिएणं भंते ! खंधे परमाणु पोगलं फुसमाणे पुच्छा तइयल्लट्टणवमेहिं फुसइ ॥ तिपएसिओ दुपएसियं फुसमाणो पढमएणं तइयएणं चउत्थल्लट्टसत्तमनवमेहिं फुसइ ॥ तिपएसिओ तिपए-

पांच यावत् संख्यात, असंख्यात व अनंत प्रदेश तक जानना. अहो भगवन् ! परमाणु पुद्गल को स्पर्शते द्वि प्रदेशी स्कंध में कितने भांगे पावे ? अहो गौतम ! परमाणु पुद्गल को स्पर्शते हुवे द्विप्रदेशी स्कंध में तीसरा व नववा भांगा पावे अर्थात् अपने देश से परमाणु पुद्गल के सर्वांग को स्पर्श अथवा अपने सर्वांग से उस के सर्वांग को स्पर्श. द्वि प्रदेशी द्वि प्रदेशी को स्पर्शते हुए पहिला, तीसरा, सातवां, व नववां भांगा को स्पर्श, तीन प्रदेशी को स्पर्शते हुए पहिले के तीन व पीछे के तीन ऐसे भांगे को स्पर्श. और इसी तरह चार, पांच यावत् संख्यात, असंख्यात व अनंत प्रदेशी को स्पर्शते हुवे द्विप्रदेशी स्कंधमें उक्त छ भांगे पावे



शब्दार्थ

सूत्र

नि० कंपन रहित ज० जघन्य ए० एक स० समय उ० उत्कृष्ट अ० असंख्यात काल ए० एक गु० गुन
काला भ० भगवन् पो० पुद्गल का० काल से के० कितना भ० हेवे गो० गौतम ज० जघन्य ए० एक
स० समय उ० उत्कृष्ट अ० असंख्यात काल ए० ऐसे व० वर्ण गं० गंध र० रस फ्रा० स्पर्श जा० यावत्

गाढे एग गुणकालएणं भंते ! पोगले कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा !

जहणेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेजं कालं एवं जाव अणंत गुणकालए; एवं
वण्ण गंधरस फास जाव अणंत लुक्खे, एवं सुहुम परिणए पोगले, एवं चादर
परिणए पोगले सहपरिणएणं भंते ! पोगले कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा !

की व्याख्या नहीं होती है. एक आकाश प्रदेश पर रहनेवाला परमाणु पुद्गल कम्पन रहित जघन्य एक
समय; उत्कृष्ट असंख्यात काल तक रहता है ऐसे ही असंख्यात प्रदेशावगाह परमाणु पुद्गल का जानना.
अहो भगवन् ! एक गुन काला पुद्गल जघन्य कितना कालतक रहता है ? अहो गौतम ! एक गुन
काला पुद्गल जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात कालतक रहता है जैसे एक गुन काला का कहा जैसे
ही अनंत गुन काला तक जानना. और ऐसे ही शेष चार वर्ण, दो गंध, पांच रस व आठ स्पर्श में
अनंत प्रदेशी रूप पुद्गल तक का जानना. ऐसे ही सूक्ष्म परिणत पुद्गल व चादर परिणत पुद्गल का जानना.
अहो भगवन् ! शब्द से परिणमे हुए पुद्गलों कितने काल तक शब्दपने रहते हैं ? अहो गौतम ! जघन्य

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालामसादनी *

जयन्य ए० एक स० सायं उ० उत्कृष्ट अ० असंख्यात ए० ऐसे जा० यावत् अ० अनंत प्रदेशात्मक ए० ये
 प० प्रदेशावाही भ० भगवन् पौ० पुद्गल से० कंपन सहित त० उस डा० स्थान में अ० अन्य डा०
 स्थान में का० काल से० कितना हो० होता है गो० गौतम ज० जयन्य ए० एक समय उ० उत्कृष्ट
 आ० आधुनिक का अ० असंख्यातवा भा० भाग ए० ऐसे जा० यावत् अ० असंख्यात प्रदेशावाह
 ओ॥ एगपएसोगाढिणं भंते ! योगले सेए तस्मिन्ना ठाणे अण्णास्मिन्ना ठाणे कालओ केवचिरं-

होइ ? गोयमा ! जहणं एगं समयं उक्कोसे आवलियाए असंखेजइ भागं, एवं जाव असं-
 खेज पएसोगाढि ॥ एग पएसोगाढिणं भंते ! योगले निरेए कालओ केवचिरं
 होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेजकालं एवं जाव असंखेज पएसो

उत्कृष्ट असंख्यात काल तक रहे तत्पश्चात् वह एक रूप में नहीं रह सकता है. वैसे ही द्वि प्रदेशी स्कंध
 नीन प्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध जयन्य एक समय तक रहता है उत्कृष्ट असंख्यात काल तक
 रहता है. ओहो भगवन् ! एक प्रदेशावाह. (एक आकाश प्रदेश पर रहा हुआ) पुद्गल कंपन सहित अ-
 धिक्कन स्थान में अथवा अन्य स्थान में कितना काल तक रहे ? ओहो गौतम ! जयन्य एक समय तक
 रहे उत्कृष्ट भावलिका के असंख्यातवे भाग तक रहे. जैसे एक प्रदेशावाह पुद्गल का कहा वैसे ही अ-
 संख्यात प्रदेशावाह पुद्गलक का जानना. आकाश के अनंत प्रदेश नहीं होने से अनंत प्रदेशावाह पुद्गल

प्रदेशी ॥ ६ ॥ ए० एरु प० प्रदेशावगाढ भ० भगवन् पु० पुद्गल का से० कंपन सहित अं० आंतरा का० काल से कै० कितना हो० हेवे गो० गौतम ज० जघन्य ए० एक समय उ० उत्कृष्ट अ० असंख्यात काल अणंतकालं. एवं जाव अणंतपएसिओ ॥ ६ ॥ एगपएसोगाढस्सणं भंते ! पोग्गलस्स सेयस्स अंतरं कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जकालं ॥ एवं जाव असंखेज्जपएसोगाढे एग पएसोगाढस्सणं भंते ! निरेयस्स अंतरं कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइ भागं एवं जाव असंखेज्जपएसोगाढे ॥ वण्ण गंध रस फास सुहुमपरिणयाणं, एएसिं जंचेव अंतरंपि भाणियव्वं ॥ सद्द परिणयस्सणं भंते ! पोग्गलस्स अंतरं कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं समय उत्कृष्ट अनंत काल का अंतर पडता है. ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! एक प्रदेशावगाही चलित पुद्गलों का कितना अंतर कहा ? अहो गौतम ! जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात कालका. और ऐसे ही असंख्यात प्रदेशावगाही स्थिर पुद्गलों का अहो भगवन् ! कितना अंतर ? अहो गौतम ! जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यात वां भाग का जानना. ऐसे ही असंख्यात

* मकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

अ० अनंत लु० रूस ए० एस वा० वादर परिणत पो० पुद्गल स० शब्द प० परिणत भं० भगवन् पो० पुद्गल का० काल से क० कितना हो० होवे शेष पूर्ववत् ॥ ५ ॥ प० परमाणु पो० पुद्गल का भं० भगवन् अं० आंतरा का० काल से के० कितना हो० होवे गो० गौतम ज० जघन्य ए० एक स० समय उ० उच्छ्रित अ० असंख्यात काल दु० द्विप्रदेशी भं० भगवन् खं० स्कंध का ए० ऐसे जा० यावत् अ० अनंत

जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जभागं, असहपरिणए जहा एक गुणकालए ॥ ५ ॥ परमाणु पोगलस्सणं भंते ! अंतरं कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगंसमयं उक्कोसेणं असंखेज्जकालं ॥ दुपएसियस्सणं भंते ! खंधस्स अंतरं कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसेणं

एक समय उच्छ्रित आवलिका का असंख्यातवा भाग तक रहते हैं अशब्दपरिणत पुद्गलोंको एक गुण काला जैसे कहना ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! परमाणु पुद्गल का अंतरं कितनेकाल का कहा ? अहो गौतम ! जघन्य एक समय का उच्छ्रित असंख्यात काल का. द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध का जघन्य एक

? एक परमाणु पुद्गल जितने समय में अन्य पुद्गलों की साथ मीलकर फीर उस से विच्छिन्न बनकर एक ही परमाणु पुद्गल बन जाये उतने समय को अंतर कहते हैं.

प्रदेशी ॥ ६ ॥ ए० एक प० प्रदेशावगाढ भ० भगवन् पु० पुद्गल का से० कंपन सहित अ० आंतरा का० काल से० के० कितना हो० होवे गो० गौतम ज० जघन्य ए० एक समय उ० उत्कृष्ट अ० असंख्यात काल

अणंतकालं. एवं जाव अणंतपएसिओ ॥ ६ ॥ एगपएसोगाढस्सणं भंते ! पोग्ग-

लस्स सेयस्स अंतरं कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहणं एगं समयं, उक्कोसिणं

असंखेज्जंकालं ॥ एवं जाव असंखेज्जपएसोगाढे एग पएसोगाढस्सणं भंते ! निरं-

यस्स अंतरं कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहणणेणं एगं समयं, उक्कोसिणं आ-

वलियाए असंखेज्जइ भागं एवं जाव असंखेज्जपएसोगाढे ॥ वण्ण गंध रस फास

सुहुमपरिणयाणं, एएसिं जंचेव अंतरंपि भाणियव्वं ॥ सद्ध परिणयस्सणं भंते !

पोग्गलस्स अंतरं कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहणणेणं एगं समयं, उक्कोसिणं

समय उत्कृष्ट अनंत काल का अंतर पडता है. ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! एक प्रदेशावगाही चलित पुद्गलों

का कितना अंतर कदा ? अहो गौतम ! जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात कालका. और ऐसे ही असं-

ख्यात प्रदेशात्मक का जानना. एक प्रदेशावगाही स्थिर पुद्गलों का अहो भगवन् ! कितना अंतर ? अहो

गौतम ! जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यात वां भाग का जानना. ऐसे ही असंख्यात

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी धालापसादजी *

अ० अनंत लु० रूस ए० ऐसे वा० वादर परिणत पो० पुद्गल स० शब्द प० परिणत भं० भगवन् पो० पुद्गल का० काल से क० कितना हो० होवे शेष पूर्ववत् ॥ ५ ॥ प० परमाणु पो० पुद्गल का भं० भगवन् अं० आंतरा का० काल से के० कितना हो० होवे गो० गौतम ज० जयन्त्य ए० एक स० समय उ० उत्कृष्ट अ० असंख्यात काल दु० द्विप्रदेशी भं० भगवन् खं० स्कंध का ए० ऐसे जा० यावत् अ० अनंत

जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, असहपरिणए जहा एक गुणकालए ॥ ५ ॥ परमाणु पोगलस्सणं भंते ! अंतरं कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगंसमयं उक्कोसेणं असंखेज्जकालं ॥ दुपएसियस्सणं भंते ! खंधस्स अंतरं कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसेणं

एक समय उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यातवा भाग तक रहते हैं अशब्दपरिणत पुद्गलोंको एक गुण काला जैसे कहना ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! परमाणु पुद्गल का अंतरं कितनेकाल का कडा ? अहो गौतम ! जयन्त्य एक समय का उत्कृष्ट असंख्यात काल का. द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध का जयन्त्य एक

? एक परमाणु पुद्गल जितने समय में अन्य पुद्गलों को साथ मीलकर फीर उस से विच्छिन्न बनकर एक ही परमाणु पुद्गल बन जाये उतने समय को अंतर कहते हैं.

गौतम स० सब से थो० थोड़े खे० क्षेत्र स्थान का आयुष्य ओ० अवगाहना स्थान का आयुष्य अ० असंख्यात गुना द० द्रव्य स्थान असंख्यात गुना भा० भाव स्थान असंख्यात गुने ॥ ८ ॥ ने० नारकी कि० क्या सा० आरंभ सहित स० परिग्रह सहित उ० अथवा अ० अनारंभी अ० अपरिग्रही गो० गौतम ने० नारकी सा० सारंभी स० सपरिग्रही नो० नहीं अ० अनारंभी अ० अपरिग्रही से० अथ के० कैसे गो०

उयस्स कथरे २ जाव विससाहिया ? गोयमा ! सब्वत्थोवे खेत्तट्टाणाउए. ओगा-

हणट्टाणाउए असंखेज्जगुणे, दब्बट्टाणाउए असंखेज्जगुणे, भावट्टाणाउए असंखेज्जगुणे ॥
खेत्तोगाहणदब्बे भावट्टाणाउयंच अप्पवहुं-खेत्ते सब्वत्थोवे सेसाट्टाणा असंखेज्जगुणा

॥ ८ ॥ नेरइयाणं भंते ! किं सारंभा सपरिग्गहा, उदाहु अणारंभा अपरिग्गहा ?
गोयमा ! नेरइया सारंभा सपरिग्गहा, नो अणारंभा अपरिग्गहा ॥ सेकेणट्टेणं जावं

कौन किस से अल्प, बहुत व विशेषाधिक है ? अहो गौतम ! सब से थोड़ा क्षेत्र स्थान का आयुष्य, उस से अवगाहना स्थान का आयुष्य असंख्यात गुना, उस में द्रव्य स्थान का आयुष्य असंख्यात गुना और उस से भाव स्थान का आयुष्य असंख्यात गुना ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! क्या नारकी सारंभी सपरिग्रही हैं ? अथवा अनारंभी अपरिग्रही हैं ? अहो गौतम ! नारकी सारंभी व सपरिग्रही हैं. अहो भगवन् ! किस कारन से नारकी सारंभी सपरिग्रही हैं ? अहो-गौतम ! नारकी पृथ्वी काया का यावत् तस काया

द्वयमेव तत्रैव पणानं (यत्ततो)

सूत्र

भावावर्थ

शेष पूर्ववत् ॥ ७ ॥ ए० कंपने वाले द० द्रव्य स्थान का आ० आयुष्य खे० क्षेत्र स्थान आयुष्य ओ० अवगाहना स्थान आयुष्य भा० भाव स्थान आयुष्य में से क० कौन जा० यावत् वि० विशेषाधिक गो० असंखेज्जकालं असद्वपरिणयस्सणं भंते ! पोगलस्स अंतरं कालओ केवचिंहोइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसंणं आवलियाए असंखेज्जइ भागं, ॥ ७ ॥

एयस्स भंते ! दव्वट्टाणाउयस्स, खेत्तट्टाणाउयस्स, ओंगाहणट्टाणाउयस्स, भावट्टाणा प्रदेशावगाही स्थिर पुद्गल तक का जानना. ऐसे ही वर्ण, गंध, रस स्पर्श व सूक्ष्म परिणत पुद्गलों का जानना. शब्द परिणत का अंतर जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात काल का और अशब्द परिणत पुद्गलों का जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यात वा भाग का जानना. ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! द्रव्य स्थान की स्थिति, क्षेत्र स्थान की स्थिति. अवगाहना स्थान की स्थिति, व भाव स्थान की स्थिति में से

१ द्रव्य से पुद्गल द्रव्य, स्थान से भेद और आयु से स्थिति. अर्थात् पुद्गल परमाणु द्विप्रदेशी कंत्रादिक की स्थिति अथवा द्रव्यका उसी भव में अवस्थान रूप रहना से द्रव्यस्थान आयुष्य.

२ क्षेत्रस्थान आयुष्य एक आकाश प्रदेश में जितने कालतक पुद्गल अवस्थित पने रहे से क्षेत्रस्थान आयुष्य.

३ जितने आकाश प्रदेश में पुद्गल अवगाहे उतने ही पुद्गल अन्य स्थान अवगाहे इस की स्थिति से अवगाहन स्थान आयुष्य और ४ भाव से कालादि के भेद की स्थिति.

गौतम सं० सर्व से थो० थोड़े खे० क्षेत्र स्थान का आयुष्य ओ० अवगाहना स्थान का आयुष्य अ० असंख्यात गुना द० द्रव्य स्थान असंख्यात गुना भा० भाव स्थान असंख्यात गुने ॥ ८ ॥ ने० नारकी क्रि० क्या सा० आरंभ सहित स० परिग्रह सहित उ० अथवा अ० अनारंभी अ० अपरिग्रही गो० गौतम ने० नारकी सा० सारंभी स० सपरिग्रही नो० नहीं अ० अनारंभी अ० अपरिग्रही से० अथ के० कैसे गो०

उयस्स कयरे २ जात्र विसंसाहिया ? गोयमा ! सब्बत्थेवि खेत्तट्टाणाउए, ओगा-

हणट्टाणांउए असंखेज्जगुणे, दब्बट्टाणाउए असंखेज्जगुणे, भावट्टाणाउए असंखेज्जगुणे ॥

खेत्तोगाहणदब्बे भावट्टाणाउयंच अप्पवहुं-खेत्ते सब्बत्थेवि सेसाट्टाणा असंखेज्जगुणा

॥ ८ ॥ नेरइयाणं भंते ! किं सारंभा सपरिग्गहा, उदाहु अणारंभा अपरिग्गहा ?

गोयमा ! नेरइया सारंभा सपरिग्गहा, नो अणारंभा अपरिग्गहा ॥ सेकेणट्टेणं जावं

कौन किस से अल्प, बहुत व विशेषाधिक है ? अहो गौतम ! सर्व से थोड़ा क्षेत्र स्थान का आयुष्य, उस से अवगाहना स्थान का आयुष्य असंख्यात गुना, उस में द्रव्य स्थान का आयुष्य असंख्यात गुना और उस से भाव स्थान का आयुष्य असंख्यात गुना ॥ ८ ॥ अहो भगवन् ! क्या नारकी सारंभी सपरिग्रही हैं ? अथवा अनारंभी अपरिग्रही हैं ? अहो गौतम ! नारकी सारंभी व सपरिग्रही हैं, अहो भगवन् ! किस कारन से नारकी सारंभी सपरिग्रही हैं ? अहो गौतम ! नारकी पृथ्वी काया का यावत् त्रस काया

शेष पूर्ववत् ॥ ७ ॥ ए० कंपने वाले द० द्रव्य स्थान का आ० आयुष्य खे० क्षेत्र स्थान आयुष्य ओ० अवगाहना स्थान आयुष्य भा० भाव स्थान आयुष्य में से क० कौन जा० यावत् वि० विशेषाधिक गो०

असंखेजकालं असहपरिणयस्सणं भंते ! पोगलस्स अंतरं कालओ केवचिरंहोइ ?
गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसिणं आवलियाए असंखेज्जइ भागं, ॥ ७ ॥

एयस्स भंते ! दब्बट्टाणाउयस्स, खेत्तट्टाणाउयस्स, आंगाहणट्टाणाउयस्स, भावट्टाणा प्रदेशावगाही स्थिर पुद्गल तक का जानना. ऐसे ही वर्ण, गंध, रस स्पर्श व सूक्ष्म परिणत पुद्गलों का जानना. शब्द परिणत का अंतर जयन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात काल का और अशब्द परिणत पुद्गलों का जयन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यात वा भाग का जानना. ॥ ७ ॥ अहो भगवन् ! द्रव्य स्थान की स्थिति, क्षेत्र स्थान की स्थिति. अवगाहना स्थान की स्थिति, व भाव स्थान की स्थिति में से

१ द्रव्य से पुद्गल द्रव्य, स्थान से भेद और आयु से स्थिति. अर्थात् पुद्गल परमाणु द्विप्रदेशी स्कंधादिक की स्थिति अथवा द्रव्यका उसी भव में अवस्थान रूप रहना से द्रव्यस्थान आयुष्य.

२ क्षेत्रस्थान आयुष्य एक आकाश प्रदेश में जितने कालतक पुद्गल अवस्थित पने रहे सो क्षेत्रस्थान आयुष्य.

३ जितने आकाश प्रदेश में पुद्गल अवगाहे उतने ही पुद्गल अन्य स्थान अवगाहे इस की स्थिति से अवगाहन स्थान आयुष्य और ४ भाव से कालादि के भेद की स्थिति.

मनुष्यणी ति० तिर्यच ति० तिर्यचणियों प० परिग्रहीत भ० होते हैं ए० ऐसे आ० आसन स० शयन भं० बांडे म० पात्र उ० उपकरण प० परिग्रहीत ए० ऐसे जा० यात्र व० स्थानित कुमार ॥१०॥ ए० एकेन्द्रिय ज० जैसे ने० नारकी ॥ ११ ॥ वं० द्विन्द्रिय भं० भगवन् वा० ब्राह्म भं० भंड म० पात्र उ०

मणसा-मणुषीओ-तिरिक्खजोणिया - तिरिक्खजोणियाओ - परिग्गहियाओ भवति ॥
 आसण सयण भंडमत्तोवगरणा परिग्गहिया भवति, सच्चित्ताचित्तमी-
 सयाइं दव्वाइं परिग्गहियाइं भवति से तेणट्टेणं तहेव, एवं जाव थणियकुमारा
 ॥ १० ॥ एणिदिथा जहा नेरइया ॥ ११ ॥ वेइंदिथाणं भंते ! किं सारंभा सपरि-
 ग्गहा तंचेव जाव सरीरा परिग्गहिया भवति, बाहिरिया भंडमत्तोवगरणापरिग्गहिया

तिर्यच, तिर्यचणियों का परिग्रह होता है, जैसे ही आसन, शयन, भंड, पात्र, उपकरण, सच्चित्त अचित्त व भीश्र द्रव्य का परिग्रह होता है इसलिये वेसारंभी व सपरिग्रही कहलते हैं. ॥ १० ॥ एकेन्द्रिय का अधिकार नारकी जैसे कहना ॥११॥ द्वीन्द्रिय तीन्द्रिय व चतुरेन्द्रिय को शरीर, कर्म व ब्राह्म भंड, पात्र उपकरण जैसे ही सच्चित्त अचित्त व भीश्र द्रव्यका परिग्रह होता है इसलिये वे सारंभी व सपरिग्रही कहते हैं ॥ १२ ॥ अहो भगवन् ! क्या तिर्यच पंचेन्द्रिय सारंभी सपरिग्रही हैं? अहो गौतम !

* मकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी *

गीतम ने० नारकी पु० पृथ्वी काया का स० आरंभ करते हैं जा० यात्रर त० त्रस काया का स० आरंभ करते हैं स० शरीर परिग्रही भ० होते हैं क० कर्म प० परिग्रह वाले भ० होते हैं स० संचित अ० अचित्त भी० मीश्र द० द्रव्य प० परिग्रहीत भ० होते हैं ते० इसलिये ॥ ९ ॥ अ० असुरकुमार भ० भगवत् भ० भवन के प० परिग्रहवाले दे० देव दे० देवियों म० मनुष्य म० अपरिगृहा ? गोयमा ! नेरइयाणं पुढविकायं समारभंति, जाव तसकायं समारभंति,

सरीरा परिगृहिया भवंति, कम्मा परिगृहियां भवंति सच्चित्तमीसयाइं द्वाइं परिगृहियाइं भवंति । सेतेणं तं चव ॥ ९ ॥ असुरकुमाराणं भंते ! किं सारंभा पुच्छा ? गोयमा ! असुरकुमारा सारंभा संपरिगृहा नो अणारंभा अपरिगृहा, से केणट्टेणं ?

गोयमा ! असुरकुमाराणं पुढविकायं समारभंति जाव तसकायं समारभंति ॥ सरीरा परिगृहिया भवंति, कम्मा परिगृहिया भवंति, भवणा परिगृहिया भवंति, देवा-देवीओ

का आरंभ करते हैं. नारकी को शरीर, कर्म, संचित, अचित्त व मीश्र द्रव्य का परिग्रह होता है इसलिये वे सारंभी व सपरिग्रही हैं ॥ ९ ॥ अहो भगवन् ! असुरकुमार जाति के देव क्या सारंभी सपरिग्रही हैं ? अहो गौतम ! असुरकुमार सारंभी सपरिग्रही हैं क्योंकि असुरकुमार पृथ्वीकाय यावत् प्रमकाया का आरंभ करते हैं और उन को शरीर कर्म, भवन, देव, देवियों, मनुष्य, मनुष्यणियों,

शब्दार्थ

सूत्र

थ

कारी स्थान चि० वयारे के आकार वाले स्थान अ० कूप त० तलाव द० द्रह न० नदी वा० वावि पु० पुष्करणी दी० लम्बी वावि गुं० चक्राकार वापि स० सरोवर स० सरोवर की पं० पंक्ति स० छोटे तलावों की पंक्ति वि० विल पंक्ति आ० खेलेने का वगीचा उ० उद्यान का० वन व० वन व० वनखंड

ओ, परिग्गाहियाओ भवति, आरामुज्जाण-काण्णा-वणा-वणखंडा वणराइओ-परिग्गाहिया-ओ भवति ॥ देवउल-सभ-पव्व-थूम-खाइय- परिखाओ-परिग्गाहियाओ भवति, पागार-हालग-चरिय-दार-गोपुर-परिग्गाहिया भवति, पासाय-धर-सरण-लेण-आवण-परिग्गाहिया भवति, सिंघाडग-तिग-चउक्क-चच्चर-चउम्मह-महापह-पहा-परिग्गाहिया भवति,

तालाव, तालाव की पंक्ति, छोटे तालाव, छोटे तालाव की पंक्ति, विलों की पंक्ति, आराम, उद्योग, कानून वन, वनखंड, वनराजी, देवालय, सभा स्थान, पर्वत, स्तूप, खाई, परिखाँ, कोट, कोट की उपरके अटारी, चरिकों, द्वार, गाँपुर, मासाद, गृह, वृणका गृह, आश्रय स्थान, दुकान. शृंगाटकके आकार का मार्ग,

४ जिस में दपत्यादि क्रीडा करते हैं उसे आराम कहते हैं. ५३ उत्सवों के प्रसंग में बहुत जनों को भोग्य पुष्पवाले वृक्षां जिस में रहे हुये होवे ६ नगर की पास का वन. ७ नगर से बहुत दूर का वन ८ एक जाति के वृक्ष समुहवाला स्थान ९ वृक्ष की पंक्ति १० ऊँचे नीचे सब स्थान सरिखी ११ गृह के कोट में हस्ती प्रमुख को जाने का द्वार.

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्जी सहायजी बालाप्रसादजी *

उपकरण प० परिग्रहीत भ० होते हैं ए० ऐसे जा० यावत् च० चतुरन्द्रिय ॥ १२ ॥ पं० पंचेन्द्रिय सि० तिर्यच तं० जैसे जा० यावत् क० कर्म परिग्रहीत टं० छेदेद्गुण पर्वत कू० शिखर से मुं० मुण्ड पर्वत सि० सि० शिखर वाले पर्वत प० किंचित् नमे हुवे ज० जल थ० स्थल वि० विल गु० गुफा ले० उत्कीर्ण पर्वत गृह उ० पानी नीचे पडने का स्थान नि० झरने के स्थान चि० कीचड मीश्रित जल स्थान प० आनंद

भवति. सच्चिच्चित्त जाव भवति, एवं जाव चउरिदिया ॥ १२ ॥ पंचिदियति-
रिखजौणियाणं भंते ! तंचेव जाव कम्मापरिग्गहिया भवति, टंका-कूडा-सेला-
सिहरी-पम्भारा-परिग्गहिया भवति, जल-थल-विल-गुह-लेणा-परिग्गहिया भवति,
उञ्जर-निञ्जर-चिहल-पहल-चिप्पिणा-परिग्गहिया भवति, अगड-तडाग-दह-नदीओ-
वात्री-पुम्बवरिणी-दीहिया-गुजालिया-सरा-सरपंतियाओ, विलपंतिया-

तिर्यच पंचेन्द्रिय पृथ्वीकाय यावत् त्रस काया का आरंभ करते हैं. उन को शरीर, कर्म का परिग्रह रहाहुवा है. टंके, कूडे, सेले, शिखर व किंचित् नमे हुवे शिखर का परिग्रह रहा हुवा है. जलस्थान, स्थलस्थान, विल, गुफा व आश्रय स्थान का परिग्रह रहा हुवा है, पर्वत के झरणे, निर्झरणे, कीचड, प्रल्हादक स्थान व पयारे का परिग्रह रहा हुवा है. कूवे, तालाब, नदी, वापि, पुष्करणी, दीर्घिका, चक्राकार वापि, बडे

१ छिनटंका: टांके २ शिखराणि हस्त्यादि वंअनस्थानानिवा ३ मुण्ड पर्वत.

जैसे ति० तिर्यच त० तैसै म० मनुष्य भा० कहना ॥ १४ ॥ वा० वाणव्यंतर जो० ज्योतिषी वे० वैमानिक ज० जैसे भ० भवनवासी त० तैसे ने० जानना ॥ १५ ॥ पं० पांच हे० हेतु प० कहा तं० वह ज०

तिरिक्ख जोणिया तथा मणुस्सात्रि भाणियव्वा ॥ १४ ॥ वाणमंतर जोइसिय वे-
माणिया जहा भवनवासी तथा नेयव्वा ॥ १५ ॥ पंचहेऊ पणत्ता, तंजहा-हेउं
जाणइ, हेउं पासइ, हेउं बुझइ, हेउं अभिसमागच्छइ, हेउं छउमत्थमरणं मरइ
पंचहेऊ पणत्ता तंजहा हेउणा जाणइ जाव हेउणा छउमत्थमरणं मरइ । पंचहेऊ
पणत्ता, तंजहा-हेउं न जाणइ जाव हेउं अण्णाण मरणं मरइ, पंचहेऊ पणत्ता,

वाणव्यंतर, ज्योतिषी, व वैमानिक को भवनपति जैसे कहना ॥ १५ ॥ जो परिग्रही होते हैं वे छब्रस्थ होते हैं और छब्रस्थ हेतुसे जानते हैं इसलिये आगे हेतु का प्रश्न पुछते हैं हेतु पांच प्रकार के कहे हैं ? हेतु जानते हैं अर्थात् साध्य निश्चयार्थ के लिये जानते हैं २ सामान्यता से जानते हैं ३ सम्यक् प्रकारसे श्रद्धते हैं ४ हेतु में प्रवर्ते और ५ हेतु छब्रस्थ मरण मरे और पांच प्रकार के हेतु कहे हैं हेतु से जानि यावत् हेतु से छब्रस्थ मरण मरे पांच हेतु-हेतु को जाने नहीं यावत् हेतु अज्ञान मरण मरे पांच हेतु-हेतुसे जानि नहीं यावत् हेतु से अज्ञान मरण मरे पांच अहेतु कहे हैं अहेतु जानि यावत् अहेतु केवली मरण मरे

शब्दार्थ () सूत्र भावार्थ

* मकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

व० वृक्ष की पंक्ति दे० देवालय स० सभा प० पर्वत थू० स्तूभ खा० खाइ प० उपर नीचे सम आकार वाली खाई पा० प्राकार अ० अटारी च० चरिका दा० द्वार गो० गोपुर पा० महल घ० गृह स० शरण ले० स्थानक आ० दूकानों सि० श्रृंगारक स्थान ति० तीन रस्ता मीले च० चौक च० चचर च० चतुर्भुज म० राजमार्ग प० मार्ग स० शकट र० रथ जा० यान ज० घोसहं गि० अंबाडी थि० ऊंटका पलाण भी० पाखली सं० छोटी गाडी लो० तवा क० कडाई-क० कुडली भ० भवन शेष पूर्ववत् ॥ १३ ॥ ज०

सगड-रह-जाण-जुग-गिह्लि-थिल्लि-सीय-संदमाणियाओ-परिगहियाओ भवंति, लोही-लोहकडाह-कडुच्छुया-परिगहिया भवंति, भवणा परिगहिया भवंति, देवा-देवीओ-मणुस्ता-मणुस्सीओ-तिरिक्खजोणिया - तिरिक्खजोणिणीओ-आसण-सयण-खंस-भंड-सचित्ता-चित्त-मीसयाइं दव्वाइं परिगहियाइं भवंति, से तेणट्टेणं ॥ १३ ॥ जहां

तीन रस्ते मीले वैसा मार्ग, चौक, चचर, चार मुखवाला मार्ग, राज्यमार्ग, शकट, रथ, विमान, धूमरा, अंबाडी, ऊंटका पलाण, पालखी, छोटीगाडी, तवा, छोटीकडाई, कुडली, भुवन, रथ, देवी, मनुष्य, मनुष्यणी, तिर्यच, तिर्यचणी, आसन, शयन, स्थंभ, भंड, सचित्त, अचित्त, व मीश्र द्रव्यका परिग्रह रहा दूता हे इसीसे तिर्यच मपरिग्रहो व सारंभी कहते हैं ॥ १३ ॥ ऐसे ही मनुष्य का जानना. ॥ १४ ॥

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुत्तदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

नारद पुत्र ते० तहाँ उ० आये उ० आकर ना० नारद पुत्र अ० अनगर को ए० ऐसा व० कहा स०
 सब पौ० पुद्गल अ० आर्य कि० क्या स० अर्थ सहित स० मध्य सहित स० प्रदेश सहित उ० अथवा
 अणगारे जेणेव नारयपुत्ते अणगारं तेंणेव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता, 'नारयपुत्तं
 अणगारं एवं वयासी-सन्वे पोगलात्ति अज्जो किं सअड्डा समज्झा सपएसा उदाहु
 अणड्डा अमज्झा अपएसा ? अज्जोत्ति नारयपुत्ते अणगारे नियंठिपुत्तं अणगारं
 एवं वयासी सन्वे पोगला मे अज्जो सअड्डा समज्झा सपएसा, नो अणड्डा अमज्झा
 अपएसा । ताएणं से नियंठिपुत्ते अणगारे नारयपुत्तं अणगारं एवं वयासी जइण ते
 अज्जो ! सन्वे पोगला सअड्डा समज्झा, सपएसा, नो अणड्डा अमज्झा अपएसा;
 किं दव्वादेसेणंअज्जो ! सब्व पोगलां सअड्डा तहेव चेत्र, कालादेसेणं तंचेव, भावादेसेणं
 इव विचरते थे ॥ २ ॥ उस समय में निर्ग्रन्थी पुत्र अनगर नारदपुत्र अनगर की पास आकर ऐसा
 बोले की अहो आर्य ! सब पुद्गलों क्या अर्थ, मध्य व प्रदेश सहित हैं अथवा अथवा अर्थ, मध्य व प्रदेश
 सहित हैं ? नारद पुत्र अनगर निर्ग्रन्थी पुत्र अनगर को ऐसा बोले कि अहो आर्य ! सब पुद्गल भेरे अभिप्राय
 से अर्थ, मध्य व प्रदेश सहित हैं. उस समय में निर्ग्रन्थी पुत्र अनगरने नारद पुत्र को कहा कि अहो
 आर्य ! जब तुम्हारे अभिप्राय से सब पुद्गल अर्थ, मध्य व प्रदेश सहित हैं तब क्या ने द्रव्यादेश से अर्थ
 मध्य व प्रदेश सहित हैं, क्षेत्रादेशसे, काला देश से या भावादेश से हैं ? तब नारद पुत्रने उत्तर दिया

शब्दार्थ ७७ पुस्तक-कलाक-प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुत्तदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी ७७

शब्दार्थ

सूत्र

अर्थ

सहित स० मध्य सहित स० प्रदेश सहित ज० यदि दे० देवानुप्रिय न० नहीं गि० खेदिन हंवि प० कहने

ए ॥ ३ ॥ तएणं से नियंठिपुत्ते अणगारे नारयपुत्तं अणगारं एवं वयासी दव्वा
एसेणवि अज्जो ! सव्व पंगाला सपएसावि अपएसावि अणंता, खेत्ताएसेणवि एवं चेव,
कालाएसेणवि. भावाएमेणवि एवं चेव । जे दव्वओ अपएसे, से खेत्तओ नियमा अप-

से इस का अर्थ सुनने को इच्छता हूँ ॥ ३ ॥ तव निर्ग्रन्थी पुत्र अनगारने नारदपुत्र को ऐसा कहा कि
अहो आर्य ! द्रव्य, क्षेत्र, काल व भावदेश से सब पुद्गलों प्रदेश सहित भी हैं व प्रदेश रहित
हैं क्योंकि इसमें द्विप्रदेशात्मकादि स्कंध व परमाणु पुद्गल रहे हुं हैं और वे अनंत हैं. क्षेत्रादेश
से आकाश के द्विप्रदेशी स्कंध को अवगाहकर रहनेवाले पुद्गल संप्रदेशी हैं और एक आकाश प्रदेशावगाही पुद्गल
अप्रदेशी हैं. काल से दो तीन वगैरह समय की स्थितिवाले पुद्गल संप्रदेशी हैं और एक समय की स्थिति
वाले पुद्गल अप्रदेशी हैं, भाव से दो तीन वगैरह गुणकाले द्रव्य संप्रदेशी हैं और एक गुणकाला द्रव्य
अप्रदेशी है, जो द्रव्य से अप्रदेशी होते हैं वे क्षेत्र से निश्चयही अप्रदेशी होते हैं. वयों की द्रव्य से अप्रदेशी
परमाणु पुद्गल एक प्रदेशावगाही होता है. काल से क्वचित् संप्रदेशी होता है, क्वचित् अप्रदेशी होता है,
यदि वद परमाणु एक समय की स्थितिवाला होने तो अप्रदेशी और अनेक समय की स्थिति वाला होने
तो संप्रदेशी. भाव से भी क्वचित् संप्रदेशी व क्वचित् अप्रदेशी हैं वयों कि जो एक गुणकालादि हे वह

* प्रकाशक राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी व्यालाप्रसादजी *

पुत्र अ० अनगारं को ए० ऐसा व० बोले स० सर्वं पो० पुद्रल मे० मरे मत में अ० आर्य स० अर्थ
 समझासपएसा, एवं तेएग समय ठिईएवि पांगले सअहु समझे सपएसे तंचेवा॥ जइणं अज्जी
 भावाएसेणं सब्ब पोगला सअहुइ एवं एक गुणकालएवि पोगले सअहु समझे सपएसे
 तंचेवा॥ अहते एवं न भवंति तो ज वयसि द्वाएसेणंवि सब्ब पोगला सअहु समझा सप-
 एसा नोअणहुआ अमझा अपएसा एवं खेत्ताएसेणवि, कालाएसेणवि, भावाएसेणवि
 तणं भिच्छा ॥ तएणंसे नारयपुत्ते अणगारं लियंठिपुत्तं अणगारं एवं वयासी
 नो खलु एवं देवाणुप्पियां एयमहुं जाणामो पासामो ॥ जइणं देवाणुप्पिया नो गिला-
 यंति परिकहित्ताए तं इच्छामिणं देवाणुप्पियाणं अंतिए एयमहुं सोच्चा निसम्म जाणित्ता-

पुद्रल भी अर्थ, मध्य व प्रदेश वाले हेवे और जत्र भावादेशसे सब पुद्रल अर्थ, मध्य व प्रदेश वाले
 तत्र एक गुन काला पुद्रल भी अर्थ, मध्य व प्रदेश वाला हेवे. परंतु ऐसा नहीं है. इसलिये द्रव्यदेश.
 क्षेत्रदेश से, कालदेश से व भावा देशसे सर्व पुद्रल अर्थ, मध्य व प्रदेश वाले हैं. ऐसा जो तुम कहते हो
 वह मिथ्या है. तब नारद पुत्र अनगार निर्ग्रन्थी पुत्र अनगार को ऐसा बोले कि अहो देवानुप्रिय !
 इसका अर्थ नहीं जानता है. इसलिये यदि आपको कहने में किसी प्रकारका खेद न होवे तो मैं आपकी पास

शब्दार्थ

सुत्र

ध

सहित स० मध्य सहित स० प्रदेश सहित ज० यदि दे० देवानुप्रिय न० नहीं गि० खेदिन होंवे प० कहने ए ॥ ३ ॥ तएणं से नियंठिपुत्ते अणगारे नारयपुत्तं अणगारं एवं वयासी दब्वा एसेणवि अज्जो ! सव्व पोगगला सपएसावि अपएसावि अणंता, खेत्ताएसेणवि एवं चेव, कालाएसेणवि. भावाएमेणवि एवं चेव । जे दब्बओ अपएसे, से खेत्तओ नियमा अप-

से इस का अर्थ सुनने को इच्छता हूँ ॥ ३ ॥ तब निर्ग्रन्थी पुत्र अनगरने नारदपुत्र को ऐसा कहा कि अहो आर्य ! द्रव्य, क्षेत्र, काल व भावादेश से सब पुद्गलों प्रदेश सहित भी हैं व प्रदेश रहित हैं क्योंकि इसमें द्विप्रदेशात्पकादि स्कंध व परमाणु पुद्गल रहे हुवे हैं और वे अनंत हैं. क्षेत्रादेश से आकाश के द्विप्रदेशी स्कंध को अवगाहकर रहनेवाले पुद्गल संप्रदेशी हैं और एक आकाश प्रदेशावगाही पुद्गल अप्रदेशी हैं. काल से दो तीन वगैरह समय की स्थितिवाले पुद्गल संप्रदेशी हैं और एक समय की स्थिति वाले पुद्गल अप्रदेशी हैं, भाव से दो तीन वगैरह गुणकाले द्रव्य संप्रदेशी हैं और एक गुणकाला द्रव्य अप्रदेशी है, जो द्रव्य से अप्रदेशी होते हैं वे क्षेत्र से निश्चयही अप्रदेशी होते हैं क्योंकि द्रव्य से अप्रदेशी परमाणु पुद्गल एक प्रदेशावगाही होता है. काल से क्वचित् संप्रदेशी होता है, क्वचित् अप्रदेशी होता है, यदि वह परमाणु एक समय की स्थितिवाला होवे तो अप्रदेशी और अनेक समय की स्थिति वाला होवे तो संप्रदेशी. भाव से भी क्वचित् संप्रदेशी व क्वचित् अप्रदेशी हैं क्योंकि जो एक गुणकालादि है वह

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखर्देवसहायजी बालाप्रसादजी *

को तं० इसलिये इ० इच्छता हूँ दे० देवानुप्रिय की अं० पास ए० यह सी० सुनकर के नि० अवधारकर एसे; कालओ सिय सपएसे सिय अपएसे, भावओ सिय सपएसे सिय अपएसे ॥ जखेत्तओ अपएसे से दब्बओ सिय सपएसे सिय अपएसे, कालओ भयणाए, भात्र ओ भयणाए, जहा खेत्तओ एवं कालओ, भात्रओ, ॥ जे दब्बओ सपएसे से खेत्तओ सिय सपएसे सिय अपएसे, एवं कालओ भात्रओधि, ॥ जे खेत्तओ सपएसे से अमदेशी और अनेक गुनकालादि है वह सपदेशी है. जो क्षेत्रसे अमदेशी है-एक आकाशप्रदेशावगाही है वह द्रव्यसे क्वचित् सपदेशी व क्वचित् अमदेशी है; क्योंकि एक परमाणु भी एक आकाशप्रदेशावगाही होता है और अनेक परमाणु भी एक आकाश प्रदेशावगाही होता है. वैसे ही क्षेत्र से अमदेशी पुरूलों की काल से व भात्र से अमदेशी की भजना रहती है, क्यों कि एक आकाश प्रदेशावगाही पुरूल एक समय व अनेक समय की स्थिति वाला होये वैसे ही एक गुनकाला व अनेक गुनकाला भी होंगे. जेने क्षेत्र का आलापक कहा वैसे ही काल व भावका जानना. जो द्रव्य से सपदेशी है वह क्षेत्र से क्वचित् सपदेशी व अमदेशी होता है क्योंकि द्विप्रदेशात्मकादि स्कंध एक प्रदेश व अनेक प्रदेशावगाही हो सकते हैं वैसे ही ये काल व भात्र से भी क्वचित् सपदेशी व क्वचित् अमदेशी हैं. जो क्षेत्र से सपदेशी हैं वे द्रव्य से नियमा सपदेशी होते हैं क्योंकि अनेक प्रदेशावगाही अनेक पुरूलों होते हैं. काल

शब्दार्थ

सूत्र

भावार्थ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

द्ववओं नियमा सपएसे, कालओ भयणाए, भावओ भयणाए, जहा द्ववओ तथा कालओ, भावओत्रि॥४॥एसिणं भंते ! पोगलाणं द्ववादिसेणं खेत्तादिसेणं, कालादिसेणं, भावादिसेणं सपएसाणं अपएसाणय कयरे कयरे जाव विसेसाहिया वा ? नारय-पुत्ता ! सव्वत्थोवा पोगला भावादिसेणं अपएसा, कालादिसेणं अपएसा, असंखज्जगुणा वत्थादिसेणं अपएसा असंखज्जगुणा, खेत्तादिसेणं अपएसा असंखज्जगुणा, खेत्तादिसेणं सपएसा असंखज्जगुणा, द्ववादिसेणं सपएसा विसेसाहिया, कालादिसेणं सपए-

व भाव में भजना होती है अर्थात् वयचित् सप्रदेशी है व वयचित् अप्रदेशी है. जैसे द्रव्य का आलापक कहा जैसे ही काल व भाव का जानना. अर्थात् जो काल से सप्रदेशी है वह द्रव्य क्षेत्र व भाव से सप्रदेशी अप्रदेशी है और जो भाव से सप्रदेशी है वह द्रव्य क्षेत्र व काल से सप्रदेशी अप्रदेशी दोनों हैं॥४॥ अहो पूव्य ! इत द्रव्यादेश, क्षेत्रादेश, कालादेश व भावादेश से सप्रदेश व अप्रदेश में कौन किस से अल्प, बहुत यावत् विशेषाधिक है ? अहो नारद पुत्र ! सब से थोड़े भावादेश से अप्रदेशी, कालादेश से अप्रदेशी असंख्यात गुने, द्रव्यादेश से अप्रदेशी असंख्यात गुने, क्षेत्रादेश से अप्रदेशी असंख्यात गुने, सप्रदेशी विशेषाधिक, कालादेश से सप्रदेशी विशेषाधिक,

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी बालाप्रसादजी *

को तं० इत्युच्ये इ० इच्छता हूँ दे० देवानुप्रिय की अं० पाप्त ए० यह सो० सुनकर के नि० अवधारकर
एते; कालओ सिय सपएसे सिय अपएसे, भावओ सिय सपएसे सिय अपएसे ॥
जेखेत्तओ अपएसे से दब्बओ सिय सपएसे सिय अपएसे, कालओ भयणाए, भाव
ओ भयणाए, जहा खेत्तओ एवं कालओ, भावओ, ॥ जे दब्बओ सपएसे से खेत्तओ
सिय सपएसे सिय अपएसे, एवं कालओ भावओधि, ॥ जे खेत्तओ सपएसे से
अपदेशी और अनेक गुणकालादि है वह सपदेशी है. जो क्षेत्रसे अपदेशी है-एक आकाशप्रदेशावगाही
देव द्रव्यसे क्वचित् सपदेशी व क्वचित् अपदेशी है; क्योंकि एक परमाणु भी एक आकाशप्रदेशाव
ग्राही होता है और अनेक परमाणु भी एक आकाश प्रदेशावगाही होता है. जैसे ही क्षेत्र से अपदेशी
पुद्गलों की काल में व भाव से अपदेशी की भजना रहती है, क्यों कि एक आकाश प्रदेशावगाही पुद्गल
एक समय व अनेक समय की स्थिति वाला होवे जैसे ही एक गुणकाला व अनेक गुणकाला भी होवे.
जैसे क्षेत्र का आत्मपक कहा जैसे ही काल व भावका जानना. जो द्रव्य से सपदेशी है वह क्षेत्र से क्वचित्
सपदेशी व अपदेशी होता है क्योंकि द्विप्रदेशात्मकादि स्कंध एक प्रदेश व अनेक प्रदेशावगाही हो
सकते हैं जैसे ही वे काल व भाव में भी क्वचित् सपदेशी व क्वचित् अपदेशी हैं. जो क्षेत्र से सपदेशी
है वे द्रव्य में नियमा सपदेशी होने हैं क्योंकि अनेक प्रदेशावगाही अनेक पुद्गलों होते हैं. काल

शब्दार्थ

सूत्र

भाष्य

द्ववओ नियमा सपएसे, कालओ भयणाए, भावओ भयणाए, जहा द्ववओ तथा कालओ, भावओत्रि॥४॥एएसिणं भंते ! पोगलाणं द्ववादेसेणं खेत्तादेसेणं, कालादेसेणं, भावादेसेणं सपएसाणं अपएसाणय कयरे कयरे जात्र त्रिसेसाहिया वा ? नारय-पुत्ता ! सब्वत्थोवा पोगला भावादेसेणं अपएसा, कालादेसेणं अपएसा, असंखेज्जगुणा द्ववओदेसेणं अपएसा असंखेज्जगुणा, खेत्तादेसेणं अपएसा असंखेज्जगुणा, खेत्तादेसेणं चैव सपएसा असंखेज्जगुणा, द्ववादेसेणं सपएसा त्रिसेसाहिया, कालादेसेणं सपए-

व भाव में मजना होती है अर्थात् क्वचित् सप्रदेशी है व क्वचित् अप्रदेशी है. जैसे द्रव्य का आलापक कहा जैसे ही काल व भाव का जानना. अर्थात् जो काल से सप्रदेशी है वह द्रव्य क्षेत्र व भाव से सप्रदेशी अप्रदेशी है और जो भाव से सप्रदेशी है वह द्रव्य क्षेत्र व काल से सप्रदेशी अप्रदेशी दोनों है॥४॥ अहो पूज्य ! इन द्रव्यादेश, क्षेत्रादेश, कालादेश व भावादेश से सप्रदेश व अप्रदेश में कौन किस से अल्प, बहुत यावत् विशेषाधिक है ? अहो नारद पुत्र ! सब से थोड़े भावादेश से अप्रदेशी, कालादेश से अप्रदेशी असंख्यात गुने, द्रव्यादेश से अप्रदेशी असंख्यात गुने, क्षेत्रादेश से अप्रदेशी असंख्यात गुने, कालादेश से सप्रदेशी विशेषाधिक, द्रव्यादेश से सप्रदेशी विशेषाधिक,

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

ने० नारकी के० कितना काल ब० बहते हैं गो० गौतम ज० जयन्य ए० एक समय उ० उत्कृष्ट आ० आवलिका के अ० असंख्यात भाग ए० ऐसे हा० हीन होते हैं जे० नारकी के० कितने काल अ० अवस्थित गो० गौतम ज० जयन्य ए० एक स० समय उ० उत्कृष्ट च० चौबीस मुहूर्त ए० ऐसे स० सातों पु० पृथ्वी में र० रत्नप्रभा में अ० अडतालीस मु० मुहूर्त स० शंकर प्रभा च० चौदह रा० रात्रिदिन वा० बालु प्रभा में मा० मास पं० पंकप्रभा में दो० दोमास धू० धूम्रप्रभा में च० चार मास त० तमप्रभा

चाँदति ? गोयमा ! जहणं एगं समयं, उक्कोसिणं आवलियाए असंखेज्जभागं, एवं हायतिवा । नेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं अवट्टिया ? गोयमा ! जहणं एगं समयं उक्कोसिणं चउयीसं मुहुत्ता, एवं सत्तसु विपुढविसु चाडुंति हायति भाणियब्बं णवरं अवट्टिएसु इमं णाणत्तं तं० रयणप्पभाए पुढवीए अडयालीस मुहुत्ता सक्करप्पभाए चउदस राइंदि-

अहो गौतम ! जयन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यात वा भागवत् नारकी बहते रहते हैं। मने ही कालतक हीन होते रहते हैं, अहो भगवन् ! नारकी कितने काल तक अवस्थित रहते हैं ? अहो गौतम ! जयन्य एक समय उत्कृष्ट चौबीस मुहूर्त, सातों नारकी में वृद्धि ब हीन होने का उक्त कथनानुसार जानना परंतु अवस्थित में रत्न प्रभा पृथ्वी में नारकी ४८ मुहूर्ततक अवस्थित रहते हैं, शंकरप्रभा में चौदह रात्रिदिन, बालुप्रभा में एक मास, पंकप्रभा में दोमास, धूम्रप्रभा में चार मास, तमप्रभा में आठ मास

में अ० आठमास तः तमत्तमा में व० बारह मास ॥ ११ ॥ अ० असुर कुमार व० बढते हैं हा० हीन होते हैं ज० जैसे ने० नारकी अ० अवस्थित ज० जघन्य ए० एक समय उ० उत्कृष्ट अ० अडतालीस मु० मुहूर्त ए० ऐसे द० दश प्रकार के भी ॥ १२ ॥ दे० द्विइन्द्रिय व० बढते हैं हा० हीन होते हैं त० तैसे अ० अवस्थित ज० जघन्य ए० एक समय उ० उत्कृष्ट दो० दो अ० अंतमुहूर्त ए० ऐसे

याइं वालुयप्पभाए मासं, पंकप्पभाए दोमासा, धूमप्पभाए चत्तारिमासा तमाए अट्टमासा तमत्तमाए बारसमासा ॥ ११ ॥ असुरकुमारावि बढुंति हायंति जहा नेरइया, अवट्टिया जहणं एगं समयं उक्कोसं अट्टुचत्तालीसं मुहुत्ता, एवं दसविहावि ॥ १२ ॥ एगिदिया बढुंतिवि, हायंतिवि, अवट्टियावि एएहिंतिहिंवि जहण्णेणं एक्कं समयं उक्कोसं आवलियाए असंखेजं भागं ॥ १३ ॥ वेइदिया बढुंति हायंति तहेव । अवट्टिया

तक, तमत्तमागभा में बारह मास तक नारकी अवस्थित रहते हैं ॥ ११ ॥ असुरकुमार में वृद्धि होना व हीन होना नारकी जैसे जानना. परंतु उनका जघन्य एकसमय उत्कृष्ट ४९ मुहूर्त तक अवस्थित काल जानना. ऐसे ही दश प्रकार के भुवनपतिका जानना. ॥ १२ ॥ एकेन्द्रिय का वृद्धि, हीन व अवस्थित रहने का काल जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यातवा भाग का है ॥ १३ ॥ वेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय व चतुरेन्द्रिय का वृद्धि होना व हीन होना पहिले जैसे कहना और अवस्थित काल जघन्य एक समय उत्कृष्ट

* प्रकाशक-राजावहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी *

ने० नारकी के० कितना काल व० बढ़ते हैं गो० गौतम ज० जयन्य ए० एक समय उ० उत्कृष्ट आ० आवलिका के अ० असंख्यात भाग ए० ऐसे हा० हीन होते हैं ने० नारकी के० कितने काल अ० अवस्थित गो० गौतम ज० जयन्य ए० एक स० समय उ० उत्कृष्ट च० चौबीस मुहूर्त ए० ऐसे स० सातों पु० पृथ्वी में २० रत्नप्रभा में अ० अडतालीस मु० मुहूर्त स० शंकर प्रभा च० चौदह रा० रात्रिदिन वा० बालु प्रभा में मा० मास पं० पंकप्रभा में दो० दोमास धू० धूम्रप्रभा में च० चार मास त० तमप्रभा

चाडूति ? गोयमा ! जहणं एगं समयं, उक्कोसिणं आवलियाए असंखेज्जभागं, एवं हायंतिवा । नेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं अवाट्टिया ? गोयमा ! जहणं एगं समयं उक्कोसिणं चउयीसं मुहुत्ता, एवं सत्तसु विपुटविसु चाडूति हायंति भाणियंवं णवरं अवाट्टिएसु इमं णाणचं तं० रयणप्पभाए पुढवीए अडयालीस मुहुत्ता। सक्करप्पभाए चउदस राइदि-

अहो गौतम ! जयन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यात वा भागतक नारकी बढ़ते रहते हैं। जने ही कालतक हीन होते रहते हैं। अहो भगवन् ! नारकी कितने काल तक अवस्थित रहते हैं ? अहो गौतम ! जयन्य एक समय उत्कृष्ट चौबीस मुहूर्त. सातों नारकी में वृद्धि व हीन होने का उक्त कथनानुसार जानना परंतु अवस्थित में रत्न प्रभा पृथ्वी में नारकी ४८ मुहूर्ततक अवस्थित रहते हैं, शंकरप्रभा में चौदह रात्रिदिन, बालुप्रभा में एक मास, पंकप्रभा में दोमास, धूम्रप्रभा में चार मास, तमप्रभामें आठ मास